U.P. Series

विज्ञान

पाठ्यपुस्तक का संपूर्ण हल

कक्षा-10

PREMIER PUBLISHING HOUSE
New Delhi Muzaffarnagar

इकाई–1: प्रकाश

1 प्रकाश का परावर्तन

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. प्रकाश के परावर्तन से क्या अभिप्राय है? इससे संबंधित परिभाषाएँ दीजिए।

उत्तर– **प्रकाश का परावर्तन–** जब प्रकाश–किरण किसी माध्यम से चलती हुई किसी चमकदार तल पर आपतित होती है तो वह तल से टकरा कर उसी माध्यम में वापस लौट आती है। यह प्रकाश का परावर्तन कहलाता है; जैसे—प्रकाश का किसी दर्पण से टकराकर वापिस उसी माध्यम में वापस लौटना।

प्रकाश जिस तल से टकराकर परावर्तित होता है, वह तल परावर्तक तल कहलाता है। तल से टकराने वाली किरण आपतित किरण तथा टकराने के बाद उसी माध्यम में लौटती किरण परावर्तित किरण कहलाती है। तल के जिस बिंदु पर आपतित किरण टकराती है, उस बिंदु पर तल से खींचा गया लंब अभिलंब कहलाता है। AO आपतित किरण, OB परावर्तित किरण तथा ON अभिलंब को प्रदर्शित करती है।

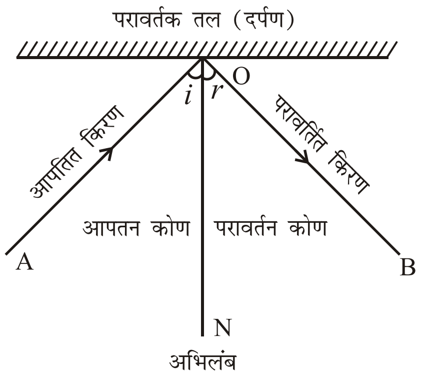

किसी तल से परावर्तित प्रकाश की मात्रा उस तल की प्रकृति पर निर्भर करती है। इसलिए किसी पॉलिश युक्त चिकने पृष्ठ से हो रहे परावर्तन को नियमित परावर्तन कहते हैं तथा इसमें परावर्तित प्रकाश की मात्रा पॉलिशदार तल के अनुसार अधिकतम होती है। किसी खुरदरे पृष्ठ से हो रहे परावर्तन को विसरित या अनियमित परावर्तन कहते हैं।

किसी समतल तल से परावर्तन के दो नियम निम्न प्रकार हैं—

(i) **प्रथम नियम–** तल के अभिलंब तथा आपतित किरण के बीच का कोण तथा तल के अभिलंब तथा परावर्तित किरण के बीच का कोण बराबर होते हैं, या

$$\text{आपतन कोण } \angle i = \text{परावर्तन कोण } \angle r$$

(ii) **दूसरा नियम–** आपतित किरण, अभिलंब तथा परावर्तित किरण सभी एक ही तल में होते हैं। इस तल को आपतन तल कहते हैं।

प्रश्न 2. प्रकाश के परावर्तन के नियम लिखिए। पार्श्व उत्क्रमण से क्या तात्पर्य है? अंग्रेजी के किन अक्षरों में पार्श्व उत्क्रमण का अनुभव नहीं होता?

उत्तर– **प्रकाश के परावर्तन के नियम–** प्रकाश के परावर्तन के निम्नलिखित दो नियम हैं—

(i) **प्रथम नियम–** तल के अभिलंब एवं आपतित किरण के बीच बना कोण तथा परावर्तित किरण एवं तल के अभिलंब के बीच बना कोण बराबर होते हैं, अर्थात्

$$\text{आपतन कोण } \angle i = \text{परावर्तन कोण } \angle r$$

(ii) द्वितीय नियम– आपतित किरण, अभिलंब तथा परावर्तित किरण सभी एक ही तल में होते हैं। इस प्रकार के तल को आपतन तल कहते हैं।

पार्श्व उत्क्रमण– जब हम अपना प्रतिबिंब समतल दर्पण में देखते हैं तो हमारा दायाँ हाथ प्रतिबिंब का बायाँ हाथ दिखाई पड़ता है तथा हमारा बायाँ हाथ प्रतिबिंब का दायाँ हाथ दिखाई पड़ता है इस प्रकार वस्तु के प्रतिबिंब में पार्श्व बदल जाते हैं। इस घटना को पार्श्व उत्क्रमण कहते हैं।

यह कथन छपे अक्षरों से स्पष्ट होता है। यदि हम अक्षर छपे कागज को दर्पण के सामने रखकर पढ़े तो अक्षर उल्टा दिखाई देता है। माना कि E आकार की वस्तु समतल दर्पण M के सामने रखी है। वस्तु के बिंदु A का प्रतिबिंब A' दर्पण के पीछे उतनी ही दूरी पर बनता है जितनी दूरी पर दर्पण के सामने A है। इसी प्रकार अन्य बिंदुओं B तथा C के प्रतिबिंब बनते हैं। वस्तुओं के सभी बिंदुओं के प्रतिबिंबों को ज्ञात करके बनने वाले प्रतिबिंब को प्राप्त किया जा सकता है। यह प्रतिबिंब वस्तु के आकार का बनता है परंतु उसमें पार्श्व बदल जाते हैं।

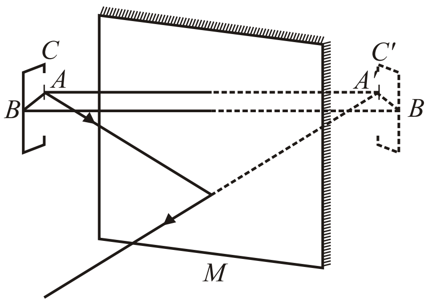

सममिति के कारण अंग्रेजी के अक्षरों $A, H, I, M, O, T, U, V, W, X, Y$ के दपर्ण से बने प्रतिबिंबों में पार्श्व उत्क्रमण का अनुभव नहीं होता, यद्यपि इसमें भी पार्श्व उत्क्रमण होता है।

प्रश्न 3. समतल दर्पण द्वारा प्रतिबिंब का बनना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– $M_1 M_2$ एक समतल दर्पण है तथा O एक बिंदु-वस्तु है। दर्पण द्वारा बने O के प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात करने के लिए, हम दो आपतित किरणें OA तथा OB लेते हैं। किरण OA, दर्पण पर लंबवत् गिरती है अर्थात् इसके लिए आपतन कोण शून्य है। अत: परावर्तन कोण भी शून्य होगा।

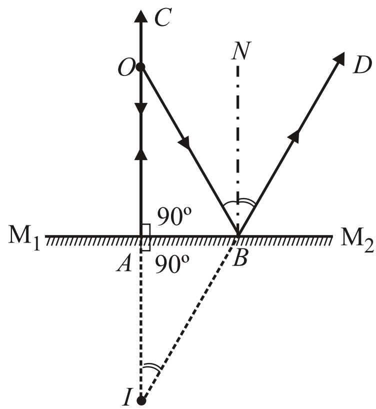

अत: यह किरण परावर्तन के पश्चात् उसी मार्ग पर वापस लौट जाती है। अर्थात् AC परावर्तित किरण है। दूसरी आपतित किरण OB, दर्पण के बिंदु B पर गिरती है। बिन्दु B पर अभिलंब BN खींचा गया है। अब बिंदु B पर आपतन कोण के बराबर परावर्तन कोण बनाते हुए, परावर्तित किरण BD खींच लेते हैं। दोनों परावर्तित किरणें AC तथा BD पीछे बढ़ाई जाने पर I पर मिलती हैं। अत: ये बिंदु I से आती हुई प्रतीत होती है, इस प्रकार I, बिंदु O का आभासी प्रतिबिंब है।

आपतन कोण OBN = परावर्तन कोण NBD

परन्तु $\angle OBN = \angle AOB$ (एकांतर कोण)

तथा $\angle NBD = \angle AIB$ (संगत कोण)

$\therefore$ $\angle AOB = \angle AIB$

अब त्रिभुजों AOB तथा AIB में

$$\angle AOB = \angle AIB$$

$$\angle OAB = \angle IAB \quad \text{(प्रत्येक समकोण)}$$

भुजा AB उभयनिष्ठ है, इस प्रकार दोनों त्रिभुज सर्वांगसम हैं।

$\therefore \quad AO = IA$

अतः स्पष्ट है कि समतल दर्पण द्वारा वस्तु का प्रतिबिंब दर्पण के ठीक पीछे उतनी ही दूरी पर बनता है जितनी दूरी पर वस्तु दर्पण के सामने है। यदि हम वस्तु को दर्पण से दूर हटाए या पास ले जाए तो प्रतिबिंब भी उतनी ही दूर दर्पण से हट जाएगा या दर्पण के पास आ जाएगा। यदि हम किसी वेग से दर्पण की ओर भागे या दर्पण से दूर दौड़े तो हमें अपना स्वयं का प्रतिबिंब दुगुने वेग से अपनी ओर आता अथवा अपने से दूर जाता प्रतीत होगा।

प्रश्न 4. गोलीय दर्पण किसी कहते हैं? ये कितने प्रकार के होते हैं? प्रत्येक के उपयोग लिखिए।

उत्तर– गोलीय दर्पण– गोलीय दर्पण काँच के खोखले गोले का काटा गया भाग होता है। इसके एक तल पर पारे की कलई तथा लाल-ऑक्साइड का पेंट होता है। दूसरा तल परावर्तक तल होता है। गोलीय दर्पण दो प्रकार के होते हैं—

(i) अवतल दर्पण (ii) उत्तल दर्पण।

(i) अवतल दर्पण– वह दर्पण जिसमें परावर्तन दबे हुए तल से होता है अर्थात् गोले का भीतरी तल परावर्तक तल होता है।

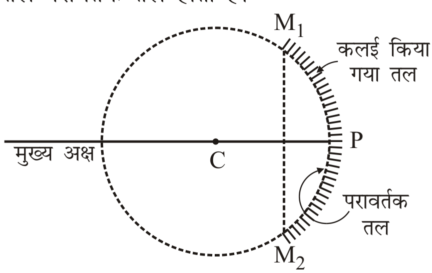

अवतल

(ii) उत्तल दर्पण– वह दर्पण हैं जिसमें परावर्तन उभरे हुए तल से होता है अर्थात् गोले का बाहरी तल परावर्तक तल होता है।

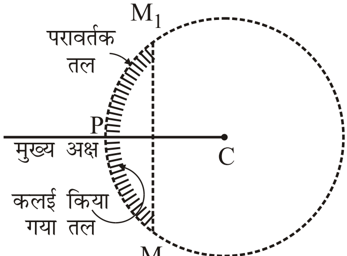

उत्तल

अवतल दर्पण के उपयोग–

(i) बड़ी फोकस दूरी तथा बड़े द्वारक का अवतल दर्पण दाढ़ी बनाने के काम आता है। मनुष्य अपने चेहरे को दर्पण के ध्रुव तथा फोकस के बीच में रखता है जिससे चेहरे का सीधा व बड़ा आभासी प्रतिबिंब दर्पण में दिखाई देने लगता है।

(ii) डॉक्टर प्रकाश की किरणें छोटे अवतल दर्पण से परावर्तित करके आँख, दाँत, नाक, कान, गले इत्यादि में डालते हैं। इससे ये अंग भली-भाँति प्रकाशित हो जाते हैं।

(iii) अवतल दर्पणों का उपयोग टेबिल लैम्पों की शेडों में किया जाता है। जिससे प्रकाश दर्पण से होकर अभिसारी हो जाता है और क्षेत्र को अधिक प्रकाश पहुँचाता हैं।

(iv) अवतल दर्पणों का उपयोग मोटरकारों, रेलवे इंजनों में तथा सर्च लाइट के लैम्पों में परावर्तक के रूप में होता है। लैम्प दर्पण के मुख्य फोकस पर होता है। अत: परावर्तन के पश्चात् प्रकाश एक समांतर किरण-पुँज के रूप में आगे बढ़ता है।

उत्तल दर्पण के उपयोग–

(i) उत्तल दर्पण का उपयोग गली तथा बाजारों में लगे लैम्पों के ऊपर किया जाता है। प्रकाश दर्पण से परावर्तित होकर अपसारी किरण-पुँज के रूप में चलता है और अधिक क्षेत्र में फैल जाता है।

(ii) उत्तल दर्पण मोटरकारों में ड्राइवर की सीट के पास लगा रहता है। इसमें ड्राइवर पीछे से आने वाले व्यक्तियों व गाड़ियों के प्रतिबिंब देख सकता है। ये उत्तल दर्पण बहुत बड़े क्षेत्र में फैली वस्तुओं के प्रतिबिंब आकार में छोटे तथा सीधे दिखते हैं।

प्रश्न 5. गोलीय दर्पण से संबंधित निम्नलिखित की परिभाषा लिखिए–

(a) दर्पण का ध्रुव, (b) मुख्य अक्ष, (c) वक्रता त्रिज्या, (d) वक्रता केंद्र,

(e) मुख्य फोकस, (f) फोकस दूरी, (g) फोकस तल।

उत्तर– (a) **दर्पण का ध्रुव–** गोलीय दर्पण के परावर्तक तल के मध्य बिंदु को दर्पण का ध्रुव कहते हैं। इसको P से प्रदर्शित करते है।

(b) **मुख्य अक्ष–** दर्पण के वक्रता केंद्र तथा ध्रुव को मिलाने वाली रेखा को दर्पण का मुख्य अक्ष कहते हैं।

(c) **वक्रता त्रिज्या–** उस गोले की त्रिज्या को जिसका कि दर्पण का एक भाग है, दर्पण की वक्रता त्रिज्या कहते हैं।

(d) **वक्रता केंद्र–** उस गोले के केंद्र को जिसका दर्पण एक भाग है, दर्पण का वक्रता-केंद्र कहते हैं। यह अवतल दर्पण में परावर्तक तल की ओर तथा उत्तल दर्पण में परावर्तक तल से दूसरी ओर होता है। इसे C से प्रदर्शित किया जाता है।

(e) **मुख्य फोकस–** गोलीय दर्पण की मुख्य अक्ष के समांतर आपतित किरणें दर्पण से परावर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष पर स्थित जिस बिंदु से होकर जाती हैं अथवा जिस बिंदु से अपसारित होती हुई प्रतीत होती हैं, उस बिंदु को दर्पण का मुख्य फोकस कहते हैं। मुख्य फोकस को सामान्यत: केवल फोकस लिखा जाता है। इसे F से प्रदर्शित किया जाता है।

(f) **फोकस दूरी–** दर्पण के ध्रुव से मुख्य फोकस तक की दूरी को दर्पण की फोकस दूरी कहते हैं। इसे f से प्रदर्शित करते हैं।

दर्पण का फोकस बिंदु F, ध्रुव P एवं वक्रता केंद्र C के ठीक बीच में होता है। यदि दर्पण की वक्रता त्रिज्या r हो तो फोकस दूरी $F = \frac{r}{2}$। अत: फोकस दूरी, वक्रता त्रिज्या की आधी होती है।

(g) **फोकस तल–** फोकस तल वह तल होता है, जो मुख्य फोकस में से होकर जाता है और मुख्य अक्ष के लंब रूप में होता है।

प्रश्न 6. प्रतिबिंब किसे कहते हैं? वास्तविक तथा आभासी प्रतिबिंब में क्या अन्तर है?

उत्तर– **प्रतिबिंब–** वस्तु के किसी बिंदु से दो या दो से अधिक प्रकाश की किरणें चलकर परावर्तन या अपवर्तन के पश्चात् जिस बिंदु पर जाकर मिलती हैं या मिलती हुई प्रतीत होती हैं, तो वह बिंदु पहले बिंदु का प्रतिबिंब कहलाता है। किसी वस्तु के विभिन्न बिंदुओं के प्रतिबिंबों को मिलाने पर उस वस्तु का प्रतिबिंब बन जाता है।

प्रतिबिंब दो प्रकार के होते हैं— (i) आभासी प्रतिबिंब, (ii) वास्तविक प्रतिबिंब

(i) आभासी प्रतिबिंब– यदि किसी बिंदु वस्तु से चलने वाली किरणें परावर्तन या अपवर्तन के पश्चात् अपसारी हो जाती हैं तथा किसी बिंदु से आती हुई प्रतीत हों, तो वह आभासी प्रतिबिंब होगा। इस प्रतिबिंब को परदे पर नहीं लिया जा सकता है। यह वस्तु के सापेक्ष सीधा होता है। समतल दर्पण से सदैव आभासी प्रतिबिंब ही बनता है।

(ii) वास्तविक प्रतिबिंब– यदि किसी वस्तु से चलने वाली किरणें परावर्तन या अपवर्तन के पश्चात् किसी दूसरे बिंदु पर जाकर वास्तव में मिलें, तो वह प्रतिबिंब वास्तविक प्रतिबिंब कहलाता है। वास्तविक प्रतिबिंब किरणों के वास्तव में एक-दूसरे को काटने के स्थान पर बनता है। इसे परदे पर भी बनाया जा सकता है। प्राय: अवतल व उत्तल दर्पण का प्रतिबिंब वास्तविक प्रतिबिंब बनता है। यह वस्तु के सापेक्ष उल्टा बनता है।

प्रश्न 7. गोलीय दर्पणों में प्रतिबिंब बनाने के कौन-कौन से नियम हैं?

उत्तर– गोलीय दर्पणों में प्रतिबिंब बनाने के निम्नलिखित नियम हैं—

(i) गोलीय दर्पण पर, जब मुख्य अक्ष के समांतर प्रकाश किरण आपतित होती है, तो वह परावर्तित होकर मुख्य फोकस (अवतल दर्पण) से होकर जाती हैं या मुख्य फोकस से होकर आती हुई प्रतीत उत्तल दर्पण में होती है।

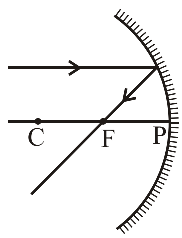

अवतल दर्पण

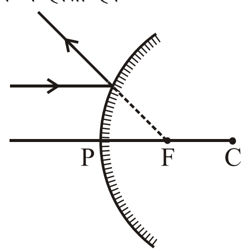

उत्तल दर्पण

(ii) जब मुख्य फोकस में से होकर जाने वाली (अवतल दर्पण) अथवा मुख्य फोकस बिंदु की ओर जाने वाली किरण (उत्तल दर्पण) दर्पण पर आपतित होती है, तब वह परावर्तित होकर मुख्य अक्ष के समांतर हो जाती है।

(iii) जब वक्रता केंद्र में से होकर जाने वाली (अवतल दर्पण) या वक्रता केंद्र की ओर जाने वाली (उत्तल दर्पण) किरण दर्पण पर आपतित होती है, तब वह परावर्तित होकर अपने मार्ग पर ही वापस लौट जाती है।

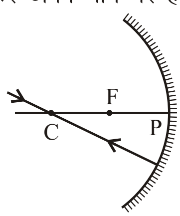

अवतल दर्पण

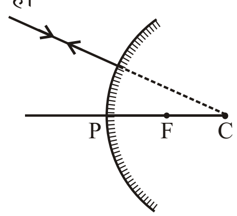

उत्तल दर्पण

प्रश्न 8. अवतल दर्पण के सम्मुख निम्नलिखित स्थितियों में रखी वस्तु के दर्पण द्वारा बने प्रतिबिंबों की स्थिति, आकार एवं प्रकृति किरण आरेख खींचकर दर्शाइए- (a) ध्रुव व फोकस के बीच, (b) वक्रता केंद्र पर, (c) फोकस व वक्रता केंद्र के बीच।
अथवा अवतल दर्पण के सम्मुख विभिन्न स्थितियों में रखी वस्तु के दर्पण द्वारा प्रतिबिंबों का बनना किरण आरेख द्वारा दिखाइए।

उत्तर- अवतल दर्पण के सम्मुख विभिन्न स्थितियों में रखी वस्तु के प्रतिबिंबों का बनना निम्न प्रकार से हैं—

(i) वस्तु अनंत पर- वस्तु OO' दर्पण से अनंत दूरी पर है। O' से आने वाली किरणें आपस में समांतर होगी। एक किरण जो फोकस F से होकर जाती है, परावर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के समांतर हो जाती है। दूसरी किरण जो वक्रता केंद्र C से होकर आती है परावर्तन के पश्चात् उसी मार्ग पर लौट आती है। ये दोनों परावर्तित किरणें दर्पण के फोकस तल में एक ही बिंदु I' पर मिलती है। I', O' का प्रतिबिंब है। O का प्रतिबिंब I, फोकस F पर बनता है। अत: II', वस्तु OO' का पूरा प्रतिबिंब है। यह प्रतिबिंब दर्पण के फोकस तल में स्थित है तथा वास्तविक, उल्टा व वस्तु से बहुत छोटा है।

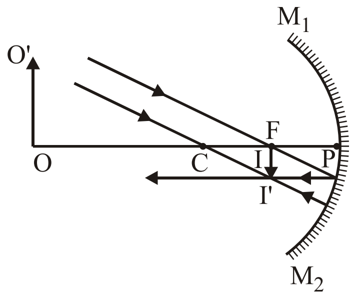

(ii) वस्तु वक्रता केंद्र तथा अनंत के बीच- वस्तु OO' मुख्य अक्ष पर वक्रता केंद्र C के आगे रखी हुई है। O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली किरण $O'A$ परावर्तन के पश्चात् फोकस F से होकर जाती है। दूसरी किरण $O'B$ जो वक्रता केंद्र C से होकर आती है, परावर्तन के पश्चात् उसी मार्ग से लौट जाती है। ये दोनों परावर्तित किरणें I' पर मिलती हैं जो O' का वास्तविक प्रतिबिंब है। II' जो I' से मुख्य अक्ष पर खींचा गया लंब है, OO' का पूरा प्रतिबिंब है। यह प्रतिबिंब दर्पण के फोकस F तथा वक्रता केंद्र C के बीच में है तथा वास्तविक, उल्टा व वस्तु से छोटा है।

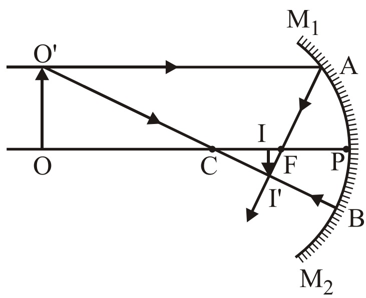

(iii) वस्तु वक्रता केंद्र पर- वस्तु OO' वक्रता केंद्र C पर स्थित है। O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली आपतित किरण $O'A$ परावर्तित होकर F से होकर जाती है। दूसरी आपतित किरण $O'B$ जो फोकस F में से होकर जाती है, परावर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के समांतर हो जाती है। ये दोनों किरणें बिंदु I' पर काटती हैं जो O' का प्रतिबिंब है। I' से मुख्य अक्ष पर लंब II', वस्तु OO' का पूरा प्रतिबिंब

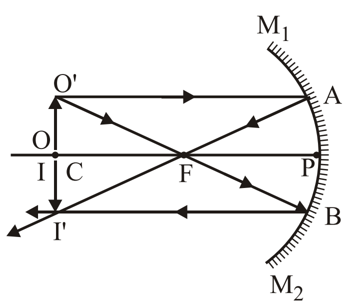

है। यह प्रतिबिंब दर्पण के वक्रता केंद्र पर है तथा वास्तविक, उल्टा व आकार में वस्तु के बराबर है।

(iv) वस्तु मुख्य-फोकस तथा वक्रता केंद्र के बीच– वस्तु OO' दर्पण के मुख्य- फोकस F तथा वक्रता केंद्र C के बीच में स्थित है। O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली आपतित किरण $O'A$ परावर्तित होकर F से होकर जाती है। दूसरी आपतित किरण $O'B$ जो फोकस F में से होकर जाती है, परावर्तित होकर मुख्य अक्ष के समांतर हो जाती है। दोनों परावर्तित किरणें बिंदु I' पर काटती हैं जो O' का प्रतिबिंब है। I' से मुख्य अक्ष पर लंब II', वस्तु OO' का पूरा प्रतिबिंब है। यह प्रतिबिंब दर्पण के वक्रता केंद्र तथा अनंत के बीच स्थित है तथा वास्तविक, उल्टा व वस्तु से बड़ा है।

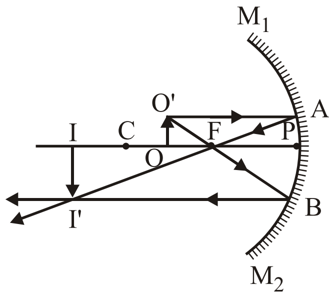

(v) वस्तु मुख्य-फोकस पर– वस्तु OO', मुख्य-फोकस F पर है। O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली आपतित किरण $O'A$ परावर्तित होकर मुख्य फोकस F से होकर जाती है। O' से चलने वाली दूसरी आपतित किरण जो पीछे बढ़ाने पर वक्रता केंद्र C से गुजरती है, दर्पण से परावर्तित होकर उसी मार्ग पर लौट जाती है। ये दोनों किरणें समांतर होने के कारण अनंत पर अक्ष के नीचे मिलती है जहाँ O' का प्रतिबिंब बनता है। इसी प्रकार O का प्रतिबिंब अनंत पर मुख्य अक्ष पर बनता है। अत: OO' का प्रतिबिंब अंनत पर बनता है तथा वास्तविक, उल्टा, व वस्तु से बहुत बड़ा होता है।

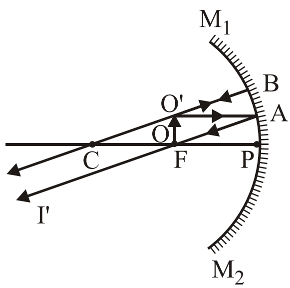

(vi) वस्तु ध्रुव तथा मुख्य-फोकस के बीच– वस्तु OO' ध्रुव P तथा मुख्य फोकस F के बीच में है। O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली किरण $O'A$ परावर्तित होकर मुख्य फोकस F में से होकर जाती है। दूसरी किरण $O'B$ दर्पण पर अभिलंबवत् गिरती है, अत: परावर्तित होकर उसी मार्ग पर लौट आती है। ये दोनों परावर्तित किरणें दर्पण के पीछे बिंदु I' से आती हुई प्रतीत हाती हैं। अत: I', बिन्दु O' का आभासी प्रतिबिंब है। I' से मुख्य अक्ष पर लंब II' वस्तु का पूरा प्रतिबिंब है। यह प्रतिबिंब दर्पण के पीछे बनता है तथा आभासी, सीधा व आकार में वस्तु से बड़ा है।

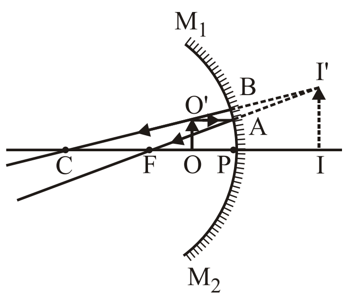

प्रश्न 9. गोलीय दर्पण की फोकस दूरी की परिभाषा दीजिए। गोलीय दर्पण के लिए $\frac{1}{v}+\frac{1}{u}=\frac{1}{f}$ संबंध को स्थापित कीजिए।

उत्तर– **गोलीय दर्पण की फोकस दूरी–** दर्पण के ध्रुव से मुख्य फोकस तक की दूरी को दर्पण की फोकस दूरी कहते हैं। इसे f से प्रदर्शित करते हैं। दर्पण का फोकस बिंदु F, ध्रुव P, एवं वक्रता केंद्र C के ठीक बीच में होता है। यदि दर्पण की वक्रता त्रिज्या r हो, तो फोकस दूरी $f = \frac{r}{2}$

अत: फोकस दूरी, वक्रता त्रिज्या की आधी होती है।

गोलीय दर्पण के लिए, u, v तथा f में संबंध–

अवतल दर्पण के लिए– माना कि M_1M_2 एक अवतल दर्पण है। जिसका ध्रुव P है, फोकस F है तथा वक्रता केंद्र C है। इसकी मुख्य अक्ष के किसी बिंदु पर OO' एक वस्तु है। वस्तु के सिरे O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली आपतित किरण $O'A$, दर्पण के बिंदु A पर गिरती है। यह किरण परावर्तन के पश्चात् दर्पण के फोकस F से होकर जाती है। दूसरी किरण $O'B$ जो दर्पण के वक्रता केंद्र C से होकर जाती है, परावर्तन के पश्चात् उसी मार्ग से लौट आती है। दोनों परावर्तित किरणें I' पर काटती हैं। मुख्य अक्ष पर I' से खींचा गया लंब II' वस्तु OO' का प्रतिबिंब होगा।

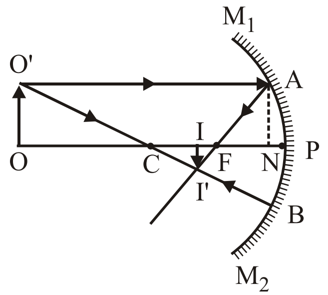

माना कि वस्तु OO' की दर्पण के ध्रुव से दूरी $PO = -u$, प्रतिबिंब II' की दूरी $PI = -v$, दर्पण की वक्रता त्रिज्या $PC = -r$ तथा दर्पण की फोकस दूरी $PF = -f$ है। (ये सभी दूरियाँ आपतित किरण की विपरीत दिशा में नापी जाती हैं, अत: ऋणात्मक चिह्न के साथ ली गई हैं।)

त्रिभुज $OO'C$ तथा त्रिभुज $CI'I$ समकोणिक हैं।

$$\therefore \quad \frac{OO'}{II'} = \frac{CO}{IC} \quad \ldots(i)$$

इसी प्रकार, त्रिभुज $II'F$ तथा ANF भी समकोणिक हैं मुख्य अक्ष पर A से खींचा गया लंब AN है।

$$\therefore \quad \frac{NA}{II'} = \frac{NF}{FI}$$

परंतु

$$NA = OO'$$

$$\frac{OO'}{II'} = \frac{NF}{FI} \quad \ldots(ii)$$

समीकरण (i) व (ii) से,

$$\frac{CO}{IC} = \frac{NF}{FI}$$

मान लिया कि बिंदु A, दर्पण के ध्रुव P के बहुत समीप है, तब

$$NF = PF \quad \text{(लगभग)}$$

$$\therefore \quad \frac{CO}{IC} = \frac{PF}{FI}$$

अथवा

$$\frac{PO - PC}{PC - PI} = \frac{PF}{PI - PF}$$

चिह्न सहित मान रखने पर

$$\frac{-u-(-r)}{-r-(-v)} = \frac{-f}{-v-(-f)}$$

अथवा $$\frac{-u+2f}{-2f+v} = \frac{-f}{-v+f} \qquad (\because r = 2f)$$

अथवा $$(-u+2f)(-v+f) = -f(-2f+v)$$

अथवा $$uv - 2fv - fu + 2f^2 = 2f^2 - fv$$

अथवा $$uv - fv - fu = 0$$

अथवा $$fv + fu = uv$$

दोनों ओर uvf से भाग करने पर

$$\boxed{\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}}$$

प्रश्न 10. अवतल दर्पण के लिए सूत्र $\frac{1}{v} + \frac{1}{u} = \frac{1}{f}$ का निगमन कीजिए, जहाँ संकेतों का सामान्य अर्थ है।

उत्तर– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 9 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 11. सिद्ध कीजिए की गोलीय दर्पण की फोकस दूरी उसकी वक्रता त्रिज्या की आधी होती है।

उत्तर– जब दर्पण का द्वारक वक्रता त्रिज्या की अपेक्षा छोटा होता है तो फोकस दूरी, वक्रता त्रिज्या की आधी होती है। यह संबंध निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता हैं—

(i) अवतल दर्पण– M_1M_2 एक अवतल दर्पण है जिसका ध्रुव P है, फोकस F तथा वक्रता केंद्र C है। मुख्य-अक्ष के समांतर प्रकाश की एक किरण BA, दर्पण के बिंदु A पर टकराती है। फोकस की परिभाषा के अनुसार, परावर्तित किरण फोकस F में को होकर जाती है। यदि C को A से मिलाया जाए, तो CA, दर्पण पर अभिलंब होगा। अत: $\angle BAC$ आपतन कोण तथा $\angle CAF$ परावर्तन कोण होगा। अब परावर्तन के अनुसार

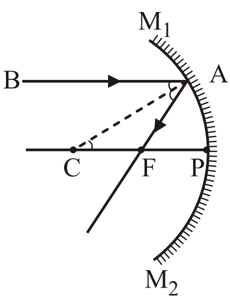

$$\angle BAC = \angle CAF \qquad \text{(परावर्तन का नियम)}$$

परंतु $$\angle BAC = \angle ACF \qquad \text{(एकांतर कोण)}$$

$\therefore$ $$\angle CAF = \angle ACF$$

$\therefore$ $$AF = FC$$

यदि दर्पण का द्वारक छोटा है तो बिंदु A, बिंदु P के समीप होगा। तब $AF = PF$ (लगभग)

$\therefore$ $$PF = FC = \frac{1}{2}PC$$

यदि फोकस दूरी $(PF)\, f$ हो तथा वक्रता त्रिज्या $(PC)\, r$ हो, तो

$\therefore$ $$\boxed{f = \frac{r}{2}}$$

(ii) **उत्तल दर्पण–** इसी प्रकार सिद्ध किया जा सकता है कि उत्तल दर्पण में भी फोकस दूरी, वक्रता त्रिज्या की आधी होती है।

प्रश्न 12. उत्तल दर्पण के लिए u, v तथा f में संबंध प्राप्त कीजिए।

उत्तर– माना कि M_1M_2 एक उत्तल दर्पण है जिसका ध्रुव P है, फोकस F है तथा वक्रता केंद्र C है। इसके मुख्य अक्ष के किसी बिंदु पर OO' वस्तु है। वस्तु के सिरे O' से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली आपतित किरण $O'A$, दर्पण के बिंदु A पर गिरती है। यह किरण परावर्तन के पश्चात् दर्पण के फोकस F से होकर जाती है। दूसरी किरण $O'B$ जो दर्पण के वक्रता केंद्र C से होकर जाती है, परावर्तन के पश्चात् उसी मार्ग से लौट जाती है। दोनों परावर्तित किरणें I' पर काटती हैं। मुख्य अक्ष पर I' से खींचा गया लंब II' वस्तु OO' का प्रतिबिंब होगा।

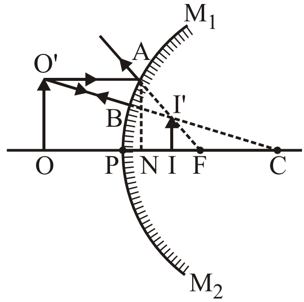

माना कि वस्तु OO' दर्पण के ध्रुव से दूरी $PO = -u$, प्रतिबिंब II' की दूरी $PI = v$, दर्पण की वक्रता त्रिज्या $PC = r$ तथा दर्पण की फोकस दूरी $PF = f$ है।

त्रिभुज $OO'C$ तथा त्रिभुज $CI'I$ समकोणिक हैं।

$$\therefore \quad \frac{OO'}{II'} = \frac{CO}{IC} \qquad \ldots(i)$$

इसी प्रकार, त्रिभुज $II'F$ तथा ANF भी समकोणिक हैं मुख्य अक्ष पर A से खींचा गया लंब AN है।

$$\therefore \quad \frac{NA}{II'} = \frac{NF}{FI}$$

परंतु
$$NA = OO'$$
$$\frac{OO'}{II'} = \frac{NF}{FI} \qquad \ldots(ii)$$

समीकरण (i) व (ii) से

$$\therefore \quad \frac{CO}{IC} = \frac{NF}{FI}$$

मान लिया कि बिंदु A, दर्पण के ध्रुव P के बहुत समीप है, तब

$$NF = PF \qquad \text{(लगभग)}$$
$$\therefore \quad \frac{CO}{IC} = \frac{PF}{FI}$$

या
$$\frac{PC + PO}{PC - PI} = \frac{PF}{PF - PI}$$

चिह्न सहित मान रखने पर

$$\frac{r - u}{r - v} = \frac{f}{f - v}$$
$$\frac{2f - u}{2f - v} = \frac{f}{f - v} \qquad (\because r = 2f)$$
$$(2f - u)(f - v) = f(2f - v)$$

$$2f^2 - 2fv - fu + uv = 2f^2 - fv$$

$$fv + fu = uv$$

दोनों ओर uvf से भाग करने पर

$$\boxed{\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}}$$

प्रश्न 13. रेखीय आवर्धन किसे कहते हैं? गोलीय दर्पण में बने प्रतिबिंब के रेखीय आवर्धन के लिए सूत्र $m = -v/u$ स्थापित कीजिए।

उत्तर- **रेखीय आवर्धन-** दर्पण द्वारा बने किसी वस्तु के प्रतिबिंब की लंबाई तथा वस्तु की लंबाई के अनुपात को प्रतिबिंब का **रेखीय आवर्धन** कहते हैं। यदि प्रतिबिंब की लंबाई I तथा वस्तु की लंबाई O हो, तो

दर्पण द्वारा रेखीय आवर्धन, $m = \dfrac{\text{प्रतिबिंब की लंबाई}}{\text{वस्तु की लंबाई}} = \dfrac{I}{O}$

अवतल दर्पण द्वारा बने प्रतिबिंब का रेखीय आवर्धन- माना M_1M_2 एक अवतल दर्पण है, जिसका वक्रता केंद्र C, ध्रुव P तथा मुख्य फोकस F हैं। इस दर्पण की मुख्य अक्ष पर स्थित वस्तु AB का उल्टा तथा वास्तविक प्रतिबिंब $A'B'$ बनना दिखाया गया है। चूँकि अक्ष PA, दर्पण $\angle BPA$ आपतन कोण तथा $\angle APB'$ परावर्तन कोण होगा।

अत: $\angle BPA = \angle APB'$ (परावर्तन के नियम से)

$\angle PAB = \angle PA'B'$ (प्रत्येक समकोण)

अत: $\Delta\, ABP$ तथा $\Delta\, A'B'P$ समकोणिक हैं।

$$\frac{A'B'}{AB} = \frac{PA'}{PA}$$

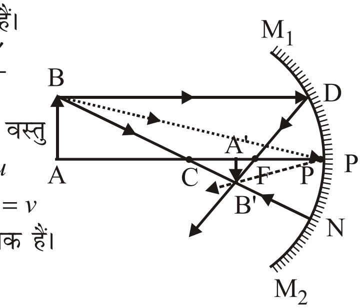

माना $AB = O$ तथा $A'B' = I$

तथा वस्तु की दर्पण के ध्रुव से दूरी $PA = u$

और प्रतिबिंब की दर्पण के ध्रुव से दूरी $PA' = v$

यहाँ O धनात्मक है तथा u, v तथा I ऋणात्मक हैं।

$$\frac{-I}{O} = \frac{-v}{-u}$$

अत: प्रतिबिंब के रेखीय आवर्धन का सूत्र $m = \dfrac{I}{O} = \dfrac{-v}{u}$

उत्तल दर्पण के लिए भी आवर्धन का सूत्र $m = \dfrac{I}{O} = \dfrac{-v}{u}$ होता है।

प्रश्न 14. प्रतिबिंब देखकर अवतल, उत्तल तथा समतल दर्पणों को किस प्रकार पहचाना जा सकता है?

उत्तर- **प्रतिबिंब देखकर दर्पणों की पहचान-**

(i) यदि किसी वस्तु को दर्पण के सामने रखने पर वस्तु का प्रतिबिंब सदैव वस्तु के ही बराबर बने तो ऐसे दर्पण को समतल दर्पण कहते हैं।

(ii) यदि किसी वस्तु को दर्पण के समीप रखने पर प्रतिबिंब सीधा व वस्तु से बड़ा और दूर रखने पर उल्टा व वस्तु से बड़ा या छोटा बने तो ऐसे दर्पण अवतल दर्पण कहलाते हैं।

(iii) यदि वस्तु का दर्पण के द्वारा बनाया गया प्रतिबिंब वस्तु की प्रत्येक स्थिति के लिए सीधा तथा वस्तु से छोटा ही बने तो इस प्रकार के दर्पण को उत्तल दर्पण कहते हैं।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. परावर्तन के नियमों को चित्र सहित समझाइए।

उत्तर- **परावर्तन का नियम-** किसी समतल तल से परावर्तन के निम्नलिखित दो नियम हैं—

(i) **प्रथम नियम-** तल के अभिलंब तथा आपतित किरण के बीच का कोण तथा तल के अभिलंब तथा परावर्तित किरण के बीच का कोण बराबर होते हैं, अर्थात्

$$\text{आपतन कोण } \angle i = \text{परावर्तन कोण } \angle r$$

(ii) **दूसरा नियम-** आपतित किरण, अभिलंब तथा परावर्तित किरण सभी एक ही तल में होते हैं। इस तल को आपतन तल कहते हैं।

चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-1 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 2. एक प्रकाश-किरण समतल दर्पण पर लंबवत् आपतित होती है परावर्तित किरण का मार्ग क्या होगा? परावर्तन कोण कितना होगा? विचलन कोण कितना होगा?

उत्तर- समतल दर्पण से परावर्तित किरण का मार्ग आपतित किरण के विपरीत दिशा में होगा। परावर्तन कोण शून्य होगा। विचलन कोण नहीं बनेगा अर्थात् $0°$ का होगा।

प्रश्न 3. संयुग्मी फोकस से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- **संयुग्मी फोकस-** उन दो बिंदुओं को संयुग्मी फोकस कहते हैं जिनमें से एक बिंदु पर रखी वस्तु का प्रतिबिंब दूसरे बिंदु पर बनता है। अवतल दर्पण के सामने O पर रखी वस्तु का प्रतिबिंब I' पर बनता है। इनकी स्थितियाँ आपस में बदली जा सकती है, अर्थात् I' पर रखी वस्तु का प्रतिबिंब O पर बनेगा। अत: O व I' संयुग्मी फोकस है।

यदि कोई वस्तु उत्तल दर्पण के सामने रखी है तथा उस पर प्रतिबिंब दर्पण के पीछे बनता है तथा आभासी होता है। अत: प्रतिबिंब के स्थान पर वस्तु रखने से परावर्तन नहीं होगा। इसका अर्थ है कि संयुग्मी फोकस के तल अवतल दर्पण में ही सम्भव है, उत्तल दर्पण में नहीं। चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-9 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 4. 'प्रतिबिंब' से क्या तात्पर्य है? आभासी और वास्तविक प्रतिबिंब में क्या अंतर होता है?

उत्तर- **प्रतिबिंब-** वस्तु के किसी बिंदु से दो या दो से अधिक प्रकाश किरणें चलकर परावर्तन या अपवर्तन के पश्चात् जिस बिंदु पर जाकर मिलती हैं या मिलती हुई प्रतीत होती हैं, तो वह बिंदु पहले बिंदु का प्रतिबिंब कहलाता है। किसी वस्तु के विभिन्न बिंदुओं के प्रतिबिंबों को मिलाने से उस वस्तु का प्रतिबिंब बन जाता है।

क्र०सं०	अभासी प्रतिबिंब	वास्तविक प्रतिबिंब
1.	आभासी प्रतिबिंब परदे पर नहीं लिया जा सकता है।	वास्तविक प्रतिबिंब परदे पर लिया जा सकता है।
2.	आभासी प्रतिबिंब वस्तु के सापेक्ष सीधा बनता है।	वास्तविक प्रतिबिंब वस्तु के सापेक्ष उल्टा बनता है।

प्रश्न 5. केवल किरण आरेख बनाकर, अवतल दर्पण में प्रतिबिंब का बनना प्रदर्शित कीजिए, जब-

(a) वस्तु मुख्य फोकस पर हो, (b) प्रतिबिंब मुख्य फोकस पर बने।

उत्तर- (a) **वस्तु मुख्य फोकस पर हो-**

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-8 के उत्तर (v) का अवलोकन कीजिए।

(b) प्रतिबिंब मुख्य फोकस पर हो–

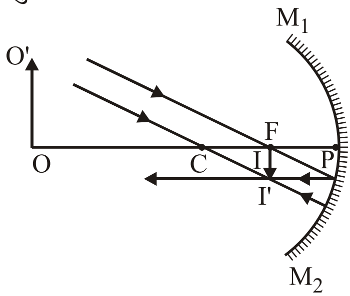

प्रश्न 6. रेखीय आवर्धन किसे कहते हैं?

उत्तर– रेखीय आवर्धन– दर्पण द्वारा बने किसी वस्तु के प्रतिबिंब की लंबाई तथा वस्तु की लंबाई के अनुपात को प्रतिबिंब का रेखीय आवर्धन कहते हैं। यदि प्रतिबिंब की लंबाई I तथा वस्तु की लंबाई O हो, तो

दर्पण द्वारा रेखीय आवर्धन, $m = \frac{\text{प्रतिबिंब की लंबाई}}{\text{वस्तु की लंबाई}} = \frac{I}{O}$

प्रश्न 7. अवतल दर्पण तथा उत्तल दर्पण में परावर्तक तल के विचार से क्या अंतर है?

उत्तर– अवतल दर्पण में परावर्तक तल दबा हुआ (भीतर की ओर) होता है जबकि उत्तल दर्पण में परावर्तक तल उभरा हुआ (बाहर की ओर) होता है।

प्रश्न 8. प्रकाश के चार गुण लिखिए।

उत्तर– प्रकाश के गुण– प्रकाश के निम्नलिखित गुण होते हैं–

(i) साधारणतया प्रकाश सीधी रेखाओं में चलता है।

(ii) प्रकाश के कारण हम वस्तुओं को देख पाते हैं, लेकिन प्रकाश स्वयं दिखाई नहीं देता है।

(iii) प्रकाश विद्युत चुंबकीय तरंगों के रूप में चलता है।

(iv) चमकदार तलों से प्रकाश का परावर्तन होता है।

प्रश्न 9. प्रकाश के परावर्तन से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– जब कोई प्रकाश-किरण किसी माध्यम में चलती हुई किसी चमकदार तल पर आपतित होती है तो वह तल से टकराकर उसी माध्यम में वापस लौट आती है। यह प्रकाश का परावर्तन कहलाता है; जैसे– प्रकाश का किसी दर्पण से टकराकर वापिस उसी माध्यम में लौटना।

प्रकाश जिस तल से टकराकर परावर्तित होता हैं, वह तल परावर्तक तल कहलाता है। तल से टकराने वाली किरण को आपतित किरण तथा टकराने के बाद उसी माध्यम में वापिस लौटती किरण को परावर्तित किरण कहते हैं। तल के जिस बिंदु से आपतित किरण टकराती है, उस बिंदु से खींचा गया लंब अभिलंब कहलाता है।

प्रश्न 10. उत्तल दर्पण द्वारा बने प्रतिबिंब की विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर– उत्तल दर्पण द्वारा बने प्रतिबिंब की विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं–

(i) प्रतिबिंब सदैव दर्पण के पीछे बनता है।

(ii) दर्पण के ध्रुव तथा फोकस के बीच बनता है।

(iii) सीधा तथा आभासी होता है।

(iv) वस्तु के आकार से छोटा होता है।

प्रश्न 11. एक अवतल दर्पण के वक्रता केंद्र एवं फोकस के मध्य रखी वस्तु के प्रतिबिंब बनने का किरण-आरेख खींचिए।

उत्तर– चित्र के लिए, दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-8 के उत्तर (iv) का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 12. दूरियाँ नापने की चिह्न परिपाटी क्या है?

उत्तर– **चिह्न परिपाटी–** प्रकाश में दर्पण से वस्तु की दूरी (u), दर्पण से प्रतिबिंब की दूरी (v), फोकस दूरी (f) आदि को उचित चिह्न देते हैं। इसके लिए निर्देशांक ज्यामिति की परिपाटी अपनाई जाती है, जो निम्न प्रकार से हैं—

(i) दर्पण प्रकाश किरणें सदैव बाईं ओर से डाली जाती हैं।
(ii) समस्त दूरियाँ दर्पण के ध्रुव से मुख्य अक्ष के साथ नापी जाती हैं।
(iii) आपतित किरणों की दिशा में नापी गई दूरियाँ धनात्मक चिह्न के साथ ली जाती हैं।
(iv) आपतित किरणों के विपरीत दिशा में नापी गई दूरियाँ ऋणात्मक चिह्न के साथ ली जाती हैं।
(v) वस्तु तथा प्रतिबिंब की लंबाइयाँ मुख्य अक्ष से ऊपर की ओर धनात्मक तथा मुख्य अक्ष से नीचे की ओर ऋणात्मक ली जाती हैं।

इन नियमों के अनुसार, अवतल दर्पण की फोकस दूरी ऋणात्मक तथा उत्तल दर्पण की फोकस दूरी धनात्मक होती है। सीधे प्रतिबिंबों के लिए आवर्धन धनात्मक और उल्टे प्रतिबिंबों के लिए आवर्धन ऋणात्मक होती है।

प्रश्न 13. मोटर व बस चालकों के पास उत्तल दर्पण के लगे होने का क्या महत्व है?

उत्तर– उत्तल दर्पण मोटर व बस चालकों की सीट के पास इसलिए लगा रहता है। ताकि चालक पीछे से आने वाले व्यक्तियों तथा मोटरकारों के प्रतिबिंबों को अपनी सीट के पास लगे उत्तल दर्पण में आसानी से देख सके। ये प्रतिबिंब आकार में छोटे तथा सीधे होते हैं। इस कार्य के लिए समतल दर्पण की अपेक्षा उत्तल दर्पण का उपयोग अधिक उपयुक्त है। क्योंकि इसका दृष्टि क्षेत्र अधिक व्यापक एवं विस्तृत है जो अधिक क्षेत्र में फैली वस्तुओं का प्रतिबिंब दिखाने में चालक के लिए सहायक होता है।

प्रश्न 14. गाड़ियों की हैड़ लाइट में अवतल दर्पण क्यों लगा होता है?

उत्तर– गाड़ियों की हैड़ लाइट में अवतल दर्पण परावर्तक के रूप में होता है। लैम्प दर्पण के मुख्य फोकस पर होता है। अत: परावर्तन के पश्चात प्रकाश एक समांतर किरण-पुँज के रूप में आगे बढ़ता है और अधिक दूरी तक रोशनी करता है।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

अति लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 30 व 31 पर देखिए।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. 32 सेमी फोकस दूरी के अवतल दर्पण के सामने एक वस्तु 16 सेमी दूरी पर रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात करें।

हल: **दिया है–** अवतल दर्पण की फोकस दूरी $(f) = -32$ सेमी तथा दर्पण से वस्तु की दूरी $u = -16$ सेमी

सूत्र— $$\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f} \quad \text{से}$$

$$-\frac{1}{16}+\frac{1}{v}=-\frac{1}{32}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{32} + \frac{1}{16}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1+2}{32} = \frac{1}{32}$$

$\Rightarrow$ $v = 32$ सेमी

अत: **प्रतिबिंब दर्पण से 32 सेमी दूर बनेगा।** उत्तर

प्रश्न 2. 24 सेमी वक्रता त्रिज्या वाले अवतल दर्पण के सामने एक वस्तु 6 सेमी दूरी पर रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात करें।

हल: **दिया है-** अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या $(r) = -24$ सेमी

$\therefore$ अवतल दर्पण की फोकस दूरी $f = \frac{r}{2} = \frac{-24}{2} = -12$ सेमी

दर्पण से वस्तु की दूरी $(u) = -6$ सेमी

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-6} + \frac{1}{v} = \frac{1}{-12} \Rightarrow -\frac{1}{6} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{12}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{12} + \frac{1}{6}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1+2}{12} = \frac{1}{12}$$

$\Rightarrow$ $v = 12$ सेमी

अत: **प्रतिबिंब दर्पण से 12 सेमी दूर दर्पण के पीछे बनेगा।** उत्तर

प्रश्न 3. एक अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या 60 सेमी कोई वस्तु अवतल दर्पण से 45 सेमी दूरी पर रखी है। दर्पण से वस्तु के प्रतिबिंब की दूरी ज्ञात कीजिए।

हल: **दिया है-** $(r) = -60$ सेमी, $u = -45$ सेमी

$\therefore$ $f = \frac{-60}{2} = -30$ सेमी, $v = ?$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{45} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{30}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{30} + \frac{1}{45} = \frac{-3+2}{90} = -\frac{1}{90}$$

$\boldsymbol{v = -90}$ **सेमी** उत्तर

प्रश्न 4. एक उत्तल दर्पण की फोकस दूरी 20 सेमी है। एक वस्तु को दर्पण के सामने कहाँ रखा जाए कि वस्तु के आधे आकार का प्रतिबिंब बनें?

हल: **दिया है-** $f = 20$ सेमी, $\frac{-v}{u} = \frac{I}{O} = \frac{1}{2}$ या $v = -\frac{u}{2}$ सेमी

सूत्र— $\frac{1}{f} = \frac{1}{u} + \frac{1}{v}$ से

$$\frac{1}{20}=\frac{1}{\frac{-u}{2}}+\frac{1}{u}\Rightarrow\frac{1}{20}=-\frac{2}{u}+\frac{1}{u}\Rightarrow\frac{1}{20}=\frac{-2+1}{u}$$

$$\frac{1}{20}=\frac{-1}{u}$$

$\Rightarrow$ $u=-20$ सेमी

अतः **वस्तु दर्पण के आगे 20 सेमी दूरी पर रखी जाएगी।** **उत्तर**

प्रश्न 5. एक अवतल दर्पण के सामने उससे 20 सेमी की दूरी पर कोई वस्तु रखने पर उसका वास्तविक प्रतिबिंब दर्पण से 30 सेमी की दूरी पर बनता है। दर्पण की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है–** $u=-20$ सेमी, $v=-30$ सेमी, $f=?$

सूत्र– $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{20}-\frac{1}{30}=\frac{1}{f}$$

$$\frac{-3-2}{60}=\frac{1}{f}$$

$$\frac{-5}{60}=\frac{1}{f}$$

$$-\frac{1}{12}=\frac{1}{f}$$

$f=-12$ सेमी

अतः **अवतल दर्पण की फोकस दूरी = 12 सेमी** **उत्तर**

प्रश्न 6. अवतल दर्पण के सामने 10 सेमी दूर रखी वस्तु का वास्तविक प्रतिबिंब 30 सेमी दूर बनता है। दर्पण की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है–** $u=-10$ सेमी, $v=-30$ सेमी, $f=?$

सूत्र– $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-10}+\frac{1}{-30}=\frac{1}{f}$$

$$-\frac{1}{10}-\frac{1}{30}=\frac{1}{f}$$

$$\frac{-3-1}{30}=\frac{1}{f}$$

$$\frac{-4}{30}=\frac{1}{f}$$

$f=-\frac{30}{4}=-7.5$ सेमी

अतः **अवतल दर्पण की फोकस दूरी = 7.5 सेमी** **उत्तर**

प्रश्न 7. 20 सेमी फोकस दूरी के अवतल दर्पण के सामने एक वस्तु 30 सेमी की दूरी पर रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है-** $f = -20$ सेमी, $u = -30$ सेमी, $v = ?$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-30} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{20}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{20} + \frac{1}{30} = \frac{-3+2}{60}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1}{60}$$

$$v = -60 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब अवतल दर्पण के सामने 60 सेमी दूरी पर बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 8. एक अवतल दर्पण की फोकस दूरी 10 सेमी है। दर्पण से 20 सेमी की दूरी पर स्थित वस्तु का प्रतिबिंब दर्पण से कितनी दूर बनेगा?

हलः **दिया है-** $f = -10$ सेमी, $u = -20$ सेमी, $v = ?$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-20} + \frac{1}{v} = \frac{1}{-10} \Rightarrow -\frac{1}{20} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{10}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{10} + \frac{1}{20} = \frac{-2+1}{20}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{20}$$

$$v = -20 \text{ सेमी}$$

अत: **अवतल दर्पण से प्रतिबिंब की दूरी = 20 सेमी** **उत्तर**

प्रश्न 9. एक 3.0 सेमी लंबी वस्तु एक 8.0 सेमी वक्रता त्रिज्या वाले अवतल दर्पण के सामने 12 सेमी की दूरी पर मुख्य अक्ष के लंबवत् रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति, आकार व प्रकृति ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है-** $r = -8$ सेमी, $O = 3$ सेमी, $I = ?$

$\therefore$ $f = \frac{r}{2} = \frac{-8}{2} = -4$ सेमी, $u = -12$ सेमी, $v = ?$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{12} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{4}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{4} + \frac{1}{12}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-3+1}{12} = \frac{-2}{12}$$

$$v = -6 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के सामने 6 सेमी दूर बनेगा।**

$$m = \frac{I}{O} = \frac{-v}{u}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{I}{3} = \frac{-6}{-12}$$

$$I = 1.5 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब 1.5 सेमी लंबा, वास्तविक व उल्टा बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 10. एक मनुष्य की ऊँचाई 1.68 मीटर है। अपना पूरा प्रतिबिंब देखने के लिए उसे कम-से-कम कितने ऊँचे समतल दर्पण की आवश्यकता होगी?

हल: **दिया है–** मनुष्य की ऊँचाई $(h) = 1.68$ मीटर, दर्पण की ऊँचाई $(m) = ?$

सूत्र– $m = \frac{1}{2} h$ से

$$m = \frac{1}{2} \times 1.68 = 0.84 \text{ मीटर}$$

$$\Rightarrow \quad m = \mathbf{0.84} \textbf{ मीटर}$$ **उत्तर**

प्रश्न 11. एक मनुष्य समतल दर्पण के सामने खड़ा है। यदि मनुष्य का प्रतिबिंब उससे 6 सेमी दूर बनता है, तो मनुष्य की दर्पण से दूरी बताइए।

हल: **दिया है–** मनुष्य तथा समतल दर्पण में बने उसके

प्रतिबिंब की दूरी $OI = 6$ सेमी

परन्तु $OA = AI$

अत: $OI = OA + AI = 6$

या $OA + OA = 6$

या $2OA = 6$

$\Rightarrow$ $OA = 3$ सेमी **उत्तर**

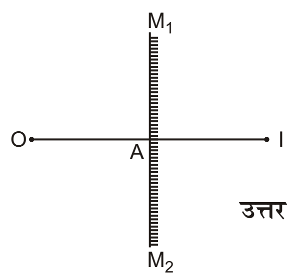

अत: **मनुष्य की दर्पण से दूरी $OA = 3$ सेमी**

प्रश्न 12. 30 सेमी वक्रता त्रिज्या वाले अवतल दर्पण की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हल: **दिया है–** $r = -30$ सेमी, $f = ?$

$$f = \frac{r}{2} = \frac{-30}{2} = -15 \text{ सेमी}$$ **उत्तर**

अत: **अवतल दर्पण की फोकर दूरी –15 सेमी होगी।**

प्रश्न 13. एक उत्तल दर्पण की फोकस दूरी 10 सेमी है। एक वस्तु इसकी मुख्य अक्ष पर ध्रुव से 20 सेमी की दूरी पर रखी जाती है। वस्तु के प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात कीजिए। क्या वह वास्तविक होगा?

हल: **दिया है–** उत्तल दर्पण की फोकस दूरी $(f) = 10$ सेमी तथा दर्पण से वस्तु की दूरी $(u) = -20$ सेमी, $v = ?$

सूत्र– $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

या $\frac{1}{v} + \frac{1}{u} = \frac{1}{f}$

$$\frac{1}{v}-\frac{1}{20}=\frac{1}{10}$$

$$\frac{1}{v}=\frac{1}{10}+\frac{1}{20}=\frac{2+1}{20}=\frac{3}{20}$$

$$v=\frac{20}{3}=6.7 \text{ सेमी}$$ उत्तर

अत: **प्रतिबिम्ब दर्पण के पीछे 6.7 सेमी दूर बनेगा। उत्तल दर्पण में बना वस्तु का प्रतिबिंब वास्तविक नहीं।**

प्रश्न 14. एक उत्तल दर्पण की फोकस दूरी 10 सेमी है। एक वस्तु को दर्पण के सम्मुख कहाँ रखा जाए कि वस्तु के आधे आकार का प्रतिबिंब बने?

हल: **दिया है-** $f=10$ सेमी, $-\frac{v}{u}=\frac{I}{O}=\frac{1/2}{1}$ या $-\frac{v}{u}=\frac{1}{2}$

$\Rightarrow$ $$v=-\frac{1}{2}u$$

सूत्र- $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{u}+\frac{1}{\frac{-u}{2}}=\frac{1}{10}$$

$$\frac{1}{u}-\frac{2}{u}=\frac{1}{10} \Rightarrow \frac{1-2}{u}=\frac{1}{10}$$

$$\frac{-1}{u}=\frac{1}{10} \Rightarrow u=-10 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु को मुख्य अक्ष पर दर्पण के सम्मुख 10 सेमी दूरी पर रखा जाए।** उत्तर

प्रश्न 15. एक अवतल दर्पण के सामने 5 सेमी की दूरी पर रखी वस्तु का वास्तविक प्रतिबिंब 15 सेमी दूर बनता है। दर्पण की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हल: **दिया है-** $u=-5$ सेमी, $v=-15$ सेमी, $f=?$

सूत्र— $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-5}+\frac{1}{-15}=\frac{1}{f}$$

$$-\frac{1}{5}-\frac{1}{15}=\frac{1}{f}$$

$$\frac{-3-1}{15}=\frac{1}{f}$$

$$\frac{-4}{15}=\frac{1}{f}$$

$$f=-\frac{15}{4}=-3.75 \text{ सेमी}$$

अत: **दर्पण की फोकस दूरी 3.75 सेमी होगी।** उत्तर

प्रश्न 16. एक अवतल दर्पण से जिसकी फोकस दूरी 25 सेमी है, कितनी दूरी पर एक वस्तु रखी जाए जिससे कि प्रतिबिंब का आकार वस्तु के आकार के बराबर हो? इसे दिखाने के लिए किरण आरेख खींचिए।

हलः **दिया है–** $f = -25, \quad I = O, \quad u = ?$

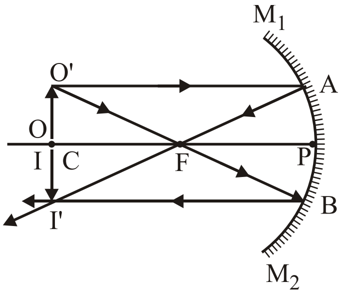

$$m = \frac{I}{O} = \frac{v}{u}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{I}{I} = \frac{v}{u} \quad \Rightarrow v = u$$

$$\frac{1}{-25} = \frac{1}{u} + \frac{1}{v}$$

$$\frac{1}{-25} = \frac{1}{u} + \frac{1}{u} = \frac{1+1}{u}$$

$$-\frac{1}{25} = \frac{2}{u}$$

$$u = -25 \times 2 = -50 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु 50 सेमी पर रखनी पड़ेगी।** उत्तर

प्रश्न 17. एक अवतल दर्पण की फोकस दूरी 5 सेमी है। इसके सामने 10 सेमी की दूरी पर रखी वस्तु का प्रतिबिंब कहाँ पर बनेगा? क्या यह वास्तविक होगा ?

हलः **दिया है–** $f = -5$ सेमी, $u = -10$ सेमी, $v = ?$

सूत्र– $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{-1}{10} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{5}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1}{5} + \frac{1}{10} = \frac{-2+1}{10} = \frac{-1}{10}$$

$$v = -10 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के सामने 10 सेमी की दूरी पर वास्तविक बनेगा।** उत्तर

प्रश्न 18. एक अवतल दर्पण से 30 सेमी दूर रखी वस्तु का तीन गुना बड़ा (a) आभासी (b) वास्तविक प्रतिबिंब प्राप्त होता है। प्रत्येक दशा में अवतल दर्पण की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हलः **(a)** आभासी प्रतिबिंब सीधा होगा, अत: $m = 3$

$$u = -30 \text{ सेमी}, \; m = 3$$

$$m = -\frac{v}{u} \quad \Rightarrow \quad 3 = \frac{-v}{-30}$$

$$v = 90 \text{ सेमी}$$

अत: सूत्र– $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{f} = \frac{1}{90} - \frac{1}{30}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1-3}{90} = \frac{-2}{90}$$

$$f = -45 \text{ सेमी}$$

अत: **आभासी प्रतिबिंब के लिए फोकस दूरी 45 सेमी होगी।**

(b) वास्तविक प्रतिबिंब उल्टा होगा अत: $m = -3$

$$m = -\frac{v}{u} \Rightarrow -3 = \frac{-v}{-30}$$

$$v = -90 \text{ सेमी}$$

अत: सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{f} = -\frac{1}{90} - \frac{1}{30}$$

$$\frac{1}{f} = \frac{-1-3}{90} = \frac{-4}{90}$$

$$f = -\frac{90}{4}$$

$$\Rightarrow \quad f = -22.5 \text{ सेमी}$$

अत: **वास्तविक प्रतिबिंब के लिए फोकस दूरी 22.5 सेमी है।** उत्तर

प्रश्न 19. किसी अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या 40 सेमी है। किसी वस्तु को दर्पण से कितनी दूरी पर रखा जाए कि उसका दो गुने आकार का वास्तविक प्रतिबिंब बने?

हलः **दिया है–** अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या $r = -40$ सेमी

$\therefore$ फोकस दूरी $f = \frac{r}{2} = \frac{-40}{2} = -20$ सेमी

$\frac{-I}{O} = \frac{-v}{u}$ (वास्तविक प्रतिबिंब के लिए आवर्धन क्षमता ऋणात्मक होती है।)

या $\frac{-2}{1} = -\frac{v}{u} \Rightarrow v = +2u$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{u} + \frac{1}{2u} = \frac{-1}{20}$$

$$\frac{2+1}{2u} = \frac{-1}{20}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{3}{2u} = \frac{-1}{20}$$

$$2u = -60$$

$$u = -30 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु दर्पण के सामने 30 सेमी की दूरी पर रखनी चाहिए।** उत्तर

प्रश्न 20. 20 सेमी वक्रता त्रिज्या वाले अवतल दर्पण के सामने 5 सेमी की दूरी पर एक मोमबत्ती रखी जाती है। मोमबत्ती का इस स्थिति में प्रतिबिंब कहाँ पर बनेगा?

हलः **दिया है–** $r = -20$ सेमी, $u = -5$ सेमी, $v = ?$

$$f = \frac{r}{2} = \frac{-20}{2} = -10 \text{ सेमी}$$

सूत्र— $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{5}+\frac{1}{v}=-\frac{1}{10}$$

$$\frac{1}{v}=\frac{-1}{10}+\frac{1}{5}=\frac{-1+2}{10}=\frac{1}{10}$$

$v=10$ सेमी

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के पीछे 10 सेमी दूर बनेगा।** उत्तर

प्रश्न 21. एक अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या 120 सेमी है। 4 सेमी लंबी वस्तु दर्पण से 90 सेमी दूर रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति, लंबाई व प्रकृति ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है-** $r=-120$ सेमी, $O=4$ सेमी, $u=-90$ सेमी

$$f=\frac{r}{2}=\frac{-120}{2}=-60 \text{ सेमी}$$

सूत्र— $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$\frac{-1}{90}+\frac{1}{v}=\frac{-1}{60}$$

$$\frac{1}{v}=\frac{-1}{60}+\frac{1}{90}=\frac{-3+2}{180}=\frac{-1}{180}$$

$v=-180$ सेमी

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के सामने 180 सेमी दूरी पर बनेगा।**

$$m=\frac{I}{O}=\frac{-v}{u}$$

$$=\frac{I}{4}=\frac{-(-180)}{-90} \Rightarrow \frac{I}{4}=\frac{-2}{1}$$

$I=-8$ सेमी

अत: **प्रतिबिंब 8 सेमी लंबा, उल्टा व वास्तविक होगा।** उत्तर

प्रश्न 22. एक 30 सेमी फोकस दूरी वाले अवतल दर्पण से कितनी दूरी पर एक वस्तु रखी जाए कि उसका 5 गुना बड़ा प्रतिबिंब बने, जबकि प्रतिबिंब

(a) वास्तविक हो, (b) आभासी हो?

प्रतिबिंब की स्थिति भी ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है-** $f=-30$ सेमी

(a) जब प्रतिबिंब वास्तविक (उल्टा) है, तब आवर्धन ऋणात्मक होगा।

$$m=\frac{-v}{u}=-5$$

या $v=5u$

सूत्र— $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{u}+\frac{1}{5u}=\frac{1}{-30}$$

$$\frac{5+1}{5u} = \frac{-1}{30}$$

$$\frac{6}{5u} = \frac{-1}{30} \Rightarrow \quad u = -36 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु दर्पण के सामने 36 सेमी दूर रखेंगे।**

प्रतिबिंब की दूरी, $v = 5 \times (-36) = -180$ सेमी।

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के सामने 180 सेमी दूर बनेगा।**

(b) जब प्रतिबिंब आभासी (सीधा) है, तब आवर्धन धनात्मक होगा।

$$m = \frac{-v}{u} = 5$$

$$v = -5u$$

$$v = -90 \text{ सेमी}$$

सूत्र– $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{u} - \frac{1}{5u} = \frac{1}{-30}$$

$$\frac{5-1}{5u} = -\frac{1}{30} \Rightarrow \frac{4}{5u} = -\frac{1}{30}$$

$$u = -24 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु दर्पण के सामने 24 सेमी दूर रखेंगे।**

प्रतिबिंब की दूरी, $v = -5 \times (-24) = 120$ सेमी

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के पीछे 120 सेमी दूर बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 23. एक अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या 60 सेमी है। 4 सेमी लंबी वस्तु दर्पण से 45 सेमी दूर रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति, लंबाई व प्रकृति ज्ञात कीजिए।

हल: **दिया है–** $r = -60$ सेमी,

$\therefore \quad f = \frac{r}{2} = \frac{-60}{2} = -30$ सेमी, $O = 4$ सेमी, $u = -45$ सेमी

सूत्र– $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{45} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{30}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{30} + \frac{1}{45} = \frac{-3+2}{90} = \frac{-1}{90}$$

$$v = -90 \text{ सेमी}$$

$$m = \frac{I}{O} = \frac{-v}{u} = \frac{I}{4} = \frac{-(-90)}{-45}$$

$$\frac{I}{4} = \frac{90}{-45}$$

$$\frac{I}{4} = -2 \quad \Rightarrow \quad I = -8$$

अत: **प्रतिबिंब वस्तु की ओर 90 सेमी दूर, 8 सेमी लंबा, उल्टा व वास्तविक बनेगा।**

उत्तर

प्रश्न 24. एक अवतल दर्पण की फोकस दूरी 15 सेमी है। 25 सेमी की दूरी पर रखी वस्तु के प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है-** $f = -15$ सेमी, $u = -25$ सेमी

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-25} + \frac{1}{v} = \frac{1}{-15}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1}{15} + \frac{1}{25} = \frac{-5+3}{75} = \frac{-2}{75}$$

$$v = -\frac{75}{2} \text{ सेमी}$$

$$v = -37.5 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब वस्तु की ओर 37.5 सेमी दूर दर्पण के सामने होगा।** **उत्तर**

प्रश्न 25. एक अवतल दर्पण वक्रता त्रिज्या 40 सेमी है। दर्पण से 30 सेमी दूरी पर रखी वस्तु के प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है-** $r = 40$ सेमी

$\therefore \quad f = \frac{-r}{2} = \frac{-40}{2} = -20$ सेमी, $\quad u = -30$ सेमी, $\quad v = ?$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{-30} + \frac{1}{v} = \frac{1}{-20}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1}{20} + \frac{1}{30} = \frac{-3+2}{60} = \frac{-1}{60}$$

$$\frac{1}{v} = -\frac{1}{60} \quad \Rightarrow v = -60 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के आगे 60 सेमी दूर बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 26. 20 सेमी वक्रता त्रिज्या वाले अवतल दर्पण के सामने (a) 5 सेमी की दूरी पर, (b) 15 सेमी की दूरी पर एक मोमबत्ती रखी जाती है। प्रत्येक स्थिति में प्रतिबिंब कहाँ-कहाँ बनेंगे?

हलः **दिया है-** $r = 20$ सेमी

$\therefore \quad f = \frac{-r}{2} = \frac{-20}{2} = -10$ सेमी

(a) $u = -5$ सेमी, $v = ?$, $f = -10$ सेमी

सूत्र- $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{5} + \frac{1}{v} = \frac{1}{-10}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1}{10} + \frac{1}{5}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-1+2}{10} = \frac{1}{10}$$

$$v = 10 \text{ सेमी}$$

अत: **आभासी प्रतिबिंब दर्पण के 10 सेमी पीछे बनेगा।** उत्तर

(b) $u = -15$ सेमी, $v = ?$, $f = -10$ सेमी

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$\Rightarrow$ $$-\frac{1}{15} + \frac{1}{v} = -\frac{1}{10}$$

$\Rightarrow$ $$\frac{1}{v} = -\frac{1}{10} + \frac{1}{15}$$

$$\frac{1}{v} = \frac{-3+2}{30} = \frac{-1}{30}$$

$$v = -30 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब वास्तविक अवतल दर्पण के सामने 30 सेमी दूर बनेगा।** उत्तर

प्रश्न 27. किसी अवतल दर्पण की वक्रता त्रिज्या 20 सेमी है। किसी वस्तु को दर्पण से कितनी दूर रखा जाए कि उसका दोगुने आकार का वास्तविक प्रतिबिंब बनें?

हलः **दिया है–** $r = 20$ सेमी,

$\therefore$ $$f = \frac{-r}{2} = \frac{-20}{2} = -10 \text{ सेमी}$$

प्रतिबिंब वास्तविक है, आवर्धन ऋणात्मक होगा।

$$m = \frac{-v}{u} = -2 \Rightarrow v = 2u$$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{u} + \frac{1}{2u} = -\frac{1}{10}$$

$$-\frac{1}{10} = \frac{2+1}{2u} = \frac{3}{2u}$$

$$\frac{3}{2u} = \frac{-1}{10}$$

$$u = -15 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु दर्पण के सामने 15 सेमी पर होगी।** उत्तर

प्रश्न 28. 60 सेमी वक्रता त्रिज्या वाले किसी दर्पण के सामने 30 सेमी की दूरी पर रखी गई वस्तु का प्रतिबिंब कहाँ बनेगा और कैसा बनेगा? यदि दर्पण अवतल होगा, तो प्रतिबिंब कहाँ बनेगा?

हलः **दिया है–** $r = 60$ सेमी, $u = -30$ सेमी

उत्तल दर्पण $$f = \frac{r}{2} = \frac{60}{2} = 30 \text{ सेमी}$$

सूत्र– $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{30}+\frac{1}{v}=\frac{1}{30}$$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{v}=\frac{1}{30}+\frac{1}{30}=\frac{2}{30}=\frac{1}{15}$$

$$v = 15 \text{ सेमी}$$

अतः **उत्तल दर्पण में प्रतिबिंब दर्पण के पीछे से 15 सेमी दूर, वस्तु से छोटा व सीधा होगा।**

अवतल दर्पण $f=\frac{-r}{2}=\frac{-60}{2}=-30$ सेमी

सूत्र– $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{30}+\frac{1}{v}=\frac{1}{-30} \Rightarrow \frac{1}{v}=-\frac{1}{30}+\frac{1}{30}$$

$$\frac{1}{v}=\frac{-1+1}{30}=\frac{0}{30}$$

$$v=\infty$$

अतः **प्रतिबिंब अनंत पर वास्तविक, उल्टा व वस्तु से बड़ा बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 29. 30 सेमी फोकस दूरी वाले अवतल दर्पण के सामने कोई वस्तु कितनी दूरी पर रखी जाए कि उसका वास्तविक प्रतिबिंब वस्तु के दोगुने आकार का बने?

हलः **दिया है–** $f=-30$ सेमी,

वास्तविक प्रतिबिंब है, अतः आवर्धन ऋणात्मक होगा।

$$m=\frac{-v}{u}=-2$$

$$v=2u$$

सूत्र– $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$\frac{1}{u}+\frac{1}{2u}=\frac{1}{-30}$$

$$\frac{2+1}{2u}=\frac{-1}{30} \Rightarrow \frac{3}{2u}=\frac{-1}{30}$$

$$u=-45 \text{ सेमी}$$

अतः **प्रतिबिंब दर्पण के सामने 45 सेमी दूर बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 30. 10 सेमी फोकस दूरी के अवतल दर्पण के सामने मुख्य अक्ष पर दर्पण के ध्रुव से 15 सेमी की दूरी पर 3.0 सेमी ऊँची मोमबत्ती रखी है। प्रतिबिंब की स्थिति व आकार ज्ञात कीजिए।

हलः **दिया है–** $f=-10$ सेमी, $O=3$ सेमी, $u=-15$ सेमी, $v=?$, $I=?$

सूत्र– $\frac{1}{u}+\frac{1}{v}=\frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{15}+\frac{1}{v}=-\frac{1}{10}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{v} = \frac{-1}{10} + \frac{1}{15} = \frac{-3+2}{30} = \frac{-1}{30}$$

$$v = -30 \text{ सेमी}$$

$$m = \frac{I}{O} = \frac{-v}{u}$$

$$\frac{I}{3} = -\frac{-30}{-15}$$

$$I = -6$$

अत: **प्रतिबिंब वास्तविक, दर्पण के सामने 30 सेमी दूर तथा 6 सेमी लंबा होगा।** उत्तर

प्रश्न 31. एक उत्तल दर्पण के सामने 40 सेमी की दूरी पर बिंदु प्रकाश स्रोत रखा जाता है। दर्पण की फोकस दूरी 40 सेमी है। प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात कीजिए। आरेख भी खींचिए।

हल: **दिया है-** $u = -40$ सेमी, $f = 40$ सेमी, $v = ?$

सूत्र— $\frac{1}{u} + \frac{1}{v} = \frac{1}{f}$ से

$$-\frac{1}{40} + \frac{1}{v} = \frac{1}{40}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{v} = \frac{1}{40} + \frac{1}{40} = \frac{1+1}{40} = \frac{2}{40}$$

$$v = 20 \text{ सेमी}$$

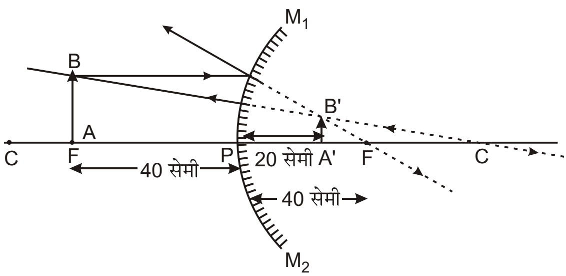

अत: **प्रतिबिंब दर्पण के पीछे 20 सेमी दूर बनेगा।** उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. परावर्तन के नियमों का सत्यापन करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. उत्तल दर्पण द्वारा बने प्रतिबिंब की स्थिति ज्ञात करना तथा किरण-आरेख प्राप्त करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

2 प्रकाश का अपवर्तन

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. प्रकाश के अपवर्तन को चित्र सहित विस्तार से समझाइए।

उत्तर– **प्रकाश का अपवर्तन–** किसी एक समांग माध्यम में प्रकाश की किरणें सीधी रेखाओं में चलती हैं। परंतु जब प्रकाश की कोई किरण एक पारदर्शी माध्यम से दूसरे पारदर्शी माध्यम में जाती है तो वह अपने प्रारंभिक मार्ग से विचलित होकर किसी अन्य दिशा में एक सीधी रेखा में चलने लगती है। प्रकाश किरण के एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाने पर, अपने मार्ग से विचलित होने को प्रकाश का 'अपवर्तन' कहते है।

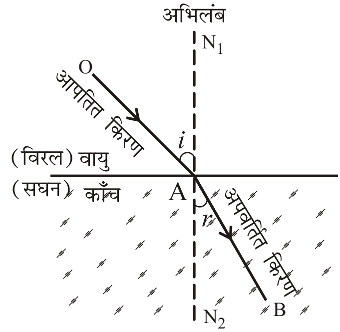

पहले माध्यम में चलने वाली किरण OA को 'आपतित किरण' और दूसरे माध्यम में चलने वाली किरण AB को 'अपवर्तित किरण' कहते हैं। आपतित किरण सीमा पृष्ठ के जिस बिंदु A पर मिलती है उसे आपतन बिंदु कहते हैं। आपतन बिंदु पर सीमा पृष्ठ के लंबवत् रेखा N_1AN_2 को अभिलंब कहते हैं। आपतित किरण व अभिलंब के बीच के कोण OAN_1 को 'आपतन कोण' कहते हैं तथा अपविर्तत किरण व अभिलंब के बीच के कोण N_2AB को 'अपवर्तन कोण' कहते हैं।

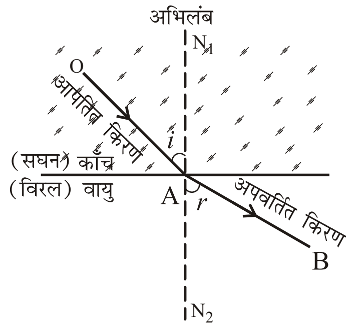

यदि अपवर्तित किरण, आपतित किरण के सापेक्ष अभिलंब की ओर झुक जाती है, तो दूसरे माध्यम को पहले माध्यम के सापेक्ष 'सघन' कहते हैं। यदि किरण वायु से काँच में जा रही है तथा अपवर्तित किरण अभिलंब की ओर झुकी है। अत: काँच, वायु के सापेक्ष सघन है परंतु यदि अपवर्तित किरण, आपतित किरण के सापेक्ष, अभिलंब से दूर हट जाती है तो दूसरे माध्यम को पहले माध्यम के सापेक्ष 'विरल' कहते हैं। यदि किरण काँच से वायु में जा रही है तथा अपवर्तित किरण अभिलंब से दूर हटती है अत: वायु काँच के सापेक्ष विरल है। प्रकाश की चाल सघन माध्यम में विरल माध्यम की अपेक्षा कम होती है

प्रश्न 2. निरपेक्ष अपवर्तनांक तथा सापेक्ष अपवर्तनांक को समझाइए।

उत्तर– **निरपेक्ष अपवर्तनांक–** जब प्रकाश का अपवर्तन वायु से किसी अन्य माध्यम में होता है तब आपतन कोण की ज्या तथा अपवर्तन कोण की ज्या के अनुपात को उस माध्यम का निरपेक्ष अपवर्तनांक या केवल अपवर्तनांक कहते है।

माना प्रकाश का किसी किरण के लिए, वायु में आपतन कोण i है तथा किसी अन्य माध्यम में से गुजरने पर अपवर्तन कोण r है तो नियतांक $\frac{\sin i}{\sin r}$ का मान उस माध्यम का अपवर्तनांक कहलाता है तथा इसे अक्षर n से प्रदर्शित करते है। अत:

$$n = \frac{\sin i}{\sin r}$$

सापेक्ष अपवर्तनांक– यदि पहला माध्यम वायु या निर्वात् के स्थान पर अन्य माध्यम हो तो इसे पहले माध्यम के सापेक्ष दूसरे माध्यम का सापेक्ष अपवर्तनांक कहते हैं। इसमें अपवर्तनांक के चिह्न n के दोनों ओर क्रमश: पहले तथा दूसरे माध्यम का संकेत लिखा जाता है। जैसे यदि किरण वायु (a) से काँच (g) में प्रवेश करती हैं तो अपवर्तनांक को $_a n_g$ से प्रदर्शित करते हैं तथा वह वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक कहलाता है। अत:

$$_a n_g = \frac{\sin i}{\sin r}$$

इसी प्रकार यदि किरण वायु से जल के माध्यम में प्रवेश करती हैं तो वायु के सापेक्ष जल के अपवर्तनांक को $_a n_w$ से प्रदर्शित करते हैं। इसे वायु के सापेक्ष जल का अपवर्तनांक कहा जाएगा।

$$_a n_w = \frac{\sin i}{\sin r}$$

यदि प्रकाश किरण एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाते समय दोनों माध्यमों के सीमा पृष्ठ पर लंबवत् गिरती है अर्थात् आपतन कोण $i = 0$ है तब वह दूसरे माध्यम में जाने पर अपने प्रारंभिक मार्ग से बिना विचलित हुए सीधी निकल जाती है अर्थात् अपवर्तन कोण $r = 0$ हैं। इस स्थिति के लिए स्नैल के नियमानुसार

$$n = \frac{\sin i}{\sin r}$$

लंबवत् आपतन के लिए, $r = 0$ अत: $\sin 0° = 0$ होगा, तब

$$n \sin r = 0$$

परंतु $r \neq 0$ है। अत: $\sin r = 0$

या $r = 0°$

प्रश्न 3. प्रकाश किरणों की उत्क्रमणीयता से आप क्या समझते हैं? विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

उत्तर– प्रकाश किरणों की उत्क्रमणीयता– माना कि वायु में चलती एक प्रकाश किरण OA एक काँच के गुटके $PQRS$ पर गिरती है। यह किरण तल PQ पर अपवर्तित होकर काँच में AB दिशा में चली जाती है। इस प्रकार वायु में आपतित किरण OA है तथा काँच में अपवर्तित किरण AB है। यदि वायु में आपतन कोण i तथा काँच में अपवर्तन कोण r हो, तो वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक

$$_a n_g = \frac{\sin i}{\sin r} \quad ...(i)$$

इसके विपरीत, यदि काँच के भीतर प्रकाश किरण BA दिशा में चले तब वह तल PQ पर अपवर्तित होकर वायु में AO दिशा में जाएगी। इस दशा में काँच में आपतन कोण r होगा

तथा वायु में अपवर्तन कोण i होगा। अत: जब प्रकाश किरण काँच से वायु में जाती है तो काँच के सापेक्ष वायु का अपवर्तनांक

$$_g n_a = \frac{\sin r}{\sin i} \quad ...(ii)$$

समीकरण (i) व (ii) की तुलना करने पर

$$_a n_g \times {_g n_a} = 1$$

या

$$_a n_g = \frac{1}{_g n_a}$$

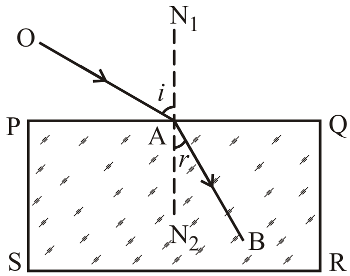

अर्थात् वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक, काँच के सापेक्ष वायु के अपवर्तनांक का व्युत्क्रम होता है। यदि वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक (3/2) है, तो काँच के सापेक्ष वायु का अपवर्तनांक (2/3) होगा।

यदि माध्यम 1 के सापेक्ष माध्यम 2 का अपवर्तनांक $_1 n_2$ है, तो माध्यम 2 के सापेक्ष माध्यम 1 का अपवर्तनांक $_2 n_1$ होगा। इस प्रकार,

$$_1 n_2 \times {_2 n_1} = 1$$

$$_1 n_2 = \frac{1}{_2 n_1}$$

यदि तीन समांतर माध्यम 1, 2, 3 हैं, तब

$$_1 n_2 \times {_2 n_3} \times {_3 n_1} = 1$$

उदाहरण— यदि माध्यम 1 वायु है, माध्यम 2 जल है तथा माध्यम 3 काँच है, तब

$$_a n_w \times {_w n_g} \times {_g n_a} = 1$$

या

$$_w n_g = \frac{1}{_a n_w \times {_g n_a}} = \frac{_a n_g}{_a n_w}$$

$$\left[\because {_a n_g} = \frac{1}{_g n_a}\right]$$

प्रश्न 4. क्रांतिक कोण और पूर्ण आंतरिक परावर्तन से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– क्रांतिक कोण और पूर्ण आंतरिक परावर्तन– जब कोई प्रकाश की किरण OA किसी सघन माध्यम से विरल माध्यम (जैसे काँच से वायु) में जाती है, तो इसका एक छोटा भाग AC परावर्तित हो जाता है तथा अधिकांश भाग AB अपरिवर्तित हो जाता है।

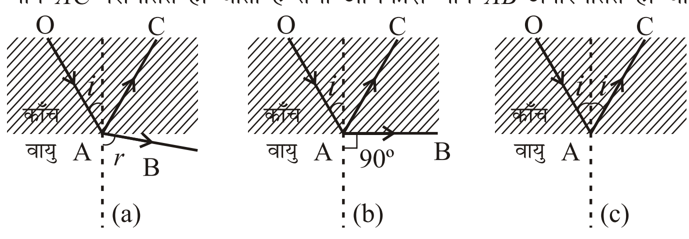

अपवर्तित किरण AB अभिलंब से दूर हटती है। इस स्थिति में अपवर्तन कोण (r) आपतन कोण (i) से बड़ा होता है। अब यदि आपतन कोण का मान धीरे-धीरे बढ़ाते

जाए, तो अपवर्तन कोण भी बढ़ता जाता है और एक विशेष आपतन कोण के लिए अपवर्तन कोण 90° हो जाता है। इस आपतन कोण को **क्रांतिक कोण** कहते हैं तथा इसे C से प्रदर्शित करते हैं। अत: क्रांतिक कोण C, सघन माध्यम में बना वह आपतन कोण है, जिसके लिए विरल माध्यम में अपवर्तन कोण 90° होता है।

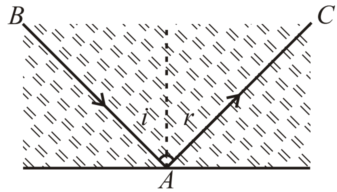

पूर्ण आंतरिक परावर्तन– जब कोई प्रकाश किरण सघन माध्यम से विरल माध्यम में जाती है और आपतन कोण का मान क्रांतिक कोण से अधिक होता है, तो विरल माध्यम में प्रकाश किरण का अपवर्तन नहीं होता, बल्कि संपूर्ण प्रकाश परावर्तित होकर सघन माध्यम में ही वापस लौट जाता है, इस प्रकार के परावर्तन को पूर्ण **आंतरिक परावर्तन** कहते हैं; क्योंकि इसमें प्रकाश का अपर्वतन बिल्कुल नहीं होता है तथा संपूर्ण प्रकाश परावर्तित हो जाता है।

पूर्ण आंतरिक परावर्तन के लिए निम्नलिखित दो नियम हैं—

(a) प्रकाश का गमन सघन माध्यम से विरल माध्यम में होना चाहिए।

(b) सघन माध्यम में आपतन कोण का मान विरल माध्यम के सापेक्ष सघन माध्यम के क्रांतिक कोण से अधिक होना चाहिए।

प्रश्न 5. पूर्ण आंतरिक परावर्तन के दैनिक जीवन में होने वाले अनुप्रयोगों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– पूर्ण आंतरिक परावर्तन के दैनिक जीवन में अनुप्रयोग–

(i) जल में परखनली का चमकीला दिखना– यदि एक खाली परखनली को जल से भरे बीकर में रखकर टेढ़ा करते जाए तो बीकर के ऊपर से देखने पर एक स्थिति में नली का तल चाँदी की भाँति चमकीला दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि नली को टेढ़ा करने से उस पर गिरने वाले प्रकाश का आपतन कोण बढ़ता जाता है। जब यह कोण काँच वायु के क्रांतिक कोण से बड़ा हो जाता है तो प्रकाश नली के भीतर वायु में नहीं जाता, बल्कि नली की दीवार पर पूर्ण परावर्तित होकर आँख में पहुँचने लगता है और हमें नली चमकदार दिखने लगती है।

यदि परखनली में जल भर दें तो नली चमकीली नहीं दिखाई देती क्योंकि काँच जल के लिए क्रांतिक कोण काँच वायु के क्रांतिक कोण से बड़ा होता है। अत: स्थिति में प्रकाश का पूर्ण परावर्तन नहीं हो पाता।

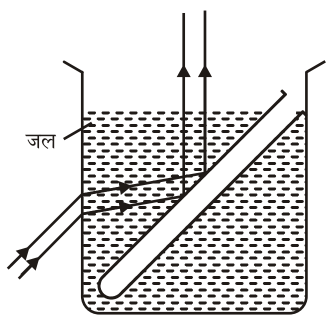

(ii) काँच में पड़ी दरारों का चमकना– जब खिड़की में लगा काँच चटख जाता है तो उसमें दरारें पड़ जाती हैं जिनमें वायु की पतली परत आ जाती है। ये दरारें देखने पर चमकती दिखाई देती है। इसका कारण यह है कि इन दरारों पर पड़ने वाला टेढ़ा प्रकाश वायु की परत में नहीं जाता, बल्कि काँच वायु के सीमा पृष्ठ से पूर्ण परावर्तित होकर आँख में पहुँच जाता है। इसी प्रकार यदि काँच अथवा जल के भीतर वायु का कोई बुलबुला हो, तो वह भी बहुत चमकीला दिखाई देता है।

(iii) कालिख पुते गोले का जल में चमकना– यदि एक धातु के गोले पर सूखी कालिख पोतकर जल से भरे बीकर में रखें तो गोले का तल चाँदी की तरह चमकने लगता है। इसका कारण यह है कि कालिख के कारण गोले का तल जल के संपर्क में नहीं आता बल्कि दोनों के बीच वायु की परत रह जाती है। अत: जल वायु के सीमा पृष्ठ पर प्रकाश का पूर्ण परावर्तन होता है जिससे गोले का तल चमकीला दिखाई देने लगता है।

(iv) हीरे की चमक– हीरे से वायु में आने वाली किरणे के लिए क्रांतिक कोण बहुत कम, केवल 24° होता है। अत: जब बाहर का प्रकाश किसी तराशे हुए हीरे में प्रवेश करता है तो वह उसके भीतर विभिन्न तलों पर बार–बार पूर्ण परावर्तित होता रहता है। जब किसी तल पर आपतन कोण 24° से कम हो जाता है, तब ही प्रकाश हीरे से बाहर आ पाता है। इस प्रकार हीरे में सभी दिशाओं से प्रवेश करने वाला प्रकाश केवल कुछ ही दिशाओं में हीरे से बाहर निकलता है। अत: इन दिशाओं से देखने पर हीरा अत्यन्त चमकदार दिखाई देता है।

(v) रेगिस्तान में मरीचिका– कभी–कभी रेगिस्तान में यात्रियों को दूर से पेड़ के साथ–साथ उसका उल्टा प्रतिबिंब भी दिखाई देता है। अत: इन्हें ऐसा भ्रम हो जाता है कि वहाँ कोई जल का तालाब है जिसमें पेड़ का उल्टा प्रतिबिंब दिखाई दे रहा है। परंतु वास्तव में वहाँ तालाब नहीं होता है।

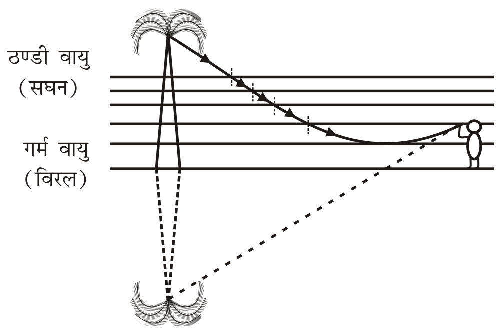

जब सूर्य की गर्मी से रेगिस्तान का रेत गर्म होता है तो उसे छूकर पृथ्वी के पास की वायु अधिक गर्म हो जाती है। इससे कुछ ऊपर तक वायु की परतों पर ताप लगातार घटता जाता है। अत: वायु की नीचे वाली परतें अपेक्षाकृत विरल होती हैं। जब पेड़ से प्रकाश किरणें पृथ्वी की ओर आती हैं तो उन्हें अधिकाधिक विरल परतों से होकर आना पड़ता है।

इसलिए प्रत्येक परत पर अपवर्तित किरण अभिलंब से दूर हटती जाती है। अत: प्रत्येक अगली परत पर आपतन कोण बढ़ता जाता है तथा किसी विशेष परत पर क्रांतिक कोण से बड़ा हो जाता है। इस परत पर किरण पूर्ण परावर्तित होकर ऊपर की ओर चलने लगती है। चूँकि ऊपर वाली परतें अधिकाधिक सघन हैं, अत: ऊपर उठती हुई किरण अभिलंब की ओर झुकती जाती है। जब यह किरण यात्री की आँख में प्रवेश करती है तो उसे पृथ्वी के नीचे से आती प्रतीत होती है तथा यात्री को पेड़ का उल्टा प्रतिबिंब दिखाई देता है।

(vi) ठंड़े देशों में मरीचिका– बहुत ठंड़े देशों में समुद्र पर अथवा बर्फ के क्षेत्रों में दूर की वस्तुओं के प्रतिबिंब वायु में उल्टे लटके दिखाई देते हैं। इसका कारण यह है कि जल तथा बर्फ में लगी वायु की परतें ठंड़ी होने के कारण सघन हो जाती हैं और ऊपर की परतें विरल होती जाती हैं। अत: समुद्र के जल पर तैरते जहाज से चली किरणें ऊपर की ओर जाते हुए, वायु की परतों पर अपरिवर्तित होकर,

अभिलंब से दूर हटती जाती हैं और किसी विशेष परत पर पूर्ण परावर्तन के पश्चात् नीचे आने लगती हैं। जब ये किरणें व्यक्ति की आँख में पहुँचती हैं तो उसे जहाज का उल्टा प्रतिबिंब ऊपर वायु में लटका हुआ दिखाई देता है। नीचे की परतें भारी होने के कारण चलायमान नहीं होती, इसलिए यह प्रतिबिंब स्थिर दिखाई पड़ता है।

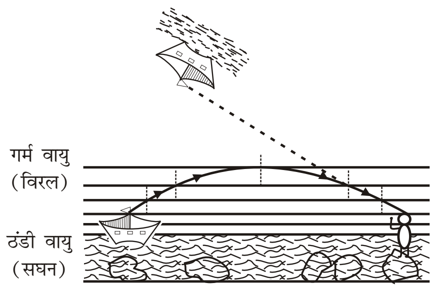

प्रश्न 6. प्रिज्म से होने वाले श्वेत प्रकाश के वर्ण विक्षेपण का चित्र सहित वर्णन कीजिए। वर्ण विक्षेपण का कारण भी बताइए।

उत्तर– प्रिज्म द्वारा श्वेत प्रकाश का वर्ण विक्षेपण– सर आइजक न्यूटन ने 1666 ई० में प्रिज्म द्वारा प्रकाश का विश्लेषण किया और पाया कि सूर्य का प्रकाश अनेक रंगों के प्रकाश से मिलकर बना है। आपने भी वर्षा के पश्चात् आकाश में सूर्य के श्वेत प्रकाश में रंग-बिरंगा इन्द्रधनुष अवश्य देखा होगा। इससे यह पता चलता है कि सूर्य के श्वेत प्रकाश में अनेक रंग उपस्थित होते हैं।

जब किसी टॉर्च या सूर्य के प्रकाश की संकीर्ण प्रकाश पुँज को प्रिज्म के एक फलक पर डाला जाता है; तो प्रिज्म के दूसरे फलक से निर्गत प्रकाश सात रंगों में विभाजित हो जाता है तथा इसे पर्दे पर लेने पर सात रंगों की एक पट्टी प्राप्त होती है। प्रकाश का इस प्रकार सात रंगों में विभाजित होना विक्षेपण कहलाता है।

श्वेत प्रकाश के विक्षेपण के दौरान परदे पर प्राप्त विशेष क्रम में विभाजित स्रोत रंगों की पट्टी को स्पेक्ट्रम कहते हैं; जिसका अर्थ-रंगों का मिश्रण।

इन सात रंगों का क्रम-नीचे से ऊपर की ओर होता है। बैंगनी, आसमानी, नीला, हरा, पीला, नारंगी तथा लाल है। इसको आसानी से याद रखने के लिए VIBGYOR को याद रखे जो इन रंगों के अंग्रेजी भाषा के शब्दों के पहले अक्षर से बना है।

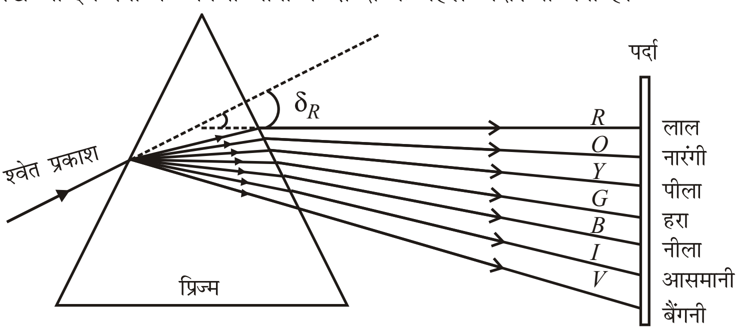

प्रकाश के विक्षेपण के द्वारा बैंगनी प्रकाश का अपवर्तन सबसे अधिक व लाल रंग का सबसे कम होता है। अत: यह बैंगनी रंग को स्पैक्ट्रम में सबसे नीचे व लाल को सबसे ऊपर दिखाता है।

कारण– कोई भी पारदर्शी पदार्थ, जैसा कि काँच का अपवर्तनांक प्रकाश के रंग पर निर्भर करता है। यह बैंगनी रंग के लिए सबसे अधिक तथा लाल रंग के लिए सबसे कम होता है।

जब प्रकाश किरण प्रिज्म में से गुजरती है तो वह अपने प्रारंभिक मार्ग से विचलित होकर प्रिज्म के आधार की ओर झुक जाती है। प्रकाश किरण में उत्पन्न यह विचलन काँच के अपवर्तनांक पर निर्भर करता है। अपवर्तनांक जितना अधिक होगा, प्रकाश किरण का विचलन भी उतना ही अधिक होगा। अत: यदि प्रिज्म में से गुजरने वाली किरण श्वेत प्रकाश की है तब इस प्रकाश में उपस्थित विभिन्न रंगों की किरणों में विचलन भिन्न-भिन्न होगा। काँच का अपवर्तनांक लाल प्रकाश के लिए सबसे कम तथा बैंगनी प्रकाश के लिए सबसे अधिक है। अत: लाल प्रकाश की किरण प्रिज्म के आधार की ओर सबसे कम झुकती है तथा बैंगनी प्रकाश की किरण सबसे अधिक झुकती है। इस प्रकार श्वेत प्रकाश का प्रिज्म में से गुजरने पर वर्ण विक्षेपण हो जाता है।

प्रश्न 7. प्रिज्म द्वारा प्रकाश के अपवर्तन व विचलन से आप क्या समझते हैं?

उत्तर– प्रिज्म– किसी संमागी पारदर्शी माध्यम का वह भाग जो किसी कोण पर झुके हुए दो समतल पृष्ठों के बीच स्थित होता है, प्रिज्म कहलाता है। प्रिज्म के जिन पृष्ठों से प्रकाश का अपवर्तन होता है, उन पृष्ठों को अपवर्तक पृष्ठ तथा इनके बीच के कोण को अपवर्तक कोण अथवा प्रिज्म कोण कहते हैं। दोनों पृष्ठों को मिलाने वाली कोर को अपवर्तक कोर कहते हैं। अपवर्तक कोर के सामने वाले पृष्ठ को प्रिज्म का आधार कहते हैं।

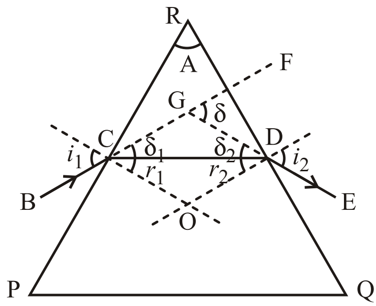

प्रिज्म द्वारा प्रकाश का अपवर्तन एवं विचलन– माना PQR काँच के एक प्रिज्म का मुख्य परिच्छेद है। माना कोण PRQ अपवर्तक कोण है। आपतित किरण BC, प्रिज्म के पृष्ठ PR के बिंदु C पर आपतित होती है। इस पृष्ठ पर अपवर्तन के पश्चात् यह प्रकाश किरण बिंदु C पर खींचे गए अभिलंब की ओर झुककर CD दिशा में चली जाती है। प्रकाश किरण CD दूसरे अपवर्तक पृष्ठ QR के बिंदु D पर आपतित होती है और अपवर्तन के पश्चात् बिंदु D पर खींचे गए अभिलंब से दूर हटकर DE दिशा में जाती है। अत: प्रिज्म BC दिशा में आने वाली किरण DE दिशा में विचलित कर देता है। इस प्रकार प्रिज्म प्रकाश की दिशा में कोणीय विचलन उत्पन्न कर देता है। आपतित किरण BC को आगे तथा निर्गत किरण DE को पीछे बढ़ाने पर ये एक-दूसरे को बिंदु G पर काटती हैं। इन दोनों के बीच बना कोण FGD **विचलन कोण** कहलाता है। इसे δ से प्रदर्शित करते हैं। विचलन कोण का मान प्रिज्म के पदार्थ के अपवर्तनांक एवं आपतित किरण के आपतन कोण पर निर्भर करता है।

यदि प्रिज्म पर गिरने वाली किरण के आपतन कोण i को बढ़ाते जाए, तो विचलन कोण δ का मान घटता जाता है और विशेष आपतन कोण के लिए विचलन कोण न्यूनतम हो जाता है। इस न्यूनतम विचलन कोण को **अल्पतम विचलन कोण** कहते हैं।

यदि किसी प्रिज्म का कोण A तथा किसी रंग की किरण के लिए अल्पतम विचलन कोण δ_m है, तो उस रंग के लिए,

$$\text{प्रिज्म के पदार्थ का अपवर्तनांक } (\eta) = \frac{\sin\left(\frac{A+\delta_m}{2}\right)}{\sin A/2}$$

पतले प्रिज्म से उत्पन्न विचलन का व्यंजक $\delta_m = (\eta - 1)A$

प्रश्न 8. प्रकाश के प्रकीर्णन को उदाहरण सहित समझाइए।

उत्तर– **प्रकाश का प्रकीर्णन–** जब प्रकाश किसी ऐसे माध्यम से गुजरता है, जिसमें अति सूक्ष्म आकार के कण विद्यमान हों, तो इन कणों के द्वारा प्रकाश का कुछ भाग सभी दिशाओं में फैल जाता है। इस घटना को प्रकाश का प्रकीर्णन कहते हैं। लाल रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन सबसे कम तथा बैंगनी रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन सबसे अधिक होता है।

उदाहरण—

(i) **खतरे का सिग्नल लाल होना–** इसका कारण यह कि लाल रंग का प्रकीर्णन बहुत कम होता है। इसी कारण लाल सिग्नल बहुत दूर से दिखाई दे जाता है। यही कारण है कि रेलगाड़ी को रोकने की झंडी, क्रिकेट की गेंद तथा अस्पताल की गाड़ी पर क्रॉस का चिह्न लाल रंग के होते हैं।

(ii) **सूर्योदय एवं सूर्यस्त के समय सूर्य का लाल दिखाई देना–** प्रात:काल या सूर्यास्त के समय सूर्य का रंग गहरा पीला, नारंगी तथा लाल दिखाई देना भी प्रकाश के प्रकीर्णन का प्रभाव है। सूर्योदय या सूर्यास्त के समय जब सूर्य पृथ्वी के क्षितिज पर होता है, सूर्य से आने वाले प्रकाश को वायुमंडल में अधिक मार्ग तक करना पड़ता है, जिसके कारण सूर्य का प्रकाश बैंगनी, नीले, हरे रंगों का लगभग संपूर्ण अंश, प्रकीर्णित होकर आकाश में बिखर जाता है तथा अवशेष पीले, नारंगी तथा लाल का अंश ही पृथ्वी पर हमारे नेत्रों तक सीधा पहुँच पाता है। इसी कारण सूर्यादय या सूर्यास्त के समय सूर्य का रंग पीला, नारंगी व लाल दिखाई देता है।

(iii) **आकाश का रंग नीला दिखाई देना–** सूर्य के प्रकाश की किरणें जब वायुमंडल से होकर गुजरती हैं, तो मार्ग में आने वाले वायु के अणुओं, धूल कणों व अन्य पदार्थों के सूक्ष्म कणों द्वारा इसका प्रकीर्णन होता है। बैंगनी एवं नीले रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन लाल रंग के प्रकाश की अपेक्षा 16 गुना अधिक होता है। अत: बैंगनी एवं नीला प्रकाश चारों ओर फैल जाता है। यह फैला हुआ प्रकाश हमारी आँखों में पहुँचता है, जिसके कारण हमें आकाश नीला दिखाई देता है। यदि वायुमंडल न हो, तो सूर्य के प्रकाश के मार्ग में प्रकीर्णन नहीं होता है, जिसके कारण हमें आकाश काला दिखाई देता है। यही कारण है कि चंद्रमा के तल से देखने पर आकाश काला दिखाई देता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. सघन तथा विरल माध्यम से आप क्या समझते है?

उत्तर– **सघन माध्यम–** यदि अपवर्तित किरण, आपतित किरण के सापेक्ष, अभिलंब की ओर झुकती है तो दूसरे माध्यम को, पहले माध्यम के सापेक्ष सघन माध्यम कहते हैं।

विरल माध्यम– यदि अपवर्तित किरण, आपतित किरण के सापेक्ष अभिलंब से दूर हटती है तो दूसरे माध्यम को, पहले माध्यम के सापेक्ष विरल माध्यम कहते हैं।

प्रश्न 2. किसी माध्यम के अपवर्तनांक से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– किन्हीं दो माध्यमों के लिए, एक ही रंग के प्रकाश के लिए आपतन कोण की ज्या तथा अपवर्तन कोण की ज्या परस्पर समानुपाती है।

यदि आपतन कोण i तथा अपवर्तन कोण r हो तो

$$\frac{\sin i}{\sin r} = \text{नियतांक}$$

इसे स्नैल का नियम भी कहते हैं।

इस नियम को पहले माध्यम के सापेक्ष दूसरे माध्यम का अपवर्तनांक कहते हैं। इसे n से प्रदर्शित करते हैं। n के दोनों ओर माध्यम जैसे, वायु (a) तथा काँच (g) लिखते हैं। इस प्रकार वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक ${}_a n_w$ से प्रदर्शित करते हैं।

प्रश्न 3. अपवर्तनांक तथा प्रकाश की चाल में संबंध बताइए।

उत्तर– **अपवर्तनांक तथा प्रकाश की चाल में संबंध–** एक माध्यम के सापेक्ष दूसरे माध्यम का अपवर्तनांक उन माध्यमों में प्रकाश की चालों के अनुपात के बराबर होता है।

उदाहरण— वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक

$${}_a n_g = \frac{\text{वायु में प्रकाश की चाल}(c)}{\text{काँच में प्रकाश की चाल }(V_g)}$$

इसी प्रकार, वायु के सापेक्ष जल का अपवर्तनांक

$${}_a n_w = \frac{c}{V_w}$$

$$\therefore \qquad \frac{{}_a n_w}{{}_a n_g} = \frac{V_g}{V_w}$$

एक माध्यम के सापेक्ष दूसरे माध्यम का अपवर्तनांक प्रकाश के रंग पर निर्भर करता है। यह बैंगनी रंग के प्रकाश के लिए सबसे अधिक तथा लाल रंग के प्रकाश के लिए सबसे कम होता है।

प्रश्न 4. जल में किसी गहराई पर रखी वस्तु कुछ ऊपर उठी दिखाई पड़ती है। रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– बीकर एक जिसमें पानी भरा है, बीकर की तली में बिंदु P पर रखा सिक्का P' पर प्रतीत होता है। P से चलने वाली किरण पानी–वायु अंतरापृष्ठ पर अभिलंब से दूर चली जाती है। आँखों से ये किरणें P' से आती हुई प्रतीत होती हैं। इसी कारण सिक्का ऊपर उठा हुआ प्रतीत होता है।

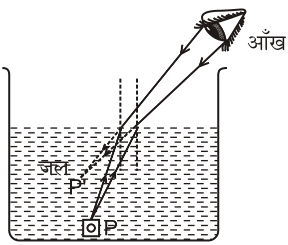

प्रश्न 5. द्रव में अंशतः डूबी छड़ सीधी नहीं दिखाई पड़ती है। क्यों?

उत्तर– एक छड़ ABC पानी में मुड़ी हुई प्रतीत होती है क्योंकि छड़ के सिरे C से किरण BC पानी–वायु अंतरापृष्ठ पर अपवर्तन के पश्चात् अभिलंब से दूर हट जाती है। आँखों को ये किरण 'C'से आती प्रतीत होती है। छड़ का भाग BC, पानी के अंदर BC' स्थिति में प्रतीत होता है। अत: छड़ बिंदु B पर मुड़ी हुई प्रतीत होती है।

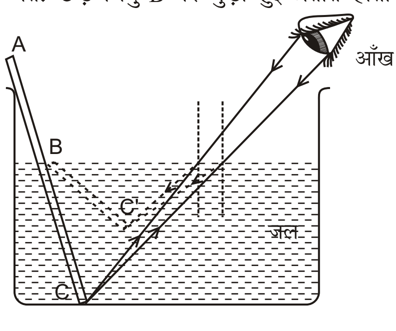

प्रश्न 6. सूर्यास्त के समय सूर्य क्षितिज के नीचे होने पर क्यों दिखाई देता है?

उत्तर– हमारी पृथ्वी के चारों ओर लगभग 320 किमी तक वायुमंडल है। पृथ्वी के धरातल से जैसे-जैसे ऊपर जाते हैं वायु विरल होती जाती है अर्थात् घनत्व कम होता जाता है। घनत्व कम होने से वायु का अपवर्तनांक कम होता जाता है, यद्यपि इसका मान 1 से सदैव अधिक रहता है अत: वायुमंडल को वायु की गोलीय पर्तों का बना हुआ मान सकते हैं। जिनका अपवर्तनांक पृथ्वी के धरातल से ऊपर की ओर घटता जाता है।

सूर्योदय के समय जब सूर्य क्षितिज के नीचे होता है, तब उससे आने वाली कोई किरण वायुमंडल में प्रवेश करने पर वायु की गोलीय पर्तों द्वारा अपवर्तित हो जाती है।

अपवर्तित होने पर यह किरण अभिलंब की ओर झुकती जाती है और प्रेक्षक की आँख में पहुँचती है। इससे प्रेक्षक को सूर्योदय के समय सूर्य क्षितिज के नीचे होने पर भी दिखाई देता है। इसी प्रकार सूर्यास्त के समय भी प्रेक्षक को सूर्य के क्षितिज के नीचे होने पर भी दिखाई देता है।

प्रश्न 7. प्रिज्म द्वारा प्रकाश के 'वर्ण विक्षेपण' का क्या अर्थ है? प्रकाश के वर्ण विक्षेपण का मूल कारण क्या है?

उत्तर– **वर्ण विक्षेपण–** जब सूर्य की श्वेत प्रकाश किरण पुंज किसी प्रिज्म में से होकर अपने अवयवी रंगों की प्रकाश किरणों में विभाजित हो जाती है इस घटना को प्रकाश का वर्ण विक्षेपण कहते है, सामान्यत: हमारी आँख आधार की ओर से, बैंगनी, आसमानी, नीला, हरा, पीला, नारंगी तथा लाल के क्रम को देखती हैं। इन रंगों के क्रम को कंठस्थ करने के लिए VIBGYOR से भी याद रखा जा सकता है।

प्रकाश के वर्ण विक्षेपण का कारण– किसी पारदर्शी पदार्थ; जैसे— काँच का अपवर्तनांक प्रकाश के रंग पर निर्भर करता है। अपवर्तनांक लाल रंग के प्रकाश के लिए सबसे कम तथा बैंगनी रंग के लिए प्रकाश के लिए सबसे अधिक होता है। जब कोई प्रकाश किरण प्रिज्म से होती हुई अपने मार्ग से विचलित हो जाती है और आधार की ओर झुक जाती है। चूँकि प्रकाश में उपस्थित भिन्न-भिन्न रंगों की किरणों में विचलन भिन्न-भिन्न होता है। अत: बैंगनी रंग सबसे नीचे तथा लाल सबसे ऊपर होता है। इस प्रकार, श्वेत रंग के प्रकाश का प्रिज्म में से गुजरने पर वर्ण विक्षेपण हो जाता है।

प्रश्न 8. अपवर्तनांक तथा क्रांतिक कोण में संबंध लिखिए।

उत्तर– **अपवर्तनांक तथा क्रांतिक कोण में संबंध–** यदि विरल माध्यम को r से तथा सघन माध्यम को d से प्रदर्शित करें तो स्नैल के नियमानुसार सघन माध्यम के सापेक्ष विरल माध्यम का अपवर्तनांक

$$_a n_r = \frac{\sin i}{\sin r}$$

जब आपतन कोण $i =$ क्रांतिक कोण C हो, तब अपवर्तन कोण $r = 90°$

$$_a n_r = \frac{\sin C}{\sin 90°} = \frac{\sin C}{1} = \sin C \quad ...(i)$$

$$[\therefore \sin 90° = 1]$$

परंतु

$$_a n_r = \frac{1}{_r n_d}$$

जहाँ $_r n_d$ विरल माध्यम के सघन माध्यम का अपवर्तनांक है।

समीकरण (i) व (ii) से

$$\frac{1}{{}_r n_d} = \sin C$$

या $${}_r n_d = \frac{1}{\sin C} = \operatorname{cosec} C$$

प्रश्न 9. अपवर्तन से संबंधित क्रांतिक कोण की परिभाषा लिखिए।

उत्तर– सघन माध्यम में बना वह आपतन कोण, जिसके लिए विरल माध्यम में अपवर्तन कोण 90° होता है। क्रांतिक कोण कहलाता है। इसे C से प्रदर्शित करते हैं।

प्रश्न 10. आकाश का रंग नीला क्यों दिखाई देता है?

उत्तर– सूर्य से आने वाले प्रकाश में विभिन्न रंग होते हैं, जब यह प्रकाश वायुमंडल से होकर गुजरता है, तो मार्ग में आने वाले वायु के अणुओं, धूल कणों एवं अन्य पदार्थों के सूक्ष्म कणों द्वारा इसका प्रकीर्णन होता है। बैंगनी एवं नीले रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन लाल रंग के प्रकाश की अपेक्षा 16 गुना अधिक होता है। अत: बैंगनी एवं नीला प्रकाश चारों ओर बिखर जाता है। यह बिखरा हुआ प्रकाश हमारी आँखों में पहुँचता है, जिसके कारण हमें आकाश नीला दिखाई देता है।

प्रश्न 11. पूर्ण आंतरिक परावर्तन से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– **पूर्ण आंतरिक परावर्तन–** जब कोई प्रकाश किरण सघन माध्यम से विरल माध्यम में जाती है और आपतन कोण का मान क्रांतिक कोण से अधिक होता है, तो विरल माध्यम में प्रकाश किरण का अपवर्तन नहीं होता, बल्कि संपूर्ण प्रकाश परावर्तित होकर सघन माध्यम में ही वापस लौट जाता है, इस प्रकार के परावर्तन को पूर्ण **आंतरिक परावर्तन** कहते हैं; क्योंकि इसमें प्रकाश का अपर्वतन बिल्कुल नहीं होता है तथा संपूर्ण प्रकाश परावर्तित हो जाता है।

पूर्ण आंतरिक परावर्तन के लिए निम्नलिखित दो नियम हैं—

(i) प्रकाश का गमन सघन माध्यम से विरल माध्यम में होना चाहिए।

(ii) सघन माध्यम में आपतन कोण का मान विरल माध्यम के सापेक्ष सघन माध्यम के क्रांतिक कोण से अधिक होना चाहिए।

प्रश्न 12. प्रकाश का अपवर्तन से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– **प्रकाश का अपवर्तन–**जब प्रकाश की कोई किरण एक पारदर्शी माध्यम से दूसरे पारदर्शी माध्यम में जाती है तो वह अपने मार्ग से विचलित हो जाती है। इसे प्रकाश का 'अपवर्तन' कहते है।

प्रश्न 13. अपवर्तनांक का प्रकाश की चाल से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– लघु उत्तरीय प्रश्न के अन्तर्गत प्रश्न–3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 14. सघन तथा विरल माध्यम से क्या तात्पर्य है? उदाहरण सहित बताइए।

उत्तर– **सघन माध्यम–** यदि अपवर्तित किरण, आपतित किरण के सापेक्ष, अभिलंब की ओर झुकती है तो दूसरे माध्यम को, पहले माध्यम के सापेक्ष सघन माध्यम कहते हैं। **उदाहरण**— वायु के सापेक्ष काँच सघन माध्यम है क्योंकि इसमें अपवर्तित किरण अभिलंब की ओर झुक जाती है।

विरल माध्यम– यदि अपवर्तित किरण, आपतित किरण के सापेक्ष अभिलंब से दूर हटती है तो दूसरे माध्यम को, पहले माध्यम के सापेक्ष विरल माध्यम कहते हैं। **उदाहरण**— काँच के सापेक्ष वायु विरल माध्यम है क्योंकि किरण काँच से वायु में अपवर्तित होते हुए अभिलंब से दूर हट जाती है।

प्रश्न 15. प्रकाश तरंगों के न्यूनतम एवं अधिकत तरंग दैर्ध्यों के मान लिखिए तथा न्यूनतम से अधिकतम तरंग दैर्ध्यों तक श्वेत प्रकाश के रंगों को क्रम से लिखिए।

उत्तर–

क्र०सं०	रंग	तरंग दैर्ध्य Å में
1.	बैंगनी	4000 Å से 4300 Å तक
2.	आसमानी (जामुनी)	4300 Å से 4600 Å तक
3.	नीला	4600 Å से 5000 Å तक
4.	हरा	5000 Å से 5700 Å तक
5.	पीला	5700 Å से 6000 Å तक
6.	नारंगी	6000 Å से 6400 Å तक
7.	लाल	6400 Å से 7800 Å तक

प्रश्न 16. सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय सूर्य लाल क्यों दिखाई देता है?

उत्तर– सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय सूर्य की किरणों को अधिक मार्ग तय करना पड़ता है जिससे प्रकाश का बैंगनी, नीला व हरा रंग संपूर्ण आकाश में प्रकीर्णित होकर आकाश में बिखर जाता है और शेष पीले, नारंगी व लाल रंग ही हमारे नेत्रों तक सीधा पहुँच पाता है। इसी कारण सूर्योदय या सूर्यास्त के समय सूर्य का रंग लाल दिखाई देता है।

प्रश्न 17. रात में दिखने वाले सिग्नल लाल रंग के क्यों बनाए जाते हैं?

उत्तर– दृश्य प्रकाश में लाल रंग की तरंग दैर्ध्य अधिक होने के कारण लाल रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन सबसे कम होता है। अत: लाल रंग के सिग्नल बहुत दूर से दिखाई दे जाते हैं।

प्रश्न 18. चंद्रमा के तल से देखने पर आकाश का रंग कैसा दिखाई देगा और क्यों?

उत्तर– चंद्रमा पर वायुमंडल नहीं है जिससे सूर्य के प्रकाश का प्रकीर्णन नहीं होता है। जिसके कारण आकाश काला दिखाई देता है। यही कारण है कि चंद्रमा के तल से देखने पर आकाश काला दिखाई देता है।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

अति लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 46 पर देखिए।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक 1.50 है तथा काँच के सापेक्ष हीरे का अपवर्तनांक 1.61 है। वायु के सापेक्ष हीरे का अपवर्तनांक ज्ञात कीजिए।

हल: वायु के सापेक्ष हीरे का अपवर्तनांक

= वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक × काँच के सापेक्ष हीरे का अपवर्तनांक

$= 1.50 \times 1.61 = \mathbf{2.41}$ **उत्तर**

प्रश्न 2. यदि वायु के सापेक्ष किसी पारदर्शी द्रव का अपवर्तनांक 1.25 है तथा काँच का अपवर्तनांक 1.5 है, तो द्रव के सापेक्ष काँच के अपवर्तनांक की गणना कीजिए।

हल: **दिया है–** ${}_a n_l = 1.25,\ {}_a n_g = 1.5$

$${}_l n_g = \frac{{}_a n_g}{{}_a n_l} = \frac{1.5}{1.25} = \mathbf{1.2}$$ **उत्तर**

प्रश्न 3. निर्वात में प्रकाश की चाल 3×10^8 मीटर/सेकंड है। यदि काँच का अपवर्तनांक $\frac{3}{2}$ हो, तो काँच में प्रकाश की चाल ज्ञात कीजिए।

हल: $$\text{काँच में प्रकाश की चाल} = \frac{\text{निर्वात में प्रकाश की चाल}}{\text{काँच का अपवर्तनांक}}$$

$$= \frac{3\times10^8}{\frac{3}{2}} = \frac{2\times3\times10^8}{3}$$

$$= \mathbf{2\times10^8 \text{ मीटर/सेकंड}}$$ **उत्तर**

प्रश्न 4. किसी द्रव का वायु के सापेक्ष क्रांतिक कोण 45° है। वायु के सापेक्ष उस द्रव का अपवर्तनांक ज्ञात कीजिए।

हल: $C = 45°, {}_an_l = ?$

वायु के सापेक्ष द्रव का अपवर्तनांक $${}_an_l = \frac{1}{\sin C} = \frac{1}{\sin 45°} = \sqrt{\mathbf{2}}$$ **उत्तर**

प्रश्न 5. काँच और वायु के क्रांतिक कोण का मान ज्ञात कीजिए। वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनांक 1.5 है। (sin 42° = 0.67)

हल: ${}_an_g = 1.5, C = ?$

$${}_an_g = \frac{1}{\sin C}$$

$$\sin C = \frac{1}{{}_an_g} = \frac{1}{1.5} = 0.67 = \sin 42°$$

अत: **काँच और वायु के लिए क्रांतिक कोण $C = 42°$** **उत्तर**

प्रश्न 6. एक वायु में प्रकाश की चाल 3×10^8 मीटर/सेकंड है। उस माध्यम में प्रकाश की चाल ज्ञात कीजिए जिसका वायु के सापेक्ष अपवर्तनांक 1.5 है।

हल: $$\text{माध्यम में प्रकाश की चाल} = \frac{\text{वायु में प्रकाश की चाल}}{\text{वायु के सापेक्ष माध्यम का अपतवर्तनांक}}$$

$$= \frac{3\times10^8}{1.5} = \mathbf{2\times10^8 \text{ मीटर/सेकंड}}$$ **उत्तर**

प्रश्न 7. वायु तथा काँच के प्रकाश की चालें क्रमश: 3×10^8 मीटर/सेकंड तथा 2×10^8 मीटर सेकंड है। वायु के सापेक्ष काँच का अपवर्तनाक ज्ञात कीजिए।

हल: $${}_an_g = \frac{\text{वायु में प्रकाश की चाल}}{\text{काँच में प्रकाश की चाल}} = \frac{3\times10^8}{2\times10^8} = \mathbf{1.5}$$ **उत्तर**

प्रश्न 8. एक झील की वास्तविक गहराई 2 मीटर है यदि वायु के सापेक्ष जल का अपवर्तनांक $\frac{4}{3}$ हो तो ज्ञात कीजिए कि झील की तली में रखी किसी छोटी वस्तु की आभासी गहराई क्या होगी तथा वह तली से कितनी ऊपर उठी हुई प्रतीत होगी?

हल: $${}_an_w = \frac{4}{3}$$

$${}_a n_w = \frac{\text{वास्तविक गहराई}}{\text{आभासी गहराई}}$$

$$\text{आभासी गहराई} = \frac{\text{वास्तविक गहराई}}{{}_a n_w} = \frac{2}{4/3} = 1.5 \text{ मीटर}$$

अत: **वस्तु तली से** $2 - 1.5 =$ **0.5 मीटर ऊँची उठी हुई प्रतीत होगी।** **उत्तर**

प्रश्न 9. वायु के सापेक्ष जल तथा काँच के अपवर्तनांक क्रमश: 4/3 व 3/2 हैं। काँच का जल के सापेक्ष अपवर्तनांक ज्ञात कीजिए।

हल: ${}_a n_w = \frac{4}{3}, {}_a n_g = \frac{3}{2}, {}_w n_g = ?$

जल के सापेक्ष काँच अपवर्तनांक

$${}_w n_g = \frac{{}_a n_g}{{}_a n_w} = \frac{3/2}{4/3} = \mathbf{\frac{9}{8}}$$ **उत्तर**

प्रश्न 10. निर्वात तथा किसी अन्य माध्यम में प्रकाश की चालें क्रमश: $\mathbf{3 \times 10^8}$ **मीटर/सेकंड तथा** $\mathbf{1.5 \times 10^8}$ **मीटर/सेंकड है। माध्यम के निरपेक्ष अपर्वनांक की गणना कीजिए।**

हल: $$\text{माध्यम के निरपेक्ष अपवर्तनांक} = \frac{\text{निर्वात में प्रकाश की चाल}}{\text{माध्यम में प्रकाश की चाल}}$$

$$= \frac{3 \times 10^8}{1.5 \times 10^8} = \mathbf{2}$$ **उत्तर**

प्रश्न 11. एक प्रिज्म का कोण 60° अल्पतम विचलन कोण 30° है। प्रिज्म के पदार्थ का अपवर्तनांक ज्ञात कीजिए।

हल: $A = 60°, \delta_m = 30°, n = ?$

$$\text{पदार्थ का अपवर्तनांक } \eta = \frac{\sin\left(\frac{A + \delta m}{2}\right)}{\sin \frac{A}{2}} = \frac{\sin\left(\frac{60° + 30°}{2}\right)}{\sin \frac{60°}{2}}$$

$$= \frac{\sin 45°}{\sin 30°} = \left(\frac{1/\sqrt{2}}{1/2}\right)$$

$$= \frac{2}{\sqrt{2}} = \sqrt{2} = \mathbf{1.414}$$ **उत्तर**

प्रश्न 12. निर्वात में प्रकाश की चाल $\mathbf{3.0 \times 10^8}$ **मीटर/सेकंड है। जल में प्रकाश की चाल की गणना कीजिए, जल का अपवर्तनांक 1.33 है।**

हल: $$\text{जल में प्रकाश की चाल} = \frac{\text{निर्वात में प्रकाश की चाल}}{\text{जल का अपवर्तनांक}} = \frac{3 \times 10^8}{1.33}$$

$$= \mathbf{2.25 \times 10^8 \text{ मीटर/सेकंड}}$$ **उत्तर**

प्रश्न 13. एक प्रिज्म का कोण 60° तथा अल्पतम विचलन कोण 38° है। प्रिज्म के पदार्थ का अपवर्तनांक ज्ञात कीजिए। (sin 49° = 0.75)

हल: **दिया है–** $A = 60°, \delta_m = 38°, n = ?$

प्रिज्म के पदार्थ का अपवर्नांक $\eta = \dfrac{\sin\left(\dfrac{A+\delta_m}{2}\right)}{\sin\dfrac{A}{2}}$

$$= \frac{\sin\left(\dfrac{60°+38°}{2}\right)}{\sin\dfrac{60°}{2}} = \frac{\sin 49°}{\sin 30°}$$

$$= \frac{0.75}{0.50} = \mathbf{1.5}$$ उत्तर

प्रश्न 14. संलग्न चित्र में अपवर्तन कोण तथा माध्यम B का माध्यम A के सापेक्ष अपवर्तनांक ज्ञात कीजिए। कौन-सा माध्यम सघन है तथा क्यों?

$$\left[\sin 30° = \frac{1}{2}, \sin 45° = \frac{1}{\sqrt{2}}\right]$$

हलः चित्रानुसार,

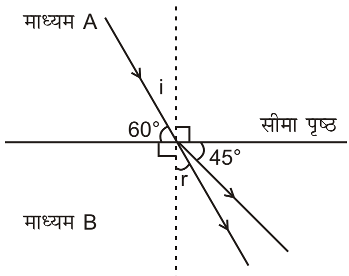

$$i = 90° - 60° = 30°$$

$$r = 90° - 45° = 45°$$

$${}_A n_B = \frac{\sin i}{\sin r} = \frac{\sin 30°}{\sin 45°}$$

$$= \frac{1/2}{1/\sqrt{2}} = \frac{1}{\sqrt{2}}$$

∵ प्रकाश किरण माध्यम A से अपवर्तन के पश्चात् माध्यम B में अभिलंब से दूर हटती जाती है।

अत: **माध्यम A सघन तथा B विरल माध्यम होगा।** उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. अपवर्तन के नियमों का सत्यापन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. एक आयताकार काँच की स्लैब से होकर जाने वाली प्रकाश की किरण का मार्ग विभिन्न आपतन कोणों के लिए ज्ञात करना तथा आपतन, अपवर्तन व निर्गत कोण की माप ज्ञात करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

3 गोलीय लेंसों द्वारा अपवर्तन

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. उत्तल लेंस के लिए u, v, व f में संबंध स्थापित कीजिए।

उत्तर– उत्तल लेंस के लिए u, v व f में संबंध–

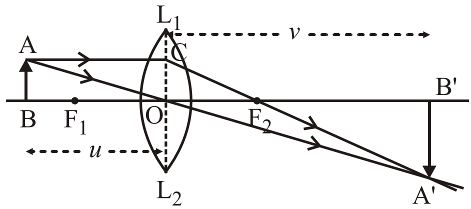

माना कोई वस्तु AB उत्तल लेंस L_1L_2 के सामने रखी है। A से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली किरण AC लेंस से अपवर्तन के पश्चात, लेंस के फोकस F_2 से होकर जाती है। A से दूसरी किरण प्रकाशिक केंद्र O से गुजरकर अपवर्तन के बाद सीधी निकल जाती है। ये दोनों अपवर्तित किरणें परस्पर A' बिंदु पर काटती हैं। A' से मुख्य अक्ष पर डाला गया लंब B' वस्तु AB का प्रतिबिंब बनता है। (चित्र–देखिए)। यदि उत्तल लेंस के प्रकाशिक केंद्र O से वस्तु की दूरी u, प्रतिबिंब की दूरी v तथा लेंस की फोकस दूरी f है,

समरूप त्रिभुज ABO तथा $A'B'O$ में,

$$\frac{AB}{A'B'} = \frac{OB}{OB'} \qquad ...(i)$$

तथा समरूप त्रिभुज CF_2O तथा त्रिभुज $A'F_2B'$ में,

$$\frac{OC}{A'B'} = \frac{OF_2}{F_2B'} \qquad ...(ii)$$

परंतु $\qquad OC = AB,$

अत: $$\frac{AB}{A'B'} = \frac{OF_2}{F_2B'} \qquad ...(iii)$$

समीकरण (i) व (ii) की तुलना करने पर,

$$\frac{OB}{OB'} = \frac{OF_2}{F_2B'} \qquad ...(iv)$$

चित्रानुसार चिह्न परिपाटी का प्रयोग करके $OB = -u, OB' = +v, OF_2 = +f$

तथा $\qquad F_2B' = OB' - OF_2 = (v - f)$

ये मान समीकरण (iv) में रखने पर,

$$\frac{-u}{+v} = \frac{+f}{+(v-f)}$$

या $\qquad -u(v-f) = vf$

या $\qquad -uv + uf = vf$

या $\qquad uf - vf = uv$

दोनों ओर uvf से भाग देने पर,

$$\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f}$$

प्रश्न 2. अवतल लेंस के लिए $u, v,$ व f में संबंध स्थापित कीजिए।

उत्तर- अवतल लेंस के लिए $u, v,$ तथा f में संबंध- माना कोई वस्तु AB एक पतले अवतल लेंस LL' की मुख्य अक्ष पर लम्बवत् रखी है। वस्तु के B सिरे से मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली किरण BE, लेंस से अपवर्तन के पश्चात् फोकस F_1 से आती हुई प्रतीत होती है। दूसरी किरण BC प्रकाशिक केंद्र C से होकर सीधी चली जाती है। ये दोनों किरणें पीछे की ओर बढ़ाने पर बिंदु B' पर परस्पर काटती हैं। अत: बिंदु B का आभासी प्रतिबिंब B' है। बिंदु B' से मुख्य अक्ष पर खींचा गया अभिलंब $A'B'$, वस्तु AB का सम्पूर्ण प्रतिबिंब है।

माना लेंस से वस्तु तक की दूरी $CA = u$, लेंस से प्रतिबिंब तक की दूरी $CA' = v$ तथा लेंस की फोकस दूरी $CF_1 = f$ है।

अत: $$\frac{1}{v}-\frac{1}{u}=\frac{1}{f}$$

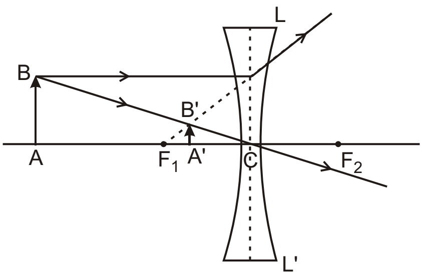

प्रश्न 3. लेंस के लिए चिह्न परिपाटी व प्रतिबिंब बनाने के नियम लिखिए।

उत्तर- चिह्न परिपाटी- दर्पणों में बताई गई निर्देशांक ज्यामिति की चिह्न परिपाटी लेंस में भी लागु होती है। इसके अनुसार,

(i) किरण आरेख बनाते समय लेंस पर प्रकाश किरणें सदैव बाईं ओर से डाली जाती हैं।

(ii) लेंस में सभी दूरियाँ प्रकाशिक केंद्र से मुख्य अक्ष के साथ नापी जाती हैं।

(iii) आपतित किरण की दिशा में नापी गई दूरियाँ धनात्मक तथा आपतित किरण के विपरीत दिशा में नापी हुई दूरियाँ ऋणात्मक ली जाती हैं; जैसे— उत्तल लेंस की फोकस दूरी f धनात्मक और अवतल लेंस की फोकस दूरी ऋणात्मक लेते हैं।

(iv) मुख्य अक्ष के ऊपर वस्तु तथा प्रतिबिंब की लंबाइयाँ धनात्मक तथा अक्ष से नीचे की ओर इनकी लंबाइयाँ ऋणात्मक लेते हैं।

लेंस द्वारा प्रतिबिंब बनाने के नियम- किसी वस्तु का लेंस द्वारा प्रतिबिंब बनाने के लिए निम्नलिखित नियम हैं—

(i) लेंस के प्रथम फोकस से होकर जाने वाली (उत्तल लेंस में) किरण या प्रथम फोकस की ओर जाती प्रतीत होने वाली (अवतल लेंस में) किरण लेंस से निकलने पर मुख्य अक्ष के समांतर हो जाती है।

(ii) लेंस की मुख्य अक्ष के समांतर चलने वाली किरण लेंस से निकल कर द्वितीय फोकस से या तो होकर जाती है (उत्तल लेंस में) अथवा द्वितीय फोकस से आती हुई प्रतीत होती है (अवतल लेंस में)

(iii) लेंस के प्रकाशीय केंद्र से होकर जाने वाली किरण अपवर्तन के पश्चात् बिना किसी विचलन के सीधी निकल जाती है।

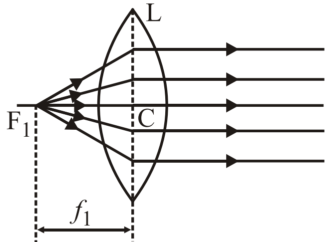

(a)

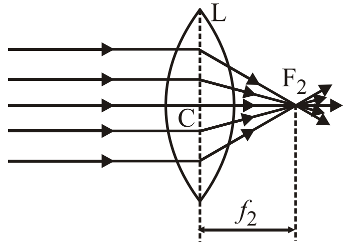

(b)

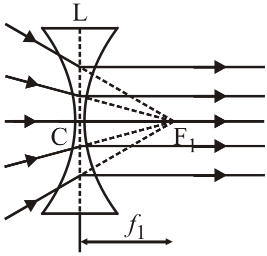

(a)

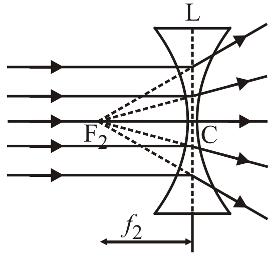

(b)

प्रश्न 4. लेंस की क्षमता से क्या आशय है? लेंस की फोकस दूरी व क्षमता में संबंध स्थापित कीजिए।

उत्तर– **लेंस की क्षमता–** लेंस का विशेष कार्य प्रकाश की किरणों को मुख्य अक्ष की ओर (उत्तल लेंस से) अथवा उससे दूर (अवतल लेंस से) मोड़ने का है। कोई लेंस प्रकाश की किरणों को जितना अधिक मोड़ता है, उसकी क्षमता उतनी ही अधिक कहलाती है। किसी लेंस के लिए, लेंस की फोकस दूरी जितनी कम होगी, वह प्रकाश की किरणों को उतना ही अधिक मोड़ेगा अर्थात् उसकी क्षमता उतनी ही अधिक होगी।

किसी लेंस की क्षमता (P) लेंस की फोकस दूरी के प्रतिलोम के बराबर होती है।

अत:
$$P = \frac{1}{f}$$

जहाँ f का मान मीटर में है। लेंस क्षमता का मात्रक डायोप्टर होता है। 1 डायोप्टर उस लेंस की क्षमता है, जिसकी फोकस दूरी 1 मीटर है।

यदि लेंस की फोकस दूरी f का मान सेमी में दिया हो, तब

$$f\ (\text{सेमी}) = \frac{f}{100}\ \text{मीटर}$$

$$P = \frac{1}{f/100} = \frac{100}{f}\ \text{डायोप्टर}$$

$$P = \frac{100}{f}$$

प्रश्न 5. लेंस से संबंधित निम्नलिखित परिभाषाएँ लिखिए–

(a) मुख्य अक्ष, (b) फोकस तल व फोकस दूरी, (c) प्रकाशिक केंद्र।

उत्तर– **(a)** **मुख्य अक्ष–** लेंस के दोनों गोलीय पृष्ठों के वक्रता केंद्रों से होकर जाने वाली ऋजु रेखा को लेंस का मुख्य अक्ष कहते हैं।

(b) **फोकस तल–** मुख्य अक्ष के लंबवत् तथा मुख्य फोकस से होकर गुजरने वाला तल, फोकस तल कहलाता है।

फोकस दूरी– लेंस के प्रकाशिक केंद्र से प्रथम या द्वितीय मुख्य फोकस की दूरी को फोकस दूरी कहते हैं। यदि लेंस के दोनों ओर एक ही माध्यम हो, लेंस में दोनों फोकस, प्रकाशिक केंद्र से समान दूरी पर विपरीत दिशाओं में होते हैं।

(c) **प्रकाशिक केंद्र–** लेंस के अंदर मुख्य अक्ष पर स्थित वह बिंदु जिससे होकर जाने वाले प्रकाश किरण अपवर्तन के पश्चात् आपतित किरण के समांतर निकल जाती है, लेंस का प्रकाशिक केंद्र कहलाता है। पहले लेंस में यह प्रकाश किरण बिना विचलित हुए सीधे उसी मार्ग से आगे निकल जाती है। इसको C से प्रदर्शित करते हैं।

वास्तव में प्रकाश किरण लेंस के दोनों पृष्ठों पर अपवर्तित होती है इसलिए लेंस के प्रकाशिक केंद्र से होकर जाने वाली प्रकाश किरण लेंस से निकलने पर अपनी प्रारंभिक दिशा के समांतर रहते हुए भी कुछ विचलित हो जाती है।

प्रश्न 6. प्रतिबिंब के रेखीय आवर्धन को समझाइए। लेंस से वस्तु की दूरी, प्रतिबिंब की दूरी तथा आवर्धन में संबंध स्थापित कीजिए।

उत्तर– **रेखीय आवर्धन–** लेंस द्वारा बने किसी वस्तु के प्रतिबिंब की लंबाई तथा वस्तु की लंबाई के अनुपात को रेखीय आवर्धन कहते हैं। चूँकि मुख्य अक्ष से ऊपर की लंबाइयाँ धनात्मक तथा नीचे की लंबाइयाँ ऋणात्मक होती हैं, अत: सीधे प्रतिबिंबों के लिए आवर्धन धनात्मक तथा उल्टे प्रतिबिंबों के लिए ऋणात्मक होता है।

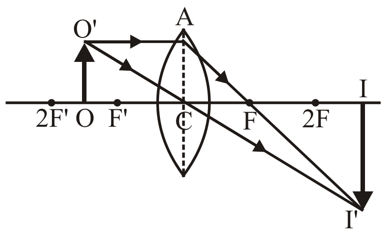

त्रिभुज CII' तथा COO' समरूप हैं। अत:

$$\frac{II'}{OO'} = \frac{CI}{CO}$$

माना कि वस्तु की लंबाई $OO' = +y_1$, प्रतिबिंब की लंबाई $II' = -y_2$, $CO = -u$ तथा $CI = +v$ (चिह्न परिपाटी के अनुसार y_1 व v धनात्मक हैं तथा y_2 व u ऋणात्मक हैं)। इन मानों को उपरोक्त समीकरण में रखने पर

$$\frac{-y_2}{+y_1} = \frac{+v}{-u}$$

$\therefore$ रेखीय आवर्धन, $m = \frac{y_2}{y_1} = \frac{v}{u}$

यह सूत्र उत्तल तथा अवतल दोनों प्रकार के लेंसों के लिए सत्य है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. चित्र की सहायता से समझाइए कि यदि कोई वस्तु उत्तल लेंस से उसकी फोकस दूरी के दोगुनी दूरी पर रखी जाए तो उसका प्रतिबिंब कहाँ और कैसा बनेगा?

उत्तर– यदि कोई वस्तु उत्तल लेंस से उसकी फोकस दूरी के दोगुनी दूरी पर रखी जाए तो उसका प्रतिबिंब मुख्य अक्ष पर लेंस के दूसरी ओर $2F$ दूरी पर वस्तु के आकार के बराबर, उल्टा तथा वास्तविक बनेगा।

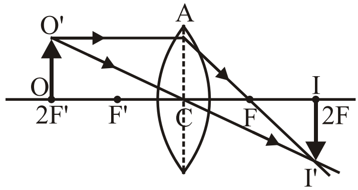

प्रश्न 2. उपयुक्त चित्रों के द्वारा लेंस के फोकस बिंदुओं को दर्शाइए।

उत्तर– फोकस बिंदुओं को F व F_1 से प्रदर्शित किया गया है तथा L_1 व L_2 लेंस और C प्रकाशिक केंद्र है।

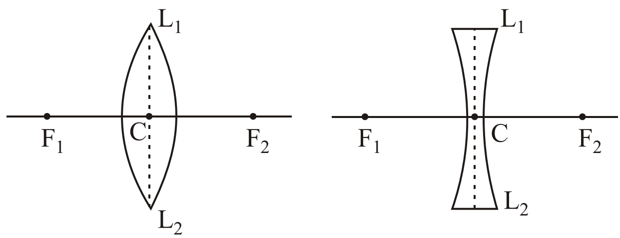

उत्तल लेंस   अवतल लेंस

प्रश्न 3. उत्तल लेंस के फोकस पर स्थित वस्तु के प्रतिबिंब का बनना किरण-आरेख खींचकर दर्शाइए। बने हुए प्रतिबिंब की प्रकृति एवं स्थिति भी लिखिए।

उत्तर– उत्तल लेंस के फोकस पर रखी हुई वस्तु का प्रतिबिंब अनंत पर, उल्टा, वस्तु से बहुत बड़ा व वास्तविक होगा।

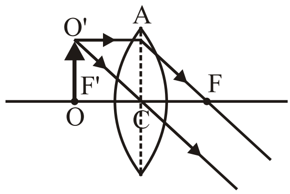

प्रश्न 4. एक उत्तल लेंस के सामने उसके प्रकाशिक केंद्र और फोकस के बीच एक वस्तु AB रखी है। किरण आरेख खींचकर वस्तु AB का प्रतिबिंब बनाइए। प्रतिबिंब की प्रकृति संबंधी तीन गुण लिखिए।

उत्तर– यह प्रतिबिंब लेंस के उसी ओर बनता है तथा आभासी, सीधा व वस्तु से बड़ा होता है।

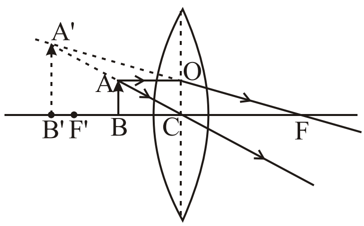

प्रश्न 5. लेंस किसे कहते हैं? उत्तल लेंस तथा अवतल लेंस में क्या अंतर है?

या लेंस किसे कहते हैं? ये कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर– **लेंस–** दो गोलीय पृष्ठों से अथवा एक गोलीय पृष्ठ तथा एक समतल पृष्ठ से घिरा पारदर्शी माध्यम लेंस कहलाता है। लेंस दो प्रकार के होते हैं—

(i) उत्तल लेंस, (ii) अवतल लेंस

(i) **उत्तल लेंस–** यह बीच में मोटा और किनारों पर पतला होता है तथा दोनों पृष्ठों की वक्रता त्रिज्या बराबर होती है। यह किरण पुंज को अभिसरित करता है, इसलिए इसे अभिसारी लेंस भी कहते हैं।

(ii) **अवतल लेंस–** यह बीच में पतला व किनारों पर मोटा होता है। साधारणतया इसके दोनों पृष्ठों की वक्रता त्रिज्याएँ बराबर होती हैं। यह किरण पुंज को अपसरित करता है, इसलिए इसे अपसारी लेंस भी कहते हैं।

प्रश्न 7. प्रतिबिंब के रेखीय आवर्धन से क्या तात्पर्य है? लेंस से वस्तु की दूरी, प्रतिबिंब की दूरी तथा आवर्धन में क्या संबंध है?

उत्तर– **प्रतिबिंब का रेखीय आवर्धन–** लेंस द्वारा बने किसी वस्तु के प्रतिबिंब की लंबाई तथा वस्तु की लंबाई के अनुपात को रेखीय आवर्धन कहते हैं।

$$\text{रेखीय आवर्धन } (m) = \frac{\text{प्रतिबिंब की लंबाई } (I)}{\text{वस्तु की लंबाई } (O)} = \frac{\text{लेंस से प्रतिबिंब की दूरी } (v)}{\text{लेंस से वस्तु की दूरी } (u)}$$

$$m = \frac{I}{O} = \frac{v}{u}$$

प्रश्न 8. लेंसों की अभिसारी तथा अपसारी प्रकृति चित्र बनाकर समझाइए।

उत्तर– **लेंसों की अभिसारी तथा अपसारी प्रकृति–** लेंसों द्वारा प्रकाश एकत्र करने अथवा फैलाने के गुण को समझने के लिए लेंस को छोटे–छोटे कई प्रिज्मों का बना हुआ मान सकते हैं।

उत्तल लेंस के ऊपरी आधे भाग के प्रिज्मों के आधार नीचे की ओर तथा नीचे के आधे भाग के प्रिज्मों के आधार ऊपर की ओर होते हैं। अत: अपवर्तन के पश्चात् उत्तल लेंस के ऊपरी आधे भाग पर आपतित किरणें नीचे की ओर तथा नीचे के आधे भाग पर आपतित किरणें ऊपर की ओर मुड़ जाती हैं। इस प्रकार उत्तल लेंस पर पड़ने वाली समांतर किरणें अपवर्तन के पश्चात् एक बिंदु पर केंद्रित हो जाती हैं। इस गुण के कारण उत्तल लेंस को अभिसारी लेंस कहते हैं।

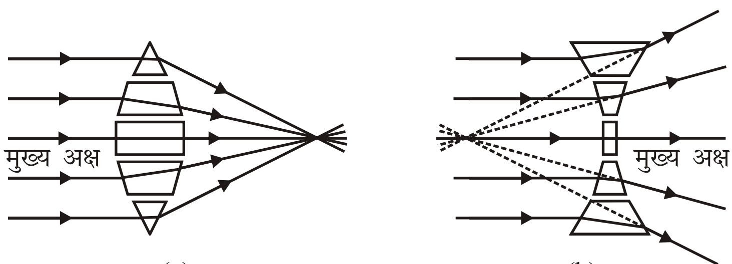

(a) (b)

अवतल लेंस के ऊपरी आधे भाग के प्रिज्मों के आधार ऊपर की ओर तथा नीचे के आधे भाग के आधार नीचे की ओर होते हैं। अत: अपवर्तन के पश्चात् निचले आधे भाग पर पड़ने वाली समांतर किरणें नीचे की ओर झुक जाती हैं और ऊपर के आधे भाग पर पड़ने वाली समांतर किरणें ऊपर की ओर उठ जाती हैं। इस अवतल लेंस पर पड़ने वाली समांतर किरणें अपवर्तन के पश्चात् फैल जाती हैं। इस गुण के कारण अवतल लेंस को अपसारी लेंस कहते हैं।

प्रश्न 9. बिना स्पर्श किए हुए आप उत्तल लेंस, अवतल लेंस तथा काँच की प्लेट को कैसे पहचानोगें?

उत्तर- **प्रतिबिंब देखकर-** उत्तल लेंस, अवतल लेंस व काँच की प्लेट को मुद्रित अक्षरों के ऊपर रखकर ऊपर उठाने से यदि अक्षरों का आकार बढ़ता दिखाई दे तो वह उत्तल लेंस होगा और यदि अक्षरों का आकार छोटा दिखाई दे तो वह अवतल लेंस होगा और यदि अक्षरों का आकार समान रहे तो वह काँच की प्लेट होगी।

यदि दिए हुए लेंस को छपे पृष्ठ से काफी ऊपर उठाया जाए तो उत्तल लेंस में अक्षर उल्टे दिखाई देंगे। परंतु अवतल लेंस में अक्षर सीधे व छोटे दिखाई देते हैं। काँच की प्लेट से अक्षर पूर्व की भाँति ही दिखाई देते हैं।

प्रश्न 10. लेंस की क्षमता से क्या अभिप्राय है? इसके S.I. मात्रक लिखिए। किस लेंस की क्षमता ऋणात्मक होती है?

या लेंसों की क्षमता से आप क्या समझते हैं? इसका मात्रक क्या होता है?

उत्तर- लेंस का विशेष कार्य प्रकाश की किरणों को मुख्य अक्ष की ओर या उससे दूर मोड़ने का है। कोई लेंस प्रकाश की किरणों को जितना अधिक मोड़ता है, उसकी क्षमता उतनी ही अधिक कहलाती है। किसी लेंस के लिए, लेंस की फोकस दूरी जितनी कम होगी, वह प्रकाश की किरणों को उतना ही अधिक मोड़ेगा अर्थात् उसकी क्षमता उतनी ही अधिक होगी।

किसी लेंस की क्षमता (P) लेंस की फोकस दूरी (f) के प्रतिलोम के बराबर होती है। अत:

$$P = \frac{1}{f}$$

लेंस की क्षमता का S.I. मात्रक डायोप्टर होता है। अवतल लेंस की क्षमता ऋणात्मक होगी, क्योंकि अवतल लेंस की फोकस दूरी ऋणात्मक होती है।

प्रश्न 11. लेंसों के उपयोग लिखिए।

उत्तर- **लेंसों का उपयोग-** लेंसों का हमारे दैनिक जीवन में बहुत उपयोग है। घड़ीसाज घड़ी के छोटे-छोटे पुर्जे तथा डॉक्टर आँख और कान में बीमारी उत्तल लेंस लगाकर ही देखते हैं। मनुष्य की दृष्टि जब इतनी क्षीण हो जाती है कि उसे समीप का स्पष्ट दिखाई नहीं देता तो उत्तल लेंस का चश्मा लगाकर आँख के इस दोष को दूर करते हैं। जब आँख से दूर का स्पष्ट दिखाई नहीं देता तो अवतल लेंस का चश्मा लगाकर आँख के इस दोष को दूर किया जाता है। उत्तल लेंस का उपयोग सूक्ष्मदर्शी, दूरदर्शी, चित्रदर्शी लालटेन, फोटोग्राफिक कैमरे तथा अन्य प्रकाशिक यंत्रों में किया जाता है।

प्रश्न 12. अवतल लेंस द्वारा किसी वस्तु के प्रतिबिंब का बनना किरण आरेख द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

उत्तर- **अवतल लेंस द्वारा प्रतिबिंब का बनना-** चित्र में लेंस की मुख्य अक्ष पर स्थित वस्तु AB के बिंदु B से मुख्य अक्ष के समांतर किरण BE लेंस से अपवर्तन के पश्चात् फोकस F_1 से आती हुई प्रतीत होती है। दूसरी किरण BC प्रकाशिक केंद्र C से गुजरकर उसी रास्ते पर सीधी चली जाती है। ये दोनों किरणें पीछे की ओर बढ़ाने पर बिंदु B पर परस्पर काटती हैं। अत: बिंदु B का आभासी प्रतिबिंब B' है। B' से मुख्य अक्ष पर खींचा गया, अभिलंब $A'B'$ वस्तु AB का प्रतिबिंब है। यह प्रतिबिंब वस्तु की ओर ही लेंस तथा फोकस के बीच है एवं आभासी, सीधा व वस्तु से छोटा है।

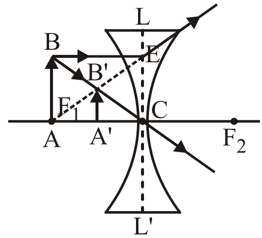

प्रश्न 13. अवतल लेंस के फोकस पर स्थित वस्तु के बने प्रतिबिंब की स्थिति एवं प्रकृति को किरण आरेख द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

[**संकेत–** प्रतिबिंब लेंस व फोकस F के ठीक बीच में आभासी, सीधा तथा वस्तु से छोटा बनेगा।]

उत्तर–

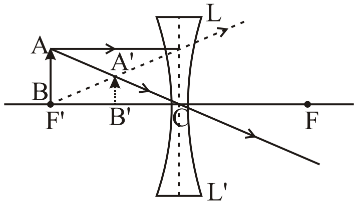

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

अति लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 61 पर देखिए।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. एक लेंस से 100 सेमी दूर स्थित वस्तु का बन रहा प्रतिबिंब वस्तु के आकार का आधा है। लेंस की फोकस दूरी एवं क्षमता ज्ञात कीजिए।

हल: (i) उत्तल लेंस के लिए–

दिया है $u = -100$ सेमी, $m = -\frac{v}{u} = \frac{1}{2}$ या $v = -\frac{1}{2}u$

$$v = -\frac{1}{2} \times (-100) = 50 \text{ सेमी}$$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से,

$$\frac{1}{f} = \frac{1}{50} - \left(\frac{-1}{100}\right)$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{50} + \frac{1}{100} = \frac{2+1}{100} = \frac{3}{100}$$

फोकस दूरी, $f = \frac{100}{3}$ सेमी

लेंस की क्षमता, $P = \frac{100}{f}$

$$= \frac{100}{\frac{100}{3}} = \frac{100 \times 3}{100} = \mathbf{3 \text{ डायोप्टर}}$$ **उत्तर**

(ii) अवतल लेंस के लिए–

$$u = -100 \text{ सेमी}$$

$$m = \frac{v}{u} = \frac{1}{2}$$

या $$v=\frac{1}{2}u=\frac{1}{2}\times(-100)=-50 \text{ सेमी}$$

अत: सूत्र— $$\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u} \text{ से}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{-1}{50}+\frac{1}{100}=\frac{-2+1}{100}=\frac{-1}{100}$$

फोकस दूरी, $f=-\frac{100}{1}=-100$ सेमी

लेंस की क्षमता, $P=\frac{100}{f}=-\frac{100}{100}=$ **−1 डायोप्टर** उत्तर

प्रश्न 2. एक बच्चे के चश्मे में प्रयुक्त लेंसों की क्षमताएँ क्रमशः −1.25*D* तथा +0.50*D* हैं। इन लेंसों की फोकस दूरियाँ एवं प्रकृति ज्ञात कीजिए।

हल: $\because$ $$P=\frac{100}{f}$$

पहले लेंस के लिए,

$\therefore$ $$f=\frac{100}{P}=-\frac{100}{1.25}=-80 \text{ सेमी}$$

अत: **लेंस अवतल लेंस होगा एवं फोकस दूरी = 80 सेमी होगी।**

दूसरे लेंस के लिए,

या $$f=\frac{100}{P}=\frac{100}{0.50}=200 \text{ सेमी}$$

अत: **लेंस उत्तल लेंस होगा एवं फोकस दूरी 200 सेमी होगी।** उत्तर

प्रश्न 3. एक उत्तल लेंस की फोकस दूरी 50 सेमी है। उस वस्तु के प्रतिबिंब की स्थिति बताइए। जो लेंसों से–

(a) 25 सेमी, (b) 75 सेमी की दूरी पर अक्ष के लंब के रूप में

हल: **(a)** $u=-25$ सेमी, $f=50$ सेमी

सूत्र– $$\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u} \text{ से}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{v}=\frac{1}{f}+\frac{1}{u}$$

$$=\frac{1}{50}+\frac{1}{-25}$$

$$\Rightarrow \quad =\frac{1}{50}-\frac{1}{25}=\frac{1-2}{50}$$

$$\frac{1}{v}=\frac{-1}{50} \Rightarrow v=\mathbf{-50} \text{ **सेमी**}$$ उत्तर

(b) $u=-75$ सेमी, $f=50$ सेमी

सूत्र– $$\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u} \text{ से}$$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{v} = \frac{1}{f} + \frac{1}{u}$$

$$= \frac{1}{50} + \frac{1}{-75}$$

$$\Rightarrow \qquad = \frac{1}{50} - \frac{1}{75} = \frac{3-2}{150} = \frac{1}{150}$$

$v = \mathbf{150}$ **सेमी** उत्तर

प्रश्न 4. किसी लेंस से 20 सेमी दूर रखी वस्तु का तीन गुना बड़ा आभासी प्रतिबिंब बनता है। लेंस से प्रतिबिंब की दूरी तथा लेंस की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हल: $u = -20$ सेमी, $m = 3$

क्योंकि प्रतिबिंब आभासी व तीन गुना है; अत: आवर्धन धनात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u}$$

$$3 = \frac{v}{-20} \Rightarrow v = -60 \text{ सेमी}$$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = -\frac{1}{60} - \left(-\frac{1}{20}\right) = -\frac{1}{60} + \frac{1}{20} = \frac{-1+3}{60}$$

$$\frac{1}{f} = \frac{2}{60}$$

$$\Rightarrow \qquad f = 30 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब वस्तु की ओर 60 सेमी दूरी पर बनेगा तथा फोकस दूरी 30 होगी।** उत्तर

प्रश्न 5. एक उत्तल लेंस से 15 सेमी दूर रखी वस्तु का चार गुना बड़ा वास्तविक प्रतिबिंब बनता है। उत्तल लेंस की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

[संकेत– $\boldsymbol{m = v/u = -4; \therefore v = -4 \times (-15) = 60}$ **सेमी]**

हल: $m = -4, \ u = -15$ सेमी

$$m = \frac{v}{u} = -4$$

या $v = -4(u) = -4 \times (-15) = 60$ सेमी

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = \frac{1}{60} + \frac{1}{15} = \frac{1+4}{60} = \frac{5}{60}$$

$f = \frac{60}{5} = \mathbf{12}$ **सेमी** उत्तर

प्रश्न 6. एक लेंस से 15 सेमी की दूरी पर स्थित वस्तु का प्रतिबिंब सीधा तथा दोगुने आकार का बनता है। लेंस उत्तल है अथवा अवतल? लेंस की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हल: प्रतिबिंब आकार में वस्तु से बड़ा व सीधा है; अतः आवर्धन धनात्मक होगा तथा लेंस उत्तल लेंस होगा।

$$m=\frac{v}{u} \Rightarrow 2=\frac{v}{-15} \Rightarrow v=-30 \text{ सेमी}$$

सूत्र- $\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow$ $\frac{1}{f}=\frac{1}{-30}-\left(\frac{1}{-15}\right)$

$\Rightarrow$ $=\frac{-1}{30}+\frac{1}{15}$

$\Rightarrow$ $=\frac{-1+2}{30}$

$\frac{1}{f}=\frac{1}{30}$

$\Rightarrow$ $f=$ **30 सेमी** उत्तर

प्रश्न 7. एक दीप्त वस्तु पर्दे से 1 मीटर की दूरी पर स्थित है। एक उत्तल लेंस द्वारा इस वस्तु का प्रतिबिंब पर्दे पर बनाया गया है। यदि रेखीय आवर्धन 3 हो तो लेंस की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए। [संकेत– $v+u=100$ सेमी, $v/u=3$, इस प्रकार $u=25$ सेमी तथा $v=75$ सेमी]

हल: $m=3,\ v+u=1$ मीटर

$\Rightarrow$ $v+u=100$ सेमी ...(i)

$$m=\frac{v}{u}=3$$

$v=3u$ को समीकरण (i) में प्रतिस्थापित करने पर,

$v+u=100$ से,

$3u+u=100$

$4u=100$

$u=\frac{100}{4}=25$ सेमी

$v=75$ सेमी ($\because v=3u$)

आपतित किरण के विपरीत दिशा में नापी गई दूरियाँ ऋणात्मक हैं; अतः $u=-25$ सेमी

सूत्र– $\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow$ $=\frac{1}{75}-\left(\frac{1}{-25}\right)$

$\Rightarrow$ $=\frac{1+3}{75}=\frac{4}{75}$

$f=\frac{75}{4}=$ **18.75 सेमी** उत्तर

प्रश्न 8. एक वस्तु का एक उत्तल लेंस द्वारा किसी पर्दे पर 4 गुना बड़ा प्रतिबिंब बनता है। यदि वस्तु तथा पर्दे की स्थितियाँ बदल दी जाएँ, तो इस दशा में आवर्धन क्या होगा?

हल: $m = \frac{v}{u} = 4$

अत: $v = 4u$

यदि u व v की स्थितियाँ बदल दी जाएँ तब आवर्धन

अर्थात् $u = 4v$

अत: आवर्धन $m = \frac{v}{u} = \frac{1}{4}$

अत: **स्थितियाँ बदलने पर आवर्धन $\frac{1}{4}$ होगा।** उत्तर

प्रश्न 9. 24 सेमी फोकस दूरी के एक लेंस से किसी वस्तु की एक तिहाई लंबाई का आभासी प्रतिबिंब बनता है। लेंस की प्रकृति तथा लेंस से वस्तु व प्रतिबिंब की दूरियाँ बताइए।

हल: ∵ प्रतिबिंब आभासी व वस्तु से छोटा है; अत: अवतल लेंस होगा।

$f = -24$ सेमी, $m = \frac{v}{u} = \frac{1}{3}$

$u = 3v$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से,

$$\frac{1}{-24} = \frac{1}{v} - \frac{1}{3v} \Rightarrow = \frac{3-1}{3v} \Rightarrow = \frac{2}{3v}$$

$$3v = -24 \times 2 \Rightarrow v = \frac{-48}{3} \Rightarrow = -16$$

$v = -16$ सेमी

$u = 3 \times v \Rightarrow = 3 \times -16 \Rightarrow = -48$ सेमी

अत: **लेंस से वस्तु की दूरी 48 सेमी व लेंस से प्रतिबिंब की दूरी 16 सेमी होगी।**

उत्तर

प्रश्न 10. 32 सेमी फोकस दूरी के उत्तल लेंस के सामने कोई वस्तु कहाँ पर रखी जाए कि प्रतिबिंब का आवर्धन 2 हो तथा प्रतिबिंब-

(a) वास्तविक, (b) आभासी हो

हल: (a) ∵ प्रतिबिंब वास्तविक है अत: आवर्धन ऋणात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u} = -2$$

∴ $v = -2u,\ f = 32$ सेमी

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \frac{1}{32} = -\frac{1}{2u} - \frac{1}{u}$$

$$\Rightarrow \frac{1}{32} = \frac{-1-2}{2u} \Rightarrow = \frac{-3}{2u}$$

$$2u = 32\times(-3)$$

$$\Rightarrow \qquad u = \frac{-96}{2} \Rightarrow = -48$$

$$u = -48 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु को लेंस से 48 सेमी की दूरी पर रखना चाहिए।**

(b) ∵ प्रतिबिंब आभासी है अत: आवर्धन धनात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u} = 2 \qquad [\therefore v = 2u]$$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{32} = \frac{1}{2u} - \frac{1}{u}$$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{32} = \frac{1-2}{2u} = \frac{-1}{2u}$$

$$2u = 32\times(-1)$$

$$u = -\frac{32}{2} = -16 \text{ सेमी}$$

अत: **वस्तु को लेंस से 16 सेमी की दूरी पर रखना चाहिए।** **उत्तर**

प्रश्न 11. एक उत्तल लेंस से 10 सेमी की दूरी पर स्थित एक वस्तु का प्रतिबिंब वस्तु की ओर वस्तु से दो गुना बड़ा बनता है। यदि वस्तु को उसी लेंस से 30 सेमी दूरी पर रखा जाए, तो उसके प्रतिबिंब की स्थिति तथा आवर्धन ज्ञात कीजिए।

हल: ∵ प्रतिबिंब लेंस के उसी ओर बनता है अत: यह सीधा होगा तथा आवर्धन धनात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u} = 2,\ u = -10 \text{ सेमी}$$

$$\therefore \qquad v = 2u = 2\times(-10) = -20 \text{ सेमी}$$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u} = \frac{1}{-20} - \frac{1}{-10} = -\frac{1}{20} + \frac{1}{10}$

$$\Rightarrow \qquad = \frac{-1+2}{20} = \frac{1}{20}$$

$$f = 20 \text{ सेमी}$$

जब $u = -30$ सेमी, $v = ?$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u} \Rightarrow \frac{1}{20} = \frac{1}{v} - \frac{1}{-30} \Rightarrow \frac{1}{20} = \frac{1}{v} + \frac{1}{30}$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{v} = \frac{1}{20} - \frac{1}{30} \Rightarrow \frac{1}{v} = \frac{3-2}{60} = \frac{1}{60}$$

$$v = 60 \text{ सेमी}$$

$$m = \frac{v}{u} = \frac{60}{-30} = -2$$

अत: **प्रतिबिंब 60 सेमी दूर लेंस के दूसरी ओर उल्टा व दोगुना बड़ा बनेगा।** **उत्तर**

प्रश्न 12. एक उत्तल लेंस की फोकस दूरी 20 सेमी है। इस लेंस के आगे 2 सेमी लंबी एक पिन 10 सेमी दूर रखी है। पिन के प्रतिबिंब की लंबाई ज्ञात कीजिए।

हल: $f = 20$ सेमी, $u = -10$ सेमी, $O = 2$ सेमी

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow$ $\frac{1}{20} = \frac{1}{v} - \frac{1}{-10} \Rightarrow \frac{1}{v} = \frac{1}{20} - \frac{1}{10}$

$$\frac{1}{v} = \frac{1-2}{20} = \frac{-1}{20}$$

$v = -20$ सेमी

$$m = \frac{I}{O} = \frac{v}{u} \Rightarrow \frac{I}{2} = \frac{-20}{-10} \Rightarrow I = 4 \text{ सेमी}$$

अत: **प्रतिबिंब की लंबाई 4 सेमी होगी।** **उत्तर**

प्रश्न 13. 0.18 मीटर फोकस दूरी के उत्तल लेंस से वस्तु का तीन गुना वास्तविक प्रतिबिंब पर्दे पर प्राप्त करने के लिए वस्तु को लेंस से कितनी दूर रखना चाहिए।

हल: $f = 0.18$ मीटर $= 0.18 \times 100$ सेमी $= 18$ सेमी

$\because$ प्रतिबिंब वास्तविक है अत: आवर्धन ऋणात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u} = -3$$

$$v = -3u$$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से,

$$\frac{1}{18} = -\frac{1}{3u} - \frac{1}{u}$$

$\Rightarrow$ $\frac{1}{18} = \frac{-1-3}{3u} \Rightarrow \frac{1}{18} = \frac{-4}{3u}$

$$3u = 18 \times (-4)$$

$\Rightarrow$ $3u = -72$

$$u = -\frac{72}{3} = -24 \text{ सेमी}$$

अत: **लेंस से वस्तु की दूरी 24 सेमी होगी।** **उत्तर**

प्रश्न 14. एक उत्तल लेंस से 0.15 मीटर दूरी पर स्थित वस्तु का प्रतिबिंब लेंस के दूसरी ओर 0.60 मीटर दूरी पर बन रहा है। यदि वस्तु की लंबाई 0.15 मीटर हो तो प्रतिबिंब की लंबाई क्या होगी?

हल: $u = -0.15$ मीटर, $v = 0.60$ मीटर, $O = 0.15$ मीटर

$$m = \frac{I}{O} = \frac{v}{u}$$

$\Rightarrow$ $\frac{I}{0.15} = \frac{0.60}{0.15}$

$I = 0.60$ मीटर

अत: **प्रतिबिंब की लंबाई 0.60 मीटर, लंबा, उल्टा व वास्तविक होगी।** **उत्तर**

प्रश्न 15. एक 12 सेमी फोकस दूरी वाले उत्तल लेंस के सामने कोई वस्तु कितनी दूर रखी जाए कि उसका आभासी प्रतिबिंब तीन गुना बने?

हलः $f = 12$ सेमी

$\because$ प्रतिबिंब आभासी व बड़ा है, अतः आवर्धन धनात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u} = 3$$

$$v = 3u$$

सूत्र से- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{12} = \frac{1}{3u} - \frac{1}{u} \Rightarrow \frac{1}{12} = \frac{1-3}{3u}$$

$$\frac{1}{12} = \frac{-2}{3u} \Rightarrow 3u = 12 \times (-2)$$

$$u = \frac{-24}{3} = -8 \text{ सेमी}$$

अतः **लेंस से वस्तु की दूरी 8 सेमी होगी।** उत्तर

प्रश्न 16. किसी लेंस से 15 सेमी दूर रखी वस्तु का चार गुना बड़ा आभासी प्रतिबिंब बनता है। लेंस से प्रतिबिंब की दूरी तथा लेंस की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हलः $\because$ प्रतिबिंब आभासी व बड़ा है अतः प्रतिबिंब सीधा होगा और आवर्धन धनात्मक होगा।

$$m = \frac{v}{u} = 4$$

$$v = 4u = 4 \times (-15) = -60 \text{ सेमी} \qquad (\because u = -15 \text{ सेमी})$$

$$v = -60 \text{ सेमी}$$

सूत्र— $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = -\frac{1}{60} - \frac{1}{-15} \Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{60} + \frac{1}{15}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{-1+4}{60} = \frac{3}{60}$$

$$f = \frac{60}{3} = 20$$

$$f = 20 \text{ सेमी}$$

अतः **प्रतिबिंब वस्तु की ओर 60 सेमी दूरी पर बनेगा व फोकस दूरी 20 सेमी होगी।** उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. उत्तल लेंस की फोकस दूरी किसी दूर स्थित वस्तु के प्राप्त स्पष्ट प्रतिबिंब द्वारा ज्ञात करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

4 मानव नेत्र तथा दृष्टि दोष

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मानव नेत्र की संरचना का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– **मानव नेत्र–** मानव नेत्र द्वारा वस्तुओं से आने वाले प्रकाश के, नेत्र में स्थित लेंस द्वारा अपवर्तन के कारण, नेत्र के पिछले भाग में स्थित रेटिना पर वास्तविक, उल्टे तथा छोटे प्रतिबिंब बनते हैं।

मानव नेत्र के निम्नलिखित भाग होते हैं—

(i) दृढ़ पटल– मनुष्य का नेत्र लगभग एक खोखले गोले के समान होता है। इसकी सबसे बाहरी पर्त, अपारदर्शी, श्वेत तथा दृढ़ होती है। इसे दृढ़ पटल कहते हैं। इसके द्वारा नेत्र के भीतरी भागों की सुरक्षा होती है।

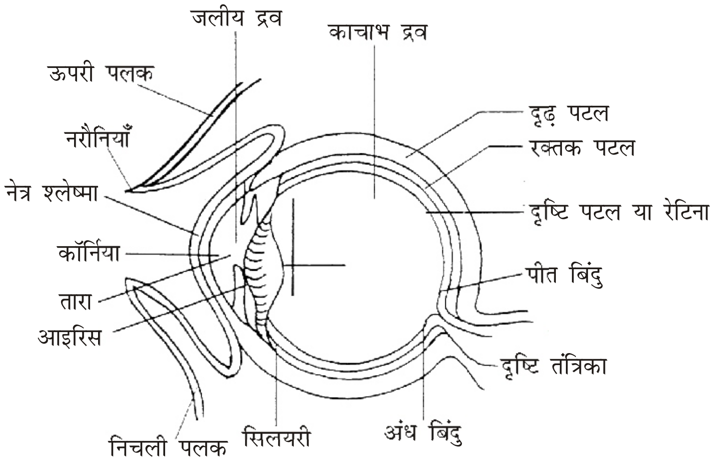

(ii) रक्तक पटल– दृढ़ पटल के भीतरी पृष्ठ से लगी काले रंग की एक झिल्ली होती है, जिसे रक्तक पटल कहते हैं। यह नेत्र के भीतरी भागों में परावर्तन रोकती है।

(iii) कॉर्निया– दृढ़ पटल के सामने का भाग उभरा तथा पारदर्शी होता है, इसे कॉर्निया कहते हैं। नेत्र में प्रकाश इस भाग से होकर प्रवेश करता है।

(iv) परितारिका अथवा आइरिस– कॉर्निया के पीछे एक रंगीन एवं अपारदर्शी झिल्ली का पर्दा होता है, जिसे आइरिस कहते हैं।

(v) पुतली या नेत्र तारा– आइरिस के बीच में एक छोटा छिद्र होता है, जिसे पुतली कहते हैं। यह गोल एवं काली दिखाई देती है। कॉर्निया से आया प्रकाश पुतली से होकर ही लेंस पर पड़ता है। पुतली की यह विशेषता होती है कि अंधकार में यह अपने आप बड़ी व अधिक प्रकाश में अपने आप छोटी हो जाती है। इस प्रकार नेत्र में उचित मात्रा में ही प्रकाश पहुँच पाता है। जब प्रकाश की मात्रा कम होती है, तो आइरिस की माँसपेशियाँ किनारों की ओर सिकुड़कर पुतली को बड़ा कर देती हैं,

जिससे लेंस पर पड़ने वाले प्रकाश की मात्रा बढ़ जाती है और जब प्रकाश की मात्रा अधिक होती है, तो पुतली की माँसपेशियाँ ढीली हो जाती हैं। इस क्रिया को पुतली समायोजन कहते हैं। नेत्र में यह क्रिया स्वत: होती रहती है।

(vi) **नेत्र-लेंस–** आइरिस के ठीक पीछे नेत्र-लेंस होता है। इस लेंस के पिछले भाग की वक्रता त्रिज्या छोटी तथा अगले भाग की बड़ी होती है। यह कई पर्तों से मिलकर बना होता है, जिनके अपवर्तनांक बाहर से भीतर की ओर बढ़ते जाते हैं तथा माध्य अपवर्तनांक लगभग 1.44 होता है। लेंस अपने स्थान पर माँसपेशियों के बीच में टिका रहता है तथा इसमें अपनी फोकस दूरी को बदलने की क्षमता होती है।

(vii) **जलीय द्रव एवं काँच द्रव–** कॉर्निया और नेत्र-लेंस के बीच में एक नमकीन पारदर्शी द्रव भरा होता है, जिसे जलीय द्रव कहते हैं। इसका अपवर्तनांक 1.336 होता है। नेत्र-लेंस के पीछे एक अन्य पारदर्शी द्रव होता है, जिसे काँच द्रव कहते हैं। इसका अपवर्तनांक भी 1.336 होता है।

(viii) **रेटिना–** कोरॉइड झिल्ली के ठीक नीचे तथा नेत्र के सबसे अंदर की ओर एक पारदर्शी झिल्ली होती है, जिसे रेटिना कहते हैं। वस्तु का प्रतिबिंब रेटिना पर ही बनता है। रेटिना बहुत सारी प्रकाश तंत्रिकाओं की एक फिल्म होती है। रेटिना पर बने प्रतिबिंब का रंग एवं आकार आदि का मस्तिष्क को ज्ञान, इन तंत्रिकाओं द्वारा ही होता है। रेटिना के विभिन्न भाग प्रकाश के लिए समान रूप से सुग्राही नहीं होते हैं।

(ix) **पीत बिंदु–** लेंस की मुख्य अक्ष, रेटिना को जिस बिंदु पर काटती है, उसे पीत बिंदु कहते हैं। रेटिना के इस भाग की सुग्राहिता सबसे अधिक होती है।

(x) **अंध बिंदु–** जिस स्थान से प्रकाश तंत्रिकाएँ, रेटिना को छेदकर मस्तिष्क को जाती हैं, उस स्थान की प्रकाश के लिए सुग्राहिता शून्य होती है, इसे अंध बिंदु कहते हैं।

प्रश्न 2. नेत्र लेंस की फोकस दूरी व समंजन क्षमता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर– **नेत्र लेंस की फोकस दूरी व समंजन क्षमता–** जब नेत्र अनंत पर स्थित किसी वस्तु को देखता है तो नेत्र पर गिरने वाली समांतर किरणें नेत्र लेंस द्वारा रेटिना R पर फोकस हो जाती हैं तथा नेत्र को वस्तु स्पष्ट दिखाई देती है। नेत्र लेंस से रेटिना तक की दूरी नेत्र लेंस की फोकस दूरी कहलाती है। उस समय माँसपेशियाँ ढीली पड़ी रहती हैं तथा नेत्र लेंस की फोकस दूरी सबसे अधिक होती है। जब नेत्र किसी समीप की वस्तु को देखता है तो माँसपेशियाँ सिकुड़ कर लेंस के तलों की वक्रता त्रिज्याओं को छोटी कर देती हैं। इससे नेत्र लेंस की फोकस दूरी कम हो जाती है और वस्तु का स्पष्ट प्रतिबिंब पुन: रेटिना पर बन जाता है। नेत्र की इस प्रकार फोकस दूरी को कम करने की क्षमता को 'समंजन क्षमता' कहते हैं। ज्यों-ज्यों हम अधिकाधिक पास की वस्तुओं को देखते हैं, त्यों-त्यों समंजन क्षमता अधिक लगानी पड़ती है। परंतु समंजन क्षमता लगाने की भी एक सीमा होती है। यदि वस्तु को नेत्र के बहुत अधिक

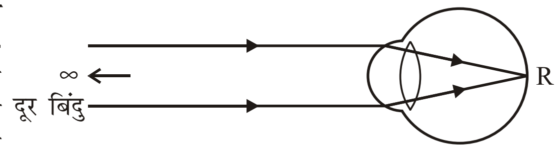

(a)

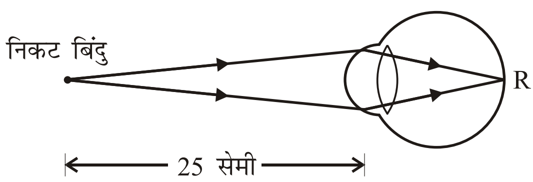

(b)

निकट लाया जाए तो वह स्पष्ट दिखाई नहीं देगी। वह निकटतम बिंदु जिसे नेत्र अपनी अधिकतम समंजन क्षमता लगाकर स्पष्ट देख सकता है, नेत्र का 'निकट बिंदु' कहलाता है। नेत्र से निकट बिंदु की दूरी 'स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी' कहलाती है। सामान्य नेत्र के लिए यह दूरी 25 सेमी होती है। इसके विपरीत, यह दूरस्थ बिंदु जिसे नेत्र बिना समंजन क्षमता लगाए स्पष्ट देख सकता है, नेत्र का 'दूर बिंदु' कहलाता है। सामान्य नेत्र के लिए दूर बिंदु अनंत पर होता है।

प्रश्न 3. निकट दृष्टि दोष से आप क्या समझते हैं? इस दोष के कारण तथा निवारण लिखिए।

उत्तर– **निकट दृष्टि दोष–** इस दोष में नेत्र निकट की वस्तुओं को तो स्पष्ट देख सकता है परंतु अधिक दूरी पर रखी वस्तु स्पष्ट दिखाई नहीं देती अर्थात् नेत्र का दूर बिंदु अनंत पर न होकर कम दूरी पर आ जाता है। यह दोष 10 से 16 वर्ष की आयु में होता है। अत: समंजन क्षमता पूर्ण होने के कारण नेत्र का निकट बिंदु भी सामान्य नेत्र के निकट बिंदु (25 सेमी) से कम दूरी पर आ जाता है।

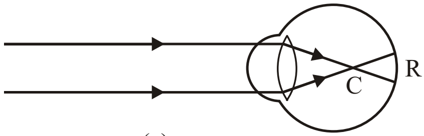

(a)

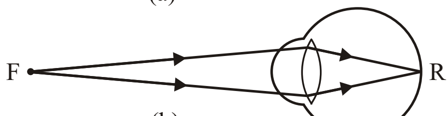

(b)

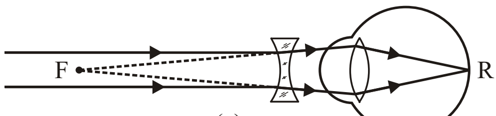

(c)

दोष के कारण– इस दोष के दो कारण हो सकते हैं—

(i) नेत्र लेंस की वक्रता बढ़ जाए जिससे उसकी फोकस दूरी कम हो जाए।

(ii) नेत्र लेंस और रेटिना के बीच की दूरी बढ़ जाए अर्थात् नेत्र के गोले का व्यास बढ़ जाए। तब अनंत से चलने वाली किरणें नेत्र में अपवर्तित होकर बजाय रेटिना R पर मिलने के रेटिना से पहले ही एक बिंदु C पर मिल जाती हैं। अत: अनंत (दूर) पर रखी वस्तु स्पष्ट दिखाई नहीं देती।

निवारण– निकट दृष्टि दोष में नेत्र का दूर बिंदु F अनंत से कम दूरी पर ऐसी स्थिति में होता है जहाँ से चलने वाली किरणें बिना समंजन क्षमता लगाए रेटिना पर मिलती हैं। अत: इस दोष को दूर करने के लिए एक ऐसे अवतल लेंस के चश्मे का उपयोग किया जाता है जिससे कि अनंत पर रखी वस्तु से चलने वाली किरणें इस लेंस से निकलने पर नेत्र के दूर बिंदु F से चली हुई प्रतीत हों। तब ये किरणें नेत्र में अपवर्तित होकर रेटिना R पर मिलती हैं। जहाँ वस्तु का स्पष्ट प्रतिबिंब बन जाता है। इस प्रकार नेत्र को वस्तु स्पष्ट दिखाई देने लगती है।

प्रश्न 4. दूर दृष्टि से आप क्या समझते हैं? इस दोष के कारण तथा निवारण लिखिए।

उत्तर– **दूर दृष्टि दोष–** इस दोष से युक्त नेत्र द्वारा मनुष्य को दूर की वस्तुएँ तो स्पष्ट दिखाई देती हैं, परंतु पास की वस्तुएँ स्पष्ट दिखाई नहीं देती हैं अर्थात् नेत्र का निकट बिंदु 25 सेमी से अधिक दूर हो जाता है। अत: ऐसे व्यक्ति को पढ़ने के लिए पुस्तक 25 सेमी से

अधिक दूर रखनी पड़ती है। इस दोष से समीप की वस्तु का प्रतिबिंब दृष्टि पटल पर न बनकर उसके पीछे बनता है।

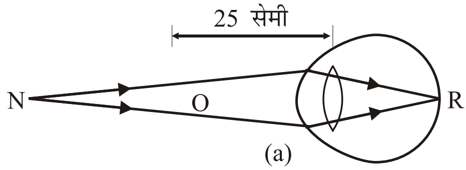

(a)

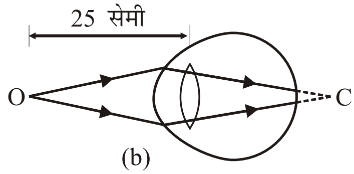

(b)

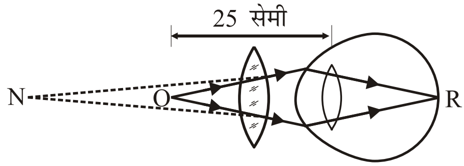

(c)

दूर दृष्टि दोष के कारण– दूर दृष्टि दोष दो कारणों से उत्पन्न हो सकता है—

(i) नेत्र गोलक का कुछ चपटा हो जाना अर्थात् नेत्र में लेंस तथा रेटिना के बीच की दूरी सामान्य से कम हो जाती है।

(ii) नेत्र की समंजन क्षमता का कम हो जाना या पूर्णत:नष्ट हो जाना। इस दोष के कारण अनंत की वस्तु का प्रतिबिंब रेटिना पर न बनकर उसके पीछे बनता है अर्थात् अनंत से चलने वाली समांतर किरणें नेत्र में अपवर्तित होकर रेटिना R पर मिलने के स्थान पर, रेटिना के पीछे बिंदु C पर मिलती है। इस कारण पास की वस्तुएँ स्पष्ट दिखाई नहीं देती हैं।

दूर दृष्टि दोष का निवारण– इस दोष को दूर करने के लिए एक ऐसे उत्तल लेंस के चश्में का उपयोग किया जाता है कि दोषित नेत्र से 25 सेमी की दूरी पर रखी वस्तु से चली किरणें इस लेंस से निकलने पर नेत्र के निकट बिंदु N से आती हुई प्रतीत हों, तब ये किरणें नेत्र में अपवर्तित होकर रेटिना पर मिल जाती हैं। अत: नेत्र को वस्तु स्पष्ट दिखाई देने लगती है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. नेत्र लेंस के बारे में संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– **नेत्र लेंस–** आइरिस के ठीक पीछे पारदर्शी उत्तक का बना द्वि–उत्तल लेंस होता है, जिसे नेत्र लेंस कहते हैं। नेत्र लेंस के पिछले भाग की वक्रता त्रिज्या छोटी तथा अगले भाग की वक्रता त्रिज्या बड़ी होती है। यह अनेक परतों से मिलकर बना होता है, जिसके अपवर्तनांक बाहर से अंदर की ओर बढ़ते जाते हैं तथा माध्य अपवर्तनांक लगभग 1.44 होता है। नेत्र लेंस अपने ही स्थान पर माँसपेशियों के स्थान पर टिका रहता है। माँसपेशियों द्वारा लेंस पर अधिक अथवा कम दबाव डालकर लेंस की वक्रता त्रिज्याओं को बदला जा सकता है, जिससे लेंस की फोकस दूरी बदल जाती है और लेंस द्वारा दूर एवं पास वाली वस्तुओं का प्रतिबिंब रेटिना पर बन जाता है। इस प्रकार हम दूर एवं पास वाली स्थित वस्तुओं को देख सकते हैं।

प्रश्न 2. नेत्र दंड व शंकु का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर- नेत्र दंड व शंकु- नेत्र लेंस वस्तु का प्रतिबिंब रेटिना पर बनाता है। रेटिना में दो प्रकार के प्रकाश ग्राही(संवेदी) सेलों(कोशिकाएँ) की बहुत बड़ी मात्रा होती है, जिनमें एक प्रकार के सेलों का आकार दंडाकार होता है, इन सेलों को नेत्र दंड कहते हैं तथा दूसरे प्रकार के सेलों का आकार शंकु की भाँति होता है, इन सेलों को नेत्र शंकु कहते हैं। इन सेलों की संख्या लाखों करोड़ों में होती है तथा ये रेटिना पर फैले रहते हैं। जब प्रकाश प्रतिबिंब बनने के लिए रेटिना पर पड़ता है, तो ये सेल प्रकाश सिगनल को विद्युत सिगनल में बदल देते हैं। रेटिना तथा मस्तिष्क के बीच नसें होती हैं, जिन्हें प्रकाशिक नसें कहते हैं। इन्हीं नसों के द्वारा रेटिना पर बना प्रतिबिंब मस्तिष्क तक पहुँचता है। रेटिना पर वस्तु का उल्टा प्रतिबिंब बनता है, मस्तिष्क उस प्रतिबिंब को सीधा अनुभव करता है।

दंड सेल मन्द प्रकाश की तीव्रता के लिए सुग्राही होते हैं तथा शंकु सेल तीव्र प्रकाश में विभिन्न रंगों के लिए सुग्राही होते हैं। इसलिए मन्द प्रकाश में वस्तु दंड सेलों के कारण दिखाई देती है जबकि वस्तु के विभिन्न रंग, इन शंकु सेलों के कारण दिखाई देते हैं।

प्रश्न 3. दृष्टि दोष किसे कहते हैं? ये कितने प्रकार के होते हैं? इनके नाम लिखिए।

उत्तर- दृष्टि दोष- जब नेत्र में प्रतिबिंब रेटिना के आगे या पीछे बनता है तब वस्तु स्पष्ट नजर नहीं आती। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब नेत्र की समंजन क्षमता प्रतिबिंब को रेटिना पर बनाने के लिए कम हो जाती है या पूर्णत: समाप्त हो जाती है। इसी को दृष्टि दोष कहते हैं।

प्रकार- दृष्टि दोष निम्नलिखित चार प्रकार के होते हैं—

(i) निकट दृष्टि दोष, (ii) दूर दृष्टि दोष,
(iii) जरा दूरदर्शिता, (iv) दृष्टि वैषम्य या अबिंदुकता।

प्रश्न 4. जरा दूरदृष्टिता क्या है?

उत्तर- जरा दूरदृष्टिता- आयु में वृद्धि होने के साथ-साथ मानव नेत्र की समंजन क्षमता घट जाती है। अधिकांश व्यक्तियों का निकट बिंदु दूर हट जाता है। ऐसे व्यक्तियों की निकट की दृष्टि कमजोर हो जाती है। इस दोष को जरा दूरदृष्टिता कहते हैं। यह माँसपेशियों के दुर्बल होने तथा नेत्र लेंस के लचीलेपन में कमी आ जाने के कारण उत्पन्न होता है।

प्रश्न 5. अबिंदुकता किस प्रकार का दृष्टि दोष है?

उत्तर- अबिंदुकता- इस दोष से पीड़ित व्यक्ति आँख से किसी दूरी पर रखी हुई वस्तु या तो क्षैतिज दिशा में या उर्ध्व दिशा में धुँधली दिखाई देती है। इस दोष का मुख्य कारण कॉर्निया का पूर्णत: गोलीय न होना है जिसका अर्थ है कि कॉर्निया के एक तल में उसकी वक्रता अधिक तथा दूसरे तल में कम हो जाती है।

प्रश्न 6. वर्णांधता दृष्टि दोष पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- वर्णांधता दृष्टि दोष- वर्णांधता ऐसा दोष होता है जिसके कारण मनुष्य कुछ निश्चित रंगों में अंतर नहीं कर पाता। वर्णांधता के नेत्रों में उन शंकु सेलों की कमी होती है जो रंगों के लिए सुग्राही होते हैं। यह दोष एक आनुवंशिक दोष है जो जन्मजात होता है तथा इसका कोई उपचार भी नहीं है। जिन व्यक्तियों में यह दोष होता है, वे सामान्यत: देख तो ठीक सकते हैं परंतु ये विभिन्न रंगों में अंतर नहीं कर सकते।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

अति लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 72 पर देखिए।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. एक निकट दृष्टि दोष वाला मनुष्य अपनी आँख से 30 सेमी से अधिक दूर की वस्तुओं को स्पष्ट नहीं देख पाता। अनंत पर स्थित किसी वस्तु को देखने के लिए अपनी फोकस दूरी के किस प्रकार के लेंस की आवश्यकता होगी?
[संकेत– $u = -\infty$, $v = -30$ सेमी।]

हल: $u = -\infty$, $v = -30$ सेमी, $f = ?$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{30} - \frac{1}{-\infty}$

$\Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{30}$

$f = -30$ सेमी

$\because$ f का मान ऋणात्मक है अतः उसे अवतल लेंस उपयोग करना चाहिए। **उत्तर**

प्रश्न 2. निकट दृष्टि दोष से पीड़ित एक व्यक्ति अधिकतम 2 मीटर की दूरी तक देख सकता है। उसको सही दृष्टि के लिए किस प्रकृति व कितनी क्षमता का लेंस प्रयुक्त करना चाहिए?

हल: $v = -2$ मीटर, $u = -\infty$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{2} - \frac{1}{-\infty}$

$\Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{2}$

$f = -2$ मीटर

क्षमता, $P = \frac{1}{f} = -\frac{1}{2} = -0.5$ डायोप्टर

$\because$ f का मान ऋणात्मक है अतः व्यक्ति को अवतल लेंस का उपयोग करना चाहिए एवं लेंस की क्षमता 0.5 डायोप्टर होगी। **उत्तर**

प्रश्न 3. एक निकट दृष्टि दोष वाला मनुष्य अपनी आँख से 1 मीटर दूर की वस्तुओं को स्पष्ट नहीं देख सकता। अनंत पर स्थित किसी वस्तु को देखने के लिए कितनी फोकस दूरी व क्षमता वाले लेंस की आवश्यकता होगी?

हल: $u = -\infty$, $v = -1$ मीटर, $f = ?$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \frac{1}{f} = \frac{1}{-1} - \frac{1}{-\infty}$

$\Rightarrow \frac{1}{f} = \frac{1}{-1}$

$$f = -1 \text{ मीटर}$$

लेंस की क्षमता, $P = \frac{1}{f} = \frac{1}{-1} = -1$ **डायोप्टर** उत्तर

प्रश्न 4. निकट दृष्टि दोष से पीड़ित एक व्यक्ति अधिक से अधिक 10 मीटर की दूरी तक देख सकता है। सही दृष्टि के लिए किस क्षमता एवं प्रकृति का लेंस प्रयुक्त करना होगा? स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी 25 सेमी है।

हल: $u = -\infty$, $v = -10$ मीटर $= -10 \times 100$ सेमी $= -1000$ सेमी

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = -\frac{1}{1000} - \frac{1}{\infty}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = -\frac{1}{1000}$

$f = -1000$ सेमी $= -10$ मीटर

अत: अवतल लेंस प्रयोग में लेना चाहिए।

लेंस की क्षमता, $P = \frac{1}{f} = -\frac{1}{10} = -0.1$ **डायोप्टर** उत्तर

प्रश्न 5. एक व्यक्ति अपनी आँख से 70 सेमी से कम दूरी पर रखी वस्तु को स्पष्ट नहीं देख पाता है। इस व्यक्ति की आँख में किस प्रकार का दोष है? इस दोष निवारण के लिए किस प्रकार का तथा कितनी फोकस दूरी के लेंस का प्रयोग करना चाहिए?

हल: इस व्यक्ति की आँख में दूर दृष्टि दोष है। इस दोष के निवारण के लिए उत्तल लेंस का प्रयोग करना चाहिए।

$u = -25$ सेमी, $v = -70$ सेमी, $f = ?$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-70} - \frac{1}{-25} \Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{70} + \frac{1}{25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{-5+14}{350}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{9}{350}$

$f = \frac{350}{9} = 38.9$ सेमी

अत: **फोकस दूरी, $f = 38.9$ सेमी** उत्तर

प्रश्न 6. एक दूर दृष्टि दोष वाला मनुष्य अपनी आँख से 50 सेमी से अधिक दूरी पर रखी वस्तुओं को ही देख सकता है। उस लेंस की फोकस दूरी व क्षमता ज्ञात कीजिए, जिसके द्वारा वह 25 सेमी पर स्थित एक पुस्तक को पढ़ सके।

हल: $u = -25$ सेमी, $v = -50$ सेमी, $f = ?$, $P = ?$

सूत्र- $\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{1}{-50}-\frac{1}{-25} \Rightarrow \frac{1}{f}=-\frac{1}{50}+\frac{1}{25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{-1+2}{50}=\frac{1}{50}$

$f = 50$ सेमी

लेंस की क्षमता, $P=\frac{100}{f}=\frac{100}{50}=$ **2 डायोप्टर** उत्तर

प्रश्न 7. एक दूर दृष्टि दोष से पीड़ित व्यक्ति कम से कम 40 सेमी की दूरी तक देख सकता है। इस व्यक्ति के दृष्टि दोष निवारण हेतु चश्में में प्रयुक्त लेंस की फोकस दूरी ज्ञात कीजिए।

हल: $u=-25$ सेमी, $v=-40$ सेमी, $f=?$

सूत्र- $\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{1}{-40}-\frac{1}{-25} \Rightarrow \frac{1}{f}=-\frac{1}{40}+\frac{1}{25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{-5+8}{200}=\frac{3}{200}$

$f=\frac{200}{3}=66.67$ सेमी

अत: **उत्तल लेंस की फोकस दूरी, $f = 66.67$ सेमी** उत्तर

प्रश्न 8. एक निकट दृष्टि दोष वाला व्यक्ति 15 सेमी दूर स्थित पुस्तक को पढ़ सकता है। पुस्तक को 25 सेमी दूर रखकर पढ़ने के लिए उसे कैसा और कितनी फोकस दूरी का लेंस अपने चश्मे में प्रयुक्त करना पड़ेगा?

हल: $u=-25$ सेमी, $v=-15$ सेमी, $f=?$

सूत्र- $\frac{1}{f}=\frac{1}{v}-\frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{1}{-15}-\frac{1}{-25} \Rightarrow \frac{1}{f}=-\frac{1}{15}+\frac{1}{25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f}=\frac{-5+3}{75}=\frac{-2}{75}$

$f=\frac{-75}{2}=-37.5$ सेमी

अत: **व्यक्ति को 37.5 सेमी फोकस दूरी वाले अवतल लेंस की आवश्यकता होगी।** उत्तर

प्रश्न 9. एक व्यक्ति 20 सेमी दूरी पर रखी पुस्तक पढ़ सकता है। यदि पुस्तक को 30 सेमी दूर रख दिया जाए तो व्यक्ति को चश्मा प्रयुक्त करना पड़ेगा। गणना कीजिए-

(a) प्रयुक्त लेंस की फोकस दूरी, (b) प्रयुक्त लेंस का प्रकार।

हल: (a) $u=-30$ सेमी, $v=-20$ सेमी, $f=?$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-20} - \frac{1}{-30} \Rightarrow \frac{1}{f} = -\frac{1}{20} + \frac{1}{30}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{-3+2}{60} = \frac{-1}{60}$

$f = -60$ सेमी

(b) चूँकि फोकस दूरी ऋणात्मक है; अत: **प्रयुक्त लेंस अवतल लेंस होगा।** **उत्तर**

प्रश्न 10. एक निकट दृष्टि दोष वाला व्यक्ति अपनी आँख से 75 सेमी से अधिक दूर की वस्तु स्पष्ट नहीं देख पाता है। दूर की वस्तुओं को देखने के लिए उसे किस प्रकार के तथा किस फोकस दूरी के लेंस की आवश्यकता होगी?

हल: $u = -\infty,\ v = -75$ सेमी, $f = ?$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-75} - \frac{1}{\infty}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-75} \Rightarrow f = -75$ सेमी

$\because$ फोकस दूरी ऋणात्मक है; अत: **अवतल लेंस प्रयुक्त होगा।** उत्तर

प्रश्न 11. निकट दृष्टि दोष से पीड़ित एक व्यक्ति अधिकतम 2.0 मीटर की दूरी तक देख पाता है। उसे टहलने के लिए किस प्रकृति और कितनी फोकस दूरी का लेंस प्रयोग करना होगा?

हल: $v = -2.0$ मीटर, $u = -\infty,\ f = ?$

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-2.0} - \frac{1}{\infty}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-2.0}$

$f = -\ 2.0$ मीटर

$\because f = -2$ मीटर है; अत: **लेंस अवतल लेंस होगा।** **उत्तर**

प्रश्न 12. निकट दृष्टि से पीड़ित एक व्यक्ति अधिकतम 2 मीटर की दूरी तक देख सकता है। उसकी सही दृष्टि के लिए किस प्रकृति व कितनी फोकस दूरी का लेंस प्रयोग करना होगा? स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी 0.25 मीटर है।

हल: $u = -\infty,\ f = ?,\ v = -2$ मीटर

सूत्र- $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-2} - \frac{1}{-\infty}$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = \frac{1}{-2}$$

$$f = -2 \text{ मीटर}$$

$\because$ फोकस दूरी ऋणात्मक है; अत: **अवतल लेंस प्रयोग करना चाहिए।** उत्तर

प्रश्न 13. 200 सेमी की फोकस दूरी के अवतल लेंस की क्षमता की गणना कीजिए।

हल: $f = -200$ सेमी, $P = \dfrac{100}{f}$

$$P = \frac{100}{-200} = \mathbf{-0.5} \textbf{ डायोप्टर}$$ उत्तर

प्रश्न 14. निकट दृष्टि दोष से पीड़ित एक व्यक्ति अधिकतम 20 मीटर की दूरी तक देख सकता है। उसके इस दोष के निवारण हेतु किस फोकस दूरी एवं क्षमता का लेंस प्रयुक्त करना होगा?

हल: $v = -20$ मीटर, $u = -\infty$, $f = ?$, $P = ?$

सूत्र- $\dfrac{1}{f} = \dfrac{1}{v} - \dfrac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = \frac{1}{-20} - \frac{1}{-\infty}$$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = \frac{1}{-20}$$

$$f = -20 \text{ मीटर}$$

लेंस की क्षमता, $P = \dfrac{1}{f} = \dfrac{1}{-20} = -0.05$ डायोप्टर

अत: लेंस की फोकस दूरी = **−20** मीटर तथा लेंस की क्षमता = **−0.05 डायोप्टर** होगी।

उत्तर

प्रश्न 15. दूर दृष्टि दोष से पीड़ित एक व्यक्ति कम से कम 75 सेमी की दूरी तक देख सकता है। इस व्यक्ति के दृष्टि दोष निवारण हेतु चश्में में किस क्षमता का लेंस प्रयुक्त करना पड़ेगा?

हल: $v = -75$ सेमी, $u = -25$ सेमी, $f = ?$, $P = ?$

सूत्र- $\dfrac{1}{f} = \dfrac{1}{v} - \dfrac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = \frac{1}{-75} - \frac{1}{-25}$$

$$\Rightarrow \qquad \frac{1}{f} = \frac{-1+3}{75} = \frac{2}{75}$$

$$\Rightarrow \qquad f = \frac{75}{2} = 37.5 \text{ सेमी}$$

क्षमता, $P = \dfrac{100}{f} = \dfrac{100}{37.5} = \mathbf{2.67}$ **डायोप्टर** उत्तर

प्रश्न 16. एक व्यक्ति अपने नेत्रों से 40 सेमी से कम दूरी पर स्थित पुस्तक के अक्षरों को स्पष्ट नहीं देख सकता है। उसकी दृष्टि में कौन सा दोष है? इस दोष का निवारण करने के लिए उसे किस प्रकार का तथा कितनी क्षमता के लेंस का प्रयोग करना होगा?

हल: व्यक्ति को दूर दृष्टि दोष है।

$v = -40$ सेमी, $u = -25$ सेमी, $f = ?, P = ?$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-40} - \frac{1}{-25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = -\frac{1}{40} + \frac{1}{25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{-5+8}{200} = \frac{3}{200}$

$\Rightarrow \quad f = \frac{200}{3}$ सेमी

क्षमता, $P = \frac{100}{f} = \frac{100 \times 3}{200} = \mathbf{1.5}$ **डायोप्टर** **उत्तर**

प्रश्न 17. 37.5 सेमी फोकस दूरी के अवतल लेंस की सहायता से 25 सेमी दूर रखी पुस्तक पढ़ने वाले व्यक्ति की दृष्टि में कौन सा दोष होगा? उसकी आँख से कितनी दूरी पर प्रतिबिंब बनेगा? [संकेत- $f = -37.5$ सेमी, $u = -25$ सेमी, $v = ?$]

हल: चूँकि पुस्तक पढ़ने के लिए अवतल लेंस की आवश्यकता है, इसलिए निकट दृष्टि दोष होगा।

$f = -37.5$ सेमी, $u = -25$ सेमी, $v = ?$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{-37.5} = \frac{1}{v} - \frac{1}{-25}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{v} = -\frac{1}{25} - \frac{1}{37.5}$

$\frac{1}{v} = \frac{-1.5-1}{37.5} = \frac{-2.5}{37.5}$

$v = -\frac{37.5}{2.5} = \mathbf{-15}$ **सेमी** **उत्तर**

प्रश्न 18. एक दूर दृष्टि दोष वाले मनुष्य का निकट बिंदु 150 सेमी पर है। यदि वह 25 सेमी पर रखी पुस्तक को पढ़ना चाहता है, तो उसे कैसा तथा कितनी फोकस दूरी का लेंस लगाना होगा? [संकेत- $u = -25$ सेमी, $v = -150$ सेमी]

हल: $u = -25$ सेमी, $v = -150$ सेमी, $f = ?$

सूत्र– $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{-150} - \frac{1}{-25}$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = -\frac{1}{150} + \frac{1}{25}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{-1+6}{150} = \frac{5}{150}$$

$$f = \frac{150}{5} = 30 \text{ सेमी}$$

अत: **व्यक्ति को 30 सेमी फोकस दूरी वाले उत्तल लेंस का प्रयोग करना पड़ेगा।**

उत्तर

प्रश्न 19. दूर दृष्टि दोष से पीड़ित एक व्यक्ति अधिक से अधिक 125 सेमी की दूरी तक ही देख सकता है। सही दृष्टि के लिए उसे किस फोकस दूरी का और कौन सा लेंस प्रयुक्त करना चाहिए? स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी 25 सेमी है।

$$\left[\textbf{संकेत-} \ \frac{1}{v} - \frac{1}{u} = \frac{1}{f} \ \therefore \ \frac{1}{125} - \frac{1}{-25} = \frac{1}{f} \right]$$

हल: $v = 125$ सेमी, $u = -25$ सेमी, $f = ?$

सूत्र— $\frac{1}{f} = \frac{1}{v} - \frac{1}{u}$ से

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{125} - \frac{1}{-25}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1}{125} + \frac{1}{25}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{f} = \frac{1+5}{125} = \frac{6}{125}$$

$$\Rightarrow \quad f = \frac{125}{6} = 20.8 \text{ सेमी}$$

$\because$ **फोकस दूरी धनात्मक है; अत: उत्तल लेंस प्रयोग होगा।** उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. किसी दृष्टि दोष से पीड़ित मनुष्य के लेंस की फोकस दूरी का अध्ययन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

5 प्रकाशिक यंत्र- सूक्ष्मदर्शी एवं दूरदर्शी

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. संयुक्त सूक्ष्मदर्शी में प्रतिबिंब बनने का किरण आरेख प्रदर्शित कीजिए। संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता का सूत्र लिखिए जबकि अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बनता है।

उत्तर-

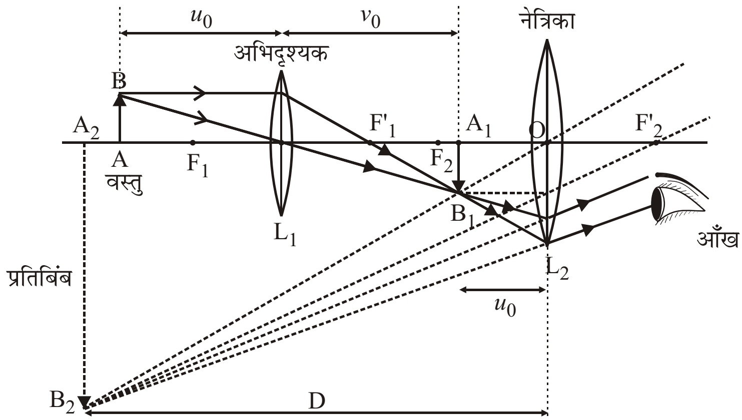

संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता– यदि अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बने, तो संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{v_0}{u_0} \times \frac{D_0}{f_e}$$

जहाँ u_0 = अभिदृश्यक लेंस से वस्तु की दूरी

v_0 = अभिदृश्यक लेंस से प्रथम प्रतिबिंब (A_1B_1) की दूरी

f_e = नेत्रिका लेंस की फोकस दूरी।

स्पष्ट है कि संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की अधिक आवर्धन क्षमता के लिए नेत्रिका की फोकस दूरी f_e कम होनी चाहिए।

प्रश्न 2. संयुक्त सुक्ष्मदर्शी का किरण आरेख बनाइए, जबकि प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी पर बनता हो।

उत्तर- चित्र के लिए प्रश्न-1 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. संयुक्त सूक्ष्मदर्शी का नामांकित चित्र बनाइए। इसकी रचना तथा कार्यविधि का वर्णन कीजिए। स्वच्छ किरण आरेख खींचकर इसमें प्रतिबिंब का बनना प्रदर्शित कीजिए।

उत्तर– **संयुक्त सूक्ष्मदर्शी–** संयुक्त सूक्ष्मदर्शी द्वारा अत्यधिक छोटी वस्तुओं के बड़े प्रतिबिंब देखे जाते हैं। इसकी आवर्धन क्षमता, सरल सूक्ष्मदर्शी की तुलना में बहुत अधिक होती है।

रचना– इसमें धातु की एक बेलनाकार नली के एक सिरे पर छोटी फोकस दूरी तथा छोटे द्वारक का उत्तल लेंस लगा होता है, जिसे अभिदृश्यक लेंस L_1 कहते हैं। नली के दूसरे सिरे पर एक अन्य चौड़ी नली लगी होती है, जिसके बाहरी सिरे पर अभिदृश्यक की अपेक्षा अधिक फोकस दूरी तथा द्वारक वाला एक दूसरा उत्तल लेंस लगा होता है, जिसे नेत्रिका लेंस L_2 कहते हैं।

अभिदृश्यक तथा नेत्रिका दोनों लेसों का मुख्य अक्ष का एक ही होता है। एक नली को दूसरी की अपेक्षा आगे–पीछे खिसकाकर इन लेंसों के बीच की दूरी बदली जा सकती है।

चित्र के लिए प्रश्न–1 का उत्तर देखें।

प्रतिबिंब का बनना– माना AB एक बहुत छोटी वस्तु है, जो अभिदृश्यक लेंस के प्रथम फोकस F_1 से कुछ बाहर रखी है। अभिदृश्यक लेंस द्वारा AB का प्रतिबिंब A_1B_1 बनता है, जो कि वास्तविक, उल्टा तथा बड़ा बनता है। प्रतिबिंब A_1B_1 की स्थिति नेत्रिका लेंस तथा इसके प्रथम फोकस F_2 के बीच में हैं। प्रतिबिंब A_1B_1 लेंस नेत्रिका के लिए वस्तु का कार्य करता है। लेंस नेत्रिका इसका प्रतिबिंब A_2B_2 बनाता है, जो कि आभासी तथा A_1B_1 से बहुत बड़ा होता है।

अभिदृश्यक लेंस से वस्तु की दूरी $[u_0]$ को ऐसा समंजित किया जाता है कि अंतिम प्रतिबिंब A_2B_2 नेत्र लेंस से स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी $[D]$ पर बने।

प्रश्न 4. संयुक्त सूक्ष्मदर्शी का किरण आरेख द्वारा वर्णन कीजिए। इसकी आवर्धन क्षमता का सूत्र लिखिए। इसे किस प्रकार बढ़ा सकते हैं?

उत्तर– चित्र के लिए प्रश्न–1 का उत्तर देखें।

संयुक्त सूक्ष्मदर्शी के किरण आरेख द्वारा वर्णन के लिए प्रश्न–3 का उत्तर लिखिए।

संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता– यदि आखिरी प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी D पर बनता है, तो आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{v_0}{u_0}\left[1+\frac{D_0}{f_e}\right]$$

यदि अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बने, तो संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{v_0}{u_0}\times\frac{D_0}{f_e}$$

जहाँ u_0 = अभिदृश्यक लेंस से वस्तु की दूरी

v_0 = अभिदृश्यक लेंस से प्रथम प्रतिबिंब (A_1B_1) की दूरी

f_e = नेत्रिका लेंस की फोकस दूरी।

संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता नेत्रिका की फोकस दूरी f_e कम करके बढ़ाई जा सकती है।

प्रश्न 5. खगोलीय दूरदर्शी में अभिदृश्यक तथा अभिनेत्र लेंस किस प्रकार के होते हैं? उनमें से किसकी फोकस दूरी अधिक होती है?

उत्तर– खगोलीय दूरदर्शी में धातु की एक लंबी बेलनाकार नली होती है जिसके एक सिरे पर बड़ी फोकस दूरी तथा बड़े द्वारक का उत्तल लेंस लगा होता है। इसे 'अभिदृश्यक लेंस' कहते हैं। नली के दूसरे सिरे पर एक अन्य छोटी नली फिट होती है जो दंतुर–दंड–चक्र व्यवस्था द्वारा बड़ी नली में आगे पीछे खिसकाई जा सकती है। छोटी नली के बाहरी सिरे

पर एक छोटी फोकस दूरी का लेंस लगा रहता है जिसे अभिनेत्र या नेत्रिका लेंस कहते हैं। इसके फोकस पर क्रॉस तार लगे रहते हैं।

दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता बढ़ाने के लिए अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी f_0 बड़ी तथा नेत्रिका लेंस की फोकस दूरी f_e छोटी होनी चाहिए। चूँकि अभिदृश्यक लेंस का द्वारक तल व फोकस अधिक होता है जिस कारण प्रतिबिंब को बड़ा व स्पष्ट देखा जा सकता है।

प्रश्न 6. खगोलीय दूरदर्शी में अभिदृश्यक का द्वारक बड़ा रखा जाता है। इसका कारण बताइए।

उत्तर– खगोलीय दूरदर्शी यंत्र दूर स्थित वस्तुओं जैसें चंद्रमा, तारें इत्यादि को बड़ा व स्पष्ट देखने के काम आता है।

इसमें धातु की एक लंबी बेलनाकार नली होती है जिसके एक सिरे पर बड़ी फोकस दूरी तथा बड़े द्वारक का उत्तल लेंस लगा होता है। इसे 'अभिदृश्यक लेंस' कहते हैं। नली के दूसरे सिरे पर एक अन्य छोटी नली फिट होती है जो दंतुर–दंड–चक्र व्यवस्था द्वारा बड़ी नली में आगे पीछे खिसकाई जा सकती है। छोटी नली के बाहरी सिरे पर एक छोटी फोकस दूरी का लेंस लगा होता है जिसे 'नेत्रिका' अथवा 'अभिनेत्र लेंस' कहते हैं। इसके फोकस पर क्रॉस तार लगे रहते हैं।

सबसे पहले नेत्रिका को आगे–पीछे खिसका कर क्रॉस–तार पर फोकस कर लेते हैं। फिर जिस वस्तु को देखना हो उसकी ओर अभिदृश्यक लेंस को कर देते हैं। अब दंतुर–दंड–चक्र व्यवस्था द्वारा अभिदृश्यक लेंस की क्रॉस–तार से दूरी इस प्रकार समायोजित करते हैं कि वस्तु के प्रतिबिंब तथा क्रॉस–तार में लंबन न रहे। इस स्थिति में वस्तु का स्पष्ट प्रतिबिंब दिखाई देगा।

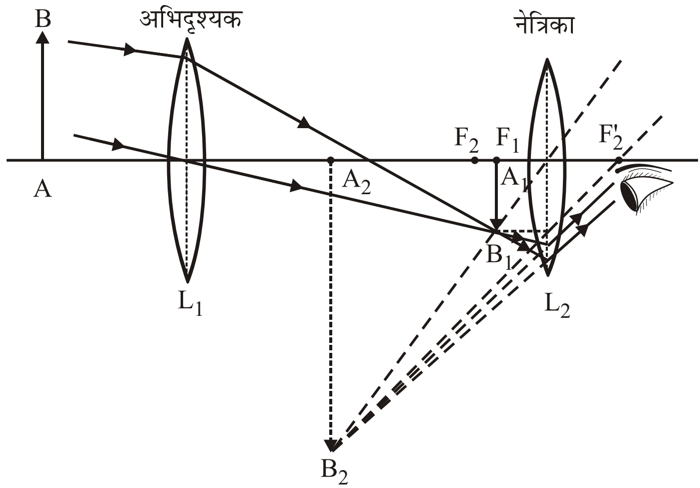

दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंस का द्वारक अधिक बड़ा लेते हैं जिससे कि वह काफी प्रकाश एकत्रित कर सके तथा प्रतिबिंब चमकीला बनें एवं वस्तु अनंत पर रखी होती है जिससे द्वारक का तल लेंस गुजरती किरणों को प्रतिबिंब के रूप में स्पष्ट व बड़ा दिखाता है।

प्रश्न 7. खगोलीय दूरदर्शी की रचना एवं कार्यविधि किरण आरेख की सहायता से समझाइए।

उत्तर– **खगोलीय दूरदर्शी–** यह प्रकाशिक यंत्र दूर स्थित वस्तुओं जैसे चंद्रमा, तारें, इत्यादि को बड़ा व स्पष्ट देखने के काम आता है।

रचना– इसमें धातु की एक लंबी बेलनाकार नली होती है जिसके एक सिरे पर बड़ी फोकस दूरी तथा बड़े द्वारक का उत्तल लेंस लगा रहता है। इसे 'अभिदृश्यक लेंस' कहते हैं। नली के दूसरे सिरे पर एक अन्य छोटी नली फिट होती है जो दंतुर-दंड-चक्र व्यवस्था द्वारा बड़ी नली में आगे-पीछे खिसकाई जा सकती है। छोटी नली के बाहरी सिरे पर एक छोटी फोकस दूरी का लेंस लगा रहता है जिसे 'नेत्रिका' अथवा 'अभिनेत्र लेंस' कहते हैं। इसके फोकस पर क्रॉस-तार लगे रहते हैं।

समायोजन– सबसे पहले नेत्रिका को आगे-पीछे खिसका कर क्रॉस-तार पर फोकस कर लेते हैं। फिर जिस वस्तु को देखना हो उसकी ओर अभिदृश्यक लेंस को कर देते हैं। अब दंतुर-दंड़-चक्र व्यवस्था द्वारा अभिदृश्यक लेंस की क्रॉस-तार से दूरी इस प्रकार समायोजित करते हैं कि वस्तु के प्रतिबिंब तथा क्रॉस-तार में लंबन न रहे। इस स्थिति में वस्तु का स्पष्ट प्रतिबिंब दिखाई देगा।

चित्र के लिए प्रश्न-6 का उत्तर देखे।

प्रतिबिंब का बनना– चित्र में दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंस L_1 तथा नेत्रिका L_2 दिखाए गए हैं। AB एक दूर-स्थित वस्तु है जिसका निचला सिरा A दूरदर्शी की अक्ष पर है। इसके ऊपरी सिरे B से आने वाली किरणें आपस में समांतर होंगी परंतु अभिदृश्यक लेंस की मुख्य अक्ष पर तिरछी पड़ेगी। अत: दूर स्थित वस्तु AB का अभिदृश्यक द्वारा वास्तविक, उल्टा तथा छोटा प्रतिबिंब A_1B_1, अभिदृश्यक लेंस L_1 के द्वितीय फोकस F_1 पर बनता है। नेत्रिका L_2 को इस प्रकार समायोजित किया जाता है कि प्रतिबिंब A_1B_1, L_2 के प्रथम फोकस F_2 के भीतर पड़े। नेत्रिका द्वारा A_1B_1 का आभासी, सीधा तथा बड़ा प्रतिबिंब A_2B_2 स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी तथा अनंत के बीच बनता है। B_2 की स्थिति ज्ञात करने के लिए, B_1 से दो बिंदुदार (.................) किरणें ली गई हैं। एक किरण जो L_2 के प्रकाशित केंद्र में से जाती है, सीधी चली जाती है तथा दूसरी किरण जो मुख्य अक्ष के समांतर ली गई हैं। L_2 के द्वितीय फोकस F_2' से होकर जाती है। ये किरणें पीछे बढ़ाने पर बिंदु B_2 पर मिलती है।

यदि अभिदृश्यक तथा नेत्रिका के बीच की दूरी इतनी हो कि दूरस्थ वस्तु का अभिदृश्यक लेंस द्वारा बना प्रतिबिंब A_1B_1, नेत्रिका के प्रथम फोकस F_2 पर पड़े तब अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बनेगा, जो श्रांत नेत्र द्वारा स्पष्ट दिखाई देगा।

दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता– जब अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी D पर बनता है, तो आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{f_0}{f_e}\left[1 + \frac{f_e}{D}\right]$$

जहाँ f_0 अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी तथा f_e नेत्रिका की फोकस दूरी है।

जब अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बनता है तब दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{f_0}{f_e}$$

प्रश्न 8. खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता कैसे बढ़ाई जा सकती है?

उत्तर– खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता– जब अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी D पर बनता है, तो आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{f_0}{f_e}\left[1 + \frac{f_e}{D}\right]$$

जहाँ f_0 अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी तथा f_e नेत्रिका की फोकस दूरी है।

जब अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बनता है तब दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता

$$m = \frac{-f_0}{f_e}$$

इस अवस्था में दूरदर्शी की लंबाई $f_0 + f_e$ होती है।

इन सूत्रों से स्पष्ट है कि दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता बढ़ाने के लिए अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी f_0 बड़ी तथा नेत्रिका की फोकस दूरी f_e छोटी होनी चाहिए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. खगोलीय दूरदर्शी का नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर– चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न–6 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 2. खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता के लिए सूत्र लिखिए, जबकि अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी पर बनता हो।

उत्तर– जब अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी D बनता है, तो आवर्धन क्षमता

$$m = -\frac{f_0}{f_e}\left[1 + \frac{f_e}{D}\right]$$

जहाँ f_0 अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी तथा f_e नेत्रिका की फोकस दूरी है।

प्रश्न 3. खगोलीय दूरदर्शी में अभिदृश्यक लेंस का द्वारक अधिक क्यों लिया जाता है?

उत्तर– अभिदृश्यक लेंस का द्वारक बड़ा होता हैं जिससे कि वह काफी प्रकाश एकत्रित कर सके तथा प्रतिबिंब चमकीला बनें। यदि वस्तु अनंत पर रखी होती है जिससे द्वारक का तल लेंस से होकर गुजरने वाली किरणों को प्रतिबिंब के रूप में स्पष्ट व बड़ा दिखाता है। जिससे वस्तु स्पष्ट दिखाई देती है।

प्रश्न 3. संयुक्त सूक्ष्मदर्शी एवं खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंसों में दो अंतर लिखिए।

उत्तर– संयुक्त सूक्ष्मदर्शी एवं खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंसों में अंतर–

क्र० सं०	संयुक्त सूक्ष्मदर्शी	खगोलीय दूरदर्शी
1.	इनकी सहायता से अत्यधिक छोटी वस्तुओं (जो आँख से दिखाई नहीं देती) के बहुत बड़े प्रतिबिंब देखे जा सकते हैं।	इनकी सहायता से अत्यधिक दूर स्थित वस्तुओं जैसे चंद्रमा, ग्रह तथा तारे आदि को बड़ा व स्पष्ट देखा जा सकता है।
2.	इसके अभिदृश्यक लेंस का द्वारक छोटा तथा फोकस दूरी कम होती है।	इसके अभिदृश्यक लेंस का द्वारक बड़ा तथा फोकस दूरी अधिक होती है।

प्रश्न 5. खगोलीय दूरदर्शी का उपयोग कहाँ होता है? इसकी रचना बताइए तथा आवर्धन क्षमता के लिए सूत्र भी लिखिए।

उत्तर– खगोलीय दूरदर्शी का उपयोग अत्यंत दूर स्थित वस्तुओं जैसे— चंद्रमा, ग्रह तथा तारे इत्यादि को बड़ा व स्पष्ट देखने के काम आता है।

रचना– इसमें धातु की एक लंबी बेलनाकार नली होती है जिसके एक सिरे पर बड़ी फोकस दूरी तथा बड़े द्वारक का उत्तल लेंस लगा होता है। इसे 'अभिदृश्यक लेंस' कहते हैं। नली के दूसरे सिरे पर एक अन्य छोटी नली फिट होती है जो दंतुर–दण्ड–चक्र व्यवस्था द्वारा बड़ी नली में आगे–पीछे खिसकाई जा सकती है। छोटी नली के बाहरी

सिरे पर एक छोटी फोकस दूरी पर लेंस लगा होता है जिसे 'नेत्रिका' या 'अभिनेत्र लेंस' कहते हैं। इसके फोकस पर क्रॉस-तार लगे होते हैं।

यदि अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दूरी की न्यूनतम दूरी D पर बनता है, तो

आवर्धन क्षमता $m = -\frac{f_0}{f_e}\left[1+\frac{f_e}{D}\right]$

जहाँ f_0 अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी तथा f_e नेत्रिका की फोकस दूरी है।

यदि प्रतिबिंब अनंत पर बनता है, तो आवर्धन क्षमता $m = \frac{-f_0}{f_e}$

प्रश्न 6. 3, 4, 25 तथा 100 सेमी फोकस दूरी के चार उत्तल लेंस है। खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक तथा नेत्रिका के लिए किस-किस लेंस का उपयोग करने से अधिकतम आवर्धन क्षमता प्राप्त होगी?

उत्तर- खगोलीय दूरदर्शी की अधिकतम आवर्धन क्षमता के लिए अभिदृश्यक लेंस की फोकस दूरी अधिकतम तथा नेत्रिका लेंस की फोकस दूरी न्यूनतम होनी चाहिए। अत: 3, 4, 25 तथा 100 सेमी फोकस दूरी के चार उत्तल लेंस में 100 सेमी फोकस दूरी का अभिदृश्यक लेंस होगा व न्यूनतम फोकस दूरी 3 सेमी का नेत्रिका लेंस होना चाहिए।

प्रश्न 7. संयुक्त सूक्ष्मदर्शी से देखने के लिए वस्तु को कहाँ रखा जाता है और उसके द्वारा बने प्रथम व अंतिम प्रतिबिंब किस प्रकार एवं वस्तु की अपेक्षा किस आकार के होते हैं?

उत्तर- संयुक्त सूक्ष्मदर्शी से देखने के लिए वस्तु को अभिदृश्यक लेंस के प्रथम फोकस से कुछ बाहर रखा जाता है और उसके द्वारा बना प्रथम प्रतिबिंब वास्तविक उल्टा तथा बड़ा बनता है तथा अंतिम प्रतिबिंब आभासी, उल्टा तथा बहुत बड़ा होता है।

प्रश्न 8. सरल सूक्ष्मदर्शी से देखने के लिए वस्तु की स्थिति तथा संयुक्त सूक्ष्मदर्शी से देखने के लिए वस्तु की स्थिति में क्या अंतर होता है तथा क्यों?

उत्तर- सरल सूक्ष्मदर्शी से देखने के लिए वस्तु को लेंस तथा लेंस के फोकस के बीच रखा जाता है। जिससे उसका प्रतिबिंब बड़ा, आभासी और सीधा बनता है। जबकि संयुक्त सूक्ष्म-दर्शी से देखने के लिए वस्तु को अभिदृश्यक लेंस के प्रथम फोकस से कुछ बाहर रखा जाता है जिससे उसका प्रतिबिंब उल्टा, आभासी व वस्तु से कई गुना बड़ा बनता है। क्योंकि संयुक्त सूक्ष्मदर्शी किसी भी छोटी वस्तुओं को कई गुना बड़ा कर देती हैं एवं इसमें दो उत्तल लेंस लगे होते हैं।

प्रश्न 9. खगोलीय दूरदर्शी से प्रथम तथा अंतिम प्रतिबिंबों की प्रकृति बताइए। अंतिम प्रतिबिंबों का आकार, वस्तु का आकार की तुलना में कैसा होता है? खगोलीय दूरदर्शी का नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर- खगोलीय दूरदर्शी से प्रथम प्रतिबिंब की प्रकृति वास्तविक, उल्टा और छोटा बनता है। अंतिम प्रतिबिंब की स्थिति आभासी, उल्टा तथा वस्तु से बड़ा बनता है। अंतिम प्रतिबिंब का आकार, वस्तु के आकार से बहुत अधिक बड़ा होता है।

चित्र के लिए 'दीर्घ उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न-6 का उत्तर देखें।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

अति लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 81 पर देखिए।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. एक संयुक्त दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंस तथा अभिनेत्र लेंस की फोकस दूरियाँ क्रमशः 1.2 सेमी व 3.0 सेमी हैं। एक वस्तु को यदि अभिदृश्यक के 1.25 सेमी की दूरी पर रखा जाए, तो अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी पर बनता है। सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता की गणना कीजिए।

स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी = 25 सेमी। [संकेत– $v_0 = 30$ सेमी]

हलः $f_0 = 1.2$ सेमी, $f_e = 3.0$ सेमी, $u_0 = -1.25$ सेमी

$v_0 = 30$ सेमी (ध्यान दें), $D = 25$ सेमी

संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता $$m = -\frac{v_0}{u_0}\left[1+\frac{D}{f_e}\right]$$

$$= -\frac{30}{1.25}\left[1+\frac{25}{3}\right]$$

$$m = -\frac{30}{1.25}\times\frac{28}{3} = \mathbf{-224}$$ उत्तर

प्रश्न 2. एक खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक तथा अभिनेत्र लेंसों की फोकस दूरियाँ क्रमशः 120 सेमी तथा 8 सेमी हैं। श्रांत नेत्र के लिए खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता ज्ञात कीजिए।

हलः $f_0 = 120$ सेमी, $f_e = 8$ सेमी, $m = ?$

श्रांत नेत्र के लिए खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता,

$$m = \frac{-f_0}{f_e} = -\frac{120}{8} = \mathbf{-15}$$ उत्तर

प्रश्न 3. एक खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंस तथा अभिनेत्र लेसों की फोकस दूरियाँ क्रमशः 120 सेमी तथा 10 सेमी हैं। श्रांत आँख के लिए, खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता ज्ञात कीजिए।

हलः $f_0 = 120$ सेमी, $f_e = 10$ सेमी, $m = ?$

श्रांत नेत्र के लिए खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता,

$$m = -\frac{f_0}{f_e} = -\frac{120}{10} = \mathbf{-12}$$ उत्तर

प्रश्न 4. एक खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंस तथा अभिनेत्र लेंसों की फोकस दूरियाँ क्रमशः 120 सेमी तथा 6 सेमी हैं। श्रांत नेत्र के लिए दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता तथा उसकी नली की लंबाई ज्ञात कीजिए।

हलः $f_0 = 120$ सेमी, $f_e = 6$ सेमी, $m = ?$

श्रांत नेत्र के लिए खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता,

$$m = \frac{-f_0}{f_e} = \frac{-120}{6} = \mathbf{-20}$$

नली की लंबाई $= f_0 + f_e = 120 + 6 = \mathbf{126}$ **सेमी** उत्तर

प्रश्न 5. एक लेंस की फोकस दूरी 4 सेमी है। यदि अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी 25 सेमी पर बन रहा हो, तो लेंस की आवर्धन क्षमता की गणना कीजिए।

हल: $f = 4$ सेमी, $D = 25$ सेमी, $m = ?$

लेंस की आवर्धन क्षमता, $m = \left[1 + \frac{D}{f}\right]$

$$m = \left[1 + \frac{25}{4}\right] = \frac{29}{4} = \mathbf{7.25}$$ **उत्तर**

प्रश्न 6. एक विशालक शीशे की आवर्धन क्षमता 6 है, तब समायोजन अनंत के लिए है। यदि स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी 25 सेमी है तब शीशे की क्षमता क्या है?

हल: दिया है–

$$D = 25 \text{ सेमी}, m = 6, P = ?$$

$$m = 1 + \frac{D}{f}$$

$$6 = 1 + \frac{25}{f} \quad \Rightarrow \quad 5 = \frac{25}{f}$$

$$f = \frac{25}{5} = 5 \text{ सेमी}$$

$$P = \frac{100}{f}$$

$$P = \frac{100}{5} = \mathbf{20 \text{ डायोप्टर}}$$ **उत्तर**

प्रश्न 7. 20 *D* क्षमता का लेंस सरल सूक्ष्मदर्शी की भाँति उपयोग में लाया जाता है। इसकी अधिकतम आवर्धन क्षमता ज्ञात कीजिए।

हल: दिया है–

$$P = 20 \text{ डायोप्टर}, D = 25 \text{ सेमी}$$

$$f = \frac{100}{P} = \frac{100}{20} = 5 \text{ सेमी}$$

$$m = 1 + \frac{D}{f} \quad \Rightarrow \quad m = 1 + \frac{25}{5} \Rightarrow m = 1 + 5$$

$$m = \mathbf{6}$$ **उत्तर**

प्रश्न 8. एक संयुक्त सूक्ष्मदर्शी के अभिदृश्यक लेंस की क्षमता 100*D* तथा नेत्रिका की क्षमता 40 *D* है। एक वस्तु अभिदृश्यक लेंस से 2 सेमी की दूरी पर स्थित है। यंत्र की आवर्धन क्षमता ज्ञात कीजिए। जबकि

(a) अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर स्थित है।

(b) अंतिम प्रतिबिंब एकदम स्पष्ट दिखता हो।

हल: $P_0 = \frac{100}{f_0} \quad \Rightarrow \quad f_0 = \frac{100}{P_0} = \frac{100}{100} = 1$ सेमी $\quad [\because P_0 = 100D]$

$P_e = \frac{100}{f_e} \quad \Rightarrow \quad f_e = \frac{100}{P_e} = \frac{100}{40} = 2.5$ सेमी $\quad [\because P_e = 40D]$

$$u_0 = -2 \text{ सेमी}$$

सूत्र- $\frac{1}{f_0} = \frac{1}{v_0} - \frac{1}{u_0} \Rightarrow \quad \frac{1}{v_0} - \frac{1}{-2}$

$\frac{1}{1} = \frac{1}{v_0} + \frac{1}{2}$

$\Rightarrow \quad \frac{1}{v_0} = \frac{1}{2} \quad \Rightarrow v_0 = 2$ सेमी

(a) संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता जब अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बने

$$m = -\frac{v_0}{u_0} \times \frac{D}{f_e}$$

$$\Rightarrow \quad -\frac{2}{2} \times \frac{25}{2.5} \quad \Rightarrow \quad -1 \times 10 = \mathbf{-10}$$ **उत्तर**

(b) संयुक्त सूक्ष्मदर्शी की आवर्धन क्षमता जब अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी पर बने।

$$m = -\frac{v_0}{u_0}\left[1 + \frac{D}{f_e}\right]$$

$$\Rightarrow -\frac{2}{2}\left[1 + \frac{25}{2.5}\right] \Rightarrow -\frac{2}{2}[1+10]$$

$m = \mathbf{-11}$ **उत्तर**

प्रश्न 9. एक खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक लेंस तथा अभिनेत्र लेंस की फोकस दूरियाँ क्रमशः 90 सेमी तथा 6 सेमी हैं। खगोलीय दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता ज्ञात कीजिए, जब अंतिम प्रतिबिंब अनंत पर बनता है।

हलः दिया है— $f_0 = 90$ सेमी, $f_e = 6$ सेमी, $D = 25$ सेमी

$$M = -\frac{f_0}{f_e} = -\frac{90}{6} = \mathbf{-15}$$ **उत्तर**

प्रश्न 10. एक खगोलीय दूरदर्शी के लिए आवर्धन क्षमता की गणना कीजिए। जिसमें अभिदृश्यक एवं अभिनेत्रक लेंसों की फोकस दूरियाँ क्रमशः 200 सेमी व 50 सेमी हैं, जबकि अंतिम प्रतिबिंब स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी (25 सेमी) पर बनता है। किरण आरेख भी खींचिए।

हलः $f_0 = 200$ सेमी, $f_e = 50$ सेमी, $D = 25$ सेमी

$$m = -\frac{f_0}{f_e}\left[1 + \frac{f_e}{D}\right]$$

$$= -\frac{200}{50}\left[1 + \frac{50}{25}\right] = -\frac{200}{50} \times 3$$

$= \mathbf{-12}$ **उत्तर**

प्रश्न 11. एक खगोलीय दूरदर्शी के अभिदृश्यक एवं नेत्रिका लेंसों की फोकस दूरियाँ क्रमशः 100 सेमी तथा 5 सेमी है। स्पष्ट दृष्टि की न्यूनतम दूरी पर बने प्रतिबिंब के लिए दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता ज्ञात कीजिए। स्पष्ट दृष्टि की दूरी 25 सेमी है।

हलः दिया है—

$f_0 = 100$ सेमी, $f_e = 5$ सेमी, $D = 25$ सेमी

$$m = -\frac{f_0}{f_e}\left[1+\frac{f_e}{D}\right]$$
$$= -\frac{100}{5}\left[1+\frac{5}{25}\right]$$
$$= -\frac{100}{5}\times\frac{6}{5}$$
$$= \mathbf{-24}$$

उत्तर

प्रश्न 12. 80 सेमी नली में बने दूरदर्शी की आवर्धन क्षमता (जब प्रतिबिंब अनंत पर बनता है) –15 है। अभिदृश्यक लेंस तथा अभिनेत्रक लेंस की फोकस दूरियाँ ज्ञात कीजिए।

हल: दिया है–

$$f_0 + f_e = 80 \text{ सेमी}, \; m = -15$$
$$\therefore \quad f_0 = 80 - f_e$$
$$m = -\frac{f_0}{f_e}$$
$$-15 = -\frac{f_0}{f_e}$$

f_0 का मान रखने पर,

$$-15 = -\frac{(80 - f_e)}{f_e}$$
$$-15 f_e = -80 + f_e$$
$$\Rightarrow \quad -15 f_e - f_e = -80$$
$$\Rightarrow \quad -16 f_e = -80$$
$$f_e = \frac{-80}{-16} = 5$$
$$f_e = 5 \text{ सेमी}$$
$$f_0 = 80 - 5 = 75 \text{ सेमी}$$

अत: **अभिदृश्यक** तथा **अभिनेत्रक लेंस** की फोकस दूरी क्रमश: **75 सेमी** तथा **5 सेमी** है।

उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. खगोलीय दूरदर्शी या किसी सूक्ष्मदर्शी द्वारा उसकी फोकस दूरी का निगमन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई–2: विद्युत तथा विद्युत धारा के प्रभाव

6 विद्युत

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विद्युत ऊर्जा क्या है? इसके स्त्रोत कौन–कौन से हैं?

उत्तर– **विद्युत ऊर्जा–** किसी चालक में विद्युत आवेश प्रवाहित होने से जो ऊर्जा व्यय होती है, उसे विद्युत ऊर्जा कहते हैं।

यदि किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर V वोल्ट हो, तो q कूलॉम आवेश के चालक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ले जाने में व्यय विद्युत ऊर्जा $W = qV$

विद्युत ऊर्जा के कुछ महत्वपूर्ण स्त्रोत निम्नलिखित हैं–

(i) **विद्युत सेल–** विद्युत सेल विद्युत का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। विद्युत सेल से हम रासायनिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। उदाहरण के लिए, लेक्लांशे सेल, डेनियल सेल, शुष्क सेल, वोल्टीय सेल, सीसा संचायक सेल आदि विद्युत सेल हैं।

(ii) **प्रकाश विद्युत सेल–** प्रकाश विद्युत सेलों की सहायता से हम प्रकाश ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। इस प्रकार के सेलों का उपयोग कृत्रिम उपग्रहों, अंतरिक्ष यानों तथा इलेक्ट्रॉनिकी की कुछ वस्तुओं; जैसे— कैल्कुलेटर आदि में किया जाता है।

(iii) **डायनामो–** डायनामो से हम यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। डायनामो का सिद्धांत विद्युत चुंबकीय प्रेरण पर आधारित है। इसके अनुसार, जब किसी चुंबकीय क्षेत्र में कोई बंद कुंडली घूमती है तो विद्युत धारा उत्पन्न होती है।

(iv) **ताप युग्म–** ताप युग्म की सहायता से ऊष्मीय ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। इसमें भिन्न–भिन्न धातुओं के चालकों की संधियों को भिन्न–भिन्न तापमानों पर रखते हैं, जिससे विद्युत धारा उत्पन्न होती है।

(v) **जल की ऊर्जा–** बहता जल ऊर्जा का प्राकृतिक स्त्रोत है। ऊँचाई पर रुके हुए जल में स्थितिज ऊर्जा होती है, जबकि बहते हुए जल में गतिज ऊर्जा होती है।

(vi) **पवन ऊर्जा–** बहती हुई वायु में गतिज ऊर्जा होती है। पवन चक्की को चलाकर वायु की गतिज ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में अथवा यांत्रिक ऊर्जा में बदला जा सकता है।

(vii) **सौर ऊर्जा–** सूर्य ऊर्जा का मूल स्त्रोत है। सौर सेल अथवा सौर बैटरी, सौर ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलती है। कृत्रिम उपग्रहों, अंतरिक्ष यानों को विद्युत ऊर्जा सौर बैटरी से ही प्रदान की जाती है।

(viii) **नाभिकीय ऊर्जा–** जब यूरेनियम पर न्यूट्रॉनों की बमबारी की जाती है तो यूरेनियम के विखंडन से अपार ऊर्जा प्राप्त होती है। इस अभिक्रिया पर आधारित लगाए गए प्लांट रियक्टर के नाम से जाने जाते हैं। इनमें नाभिकीय ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। इसका प्रयोग पनडुब्बियों तथा पानी के जहाजों में पेट्रोल तथा कोयले के स्थान पर किया जाता है।

(ix) **पीजो विद्युत स्त्रोत–** कुछ क्रिस्टल जैसे क्वार्ट्ज, रोशल साल्ट, टूरमेलीन इत्यादि ऐसे हैं कि जब इनके दो फलकों पर एक दिशा में दाब डालते हैं, तब इसके

लंबवत् दिशा में फलकों के मध्य विद्युत वाहक बल उत्पन्न हो जाता है। इस क्रिया में यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है।

प्रश्न 2. इलेक्ट्रॉन सिद्धांत के अनुसार विद्युत आवेश की व्याख्या कीजिए।

उत्तर- **विद्युत आवेश-** यदि हम काँच की एक छड़ को रेशम से रगड़ें तो छड़ हल्की वस्तुओं जैसे— कागज के टुकड़े, तिनके इत्यादि को अपनी ओर आकर्षित करने लगती है। इसी प्रकार एबोनाइट की छड़ को बिल्ली की खाल से रगड़ने पर छड़ में हल्की वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करने का गुण उत्पन्न हो जाता है। इस गुण के उत्पन्न हो जाने पर यह कहा जाता है कि छड़ ने 'विद्युत आवेश' ग्रहण कर लिया है या छड़ आवेशित हो गई है। वह कारण जिससे कि छड़ आवेशित होती है, 'विद्युत' कहलाता है।

आवेश दो प्रकार के होते हैं— एक तो वह जो कि काँच को रेशम से रगड़ने पर काँच में उत्पन्न होता है और दूसरा वह जो कि एबोनाइट को बिल्ली की खाल से रगड़ने पर एबोनाइट में उत्पन्न होता है। पहले को 'धन आवेश' तथा दूसरे को 'ऋण आवेश' कहते हैं।

इलेक्ट्रॉन सिद्धांत के अनुसार, प्रत्येक पदार्थ परमाणुओं से मिलकर बना है। इसमें तीन प्रकार के मूल कण होते हैं। ये कण हैं—प्रोटॉन, न्यूट्रॉन तथा इलेक्ट्रॉन। प्रोटॉन तथा न्यूट्रॉन द्रव्यमान में लगभग बराबर होते हैं तथा परमाणु के केंद्र पर एक अत्यंत छोटे से स्थान में रहते हैं, जिसे 'नाभिक' कहते हैं। परमाणु का अधिकांश द्रव्यमान नाभिक में ही निहित रहता है। प्रोटॉन पर धन आवेश होता है, जबकि न्यूट्रॉन पर कोई आवेश नहीं होता। इस प्रकार नाभिक धन आवेश युक्त होता है। नाभिक के चारों ओर तीसरे प्रकार के कण इलेक्ट्रॉन विभिन्न कक्षाओं में चक्कर काटते रहते हैं। ये प्रोटॉन अथवा न्यूट्रॉन के सापेक्ष बहुत हल्के होते हैं तथा ये ही विद्युत घटनाओं में भाग लेते हैं। इलेक्ट्रॉन पर प्रोटॉन के धन आवेश के बराबर ऋण आवेश होता है। प्रत्येक कक्षा में इलेक्ट्रॉनों की संख्या निश्चित रहती है तथा इलेक्ट्रॉनों की कुल संख्या नाभिक के प्रोटॉनों की संख्या के बराबर होती है। चूँकि इलेक्ट्रॉन का ऋण आवेश प्रोटॉन के धन आवेश के बराबर होता है, अत: परमाणु में धन आवेश तथा ऋण आवेश की मात्राएँ बराबर होती हैं। इस प्रकार कुल परमाणु आवेश रहित अर्थात् उदासीन होता है। अत: साधारणत: वस्तुओं में परस्पर विद्युत आकर्षण अथवा प्रतिकर्षण नहीं होता।

प्रश्न 3. विद्युत विभव व विभवांतर से आप क्या समझते हैं?

उत्तर- **विद्युत विभव व विभवांतर-** यदि हम किसी वस्तु को ऊष्मा देते जाएँ तो उस वस्तु में ऊष्मा का तल ऊँचा होता जाता है तथा हम यह कहते हैं कि वस्तु का 'ताप' ऊँचा हो रहा है। ठीक इसी प्रकार किसी विद्युत चालक को आवेश देते जाने पर चालक में विद्युत तल ऊँचा होता जाता है तथा हम यह कहते हैं कि चालक का 'विद्युत विभव' ऊँचा हो रहा है।

दो भिन्न-भिन्न तापों वाली वस्तुओं को एक-दूसरे के संपर्क में रख देने पर, ऊष्मा ऊँचे ताप वाली वस्तु से नीचे ताप वाली वस्तु में बहने लगती है, जब तक कि दोनों का ताप बराबर नहीं हो जाता। ठीक इसी प्रकार, यदि एक ऊँचे विभव वाले विद्युत चालक को नीचे विभव वाले चालक से किसी तार द्वारा जोड़ दें तो धन आवेश ऊँचे विभव वाले चालक से नीचे विभव वाले चालक की ओर बहने लगता है जब तक कि दोनों चालकों के विभव परस्पर बराबर नहीं हो जाते।

यदि किसी विद्युत चालक को आवेश दें तो प्रारंभ में वह कुछ आवेश ले लेता है परंतु फिर चालक पर विद्यमान आवेश आने वाले आवेश पर प्रतिकर्षण बल लगाने लगता है। अत: चालक को और आवेश देने पर इस प्रतिकर्षण बल के विरुद्ध कुछ कार्य करना पड़ता है। इस प्रकार किसी चालक को आवेशित करने पर विद्युत आवेश पर कुछ कार्य

करना पड़ता है, जो आवेश की स्थिर विद्युत स्थितिज ऊर्जा के रूप में संचित हो जाता है। **एकांक धनावेश को अनंत से किसी बिंदु तक लाने में किया गया कार्य ही उस बिंदु पर विद्युत विभव की माप है।**

यदि q कूलॉम आवेश को अनंत से किसी बिंदु तक लाने में W जूल कार्य किया जाए, तो उस बिंदु का विभव

$$V = \frac{W}{q} \text{ जूल/कूलॉम}$$

विभव का मात्रक जूल/कूलॉम है, जिसे 'वोल्ट' कहते हैं।

यदि $W = 1$ जूल, $q = 1$ कूलॉम, तो $V = 1$ वोल्ट होगा।

यदि अनंत से किसी बिंदु तक 1 कूलॉम आवेश लाने में 1 जूल कार्य किया जाए तो उस बिंदु का विभव 1 वोल्ट होगा।

विभवांतर– किसी परिपथ के दो बिंदुओं के बीच एकांक आवेश को प्रवाहित करने में किए गए कार्य को उन बिंदुओं के बीच 'विभवांतर' कहते हैं। इस प्रकार, यदि विद्युत परिपथ के दो बिंदुओं के बीच q कूलॉम आवेश प्रवाहित करने पर W जूल कार्य करना पड़े, तो उन बिंदुओं के बीच विभवांतर $V = W / q$ वोल्ट होगा।

यदि $W = 1$ जूल तथा $q = 1$ कूलॉम, तो

$$V = \frac{1 \text{ जूल}}{1 \text{ कूलॉम}} = 1 \text{ वोल्ट}$$

अत: यदि किसी चालक में दो बिंदुओं के बीच 1 कूलॉम आवेश को स्थानांतरित करने में 1 जूल कार्य करना पड़े, तो उन बिंदुओं के बीच विभवांतर 1 वोल्ट होगा।

प्रश्न 4. मुक्त इलेक्ट्रॉन के आधार पर विद्युत चालन की व्याख्या कीजिए। चालक तथा अचालक पर भी उदाहरण सहित प्रकाश डालिए।

उत्तर- मुक्त इलेक्ट्रॉन के आधार पर विद्युत चालन की व्याख्या- ठोसों में सभी धातुएँ विद्युत की सुचालक होती हैं। इनमें विद्युत चालन इलेक्ट्रॉन सिद्धांत के द्वारा समझाया जा सकता है। किसी पदार्थ के परमाणु में जो इलेक्ट्रॉन नाभिक के समीप की कक्षाओं में होते हैं। वे नाभिक के धन आवेश के द्वारा प्रबल आकर्षण बल से बँधे रहते हैं तथा उन्हें उनके स्थान से हटाना कठिन होता है। परंतु नाभिक से दूर वाली कक्षाओं के इलेक्ट्रॉनों पर यह बल बहुत कम होता है। अत: इन बाह्य इलेक्ट्रॉनों को इनके स्थान से आसानी से हटाया जा सकता है। इनमें से अनेक इलेक्ट्रॉन तो अपने परमाणुओं से अलग होकर पूरे पदार्थ में गति करते हैं। इन्हें मुक्त इलेक्ट्रॉन या चालक इलेक्ट्रॉन कहते हैं। ये इलेक्ट्रॉन ही आवेश के पदार्थ में एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते हैं। अत: किसी ठोस पदार्थ की विद्युत चालकता उसमें मुक्त इलेक्ट्रॉनों की संख्या पर निर्भर करती है। जिन पदार्थों में मुक्त इलेक्ट्रॉनों की संख्या बहुत ही कम या शून्य होती है, उनमें आवेश का प्रभाव संभव नहीं होता है। अत: वे पदार्थ विद्युत के अचालक होते हैं—

आवेश प्रवाह की दृष्टि से पदार्थ के दो प्रकार होते हैं—

(a) चालक (b) अचालक

विद्युत चालक– जब चालक पदार्थों के सिरों पर विद्युत विभवांतर लगाया जाता है, तो विद्युत क्षेत्र के कारण मुक्त इलेक्ट्रॉन विद्युत क्षेत्र के विपरीत दिशा में गति करने लगते हैं और विद्युत धारा बहने लगती है। इस प्रकार के पदार्थों को विद्युत चालक कहते हैं।

विद्युत अचालक– पदार्थों के परमाणुओं की कक्षा में घूमने वाले इलेक्ट्रॉन नाभिक से दृढ़तापूर्वक बँधे रहते हैं तथा वे धारा प्रवाह के लिए मुक्त नहीं हो पाते हैं। इस प्रकार के पदार्थों को विद्युत अचालक कहते हैं।

प्रश्न 5. विद्युत परिपथों में प्रयुक्त कुछ उपकरणों के आरेखों का चित्र सहित वर्णन कीजिए।

उत्तर- **विद्युत परिपथों में प्रयुक्त कुछ उपकरण-** ये निम्न प्रकार के होते हैं—

(i) कुंजी- विद्युत परिपथ को जोड़ने तथा तोड़ने के प्रबंध को कुंजी कहते हैं। ये प्राय: दो प्रकार की होती हैं—

(a) प्लग कुंजी- इसमें लकड़ी अथवा एबोनाइट की एक छोटी आयताकार प्लेट पर पीतल के दो मोटे गुटके पास-पास जड़े रहते हैं, जिनके बीच खाली स्थान रहता है। एबोनाइट की टोपी वाली एक पीतल की डाट जिसे 'प्लग' कहते हैं, इस खाली स्थान में फिट की जाती है। पीतल के दोनों गुटकों पर एक-एक संयोजक पेंच लगा रहता है। विद्युत परिपथ के तारों को इन्हीं पेंचों से जोड़ा जाता है। पीतल सुचालक है, अत: प्लग लगा देने पर परिपथ जुड़ जाता है। प्लग निकाल लेने पर पीतल के दोनों गुटकों के बीच खाली स्थान में वायु रहती है, जो कि विद्युत अचालक है। अत: विद्युत धारा नहीं बह सकती है और परिपथ टूट जाता है।

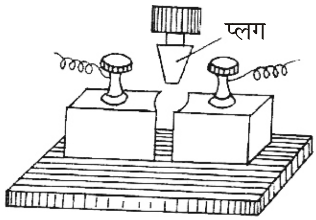

(b) दाब कुंजी- यह कुंजी उस समय काम में लाई जाती है, जब परिपथ में केवल क्षण भर के लिए विद्युत धारा प्रवाहित करनी हो। इसमें एबोनाइट की एक छोटी-सी प्लेट पर दो संयोजक पेंच एक किनारे की ओर लगे रहते हैं। इनमें से एक पेंच का संबंध एबोनाइट की प्लेट के दूसरे किनारे पर लगे धातु के बटन से होता है। दूसरी संयोजक पेंच का संबंध धातु की एक पतली लचकदार पत्ती के सिरे से होता है, जो कि प्लेट पर जड़ी रहती है। पत्ती के दूसरे सिरे पर धातु की कील लगी रहती है। जिसकी टोपी एबोनाइट की बनी होती है। पत्ती की टोपी को अंगुली द्वारा दबाने पर धातु की कील धातु के बटन को स्पर्श करती है और दोनों संयोजक पेंचों का आपस में संबंध जुड़ जाता है। अत: संयोजक पेंचों से जुड़े परिपथ में धारा बहने लगती है। जब टोपी पर से अंगुली उठा ली जाती है तो लचक के कारण पत्ती ऊपर उठ जाती है और परिपथ टूट जाता है

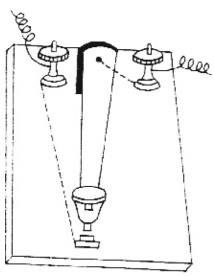

नीचे चित्र में प्लग कुंजी व दाब कुंजी के खुली तथा बंद होने के प्रतीकात्मक निरूपण दिखाए गए हैं। प्लग कुंजी खुली होती है, जब प्लग निकाल लेते हैं। कुंजी बंद होती है जब प्लग लगा देते हैं। दाब कुंजी खुली होती है, जब टोपी पर से अंगुली उठा लेते हैं (पत्ती ऊपर उठ जाती है) दाब कुंजी बंद होती हैं, जब टोपी को अंगुली से दबा देते हैं (पत्ती की कील धातु के बटन को दबाती है)।

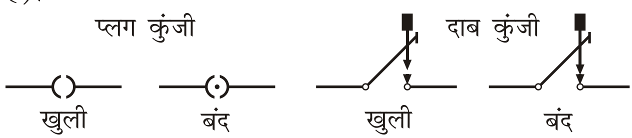

(ii) विद्युत धारा का स्त्रोत- विद्युत धारा दो प्रकार की होती हैं—

(a) प्रत्यावर्ती विद्युत धारा (AC) जो हमें अपने घरों, फैक्टरियों में मेंस से मिलती है। तथा

(b) दिष्ट धारा (DC) जो हमें सेल अथवा बैटरी से मिलती है।

यदि दिष्ट धारा स्त्रोत प्रयुक्त किया जाता है, तो यह सेल (लैक्लांशे सेल, डेनियल सेल अथवा शुष्क सेल) अथवा बैटरी कुछ भी हो सकती है। एक सेल को दो असमान लंबाइयों की रेखाओं के प्रतीक से निरूपित किया जाता है। बड़ी रेखा पतली होती है तथा जिस '+' पर चिह्न अंकित होता है, यह एनोड बताता है तथा छोटी रेखा, मोटी होती है जिस पर '–' चिह्न अंकित होता है, यह कैथोड बताता है। जब किसी सेल से धारा ली जाती है तो बाह्य परिपथ में यह धन टर्मिनल से ऋण टर्मिनल की ओर बहती है तथा सेल के भीतर ऋण टर्मिनल से धन टर्मिनल की ओर बहती है।

जब अधिक प्रबल धारा की आवश्यकता होती है तो हम कई सेलों को इस प्रकार जोड़ते हैं कि एक सेल का ऋण टर्मिनल दूसरी के धन टर्मिनल से जुड़ा हो। सेलों के इस समूह को बैटरी कहते हैं।

यदि प्रत्यावर्ती धारा स्त्रोत प्रयुक्त किया गया है तो इसे बंद वृत्त के भीतर ज्या वक्र (sine curve) से प्रदर्शित करते हैं।

सेल (a)   बैटरी (b)   प्रत्यावर्ती स्त्रोत (a. b.) (c)

(iii) धारा नियंत्रक– यह उपकरण विद्युत परिपथ में धारा की प्रबलता कम अथवा अधिक करने के काम आता है। इसमें प्राय: ऑक्सीकृत नाइक्रोम का तार जिसका विशिष्ट प्रतिरोध अधिक तथा प्रतिरोध ताप गुणांक कम होता है, एक चीनी-मिट्टी के खोखले बेलन पर लिपटा रहता है। तार के ऑक्सीकृत होने के कारण वे एक-दूसरे से पृथक्कृत होते हैं। तार के दोनों सिरे आधार पर लगे संयोजक पेंचों A और B से जुड़े होते हैं।

एक धातु की छड़ CD, बेलन के समांतर ऊपर की ओर लगी रहती है जिस पर खिसकने वाली धातु की पत्ती S लगी रहती है। यह पत्ती तार की कुंडली को दाब के साथ स्पर्श करती हुई इधर-उधर खिसकाई जा सकती है। इसे 'विसर्पी स्पर्शक' कहते हैं। छड़ के एक सिरे पर एक संयोजक पेंच C लगा रहता है।

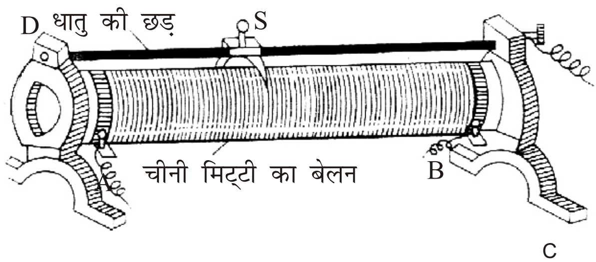

परिपथ में धारा नियंत्रक को अथवा 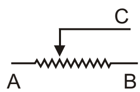

प्रतीक से प्रदर्शित करते हैं। विद्युत परिपथ के एक तार को संयोजक पेंच A अथवा B से तथा दूसरे तार को संयोजक पेंच C से जोड़ते हैं।

(iv) प्रतिरोध बॉक्स– यह परिपथ में ज्ञात प्रतिरोध डालने के काम आता है। इसमें

विभिन्न प्रतिरोधों की कई कुंडलियाँ श्रेणीक्रम में पीतल के गुटकों के बीच थोड़े-थोड़े अंतर पर एबोनाइट की प्लेट पर लगी रहती हैं। इनमें से किसी भी कुंडली के प्रतिरोध को परिपथ में डाला जा सकता है। बॉक्स के ऊपर पीतल के प्रथम तथा अंतिम गुटके पर संयोजक पेंच लगे रहते हैं। प्रत्येक कुंडली के तार का प्रतिरोध बॉक्स के ऊपर लिखा रहता है।

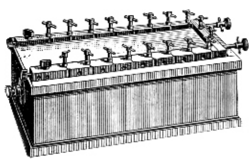

(v) अमीटर– यह एक कम प्रतिरोध वाला धारामापी है। धारामापी (G) की कुंडली के समांतर क्रम में संबंध पेंचों के बीच एक कम प्रतिरोध का मोटा तार जिसे शन्ट कहते हैं, जोड़कर अमीटर बन जाता है।

शन्ट का प्रतिरोध अमीटर की परास पर निर्भर करता है। यह उपकरण एक बक्से में बंद होता है, जिसके सामने की दीवार काँच की होती है। इसमें कुंडली पर ऐलुमीनियम का एक संकेतक लगा रहता है, जो ऐम्पियर में अंकित वृत्ताकार पैमाने पर घूमता है।

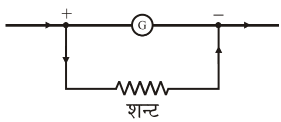

इसके दो टर्मिनल होते हैं, जिनमें से एक पर धन चिह्न $(+)$ तथा दूसरे पर ऋण चिह्न $(-)$ अंकित होता है। जिस चालक में प्रवाहित धारा की माप करनी होती है, अमीटर को उस चालक तार के श्रेणीक्रम में जोड़ते हैं। इससे चालक में प्रवाहित संपूर्ण धारा अमीटर में भी प्रवाहित होती है।

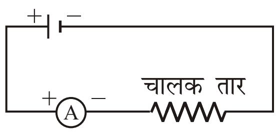

अमीटर जोड़ते समय इस बात का ध्यान रखते हैं कि इसका धन टर्मिनल सेल के धन टर्मिनल (धन प्लेट) की ओर हो तथा ऋण टर्मिनल सेल के ऋण टर्मिनल की ओर हो।

(vi) वोल्टमीटर– यह ऊँचे प्रतिरोध वाला धारामापी (G) है जो किसी विद्युत परिपथ में किन्हीं दो बिंदुओं के बीच विभवांतर नापने के काम आता है। इसे उन बिंदुओं के बीच समांतर क्रम में लगाते हैं। धारामापी के पैमाने को वोल्ट में अंकित करके उसमें विभवांतर नापा जा सकता है। धारामापी की कुंडली के श्रेणीक्रम में एक उच्च प्रतिरोध का तार जोड़कर वोल्टमीटर बनाया जाता है

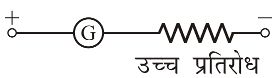

यह उपकरण एक बक्से में बंद होता है, जिसके सामने की दीवार काँच की होती है। इसमें कुंडली पर ऐलुमीनियम का एक संकेत लगा रहता है, जो वोल्ट में अंकित वृत्ताकार पैमाने पर घूमता है।

इसमें भी धन तथा ऋण टर्मिनल होते हैं। जिस चालक के सिरों के बीच विभवांतर मापना होता है, वोल्टमीटर के टर्मिनलों को सीधे उन सिरों से जोड़ते हैं। इस प्रकार, वोल्टमीटर चालक तार के समांतर क्रम में जोड़ा जाता है। इससे चालक में प्रवाहित धारा का एक छोटा भाग ही वोल्टमीटर में प्रवाहित होता है। वोल्टमीटर जोड़ते समय भी इस बात का ध्यान रखते हैं कि इसका धन टर्मिनल सेल के धन टर्मिनल (धन प्लेट) की ओर रहे।

प्रश्न 6. ओम का नियम क्या है? इसका सत्यापन कीजिए।

उत्तर– **ओम का नियम–** यदि किसी चालक के सिरों के बीच भिन्न-भिन्न विभवांतर लगाए जाएँ, तो उसमें से होकर बहने वाली विद्युत धारा के मान भी भिन्न-भिन्न होते हैं। वैज्ञानिक जार्ज साइमन ओम ने चालक के सिरों पर लगाए गए विभवांतर तथा उसमें प्रवाहित धारा के बीच एक संबंध स्थापित किया, जिसे इन्हीं वैज्ञानिक के नाम पर 'ओम का नियम' कहा गया। इनके अनुसार, यदि किसी चालक की भौतिक अवस्थाओं, जैसे— लंबाई एवं ताप इत्यादि में परिवर्तन न हो, तो उसके सिरों पर लगाए गए विभवांतर तथा उसमें बहने वाली विद्युत धारा का अनुपात नियत रहता है। यदि विभवांतर V तथा विद्युत I हो, तो

$$\frac{V}{I} = \text{नियतांक}$$

इस नियतांक का मान चालक के आकार, पदार्थ तथा ताप पर निर्भर करता है।

इसे चालक का प्रतिरोध R कहते हैं। अत: $R = \frac{V}{I}$

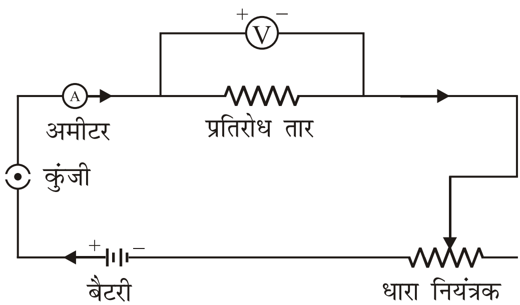

ओम का नियम केवल धातु चालकों के लिए ही सत्य है। यदि परिपथ में लगाए गए विभवांतर V तथा चालक में प्रवाहित धारा I के बीच ग्राफ खींचें, तो एक सरल रेखा आनी चाहिए। इसको सत्यापित करने के लिए एक बैटरी, अमीटर, धारा नियंत्रक एवं प्रतिरोध तार को श्रेणीक्रम में जोड़ते हैं तथा प्रतिरोधक तार के सिरों के बीच एक वोल्टमीटर लगाते हैं।

कुंजी K लगाते ही परिपथ में विद्युत धारा बहने लगती है। धारा नियंत्रक द्वारा परिपथ में बहने वाली धारा को नियंत्रित किया जा सकता है। धारा नियंत्रक द्वारा परिपथ में बहने वाली धारा को धीरे-धीरे बढ़ाते हैं और धारा के प्रत्येक मान के लिए वोल्टमीटर का पाठ्यांक नोट करते हैं।

प्रेक्षणों से स्पष्ट होता है कि $\frac{V}{I}$ का प्रत्येक बार मान समान होता है। अंत में विभवांतर V को X–अक्ष तथा धारा I को Y–अक्ष पर लेकर एक ग्राफ खींचते हैं, जिससे एक सरल रेखा प्राप्त होती है।

ग्राफ से स्पष्ट है कि $V \propto I \Rightarrow \frac{V}{I} = \text{नियतांक}$

यही ओम का नियम है।

प्रश्न 7. विद्युत प्रतिरोध किसे कहते हैं? प्रतिरोधकों की उपयोगिता बताइए।

उत्तर– **विद्युत प्रतिरोध–** जब किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर स्थापित किया जाता है तो उस चालक में विद्युत धारा बहने लगती है। लगाए गए विभवांतर तथा चालक में

प्रवाहित धारा के अनुपात को चालक का **विद्युत प्रतिरोध** R कहते हैं। अत: यदि किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर V हो तथा चालक में प्रवाहित धारा I हो, तो चालक का प्रतिरोध

$$R = V / I$$

प्रतिरोध का मात्रक 'ओम' (ohm) है। अत: उपर्युक्त सूत्र में यदि V वोल्ट में तथा I ऐम्पियर में हो, तो R ओम में होगा। स्पष्ट है कि 'यदि चालक के सिरों के बीच 1 वोल्ट का विभवांतर होने पर उसमें 1 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित हो, तो चालक का प्रतिरोध 1 ओम होगा।' इस प्रकार

$$1 \text{ ओम} = \frac{1 \text{ वोल्ट}}{1 \text{ ऐम्पियर}}$$

ओम को ग्रीक अक्षर Ω (ओमेगा) से भी प्रदर्शित करते हैं।

बहुत बड़े प्रतिरोध 'मेगाओम' (mega-ohm) में तथा बहुत छोटे प्रतिरोध 'माइक्रोओम' (micro-ohm) में व्यक्त किए जाते हैं।

$$1 \text{ मेगाओम} = 10^6 \text{ ओम},$$

$$1 \text{ माइक्रोओम} = 10^{-6} \text{ ओम}$$

प्रतिरोधकों की उपयोगिता– प्रतिरोधों का हमारे दैनिक जीवन में बहुत उपयोग होता हैं; जैसे–

(i) धारा के नियंत्रण में– हम जानते हैं कि– धारा $(I) = V / R$

अत: यदि विभवांतर V का मान नियत रखा जाए तो प्रतिरोध R का मान परिवर्तित करके धारा को नियंत्रित किया जा सकता है। जैसे- R का मान कम करके धारा I का मान बढ़ जाएगा तथा R का मान बढ़ाने से धारा I का मान कम हो जाएगा। अत: प्रतिरोधों की सहायता से हम धारा को नियंत्रित कर सकते हैं। परिपथों में धारा नियंत्रकों की सहायता से प्रतिरोध का मान परिवर्तित करते हैं। घर में प्रयुक्त होने वाले पंखों में रेगुलेटर तथा टेलीविजन अथवा रेडियों में ध्वनि नियंत्रक आदि में प्रतिरोध को परिवर्तित करके धारा नियंत्रित की जाती है।

(ii) विद्युत ऊर्जा के रूपांतरण में– विद्युत धारा से चलने वाले कुछ उपकरणों; जैसे– ऊष्मक (हीटर), इस्त्री (प्रेस) आदि में प्रतिरोधों की सहायता से विद्युत ऊर्जा को ऊष्मीय ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। इसी प्रकार विद्युत बल्ब में प्रतिरोध की ही सहायता से विद्युत ऊर्जा का रूपांतरण प्रकाश में किया जाता है।

प्रश्न 8. किसी चालक के प्रतिरोध की निर्भरता का वर्णन कीजिए।

उत्तर- चालक के प्रतिरोध की निर्भरता– एक निश्चित ताप पर किसी चालक तार का प्रतिरोध निम्नलिखित बातों पर निर्भर करता है–

(i) तार की लंबाई पर– किसी चालक तार का प्रतिरोध (R), चालक तार की लंबाई (l) के अनुक्रमानुपाती होता है अर्थात्

$$R \propto l \qquad \ldots(i)$$

अर्थात् तार जितना छोटा होगा, उसका प्रतिरोध उतना ही कम होगा।

(ii) तार के क्षेत्रफल पर– किसी चालक तार का प्रतिरोध (R), चालक तार के अनुप्रस्थ काट के क्षेत्रफल (A) के व्युत्क्रमानुपाती होता है अर्थात्

$$R \propto 1/A \qquad \ldots(ii)$$

अर्थात् तार जितना पतला होगा, उसका प्रतिरोध उतना ही अधिक होगा।

(iii) तार के पदार्थ पर– यदि विभिन्न पदार्थों के तार समान लंबाई (l) व समान मोटाई के खींचे जाएँ, तो उनके प्रतिरोध भिन्न-भिन्न होंगे।

(iv) तार के ताप पर– तार का ताप बढ़ाने पर प्रतिरोध बढ़ जाता है।

समीकरण (i) एवं (ii) से,

$$R \propto l/A \text{ या } R \propto \rho(l/A) \text{ या } \rho \propto RA/l$$

जहाँ ρ एक नियतांक है, जिसका मान केवल चालक तार के पदार्थ पर निर्भर करता है। इसे ही पदार्थ का विशिष्ट प्रतिरोध या विशिष्ट प्रतिरोधकता कहते हैं।

यदि $l = 1$ मीटर तथा $A = 1$ मीटर^2 हो,

तब
$$\rho = R = \frac{\text{ओम- मीटर}^2}{\text{मीटर}}$$
$$= 1 \text{ ओम-मीटर}$$

अत: किसी चालक के पदार्थ का विशिष्ट प्रतिरोध उस पदार्थ के 1 मीटर लंबे एवं 1 मीटर^2 अनुप्रस्थ काट के क्षेत्रफल वाले तार के प्रतिरोध के बराबर होता है। विशिष्ट प्रतिरोध का मात्रक ओम-मीटर या ओम सेमी होता है।

प्रश्न 9. श्रेणीक्रम में जुड़े तीन प्रतिरोधी के तुल्य प्रतिरोध के सूत्र की व्युत्पत्ति कीजिए।

उत्तर– प्रतिरोधों का श्रेणीक्रम संयोजन इस प्रकार होता है कि प्रतिरोधों को क्रमशः जोड़ा जाए अर्थात् किसी एक प्रतिरोध का सिरा, दूसरे प्रतिरोध के एक सिरे से तथा इस प्रतिरोध का दूसरा सिरा अगले प्रतिरोध के पहले सिरे से जुड़ा हुआ रहे। इसमें R_1, R_2, R_3 प्रतिरोधों को श्रेणीक्रम में जोड़कर एक सेल, जिसका कुल विभवांतर V वोल्ट है, से जोड़ा गया है। श्रेणीक्रम में जुड़े इन प्रतिरोधों के तुल्य प्रतिरोध का मान निम्नलिखित प्रकार से ज्ञात किया जाता है—

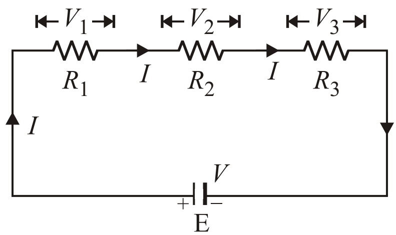

माना प्रतिरोधों के सिरों पर विभवांतर क्रमशः V_1, V_2, V_3 हैं, तब ओम के नियम से—

$$V_1 = IR_1$$
$$V_2 = IR_2$$
$$V_3 = IR_3$$
$$V_1 + V_2 + V_3 = IR_1 + IR_2 + IR_3$$
$$= I(R_1 + R_2 + R_3) \quad \ldots(\text{i})$$

चूँकि कुल विभवांतर V है, $V = V_1 + V_2 + V_3$ ...(ii)

अब माना कोई एक ऐसा प्रतिरोध है, जो विभवांतर V होने पर परिपथ में I धारा प्रवाहित करने में सहायक होता है। यह प्रतिरोध समतुल्य प्रतिरोध R कहलाता है। अत:

$$V = IR \quad \ldots(\text{iii})$$

समीकरण (i), (ii) व (iii) से,

$$IR = I(R_1 + R_2 + R_3)$$
$$R = R_1 + R_2 + R_3$$

अत: श्रेणीक्रम में समतुल्य प्रतिरोध, प्रतिरोधों के कुल योग के बराबर होता है।

प्रश्न 10. सिद्ध कीजिए कि समांतर क्रम में जुड़े प्रतिरोधों का तुल्य प्रतिरोध का व्युत्क्रम उनके प्रतिरोधों के व्युत्क्रम के योग के बराबर होता है।

उत्तर- समांतर क्रम संयोजन में सभी प्रतिरोधों के एक सिरे को एक साथ परिपथ के एक बिंदु A पर तथा दूसरे सिरों को एक साथ दूसरे बिंदु B पर जोड़ा जाता है। इस प्रकार के संयोजन में प्रत्येक प्रतिरोध दो सर्वनिष्ठ बिंदुओं के बीच जुड़ा होता है। अत: सभी प्रतिरोधकों के सिरों के बीच का विभवांतर समान रहता है।

माना R_1, R_2 तथा R_3 तीन प्रतिरोधों को बिंदुओं A तथा B के बीच समांतर क्रम में जोड़ा गया है। माना R_1, R_2 तथा R_3 में धाराओं के मान क्रमशः I_1, I_2 व I_3 हो, तो ओम के नियमानुसार,

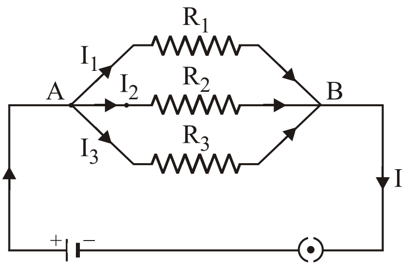

$$I_1 = \frac{V}{R_1}$$

$$I_2 = \frac{V}{R_2}$$

$$I_3 = \frac{V}{R_3}$$

जहाँ बिंदुओं A तथा B के बीच विभवांतर V है।

यदि बिंदु A या B पर आने वाली कुल धारा का मान I हो, तो

$$I = I_1 + I_2 + I_3$$

$$= \frac{V}{R_1} + \frac{V}{R_2} + \frac{V}{R_3}$$

$$= \left[\frac{1}{R_1} + \frac{1}{R_2} + \frac{1}{R_3}\right]V \quad \ldots(i)$$

यदि बिंदु A तथा B के बीच तुल्य प्रतिरोध R हो, तो ओम के नियमानुसार,

$$I = V/R \quad \ldots(ii)$$

समीकरण (i) एवं (ii) की तुलना करने पर,

$$\frac{V}{R} = V\left[\frac{1}{R_1} + \frac{1}{R_2} + \frac{1}{R_3}\right]$$

$$\frac{1}{R} = \frac{1}{R_1} + \frac{1}{R_2} + \frac{1}{R_3}$$

अर्थात् समांतर क्रम में जुड़े प्रतिरोधों का तुल्य प्रतिरोध का व्युत्क्रम उनके प्रतिरोधों के व्युत्क्रम के योग के बराबर होता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. ऐम्पियर की परिभाषा लिखिए।

उत्तर- ऐम्पियर- 1 ऐम्पियर वह विद्युत धारा है, जो निर्वात या वायु में 1मीटर की दूरी पर रखे दो लंबे, सीधे व समांतर तारों में प्रवाहित होने पर प्रत्येक तार की एकांक लंबाई पर 2×10^{-7} न्यूटन का आकर्षण या प्रतिकर्षण का बल उत्पन्न करती है।

प्रश्न 2. विद्युत विभवांतर की परिभाषा लिखिए।

उत्तर– **विद्युत विभवांतर–** किसी परिपथ के दो बिंदुओं के बीच एकांक आवेश को प्रवाहित करने में किए गए कार्य को उन बिंदुओं के बीच 'विभवांतर' कहते हैं। इस प्रकार, यदि विद्युत परिपथ के दो बिंदुओं q कूलॉम आवेश प्रवाहित करने पर W जूल कार्य करना पड़े, तो उन बिंदुओं के बीच विभवांतर $V = W / q$ वोल्ट होगा।

यदि $W = 1$ जूल तथा $q = 1$ कूलॉम, तो

$$V = \frac{1\text{ जूल}}{1\text{ कूलॉम}} = 1\text{ वोल्ट}$$

प्रश्न 3. एक वोल्ट का क्या अर्थ है?

उत्तर– यदि किसी चालक में दो बिंदुओं के बीच 1 कूलॉम आवेश को स्थानांतरित करने में 1 जूल कार्य करना पड़े, तो उन बिंदुओं के बीच विभवांतर 1 वोल्ट होगा।

प्रश्न 4. विद्युत धारा की माप किस उपकरण से की जाती है? धारा नापने के लिए इसे परिपथ में किस प्रकार लगाते हैं?

उत्तर– विद्युत धारा की माप आवेश प्रवाह की दर से की जाती है। इसे मापने के लिए अमीटर यंत्र को उपयोग में लाया जाता है। धारा नापने के लिए इसे परिपथ में श्रेणीक्रम में जोड़ा जाता है।

प्रश्न 5. विभवांतर नापने के लिए उपयोग किए जाने वाले वाले यंत्र का नाम लिखिए। इसको परिपथ में किस प्रकार लगाते हैं?

उत्तर– विभवांतर नापने के लिए उपयोग किए जाने वाले यंत्र का नाम वोल्टमीटर है। इसको परिपथ में समांतर क्रम में लगाते हैं।

प्रश्न 6. संलग्न चित्र में प्रदर्शित विद्युत परिपथ के प्रतिरोधक R_2 में प्रवाहित धारा तथा R_3 का विभवांतर नापने हेतु मापक यंत्रों को किस प्रकार संयोजित कीजिएगा? आरेख में यंत्रों के नाम भी यथास्थान लिखिए।

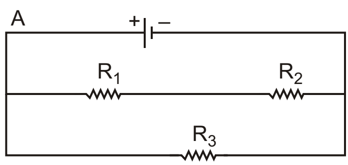

उत्तर– विद्युत परिपथ में कुंजी को जोड़ा जाता है, जिससे परिपथ को पूर्ण या अपूर्ण कर सकें।

विद्युत परिपथ में अमीटर को चालक तार के श्रेणीक्रम में जोड़ा जाता है। इसे $^{+}$Ⓐ$^{-}$ से प्रदर्शित करते हैं।

विद्युत परिपथ में वोल्टमीटर को चालक तार के समांतर क्रम में जोड़ा जाता है। इसको $^{+}$Ⓥ$^{-}$ से प्रदर्शित करते हैं।

दिए गए चित्र में उपकरणों के नाम दिखाए गए हैं–

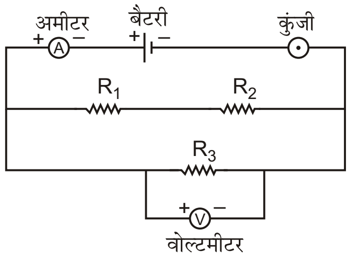

R_1, R_2, R_3 प्रतिरोध है।

प्रश्न 7. विद्युत धारा से क्या तात्पर्य है? इसके मात्रक की परिभाषा लिखिए।

उत्तर- **विद्युत धारा-** यदि दो वस्तुएँ भिन्न-भिन्न विभव पर हों तथा उन्हें एक चालक तार द्वारा जोड़ दिया जाए, तो धनात्मक आवेश उच्च विभव वाली वस्तु से निम्न विभव वाली वस्तु की ओर बहने लगता है। यह आवेश तब तक बहता रहता है, जब तक कि दोनों वस्तुओं के विभव समान न हो जाएँ। इसी को **विद्युत धारा** कहते हैं।

अत: विद्युत आवेश के प्रवाह की समय दर को **विद्युत धारा की तीव्रता** या **विद्युत धारा** कहते हैं।

विद्युत धारा = आवेश प्रवाह की दर

अत: यदि किसी चालक में t समय में q आवेश प्रवाहित हो, तो चालक में धारा

$$I = q/t \text{ या } q = I \cdot t$$

अत: विद्युत आवेश = विद्युत धारा × समय

विद्युत धारा का मात्रक- SI प्रणाली में विद्युत धारा को मूल राशि माना गया है। जिसका मूल मात्रक **ऐम्पियर** है। इसे A से प्रदर्शित करते है।

1 ऐम्पियर वह विद्युत धारा है, जो निर्वात या वायु में 1 मीटर की दूरी पर रखे दो लंबे, सीधे व समांतर तारों में प्रवाहित होने पर प्रत्येक तार की एकांक लंबाई पर 2×10^{-7} न्यूटन का आकर्षण अथवा प्रतिकर्षण का बल उत्पन्न करती है।

प्रश्न 8. मुक्त इलेक्ट्रॉन मॉडल के आधार पर विद्युत धारा की व्याख्या कीजिए। इसके बहने की दिशा किस ओर होती है?

उत्तर- **मुक्त इलेक्ट्रॉन मॉडल के आधार पर विद्युत धारा की व्याख्या-** परमाणु संरचना के अनुसार धातुओं के परमाणुओं की सबसे बाहरी कक्षा में 1 या 2 इलेक्ट्रॉन होते हैं। इन इलेक्ट्रॉनों पर नाभिक का आकर्षण बल अपेक्षाकृत कम होता है, क्योंकि ये नाभिक से दूर होते हैं। सामान्य ताप पर ही ये इलेक्ट्रॉन थोड़ी-सी ऊर्जा लेकर परमाणु से अलग होकर पदार्थ में मुक्त रूप से विचरण करते रहते हैं, परंतु धातु को छोड़कर नहीं जा सकते। इन इलेक्ट्रॉनों को मुक्त इलेक्ट्रॉन कहते हैं।

धातु के अंदर मुक्त इलेक्ट्रान अनियमित रूप से घूमते रहते हैं; अत: पदार्थ में इनका वितरण सामान्यत: सभी स्थानों पर एकसमान होता है। धातु के सिरों के बीच विद्युत विभवांतर लगाने पर इन इलेक्ट्रॉनों की गति नियमित हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप आवेश धातु में एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर स्थानांतरित होने लगता है अर्थात् धारा बहने लगती है।

विद्युत धारा की दिशा- किसी परिपथ में धनात्मक आवेश के प्रवाह की दिशा को धारा प्रवाह की दिशा माना जाता है। अत: चालक में विद्युत धारा की दिशा, इलेक्ट्रॉन के बहने की दिशा के विपरीत होती है।

प्रश्न 9. विद्युत विभव की परिभाषा लिखिए तथा इसके मात्रक की परिभाषा भी दीजिए।

उत्तर- **विद्युत विभव-** एकांक धनावेश को अनंत से किसी बिंदु तक लाने में किया गया कार्य ही उस बिंदु पर विद्युत विभव की माप है।

यदि q कूलॉम आवेश को अनंत से किसी बिंदु तक लाने में W जूल कार्य किया जाए, तो उस बिंदु का विभव

$$V = \frac{W}{q} \text{ जूल/कूलॉम}$$

विभव का मात्रक जूल/कूलॉम है, जिसे 'वोल्ट' कहते हैं।

यदि $W = 1$ जूल, $q = 1$ कूलॉम, तो $V = 1$ वोल्ट होगा।

यदि अनंत से किसी बिंदु तक 1 कूलॉम आवेश लाने में 1 जूल कार्य किया जाए तो उस बिंदु का विभव 1 वोल्ट होगा।

प्रश्न 10. विद्युत प्रतिरोध क्या है? इसका मात्रक लिखिए।

उत्तर- **विद्युत प्रतिरोध-** जब किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर स्थापित किया जाता है तो उस चालक में विद्युत धारा बहने लगती है। लगाए गए विभवांतर तथा चालक में प्रवाहित धारा के अनुपात को चालक का विद्युत प्रतिरोध R कहते हैं। यदि किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर V हो तथा चालक में प्रवाहित धारा I हो, तो चालक का प्रतिरोध $$R = V / I$$

इसका मात्रक 'ओम' होता है या वोल्ट/ऐम्पियर भी है।

बहुत बड़े प्रतिरोध का मात्रक तथा छोटे प्रतिरोध का मात्रक निम्न है—

$$1 \text{ मेगाओम} = 10^6 \text{ ओम},$$
$$1 \text{ माइक्रोओम} = 10^{-6} \text{ ओम}$$

प्रश्न 11. ओम के नियम का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- **ओम का नियम-** यदि किसी चालक की भौतिक अवस्थाएँ; जैसे- ताप व लंबाई अपरिवर्तित रहें तो चालक में बहने वाली धारा, चालक के सिरों के विभवांतर के अनुक्रमानुपाती होती है।

$$\frac{V}{I} = \text{नियतांक}$$

इस नियतांक का मान चालक के आकार, पदार्थ तथा ताप पर निर्भर करता है। इसे चालक का प्रतिरोध R कहते हैं।

अतः $$R = \frac{V}{I}$$

प्रश्न 12. किसी चालक का प्रतिरोध किन-किन बातों पर निर्भर करता है?

उत्तर- **चालक के प्रतिरोध की निर्भरता-** एक निश्चित ताप पर किसी चालक तार का प्रतिरोध तार की लंबाई, अनुप्रस्थ काट का क्षेत्रफल तथा पदार्थ पर निम्नलिखित प्रकार से निर्भर करता है—

(i) तार की लंबाई पर- किसी चालक तार का प्रतिरोध (R), उसकी लंबाई (l) के अनुक्रमानुपाती होता है।

अर्थात् $$R \propto l \qquad \ldots(i)$$

अर्थात् तार जितना लंबा होगा, उसका प्रतिरोध उतना ही अधिक होगा।

(ii) तार के क्षेत्रफल पर- किसी चालक तार का प्रतिरोध (R), उसके अनुप्रस्थ काट के क्षेत्रफल (A) के व्युत्क्रमानुपाती होता है,

अर्थात् $$R \propto \frac{1}{A} \qquad \ldots(ii)$$

अर्थात् पतले तार का प्रतिरोध मोटे तार से अधिक होता है।

(iii) तार के पदार्थ पर- यदि विभिन्न पदार्थों के समान लंबाई (l) तथा समान अनुप्रस्थ काट (A) के लिए तार लिए जाएँ तो उनका प्रतिरोध भिन्न-भिन्न होगा।

(iv) तार के ताप पर- तार का ताप बढ़ाने पर प्रतिरोध बढ़ जाता है।

$$\rho \propto \frac{RA}{l}$$

जहाँ ρ एक नियतांक है, जिसे विशिष्ट प्रतिरोध कहते हैं। इसका मान तार के पदार्थ पर निर्भर करता है।

प्रश्न 13. विद्युत विभव की परिभाषा दीजिए तथा चालक के विभवांतर एवं धारा का संबंध लिखिए।

उत्तर- **विद्युत विभव-** एकांक धनावेश को अनंत से किसी निश्चित बिंदु तक लाने में किया गया कार्य ही उस बिंदु का विद्युत विभव कहलाता है।

चालक के विभवांतर एवं धारा का संबंध-

$$\frac{\text{विभवांतर } (V)}{\text{धारा } (I)} = \text{प्रतिरोध } (R)$$

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 100 देखें।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. एक इलेक्ट्रॉन पर 1.6×10^{-19} कूलॉम आवेश है। 2 ऐम्पियर धारा प्रवाहित करने पर किसी चालक में से प्रति सेकंड कितने इलेक्ट्रॉन प्रवाहित होंगे?

हलः $I = 2$ ऐम्पियर, $e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम, $t = 1$ सेकंड

$$I = \frac{q}{t} = \frac{ne}{t}$$

$$n = \frac{I \cdot t}{e} = \frac{2 \times 1}{1.6 \times 10^{-19}}$$

$$= \mathbf{12.5 \times 10^{18}} \text{ इलेक्ट्रॉन/सेकंड}$$ उत्तर

प्रश्न 2. तार के सिरों का विभवांतर 1.5 वोल्ट है। उसमें धारा प्रवाहित होने से 20 सेकंड में 30 जूल ऊर्जा प्राप्त होती है। तार में प्रवाहित धारा की गणना कीजिए।

हलः $V = 1.5$ वोल्ट, $W = 30$ जूल, $t = 20$ सेकंड, $I = ?$

$$q = \frac{W}{V} = \frac{30}{1.5} = 20 \text{ कूलॉम}$$

तार में प्रवाहित धारा, $I = \frac{q}{t} = \frac{20}{20} = \mathbf{1}$ **ऐम्पियर** उत्तर

प्रश्न 3. ताँबे के एक तार से होकर 6.0×10^{18} मुक्त इलेक्ट्रॉन प्रति सेकंड प्रवाहित हो रहे हैं। चालक में धारा का मान ज्ञात कीजिए।
(इलेक्ट्रॉन पर आवेश $e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम)

हलः

$$I = \frac{q}{t} = \frac{ne}{t}$$

$$I = \frac{(6.0 \times 10^{18}) \times (1.6 \times 10^{-19})}{1} = \mathbf{0.96} \text{ ऐम्पियर}$$ उत्तर

प्रश्न 4. 10Ω तथा 20Ω के प्रतिरोधों को सामांतर क्रम में जोड़ा गया है। इस संयोजन का तुल्य प्रतिरोध ज्ञात कीजिए।

हलः $R_1 = 10\Omega, R_2 = 20\Omega, R = ?$

समांतर क्रम में तुल्य प्रतिरोध

$$\frac{1}{R} = \frac{1}{R_1} + \frac{1}{R_2}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{1}{R} = \frac{1}{10} + \frac{1}{20} = \frac{2+1}{20} = \frac{3}{20}$$

$$R = \frac{20}{3} = \mathbf{6.67\Omega}$$ उत्तर

प्रश्न 5. एक चालक का प्रतिरोध 3.0Ω है। इसमें 0.5 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित करने पर कितना विभवांतर उत्पन्न होगा? यदि इस तार के सिरों पर उत्पन्न विभवांतर 4.8 वोल्ट हो, तो इसमें कितनी धारा प्रवाहित होगी?

हल: $R = 3.0\ \Omega, I = 0.5$ ऐम्पियर

$$V = IR$$

$$V = 0.5 \times 3.0 = \mathbf{1.5}$$ **वोट**

अब $V = 4.8$ वोल्ट,

$$I = \frac{V}{R} = \frac{4.8}{3.0} = \mathbf{1.6}$$ **ऐम्पियर** उत्तर

प्रश्न 6. दिए गए परिपथ में 3.0 ऐम्पियर धारा प्रवाहित हो रही है। ज्ञात कीजिए–

(a) प्रतिरोध *R* का मान, **(b) *A* व *B* के बीच विभवांतर**

हल: (a) $\frac{V}{I} = R \quad \Rightarrow R = \frac{3}{3} = 1\Omega$

(b) A व B के बीच प्रतिरोध $= 3\Omega + 1\Omega + 4\Omega = 8\Omega$

$\therefore$ A व B के बीच विभवातंर, $V = IR$

$$= 3 \times 8 = \mathbf{24}$$ **वोल्ट** उत्तर

प्रश्न 7. एक चालक पर सामान्य अवस्था में 5 इलेक्ट्रॉन अधिक हैं। इस चालक पर आवेश की मात्रा एवं प्रकृति बताइए।
(इलेक्ट्रॉन पर आवेश = 1.6×10^{-19} कूलॉम)

हल: $n = 5, e = -1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम,

$$q = ne = 5 \times (-1.6 \times 10^{-19}) = -8 \times 10^{-19}$$

अत: **आवेश की मात्रा = 8×10^{-19} कूलॉम एवं ऋणात्मक प्रकृति है।**

प्रश्न 8. एक चालक के सिरों का विभवांतर 1.5 वोल्ट है। एक मुक्त इलेक्ट्रॉन चालक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जाने में कितना कार्य करेगा? ($e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम)

हल: $V = 1.5$ वोल्ट, $e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम, $W = ?$

$$W = Vq$$

$$= 1.5 \times 1.6 \times 10^{-19}$$

$$= \mathbf{2.4 \times 10^{-19}}$$ **जूल** उत्तर

प्रश्न 9. किसी चालक में 0.5 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित होती है, जबकि उसके सिरों के बीच विभवांतर 2 वोल्ट है। चालक का प्रतिरोध ज्ञात कीजिए।

हल: $I = 0.5$ ऐम्पियर, $V = 2$ वोल्ट, $R = ?$

$$\frac{V}{I} = R \Rightarrow R = \frac{2}{0.5} = \mathbf{4\ \Omega}$$ उत्तर

प्रश्न 10. विद्युत चालक में 2.0 ऐम्पियर की धारा बह रही है। चालक में प्रति सेकंड बहने वाले इलेक्ट्रॉनों की संख्या की गणना कीजिए। एक इलेक्ट्रॉन का आवेश -1.6×10^{-19} कूलॉम है।

हल: $q = I\times t = 2\times1 = 2$ कूलॉम $\quad$ [$\because$ $I = 2$ ऐम्पियर, $t = 1$ सेकंड]

$$n = \frac{q}{e} = \frac{2}{1.6\times10^{-19}} \quad [\because e = 1.6\times10^{-19} \text{ कूलॉम}]$$

$$= 12.5\times10^{18}$$

अत: **इलेक्ट्रॉनों की संख्या $= 12.5\times10^{18}$ प्रति सेकंड** **उत्तर**

प्रश्न 11. एक चालक पर 9.6×10^{-19} कूलॉम धनावेश है। इस चालक पर सामान्य अवस्था में कितने इलेक्ट्रॉन कम अथवा अधिक हैं? ($e = 1.6\times10^{-19}$ कूलॉम)

हल: चूँकि चालक पर धन आवेश है। अत: इलेक्ट्रॉनों की कमी होगी।

$$n = \frac{q}{e} = \frac{9.6\times10^{-19}}{1.6\times10^{-19}} = \textbf{6 इलेक्ट्रॉन कम}$$ **उत्तर**

प्रश्न 12. किसी तार में 2.5 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित हो रही है। तार में होकर 20 मिनट में कितना आवेश प्रवाहित होगा?

हल: $I = 2.5$ ऐम्पियर, $t = 20$ मिनट $= 20\times60$ सेकंड $= 1200$ सेकंड

$$q = I\times t = 2.5\times1200 = \textbf{3000 कूलॉम}$$ **उत्तर**

प्रश्न 13. किसी विद्युत परिपथ में 24 वोल्ट की बैटरी तथा 60 ओम का प्रतिरोधक लगा है। परिपथ में धारा का परिमाण ज्ञात कीजिए।

हल: $R = 60$ ओम, $V = 24$ वोल्ट

$$I = \frac{V}{R} = \frac{24}{60} = \textbf{0.4 ऐम्पियर}$$ **उत्तर**

प्रश्न 14. दिए गए चित्र में ज्ञात कीजिए-

(a) तुल्य प्रतिरोध,

(b) परिपथ की धारा,

(c) 3 Ω प्रतिरोध वाले चालक के सिरों का विभवांतर।

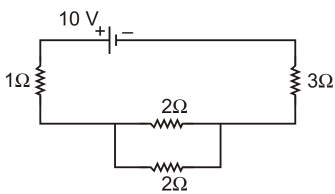

हल : $R_1 = 1\Omega, R_2 = 2\Omega, R_3 = 2\Omega, R_4 = 3\Omega, V = 10V, I = ?$

(a) R_2 व R_3 का तुल्य प्रतिरोध

$$\frac{1}{R'} = \frac{1}{R_2} + \frac{1}{R_3} = \frac{1}{2} + \frac{1}{2} = 1\Omega$$

$$R' = 1\Omega$$

अत: R_1, R' व R_4 का तुल्य प्रतिरोध

$$R = R_1 + R' + R_4 = 1+1+3 = 5\Omega$$

$$R = \mathbf{5\Omega}$$

(b) $R = 5\Omega,\ V = 10V, I = ?$

$$I = \frac{V}{R} = \frac{10}{5} = 2$$

$$I = \textbf{2 ऐम्पियर}$$

(c) $I = 2$ ऐम्पियर, $R = 3\Omega$, $V = ?$

$$V = IR$$

$$\Rightarrow \quad = 2 \times 3 = 6$$

$V = \mathbf{6}$ **वोल्ट** उत्तर

प्रश्न 15. एक विद्युत चालक में बहने वाली धारा की गणना कीजिए जिससे प्रति सेकंड 1.6×10^{16} इलेक्ट्रॉन गुजर रहे हैं। (इलेक्ट्रॉन पर आवेश $e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम)

हलः $n = 1.6 \times 10^{16}$ इलेक्ट्रॉन, $e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम, $t = 1$ सेकंड, $I = ?$

$$I = \frac{q}{t} = \frac{ne}{t}$$

$$I = \frac{(1.6 \times 10^{16}) \times (1.6 \times 10^{-19})}{1}$$

$I = \mathbf{2.56 \times 10^{-3}}$ **ऐम्पियर** उत्तर

प्रश्न 16. एक चालक से होकर एक मिनट में 150 कूलॉम आवेश गुजरता है। चालक में बहने वाली विद्युत धारा कितनी होगी?

हलः $q = 150$ कूलॉम, $t = 1$ मिनट $= 60$ सेकंड, $I = ?$

$$I = \frac{q}{t} = \frac{150}{60} = 2.5$$

$I = \mathbf{2.5}$ **ऐम्पियर** उत्तर

प्रश्न 17. दिए गए विद्युत परिपथ में सेल का आंतरिक प्रतिरोध 5 ओम है तथा विद्युत वाहक बल 29 वोल्ट है। ज्ञात कीजिए-

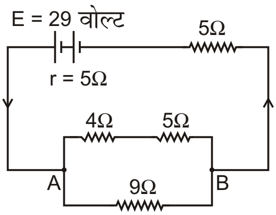

(a) परिपथ का संपूर्ण प्रतिरोध,

(b) परिपथ की धारा

(c) बिंदुओं A व B के बीच विभवांतर।

हलः (a) बिंदु A व B के बीच

श्रेणीक्रम में जुड़े प्रतिरोध का तुल्य $R' = R_1 + R_2 = 4 + 5 = 9\Omega$

अब A व B के बीच समांतर क्रम में जुड़े प्रतिरोध का तुल्य प्रतिरोध

$$\frac{1}{R''} = \frac{1}{R'} + \frac{1}{R_3} = \frac{1}{9} + \frac{1}{9} = \frac{1+1}{9} = \frac{2}{9}$$

$$R'' = \frac{9}{2} = 4.5\Omega$$

अत: परिपथ का संपूर्ण प्रतिरोध

$R = R'' + R_4 + r$ [$r =$ आंतरिक प्रतिरोध $= 5\Omega$]

$R = 4.5 + 5 + 5$

$R = \mathbf{14.5\ \Omega}$

(b) $V = 29$ वोल्ट, $R = 14.5\ \Omega$, $I = ?$

$$I = \frac{V}{R} = \frac{29}{14.5} = 2$$

$I = \mathbf{2}$ **ऐम्पियर**

(c) बिंदुओं A व B के बीच विभवांतर $V = ?, R'' = 4.5\ \Omega, I = 2$ ऐम्पियर

$$V = IR''$$
$$V = 2 \times 4.5$$
$$V = \mathbf{9}\ \textbf{वोल्ट}$$ उत्तर

प्रश्न 18. दिए गए विद्युत परिपथ में प्रवाहित धारा तथा 10 ओम प्रतिरोध के सिरों के बीच विभवांतर की गणना कीजिए।

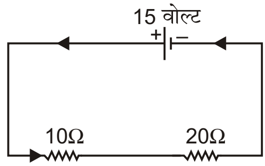

हलः $R_1 = 10\Omega, R_2 = 20\Omega, V = 15$ वोल्ट

अतः परिपथ का संपूर्ण प्रतिरोध

$$R = R_1 + R_2 = 10 + 20$$
$$R = 30\Omega$$
$$I = \frac{V}{R} = \frac{15}{30} = 0.5$$
$$I = 0.5 \text{ ऐम्पियर}$$

प्रतिरोध 10Ω के सिरों के बीच विभवांतर

$I = 0.5$ ऐम्पियर, $R = 10\Omega, V = ?$

$$V = IR$$
$$= 0.5 \times 10 = \mathbf{5}\ \textbf{वोल्ट}$$ उत्तर

प्रश्न 19. संलग्न परिपथ में सेल द्वारा प्रवाहित धारा (I) की गणना कीजिए।

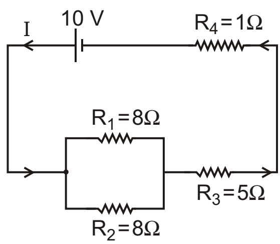

हलः R_1 व R_2 का तुल्य प्रतिरोध,

$$\frac{1}{R'} = \frac{1}{R_1} + \frac{1}{R_2}$$
$$\frac{1}{R'} = \frac{1}{8} + \frac{1}{8} = \frac{1+1}{8} = \frac{2}{8}$$
$$R' = \frac{8}{2} = 4\Omega$$

अतः परिपथ का संपूर्ण प्रतिरोध,

$$R = R' + R_3 + R_4 = 4 + 5 + 1 = 10\Omega$$
$$V = 10 \text{ वोल्ट}, R = 10 \text{ ओम}, I = ?$$
$$I = \frac{V}{R} = \frac{10}{10} = \mathbf{1}\ \textbf{ऐम्पियर}$$ उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. श्रेणीक्रम में जुड़े दो चालकों के समकक्षी प्रतिरोध ज्ञात करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. दो प्रतिरोधकों का तुल्य प्रतिरोध ज्ञात करना, जबकि दोनों पार्श्वक्रम में संयोजित हों।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

◘◘◘

7 विद्युत धारा का ऊष्मीय प्रभाव

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विद्युत ऊर्जा से आप क्या समझते हैं? निम्नलिखित पदों में विद्युत ऊर्जा के सूत्र व्यक्त कीजिए-

(a) विद्युत ऊर्जा, विभवांतर व धारा

(b) विद्युत ऊर्जा, धारा व प्रतिरोध

(c) विद्युत ऊर्जा, विभवांतर व प्रतिरोध

उत्तर- विद्युत ऊर्जा- किसी चालक में विद्युत आवेश के प्रवाहित होने से जो ऊर्जा व्यय होती है, उसे विद्युत ऊर्जा कहते हैं।

विभवांतर की परिभाषा के अनुसार, 1 कूलॉम आवेश को 1 वोल्ट विभवांतर पर किसी चालक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ले जाने में 1 जूल कार्य करना पड़ता है अथवा 1 जूल ऊर्जा व्यय होती है। अत: यदि किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर V वोल्ट हो, तो q कूलॉम आवेश को चालक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ले जाने में $V \times q$ जूल कार्य करना पड़ेगा (अथवा $V \times q$ जूल ऊर्जा व्यय होगी)।

इस प्रकार किया गया कार्य अथवा व्यय विद्युत ऊर्जा

$$W = V \times q \text{ जूल}$$

(a) विद्युत ऊर्जा, विभवांतर तथा धारा के पदों में- माना कि किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर V वोल्ट है तथा इसमें I ऐम्पियर की धारा t सेकंड तक प्रवाहित होती है। तब चालक में t सेकंड में प्रवाहित आवेश

$$q = I \times t \text{ कूलॉम}$$

अत: चालक में t सेकंड में व्यय हुई विद्युत ऊर्जा

$$W = V \times q = V \times I \times t \text{ कूलॉम}$$

अथवा $$W = VIt \text{ जूल} \quad ...(i)$$

(b) विद्युत ऊर्जा, धारा तथा प्रतिरोध के पदों में- यदि चालक का प्रतिरोध R ओम हो, तो ओम के नियमानुसार,

$$V = IR$$

V का मान समीकरण (i) में रखने पर,

$$W = I^2 Rt \text{ जूल} \quad ...(ii)$$

(c) विद्युत ऊर्जा, विभवांतर तथा प्रतिरोध के पदों में- पुन: ओम के नियम से,

$$I = \frac{V}{R}$$

I का मान समीकरण (i) में रखने पर,

$$W = \frac{V^2 t}{R} \text{ जूल}$$

प्रश्न 2. विद्युत धारा के ऊष्मीय प्रभाव को सूत्रों सहित समझाइए।

उत्तर– विद्युत धारा का ऊष्मीय प्रभाव– जब किसी चालक तार में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है, तो उसमें स्थित मुक्त इलेक्ट्रॉनों की चालक तार के परमाणुओं में टक्कर होती है। इन टक्करों में इलेक्ट्रॉनों की गतिज ऊर्जा का अधिकांश भाग परमाणुओं को स्थानांतरित हो जाता है। ऊर्जा के इस स्थानांतरण से चालक तार की गतिज ऊर्जा बढ़ जाती है, जिससे चालक तार का ताप बढ़ जाता है। अत: विद्युत धारा के प्रवाह से किसी चालक तार के ताप बढ़ने की घटना को विद्युत धारा का ऊष्मीय प्रभाव कहते हैं।

चालक में उत्पन्न ऊष्मा की माप– यदि चालक में व्यय विद्युत ऊर्जा का रूपांतरण यांत्रिक कार्य, रासायनिक ऊर्जा आदि में न हुआ हो, तो ऊष्मीय ऊर्जा में होता है।

माना R ओम के किसी चालक तार के सिरों के बीच विभवांतर V वोल्ट है। जब इसमें I ऐम्पियर की विद्युत धारा t सेकंड तक प्रवाहित की जाती है, तो चालक में व्यय विद्युत ऊर्जा

$$W = VIt$$

क्योंकि यह विद्युत ऊर्जा, ऊष्मा के रूप में उत्पन्न होती है तथा ऊष्मा की माप कैलोरी के रूप में की जाती है। इसलिए

$$W \text{ जूल} = W/4.2 \text{ कैलोरी} \quad [\because 1 \text{ जूल} = (1/4.2) \text{ कैलोरी}]$$

अत: चालक तार में t सेकंड में उत्पन्न ऊष्मा

(i) विभवांतर व धारा के पदों में,

$$H = W/4.2 = (VIt/4.2) \text{ कैलोरी}$$

(ii) विद्युत धारा एवं प्रतिरोध के पदों में,

$$W = I^2Rt \text{ जूल}$$

$$H = \frac{I^2Rt}{4.2} \text{ कैलोरी}$$

(iii) विभवांतर एवं प्रतिरोध के पदों में,

$$W = (V^2t/R) \text{ जूल}$$

$$H = \frac{V^2t}{4.2R} \text{ कैलोरी}$$

अत: जब ऊष्मा की माप कैलोरी में की जाए, तब t सेकंड में उत्पन्न ऊष्मा,

$$H = \frac{W}{J} = \frac{VIt}{4.2} = \frac{V^2t}{4.2R} = \frac{I^2Rt}{4.2} \text{ कैलोरी}$$

उपर्युक्त सूत्र से स्पष्ट है कि किसी चालक तार में,

(a) यदि प्रतिरोध R तथा समय t नियत है, तो उत्पन्न ऊष्मा विद्युत धारा के वर्ग के अनुक्रमानुपाती होती है।

अर्थात् $\quad H \propto I^2$

(b) यदि विद्युत धारा I एवं प्रतिरोध R नियत हैं, तो उत्पन्न ऊष्मा समय (t) के अनुक्रमानुपाती होती है।

अर्थात् $\quad H \propto t$

(c) यदि विद्युत धारा I एवं समय t नियत हैं, तो उत्पन्न ऊष्मा प्रतिरोध (R) के अनुक्रमानुपाती होती है।

अर्थात् $\quad H \propto R$

इस प्रकार, उपर्युक्त तीनों नियम जूल के ऊष्मीय उत्पादन नियम कहलाते हैं।

प्रश्न 3. विद्युत शक्ति या सामर्थ्य से आप क्या समझते हैं? निम्नलिखित पदों में विद्युत शक्ति के सूत्र व्यक्त कीजिए-
(a) विद्युत शक्ति, विभवांतर व धारा (b) विद्युत शक्ति, धारा व प्रतिरोध
(c) विद्युत शक्ति, विभवांतर व प्रतिरोध

उत्तर- विद्युत शक्ति या सामर्थ्य- किसी विद्युत परिपथ में धारा प्रवाहित करने पर, उसमें प्रतिरोध के कारण विद्युत ऊर्जा व्यय होती है। किसी परिपथ में विद्युत ऊर्जा के व्यय की समय दर को विद्युत शक्ति कहते हैं।

अर्थात् $$\text{विद्युत शक्ति} = \frac{\text{व्यय विद्युत ऊर्जा}}{\text{समय}}$$

यदि किसी विद्युत परिपथ में t सेकंड में व्यय विद्युत ऊर्जा W जूल हो, तो परिपथ की विद्युत शक्ति

$$P = \frac{W \text{ जूल}}{t \text{ सेकंड}}$$

$$= \frac{W}{t} \text{ जूल/सेकंड} = \frac{W}{t} \text{ वाट} \quad ...(i)$$

विद्युत शक्ति का मापन- परिपथ में R प्रतिरोध के किसी चालक के सिरों पर विभवांतर V आरोपित करने पर I धारा प्रवाहित होती है, तो t समय में व्यय विद्युत ऊर्जा

$$W = VIt = I^2Rt$$

$$= (V^2 / R)t \quad ...(ii)$$

(a) विद्युत शक्ति, विभवांतर व धारा के पदों में- यदि परिपथ में दो बिंदुओं के बीच विभवांतर V लगाने पर प्रवाहित धारा I हो, तो

समीकरण (ii) से $W = VIt$ का मान समीकरण (i) में रखने पर,

$$\text{विद्युत शक्ति } P = V \times I \text{ वाट} \quad ...(iii)$$

(b) विद्युत शक्ति, धारा व प्रतिरोध के पदों में- ओम के नियम से, $V = IR$ का मान समीकरण (iii) में रखने पर,

$$P = I^2R \text{ वाट} \quad ...(iv)$$

(c) विद्युत शक्ति, प्रतिरोध व विभवांतर के पदों में- पुन: ओम के नियम से, $I = V / R$ का मान समीकरण (iii) में रखने पर,

$$P = V \times V / R = V^2 / R \text{ वाट} \quad ...(v)$$

उपर्युक्त समीकरणों (iii), (iv) व (v) में से किसी एक समीकरण की सहायता से विद्युत शक्ति का मान ज्ञात कर सकते हैं।

प्रश्न 4. वाट-घंटा से आप क्या समझते हैं? किलोवाट-घंटा व जूल में संबंध स्थापित कीजिए।

उत्तर- वाट-घंटा- घरों तथा कामकाज के स्थान पर खर्च होने वाली विद्युत का मूल्य विद्युत ऊर्जा के आधार पर निकाला जाता है। इसके लिए विद्युत ऊर्जा का मात्रक वाट-घंटा या किलोवाट-घंटा लेते हैं। इसे बोर्ड ऑफ ट्रेड यूनिट (B.T.U.) भी कहते हैं। साधारण भाषा में इसे यूनिट कहा जाता है।

1 वाट-घंटा- वह विद्युत ऊर्जा जो 1 वाट की सामर्थ्य वाले परिपथ में 1 घंटे में व्यय होती है, 1 वाट-घंटा कहलाती है।

1 वाट-घंटा = 3600 जूल

किलोवाट-घंटा– किसी परिपथ में जुड़े 1 किलोवाट के उपकरण में 1 घंटे में व्यय होने वाली विद्युत ऊर्जा 1 किलोवाट-घंटा अथवा 1 यूनिट कहलाती है। **या** 1 किलोवाट विद्युत सामर्थ्य वाले परिपथ में 1 घंटे में जितनी विद्युत ऊर्जा व्यय होती है, वह 1 यूनिट या 1 किलोवाट-घंटा कहलाती है।

अत: 1 किलोवाट घंटा = 1 किलोवाट × 1 घंटा

यदि किसी परिपथ में V वोल्ट के विभवांतर पर I ऐम्पियर की धारा t घंटे तक प्रवाहित की जाए, तो परिपथ में व्यय ऊर्जा

$$= \text{विद्युत शक्ति} \times \text{समय}$$

$$= VI \times t \text{ वाट घंटा}$$

$$= \frac{VI}{1000} t \text{ किलोवाट घंटा}$$

$$\text{अत: किलोवाट-घंटा या यूनिटों की संख्या} = \frac{\text{वोल्ट} \times \text{ऐम्पियर} \times \text{घंटे}}{1000}$$

$$= \frac{\text{वाट} \times \text{घंटे}}{1000}$$

किलोवाट-घंटा तथा जूल में संबंध–

$$1 \text{ किलोवाट-घंटा} = 1000 \text{ वाट} \times 1 \text{ घंटा}$$

$$= 1000 \frac{\text{जूल}}{\text{सेकंड}} \times 3600 \text{ सेकंड}$$

$$= 3600 \times 1000 \text{ जूल}$$

$$= 3.6 \times 10^6 \text{ जूल}$$

प्रश्न 5. विद्युत बल्ब व विद्युत ऊष्मक के कार्य सिद्धांत व रचना का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– (i) **विद्युत बल्ब–** विद्युत बल्ब विद्युत धारा के ऊष्मीय प्रभाव पर आधारित है। जब इसके तंतु में धारा प्रवाहित होती है तो वह गर्म हो जाता है। इस प्रक्रिया में तंतु का ताप 1500°C से 2500°C तक बढ़ जाता है तथा वह प्रकाश देने लगता है।

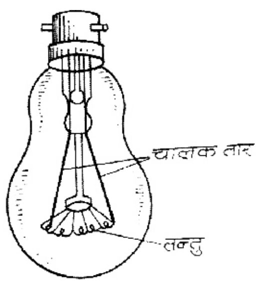

रचना– विद्युत बल्ब काँच का एक खोखला गोला होता है, जिसके अंदर की वायु निकालकर निर्वात् उत्पन्न कर देते हैं। बल्ब के ऊपरी भाग पर पीतल की एक टोपी चढ़ी रहती है। जिसके दोनों ओर दो पिनें लगी होती हैं। टोपी के मुँह को चपड़ा भर कर सील बंद कर देते हैं। चपड़े में जस्ते के दो टांके लगे होते हैं। टांकों का संबंध दो मोटे तारों से होता है। ये तार एक काँच की नली में से होकर बल्ब के अंदर इस प्रकार ले जाए जाते हैं कि आपस में एक दूसरे को स्पर्श न करें। इनके भीतरी सिरों के बीच टंगस्टन का एक बारीक तार जुड़ा होता है जिसे तंतु कहते हैं। टंगस्टन का गलनांक बहुत ऊँचा (3400°C) होता है। अत: जब तंतु में विद्युत धारा बहती है तो यह श्वेत-तप्त होकर श्वेत प्रकाश देने लगता है। इस बल्ब में यह दोष है कि 2100°C से ऊँचे ताप पर टंगस्टन धीरे-धीरे वाष्पित होकर बल्ब की दीवार पर जम जाता है जिससे बाहर आने वाला प्रकाश धुँधला पड़ जाता है।

बल्ब में निष्क्रिय गैस भरना– साधारण व कम सामर्थ्य के बल्बों में निर्वात होता है। परंतु ऊँची सामर्थ्य के बल्बों में कोई निष्क्रिय गैस, जैसे— नाइट्रोजन अथवा

आर्गन भरी होती है। इससे तंतु का वाष्पीकरण नहीं होता तथा लैम्प की दक्षता बढ़ जाती है।

विद्युत बल्ब में से वायु को निकाल देना आवश्यक है अन्यथा तंतु गैस गर्म होने पर वायु की ऑक्सीजन से संयोग करके जल जाएगा। निष्क्रिय गैसों की उपस्थिति में ऐसा नहीं होता।

गैस वाले बल्बों में तंतु को सर्पिलाकार कुंडली के रूप में बनाते हैं। इसका यह लाभ है कि धरातल कम होने के कारण इसके संपर्क में कम गैस आती है जिससे संवहन व चालन द्वारा ऊष्मा-हानि कम होती है।

सामान्यत: बल्ब में व्यय विद्युत ऊर्जा का लगभग 5% भाग ही प्रकाश में बदलता है। शेष ऊर्जा ऊष्मा में बदल जाती है, जो विकिरण द्वारा बल्ब से निकल जाती है।

आजकल घरों में प्रकाश के लिए विद्युत बल्ब के स्थान पर प्रतिदीप्ति नलिका अथवा ट्यूबलाइट का भी उपयोग होता है। इस नलिका में विद्युत ऊर्जा कम व्यय होती है। परंतु इसमें प्रतिदीप्ति द्वारा प्रकाश अधिक उत्पन्न होता है।

(ii) विद्युत ऊष्मक– घरों में खाना बनाने के लिए तथा जल गर्म करने इत्यादि के लिए विद्युत ऊष्मक का प्रयोग करते हैं। विद्युत ऊष्मक में नाइक्रोम का एक सर्पिलाकार तार होता है, जो चीनी मिट्टी की प्लेट पर बने खाँचों में रखा रहता है, इसे तापक तार कहते हैं। तार के दोनों सिरे, प्लेट पर लगे दो संबंध पेंचों A व B से जुड़े रहते हैं। तापक तार के सर्पिलाकार होने से तार की बहुत बड़ी लंबाई थोड़े से स्थान में आ जाती है और काफी ऊष्मा मिल जाती है।

कार्यविधि– जब संबंध पेंचों A व B के द्वारा तापक तार में धारा भेजी जाती है, तो तार लाल तप्त हो जाता है तथा इससे बहुत अधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है। इस ऊष्मा का उपयोग खाना बनाने में व जल को गर्म करने में किया जाता है। हीटर के तार का ताप 800ºC से 1000ºC तक हो जाता है। विद्युत हीटर में विद्युत ऊर्जा, ऊष्मीय ऊर्जा में बदलती है। छड़ ऊष्मक, विद्युत इस्त्री, विद्युत विकिरण विद्युत ऊष्मक के ही विभिन्न स्वरूप हैं।

प्रश्न 6. परिपथ में फ्यूज की उपयोगिता बताइए।

उत्तर– फ्यूज– जब कभी घरों में बिजली की डोरी के दोनों तार एक दूसरे से छू जाते हैं, अथवा बिजली के बहुत सारे उपकरण एक साथ चालू कर दिए जाते हैं, तब परिपथ का विद्युत प्रतिरोध एकदम गिर जाता है तथा परिपथ में बहुत अधिक धारा बहती है। इससे इतनी अधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है कि परिपथ के तारों में आग लग सकती है। कभी-कभी किसी उपकरण की खराबी के कारण भी उसमें बहुत अधिक धारा आ जाती है जिससे उपकरण जल सकता है। इस प्रकार के खतरों से बचने के लिए विभिन्न परिपथों की वायरिंग में फ्यूज-तार लगाए जाते हैं।

फ्यूज-तार ताँबे, टिन व सीसे की मिश्र धातु का एक छोटा-सा तार है जो कि चीनी-मिट्टी के होल्डर पर दो धात्विक टर्मिनलों के बीच खिंचा रहता है। इसका गलनांक ताँबे के सापेक्ष बहुत नीचा होता है। इसे परिपथ के किसी एक संयोजक तार के श्रेणीक्रम में लगा देते हैं। फ्यूज-तार की मोटाई ऐसी चुनी जाती है कि जब परिपथ में किसी कारण से धारा का मान एक निर्धारित मान से ऊँचा हो जाता है तो फ्यूज-तार तुरंत गर्म होकर पिघल जाता है और परिपथ को तोड़ देता है। इससे धारा तुरंत रुक जाती है।

प्रश्न 7. घरेलू वायरिंग तथा इसमें प्रयुक्त सामान्य युक्तियों का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- घर के एक फेज वाले सरल घरेलू वायरिंग का समायोजन प्रदर्शित है। इसमें प्रयुक्त सामान्य युक्तियाँ निम्नलिखित हैं—

(i) मेन लाइन की दो तारें- बिजली घर से घर तक दो तार L व N खींचे जाते हैं। L फेज तार या जीवित तार है तथा N न्यूट्रन या उदासीन तार है। N को पृथ्वी से संबंधित करके, इसका विभव शून्य कर दिया जाता है जबकि फेज तार में 220 वोल्ट पर प्रत्यावर्ती धारा सप्लाई की जाती है। इस प्रत्यावर्ती धारा की आवृत्ति 50 हर्ट्ज है।

(ii) विद्युत मीटर या वाट-घंटा मीटर- विद्युत उत्पादन गृह से आने वाले तारों का संबंध घर के विद्युत परिपथ से करने के पूर्व सबसे पहले श्रेणीक्रम में वाट-घंटा मीटर से किया जाता है, जो कि घर में प्रयोग की जाने वाली समस्त विद्युत ऊर्जा का मापन करता है। उत्पादन गृह से आने वाले दो तारों को वाट-घंटा मीटर पर INPUT या IN लिखे टर्मिनलों से जोड़ा जाता है। OUTPUT या OUT लिखे टर्मिनलों का संबंध घर के मुख्य स्विच से किया जाता है। इसके द्वारा घर में व्यय हुई ऊर्जा की माप सीधे यूनिटों में की जाती है।

(iii) मुख्य स्विच- इसमें अधिक ऐम्पियर की धारा प्रवाहित कर सकने वाले दो स्विच एक साथ होते हैं, जिनमें से एक मीटर से आए फेज Live या Phase (L) तार से तथा दूसरा उदासीन (N) तार से जोड़ दिया जाता है। दोनों स्विच एक साथ खोले या बंद किए जा सकते हैं। स्विच को ऑफ (OFF) रखने पर घर के परिपथ का संबंध मेंस से टूट जाता है।

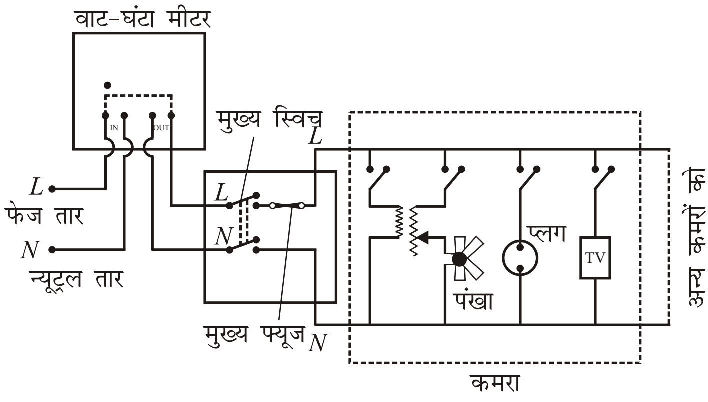

(iv) मुख्य फ्यूज- मुख्य स्विच के बाद परिपथ में एक मुख्य फ्यूज लगाया जाता है। यह फेज या जीवित तार में लगाया जाता है। फ्यूज घर के पूरे परिपथ या किसी भी भाग में दोष आ जाने के कारण धारा बहुत बढ़ जाने पर जल जाते हैं तथा बाहर के मेंस से घर का संबंध विच्छेद कर देते हैं। ये फ्यूज तार चीनी मिट्टी के बने दो फ्रेमों में लगे होते हैं, जिन्हें किट-कैट कहते हैं। फ्यूज गल जाने पर फ्रेमों को बोर्ड से अलग निकालकर उनमें नया तार लगाया जा सकता है। मुख्य फ्यूज के दूसरे सिरे से लगे या तार तथा दूसरे उदासीन तार को घर के कमरों में ले जाया जाता है। सभी विद्युत उपकरणों का संबंध इन्हीं तारों से किया जाता है। इन तारों की वोल्टता अथवा विद्युत वाहक बल 220 वोल्ट से 240 वोल्ट के बीच रहता है। इन्हें संयुक्त रूप से विद्युत मेंस कहते हैं।

(v) घरों में प्रयुक्त विभिन्न विद्युत उपकरणों का संयोजन– घर में प्रयुक्त सभी विद्युत उपकरण; जैसे— विद्युत बल्ब, पंखे, टी०वी०, कूलर आदि को परस्पर समांतर क्रम में जोड़ते हैं। प्रत्येक उपकरण फेज तार व न्यूट्रल तार के बीच जुड़ा होता है तथा प्रत्येक उपकरण का अलग स्विच होता है। प्रत्येक उपकरण के सिरों के बीच वोल्टेज 220 वोल्ट ही रहता है। परिपाटी से फेज तार से लाल रोधन वाला तार तथा न्यूट्रल तार से काले रोधन वाला तार जोड़ते हैं। प्राय: घर के अलग-अलग कमरों के अलग-अलग परिपथ होते हैं; अत: मेन स्विच के निकट वितरण बॉक्स बनाकर अनेक फेज व न्यूट्रल तारें निकालकर उनमें अलग-अलग फ्यूज जोड़ देते हैं। इससे घर के किसी भी भाग में आने वाले फाल्ट का पता चल जाता है तथा शेष घर में विद्युत सप्लाई सुचारु रूप से चलती रहती है।

इनके अलावा घरों में बल्ब होल्डर, प्लग-पिन तथा स्विच भी लगाए जाते हैं, जो फिटिंग में जगह-जगह प्रयुक्त होते हैं।

प्रश्न 8. घरों की वायरिंग के सरल परिपथ का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- घरों की वायरिंग के सरल परिपथ– पावर हाउस से घरों में विद्युत धारा दो मोटे तारों के द्वारा आती है, जिसे 'सर्विस लाइन' कहते हैं। इनमें से एक तार उच्च विभव जैसे 220 वोल्ट पर होता है। इसे 'गर्म तार' कहते हैं। दूसरा तार शून्य विभव पर होता है तथा इसे ठंडा तार कहते हैं। ये तार बिजली के खम्बे से घर की बाहरी दीवार पर लाए जाते हैं, जहाँ से घर की वायरिंग प्रारंभ होती है।

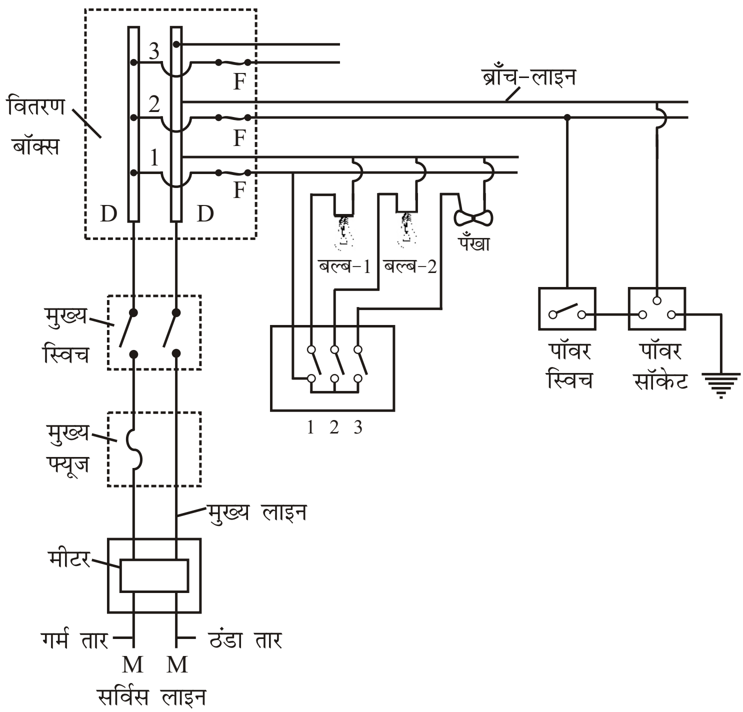

संलग्न चित्र में घर की वायरिंग का एक सरल परिपथ दर्शाया गया है। M, M सर्विस लाइन के तार हैं। इन तारों को सबसे पहले बिजली के मीटर में ले जाया जाता है जो कि घर में खर्च होने वाली विद्युत ऊर्जा की माप करता है। मीटर के बाद, सर्विस लाइन को

'मुख्य लाइन' कहते हैं। इसके गर्म तार में ऊँची ऐम्पियरेज का मुख्य फ्यूज लगाया जाता है। तत्पश्चात् दोनों तारों को मुख्य स्विच से जोड़ दिया जाता है। इस स्विच के द्वारा पूरे घर में जाने वाली विद्युत धारा को एक साथ चालू किया जा सकता है अथवा एक साथ रोका जा सकता है। मुख्य स्विच से दोनों तारों को 'वितरण बॉक्स' में ले जाया जाता है। इस बॉक्स में धातु की दो मोटी छड़ें D, D जुड़ी रहती हैं जिनसे मुख्य लाइन के दोनों तारों को जोड़ दिया जाता है

वितरण बॉक्स- अब इन छड़ों से कई ब्राँच-लाइनें ली जाती हैं जो कि घर के अलग-अलग भागों में अथवा अलग-अलग मंजिलों में ले जाई जाती हैं। प्रत्येक ब्राँच लाइन के गर्म तार में फ्यूज F लगाया जाता है। इस प्रकार एक ही घर में बिजली के कई परिपथ बना लिए जाते हैं। उपर्युक्त चित्र में तीन ब्राँच लाइनें $1, 2, 3$ दिखाई गई हैं। इनमें से एक ब्राँच लाइन में कुछ बल्ब व पंखे परस्पर समांतर क्रम में जोड़ दिए जाते हैं। प्रत्येक बल्ब व पंखे का अपना अलग-अलग स्विच होता है जो कि सदैव गर्म तार में लगाया जाता है। इस ब्राँच की वायरिंग के लिए तार तथा फ्यूज ऐसे लिए जाते हैं कि यदि सारे बल्ब व पंखे एक साथ चालू कर दिए जाएँ तो इनमें जाने वाली समस्त धारा से तार बहुत अधिक गर्म न हों तथा फ्यूज तार न पिघले।

यदि किसी कमरे में हीटर, इस्त्री इत्यादि जोड़ने के लिए पावर सर्किट लगाना हो तो इसके लिए वितरण बॉक्स से दूसरी ब्राँच लाइन लाई जाती है। इस लाइन में, बल्ब व पंखे वाली लाइन की अपेक्षा मोटा तार तथा मोटा फ्यूज लगाया जाता है क्योंकि हीटर कहीं अधिक धारा लेता है।

प्रश्न 9. विद्युत से खतरे व सुरक्षा की युक्तियों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- विद्युत से खतरे व सुरक्षा की युक्तियाँ- यद्यपि विद्युत सबसे महत्वपूर्ण तथा सुविधाजनक ऊर्जा स्रोत है, लेकिन यदि विद्युत ऊर्जा का उपयोग करते समय कुछ सावधानियाँ तथा सुरक्षा उपाय नहीं किए गए तो यह बहुत खतरनाक हो सकती है। जैसे यदि कोई व्यक्ति गर्म तार को छू ले तो उसे तीव्र झटका लगता है। कभी-कभी विद्युत झटके से व्यक्ति की मृत्यु तक हो जाती है। विद्युत परिपथ में कुछ खराबियों जैसे ढीले संबंधन, दोषयुक्त स्विच, खराब तारें, तारों के लघुपथन के कारण चिंगारी उत्पन्न हो सकती है अथवा तारों के अत्यधिक गर्म होने के कारण आग लग सकती है। इस प्रकार के खतरों से बचने के लिए विद्युत परिपथों का प्रयोग करते समय कुछ सावधानियाँ तथा सुरक्षा युक्तियाँ प्रयुक्त की जाती हैं—

(i) आग लगने या अन्य किसी दुर्घटना के होने पर परिपथ का मुख्य स्विच तुरंत बंद कर देना चाहिए।

(ii) स्विचों, प्लगों, सॉकिटों तथा जोड़ों पर सभी संबंधन कसे हुए होने चाहिए। प्रत्येक तार अच्छे किस्म का तथा उपयुक्त मोटाई का और विद्युतरोधी आवरण से ढका होना चाहिए। खराब स्विचों को तुरंत बदल देना चाहिए। सभी जोड़ों को विद्युतरोधी टेप से ढका होना चाहिए।

(iii) यदि परिपथ में कोई मरम्मत करनी हो अथवा उस पर कोई काम करना हो तो रबड़ के बने दस्ताने अथवा जूते पहनने चाहिए। टेस्टर, पेंचकस, प्लास तथा अन्य औजारों पर विद्युतरोधी आवरण होने चाहिए।

(iv) फ्यूज उपयुक्त क्षमता तथा पदार्थ का होना चाहिए। प्राय: संयोजक तारों के टुकड़ों को ही फ्यूज के तार के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता है। यह बहुत खतरनाक प्रवृत्ति है। ऐसे तारों की क्षमता बहुत अधिक होती है और ये आपको लघुपथन तथा अतिभारण से नहीं बचा पाते हैं।

(v) प्रत्यावर्ती धारा परिपथों में फ्यूज तथा स्विचों को सदैव गर्म तार में लगाना चाहिए। विद्युत उपकरणों को प्रयुक्त करते समय भूसंपर्कित तार का उपयोग अवश्य करना चाहिए। हीटर तथा इस्त्री जैसे उपकरणों में जब धारा प्रवाहित हो रही हो तो उसमें धातु से बने आवरण को नहीं छूना चाहिए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विद्युत धारा के ऊष्मीय प्रभाव से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- जब किसी चालक तार में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है, तो उसमें स्थित मुक्त इलेक्ट्रॉनों की चालक तार के परमाणुओं में टक्कर होती है। इन टक्करों में इलेक्ट्रॉनों की गतिज ऊर्जा का अधिकांश भाग परमाणुओं को स्थानांतरित हो जाता है। ऊर्जा के इस स्थानांतरण से चालक तार की गतिज ऊर्जा बढ़ जाती है, जिससे चालक तार का ताप बढ़ जाता है। अत: विद्युत धारा के प्रवाह से किसी चालक तार के ताप बढ़ने की घटना को विद्युत धारा का ऊष्मीय प्रभाव कहते हैं।

प्रश्न 2. विद्युत सामर्थ्य (शक्ति) से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- **विद्युत सामर्थ्य (शक्ति) -** किसी विद्युत परिपथ में धारा प्रवाहित करने पर, उसमें प्रतिरोध के कारण विद्युत ऊर्जा व्यय होती है। किसी परिपथ में विद्युत ऊर्जा के व्यय की समय दर को विद्युत शक्ति कहते हैं।

अर्थात् $$\text{विद्युत शक्ति} = \frac{\text{व्यय विद्युत ऊर्जा}}{\text{समय}}$$

यदि किसी विद्युत परिपथ में t सेकंड में व्यय विद्युत ऊर्जा W जूल हो, तो परिपथ की विद्युत शक्ति

$$P = \frac{W \text{ जूल}}{t \text{ सेकंड}}$$

$$= \frac{W}{t} \text{ जूल/सेकंड} = \frac{W}{t} \text{ वाट}$$

प्रश्न 3. विद्युत ऊर्जा का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- **विद्युत ऊर्जा-** किसी चालक में विद्युत आवेश के प्रवाहित होने से जो ऊर्जा व्यय होती है, उसे विद्युत ऊर्जा कहते हैं।

विभवांतर की परिभाषा के अनुसार, 1 कूलॉम आवेश को 1 वोल्ट विभवांतर पर किसी चालक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ले जाने में 1 जूल कार्य करना पड़ता है अथवा 1 जूल ऊर्जा व्यय होती है। अत: यदि किसी चालक के सिरों के बीच विभवांतर V वोल्ट हो, तो q कूलॉम आवेश को चालक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ले जाने में $V \times q$ जूल कार्य करना पड़ेगा। इस प्रकार किया गया कार्य अथवा व्यय विद्युत ऊर्जा

$$W = V \times q \text{ जूल}$$

प्रश्न 4. विद्युत ऊर्जा के कौन-कौन से मात्रक हैं?

उत्तर- घरों तथा कामकाज के स्थान पर खर्च होने वाली विद्युत का मूल्य विद्युत ऊर्जा के आधार पर निकाला जाता है। इसके लिए विद्युत ऊर्जा का मात्रक वाट-घंटा या किलोवाट-घंटा लेते हैं।

(i) **वाट-घंटा-** वह विद्युत ऊर्जा जो 1 वाट की सामर्थ्य वाले परिपथ में 1 घंटे में व्यय होती है, 1 वाट-घंटा कहलाती है।

$$1 \text{ वाट-घंटा} = 3600 \text{ जूल}$$

(ii) **किलोवाट-घंटा-** 1 किलोवाट विद्युत सामर्थ्य वाले परिपथ में 1 घंटे में जितनी विद्युत ऊर्जा व्यय होती है, वह 1 यूनिट या 1 किलोवाट-घंटा कहलाती है।

$$1 \text{ किलोवाट} = 1 \text{ किलोवाट} \times 1 \text{ घंटा}$$

$$\text{अत: किलोवाट-घंटा या यूनिटों की संख्या} = \frac{\text{वाट} \times \text{घंटे}}{1000}$$

प्रश्न 5. वाट से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- **वाट-** किसी परिपथ में दो सिरों के बीच 1 वोल्ट विभवांतर होने पर 1 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित होती है तो विद्युत शक्ति 1 वाट कहलाती है।

$$1 \text{ अश्व शक्ति} = 746 \text{ वाट}$$

$$1 \text{ किलोवाट} = 1000 \text{ वाट}$$

$$1 \text{ मेगावाट} = 10^6 \text{ वाट}$$

प्रश्न 6. 1 किलोवाट-घंटा या 1 यूनिट किसे कहते हैं?

उत्तर- **1 किलोवाट घंटा या 1 यूनिट-** किसी परिपथ में जुड़े 1 किलोवाट के उपकरण में 1 घंटे में व्यय होने वाली विद्युत ऊर्जा 1 किलोवाट घंटा या 1 यूनिट कहलाती है।

या 1 किलोवाट विद्युत सामर्थ्य वाले परिपथ में 1 घंटे में जितनी विद्युत ऊर्जा व्यय होती है, वह 1 यूनिट या 1 किलोवाट-घंटा कहलाती है।

अत: $1 \text{ किलोवाट-घंटा} = 1 \text{ किलोवाट} \times 1 \text{ घंटा}$

प्रश्न 7. एक किलोवाट-घंटा में कितने जूल होते हैं?

उत्तर- एक किलोवाट-घंटा या 1 यूनिट में 3.6×10^6 जूल होते हैं।

प्रश्न 8. वाट-घंटा से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- **वाट-घंटा-** वह विद्युत ऊर्जा जो 1 वाट की सामर्थ्य वाले परिपथ में 1 घंटे में व्यय होती है, 1 वाट-घंटा कहलाती है।

$$1 \text{ वाट-घंटा} = 3600 \text{ जूल}$$

प्रश्न 9. 1 किलोवाट-घंटा तथा जूल में संबंध स्थापित कीजिए।

उत्तर- **1 किलोवाट-घंटा तथा जूल में संबंध-**

$$1 \text{ किलोवाट-घंटा} = 1000 \text{ वाट} \times 1 \text{ घंटा}$$

$$= 1000 \frac{\text{जूल}}{\text{सेकंड}} \times 3600 \text{ सेकंड}$$

$$= 3600 \times 1000 = 3.6 \times 10^6 \text{ जूल}$$

प्रश्न 10. एक विद्युत बल्ब पर $240V - 60W$ लिखा है। इसका क्या अर्थ है?

उत्तर- यदि किसी बल्ब पर $240V, 60W$ लिखा है तो इसका अर्थ है कि 240 वोल्ट विभवांतर लगाने पर यह 60 जूल विद्युत ऊर्जा को 1 सेकंड में उपयोग करेगा।

प्रश्न 11. एक हीटर पर $1KW - 220V$ अंकित है। इसका क्या अर्थ है?

उत्तर- यदि हीटर पर 1 किलोवाट – 220 वोल्ट अंकित है तो इसका अर्थ है कि हीटर को 220 वोल्ट पर लगाने से इसमें ऊर्जा व्यय की दर 1000 वाट होगी।

प्रश्न 12. इलेक्ट्रॉन वोल्ट क्या होता है? एक इलेक्ट्रॉन वोल्ट में कितने जूल होते हैं?

उत्तर- **इलेक्ट्रॉन वोल्ट-** इलेक्ट्रॉन वोल्ट, कार्य या ऊर्जा का एक बहुत छोटा मात्रक है। 1 इलेक्ट्रॉन-वोल्ट वह कार्य है जो कि किसी इलेक्ट्रॉन को एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक ले जाने में किया जाता है जबकि उन बिंदुओं के बीच 1 वोल्ट विभवांतर हो।

$$1 \text{ इलेक्ट्रॉन-वोल्ट} = 1.6 \times 10^{-19} \text{ जूल}$$

प्रश्न 13. भू-संपर्कन का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **भू-संपर्कन-** घरेलू विद्युत उपकरण; जैसे— हीटर, इस्त्री, फ्रिज आदि के आवरण प्राय: धातु के बने होते हैं। इन उपकरणों का विद्युतरोधन खराब हो जाने के कारण कभी-कभी इनके भीतर की वायरिंग आवरण के संपर्क में आ जाती है। इस स्थिति में यदि विद्युत उपकरण सॉकेट से जुड़ा है और कोई व्यक्ति पृथ्वी के संपर्क में हैं, यदि वह आवरण से छू जाता है, तो उसे बिजली का झटका लगता है। इससे बचने के लिए विद्युत उपकरण के बाहरी आवरण को ताँबे के मोटे तार द्वारा भू-संपर्कित कर देते हैं। आजकल विद्युत उपकरणों को भू-संपर्कित करने के लिए सॉकेटों में तीन टर्मिनल लगाए जाते हैं, जिनमें से मोटे वाले टर्मिनल को भू-संपर्कित किया जाता है। विद्युत उपकरण की डोरी में भी तीन तार होते हैं, जिसमें से एक तार विद्युत उपकरण के आवरण से जोड़ दिया जाता है। शेष दोनों तार L एवं N से जोड़ते हैं। इस डोरी से तीन पिनों वाला प्लग लगाया जाता है। जब तीन पिनों वाले प्लग को सॉकेट में लगाया जाता है, तो डोरी का आवरण से जुड़ा तार सॉकेट के भू-संपर्कित टर्मिनल से जुड़ जाता है और विद्युत उपकरण का आवरण भू-संपर्कित हो जाता है।

प्रश्न 14. फ्यूज तार किस पदार्थ के बनाए जाते हैं?

उत्तर- फ्यूज तार ताँबे, टिन व सीसे की मिश्र धातु का एक छोटा-सा तार है जो कि चीनी मिट्टी के होल्डर पर दो धात्विक टर्मिनलों के बीच खींचा रहता है। इसको किसी एक संयोजक तार के श्रेणीक्रम में लगा देते हैं।

प्रश्न 15. विद्युत बल्ब में कौन-कौन सी गैसें भरी जाती हैं और क्यों?

उत्तर- साधारण व कम सामर्थ्य के बल्बों में निर्वात् होता है। परंतु ऊँची सामर्थ्य के बल्बों में कोई निष्क्रिय गैस, जैसे— नाइट्रोजन या आर्गन भरी होती है। इसमें तंतु का वाष्पीकरण नहीं होता तथा लैम्प की दक्षता बढ़ जाती है।

प्रश्न 16. स्विच व फ्यूज गर्म तार में ही क्यों लगाए जाते हैं?

उत्तर- गर्म तार में उच्च वोल्टेज पर तथा ठंडा तार शून्य वोल्टेज पर होता है। घरों की वायरिंग में प्रत्येक बल्ब व सॉकिट के साथ-साथ एक-एक स्विच लगाते हैं। स्विच को सदैव गर्म तार में ही लगाते हैं, जिसे ऑफ कर देने पर बल्ब या सॉकिट में धारा नहीं जाती। फ्यूज को गर्म तार में लगाने का कारण यह है कि यदि परिपथ में अधिक धारा बढ़ जाती है, तो फ्यूज में लगा तार गर्म होकर पिघल जाता है और परिपथ में धारा का प्रवाह टूट जाता है और घर के उपकरण खराब हो जाने से बच जाते हैं।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 118 देखें।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. 250 वोल्ट, 5 ऐम्पियर फ्यूज वाले परिपथ में 25 वाट के कितने बल्ब जलाए जा सकते हैं?

हल: $I = 5$ ऐम्पियर, $P = 25$ वाट, $V = 250$ वोल्ट, $n = ?$

$$I = \frac{P}{V} = \frac{25}{250} = 0.1 \text{ ऐम्पियर}$$

माना कि 5 ऐम्पियर धारा लेने के लिए परिपथ में n बल्ब लगाए जा सकते हैं। तब

$$n \times 0.1 \text{ ऐम्पियर} = 5 \text{ ऐम्पियर}$$

$$n = \frac{5}{0.1} = 50$$

अत: **बल्बों की संख्या = 50** उत्तर

प्रश्न 2. एक घर में 220*V* – 100 *W* के 5 बल्ब प्रतिदिन 8 घंटे जलते हैं, तो ₹ 4 प्रति यूनिट की दर से एक माह (30 दिन) का खर्च ज्ञात कीजिए।

हल: बल्बों द्वारा एक माह में व्यय ऊर्जा $= \frac{(\text{कुल वाट}) \times (\text{कुल घंटे})}{1000}$

$$= \frac{(100 \times 5) \times (8 \times 30)}{1000}$$

$$= \frac{500 \times 240}{1000} = 120 \text{ यूनिट}$$

अत: कुल खर्च $= 120 \times 4 =$ **₹ 480** उत्तर

प्रश्न 3. 60 वाट सामर्थ्य के विद्युत बल्ब को 10 घंटे प्रतिदिन जलाने पर 30 दिन में कितने जूल ऊर्जा व्यय होगी?

हल: कुल व्यय ऊर्जा $= \frac{(\text{कुल वाट}) \times (\text{कुल घंटे})}{1000}$

$$= \frac{(60 \times 1) \times (10 \times 30)}{1000}$$

$$= \frac{60 \times 300}{1000} = 18 \text{ यूनिट}$$

$$= 18 \times 3.6 \times 10^6 \text{ जूल}$$

$$= 64.8 \times 10^6 \text{ जूल}$$

$$= \mathbf{6.48 \times 10^7} \textbf{ जूल}$$ उत्तर

प्रश्न 4. एक विद्युत बल्ब पर '220*V* – 100*W*' लिखा है। इससे 220 वोल्ट मेंस से जोड़ने पर इसके प्रतिरोध तथा इसमें प्रवाहित होने वाली धारा की गणना कीजिए।

हल: बल्ब में प्रवाहित विद्युत धारा, $I = \frac{P}{V} = \frac{100}{220} = 0.45$ ऐम्पियर

बल्ब के तंतु का प्रतिरोध $R = \frac{V}{I} = \frac{V}{P/V} = \frac{V^2}{P} = \frac{220 \times 220}{100}$

$$R = \mathbf{484\,\Omega}$$ उत्तर

प्रश्न 5. दो बल्बों जिनमें एक पर 100 वाट 220 वोल्ट तथा दूसरे पर 60 वाट 220 वोल्ट लिखा है, तो एक 220 वोल्ट की सप्लाई लाइन से समांतर क्रम में जोड़ा गया है। सप्लाई लाइन से निर्गत धारा की गणना कीजिए।

हल: दोनों बल्बों की कुल सामर्थ्य $(P) = 100 + 60 = 160$ वाट

$$P = 160 \text{ वाट}$$

$$I = \frac{P}{V} = \frac{160}{220} = 0.73$$

सप्लाई लाइन से निर्गत धारा, $I =$ **0.73 ऐम्पियर** उत्तर

प्रश्न 6. 440 वोल्ट एवं 5 ऐम्पियर धारा का मोटर 40 मिनट तक 80% विद्युत ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में बदल देता है। वह कितने किग्रा जल 60 मीटर ऊपर चढ़ा देगा?

हलः $V = 440$ वोल्ट, $I = 5$ ऐम्पियर, $t = 40$ मिनट $= 40 \times 60$ सेकंड $= 2400$ सेकंड, $h = 60$ मीटर

मोटर की व्यय ऊर्जा, $W = VIt$

$$= 440 \times 5 \times 2400$$

$$= 5280000 \text{ जूल}$$

विद्युत ऊर्जा का जल चढ़ाने में उपयोग

$$W = 5280000 \times \frac{80}{100} = 4224000 \text{ जूल}$$

टंकी में चढ़े जल की स्थितिज ऊर्जा $= mgh$

$$= m \times 10 \times 60$$

$$= 600\,m$$

$$600m = 4224000$$

$$m = \frac{4224000}{600} = 7040$$

अतः टंकी में चढ़े जल की मात्रा $m =$ **7040 किग्रा** उत्तर

प्रश्न 7. एक विद्युत हीटर में 250 वोल्ट विभवांतर पर 4.5 ऐम्पियर धारा प्रवाहित होती है। हीटर की सामर्थ्य की गणना कीजिए।

हलः $V = 250$ वोल्ट, $I = 4.5$ ऐम्पियर, $P = ?$

$$P = VI$$

$$= 250 \times 4.5 = \mathbf{1125} \text{ वाट}$$ उत्तर

प्रश्न 8. एक ऊष्मक का प्रतिरोध 500 ओम है तथा उसमें प्रवाहित धारा 2.0 ऐम्पियर है। ऊष्मक की सामर्थ्य वाट में ज्ञात कीजिए।

हलः $I = 2.0$ ऐम्पियर, $R = 500$ ओम, $P = ?$

$$P = I^2 R$$

$$= 2 \times 2 \times 500$$

$$= \mathbf{2000} \text{ वाट}$$ उत्तर

प्रश्न 9. एक विद्युत हीटर से होकर 250 वोल्ट पर 6 ऐम्पियर की धारा बह रही है। इसका उपयोग 10 मिनट तक किए जाने पर व्यय हुई विद्युत ऊर्जा का परिकलन कीजिए।

हलः $V = 250$ वोल्ट, $I = 6$ ऐम्पियर, $t = 10$ मिनट $= 10 \times 60$ सेकंड $= 600$ सेंकड

$W = ?$

$$W = VIt$$

$$W = 250 \times 6 \times 600$$

$$W = 900000 = \mathbf{9 \times 10^5} \text{ जूल}$$ उत्तर

प्रश्न 10. 10 वोल्ट तथा 0.5 ऐम्पियर के बल्ब से प्रति सेकंड कितने जूल ऊष्मा उत्पन्न होती है?

हलः $I = 0.5$ ऐम्पियर, $V = 10$ वोल्ट, $t = 1$ सेकंड, $W = ?$

$$W = VIt$$

$$W = 10 \times 0.5 \times 1 \text{ जूल}$$

$$W = \mathbf{5} \text{ जूल}$$ उत्तर

प्रश्न 11. एक विद्युत हीटर में 120 वोल्ट विभवांतर पर 12 कूलॉम का आवेश प्रवाहित होता है। हीटर में कितनी ऊर्जा व्यय होगी?

हलः $V = 120$ वोल्ट, $q = 12$ कूलॉम, $W = ?$

$$W = Vq$$
$$W = 120 \times 12 = 1440$$
$$W = \mathbf{1440} \text{ जूल}$$ उत्तर

प्रश्न 12. एक विद्युत बल्ब में 0.55 ऐम्पियर धारा प्रवाहित होने पर इसमें 550 जूल ऊर्जा प्रति सेकंड व्यय होती है तो बल्ब के सिरों पर विभवांतर की गणना कीजिए।

हलः $I = 0.55$ ऐम्पियर, $W = 550$ जूल, $t = 1$ सेकंड, $V = ?$

$$V = \frac{W}{I \times t}$$
$$= \frac{550}{0.55 \times 1}$$
$$V = \mathbf{1000} \text{ वोल्ट}$$ उत्तर

प्रश्न 13. एक विद्युत हीटर में 220 वोल्ट विभवांतर पर 4.5 ऐम्पियर धारा प्रवाहित है। हीटर की सामर्थ्य क्या है?

हलः $V = 220$ वोल्ट, $I = 4.5$ ऐम्पियर, $P = ?$

$$P = VI$$
$$P = 220 \times 4.5$$
$$= \mathbf{990} \text{ वाट}$$ उत्तर

प्रश्न 14. एक विद्युत बल्ब पर 200 वोल्ट, 40 वाट लिखा है। इसको 200 वोल्ट के विद्युत मेंस से लगाने पर कितनी धारा प्रवाहित होगी? बल्ब द्वारा 5 मिनट में कितनी ऊर्जा व्यय होगी?

हलः $P = 40$ वाट, $V = 200$ वोल्ट, $t = 5$ मिनट $= 5 \times 60$ सेकंड $= 300$ सेकंड

$$I = \frac{P}{V} = \frac{40}{200} = 0.2$$
$$I = 0.2 \text{ ऐम्पियर}$$
$$W = VIt$$
$$= 200 \times 0.2 \times 300$$
$$= \mathbf{12000} \text{ जूल}$$ उत्तर

प्रश्न 15. एक बल्ब पर '$200V - 100W$' वोल्ट लिखा है। इसे 200 वोल्ट के मेंस से जलाने पर बल्ब में कितनी धारा बहेगी तथा बल्ब का प्रतिरोध कितना होगा?

हलः $V = 200$ वोल्ट, $P = 100$ वाट, $I = ?$, $R = ?$

$$I = \frac{P}{V} = \frac{100}{200} = 0.5$$
$$I = \mathbf{0.5} \text{ ऐम्पियर}$$
$$R = \frac{P}{I^2} = \frac{100}{0.5 \times 0.5} = 400$$
$$R = \mathbf{400} \text{ ओम}$$ उत्तर

प्रश्न 16. एक विद्युत बल्ब पर 60 वाट, 220 वोल्ट लिखा है। इसका प्रतिरोध क्या है?

हलः $P = 60$ वाट, $V = 220$ वोल्ट, $R = ?$

$$R = \frac{V}{I}$$ (बल्ब के तंतु का प्रतिरोध $= R$)

$$I = \frac{P}{V}$$

$$= \frac{60}{220} = \frac{3}{11}$$ ऐम्पियर

$$R = \frac{220 \times 11}{3}$$

$$= \mathbf{806.7\,\Omega}$$ **(लगभग)** **उत्तर**

प्रश्न 17. एक विद्युत हीटर में 250 वोल्ट विभवांतर पर 4 ऐम्पियर धारा 1 मिनट तक प्रवाहित होती है। हीटर की सामर्थ्य एवं उसमें व्यय हुई विद्युत ऊर्जा की गणना कीजिए।

हलः $I = 4$ ऐम्पियर, $V = 250$ वोल्ट, $t = 1$ मिनट $= 60$ सेकंड

$$P = VI$$

$$P = 250 \times 4 = 1000$$

$$P = 1000$$ वाट **उत्तर**

$$W = VIt$$

$$= 250 \times 4 \times 60$$

$$= \mathbf{60{,}000}$$ **जूल** **उत्तर**

प्रश्न 18. 1.5 किलोवाट सामर्थ्य के हीटर का उपयोग 30 मिनट तक करने में कितनी ऊष्मा प्राप्त होगी?

हलः $P = 1.5$ किलोवाट $= 1.5 \times 10^3$ वाट, $W = ?$

$t = 30$ मिनट $= 30 \times 60 = 1800$ सेकंड

$$W = Pt$$

$$= (1.5 \times 10^3) \times 1800$$

$$= \mathbf{2.7 \times 10^6}$$ **जूल** **उत्तर**

प्रश्न 19. एक विद्युत बल्ब पर '250*V* – 200*W*' लिखा है। इसे 250 वोल्ट के मेंस से जोड़ने पर बल्ब में कितनी धारा प्रवाहित होगी? बल्ब के प्रतिरोध की भी गणना कीजिए।

हलः $P = 200$ वाट, $V = 250$ वोल्ट, $I = ?$, $R = ?$

$$I = \frac{P}{V} = \frac{200}{250}$$

$I = 0.8$ ऐम्पियर

$$R = \frac{V}{I} = \frac{250}{0.8}$$

$R = \mathbf{312.5}$ **ओम** **उत्तर**

प्रश्न 20. 250 वाट सामर्थ्य के एक बल्ब को 6 घंटा जलाने पर व्यय हुई ऊर्जा की गणना किलोवाट-घंटा तथा जूल में कीजिए।

हल: व्यय हुई ऊर्जा (किलोवाट-घंटा में) $= \frac{\text{वाट} \times \text{घंटे}}{1000} = \frac{250 \times 6}{1000}$

$= 1.5$ किलोवाट-घंटा

$= 1.5 \times 3.6 \times 10^6$ जूल

$= \mathbf{5.4 \times 10^6}$ **जूल** उत्तर

प्रश्न 21. एक विद्युत हीटर की सामर्थ्य 1 किलोवाट है। इसे 15 मिनट तक उपयोग में लाने से कितनी ऊष्मा उत्पन्न होगी?

हल: $P = 1$ किलोवाट $= 1000$ वाट, $t = 15$ मिनट $= 15 \times 60$ सेकंड $= 900$ सेकंड

$W = Pt$

$= 1000 \times 900$

$= \mathbf{9 \times 10^5}$ **जूल** उत्तर

प्रश्न 22. एक विद्युत हीटर की सामर्थ्य 1.5 किलोवाट है। इसे 10 मिनट तक उपयोग में लाने पर कितनी ऊष्मा उत्पन्न होगी? ($J = 4.18$ जूल/कैलोरी)

हल: $P = 1.5$ किलोवाट $= 1.5 \times 1000 = 1500$ वाट, $t = 10$ मिनट $= 10 \times 60$ सेकंड $= 600$ सेकंड, $J = 4.18$ जूल/कैलोरी

$W = Pt$

$= 1500 \times 600$

$= 900000$ जूल

अत: हीटर द्वारा उत्पन्न ऊष्मा $= \frac{W}{J}$

$= \frac{900000}{4.18}$ कैलोरी

$= \mathbf{215311}$ **कैलोरी** उत्तर

प्रश्न 23. किसी विद्युत मोटर की सामर्थ्य 7.5 किलोवाट है। इसने 8 घंटा प्रतिदिन की दर से 15 दिन कार्य किया। कितने यूनिट विद्युत ऊर्जा व्यय हुई?

हल: $P = 7.5$ किलोवाट $= 7.5 \times 1000 = 7.5 \times 10^3$ वाट

व्यय विद्युत ऊर्जा $= \frac{\text{वाट} \times \text{घंटा} \times \text{दिन}}{1000}$

$= \frac{7.5 \times 1000 \times 8 \times 15}{1000}$

$= \mathbf{900}$ **यूनिट** उत्तर

प्रश्न 24. एक विद्युत मोटर की सामर्थ्य 5 अश्वशक्ति है। इसे प्रतिदिन 5 घंटे की दर से एक सप्ताह तक प्रयोग में लाने पर कितने यूनिट विद्युत ऊर्जा व्यय हुई?

हल: 1 अश्वशक्ति $= 746$ वाट

व्यय ऊर्जा $= \frac{\text{वाट} \times \text{घंटा} \times \text{दिन}}{1000}$

$= \frac{5 \times 746 \times 5 \times 7}{1000}$

$= \mathbf{130.55}$ **यूनिट** उत्तर

प्रश्न 25. 500 वाट सामर्थ्य के एक बल्ब को 8 घंटा जलाने पर व्यय हुई ऊर्जा की गणना किलोवाट-घंटा तथा जूल में कीजिए।

संकेत- 1 किलोवाट-घण्टा $= 3.6 \times 10^6$ जूल

हल: व्यय हुई ऊर्जा (किलोवाट-घंटा में) $= \dfrac{\text{वाट} \times \text{घंटा}}{1000}$

$$= \frac{500 \times 8}{1000} = 4 \text{ किलोवाट-घंटा}$$

$$= 4 \times 3.6 \times 10^6 \text{ जूल}$$

$$= \mathbf{14.4 \times 10^6} \textbf{ जूल}$$ उत्तर

प्रश्न 26. एक विद्युत हीटर का प्रतिरोध 20 ओम तथा उसकी अधिकतम सामर्थ्य 28.8 वाट है। ज्ञात कीजिए कि हीटर के तंतु से अधिक से अधिक कितनी धारा सुरक्षापूर्वक प्रवाहित की जा सकती है?

हल: दिया है— $R = 20$ ओम, $P = 28.8$ वाट, $I = ?$

$$I^2 = \frac{P}{R} = \frac{28.8}{20}$$

$$I^2 = 1.44$$

$$I = \sqrt{1.44}$$

$$= \mathbf{1.2} \textbf{ ऐम्पियर}$$ उत्तर

प्रश्न 27. 25 वाट के एक बल्ब को 200 वोल्ट के विद्युत मेंस से जोड़ा जाता है।

(a) बल्ब से होकर बहने वाली धारा, तथा

(b) बल्ब के प्रतिरोध का परिकलन कीजिए।

हल: दिया है— $P = 25$ वाट, $V = 200$ वोल्ट, $I = ?, R = ?$

(a) $I = \dfrac{P}{V} = \dfrac{25}{200} = \mathbf{0.125}$ **ऐम्पियर**

(b) $R = \dfrac{V}{I} = \dfrac{200}{0.125} = \mathbf{1600}$ **ओम** उत्तर

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. एक सरल परिपथ का निर्माण करना तथा नाइक्रोम के तार पर धारा के ऊष्मीय प्रभाव का निरीक्षण करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

8 विद्युत धारा का चुंबकीय प्रभाव

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. बल रेखाओं की दिशा ज्ञात करने के कौन-कौन से नियम है? स्पष्ट कीजिए।

या मैक्सवेल के दक्षिणावर्त पेंच का नियम क्या है? किरण आरेख सहित व्याख्या कीजिए।

उत्तर- बल रेखाओं की दिशा ज्ञात करने के नियम इस प्रकार हैं—

(i) दक्षिणावर्ती पेंच का नियम- यदि हम पेंच कसते समय पेंचकस को दाएँ हाथ में पकड़कर इस प्रकार घुमाएँ कि पेंच की नोंक धारा बहने की दिशा में चले तो जिस दिशा में पेंच को घुमाने के लिए अँगूठा घूमता है, वही चुंबकीय बल रेखाओं की दिशा होगी। चित्र में एक तार में विद्युत धारा नीचे से ऊपर की ओर बह रही है। पेंच की नोंक को ऊपर की ओर चलाने के लिए दाहिने हाथ के अँगूठे को वामावर्त दिशा में (ऊपर से देखने पर) चलाना पड़ेगा। यही चुंबकीय बल रेखाओं की दिशा होगी।

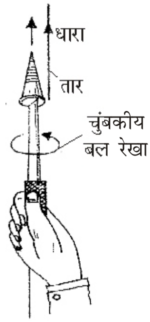

(ii) दाएँ हाथ के अँगूठे का नियम- यदि हम दाएँ हाथ में विद्युत धारा ले जाने वाला तार इस प्रकार पकड़ें कि अंगुलियाँ तार पर लिपटी हों व अँगूठा विद्युत धारा की दिशा में हो तो लिपटी हुई अंगुलियों की दिशा चुंबकीय बल रेखाओं की दिशा होगी।

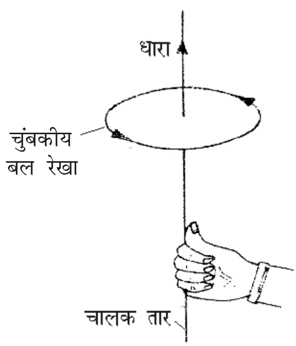

प्रश्न 2. धारावाही परिनालिका में चुंबकीय बल रेखाएँ खींचिए।

उत्तर- धारावाही परिनालिका में चुंबकीय बल रेखाएँ- इसके लिए ताँबे के मोटे तार को एक क्षैतिज गत्ते के सुराखों में से निकालकर परिनालिका के रूप में मोड़ते हैं तथा इसमें सेल से विद्युत धारा प्रवाहित करते हैं। अब गत्ते पर सफेद कागज चिपकाकर कंपास सुई की सहायता से बल रेखाएँ खींचते हैं।

परिनालिका की अक्ष पर बल रेखाओं का समांतर होना यह प्रदर्शित करता है कि

धारावाही परिनालिका का अक्ष पर चुंबकीय क्षेत्र लगभग एकसमान होता है। बल रेखाओं का पास–पास होना यह प्रदर्शित करता है कि वहाँ चुंबकीय क्षेत्र प्रबल है। किनारों पर बल रेखाओं का दूर–दूर होना यह प्रदर्शित करता है कि वहाँ पर चुंबकीय क्षेत्र का मान कम है। चुंबकीय बल रेखाएँ धारावाही परिनालिका के दक्षिणी ध्रुव से अंदर की ओर जाती हैं तथा ध्रुव से बाहर की ओर निकलती है।

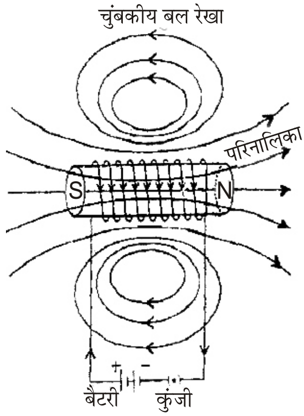

धारावाही परिनालिका के किसी सिरे को सामने से देखने पर यदि विद्युत धारा की दिशा दक्षिणावर्त है, तो सामने का सिरा दक्षिणी ध्रुव होगा और यदि विद्युत धारा की दिशा वामावर्त है, तो सामने का सिरा उत्तरी ध्रुव होगा। चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता धारा की तीव्रता तथा परिनालिका में लूपों की संख्या पर निर्भर करती है।

प्रश्न 3. स्पष्ट कीजिए कि धारावाही परिनालिका छड़ चुंबक के समान व्यवहार करती है।

उत्तर– **धारावाही परिनालिका की छड़ चुंबक से समानता–** धारावाही परिनालिका एवं छड़ चुंबक से निम्नलिखित समानताएँ होती हैं—

(i) छड़ चुंबक एवं धारावाही परिनालिका दोनों को स्वतंत्रतापूर्वक लटकाए जाने पर दोनों के अक्ष उत्तर एवं दक्षिण दिशा में रुकते हैं।

(ii) छड़ चुंबक एवं धारावाही परिनालिका दोनों के निकट कंपास सुई लाने पर सुई विक्षेपित हो जाती है।

(iii) छड़ चुंबक एवं धारावाही परिनालिका दोनों के समान ध्रुवों में प्रतिकर्षण एवं असमान ध्रुवों में आकर्षण होता है।

(iv) छड़ चुंबक एवं स्वतंत्रतापूर्वक लटकी धारावाही परिनालिका के निकट कोई धारावाही तार लाने पर दोनों विक्षेपित हो जाते हैं।

(iv) छड़ चुंबक एवं धारावाही परिनालिका दोनों लोहे के छोटे–छोटे टुकड़ों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

प्रश्न 4. सीधे धारावाही तार के चुंबकीय क्षेत्र को चित्र सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– **सीधे धारावाही चालक द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र–** जब किसी तार में धारा प्रवाहित की जाती है, तो उसके चारों ओर चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की बल रेखाओं को लोहे के बुरादे या कंपास सुई की सहायता से खींच सकते हैं।

प्रयोग– इसके लिए एक कार्ड बोर्ड को क्षैतिज आधार पर रखते हैं तथा उसके बीच में एक छेद करके एक चालक तार AB को सीधा ऊर्ध्वाधर निकालते हैं। कार्ड बोर्ड पर सफेद कागज फैलाकर उस पर लोहे का बुरादा फैला देते हैं तथा उसे आलपिनों से कस देते हैं। अब तार AB के सिरों को बैटरी से जोड़ देते हैं तथा श्रेणीक्रम में धारा नियंत्रक (Rh), कुंजी K तथा धारामापी (A) लगा देते हैं।

कुंजी K को बंद करके तार में धारा प्रवाहित करते हैं। धारा नियंत्रक (Rh) की सहायता से तार में धारा का मान लगभग 2 ऐम्पियर व्यवस्थित कर लेते हैं। कार्ड बोर्ड को हल्के हाथ से ठोकते हैं, इससे लोहे का बुरादा संकेंद्री वृत्तों के रूप में व्यवस्थित हो जाता है। इन वृत्तों का केंद्र तार पर होता है। ये संकेंद्री वृत्त ही चुंबकीय बल रेखाओं को प्रदर्शित

करते हैं। यदि कंपास सुई को कार्ड पर तार के निकट एक बिंदु पर रखें, तो वह एक निश्चित दिशा में ठहरती है। इस दिशा को पेंसिल से कागज पर चिह्नित कर लेते हैं, फिर इस चिह्न पर कंपास सुई को रखते हैं और कंपास सुई की दिशा को पुन: चिह्नित कर लेते हैं। इस प्रकार चिह्नित करते हुए कंपास सुई को आगे बढ़ाते रहते हैं, अत: इन सभी चिह्नों को मिलाने से एक वृत्त प्राप्त होता है। अब कंपास सुई को इस वृत्त से थोड़ा हटाकर रखते हैं तथा पुन: इसी प्रक्रिया को दोहराकर अन्य वृत्त प्राप्त कर लेते हैं। इन सभी वृत्तों के केंद्र तार पर ही स्थित होते हैं। ये वृत्त ही चुंबकीय बल रेखाएँ हैं।

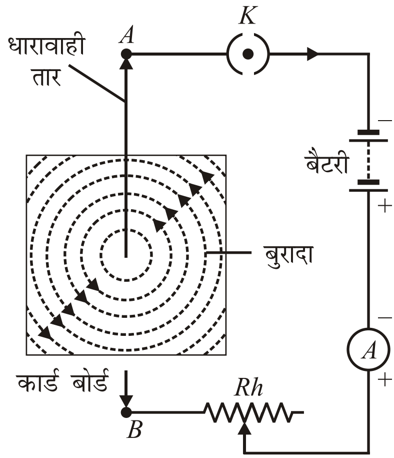

यदि तार में धारा बढ़ाई जाती है, तो लोहे के बुरादे के वृत्त और पास आ जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि सीधी धारावाही तार के कारण उत्पन्न बल रेखाएँ सकेंद्री वृत्तों के रूप में होती हैं तथा धारा बढ़ाने से चुंबकीय क्षेत्र की प्रबलता बढ़ जाती है।

प्रश्न 5. धारावाही चालक द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की दिशा किस नियम द्वारा ज्ञात की जाती है? उस नियम को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– दाएँ हाथ के अँगूठे के नियम से धारावाही चालक के कारण उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की दिशा ज्ञात की जाती है। इस नियमानुसार, ''यदि दाएँ हाथ की अंगुलियों को मोड़कर, अँगूठे को इनके लंबवत् कर लें तब, यदि किसी धारावाही चालक में अँगूठे की दिशा में विद्युत धारा प्रवाहित हो रही हो तो अंगुलियाँ चुंबकीय बल-रेखाओं की दिशा को प्रदर्शित करेंगी।''

प्रश्न 6. धारावाही कुंडली की बल रेखाएँ–

(a) केंद्र पर

(b) किनारों पर किस प्रकार की होती हैं? आरेख बनाकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– **धारावाही कुंडली की बल रेखाएँ–** इसके लिए एक मोटे तार को वृत्तीय कुंडली के रूप में मोड़कर एक क्षैतिज गत्ते के दो सुराखों में से निकालते हैं तथा इसमें विद्युत धारा प्रवाहित करते हैं। गत्ते पर सफेद कागज चिपकाकर कंपास सुई की सहायता से बल-रेखाएँ खींचते हैं। हम देखते हैं कि—

(a) कुंडली के केंद्र पर बल-रेखाएँ समांतर तथा कुंडली के तल के लंबवत् होती हैं। केंद्र पर बल-रेखाओं का समांतर होना यह प्रकट करता है कि धारावाही कुंडली के केंद्र पर चुंबकीय क्षेत्र लगभग एकसमान होता है तथा उसकी दिशा कुंडली के लंबवत् होती है।

(b) कुंडली के किनारों पर बल-रेखाएँ वृत्ताकार होती हैं। तार से दूर जाने पर इनकी वक्रता कम हो जाती है। चुंबकीय बल रेखाएँ कुंडली के एक तल से भीतर की ओर जाती हैं तथा दूसरे तल से बाहर निकलती है। कुंडली का वह तल जिससे होकर बल रेखाएँ भीतर की ओर जाती हैं, दक्षिणी चुंबकीय ध्रुव की भाँति कार्य करता है तथा दूसरा तल जिससे बल रेखाएँ बाहर निकलती हैं, उत्तरी ध्रुव की भाँति कार्य करता है।

चित्र के लिए प्रश्न-2 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 7. किसी ऐसे प्रयोग का वर्णन कीजिए, जिससे यह सिद्ध हो कि एक धारावाही चालक को बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में रखने पर उस पर बल लगता है।

उत्तर– धारावाही चालक पर बाह्य चुंबकीय क्षेत्र का प्रभाव– जब किसी धारावाही चालक को बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में रखा जाता है, तो चालक पर एक बल कार्य करने लगता है। इस बल की दिशा चुंबकीय क्षेत्र तथा विद्युत धारा दोनों के लंबवत् होती है। इस तथ्य को हम एक साधारण प्रयोग द्वारा देख सकते हैं। चित्र के अनुसार दो चालक छड़ों के द्वारा एक पतले एवं लचीले तार PQ को स्थायी चुंबक के ध्रुवों N तथा S के बीच इस प्रकार रखते हैं कि तार PQ, चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् हो। जब चालक तारों को एक कुंजी एवं सेल से जोड़कर जैसे ही तार PQ में धारा प्रवाहित की जाती है, तो तार PQ ऊपर की ओर उठकर तन जाता है। जिससे स्पष्ट होता है कि तार PQ पर एक बल ऊपर की ओर लग रहा है। यदि चुंबक के ध्रुवों को उलट दिया जाता है, तो तार नीचे की ओर तन जाता है अर्थात् अब तार पर बल नीचे की ओर लगता है।

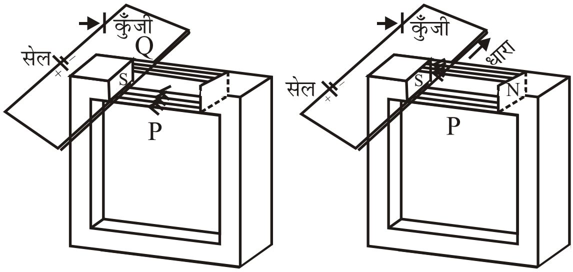

इस प्रयोग से हमें ज्ञात होता है कि यदि किसी धारावाही चालक को बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में रखा जाए, तो उस पर एक बल लगता है। इस बल की दिशा चुंबकीय क्षेत्र की दिशा एवं धारा की दिशा पर निर्भर करती है।

प्रश्न 8. चुंबकीय क्षेत्र में स्थित धारावाही चालक पर लगने वाले बल का सूत्र प्राप्त कीजिए। यदि कोई धारावाही चालक चुंबकीय क्षेत्र के (a) समांतर, (b) लंबवत्, (c) 45° का कोण बनाते हुए रखा जाए तो चालक पर लगने वाले बल का सूत्र लिखिए।

उत्तर– धारावाही चालक पर लगने वाला बल– किसी चालक में धारा प्रवाहित करने से उसके चारों ओर एक चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। यदि किसी धारावाही चालक को एक बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में रखा जाता है, तो धारावाही चालक के चुंबकीय क्षेत्र व बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में पारस्परिक क्रिया होने लगती है जिससे एक बल, चालक पर कार्य करने लगता है। यह बल बाह्य चुंबकीय क्षेत्र के परिमाण एवं दिशा, चालक में प्रवाहित धारा तथा चालक की लंबाई पर निर्भर करता है।

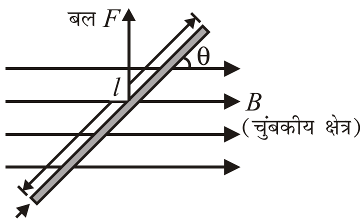

माना एक समान बाह्य चुंबकीय क्षेत्र B में l लंबाई का एक चालक स्थित है जिसमें धारा I प्रवाहित हो रही है। (चित्रानुसार) यदि चालक व चुंबकीय क्षेत्र B की दिशा के बीच θ कोण बनता है तो चालक पर लगने वाले बल F का मान—

(i) छड़ में प्रवाहित धारा (I) के अनुक्रमानुपाती होता है, अर्थात्

$$F \propto I$$

(ii) बाह्य चुंबकीय क्षेत्र की प्रबलता (B) के अनुक्रमानुपाती है, अर्थात्

$$F \propto B$$

(iii) चालक छड़ की लंबाई के अनुक्रमानुपाती है, अर्थात्

$$F \propto l$$

(iv) चालक की लंबाई एवं चुंबकीय क्षेत्र की दिशा के बीच बनने वाले कोण (θ) की ज्या $(\sin\theta)$ के अनुक्रमानुपाती होता है। अर्थात्

$$F \propto \sin\theta$$

उपर्युक्त नियमों को मिलाने पर

$$F \propto IBl\sin\theta$$

अर्थात् $$F = KIBl\sin\theta$$

जिसमें K एक नियतांक है, जिसका मान चुंबकीय क्षेत्र B के मात्रक पर निर्भर करता है। S.I. पद्धति में $K = 1$ है जबकि F न्यूटन में, I ऐम्पियर में तथा l मीटर में हो।

अत: चुंबकीय बल $F = BIl\sin\theta$

(a) यदि चालक में बहने वाली धारा चुंबकीय क्षेत्र के समांतर हो $(\theta = 0°)$, तो

$$F = BIl\sin 0°$$
$$= BIL \times 0$$

अर्थात् धारावाही चालक पर कोई बल नहीं लगता।

(b) यदि चालक की लंबाई चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् है $(\theta = 90°)$, तो

$$F = BIl\sin 90°$$
$$= BIL \times 1$$
$$F = BIl$$

अर्थात् इस अवस्था में चालक पर बल अधिकतम होगा।

(c) यदि चालक की लंबाई चुंबकीय क्षेत्र से 45° का कोण बनाती हो $(\theta = 45°)$ तो

$$F = BIl\sin 45°$$
$$= BIL \times \frac{1}{\sqrt{2}}$$
$$F = \frac{BIl}{\sqrt{2}}$$

प्रश्न 9. धारावाही चालक द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र के लिए बायो-सेवर्ट के सूत्र का निर्धारण कीजिए। या

बायो-सेवर्ट नियम के अनुसार एक धारावाही चालक के कारण उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र किन-किन बातों पर निर्भर करता है, उन्हें लिखिए तथा चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता का सूत्र भी लिखिए। या

किसी धारावाही चालक के अल्पांश के कारण किसी बिंदु पर उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता का सूत्र स्थापित कीजिए।

उत्तर- धारावाही चालक द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र- बायो सेवर्ट नियम- सन् 1820 में वैज्ञानिक लाप्लास, ऐम्पियर तथा फैराडे ने विद्युत धारा के चुंबकीय प्रभाव का अध्ययन किया। फ्रांस के वैज्ञानिक बायो तथा सेवर्ट ने प्रयोगों द्वारा एक धारावाही चालक द्वारा किसी बिंदु पर उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता के लिए सूत्र स्थापित किया।

चित्र में धारावाही चालक का एक अल्पांश (छोटा खंड) QR दिखाया गया है। इसमें विद्युत धारा I प्रवाहित है। इस अल्पांश से r दूरी पर स्थित बिंदु A की दिशा धारा की दिशा से θ कोण बनाती है। बायो तथा सेवर्ट के अनुसार, किसी बिंदु A पर उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता B

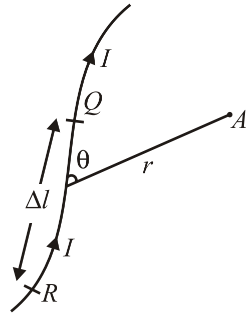

(i) चालक खंड की लंबाई के अनुक्रमानुपाती होती है, अर्थात्

$$B \propto \Delta l$$

(ii) चालक में बहने वाली धारा के अनुक्रमानुपाती होती है, अर्थात्

$$B \propto I$$

(iii) चालक खंड से बिंदु तक की दूरी के वर्ग के व्युत्क्रमानुपाती होती है, अर्थात्

$$B \propto (1/r^2)$$

(iv) धारा की दिशा तथा चालक खंड को बिंदु से मिलाने वाली रेखा के बीच में बनने वाले कोण के ज्या (sine) के अनुक्रमानुपाती होती है, अर्थात्

$$B \propto \sin\theta$$

जहाँ θ, अल्पांश QR तथा इसे बिंदु से मिलाने वाली रेखा के बीच का कोण है।

उपर्युक्त सभी तथ्यों को मिलाने पर,

$$B \propto \frac{I\,\Delta l \sin\theta}{r^2}$$

या

$$B = \frac{\mu_0}{4\pi} \times \frac{I\,\Delta l \sin\theta}{r^2} \qquad ...(i)$$

यह सूत्र **बायो-सेवर्ट नियम** कहलाता है, जहाँ μ_0 एक नियतांक है जिसे वायु (या निर्वात) की चुंबकशीलता (पारगम्यता) कहते हैं। S. I. पद्धति में $\mu_0 / 4\pi$ का मान 10^{-7} न्यूटन/एम्पियर^2 है। यह मान समीकरण (i) में रखने पर

$$B \propto \frac{I\,\Delta l \sin\theta}{r^2} \times 10^{-7} \frac{\text{न्यूटन}}{\text{ऐम्पियर} \times \text{मीटर}}$$

यह सूत्र धारावाही चालक के एक अल्पांश के कारण किसी बिंदु पर उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता दर्शाता है। इसे लाप्लास का सूत्र भी कहते हैं।

प्रश्न 10. एक विद्युत मोटर की रचना स्वच्छ चित्र बनाकर समझाइए तथा संक्षेप में उसकी कार्यविधि समझाइए। या

विद्युत मोटर की रचना, सिद्धांत तथा कार्यविधि सचित्र समझाइए। या

किसी ऐसे विद्युत यंत्र का नामांकित चित्र बनाइए तथा उसकी कार्यविधि समझाइए, जो विद्युत ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में बदलता हो।

उत्तर- विद्युत मोटर- विद्युत मोटर एक ऐसा साधन है, जो विद्युत धारा को यांत्रिक ऊर्जा में रूपांतरित करता है। इसका सिद्धांत इस तथ्य पर आधारित है कि जब किसी कुंडली को चुंबकीय क्षेत्र में रखकर उसमें विद्युत धारा प्रवाहित करते हैं, तो उस पर एक बल युग्म कार्य करने लगता है, जिसकी दिशा फ्लेमिंग के बाएँ हाथ के नियमानुसार निर्धारित की गई है। यह बल युग्म कुंडली को चुंबकीय क्षेत्र में लगातार घुमाता रहता है।

रचना– विद्युत मोटर के तीन प्रमुख भाग निम्नलिखित हैं–

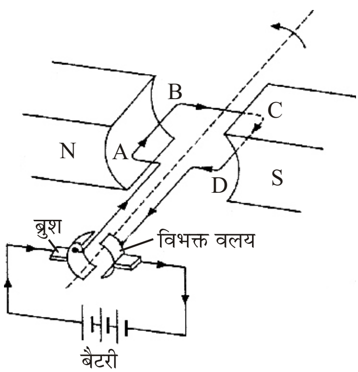

(i) आर्मेचर– यह कॉपर के पतले, पृथक्कृत तार के अनेक फेरों की बनी हुई एक आयताकार कुंडली होती है, जो अपनी अक्ष पर स्वतंत्रतापूर्वक घूम सकती है। कुंडली नर्म लोहे के क्रोड पर लपेटी जाती है।

(ii) क्षेत्र चुंबक– यह एक शक्तिशाली चुंबक होता है, जिसके दो ध्रुव खंडों N तथा S के बीच S से N की दिशा में चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न होता है।

(iii) विभक्त वलय दिशा परिवर्तक– यह दो अर्द्धवृत्ताकार खंडों में विभक्त एक वलय होता है। कुंडली के दोनों सिरे एक-एक अर्द्ध वलय से जुड़े होते हैं। ये वलय खंड अलग-अलग ग्रेफाइट के बने दो गुटकों को स्पर्श करते हुए घूमते हैं, जिन्हें ब्रुश कहते हैं।

ब्रुशों का संबंध संयोजक तारों द्वारा किसी बैटरी के अथवा दिष्टधारा मेंस से होता है, जिससे आर्मेचर में धारा प्रवाहित होती है।

कार्यविधि– जब बैटरी से कुंडली में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है तो फ्लेमिंग के वाम हस्त नियम के अनुसार कुंडली की भुजा AB पर एक बल नीचे की ओर तथा भुजा CD पर एक बल ऊपर की ओर कार्य करने लगता है। इन दोनों बलों से बने बल युग्म के कारण कुंडली वामावर्त (anti-clockwise) दिशा में घूमने लगती है। कुंडली के साथ उसके सिरों पर लगे विभक्त वलय के भाग भी घूमते हैं परंतु बैटरी का धन ध्रुव सदैव बाएँ ब्रुश से कुंडली से जुड़ा रहता है तथा ऋण ध्रुव दाएँ ब्रुश से कुंडली से जुड़ा रहता है। अत: कुंडली उसी दिशा में घूमती रहती है।

प्रश्न 11. चुंबकीय क्षेत्र में गतिमान आवेशित कणों पर बल का सूत्र $F = qVB \sin\theta$ सिद्ध कीजिए। या

चुंबकीय बल क्षेत्र में गतिमान आवेश पर लगने वाला बल किन-किन बातों पर निर्भर करता है? इस बल के लिए आवश्यक सूत्र सिद्ध कीजिए।

उत्तर– **चुंबकीय क्षेत्र में गतिमान आवेशित कणों पर बल**— जब कोई आवेशित कण किसी चुंबकीय क्षेत्र में गति करता है तो कण पर एक बल आरोपित हो जाता है। इसे **'लॉरेन्ज बल'** कहते हैं। इसकी दिशा चुंबकीय क्षेत्र की दिशा तथा कण के चलने की दिशा दोनों के लंबवत् होती है। माना कि एक कण जिस पर $+q$ आवेश है एक चुंबकीय क्षेत्र B में क्षेत्र की दिशा के लंबवत् v वेग से चल रहा है। तब इस कण पर लॉरेन्ज बल F का मान निम्न समीकरण के अनुसार होगा—

$$F = qvB$$

बल F की दिशा चुंबकीय क्षेत्र B की दिशा तथा आवेश के वेग v की दिशा दोनों के लंबवत् है। फ्लेमिंग के बाएँ हाथ के नियम द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। विद्युत धारा की दिशा इलेक्ट्रॉनों (ऋण आवेश) की गति की दिशा के विपरीत अर्थात् धन आवेश की

गति की दिशा में मानी जाती है। फ्लेमिंग के बाएँ हाथ के नियम में 'धारा की दिशा' के स्थान पर 'धन आवेश की गति की दिशा' रखकर आवेश पर लगने वाले बल की दिशा ज्ञात कर सकते हैं।

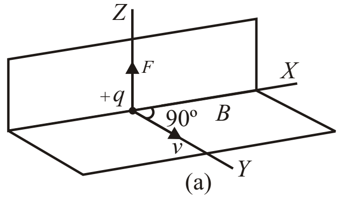

(a)

यदि आवेश q ऋणात्मक हो तब बल F की दिशा चित्र में दिखाई गई दिशा के विपरीत होगी। [चित्र (a)]

यदि आवेशित कण की गति की दिशा चुंबकीय क्षेत्र B की दिशा के लंबवत् न होकर उससे θ कोण बना रही हो। [चित्र (b)], तब कण पर लगने वाला बल निम्न समीकरण अनुसार होगा—

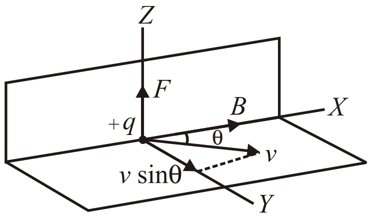

(b)

$$F = qVB\sin\theta$$

(i) यदि $\theta = 90°$ तो बल $F = qvB$ (अधिकतम)। इस स्थिति में लगने वाला बल, आवेश की गति एवं क्षेत्र की दिशा के लंबवत् कार्य करता है।

(ii) यदि $\theta = 0°$ तो बल $F =$ शून्य होता है। इस स्थिति में, यदि कोई आवेश चुंबकीय क्षेत्र की दिशा के समांतर गति करता है तो उस पर लगने वाला बल शून्य होगा।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विद्युत धारा का चुंबकीय प्रभाव क्या है?

उत्तर– **विद्युत धारा का चुंबकीय प्रभाव–** जब किसी चालक में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है, तो उसके चारों ओर एक चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है, इस घटना को विद्युत धारा का चुंबकीय प्रभाव कहते हैं।

प्रश्न 2. चुंबकीय क्षेत्र किसे कहते हैं? चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता से क्या तात्पर्य है?

उत्तर– **चुंबकीय क्षेत्र–** किसी चुंबक का चुंबकीय क्षेत्र चुंबक के चारों ओर का वह स्थान है जहाँ तक चुंबक के प्रभाव को अनुभव किया जा सके। यदि किसी चुंबक के पास चुंबकीय सुई रख दें तो इसकी सुई थोड़ी देर घूमने के बाद एक निश्चित दिशा में रुक जाती है। यदि चुंबकीय सुई को चुंबक के समीप किसी दूसरे स्थान पर रखें तो इसकी सुई किसी अन्य निश्चित दिशा में रुक जाती है। चुंबक के चारों ओर यह प्रक्रिया करने पर स्पष्ट होता है कि चुंबक के चारों ओर के क्षेत्र में सुई एक निश्चित दिशा में रुकती है। चुंबक के चारों ओर यह क्षेत्र चुंबकीय क्षेत्र कहलाता है।

चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता– "किसी चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता उस बल से व्यक्त की जाती है, जो उस स्थान पर चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् स्थित एकांक लंबाई के तार में एकांक प्रबलता की विद्युत धारा प्रवाहित करने पर तार पर कार्य करता है।" यह सदिश राशि है। इसका मात्रक न्यूटन/ऐम्पियर मीटर या वेबर/मीटर^2 होता है।

प्रश्न 3. चुंबकीय बल रेखाओं से क्या तात्पर्य है? इनके प्रमुख गुणों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर– **चुंबकीय बल-रेखाएँ–** "किसी चुंबकीय क्षेत्र में बल रेखाएँ वे काल्पनिक रेखाएँ हैं, जो उस स्थान में चुंबकीय क्षेत्र की दिशा को अविरत प्रदर्शित करती हैं तथा इन रेखाओं के

किसी बिंदु पर खींची गई स्पर्श रेखा उस बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की दिशा प्रदर्शित करती है।'

चुंबकीय बल रेखाओं के गुण– चुंबकीय बल रेखाओं के निम्नलिखित गुण हैं—

(i) एक समान चुंबकीय क्षेत्र की चुंबकीय बल रेखाएँ, परस्पर समांतर एवं बराबर-बराबर दूरियों पर होती हैं।

(ii) चुंबक के बाहर इन बल रेखाओं की दिशा उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव की ओर तथा चुंबक के अंदर दक्षिणी ध्रुव से उत्तरी ध्रुव की ओर होती है। इस प्रकार ये बंद वक्र के रूप में होती हैं।

(iii) चुंबकीय बल रेखा के किसी बिंदु पर खींची गई स्पर्श रेखा उस बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की दिशा को प्रदर्शित करती है।

(iv) किसी स्थान पर चुंबकीय बल रेखाओं की सघनता उस स्थान पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता के अनुक्रमानुपाती होती है।

(v) चुंबकीय बल रेखाएँ एक-दूसरे को कभी नहीं काटती हैं; क्योंकि एक बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की दो दिशाएँ संभव नहीं हैं।

प्रश्न 4. धारावाही परिनालिका की चुंबकीय बल रेखाओं का आरेख बनाकर दर्शाइए। परिनालिका के भीतर नर्म लोहे की छड़ रखने पर क्या प्रभाव होगा?

संकेत– चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता बढ़ जाएगी। बल रेखाएँ पास-पास हो जाएँगी।

उत्तर– चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-2 का उत्तर देखें।

परिनालिका के भीतर नर्म लोहे की छड़ रखने पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता बढ़ जाएगी तथा चुंबकीय बल-रेखाएँ पास-पास हो जाएँगी और इस प्रकार प्राप्त चुंबक शक्तिशाली चुंबक होगा।

प्रश्न 5. दाएँ हाथ के अँगुठे का क्या नियम है?

उत्तर– **दाएँ हाथ के अँगूठे का नियम–** यदि हम दाएँ हाथ में विद्युत धारा ले जाने वाला तार इस प्रकार पकड़ें कि अँगुलियाँ तार पर लिपटी हों व अँगूठा विद्युत धारा की दिशा में हो तो लिपटी हुई अंगुलियों की दिशा चुंबकीय बल रेखाओं की दिशा होगी।

प्रश्न 6. एक समान चुंबकीय क्षेत्र में स्थित धारावाही चालक पर लगने वाले चुंबकीय बल का सूत्र लिखिए। इसके आधार पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता का मात्रक ज्ञात कीजिए।

उत्तर– एक समान चुंबकीय क्षेत्र में स्थित धारावाही चालक पर लगने वाले चुंबकीय बल को निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जाता है—

$$F = BIl\sin\theta$$

जहाँ B = चुंबकीय क्षेत्र की प्रबलता, I = प्रवाहित धारा, l = छड़ की लंबाई,
$\sin\theta$ = चालक की लंबाई एवं चुंबकीय क्षेत्र की दिशा के बीच बना कोण।

चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता का मात्रक– तीव्रता के मात्रक की परिभाषा धारावाही चालक पर लगने वाले बल के आधार पर की जाती है।

अतः, $F = BIl\sin\theta$ से

$$B = \frac{F}{Il} = \frac{F\,(\text{न्यूटन})}{I\,(\text{ऐम्पियर}) \times l\,(\text{मीटर})}$$

$$B = \frac{\text{न्यूटन}}{\text{ऐम्पियर मीटर}} \text{ या } \frac{\text{वेबर}}{\text{मीटर}^2}$$

प्रश्न 7. चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता का मात्रक बल तथा धारा के पदों में ज्ञात कीजिए। गौस का चुंबकीय क्षेत्र के अन्य मात्रकों से क्या संबंध है?

उत्तर- बाह्य चुंबकीय क्षेत्र में क्षेत्र के लंबवत् रखे धारावाही चालक पर लगने वाले बल का सूत्र

$$F = BIL\sin\theta$$

$$B = \frac{F}{Il}$$

$\therefore$ चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता B का मात्रक $= \dfrac{F \text{ का मात्रक}}{I \text{ का मात्रक} \times l \text{ का मात्रक}}$

$= \dfrac{\text{न्यूटन}}{\text{ऐम्पियर} \times \text{मीटर}}$

चुंबकीय क्षेत्र B के अन्य मात्रक वेबर/मीटर^2 या टेस्ला हैं।

गौस का अन्य मात्रकों से संबंध- चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता B का एक अन्य मात्रक गौस भी है, जहाँ

$$1 \text{ गौस} = 10^{-4} \text{ न्यूटन/(ऐम्पियर-मीटर)}$$

प्रश्न 8. प्रेरित धारा की दिशा कैसे ज्ञात की जाती है?

उत्तर- प्रेरित धारा की दिशा फ्लेमिंग के दाएँ हाथ के नियम से ज्ञात की जाती है।

फ्लेंमिग के दाएँ हाथ का नियम- ''यदि दाएँ हाथ का अँगूठा, उसके पास की तर्जनी अंगुली तथा मध्यमा अंगुली को परस्पर एक-दूसरे के लंबवत् फैलाकर इस प्रकार रखें कि तर्जनी अंगुली चुंबकीय क्षेत्र की दिशा में तथा अँगूठा चालक की गति की दिशा में हो तो मध्यमा अंगुली चालक में धारा की दिशा बताएगी।''

प्रश्न 9. चुंबकीय अक्ष से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- चुंबकीय अक्ष- ''चुंबक के दोनों ध्रुवों को मिलाने वाली रेखा चुंबकीय अक्ष कहलाती है।'' दोनों ध्रुवों के बीच की न्यूनतम दूरी चुंबक की प्रभावशाली लंबाई कहलाती है।

प्रश्न 10. फ्लेमिंग के बाएँ हाथ के नियम का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- फ्लेमिंग के बाएँ हाथ का नियम- यदि हम अपने बाएँ हाथ के अँगूठे तथा उसके पास वाली दोनों अंगुलियों को इस प्रकार फैलाएँ कि तीनों एक दूसरे के लंबवत् रहें तब यदि पहली अंगुली चुंबकीय क्षेत्र (B) की दिशा को तथा बीच वाली अंगुली धारा (I) की दिशा को बताती है, तो अँगूठा चालक पर लगने वाले बल (F) की दिशा बताएगा।

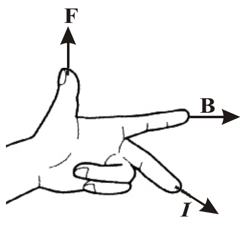

प्रश्न 11. चुंबकीय बल क्षेत्र में गतिमान आवेश पर लगने वाला बल किन-किन क्षेत्रों पर निर्भर करता है?

उत्तर- चुंबकीय बल क्षेत्र में गतिमान आवेश पर लगने वाला बल (F), कण के आवेश (q), आवेश के वेग (v), चुंबकीय क्षेत्र (B) तथा आवेश की गति की दिशा व चुंबकीय क्षेत्र की दिशा के बीच बने कोण (θ) पर निर्भर करता है।

$$F = qvB\sin\theta$$

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक की पृष्ठ संख्या 133 देखें।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. 2 मीटर लंबाई के एक चालक में 4 ऐम्पियर की विद्युत धारा प्रवाहित हो रही है। इस चालक को चुंबकीय क्षेत्र की दिशा से 30° के कोण पर रखा गया है, जिसकी तीव्रता 2.5 न्यूटन/ऐम्पियर मीटर है। चालक पर लगने वाले बल एवं बल की दिशा की गणना कीजिए।

हलः $l = 2$ मीटर, $I = 4$ ऐम्पियर, $\theta = 30°$, $B = 2.5$ न्यूटन/ऐम्पियर मीटर

$$F = BIl \sin\theta$$
$$= 2.5 \times 4 \times 2 \times \sin 30°$$
$$= 20 \times \frac{1}{2} = 10$$

$F =$ **10 न्यूटन**

दिशा, चालक व चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् ऊपर की ओर होगी। **उत्तर**

प्रश्न 2. एक 50 सेमी लंबा तार, जिसमें 2.5 ऐम्पियर की धारा बह रही है, एकसमान चुंबकीय क्षेत्र ($B = 1000$ गौस) में रखा गया है। यदि तार क्षेत्र की दिशा से 30° का कोण बनाए तो उस पर लगने वाले बल की गणना कीजिए।

हलः $l = 50$ सेमी $= \frac{50}{100} = 0.5$ मीटर, $I = 2.5$ ऐम्पियर, $\theta = 30°$,

$B = 1000$ गौस $= 1000 \times 10^{-4}$ न्यूटन/ऐम्पियर मीटर $= 10^{-1}$ न्यूटन/ऐम्पियर मीटर

$$\sin 30° = \frac{1}{2} = 0.5$$
$$F = BIl \sin\theta$$
$$= 10^{-1} \times 2.5 \times 0.5 \times 0.5 = 0.0625$$

$F =$ **0 .0625 न्यूटन** **उत्तर**

प्रश्न 3. एक 0.4 मीटर लंबे तार को 10^{-2} वेबर/मीटर^2 तीव्रता के चुंबकीय क्षेत्र में रखे जाने पर इस पर 8.66×10^{-3} न्यूटन का बल लगता है, जबकि यह क्षेत्र की दिशा से 60° का कोण बनाता है। तार में बहने वाली धारा ज्ञात कीजिए।

हलः $l = 0.4$ मीटर, $B = 10^{-2}$ वेबर/मीटर^2, $F = 8.66 \times 10^{-3}$ न्यूटन, $\theta = 60°$, $I = ?$

$$F = BIl \sin\theta$$
$$I = \frac{F}{Bl \sin\theta} = \frac{8.66 \times 10^{-3}}{10^{-2} \times 0.4} \times \frac{1}{\sin 60°}$$
$$= \frac{8.66 \times 10^{-1}}{0.4} \times \frac{2}{\sqrt{3}}$$
$$I = \frac{8.33}{2} \times \frac{1}{\sqrt{3}} = 2.5$$

$I =$ **2 .5 ऐम्पियर** **उत्तर**

प्रश्न 4. 15 सेमी लंबा तार 0.4 वेबर/मीटर^2 तीव्रता के चुम्बकीय क्षेत्र के लंबवत् है। यदि तार में 6 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित हो, तो उस पर कितना बल कार्य करेगा? यदि तार क्षेत्र की दिशा से 30° का कोण बनाए तो उस पर कितना बल कार्य करेगा?

हलः **दिया है–** $l = 15$ सेमी, $B = 0.4$ वेबर/मीटर^2, $I = 6$ ऐम्पियर

$$F = BIl \quad \text{(यदि तार लंबवत् है।)} \left(l = \frac{15}{100} \text{ मीटर}\right)$$

$$F = \frac{0.4 \times 6 \times 15}{100} = \mathbf{0.36} \textbf{ न्यूटन}$$

$$F = BIl \sin\theta \quad \text{(यदि तार } 30° \text{ का कोण बनाता है।)}$$

$$F = \frac{0.4 \times 6 \times 15 \times \sin 30°}{100}$$

$$= \frac{0.4 \times 6 \times 15 \times 1}{100 \times 2} = 0.18$$

$$F = \mathbf{0.18} \textbf{ न्यूटन}$$

उत्तर

प्रश्न 5. एक प्रोटॉन 3000 न्यूटन/ऐम्पियर मीटर तीव्रता वाले चुंबकीय क्षेत्र में 3.0×10^3 मीटर/सेकंड के वेग से क्षेत्र के लंबवत् प्रवेश करता है। प्रोटॉन पर आरोपित बल की गणना कीजिए। (प्रोटॉन पर आवेश $= 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम)

हलः **दिया है–** $B = 3000$ न्यूटन/ऐम्पियर–मीटर, $V = 3.0 \times 10^3$ मीटर/सेकंड, $\theta = 90°$

$$F = qvB \sin\theta$$

$$= 1.6 \times 10^{-19} \times 3.0 \times 10^3 \times 3000 \times \sin 90°$$

$$= 14.4 \times 10^{-13} \times 1$$

$$= \mathbf{1.44 \times 10^{-12}} \textbf{ न्यूटन}$$

उत्तर

प्रश्न 6. एक प्रोटॉन 1500 न्यूटन/ऐम्पियर मीटर के चुंबकीय क्षेत्र में 2×10^6 मीटर/सेकंड के वेग से प्रवेश करता है। प्रोटॉन पर लगने वाले बल की गणना कीजिए। यदि वह (a) क्षेत्र के लंबवत्, (b) क्षेत्र के समांतर, (c) क्षेत्र से 30° कोण बनाते हुए प्रवेश करें। (प्रोटॉन पर आवेश $q = e = 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम)

हलः (a)

$$F = qvB \sin\theta$$

$$= qvB \sin 90° \qquad [\because \sin 90° = 1, \text{ क्षेत्र के लंबवत्}]$$

$$= 1.6 \times 10^{-19} \times 2 \times 10^6 \times 1500 \times 1$$

$$F = \mathbf{4.8 \times 10^{-10}} \textbf{ न्यूटन}$$

उत्तर

(b)

$$F = qvB \sin\theta$$

$$= qvB \sin 0° \qquad [\because \sin 0° = 0, \text{ क्षेत्र के समांतर}]$$

$$= 0$$

उत्तर

(c)

$$F = qvB \sin\theta$$

$$= qvB \sin 30° \qquad [\because \theta = 30°]$$

$$= 1.6 \times 10^{-19} \times 2 \times 10^3 \times 1500 \times \frac{1}{2} \qquad \left[\sin 30° = \frac{1}{2}\right]$$

$$= \mathbf{2.4 \times 10^{-10}} \textbf{ न्यूटन}$$

उत्तर

प्रश्न 7. एक प्रोटॉन किसी चुंबकीय क्षेत्र में क्षेत्र की दिशा से 90° का कोण बनाते हुए 2.0×10^5 मीटर/सेकंड की चाल से गुजरता है। उस पर 3.2×10^{-10} न्यूटन का

चुंबकीय बल लगता है। चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता की गणना कीजिए। (आवेश $= 1.6 \times 10^{-19}$ कूलॉम)

हल: $$B = \frac{F}{qv \sin\theta}$$

$$= \frac{3.2 \times 10^{-10}}{1.6 \times 10^{-19} \times 2 \times 10^{5} \times \sin 90°} \qquad [\because \sin 90° = 1]$$

$$= \frac{3.2 \times 10^{-10}}{1.6 \times 10^{-19} \times 2 \times 10^{5} \times 1}$$

$= \mathbf{1 \times 10^{4}}$ **न्यूटन/ऐम्पियर मीटर** **उत्तर**

प्रश्न 8. एक लंबे सीधे तार में 20 ऐम्पियर विद्युत धारा प्रवाहित हो रही है। तार से 10 सेमी दूर स्थित बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता ज्ञात कीजिए।

हल: $I = 20$ ऐम्पियर, $r = 10$ सेमी $= \frac{10}{100}$ मीटर $= 0.1$ मीटर

सूत्र— $B = 2 \times 10^{-7} \times \frac{I}{r}$ से

$$= 2 \times 10^{-7} \times \frac{20}{0.1}$$

$= \mathbf{4 \times 10^{-5}}$ **न्यूटन/ऐम्पियर मीटर** **उत्तर**

प्रश्न 9. एक लंबे सीधे विद्युत चालक में 4.0 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित हो रही है। इस चालक से 5.0 सेमी की दूरी पर स्थित एक बिंदु पर उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता की गणना कीजिए।

हल: $I = 4.0$ ऐम्पियर, $r = 5.0$ सेमी $= \frac{5}{100}$ मीटर $= 0.05$ मीटर

सूत्र— $B = 2 \times 10^{-7} \times \frac{I}{r}$ से

$$B = 2 \times 10^{-7} \times \frac{4.0}{0.05}$$

या $B = \mathbf{1.6 \times 10^{-5}}$ **न्यूटन/ऐम्पियर मीटर** **उत्तर**

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. छड़-चुंबक की बल रेखाओं का अध्ययन करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

■■■

9 विद्युत चुंबकीय प्रेरण

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विद्युत चुंबकीय प्रेरण से क्या तात्पर्य है? प्रेरित विद्युत वाहक बल को परिभाषित कीजिए।

उत्तर- विद्युत चुंबकीय प्रेरण- "जब किसी बंद परिपथ से संबंधित चुंबकीय फ्लक्स में परिवर्तन होता है तो उस परिपथ में एक विद्युत वाहक बल उत्पन्न हो जाता है और इसी विद्युत वाहक बल के कारण परिपथ में धारा बहने लगती है। यह धारा केवल तभी तक बहती है जब तक कि चुंबकीय फ्लस्क में परिवर्तन होता रहता है। इस घटना को विद्युत चुंबकीय प्रेरण कहते है।"

प्रेरित विद्युत वाहक बल- जब किसी परिपथ में विद्युत ऊर्जा के स्रोत के अनुपस्थित रहने पर भी विद्युत वाहक बल उत्पन्न हो जाता है तो इस प्रकार का विद्युत वाहक बल प्रेरित विद्युत वाहक बल कहलाता है।

प्रश्न 2. चुंबकीय फ्लक्स से क्या तात्पर्य है? इसका SI मात्रक लिखिए।

उत्तर- चुंबकीय फ्लक्स – चुंबकीय क्षेत्र में किसी बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता एवं इसकी दिशा चुंबकीय बल रेखाओं द्वारा प्रदर्शित की जाती है।

चुंबकीय क्षेत्र में स्थित किसी तल से उसके लंबवत् गुजरने वाली संपूर्ण बल रेखाओं की संख्या ही उस तल का चुंबकीय फ्लक्स कहलाता है। इसे ϕ (फाई) से प्रदर्शित करते हैं।

यदि A क्षेत्रफल का कोई तल, B प्रबलता के चुंबकीय क्षेत्र में उसके लंबवत् रखा हो, तो

एकांक क्षेत्रफल के अभिलंबवत् गुजरने वाली बल रेखाओं की संख्या $= B$

$\therefore$ A क्षेत्रफल से अभिलंबवत् गुजरने वाली बल रेखाओं की संख्या $= BA$

अर्थात् चुंबकीय फ्लक्स

$$\phi = BA \qquad \text{... (i)}$$

यदि तल का अभिलंब चुंबकीय क्षेत्र से θ कोण बनाता हो, तब तल से गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स

$$\phi = BA\cos\theta$$

चुंबकीय फ्लक्स का मात्रक वेबर या न्यूटन$\times$ मीटर/ऐम्पियर होता है।

समीकरण (i) से,

$\because$ चुंबकीय क्षेत्र $B = \dfrac{\phi}{A}$

अत: चुंबकीय क्षेत्र की प्रबलता का मात्रक वेबर/मीटर^2 है, इसे चुंबकीय फ्लक्स घनत्व भी कहते हैं।

प्रश्न 3. फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियमों को लिखिए।

उत्तर- फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियम- फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण संबंधी नियम निम्न प्रकार हैं-

पहला नियम– जब किसी परिपथ में से गुजरने वाले चुंबकीय फ्लक्स में परिवर्तन होता है, तो परिपथ में एक प्रेरित विद्युत वाहक उत्पन्न हो जाता है, जिसका परिमाण चुंबकीय फ्लक्स के परिवर्तन की ऋणात्मक दर के बराबर होता है।

यदि प्रारंभ में किसी परिपथ से गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स ϕ_1 हो तथा Δt समयांतराल के पश्चात् यह बदलकर ϕ_2 हो जाए, तब परिपथ प्रेरित विद्युत वाहक बल

$$e = -\frac{(\phi_2 - \phi_1)}{\Delta t} = \frac{-\Delta\phi}{\Delta t}$$

जहाँ $\Delta\phi = \phi_2 - \phi_1$

यदि समयांतराल Δt अनंत सूक्ष्म है, तो $\Delta t \to dt$ तथा $\Delta\phi \to d\phi$, तब

$$e = -\frac{d\phi}{dt}$$

यदि $d\phi$ वेबर में तथा dt सेकंड में हो, तो प्रेरित विद्युत वाहक बल e वोल्ट में होगा।

यदि परिपथ में कोई कुंडली है, जिसमें तार के N फेरे हैं, तो प्रत्येक फेरे में विद्युत वाहक बल प्रेरित होगा तथा सभी फेरों के विद्युत वाहक बल जुड़ जाएँगे। अत: पूरी कुंडली में प्रेरित विद्युत वाहक बल

$$e = \frac{-N\Delta\phi}{\Delta t} = \frac{-\Delta(N\phi)}{\Delta t}$$

जहाँ $N\phi$ कुंडली में फ्लक्स ग्रंथिकाओं की संख्या है।

दूसरा नियम– किसी परिपथ में प्रेरित विद्युत वाहक बल अथवा प्रेरित विद्युत धारा की दिशा सदैव ऐसी होती है कि वह उस कारण का विरोध करती है, जिससे वह स्वयं उत्पन्न होती है, इसे लेंज का नियम भी कहते हैं।

प्रश्न 4. फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियम लिखिए तथा प्रेरित विद्युत वाहक बल का सूत्र लिखिए।

उत्तर– फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियम– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 के अंतर्गत देखिए।

प्रेरित विद्युत वाहक बल का सूत्र–

$$e = \frac{-\Delta(N\phi)}{\Delta t},$$

जहाँ $N\phi$ कुंडली में फ्लक्स ग्रंथिकाओं की संख्या है तथा Δt समयांतराल है।

प्रश्न 5. फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियमों को लिखिए। प्रेरित वि० वा० बल की दिशा किस प्रकार ज्ञात की जाती है?

उत्तर– फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियम– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 के अंतर्गत देखिए।

प्रेरित वि०वा० बल की दिशा फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के नियमों के द्वारा ज्ञात की जा सकती है।

प्रश्न 6. फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण संबंधी नियम बताइए। प्रेरित धारा की दिशा किस प्रकार निर्धारित की जाती है?

उत्तर– फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण संबंधी नियम – इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या–3 का अवलोकन कीजिए।

प्रेरित धारा की दिशा– प्रेरित धारा की दिशा फ्लेमिंग के दाएँ हाथ के नियम के अनुसार ज्ञात की जा सकती है।''यदि दाएँ हाथ का अँगूठा और उसके पास वाली दोनों अंगुलियों को एक-दूसरे के लंबवत् फैलाएँ, तब यदि पहली अंगुली चुंबकीय क्षेत्र की दिशा तथा अँगूठा चालक के चलने की दिशा को प्रदर्शित करे, तो बीच वाली अंगुली चालक में प्रेरित धारा की दिशा बताएगी।

प्रश्न 7. फैराडे के विद्युत चुंबकीय नियम लिखिए। इस सिद्धांत पर आधारित किसी यंत्र का नाम बताइए।

उत्तर- फैराडे के विद्युत चुंबकीय नियम– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

विद्युत चुंबकीय नियम के सिद्धांत पर आधारित यंत्र का नाम विद्युत धारा डायनेमो या प्रत्यावर्ती धारा डायनेमो है।

प्रश्न 8. विद्युत चुंबकीय प्रेरण से क्या अभिप्राय है?

उत्तर- विद्युत चुंबकीय प्रेरण– ओर्स्टेड ने सन् 1820 में यह आविष्कार किया था कि जब किसी चालक में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है तो उसके चारों ओर चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। फैराडे ने यह विचार दिया कि इसका विपरीत प्रभाव भी पाया जाना चाहिए अर्थात् चुंबकीय क्षेत्र से विद्युत धारा उत्पन्न हो जानी चाहिए। इसकी खोज में सन् 1831 में फैराडे ने इंग्लैंड में तथा लगभग उसी समय हैनरी ने अमेरिका में अनेक प्रयोग किए। फैराडे के कुछ प्रयोग इस प्रकार हैं–

प्रयोग-1—चित्र में तार की एक कुंडली के दोनों सिरे एक धारामापी से जुड़े हैं। जब हम छड़ चुंबक के उत्तरी ध्रुव (N) को कुंडली की ओर को चलाते हैं तो धारामापी में एक क्षणिक विक्षेप होता है। इससे पता चलता है कि चुंबक की गति से कुंडली में विद्युत धारा प्रवाहित होती है। चुंबक को कुंडली से दूर ले जाने पर धारामापी में क्षणिक विक्षेप विपरीत दिशा में होता है अर्थात् अब कुंडली में धारा पहले से विपरीत दिशा में प्रवाहित होती है।

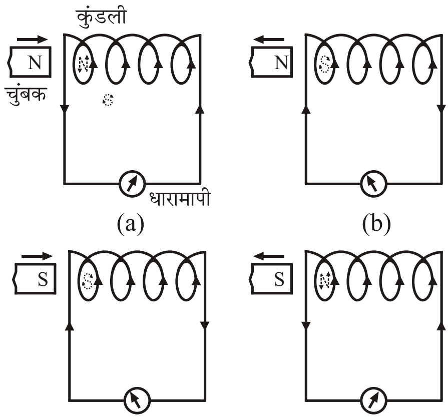

इसी प्रकार, यदि चुंबक के दक्षिणी ध्रुव S को कुंडली के समीप लाएँ अथवा दूर हटाएँ तो धारामापी में क्षणिक विक्षेप पहले से विपरीत दिशाओं में होते हैं।

धारामापी में विक्षेप केवल तब तक होता है जब तक कि चुंबक गतिशील है। चुंबक के रुकते ही विक्षेप भी लुप्त हो जाता है अर्थात् धारा बंद हो जाती है।

यदि चुंबक को स्थिर रखकर कुंडली को चुंबक की ओर लाएँ अथवा चुंबक से दूर ले जाएँ तब भी धारामापी में उसी प्रकार विक्षेप होते हैं। इससे यह पता चलता है कि कुंडली में धारा कुंडली तथा चुंबक के बीच सापेक्ष गति से उत्पन्न होती है। इसमें कोई अंतर नहीं पड़ता कि चुंबक गतिशील है अथवा कुंडली।

चुंबक अथवा कुंडली को जितनी तेजी से चलाया जाता है धारामापी में उतना ही अधिक विक्षेप होता है अर्थात् धारा उतनी ही अधिक प्रबल होती है।

यदि कुंडली में फेरों की संख्या बढ़ा दें अथवा कुंडली के भीतर नर्म लोहे की छड़ रख दें तो भी धारा की प्रबलता बढ़ जाती है।

फैराडे के प्रयोगों की व्याख्या– फैराडे ने इस प्रयोग की व्याख्या चुंबकीय फ्लक्स के परिवर्तन के आधार पर की। जब एक कुंडली को किसी चुंबक से कुछ दूरी पर रखते हैं तो चुंबक की फ्लक्स रेखाओं की एक निश्चित संख्या कुंडली में से होकर गुजरती है। यदि चुंबक तथा कुंडली में से किसी एक को चलाएँ तो कुंडली में से होकर गुजरने वाली फ्लक्स रेखाओं की संख्या (चुंबकीय फ्लक्स) में परिवर्तन होने लगता है, कुंडली को चुंबक के समीप लाने पर कुंडली में से गुजरने वाली फ्लक्स रेखाओं की संख्या बढ़ने लगती है तथा दूर ले जाने पर घटने लगती है। इसी फ्लक्स परिवर्तन के कारण कुंडली में एक वि०वा०ब० स्थापित होता है तथा धारा प्रवाहित होती है। इस वि०वा०ब० को 'प्रेरित वि०वा०ब०' तथा धारा को 'प्रेरित धारा' कहते हैं। चुंबकीय फ्लक्स परिवर्तन के कारण वि०वा०ब० के प्रेरित होने की घटना को 'विद्युत चुंबकीय प्रेरण' कहते हैं।

प्रश्न 9. लेंज का नियम समझाइए तथा इसके दो उदाहरण दीजिए। प्रेरित धारा से आप क्या समझते हैं? या

प्रेरित धारा की दिशा ज्ञात करने का लेंज का नियम लिखिए।

उत्तर– लेंज का नियम– प्रेरित विद्युत वाहक बल सदैव उस कारण का विरोध करता है जिसके द्वारा वह स्वयं उत्पन्न होता है।

अत: यदि कुंडली के चुंबकीय फ्लक्स में वृद्धि होती है तो प्रेरित विद्युत वाहक बल कुंडली के चुंबकीय फ्लक्स को घटाने की कोशिश करता है और यदि कुंडली के चुंबकीय फ्लक्स में कमी होती है तो प्रेरित विद्युत वाहक बल चुंबकीय फ्लक्स को बढ़ाने की कोशिश करता है। अर्थात् यदि $(\phi_2 - \phi_1)$ धनात्मक है तो प्रेरित विद्युत वाहक बल e ऋणात्मक होगा और यदि $(\phi_2 - \phi_1)$ ऋणात्मक है तो e धनात्मक होगा।

अत: $$e = -K\frac{(\phi_2 - \phi_1)}{\Delta t}$$

यदि कुंडली में तार के चक्करों की संख्या n हो तो

$$e = -Kn\left(\frac{\phi_2 - \phi_1}{\Delta t}\right)$$

अथवा $$e = -Kn\frac{\Delta\phi}{\Delta t}$$ (जहाँ $\Delta\phi = \phi_2 - \phi_1$)

MKS प्रणाली में $K = 1$

अत: $$e = -n\frac{\Delta\phi}{\Delta t}$$

स्पष्ट है कि अधिक विद्युत वाहक बल e के लिए n अधिक और Δt कम होना चाहिए अर्थात् कुंडली में चक्करों की संख्या अधिक और फ्लक्स परिवर्तन का समय कम से कम होना चाहिए।

प्रेरित धारा की दिशा– फ्लेमिंग के दाएँ हाथ के नियम के अनुसार प्रेरित धारा की दिशा ज्ञात की जाती है। यदि दाएँ हाथ का अँगूठा और उसके पास वाली दोनों अंगुलियों को एक-दूसरे के लंबवत् फैलाएँ, तब यदि पहली अंगुली चुंबकीय क्षेत्र की दिशा तथा अँगूठा चालक के चलने की दिशा को प्रदर्शित करे, तो बीच वाली अंगुली चालक में प्रेरित धारा की दिशा बताएगी।

प्रेरित धारा की दिशा ज्ञात करने का लेंज का नियम– ''इस नियम के अनुसार, ''किसी परिपथ में प्रेरित विद्युत धारा की दिशा सदैव ऐसी होती है कि वह उस कारण का विरोध करती है, जिससे वह स्वयं उत्पन्न होती है।''

उदाहरण– (i) प्रत्यावर्ती धारा डायनेमो, (ii) दिष्ट धारा जनित्र

प्रश्न 10. फ्लेमिंग का दाएँ हाथ का नियम लिखिए।

उत्तर– **फ्लेमिंग के दाएँ हाथ का नियम–** यदि हमारे दाएँ हाथ का अँगूठा तथा उसके पास वाली दोनों अंगुलियों को एक-दूसरे के लंबवत् फैलाएँ, तब यदि पहली अंगुली चुंबकीय क्षेत्र की दिशा तथा अँगूठा चालक के चलने की दिशा को प्रदर्शित करे, तो बीच वाली अंगुली चालक में प्रेरित धारा की दिशा बताएगी।

प्रश्न 11. विद्युत जनित्र (डायनेमो) क्या है? ये कितने प्रकार के होते हैं? इनका सिद्धांत क्या है? किसी एक जनित्र का वर्णन कीजिए।

उत्तर– **विद्युत या जनित्र या प्रत्यावर्ती धारा डायनेमो–** विद्युत जनित्र यंत्र एक ऐसा यंत्र है, जिसके द्वारा यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। इसका कार्य फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के सिद्धांत पर आधारित है।

सिद्धांत– जब किसी बंद कुंडली को किसी शक्तिशाली चुंबकीय क्षेत्र में तेजी से घुमाया जाता है, तो उसमें से होकर जाने वाले चुंबकीय फ्लक्स में लगातार परिवर्तन होता रहता है, जिसके कारण कुंडली में एक विद्युत वाहक बल तथा विद्युत धारा उत्पन्न हो जाती है। कुंडली को घुमाने में किया गया कार्य या व्यय यांत्रिक ऊर्जा कुंडली में विद्युत ऊर्जा के रूप में परिणत हो जाती है।

संरचना– विद्युत जनित्र के निम्नलिखित चार भाग हैं–

(i) क्षेत्र चुंबक– क्षेत्र चुंबक एक शक्तिशाली चुंबक (*NS*) होता है, जिसका कार्य शक्तिशाली चुंबकीय क्षेत्र उत्पन्न करना है, जिसमें कुंडली घूमती है। इसके द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र की बल रेखाएँ *N* से *S* की ओर होती हैं।

(ii) आर्मेचर– आर्मेचर एक आयताकार *abcd* होती है, जो कच्चे लोहे के क्रोड पर पृथक्कृत कॉपर के तार के बहुत से फेरों को लपेटकर बनाई जाती है। इसे आर्मेचर कुंडली भी कहा जाता है। इसमें कॉपर के फेरों की संख्या बहुत अधिक होती है। इस कुंडली को क्षेत्र चुंबक के ध्रुव खंडों *NS* के बीच बाह्य शक्ति; जैसे- स्टीम टरबाइन, वाटर टरबाइन, पेट्रोल इंजन आदि द्वारा तेजी से घुमाया जाता है।

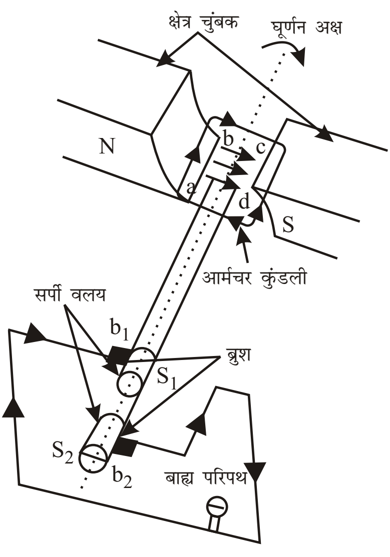

(iii) **सर्पी वलय-** कुंडली पर लिपटे कॉपर के तार के दोनों सिरे धातु के दो छल्लों S_1 एवं S_2 से जुड़े रहते हैं तथा आर्मेचर के साथ-साथ घूमते हैं। इनको सर्पी वलय कहते हैं। ये छल्ले परस्पर तथा धुरा दंड से पृथक्कृत रहते हैं।

(iv) **ब्रुश-** सर्पी वलय S_1, S_2 सदैव कॉपर की बनी दो पत्तियों b_1 एवं b_2 को स्पर्श करते रहते हैं, जिन्हें ब्रुश कहते हैं। ये ब्रुश स्थिर रहते हैं तथा इनका संबंध उस बाह्य परिपथ से कर देते हैं, जिसमें विद्युत धारा जानी होती है।

कार्य विधि- माना कुंडली $abcd$ दक्षिणावर्त दिशा में घूम रही है, जिससे भुजा cd नीचे जा रही है तथा भुजा ab ऊपर की ओर आ रही है। फ्लेमिंग के दाएँ हाथ के नियमानुसार इन भुजाओं में प्रेरित धारा की दिशा चित्र के अनुसार होगी। अत: बाह्य परिपथ में विद्युत धारा S_2 से जाएगी तथा S_1 से वापस आएगी। जब कुंडली अपनी ऊर्ध्वाधर स्थिति से गुजरेगी, तब भुजा ab नीचे की ओर जाना प्रारंभ करेगी तथा cd ऊपर की ओर जाने लगेगी। इसी कारण ab तथा cd में धारा की दिशाएँ पहले से विपरीत हो जाएँगी। इस प्रकार की धारा को प्रत्यावर्ती धारा कहते हैं, क्योंकि प्रत्येक आधे चक्कर के बाद बाह्य परिपथ में धारा की दिशा बदल जाती है।

प्रश्न 12. दिष्ट धारा एवं प्रत्यावर्ती धारा का अंतर समझाइए। दिष्ट धारा डायनेमो का चित्र दिखाते हुए इसकी कार्य विधि को संक्षेप में समझाइए।

उत्तर- दिष्ट धारा एवं प्रत्यावर्ती धारा में अंतर-

दिष्ट धारा - दिष्ट धारा वह विद्युत धारा है जिसका परिमाण नियत रहता है तथा परिपथ के किसी बिंदु में से एक ही दिशा में प्रवाहित होती रहती है। प्राथमिक तथा संचायक सेलों द्वारा प्राप्त धारा, दिष्ट धारा ही होती है।

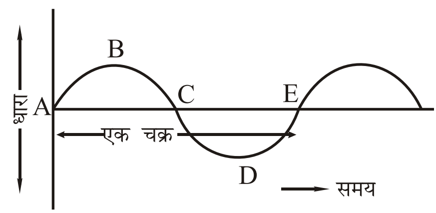

प्रत्यावर्ती धारा -प्रत्यावर्ती धारा वह धारा है जिसका परिमाण आवर्त रूप से बदलता रहता है तथा दिशा बार-बार उत्क्रमित होती रहती है। विद्युत जनित्र अथवा डायनेमों द्वारा प्राप्त धारा प्रत्यावर्ती धारा ही होती है। यदि प्रत्यावर्ती धारा के परिमाण व समय के बीच ग्राफ खींचे तो वह एक ज्या वक्र के रूप में आता है। इस वक्र का भाग $ABCDE$, विद्युत जनित्र की कुंडली के एक चक्कर को निरूपित करता है। इससे स्पष्ट है कुंडली के प्रत्येक चक्कर में धारा की दिशा दो बार उत्क्रमित होती है।

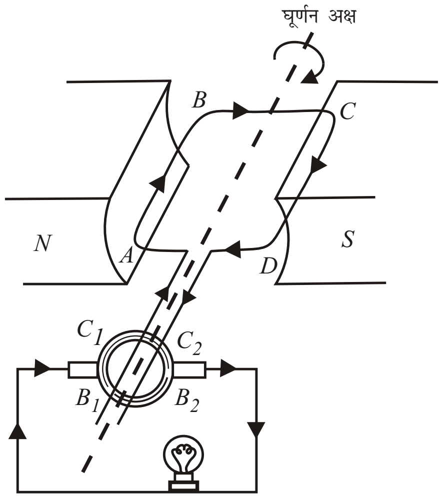

दिष्ट धारा डायनेमो- यांत्रिक ऊर्जा का विद्युत ऊर्जा में रूपांतरण करने वाले उपकरण को डायनेमो कहते हैं। इस प्रकार के जिस उपकरण से

दिष्ट धारा प्राप्त होती है, उसे दिष्ट धारा डायनेमो या जनित्र कहते हैं।

कार्यविधि- माना आयताकार कुंडली का सिरा A विभक्त वलय C_1 से तथा सिरा D विभक्त वलय C_2 से जुड़ा है। माना कुंडली $ABCD$ क्षैतिज चुंबकीय क्षेत्र में स्थित है तथा इसे दक्षिणावर्त दिशा में घुमाया जा रहा है। प्रारंभ में कुंडली का तल चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् है, इस स्थिति में कुंडली में कोई धारा प्रेरित नहीं होगी। कुंडली के चुंबकीय क्षेत्रों में घूमने के कारण उससे बद्ध चुंबकीय फ्लक्स में परिवर्तन होता है तथा कुंडली में धारा प्रेरित होती है। 90° घूमने के पश्चात् कुंडली का तल चुंबकीय क्षेत्र के समांतर हो जाता है, तो धारा अधिकतम हो जाती है। जब कुंडली 90° से 180° घूमती है तो प्रेरित वि०वा०बल व धारा दोनों घटने लगते हैं तथा जब कुंडली का तल चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् हो जाता है, तो प्रेरित धारा शून्य हो जाती है। इस आधे चक्र में फ्लेमिंग के दाहिने हाथ के नियम से धारा की दिशा कुंडली में A से B की ओर व C से D की ओर है तथा बाह्य परिपथ में धारा की दिशा $C_2B_2LB_1C_1$ है। इसके बाद विभक्त वलय C_1 व C_2 अपना ब्रुश बदल देते हैं। जब कुंडली 180° से और आगे घूमती है तो कुंडली में धारा विपरीत दिश में प्रेरित होती है, परंतु विभक्त वलयों द्वारा ब्रुशों के बदलने के कारण बाह्य परिपथ में धारा की दिशा वही बनी रहती है। कुंडली के 270° घूमने पर प्रेरित धारा अधिकतम हो जाती है तथा 360° घूमने पर पुन: शून्य हो जाती है। यही प्रक्रिया कुंडली के प्रत्येक चक्कर में दोहराई जाती है।

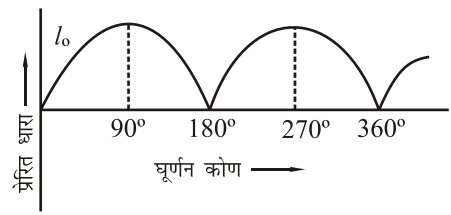

इस प्रकार कुंडली के घूमने से कुंडली में तो प्रत्यावर्ती धारा ही उत्पन्न होती है, परंतु बाह्य परिपथ में धारा की दिशा में परिवर्तन नहीं होता, अर्थात् एक ही दिशा में विद्युत धारा प्रवाहित होती रहती है। दूसरे शब्दों में, दिष्ट धारा प्रवाहित होती रहती है। यह जनित्र, **दिष्ट धारा जनित्र** कहलाता है।

प्रश्न 13. दिष्ट धारा एवं प्रत्यावर्ती धारा में क्या अंतर है? एक प्रत्यावर्ती धारा जनित्र की रचना तथा कार्यविधि स्वच्छ चित्र द्वारा समझाइए।

उत्तर- **दिष्ट धारा एवं प्रत्यावर्ती धारा में अंतर-**

(i) प्रत्यावर्ती धारा को ट्रांसफॉर्मर द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजने में ऊर्जा का क्षय बहुत कम होता है तथा लागत भी बहुत कम आती है, जबकि दिष्ट धारा को एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजने में ऊर्जा का क्षय बहुत अधिक होता है तथा लागत भी बहुत अधिक आती है।

(ii) प्रत्यावर्ती धारा वाले यंत्र, दिष्ट धारा वाले यंत्रों की तुलना में अधिक मजबूत, टिकाऊ एवं सुविधाजनक होते हैं।

(iii) प्रत्यावर्ती धारा, दिष्ट धारा की तुलना में बहुत अधिक खतरनाक है।

(iv) विद्युत विश्लेषण, इलेक्ट्रोप्लेटिंग, विद्युत चुंबक आदि बनाने में दिष्ट धारा का उपयोग किया जाता है न कि प्रत्यावर्ती धारा का।

प्रत्यावर्ती धारा जनित्र की रचना तथा कार्य विधि के लिए प्रश्न संख्या-11 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. चुंबकीय फ्लक्स से आप क्या समझते हैं? इसका मात्रक क्या है?

उत्तर- **चुंबकीय फ्लक्स-** चुंबकीय क्षेत्र में स्थित किसी तल से उसके लंबवत् गुजरने वाली संपूर्ण बल-रेखाओं की संख्या को उस तल का चुंबकीय फ्लक्स कहते हैं। इसे ϕ से प्रदर्शित करते हैं।

यदि क्षेत्रफल A का कोई तल, प्रबलता B के चुंबकीय क्षेत्र में उसके लंबवत् रखा है, तब तल A से गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स

$$\phi = B \times A$$

चुंबकीय फ्लक्स का मात्रक वेबर या न्यूटन $\times$ मीटर/ऐम्पियर होता है।

प्रश्न 2. चुंबकीय फ्लक्स घनत्व क्या है?

उत्तर- **चुंबकीय फ्लक्स घनत्व -** "किसी चुंबकीय क्षेत्र में क्षेत्र के लंबवत् स्थित एकांक पृष्ठ क्षेत्रफल से गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स उस स्थान पर चुंबकीय फ्लक्स घनत्व कहलाता है।" यह चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता के बराबर होती है।

$$\phi = BA \text{ से},$$

$$B = \frac{\phi}{A} \text{ यदि } \quad A = 1 \text{ मीटर}^2$$

तब, $$B = \phi$$

इसका मात्रक वेबर/मीटर^2 होता है।

प्रश्न 3. विद्युत चुंबकीय प्रेरण किसे कहते हैं?

उत्तर- **विद्युत चुंबकीय प्रेरण -** जब किसी बंद विद्युत परिपथ से संबंधित चुंबकीय फ्लक्स में परिवर्तन होता है तो उस परिपथ में एक विद्युत वाहक बल प्रेरित हो जाता है और इसी विद्युत वाहक बल के कारण परिपथ में धारा बहने लगती है। यह धारा केवल तभी तक बहती हैं। जब तक की चुंबकीय फ्लक्स में परिवर्तन होता रहता है। इस घटना को विद्युत चुंबकीय प्रेरण कहते हैं।

प्रश्न 4. प्रेरित विद्युत वाहक बल क्या होता है?

उत्तर- **प्रेरित विद्युत वाहक बल-** जब किसी परिपथ में से गुजरने वाले चुंबकीय फ्लक्स में परिवर्तन होता है, तो परिपथ में एक प्रेरित विद्युत वाहक बल उत्पन्न हो जाता है, जिसका परिणाम चुंबकीय फ्लक्स के परिवर्तन की ऋणात्मक दर के बराबर होता है।

$$e = -\frac{\phi_2 - \phi_1}{\Delta t} \text{ या } e = -\frac{d\phi}{dt}$$

प्रश्न 5. प्रेरित धारा की दिशा कैसे ज्ञात की जा सकती है?

उत्तर- **प्रेरित धारा की दिशा-** प्रेरित धारा की दिशा फ्लेमिंग के दाएँ हाथ के नियम से ज्ञात की जा सकती है यदि दाएँ हाथ का अँगूठा और उसके पास वाली दोनों अंगुलियों को एक-दूसरे के लंबवत् फैलाएँ तब यदि पहली अंगुली चुंबकीय क्षेत्र की दिशा तथा अँगूठा चालक की दिशा को प्रदर्शित करे तो बीच वाली अंगुली चालक में प्रेरित धारा की दिशा बताएगी।

प्रश्न 6. फ्लेमिंग के दाएँ हाथ का नियम लिखिए।

उत्तर- **फ्लेमिंग के दाएँ हाथ का नियम-** यदि दाएँ हाथ का अँगूठा और उसके पास वाली दोनों अंगुलियों को एक-दूसरे के लंबवत् फैलाएँ, तब यदि पहली अंगुली चुंबकीय क्षेत्र की दिशा और अँगूठा चालक के चलने की दिशा, तो बीच वाली अंगुली चालक में प्रेरित धारा की दिशा बताएगी।

प्रश्न 7. प्रेरित धारा की दिशा ज्ञात करने के लिए लेंज का नियम लिखिए।

उत्तर- **प्रेरित धारा की दिशा ज्ञात करने के लिए लेंज का नियम-** इस नियम के अनुसार, ''किसी परिपथ में प्रेरित विद्युत धारा की दिशा सदैव ऐसी होती है कि वह उस कारण का विरोध करती है, जिससे वह स्वयं उत्पन्न होती है।''

प्रश्न 8. डायनेमो क्या है?

उत्तर- **डायनेमो -** डायनेमो एक ऐसा यंत्र है, जिसके द्वारा यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदला जाता है। इसका कार्य फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण के सिद्धांत पर आधारित है।

प्रश्न 9. दिष्ट धारा एवं प्रत्यावर्ती धारा में क्या अंतर है?

उत्तर- **दिष्ट धारा एवं प्रत्यावर्ती धारा में अंतर -**

दिष्ट धारा - दिष्ट धारा वह विद्युत धारा है जिसका परिमाण नियत रहता है तथा परिपथ के किसी बिंदु में से एक ही दिशा में प्रवाहित होती रहती है। प्राथमिक तथा संचायक सेलों द्वारा प्राप्त धारा, दिष्ट धारा ही होती है।

प्रत्यावर्ती धारा -प्रत्यावर्ती धारा वह धारा है जिसका परिमाण आवर्त रूप में बदलता रहता है तथा दिशा बार-बार उत्क्रमित होती रहती है। विद्युत जनित्र अथवा डायनेमों द्वारा प्राप्त धारा प्रत्यावर्ती धारा ही होती है।

प्रश्न 10. यदि चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता B हो, तो लंबवत् क्षेत्रफल A से गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स क्या होगा?

उत्तर- चुंबकीय फ्लकस $\phi =$ चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता $(B) \times$ लंबवत क्षेत्रफल (A)

चुंबकीय फ्लकस $\phi = B \times A$

चुंबकीय फ्लकस (ϕ) का मात्रक वेबर अथवा न्यूटन $\times$ मीटर/ऐम्पियर होता है।

प्रश्न 11. विद्युत जनित्र तथा विद्युत मोटर में अंतर बताइए।

उत्तर- **विद्युत जनित्र तथा विद्युत मोटर में अंतर-** विद्युत जनित्र यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलता है जबकि विद्युत मोटर विद्युत ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में बदलता है।

प्रश्न 12. N फेरों वाली एक कुंडली, जिसका क्षेत्रफल A है, एक चुंबकीय क्षेत्र B में रखी है। उससे गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स क्या होगा, यदि-

(i) कुंडली का तल चुंबकीय बल रेखाओं के लंबवत् हो।

(ii) कुंडली का तल चुंबकीय बल रेखाओं के समांतर हो।

उत्तर- (i) जब कुंडली का तल चुंबकीय बल रेखाओं के लंबवत् हो, तो चुंबकीय फ्लक्स $\phi = NBA$ होगा।

(ii) जब कुंडली का तल चुंबकीय बल रेखाओं के समांतर हो, तो चुंबकीय फ्लक्स शून्य होगा।

प्रश्न 13. संलग्न चित्र में एक कुंडली के पास एक चुंबक का उत्तरी ध्रुव लाते हुए दर्शाया गया है। कुंडली के A सिरे पर किस प्रकार का ध्रुव बनेगा? कुंडली में धारा की दिशा भी दिखाइए।

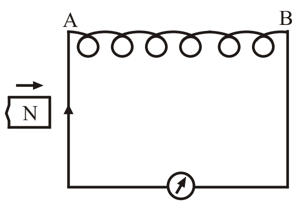

उत्तर- जब हम चुंबक के उत्तरी ध्रुव (N) को कुंडली की ओर को चलाते हैं तो धारामापी में एक विक्षेप होता है। इससे पता चलता है कि चुंबक की गति से कुंडली में विद्युत धारा प्रवाहित होती है तथा धारा की दिशा B से A की ओर होगी। एवं A पर उत्तरी ध्रुव बनेगा।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर के लिए पाठ्य-पुस्तक की पृष्ठ संख्या 143 देखें।

▶ आंकिक प्रश्न

प्रश्न 1. एक कुंडली से गुजरने वाला फ्लक्स 0.1 सेकंड में 20 वेबर से कम होकर 2 वेबर रह जाता है। कुंडली में प्रेरित विद्युत वाहक बल की गणना कीजिए।

हल: दिया है $\phi_1 = 20$ बेबर, $\phi_2 = 2$ बेबर, $\Delta t = 0.1$ सेकंड

$$e = -\frac{(\phi_2 - \phi_1)}{\Delta t}$$

$$= -\frac{(2-20)}{0.1}$$

$$= \frac{18}{0.1}$$

$e = \mathbf{180}$ **वोल्ट** उत्तर

प्रश्न 2. यदि 10 फेरों वाली तार की एक कुंडली से गुजरने वाले चुंबकीय फ्लक्स में 2 सेकंड में 25 वेबर की वृद्धि होती है, तो कुडंली में उत्पन्न विद्युत वाहक बल क्या होगा?

हल: $N = 10$, $\Delta\phi = 25$ वेबर, $\Delta t = 2$ सेकंड $e = ?$

$$e = -\frac{N\Delta\phi}{\Delta t}$$

$$= -\frac{10 \times 25}{2} = -125$$

$\therefore$ $|e| = 125$ वोल्ट

या $e = \mathbf{125}$ **वोल्ट** उत्तर

प्रश्न 3. 500 फेरों वाली एक कुंडली से संबद्ध चुंबकीय फ्लक्स 0.1 सेकंड में 0.32 वेबर से घटकर शून्य रह जाता है। कुंडली के सिरों के बीच उत्पन्न प्रेरित विद्युत वाहक बल की गणना कीजिए।

हल: $N = 500, \phi = 0, \phi_1 = 0.32$ वेबर, $\Delta t = 0.1$ सेकंड, $e = ?$

$$e = \frac{-N(\phi_2 - \phi_1)}{\Delta t}$$

$$= \frac{-500(0 - 0.32)}{0.1}$$

$$= \frac{500 \times 0.32}{0.1}$$

$e = \mathbf{1600}$ **वोल्ट** उत्तर

प्रश्न 4. किसी क्षण एक कुंडली के साथ 8×10^{-4} वेबर का चुंबकीय फ्लक्स संबद्ध है। 0.2 सेकंड के पश्चात् यह बदलकर 4×10^{-4} वेबर हो जाता है। कुंडली में कितना विद्युत वाहक बल प्रेरित होगा?

हल: $\phi_1 = 8 \times 10^{-4}$ वेबर, $\phi_2 = 4.0 \times 10^{-4}$ वेबर, $\Delta t = 0.2$ सेकंड $e = ?$

$$e = -\frac{(\phi_2 - \phi_1)}{\Delta t}$$

$$= \frac{-(4.0\times10^{-4} - 8\times10^{-4})}{0.2}$$

$$= \frac{-10^{-4}(4-8)}{0.2}$$

$$e = \frac{4\times10^{-4}}{0.2}$$

$$= 2\times10^{-3}$$

$e = \mathbf{2\times10^{-3}}$ **वोल्ट** **उत्तर**

प्रश्न 5. एक लंबे सीधे तार में 3.0 ऐम्पियर विद्युत धारा प्रवाहित हो रही है। तार से 50 सेमी दूर स्थित बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता ज्ञात कीजिए।

हलः $I = 3.0$ ऐम्पियर, $r = 50$ सेमी $= \frac{50}{100}$ सेमी $= 0.5$ मीटर

$$B = 2\times10^{-7}\times\frac{I}{r}$$

$$= 2\times10^{-7}\times\frac{3}{0.5}$$

$B = \mathbf{12\times10^{-7}}$ **न्यूटन/ऐम्पियर मीटर** **उत्तर**

प्रश्न 6. यदि 10 चक्करों की एक तार की कुंडली से गुजरने वाले चुंबकीय फ्लक्स में 2 सेकंड में 15 वेबर की वृद्धि होती है, तो कुंडली में उत्पन्न विद्युत वाहक बल क्या होगा?

हलः $N = 10, \Delta\phi = 15$ वेबर, $\Delta t = 2$ सेकंड, $e = ?$

$$e = -\frac{N\Delta\phi}{\Delta t}$$

$$= -\frac{10\times15}{2} = -75$$

$\therefore$ $|e| = \mathbf{75}$ **वोल्ट** **उत्तर**

प्रश्न 7. एक 2 मीटर लंबे तार में 4 ऐम्पियर की धारा प्रवाहित हो रही है। तार के 0.5 मीटर दूर बिंदु पर चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता ज्ञात कीजिए।

हलः $I = 4$ ऐम्पियर, $r = 0.5$ मीटर, $B = ?$

$$B = (2\times10^{-7})\times\frac{I}{r}$$

$$= 2\times10^{-7}\times\frac{4}{0.5}$$

$$= 16\times10^{-7}$$

$= \mathbf{1.6\times10^{-6}}$ **न्यूटन/ऐम्पियर मीटर** **उत्तर**

प्रश्न 8. 100 फेरों वाली एवं 1.0 मीटर^2 क्षेत्रफल की कुंडली को 2×10^{-2} वेबर/मीटर^2 के एकसमान चुंबकीय क्षेत्र में रखने पर कुंडली से बद्ध चुंबकीय फ्लक्स ज्ञात कीजिए। जबकि कुंडली का तल चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् हो।

संकेत- कुंडली से बद्ध चुंबकीय फ्लक्स कुंडली में फेरों की संख्या पर निर्भर नहीं करता। कुंडली के प्रत्येक फेरे से गुजरने वाला चुंबकीय फ्लक्स $\phi = BA$.

हलः $B = 2\times10^{-2}$ वेबर/मीटर^2, $A = 1.0$ मीटर^2, $N = 100, \phi = ?$

$\phi = BA = 2 \times 10^{-2} \times 1.0$

$\phi = \mathbf{2 \times 10^{-2}}$ **वेबर** **उत्तर**

प्रश्न 9. 50 फेरों वाली एवं 0.5 मीटर^2 क्षेत्रफल वाली तार की एक कुंडली को 2×10^{-2} वेबर/मीटर^2 के एकसमान चुंबकीय क्षेत्र में रखने पर कुंडली से संबद्ध चुंबकीय फ्लक्स कितना होगा? यदि कुंडली का तल क्षेत्र के (a) लंबवत् (b) अनुदिश हो।

हल: $N = 50, A = 0.5$ मीटर^2, $B = 2 \times 10^{-2}$ वेबर/मीटर^2, $\phi = ?$

(a) जब कुंडली का तल चुंबकीय क्षेत्र के लंबवत् हो अर्थात $\theta = 90°$

$\phi = BA \cos\theta$

$\phi = 2 \times 10^{-2} \times 0.5 \times \cos 90°$ $[\because \cos 90° = 0]$

$= 0$

(b) जब कुंडली का तल चुंबकीय क्षेत्र के अनुदिश हो अर्थात $\theta = 0°$

$\phi = NBA \cos\theta$

$\phi = 50 \times 2 \times 10^{-2} \times 0.5 \times \cos 0°$ $[\because \cos\theta = \cos 0° = 1]$

$\phi = 50 \times 2 \times 10^{-2} \times 0.5 \times 1$

$\phi = \mathbf{0.5}$ **वेबर** **उत्तर**

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. **फैराडे के विद्युत चुंबकीय प्रेरण संबंधी नियमों का सत्यापन कीजिए।**

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं कीजिए।

▣▣▣

10 अम्ल, क्षार एवं लवण

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. आयनन की मात्रा से आप क्या समझते हैं? आयनन की मात्रा को प्रभावित करने वाले कारकों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर- आयनन की मात्रा- किसी विद्युत अपघट्य को जल में घोलने पर उसके सभी अणु आयनित नहीं होते हैं। अत: विद्युत अपघट्य के अणुओं का वह भाग जो आयनों के रूप में वियोजित हो जाता है, वह आयनन की मात्रा या वियोजन की मात्रा कहलाता है।

$$\text{आयनन की मात्रा} = \frac{\text{आयनों में वियोजित अणुओं की संख्या}}{\text{अणुओं की कुल संख्या}}$$

माना AB के प्रारंभ में लिए गए अणुओं की संख्या 100 है। साम्यावस्था पर इसके 10 अणु आयनित अवस्था में तथा 90 अणु अनायनित अवस्था में रहते हैं।

अत:	$AB \rightleftharpoons$	A^+	$+B^-$
प्रारंभ में अणुओं की संख्या	100	0	0
साम्यावस्था पर अणुओं/आयनों की संख्या	90	10	10

अत: $$\text{आयनन की मात्रा} = \frac{10}{100} = 0.1$$

इसका मान 1 या इससे भी कम होता है। इसे प्रतिशतता में भी व्यक्त किया जा सकता है।

$$\text{आयनन की प्रतिशतता} = \text{आयनन की मात्रा} \times 100\ \%$$

आयनन की मात्रा को प्रभावित करने वाले कारक- किसी विद्युत अपघट्य के आयनन की मात्रा निम्नलिखित कारकों द्वारा प्रभावित होती है–

(i) विलायक की प्रकृति- विलायक की प्रकृति आयनन की मात्रा को प्रभावित करती है। अन्य विलायकों की अपेक्षा जल में आयतन की मात्रा ज्यादा होती है।

(ii) ताप- ताप में वृद्धि होने से आयनन की मात्रा भी बढ़ जाती है।

(iii) विद्युत अपघट्य की प्रकृति- वे पदार्थ जो जलीय विलयन में पूर्ण रूप से अपने आयनों में विभाजित हो जाते हैं, प्रबल विद्युत अपघट्य कहलाते हैं; जैसे KNO_3, CH_3COONa, $NaCl$, NH_4Cl, $NaOH$, KOH, HNO_3, H_2SO_4 आदि। जलीय विलयन में जो पदार्थ मुख्य रूप से अवियोजित अणुओं के रूप में रहते हैं, दुर्बल विद्युत अपघट्य कहलाते हैं; जैसे – H_2S, CH_3COOH, NH_4OH, HCN आदि। जलीय विलयन में दुर्बल विद्युत अपघट्य पदार्थों के आयनन की मात्रा कम होती है।

(iv) विलयन में सम आयन की उपस्थिति- यदि विलयन में सम आयन की उपस्थिति हो तो आयनन की मात्रा घट जाती है; जैसे कि NH_4Cl की उपस्थिति में NH_4OH के आयनन की मात्रा कम हो जाती है। अत: यहाँ अमोनियम आयन (NH_4^+) सम आयन है।

(v) **विलयन का सांद्रण–** विद्युत अपघट्य का आयनन विलयन के सांद्रण के व्युत्क्रमानुपाती होता है। इस प्रकार तनु विलयन में आयनन की मात्रा अधिक होती है।

प्रश्न 2. अम्ल तथा क्षारक की आधुनिक परिकल्पना क्या है? प्रत्येक का एक-एक उदाहरण देते हुए स्पष्ट कीजिए। संबंधित रासायनिक समीकरण भी लिखिए।

उत्तर– **अम्ल की परिकल्पना–** वह पदार्थ, जो नीले लिटमस पेपर को लाल कर देता है तथा जो सक्रिय धातुओं से क्रिया करके हाइड्रोजन मुक्त करता है, अम्ल कहलाता है। अत: अम्लों में हाइड्रोजन होती है। अम्लों में उपस्थित हाइड्रोजन इस प्रकार की होती है कि जब अम्ल जल में घोला जाता है, तो वह धनावेशित हाइड्रोजन आयनों (H^+) के रूप में अलग होकर विलयन में $H^+(aq)$ आयनों के रूप में चले जाते हैं।

आर्हेनियस के सिद्धांत के अनुसार, वे हाइड्रोजन युक्त पदार्थ, जो जलीय विलयन में मुक्त हाइइड्रोजन आयन (H^+) देते हैं, अम्ल कहलाते हैं; जैसे–

$$\underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl} \rightleftharpoons \underset{\text{हाइड्रोजन आयन}}{H^+} + \underset{\text{क्लोराइड आयन}}{Cl^-}$$

अत: किसी भी अम्ल में H^+ आयन की उपस्थिति ही उसे जलीय विलयन में अम्लीय बनाती है।

1923 ई० में ब्रॉन्स्टेड एवं लौरी ने बताया कि अम्ल वे पदार्थ हैं, जो विलयन में हाइड्रोजन आयन (H^+) उत्पन्न करते हैं, परंतु विलयन में ये हाइड्रोजन आयन ध्रुवीय जल अणु के साथ संयुक्त अवस्था में रहते हैं।

$$\underset{\text{हाइड्रोजन आयन}}{H^+} + \underset{\text{जल अणु}}{H_2O} \rightleftharpoons \underset{\text{हाइड्रोनियम आयन}}{H_3O^+}$$

किसी भी अम्ल की प्रबलता विलयन में सरलता से H^+ आयनों के दान पर निर्भर करती है।

नाइट्रिक अम्ल (NHO_3) की तुलना में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) शीघ्रता से H^+ मुक्त करता है–

$$\underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl} + \underset{\text{जल}}{H_2O} \rightleftharpoons \underset{\text{हाइड्रोनियम आयन}}{H_3O^+} + \underset{\text{क्लोराइड आयन}}{Cl^-}$$

$$\underset{\text{नाइट्रिक अम्ल}}{HNO_3} + \underset{\text{जल}}{H_2O} \rightleftharpoons \underset{\text{हाइड्रोनियम आयन}}{H_3O^+} + \underset{\text{नाइट्रेट आयन}}{NO_3^-}$$

स्पष्टत: सभी अम्लों में यह गुण उपस्थित होता है कि जब उन्हें जल में घोला जाता है, तो वे हाइड्रोजन आयन उत्पन्न करते हैं। अत: किसी अम्ल का अम्लीय गुण इसमें उपस्थित हाड्रोजन आयनों के कारण होता हैं।

क्षार की परिकल्पना– क्षार वे पदार्थ हैं, जो लाल लिटमस पर नीला रंग छोड़ते हैं। ये रासायनिक रूप में, अम्लों के विपरीत होते हैं।

क्षार जलीय विलयन में हाइड्रॉक्सिल आयन OH^- देते हैं। इन आयनों के अतिरिक्त क्षार और कोई ऋणायन नहीं देते हैं–

$$\underset{\text{सोडियन हाइड्रॉक्साइड}}{NaOH} \rightleftharpoons \underset{\text{सोडियम आयन}}{Na^+} + \underset{\text{हाइड्रॉक्सिल आयन}}{OH^-}$$

प्रश्न 3. अम्ल तथा क्षारक की प्रबलता तथा आयनन की मात्रा से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– **अम्ल तथा क्षारक की प्रबलता–** अम्लों की परिभाषा से ज्ञात होता है कि अम्ल आयनित होकर अपने जलीय विलयन में H^+ या H_3O^+ आयन देते हैं। परंतु क्या सभी अम्ल पूर्ण रूप से आयनित होकर जलीय विलयन में H^+ या H_3O^+ आयन देते हैं या नहीं? सभी अम्ल पूर्ण रूप से आयनित नहीं होते; जैसे– सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) अपने जलीय विलयन में पूर्णतया आयनित होकर अत्यधिक मात्रा में H^+ आयन उत्पन्न करता है परंतु ऐसीटिक अम्ल (CH_3COOH) कम मात्रा में H^+ आयन उत्पन्न करता है।

प्रबल अम्ल– वे अम्ल जो अपने जलीय विलयन में पूर्ण रूप से आयनित हो जाते हैं तथा अधिक मात्रा में H^+ या H_3O^+ आयन उत्पन्न करते हैं, प्रबल अम्ल कहलाते हैं। जैसे– नाइट्रिक अम्ल, सल्फ्युरिक अम्ल तथा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल।

दुर्बल अम्ल–दुर्बल अम्ल अपने जलीय विलयन में पूर्णतया आयनित नहीं होते तथा विलयन में कम H^+ या H_3O^+ आयन उत्पन्न करते हैं। जैसे–ऐसीटिक अम्ल, ऑक्जैलिक अम्ल।

प्रबल क्षारक– वे क्षारक, जो जलीय विलयन में पूर्ण रूप से आयनित हो जाते हैं तथा अधिक मात्रा में OH^- आयन उत्पन्न करते हैं, प्रबल क्षारक कहलाते हैं; जैसे– पोटैशियम हाइड्रॉक्साइड, सोडियम हाइड्रॉक्साइड।

दुर्बल क्षारक– दुर्बल क्षारक जलीय विलयन में कम आयनित होते हैं तथा कम मात्रा में OH^- आयन उत्पन्न करते हैं; जैसे– अमोनियम हाइड्रॉक्साइड।

आयनन की मात्रा– किसी विद्युत अपघट्य को जल में घोलने पर उसके सभी अणु आयनित नहीं होते। किसी विद्युत अपघट्य के अणुओं का वह भाग जो आयनों के रूप में वियोजित हो जाता है, आयनन की मात्रा कहलाता है–

$$\text{आयनन की मात्रा} = \frac{\text{आयनों में वियोजित अणुओं की संख्या}}{\text{अणुओं की कुल संख्या}}$$

प्रश्न 4. हाइड्रोजन आयन सांद्रण क्या है? एक विलयन में हाइड्रॉक्साइड आयन सांद्रण 1×10^{-8} मोल प्रति लीटर है, इस विलयन का pH मान ज्ञात कीजिए।

उत्तर– **हाइड्रोजन आयन सांद्रण –**हाइड्रोजन आयन सांद्रण को प्राय: ग्राम–आयन प्रति लीटर अर्थात मोल प्रति लीटर में प्रदर्शित करते हैं। हाइड्रोजन आयन सांद्रण सामान्यत: 1 से 1×10^{-14} मोल प्रति लीटर तक होता है। हाइड्रोजन आयन सांद्रण को अधिक सुविधाजनक रूप में सोरेनसन नामक वैज्ञानिक ने प्रदर्शित किया। सोरेनसन के अनुसार किसी विलयन के हाइड्रोजन आयन सांद्रण 10 की घात के रूप में चिह्न बदलकर प्रकट करते हैं। यह घात pH कहलाती है–

$$[H^+] = 10^{-pH}$$

दोनों पक्षों का log लेने पर–

$$\log_{10}[H^+] = \log_{10} 10^{-pH}$$

$$\log_{10}[H^+] = -pH \log_{10} 10 \qquad [\because \log_{10} 10 = 1]$$

$$\Rightarrow \quad \log_{10}[H^+] = -pH$$

$$\Rightarrow \quad pH = \log \frac{1}{[H^+]}$$

उदासीन विलयन में हाइड्रोजन आयन का सांद्रण 1×10^{-7} या 10^{-7} ग्राम आयन प्रति लीटर होता है, जो OH^- आयन सांद्रण के समान होता है। अम्लीय विलयन में H^+ आयन सांद्रण 1×10^{-7} से अधिक तथा क्षारीय विलयन में 1×10^{-7} से कम होगा।

एक विलयन में हाइड्रॉक्साइड आयन सांद्रण $=1\times10^{-8}$ मोल प्रति लीटर

अर्थात् $[OH^-]=10^{-8}$ मोल प्रति लीटर

हम जानते हैं कि

जल के आयनिक गुणनफल का मान 1×10^{-14} होता है।

$$[H^+]\times[OH^-]=1\times10^{-14}$$

$$H^+=\frac{10^{-14}}{[OH^-]}=\frac{10^{-14}}{10^{-8}}=10^{-6}$$

$$\Rightarrow \quad [H^+]=10^{-pH}$$

$$\Rightarrow \quad 10^{-6}=10^{-pH}$$

$$\Rightarrow \quad pH=6$$

प्रश्न 5. pH मान का निर्धारण कीजिए।

उत्तर- pH मान का निर्धारण- शुद्ध जल का आयनन साम्य इस प्रकार किया जाता है-

$$H_2O \rightleftharpoons H^+ + OH^-$$

द्रव्य अनुपाती क्रिया के नियमानुसार-

$$K=\frac{[H^+][OH^-]}{[H_2O]}$$

$$\Rightarrow \quad K\times[H_2O]=[H^+][OH^-]$$

शुद्ध जल के लगभग 550 अणुओं में से केवल एक अणु का आयनन होता है। अतः H_2O लगभग स्थिर रहता है तथा आयनन के कारण इसके सांद्रण में कोई परिवर्तन नहीं होता है। अतः $K\times[H_2O]$ एक स्थिरांक, जिसको K_w से व्यक्त किया जाता है तथा इसको जल तुल्यांक कहते हैं।

$$K_w=[H^+][OH^-]$$

25° C पर K_w का मान 1×10^{-14} ग्राम आयन प्रति लीटर होता है।

$$\therefore \quad [H^+][OH^-]=K_w=1.0\times10^{-14}$$

शुद्ध जल के उदासीन होने के कारण उसमें $[H^+]$ तथा $[OH^-]$ आयनों का सांद्रण समान होता है।

अतः $[H^+]=[OH^-]$

$$\therefore \quad [H^+][OH^-]=[H^+][H^+]=[H^+]^2=1.0\times10^{-14}$$

$$[H^+]=1\times10^{-7} \text{ ग्राम आयन प्रति लीटर}$$

उदासीन विलयन में हाइड्रोजन आयन का सांद्रण 1×10^{-7} या 10^{-7} ग्राम आयन प्रति लीटर होता है, जो OH^- आयन सांद्रण के समान होता है। अम्लीय विलयन में यह H^+ आयन सांद्रण 1×10^{-7} से अधिक तथा क्षारीय विलयन में 1×10^{-7} से कम होगा। अतः किसी विलयन की अम्लीयता या क्षारकता को उसके हाइड्रोजन आयन सांद्रण या हाइड्रॉक्सिल आयन सांद्रण से प्रकट करते हैं।

(i) $[H^+] > [OH^-]$ हो, तो विलयन अम्लीय होगा।

(ii) $[H^+] < [OH^-]$ हो, तो विलयन क्षारीय होगा।

(iii) $[H^+] = [OH^-]$ हो, तो विलयन उदासीन होगा।

सामान्यत: विलयनों में H^+ आयन सांद्रण का मान कम होता है। सोरेनसन के अनुसार किसी विलयन के हाइड्रोजन आयन सांद्रण 10 की घात के रूप में चिह्न बदलकर प्रकट करते हैं और इस घात को ही pH कहते हैं। अत: किसी विलयन का pH मूल्य 10 की वह ऋणात्मक घात की वह संख्या है, जो उस विलयन के हाइड्रोजन आयन सांद्रण को प्रकट करती है।

अत: $[H^+] = 10^{-x}$, यदि $pH = x$ तब $[H^+] = 10^{-pH}$

दोनों तरफ का log लेने पर,

$$\Rightarrow \quad \log_{10}[H^+] = \log_{10} 10^{-pH}$$

$$\Rightarrow \quad \log_{10}[H^+] = -pH \log_{10} 10$$

$$\Rightarrow \quad \log_{10}[H^+] = -pH \qquad [\because \log_{10} 10 = 1]$$

$$\Rightarrow \quad pH = -\log[H^+] = \log \frac{1}{[H^+]}$$

अत: pH मूल्य किसी विलयन में उपस्थित हाइड्रोजन आयनों के ग्राम आयन प्रति लीटर में सांद्रण का ऋणात्मक लघुगणक है या pH मूल्य हाइड्रोजन आयन सांद्रण के व्युत्क्रम का लघुगणक है।

प्रश्न 6. अम्ल क्षार सूचक क्या होते हैं? ओस्टवाल्ड के सिद्धांत तथा क्विनोनॉयड सिद्धांत के अनुसार इनकी कार्य विधि स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- **अम्ल क्षार सूचक-** अम्ल क्षार सूचक वे पदार्थ हैं जिनका अम्लीय विलयन में एक रंग तथा क्षारीय विलयन में दूसरा रंग होता है अर्थात् pH मान में उचित परिवर्तन के साथ इनके रंग में परिवर्तन हो जाता है।

अथवा

अम्ल क्षार सूचक दुर्बल अम्ल या दुर्बल क्षार होते हैं, जो कि H^+ आयन या OH^- आयन की सांद्रता परिवर्तन पर अपने रंग में परिवर्तन करते हैं। **उदाहरणार्थ-** मेथिल ऑरेंज, लिटमस तथा फिनॉल्फ्थैलीन आदि।

सूचकों का सिद्धांत- अम्ल क्षार सूचकों के व्यवहार को स्पष्ट करने हेतु दो सिद्धांत प्रस्तुत किए गए हैं-

(i) ओस्टवाल्ड का सिद्धांत - इस सिद्धांत के अनुसार अम्ल क्षार सूचक या तो कोई दुर्बल कार्बनिक अम्ल होता है और या फिर दुर्बल क्षार। विलयन में सूचक के अनायनित अणु एक रंग के होते हैं और इनके वियोजन द्वारा प्राप्त आयन किसी दूसरे रंग के होते हैं। दुर्बल विद्युत अपघट्य होने के कारण इनका आयनन कम होता है। अम्लीय सूचक रंगीन ऋणायन और क्षारीय सूचक रंगीन धनायन देते हैं।

उदाहरणार्थ- फिनॉल्फ्थैलीन एक दुर्बल अम्ल है। यह रंगहीन होता है इसे जल में घोलने पर यह रंगहीन H^+ आयनों तथा गुलाबी रंग के ऋणायनों में आयनित होता है। सुविधा के लिए इसे हम HPh से प्रदर्शित करेंगे।

$$\underset{\text{रंगहीन}}{HPh} \rightleftharpoons \underset{\text{रंगहीन}}{H^+} + \underset{\text{गुलाबी रंग}}{Ph^-}$$

अम्लीय माध्यम में H^+ आयनों की उपस्थिति में सम आयन प्रभाव के कारण HPh का आयनन बहुत कम होता है अर्थात् Ph^- का सांद्रण बहुत कम रहता है और विलयन रंगहीन अवस्था में रहता है। क्षारीय माध्यम में क्षार में प्राप्त (OH^-) आयन HPh से प्राप्त H^+ आयनों से संयोग करके जल बनाते हैं। जल एक दुर्बल विद्युत अपघट्य है तथा इसका आयनन बहुत कम मात्रा में होता है। इस कारण H^+ की कमी हो जाती है तथा उपर्युक्त समीकरण की साम्यावस्था विक्षुब्ध (disturb) हो जाती है। साम्यवस्था को पुन: स्थापित करने हेतु HPh के आयनन की मात्रा बढ़ जाती है। इस प्रकार विलयन में Ph^- आयनों का सांद्रण बढ़ जाता है तथा विलयन का रंग गुलाबी हो जाता है।

$$HPh \rightleftharpoons H^+ + Ph^-$$

$$NaOH \rightleftharpoons Na^+ + OH^-$$

$$H + OH^- \rightleftharpoons H_2O \quad \text{(दुर्बल विद्युत अपघट्य)}$$

$$Na^+ + Ph^- \rightleftharpoons NaPh \quad \text{(प्रबल विद्युत अपघट्य)}$$

इसी प्रकार मेथिल ऑरेंज के रंग परिवर्तन को भी समझाया जा सकता है। मेथिल ऑरेंज एक दुर्बल क्षार है तथा इस प्रकार वियोजित होता है–

$$\underset{\text{पीला रंग}}{MeOH} \rightleftharpoons \underset{\text{लाल रंग}}{Me^+} + \underset{\text{रंगहीन}}{OH^-}$$

क्षारीय माध्यम में OH^- आयनों की उपस्थिति में सम आयन प्रभाव के कारण MeOH का आयनन बहुत कम होता है अर्थात् Me^+ का सांद्रण बहुत कम रहता है और विलयन का रंग पीला ही रहता है। अम्लीय माध्यम में अम्ल से प्राप्त H^+ आयन MeOH से प्राप्त OH^- आयनों से संयोग करके जल बनाते हैं। जल एक दुर्बल विद्युत अपघट्य है तथा इसका आयनन बहुत कम मात्रा में होता है। इस कारण OH^- आयनों की सांद्रता में कमी होती है तथा उपरोक्त समीकरण की साम्यावस्था विक्षुब्ध हो जाती है। साम्यावस्था को पुन: स्थापित करने के लिए MeOH के आयनन की मात्रा बढ़ जाती है। इस प्रकार विलयन में Me^+ आयनों का सांद्रण बढ़ जाता है तथा विलयन का रंग लाल हो जाता है।

$$MeOH \rightleftharpoons Me^+ + OH^-$$

$$HCl \rightleftharpoons H^+ + Cl^-$$

$$H^+ + OH^- \rightleftharpoons H_2O \text{(दुर्बल विद्युत अपघट्य)}$$

$$Me^+ + Cl^- \rightleftharpoons MeCl \text{ (दुर्बल विद्युत अपघट्य)}$$

ओस्टवाल्ट का उपर्युक्त सिद्धांत कई अर्थों में अपूर्ण होते हुए भी सूचकों के व्यवहार की व्याख्या सरल रूप में करता है।

(ii) क्विनोनॉयड सिद्धांत – यह सिद्धांत सूचकों की कार्यविधि स्पष्ट करने का आधुनिक सिद्धांत हैं।

(a) अम्ल क्षार सूचक दो चलावयवी रूपों में रहते हैं, जिसकी सरंचनाएँ भिन्न होती हैं। दोनों रूप साम्यावस्था में रहते हैं। एक रूप को बेंजेनॉयड रूप तथा दूसरे को क्विनोनॉयड रूप कहते हैं।

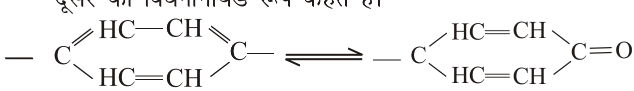

(b) दोनों रूपों के रंग भिन्न होते हैं। रंगों में भिन्नता का कारण एक चलावयवी रूप में परिवर्तित होना है।

(c) एक रूप मुख्य रूप से अम्लीय माध्यम से तथा दूसरा रूप क्षारीय माध्यम में उपस्थित रहता है। अत: अनुमापन के दौरान माध्यम अम्लीय से क्षारीय या विपरीत करने पर pH में परिवर्तन एक चलावयवी रूप को दूसरे में परिवर्तित कर देता है। इसलिए रंग में परिवर्तन होता है।

सर्वव्यापी सूचक– कई सूचकों को एक दूसरे में मिलाकर ऐसे मिश्रण तैयार किए जा सकते हैं, जो विभिन्न pH मान वाले माध्यमों में विभिन्न रंग प्रदर्शित करें। इस प्रकार के सूचकों के मिश्रण को सर्वव्यापी सूचक कहते हैं।

उदाहरणार्थ–कोल्थॉफ (Kolthoff) एक सर्वव्यापी सूचक है। यह फिनॉल्फ्थैलीन, मेथिल रेड, α-नेफ्थॉलथैलीन, थाईमॉलथैलीन तथा ब्रोमोथाइमॉल ब्लू नामक पाँच विभिन्न सूचकों का मिश्रण होता है। यह मिश्रण विशेष pH पर विशेष रंग को दर्शाता है। यह मिश्रण pH = 4 पर लाल रंग, pH = 5 पर नारंगी रंग, pH = 6 पर नींबूई पीला रंग, pH = 7 पर हरा पीला रंग, pH = 8 पर हरा रंग, pH = 9 पर नीला हरा रंग, pH = 10 पर नीला बैंगनी रंग तथा pH = 11 पर लाल बैंगनी रंग प्रदर्शित करता है। सर्वव्यापी सूचक का प्रयोग सभी अभिक्रियाओं के लिए नहीं किया जा सकता है। इसका प्रयोग कुछ विशिष्ट अभिक्रियाओं के लिए विशेष परिस्थितियों में ही होता है।

प्रश्न 7. सूचक क्या है? एक उदाहरण की सहायता से अम्ल क्षार सूचकों के अम्लीय तथा क्षारीय माध्यम में रंग परिवर्तन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– **सूचक–** सूचक वे पदार्थ हैं, जिनका उपयोग आयतनात्मक विश्लेषण में किसी रासायनिक अभिक्रिया के पूर्ण होने की जानकारी प्राप्त करने में होता है। दूसरे शब्दों में, इनका उपयोग अंत बिंदु ज्ञात करने में होता है।

किसी अम्ल क्षार सूचक का रंग विलयन की pH पर निर्भर करता है। किसी अम्ल क्षार सूचक का रंग परिवर्तन pH के एक निश्चित परिसर में होता है, जिसे pH परिसर कहते हैं। **उदाहरणार्थ–** फिनॉल्फ्थैलीन का pH परिसर 8.0 – 9.8 है। अत: फिनॉल्फ्थैलीन का रंग परिवर्तन इन pH मूल्यों के मध्य होता है। 8.0 से कम pH वाले विलयन में यह रंगहीन होता है तथा 9.8 से अधिक pH वाले विलयन में इसका रंग गुलाबी होता है। फिनॉल्फ्थैलीन दुर्बल क्षारीय विलयन में रंगहीन तथा प्रबल विलयन में गुलाबी होता है। स्पष्ट है कि यह आवयश्यक नहीं है कि किसी अम्ल क्षार सूचक का रंग सभी क्षारीय विलयनों में एक-सा हो। इसी प्रकार यह भी आवश्यक नहीं है कि किसी अम्ल क्षार सूचक का रंग सभी अम्लीय विलयनों में एक-सा हो।

अम्लीय व क्षारीय माध्यम में अम्ल क्षार सूचक का रंग परिवर्तन– फिनॉल्फ्थैलीन एक प्रमुख अम्ल-क्षार सूचक है। यह एक दुर्बल अम्ल है। यह रंगहीन होता है। इसे जल में घोलने पर यह रंगहीन H^+ आयनों तथा गुलाबी रंग के ऋणायनों में आयनित होता है। फिनॉल्फ्थैलीन को HPh से प्रदर्शित करने पर—

$$\underset{\text{रंगहीन}}{HPh} \rightleftharpoons \underset{\text{रंगहीन}}{H^+} + \underset{\text{गुलाबी रंग}}{Ph^-}$$

अम्लीय माध्यम में H^+ आयनों की उपस्थिति में सम आयन प्रभाव के कारण HPh का आयनन बहुत कम होता है अर्थात् Ph^- का सांद्रण बहुत कम रहता है और विलयन रंगहीन अवस्था में रहता है।

क्षारीय माध्यम में क्षार में प्राप्त OH^- आयन HPh से प्राप्त H^+ आयनों से संयोग करके जल बनाते हैं। जल एक दुर्बल विद्युत अपघट्य है तथा इसका आयनन बहुत कम मात्रा

में होता है। इस कारण H^+ की कमी हो जाती है तथा दी गई समीकरण की साम्यावस्था विक्षुब्ध हो जाती है। साम्यावस्था को पुन: स्थापित करने हेतु HPh के आयनन की मात्रा बढ़ जाती है। इस प्रकार विलयन में Ph^- आयनों का सांद्रण बढ़ जाता है तथा विलयन का रंग गुलाबी हो जाता है।

प्रश्न 8. अम्लों तथा क्षारों के सामान्य गुण लिखिए।

उत्तर- अम्लों के सामान्य गुण-

(i) प्रबल अम्ल प्रबल संक्षारक पदार्थ हैं अर्थात् अपने प्रभाव से लकड़ी, कपड़ा, कागज, त्वचा आदि को गलाकर नष्ट कर देते हैं।

(ii) अम्लों का स्वाद खट्टा होता है लेकिन इनकी संक्षारक प्रवृत्ति के कारण इनको चख कर नहीं देखना चाहिए।

(iii) अम्ल जल में विलेय होते हैं। जब किसी अम्ल को जल में घोला जाता है तो ऊष्मा उत्पन्न होती है तथा विलयन का ताप बढ़ जाता है। उत्पन्न ऊष्मा की मात्रा अम्ल की प्रकृति पर निर्भर करती है। प्रबल अम्लों को जल में घोलने पर अधिक मात्रा में ऊष्मा उत्पन्न होती है। अत: प्रबल अम्लों को तनु करने के लिए उनमें कभी भी जल नहीं मिलाते हैं बल्कि जल में अम्ल को धीरे-धीरे मिलाते हैं।

(iv) अम्ल नीले लिटमस कागज को लाल कर देते हैं।

(v) अम्ल जिंक, मैग्नीशियम आदि कई धातुओं के साथ अभिक्रिया करके हाइड्रोजन मुक्त करते हैं। **उदाहरणार्थ-**

$$\underset{\text{जिंक}}{Zn} + \underset{\text{सल्फ्युरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{जिंक सल्फेट}}{ZnSO_4} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2}$$

$$\underset{\text{मैग्नीशियम}}{Mg} + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{मैग्नीशियम सल्फेट}}{MgSO_4} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2}$$

(vi) अम्ल क्षारों से अभिक्रिया करके उनके प्रभाव को नष्ट कर देते हैं तथा लवण और जल बनाते हैं। इस क्रिया को उदासीनीकरण कहते हैं। **उदाहरणार्थ-**

$$\underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl(aq)} + \underset{\text{सोडियम हाइड्राक्साइड}}{NaOH(aq)} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम क्लोराइड}}{NaCl(aq)} + \underset{\text{जल}}{H_2O(l)}$$

क्षारों के सामान्य गुण-

(i) क्षार का विलयन लाल लिटमस को नीला कर देता है। प्रबल क्षार का स्वाद खारा होता है तथा इसका जलीय विलयन चिकना होता है।

(ii) क्षार अम्लों के साथ अभिक्रिया करके लवण तथा जल बनाता है। **उदाहरणार्थ-**

(a) कॉस्टिक सोडा नाइट्रिक एसिड के साथ अभिक्रिया करके सोडियम नाइट्रेट (लवण) तथा जल बनाता है।

$$NaOH + HNO_3 \longrightarrow NaNO_3 + H_2O$$

(b) कॉस्टिक पोटाश (KOH) हाइड्रोक्लोरिक एसिड के साथ अभिक्रिया करके पोटैशियम क्लोराइड (लवण) तथा जल बनाता है-

$$KOH + HCl \longrightarrow KCl + H_2O$$

अम्लों तथा क्षारों की इस प्रकार की अभिक्रिया को जिसमें जल तथा लवण बनता है, उदासीनीकरण कहते हैं। इस अभिक्रिया में अम्ल के H^+ आयन तथा क्षार के OH^- आयन परस्पर अभिक्रिया करके जल बनाते हैं।

उदाहरणार्थ–

जब हाइड्रोक्लोरिक एसिड कॉस्टिक सोडा (क्षार) से अभिक्रिया करता है तो NaCl (लवण) तथा जल बनता है।

$$HCl + NaOH \longrightarrow NaCl + H_2O$$

आयनन सिद्धांत के आधार पर उपर्युक्त अभिक्रिया को निम्नलिखित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है–

$$HCl \rightleftharpoons H^+ + Cl^-$$

$$NaOH \rightleftharpoons Na^+ + OH^-$$

$$H^+ + OH^- \rightleftharpoons H_2O$$

$$Na^+ + Cl^- \rightleftharpoons NaCl$$

(iii) क्षार तेलों व वसाओं के साथ अभिक्रिया करके ग्लिसरॉल व साबुन बनाते हैं।

(iv) प्रबल क्षार भी प्रबल अम्लों की भाँति संक्षारक होते हैं अर्थात् लकड़ी, कपड़ा, कागज इत्यादि को गला देते हैं।

प्रश्न 9. उदासीनीकरण किसे कहते हैं? उदासीनीकरण ऊष्मा की परिभाषा दीजिए। किसी प्रबल अम्ल तथा प्रबल क्षार की उदासीनीकरण ऊष्मा सदैव स्थिर क्यों रहती है?

उत्तर– **उदासीनीकरण–** अम्लों तथा क्षारों की वह अभिक्रिया, जिसमें जल तथा लवण बनता है, उदासीनीकरण कहलाती है। इस अभिक्रिया में अम्ल के H^+ आयन तथा क्षार के OH^- आयन परस्पर अभिक्रिया करके जल बनाते हैं, जैसे–

$$HCl + NaOH \longrightarrow NaCl + H_2O$$

उपर्युक्त अभिक्रिया में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl), जब कॉस्टिक सोडा (NaOH), जो कि एक क्षार है, से अभिक्रिया करता है तो लवण (NaCl) व जल बनता है।

उदासीनीकरण ऊष्मा– एक ग्राम तुल्यांकी भार अम्ल और एक ग्राम तुल्यांकी भार क्षार के तनु विलयनों के परस्पर उदासीनीकरण में अवशोषित ऊष्मा को उदासीनीकरण ऊष्मा कहते हैं।

प्रबल अम्ल तथा प्रबल क्षार तनु विलयन में लगभग पूर्ण रूप से अपने आयनों में वियोजित हो जाते हैं। अत: प्रबल अम्लों तथा प्रबल क्षारों की उदासीनीकरण ऊष्मा वास्तव में H^+ तथा OH^- से H_2O बनने की अभिक्रिया ऊष्मा है। अत: प्रबल अम्लों तथा प्रबल क्षारों की उदासीनीकरण ऊष्मा का मान स्थिर रहता है।

उदासीनीकरण अभिक्रिया में ऊष्मा उत्सर्जित होती है। प्रबल अम्लों व प्रबल क्षारों की उदासीनीकरण अभिक्रिया में 13.7 किलोकैलोरी ऊष्मा उत्सर्जित होती है। अत: प्रबल अम्लों व प्रबल क्षारों की उदासीनीकरण ऊष्मा –13.7 किलोकैलोरी होती है।

उदाहरणार्थ–

$$HCl(aq) + NaOH(aq) \longrightarrow NaCl(aq) + H_2O(l) + 13.7 \text{ किलोकैलोरी}$$

$$HNO_3(aq) + KaOH(aq) \longrightarrow KNO_3(aq) + H_2O(l) + 13.7 \text{ किलोकैलोरी}$$

दुर्बल अम्लों तथा दुर्बल क्षारों की उदासीनीकरण ऊष्मा का आंकिक मान 13.7 किलोकैलोरी से कम होता है। इस क्रिया में 13.7 किलोकैलोरी से कम ऊष्मा उत्पन्न होती है। इसका कारण यह है कि दुर्बल अम्लों तथा दुर्बल क्षारों का आयनन पूर्ण नहीं होता है। प्रारंभ में अम्ल से प्राप्त H^+ तथा क्षार से प्राप्त OH^- आयन क्रिया करके 13.7 किलोकैलोरी ऊष्मा उत्पन्न करते हैं। इस ऊष्मा का कुछ भाग दुर्बल अम्ल तथा दुर्बल क्षार के आयनन को पूर्ण करने में प्रयुक्त होता है। अत: मुक्त ऊष्मा का मान 13.7

किलोकैलोरी से कम होता है तथा उदासीनीकरण ऊष्मा का आंकिक मान 13.7 किलोकैलोरी से कम होता है। **उदाहरणार्थ-**

$$\underset{\text{(दुर्बल अम्ल)}}{CH_3COOH(aq)} + \underset{\text{(प्रबल अम्ल)}}{NaOH(aq)} \longrightarrow CH_3COONa(aq) + H_2O(l) + 13.3 \text{ किलोकैलोरी}$$

$$\underset{\text{(दुर्बल अम्ल)}}{HCOOH(aq)} + \underset{\text{(दुर्बल अम्ल)}}{NH_4OH(aq)} \longrightarrow HCOONH_4(aq) + H_2O(l) + 11.9 \text{ किलोकैलोरी}$$

प्रश्न 10. किसी द्विक् लवण तथा संकर लवण का नाम एवं सूत्र लिखिए। इनका मुख्य लक्षण लिखिए।

उत्तर- **द्वि-लवण या द्विक् लवण –** एक ही प्रकार के दो सामान्य लवणों के जलीय विलयनों को किसी विशेष अनुपात में मिलाकर क्रिस्टलित करने पर एक नए प्रकार का लवण प्राप्त होता है, जिसे द्वि-लवण या द्विक् लवण कहते हैं।

पोटाश फिटकरी एक द्विक् लवण है। इसका सूत्र है—

$$K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O$$

द्वि-लवण या द्विक् लवण जलीय विलयन में संबंधित सामान्य लवणों के आयन देते हैं।

संकर लवण- ये लवण कई लवणों के संयोग से बनते हैं। ये लवण जलीय विलयन में केवल एक धनायन व एक ऋणायन देते हैं, जिनमें से साधारण आयन और दूसरा संकर आयन होता है।

पोटैशियम फेरोसायनाइड एक संकर लवण है। इसका सूत्र है- $K_4[Fe(CN_6)]$

इस लवण का जलीय विलयन पोटैशियम के साधारण आयन और फेरोसायनाइड के जटिल आयन देता है।

प्रश्न 11. प्रबल अम्ल तथा दुर्बल क्षार से बने किसी लवण के जल अपघटन की प्रक्रिया को समझाइए।

उत्तर- **प्रबल अम्ल तथा दुर्बल क्षार से बने लवण का जल अपघटन-** प्रबल अम्ल तथा दुर्बल क्षार से बने लवण के जल अपघटन से प्राप्त विलयन अम्लीय होता है। **उदाहरणार्थ-** अमोनियम क्लोराइड (NH_4Cl) का जलीय विलयन अम्लीय होता है। NH_4Cl को जल में घोलने पर निम्नलिखित क्रियाएँ होती हैं-

$$H_2O \rightleftharpoons H^+ + OH^-$$

$$NH_4Cl \rightleftharpoons NH_4^+ + Cl^-$$

$$NH_4^+ + OH^- \rightleftharpoons NH_4OH \text{ (दुर्बल क्षार)}$$

$$H^+ + Cl^- \rightleftharpoons HCl \text{ (प्रबल अम्ल)}$$

HCl प्रबल अम्ल है तथा लगभग पूर्ण रूप से आयनित हो जाता है। NH_4OH दुर्बल क्षार है तथा इसके आयनन से प्राप्त OH^- आयनों की संख्या कम होती है। विलयन में H^+ आयनों की संख्या अधिक होने के कारण यह अम्लीय होता है।

इसी प्रकार $CuSO_4$ को जल में घोलने पर $Cu(OH)_2$ तथा H_2SO_4 प्राप्त होते हैं, जो क्रमश: दुर्बल क्षार तथा प्रबल अम्ल हैं। अत: $CuSO_4$ का जलीय विलयन भी अम्लीय होता है। इसी प्रकार $FeCl_3$ भी इसी श्रेणी का लवण है तथा इसका जलीय विलयन अम्लीय होता है।

प्रश्न 12. जल अपघटन किसे कहते हैं? उदाहरण सहित समझाइए। NaCl, Na_2CO_3 तथा $FeCl_3$ लवणों में से किसका जल अपघटन नहीं होता है और क्यों?

उत्तर- **जल अपघटन-** किसी यौगिक का जल द्वारा अपघटन, जल अपघटन कहलाता है। यदि किसी लवण का जल अपघटन किया जाए तो प्राप्त विलयन उदासीन, क्षारीय या अम्लीय होता है; जैसे- NH_4Cl व $CuSO_4$ के जलीय विलयन अम्लीय, Na_2CO_3 व CH_3COONa के जलीय विलयन क्षारीय व NaCl तथा KNO_3 के जलीय विलयन उदासीन होते हैं।

$$NH_4Cl \rightleftharpoons NH_4^+ + Cl^-$$

$$H_2O \rightleftharpoons H^+ + OH^-$$

$$NH_4^+ + OH^- \rightleftharpoons NH_4OH \text{ (दुर्बल क्षार)}$$

$$H^+ + Cl^- \rightleftharpoons HCl \text{ (प्रबल अम्ल)}$$

NH_4OH के जलीय विलयन में H^+ आयनों की संख्या अधिक होने के कारण यह अम्लीय होता है।

$$Na_2CO_3 \rightleftharpoons 2Na^+ + CO_3^{2-}$$

$$H_2O \rightleftharpoons H^+ + OH^-$$

$$2Na^+ + 2OH^- \rightleftharpoons 2NaOH \text{ (प्रबल अम्ल)}$$

$$2H^+ + CO_3^{2-} \rightleftharpoons H_2CO_3 \text{ (दुर्बल अम्ल)}$$

NaOH के जलीय विलयन में OH^- आयनों की संख्या अधिक होती है, अत: विलयन क्षारीय होता है।

NaCl, $NaCO_3$ तथा $FeCl_3$ लवणों में से NaCl का जल अपघटन नहीं होता। इस लवण को जल में घोलने पर इसका आयनन तो हो जाता है परंतु जल से क्रिया नहीं होती। इसका कारण यह है कि प्रबल अम्ल तथा प्रबल क्षार जलीय विलयन में पूर्ण रूप से आयनित अर्थात् वियोजित हो जाते हैं तथा कोई नए पदार्थ का निर्माण नहीं होता। अत: H^+ तथा OH^- आयनों की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं होता है तथा विलयन उदासीन होता है। यही कारण है कि NaCl लवण का जल अपघटन नहीं होता।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. धातु के साथ अम्ल की अभिक्रिया होने पर सामान्यत: कौन-सी गैस निकलती है? एक उदाहरण के द्वारा समझाइए।

उत्तर- धातुओं के साथ अम्ल की अभिक्रिया होने पर सामान्यत: हाइड्रोजन गैस निकलती है; जैसे-

$$\underset{\text{जिंक}}{Zn} + \underset{\text{सल्फ्युरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{जिंक सल्फेट}}{ZnSO_4} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2}$$

प्रश्न 2. उदासीनीकरण अभिक्रिया क्या है? दो उदाहरण दीजिए।

उत्तर- **उदासीनीकरण अभिक्रिया -** जलीय विलयन में वह अभिक्रिया, जिसमें H^+ आयन तथा OH^- आयन आपस में क्रिया करके जल बनाते हैं, उदासीनीकरण कहलाती है।

दूसरे शब्दों में- अम्लों तथा क्षारों की वह अभिक्रिया जिसमें जल तथा लवण बनता है, उदासीनीकरण कहलाती है; जैसे—

(i) कॉस्टिक सोडा नाइट्रिक एसिड के साथ अभिक्रिया करके सोडियम नाइट्रेट (लवण) तथा जल बनाता है।

$$NaOH + HNO_3 \longrightarrow NaNO_3 + H_2O$$

(ii) कॉस्टिक पोटाश, हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के साथ अभिक्रिया करके पोटैशियम क्लोराइड (लवण) तथा जल बनाता है।

$$KOH + HCl \longrightarrow KCl + H_2O$$

प्रश्न 3. अम्ल तथा क्षारक की प्रबलता किस तथ्य पर निर्भर करती है?

उत्तर- जिन अम्लों तथा क्षारकों के आयनन की मात्रा अधिक होती है, उन्हें प्रबल अम्ल तथा प्रबल क्षारक कहते हैं। ये जलीय विलयन में H^+, H_3O^+ के रूप में रहते हैं। शुद्ध जल में H^+ तथा OH^- आयनों की सांद्रताएँ समान होती हैं-

$$[H^+] = [OH^-] = 1 \times 10^{-7}$$

प्रबल अम्लों के जलीय विलयन में H^+ या H_3O^+ की सांद्रता अधिक होती है। प्रबल क्षारकों के जलीय विलयन में OH^- की सांद्रता अधिक होती है।

प्रश्न 4. दो परखनलियों में से एक में अम्लीय तथा दूसरी में क्षारकीय विलयन है। यदि आपके पास केवल लाल लिटमस पेपर है तो परखनलियों के अवयवों की जाँच कैसे करेंगे?

उत्तर- दो परखनलियों में से एक में अम्लीय तथा दूसरी में क्षारकीय विलयन है। यदि हमारे पास केवल लाल लिटमस पेपर है तो हम फिर भी परखनलियों के अवयवों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। लाल लिटमस पेपर क्षारकीय विलयन में डुबोने पर नीले रंग का हो जाता है। अत: यह पेपर अम्लीय विलयन में डुबोने पर या तो कोई रंग नहीं देगा, लाल ही रहेगा या गहरा लाल हो सकता है, परंतु क्षारकीय विलयन में यह नीले रंग का हो जाएगा। अत: इस प्रकार हमें ज्ञात हो जाएगा कि कौन-सा विलयन अम्लीय है तथा कौन-सा क्षारकीय।

प्रश्न 5. मिश्रित लवण से आप क्या समझते हैं? कोई दो उदाहरण दीजिए।

उत्तर- वे लवण, जिनमें एक से अधिक प्रकार के धनायन या ऋणायन होते हैं, मिश्रित लवण कहलाते हैं; जैसे- ब्लीचिंग पाउडर $CaCl(OCl)$, माइक्रोकॉस्मिक लवण $Na(NH_4)HPO_4$

प्रश्न 6. pH की परिभाषा दीजिए। इसका हाइड्रोजन आयन सांद्रण से क्या संबंध है?

उत्तर- सोरेनसन के अनुसार किसी विलयन के हाइड्रोजन आयन सांद्रण 10 की घात के रूप में चिह्न बदलकर प्रकट करते हैं और इस घात को ही pH कहते हैं। दूसरे शब्दों में-

pH मूल्य किसी विलयन में उपस्थित हाइड्रोजन आयनों के ग्राम आयन प्रति लीटर में सांद्रण का ऋणात्मक लघुगणक है।

या

pH मूल्य हाइड्रोजन आयन सांद्रण के व्युत्क्रम का लघुगणक है।

pH तथा हाइड्रोजन आयन सांद्रण का संबंध- किसी विलयन की pH ,10 की ऋणात्मक घात की वह संख्या है, जो उस विलयन के हाइड्रोजन आयन सांद्रण को प्रकट करती है।

अत: $[H^+] = 10^{-x}$

माना $x = pH$

तो, $[H^+] = 10^{-pH}$

दोनों पक्षों में log लेने पर-

$\Rightarrow \quad \log_{10}[H^+] = \log_{10} 10^{-pH}$

$\Rightarrow \quad \log_{10}[H^+] = -pH \log_{10} 10 \quad$ [परंतु $\log_{10} 10 = 1$]

$\therefore \quad \log_{10}[H^+] = -pH$

$\Rightarrow \quad pH = -\log[H^+]$

$\Rightarrow \quad pH = \log \dfrac{1}{[H]^+}$

प्रश्न 7. जल का आयनिक गुणनफल क्या है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– **जल का आयनिक गुणनफल–** जल का आयनन बहुत कम होता है। इसे निम्नलिखित समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जाता है–

$$H_2O \rightleftharpoons H^+ + OH^-$$

$$K = \frac{[H^+][OH^-]}{[H_2O]}$$

जहाँ $[H^+]$,$[OH^-]$ तथा $[H_2O]$ साम्यावस्था पर क्रमश: H^+, OH^- तथा H_2O की सांद्रताएँ हैं। सांद्रता की इकाई मोल प्रति लीटर होती है, जिसे संक्षिप्त में M से प्रदर्शित करते हैं।

जल के लगभग 550 लाख अणुओं में केवल एक अणु आयनित होता है। अत: जल के अणुओं का सांद्रण स्थिर माना जा सकता है। तनु विलयनों में $[H_2O]$ का मान लगभग 55.55 M होता है। अत:

$$[H^+][OH^-] = K[H_2O] = K_w$$

जहाँ K_w एक स्थिरांक है। स्थिर ताप पर इसका मान स्थिर रहता है। चूँकि यह H^+ तथा OH^- की सांद्रताओं के गुणनफल को प्रदर्शित करता है, अत: इसे जल का आयनिक गुणनफल कहते हैं। विभिन्न प्रयोगों द्वारा जिनमें चालकता मापन प्रमुख है, इसका मान ज्ञात किया गया है। 25° C पर इसका मान लगभग 1×10^{-14} होता है।

$$[H^+] \times [OH^-] = 10^{-14}$$

जल के आयनिक गुणनफल का ज्ञान अत्यंत उपयोगी है। इसकी सहायता से विलयन में H^+ की सांद्रता ज्ञात होने पर OH^- की सांद्रता तथा OH^- की सांद्रता ज्ञात होने पर H^+ की सांद्रता ज्ञात हो जाती है।

प्रश्न 8. एक विलयन में हाइड्रोजन आयन की सांद्रता 10^{-6} M है। इस विलयन का pH मान बताइए। विलयन अम्लीय होगा या क्षारीय?

उत्तर– $\quad [H^+] = 10^{-pH}$

$\therefore \quad 10^{-6} = 10^{-pH}$

या $\quad pH = 6$

चूँकि विलयन का pH का मान 7 से कम है, अत: यह विलयन अम्लीय होगा।

प्रश्न 9. आयनन सिद्धांत के आधार पर समझाइए कि HCl अम्ल क्यों है तथा NaOH क्षार क्यों है?

उत्तर– आयनन सिद्धांत के अनुसार, किसी भी यौगिक का जल अपघटन करने पर यदि विलयन में H^+ आयनों की संख्या अधिक है तो विलयन अम्लीय होगा तथा यदि विलयन में OH^- आयनों की संख्या अधिक है तो विलयन क्षारीय होगा।

HCl का जल अपघटन करने पर, इसके विलयन में H^+ आयनों की मात्रा उपस्थित होती है।

$$HCl \rightleftharpoons H^+ + Cl^-$$

अत: HCl अम्ल है।

NaOH का जल अपघटन करने पर, इसके विलयन में OH^- आयनों की मात्रा उपस्थित होती है।

$$NaOH \rightleftharpoons Na^+ + OH^-$$

अत: NaOH क्षार है।

प्रश्न 10. प्रबल तथा दुर्बल अम्ल व क्षार से आप क्या समझते हैं? प्रत्येक का एक उदाहरण दीजिए।

उत्तर- **प्रबल अम्ल-** वे अम्ल जो अपने जलीय विलयन में पूर्णरूप से आयनित होकर अत्यधिक मात्रा में H^+ या H_3O^+ आयन उत्पन्न करते हैं, प्रबल अम्ल कहलाते हैं; जैसे- सल्फ्यूरिक अम्ल।

दुर्बल अम्ल- वे अम्ल जो अपने जलीय विलयन में पूर्णरूप से आयनित नहीं होते हैं तथा विलयन में कम मात्रा में H^+ या H_3O^+ आयन देते हैं, दुर्बल अम्ल कहलाते हैं; जैसे- ऐसीटिक अम्ल।

प्रबल क्षारक- वे क्षारक जो अपने जलीय विलयन में पूर्णरूप से आयनित हो जाते हैं तथा अत्यधिक मात्रा में OH^- आयन उत्पन्न करते हैं, प्रबल क्षारक कहलाते हैं; जैसे- सोडियम हाइड्रॉक्साइड।

दुर्बल क्षारक- वे क्षारक जो अपने जलीय विलयन में कम आयनित होते हैं तथा कम मात्रा में OH^- आयन उत्पन्न करते हैं, दुर्बल क्षारक कहलाते हैं; जैसे- अमोनियम हाइड्रॉक्साइड।

प्रश्न 11. जल का आयनिक गुणनफल क्या है? इसका 25° C पर मान लिखिए।

उत्तर- इसके लिए 'लघु उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न संख्या 7 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 12. लवण किसे कहते हैं? दो लवणों के नाम उनके रासायनिक सूत्र सहित लिखिए।

उत्तर- किसी अम्ल तथा क्षारक की उदासीनीकरण क्रिया से प्राप्त आयनिक ठोस को लवण कहते हैं।

$$\underset{\text{अमोनिया}}{NH_3} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl} \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड}}{NH_4Cl}$$

दो लवण व उनके रासायनिक सूत्र-

सोडियम क्लोराइड - NaCl

पोटैशियम क्लोराइड - KCl

प्रश्न 13. जल में हाइड्रोजन आयनों की सांद्रता 10^{-7} ग्राम आयन प्रति लीटर होती है फिर भी यह उदासीन होता है। क्यों?

उत्तर- हम जानते हैं कि जिस विलयन की pH, 7 से अधिक हो तो वह विलयन अम्लीय, तथा 7 से कम हो तो वह विलयन क्षारीय होता है। परंतु यदि उसकी pH, 7 हो तो वह विलयन उदासीन होता है।

शुद्ध जल में H^+ तथा OH^- आयनों का सांद्रण समान होता है।

अर्थात् $$H^+ = OH^-$$

25° C पर जल तुल्यांक (K_w) का मान 1×10^{-14} ग्राम आयन प्रति लीटर होता है।

जहाँ $$K_w = [H^+][OH^-]$$

$\because \qquad H^+ = OH^- \Rightarrow H^+ = 1\times10^{-7}$ ग्राम आयन प्रति लीटर

अत: जल में हाइड्रोजन आयनों की सांद्रता 1×10^{-7} या 10^{-7} ग्राम आयन प्रति लीटर होती है।

हमें पता है कि- $\qquad H^+ = 10^{-pH}$

$$10^{-7} = 10^{-pH}$$

$\Rightarrow \qquad pH = 7$

अत: यहाँ पर जल का pH मान 7 है और अभी हमने बताया कि विलयन का pH मान 7 होने पर वह विलयन उदासीन होता है।

अत: इस कारण जल उदासीन होता है।

प्रश्न 14. HCl तथा CH_3COOH के समान सांद्रताओं वाले विलयनों में से किसमें हाइड्रोजन आयन सांद्रण अधिक होता है और क्यों?

उत्तर- किन्हीं दो विलयनों की सांद्रताएँ समान होने पर भी उनमें हाइड्रोजन आयन सांद्रण का कम या अधिक होना उनकी आयनन की मात्रा पर निर्भर करता है।

HCl व CH_3COOH में CH_3COOH एक दुर्बल अम्ल है क्योंकि इसका जलीय विलयन उदासीन होता है। इसके विलयन में H^+ तथा OH^- आयनों की संख्या लगभग समान होती है।

जबकि HCl एक प्रबल अम्ल है। यह पूर्णरूप से आयनित हो जाता है। इसके जलीय विलयन में H^+ आयनों की संख्या अधिक होती है।

अत: HCl व CH_3COOH के समान सांद्रता वाले विलयनों में HCl में हाइड्रोजन आयन सांद्रण अधिक होता है।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 159 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. अम्ल-क्षार सूचकों के रंग परिवर्तन का प्रयोग करके प्रयोगशाला में अम्ल व क्षार का परीक्षण करना।

उत्तर- स्वयं कीजिए।

प्रश्न 2. धातुओं के साथ अम्लों व क्षारों की अभिक्रिया का अध्ययन करना।

उत्तर- स्वयं कीजिए।

प्रश्न 3. उदासीनीकरण अभिक्रिया अर्थात् अम्लों तथा क्षारों के बीच होने वाली अभिक्रिया का अध्ययन करना।

उत्तर- स्वयं कीजिए।

प्रश्न 4. अम्लों तथा क्षारों के जलीय विलयन में विद्युत के प्रवाहन का अध्ययन करना।

उत्तर- स्वयं कीजिए।

11

कुछ लवणों की निर्माण विधि गुणधर्म एवं उपयोग

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. सॉल्वे विधि द्वारा सोडियम कार्बोनेट की निर्माण विधि का नामांकित चित्र बनाइए। संबंधित अभिक्रियाओं के समीकरण भी लिखिए।

उत्तर-

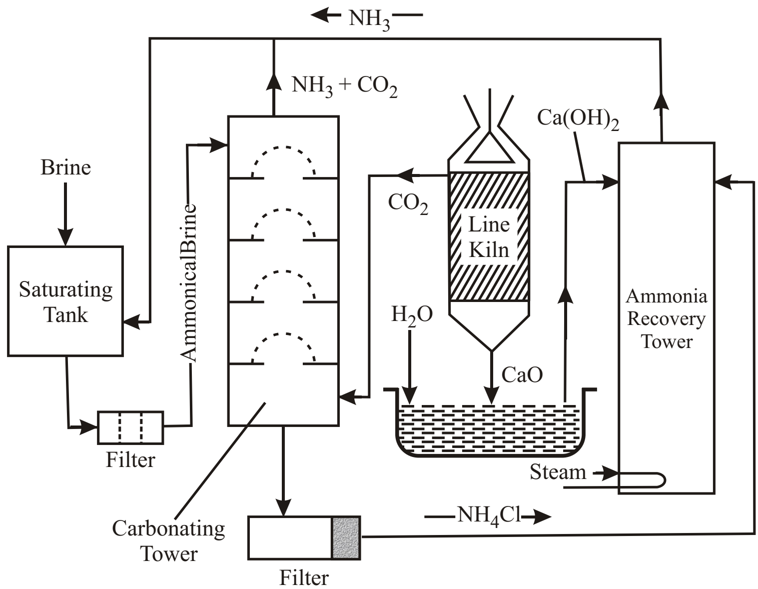

सोडियम कार्बोनेट के औद्योगिक निर्माण की सॉल्वे की विधि

संबंधित अभिक्रियाओं के समीकरण-

(i) सिद्धांत- अमोनियम हाइड्रॉक्साइड विलयन में कार्बन डाइऑक्साइड प्रवाहित करने पर अमोनियम बाइकार्बोनेट (NH_4HCO_3) बनता है।

$$NH_4OH + CO_2 \longrightarrow NH_4HCO_3$$

अमोनियम बाइकार्बोनेट की सोडियम क्लोराइड से क्रिया कराने पर अमोनियम क्लोराइड (NH_4Cl) तथा सोडियम बाइकार्बोनेट ($NaHCO_3$) बनते हैं।

$$NH_4HCO_3 + NaCl \longrightarrow NH_4Cl + NaHCO_3$$

सोडियम बाइकार्बोनेट को गर्म करने पर सोडियम कार्बोनेट बन जाता है।

$$2NaHCO_3 \xrightarrow{\text{गर्म करने पर}} Na_2CO_3 + H_2O + CO_2$$

(ii) ब्राइन को अमोनिया से संतृप्त करना- यह क्रिया संयंत्र के जिस भाग में कराई जाती है, उसे संतृप्तकारी हौज कहते हैं। संतृप्तकारी हौज में सोडियम क्लोराइड

का संतृप्त जलीय विलयन (ब्राइन) भरा होता है। इसमें अमोनिया पुनः प्राप्ति स्तंभ से प्राप्त अमोनिया गैस प्रवाहित की जाती है। अमोनिया पुनः प्राप्ति स्तंभ से अमोनिया के साथ कुछ कार्बन डाइऑक्साइड गैस भी प्राप्त होती है। यह कार्बन डाइऑक्साइड जल में मिली कैल्सियम तथा मैग्नीशियम की अशुद्धियों को दूर कर देती है।

$$2NH_3 + H_2O + CO_2 \longrightarrow (NH_4)_2CO_3$$
$$CaCl_2 + (NH_4)_2CO_3 \longrightarrow CaCO_3 \downarrow + 2NH_4Cl$$
$$MgCl_2 + (NH_4)_2CO_3 \longrightarrow MgCO_3 \downarrow + 2NH_4Cl$$

संतृप्तकारी हौज में भरे विलयन में अमोनिया प्रवाहित करने के बाद उसे फिल्टरित करके कार्बोनेटीकारक स्तंभ में भेजा जाता है। संतृप्तकारी हौज से अमोनिया तथा सोडियम क्लोराइड का संतृप्त जलीय विलयन प्राप्त होता है।

(iii) कार्बोनेटीकरण– यह क्रिया कार्बोनेटीकारक स्तंभ **(carbonating tower)** में कराई जाती है। इस स्तंभ में ऊपर की ओर से संतृप्तकारक हौज से प्राप्त अमोनियामय ब्राइन विलयन गिराया जाता है तथा नीचे की ओर से चूने के भट्टे से प्राप्त कार्बन डाइऑक्साइड गैस प्रवाहित की जाती है। इस स्तंभ में निम्नलिखित अभिक्रियाएँ होती हैं–

$$2NH_3 + CO_2 + H_2O \longrightarrow (NH_4)_2CO_3$$
$$(NH_4)_2CO_3 + CO_2 + H_2O \longrightarrow 2NH_4HCO_3$$
$$NaCl + NH_4HCO_3 \longrightarrow NaHCO_3 + NH_4Cl$$

(iv) निर्वात् निस्यंदन– कार्बोनेटीकारक स्तंभ से प्राप्त विलयन को निर्वात् पंपों की सहायता से छान लिया जाता है। कम विलेय सोडियम बाइकार्बोनेट अवशेष में प्राप्त होता है तथा फिल्टरित विलयन में मुख्यतः अमोनियम क्लोराइड होता है।

(v) निस्तापन- निर्वात निस्यंदन से प्राप्त ठोस पदार्थ को गर्म करने पर सोडियम कार्बोनेट प्राप्त हो जाता है।

$$2NaHCO_3 \xrightarrow{\text{गर्म करने पर}} Na_2CO_3 + H_2O + CO_2$$

(vi) अमोनिया पुनः प्राप्ति स्तंभ– इस स्तंभ में निर्वात् निस्यंदन से प्राप्त फिल्टरित विलयन जिसमें अमोनियम क्लोराइड होता है तथा चूने के भट्टे से प्राप्त बुझे हुए चूने $[Ca(OH)_2]$ को मिलाकर गर्म किया जाता है।

$$2NH_4Cl + Ca(OH)_2 \xrightarrow{\text{गर्म करने पर}} CaCl_2 + 2H_2O + 2NH_3$$

अमोनियम क्लोराइड तथा कैल्सियम हाइड्रॉक्साइड (बुझा हुआ चूना) की क्रिया से अमोनिया गैस प्राप्त होती है, जिसे संतृप्तकारक हौज में भेजा जाता है।

(vii) चूने का भट्टा– चूने के भट्टे में चूने के पत्थर $(CaCO_3)$ तथा कोयले के मिश्रण को जलाया जाता है, जिससे अधिक ताप उत्पन्न होता है तथा निम्नलिखित अभिक्रियाएँ होती हैं–

$$CaCO_3 \longrightarrow CaO + CO_2$$
$$C + O_2 \longrightarrow CO_2$$

चूने के भट्टे से प्राप्त कार्बन डाइऑक्साइड गैस को कार्बोनेटीकारक स्तंभ में प्रवाहित किया जाता है तथा चूने (CaO) को जल में मिलाकर बुझा हुआ चूना बनाया जाता है जो अमोनिया पुनः प्राप्ति स्तंभ में भेजा जाता है।

प्रश्न 2. बेकिंग पाउडर के चार रासायनिक गुण दीजिए। समीकरण भी दीजिए।

उत्तर- बेकिंग पाउडर के चार रासायनिक गुण-

(i) **ऊष्मा का प्रभाव-** सोडियम बाइकार्बोनेट या बेकिंग पाउडर को गर्म करने पर यह अपघटित हो जाता है तथा सोडियम कार्बोनेट (Na_2CO_3), कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) तथा जल वाष्प (H_2O) बनाता है।

$$2NaHCO_3 \xrightarrow{\text{गर्म करने पर}} Na_2CO_3 + H_2O + CO_2$$

(ii) **अम्लों से अभिक्रिया-** अम्लों से अभिक्रिया करके यह सोडियम लवण तथा कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) बनाता है।

$$NaHCO_3 + HCl \longrightarrow NaCl + H_2O + CO_2$$

$$2NaHCO_3 + H_2SO_4 \longrightarrow Na_2SO_4 + 2H_2O + 2CO_2$$

(iii) **धातु लवणों के साथ क्रिया-** यह धातु लवणों के विलयनों से अभिक्रिया करके उनके कार्बोनेट लवण बनाता है।

$$ZnSO_4 + 2NaHCO_3 \longrightarrow ZnCO_3 + Na_2SO_4 + H_2O + CO_2\uparrow$$

(iv) **कार्बोक्सिलिक अम्लों से क्रिया-** सोडियम बाइकार्बोनेट कार्बोक्सिलिक अम्लों के साथ अभिक्रिया करके CO_2 बनाता है। अत: इसका उपयोग —COOH के समूह के परीक्षण में किया जाता है।

$$\underset{\text{बेंजोइक अम्ल}}{C_6H_5COOH} + NaHCO_3 \longrightarrow C_6H_5COONa + H_2O + CO_2$$

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + NaHCO_3 \longrightarrow CH_3COONa + H_2O + CO_2$$

प्रश्न 3. सोडियम कार्बोनेट के औद्योगिक निर्माण की ली-ब्लाँक विधि का वर्णन नामांकित चित्र सहित कीजिए। सोडियम कार्बोनेट के दो प्रमुख उपयोग भी लिखिए।

उत्तर- सोडियम कार्बोनेट के औद्योगिक निर्माण की ली-ब्लाँक विधि- इस विधि से सोडियम कार्बोनेट निम्नलिखित तीन पदों से प्राप्त किया जाता है-

(i) **साल्ट केक का बनना-** सोडियम क्लोराइड (NaCl) को लगभग उसी के भार के बराबर सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) से मिलाकर साल्ट केक भट्टी के पलड़े पर रखकर गर्म किया जाता है, जिससे सोडियम क्लोराइड (NaCl) सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) से अभिक्रिया करके सोडियम बाइसल्फेट ($NaHSO_4$) में परिवर्तित हो जाता है।

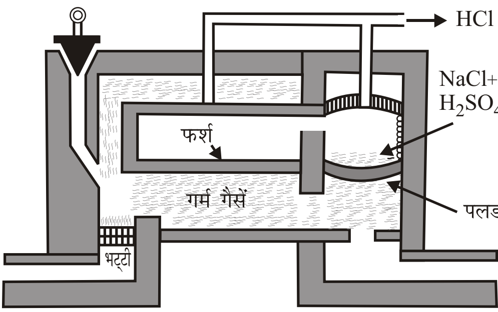

इस प्रकार, प्राप्त हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) के धुएँ को एक नली से निकालकर कोक से भरे अवशोषण टावर में जिसमें ऊपर से ठंडा पानी गिरता है, अवशोषित कर लिया जाता है। इस अवशोषित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) का उपयोग अन्य कार्यों में कर लिया जाता है। भट्टी के पलड़े पर सोडियम बाइसल्फेट ($NaHSO_4$) तथा कुछ अक्रियाशील सोडियम क्लोराइड (NaCl) रह जाता है, जहाँ पर ताप

अधिक होता है। यहाँ पर पुनः क्रिया के द्वारा सामान्य सोडियम सल्फेट (Na_2SO_4) बनता है।

$$\underset{\text{सोडियम क्लोराइड}}{NaCl} + \underset{\text{सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम बाइसल्फेट}}{NaHSO_4} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl}$$

$$\underset{\text{सोडियम बाइसल्फेट}}{NaHSO_4} + NaCl \longrightarrow \underset{\text{सोडियम सल्फेट}}{Na_2SO_4} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl}$$

इस प्रकार प्राप्त सोडियम सल्फेट को ही साल्ट केक कहते हैं।

(ii) काली राख बनाना- काली राख सोडियम कार्बोनेट (Na_2CO_3), कैल्सियम ऑक्साइड (CaO) तथा कैल्सियम सल्फाइड (CaS) के मिश्रण को कहते हैं। इसको प्राप्त करने के लिए साल्ट केक तथा चूने के पत्थर को कोल के चूर्ण के साथ मिलाकर एक बेलनाकार घूमती हुई भट्टी में गर्म करते हैं, जिससे प्राप्त पदार्थ को काली राख कहते हैं।

$$\underset{\text{चूने के पत्थर}}{CaCO_3} \xrightarrow{\text{गर्म}} \underset{\text{कैल्सियम ऑक्साइड}}{CaO} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2}$$

$$\underset{\text{सोडियम सल्फेट}}{Na_2SO_4} + \underset{\text{कार्बन}}{4C} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम सल्फाइड}}{Na_2S} + \underset{\text{कार्बन मोनोऑक्साइड}}{4CO}$$

$$\underset{\text{सोडियम सल्फाइड}}{Na_2S} + \underset{\text{कैल्शियम कार्बोनेट}}{CaCO_3} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{कैल्शियम सल्फाइड}}{CaS}$$

(iii) काली राख से सोडियम कार्बोनेट प्राप्त करना– पहले काली राख को पीसकर जल के साथ निक्षालित किया जाता है। इस तरह अशुद्धियाँ नीचे बैठ जाती हैं और सोडियम कार्बोनेट (Na_2CO_3) का स्वच्छ घोल निकालकर वाष्पित कर लिया जाता है, परिणामस्वरूप सोडियम कार्बोनेट के क्रिस्टल प्राप्त हो जाते हैं। जल में बचे अवशेष में ज्यादातर कैल्सियम सल्फाइड (CaS) एवं अन्य क्षारीय पदार्थ होते हैं। इनको क्षारीय निरर्थक पदार्थ कहते हैं। इसका उपयोग सल्फर के निर्माण में होता है।

सोडियम कार्बोनेट के दो प्रमुख उपयोग–

(i) इसका उपयोग काँच, कागज तथा बोरेक्स के निर्माण में होता है।

(ii) कपड़े धोने के सोडे के रूप में प्रयुक्त होता है।

प्रश्न 4. फिटकरी क्या होती है? इसके निर्माण की विधि को समीकरण देते हुए लिखिए। इसके दो प्रमुख उपयोग भी लिखिए।

उत्तर- फिटकरी – फिटकरी पोटैशियम ऐलुमिनियम सल्फेट की द्विक लवण है। इसका अणु सूत्र $K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O$ है। इसके अनुरूप संरचना एवं गुणों वाले द्विक सल्फेटों को फिटकरियाँ कहते हैं। 'साधारण फिटकरी' साधारणतः पोटाश ऐलम के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

बनाने की विधि–

पोटैशियम सल्फेट (K_2SO_4) तथा ऐलुमिनियम सल्फेट [$Al_2SO_4)_3$] के मिश्रण के जलीय घोल का सांद्रण करने पर द्विक लवण (फिटकरी) के क्रिस्टल प्राप्त होते हैं।

$$\underset{\text{पोटैशियम सल्फेट}}{K_2SO_4} + \underset{\text{ऐलुमिनियम सल्फेट}}{Al_2(SO_4)_3} + \underset{\text{जल}}{24H_2O} \longrightarrow \underset{\text{फिटकरी (पोटाश ऐलम)}}{K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O}$$

फिटकरी के दो प्रमुख उपयोग– फिटकरी के दो प्रमुख उपयोग हैं–

(i) कपड़ों की रँगाई एवं छपाई में रंग बंधक के रूप में।

(ii) जीवाणुनाशक तथा पूर्तिरोधी के रूप में।

प्रश्न 5. बेकिंग पाउडर का रासायनिक नाम एवं अणुसूत्र क्या है? इसको बनाने की विधि एवं दो प्रमुख रासायनिक गुण समीकरण देते हुए लिखिए।

उत्तर– बेकिंग पाउडर को 'खाने का सोडा' या 'बेकिंग सोडा' भी कहा जाता है। इसका रासायनिक नाम 'सोडियम बाइकार्बोनेट' है। इसका अणुसूत्र '$NaHCO_3$' है।

बनाने की विधि– प्रयोगशाला में सोडियम बाइकार्बोनेट को सोडियम कार्बोनेट के जलीय विलयन में कार्बन डाइऑक्साइड गैस प्रवाहित करके बनाया जाता है।

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{कार्बन डाइआक्साइड}}{CO_2} + \underset{\text{जल}}{H_2O} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम बाइकार्बोनेट}}{2NaHCO_3}$$

दो प्रमुख रासायनिक गुण–

(i) ऊष्मा का प्रभाव– सोडियम बाइकार्बोनेट को गर्म करने पर यह अपघटित हो जाता है तथा सोडियम कार्बोनेट (Na_2CO_3), कार्बन डाइऑक्साइड (CO_3) तथा जल वाष्प (H_2O) बनाता है।

$$2NaHCO_3 \xrightarrow{\text{गर्म करने पर}} Na_2CO_3 + H_2O + CO_2$$

(ii) अम्लों से अभिक्रिया– अम्लों से अभिक्रिया करके यह सोडियम लवण तथा कार्बन डाइऑक्साइड गैस बनाता है।

$$NaHCO_3 + HCl \longrightarrow NaCl + H_2O + CO_2$$

$$2NaHCO_3 + H_2SO_4 \longrightarrow Na_2SO_4 + 2H_2O + 2CO_2$$

प्रश्न 6. धावन सोडा के गुणधर्मों का विस्तृत वर्णन कीजिए। इसके दो प्रमुख उपयोग भी लिखिए।

उत्तर– धावन सोडा के गुणधर्म–

भौतिक गुण– धावन सोडा के भौतिक गुण निम्नलिखित हैं–

(i) धावन सोडा एक गंधहीन एवं सफेद क्रिस्टलीय पदार्थ है।

(ii) इसका गलनांक 850°C है।

(iii) यह जल में विलेय होकर पर्याप्त ऊष्मा प्रदान करता है।

(iv) इसे शुष्क वायु में रखने से क्रिस्टलन जल के अणु निकल जाते हैं तथा गर्म करने पर निर्जल सोडियम कार्बोनेट बनता है।

रासायनिक गुण– धावन सोडा के रासायनिक गुण निम्नलिखित हैं–

(i) ऊष्मा का प्रभाव– क्रिस्टलीय सोडियम कार्बोनेट को गर्म करने पर यह निर्जल सोडियम कार्बोनेट में बदल जाता है।

$$\underset{\text{क्रिस्टलीय सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3 \cdot 10H_2O} \xrightarrow{\text{गर्म}} \underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3 \cdot H_2O} + \underset{\text{जल}}{9H_2O}$$

अधिक गर्म करने पर यह निर्जल सोडियम कार्बोनेट बनाता है, जिसे सोडा ऐश भी कहा जाता है।

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3 \cdot H_2O} \xrightarrow{\text{गर्म}} \underset{\text{निर्जल सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{जल}}{H_2O}$$

निर्जल सोडियम कार्बोनेट ऊष्मा के प्रति स्थायी है।

(ii) कार्बन डाइऑक्साइड से क्रिया– सोडियम कार्बोनेट के जलीय विलयन में CO_2 गैस प्रवाहित करने पर सोडियम बाइकार्बोनेट का अवक्षेप प्राप्त होता है।

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{जल}}{H_2O} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम बाइकार्बोनेट}}{2NaHCO_3}$$

(iii) **जल से क्रिया–** सोडियम कार्बोनेट जल में अपघटित होकर क्षारीय विलयन देता है।

$$Na_2CO_3 \rightleftharpoons 2Na^+ + CO_3^{--}$$

$$2H_2O \rightleftharpoons 2H^+ + 2OH^-$$

$$2Na^+ + 2OH^- \rightleftharpoons 2NaOH$$

$$2H^+ + CO_3^{--} \rightleftharpoons H_2CO_3$$

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{जल}}{2H_2O} \longrightarrow \underset{\text{कास्टिक सोडा}}{2NaOH} + \underset{\text{हाइड्रोजन कार्बोनेट}}{H_2CO_3}$$

(iv) **अम्लों से क्रिया–** जब सोडियम कार्बोनेट किसी अम्ल से क्रिया करता है, तो उस अम्ल का लवण एवं जल प्राप्त होते हैं। अभिक्रिया के परिणामस्वरूप कार्बन डाइऑक्साइड गैस मुक्त होती है।

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम सल्फेट}}{Na_2SO_4} + \underset{\text{जल}}{H_2O} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2\uparrow}$$

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{2HCl} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम क्लोराइड}}{2NaCl} + \underset{\text{जल}}{H_2O} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2\uparrow}$$

(v) **सल्फर डाइऑक्साइड से क्रिया–** सोडियम कार्बोनेट के जलीय विलयन में सल्फर डाइऑक्साइड गैस प्रवाहित करने पर पहले सोडियम सल्फाइट बनता है, जो बाद में सोडियम बाइसल्फाइट में बदल जाता है।

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{SO_2} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम सल्फाइट}}{Na_2SO_3} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2\uparrow}$$

$$\underset{\text{सोडियम सल्फाइट}}{Na_2SO_3} + \underset{\text{जल}}{H_2O} + \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{SO_2} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम बाइसल्फाइट}}{2NaHSO_3}$$

(vi) **बुझे चूने से क्रिया–** सोडियम कार्बोनेट को बुझे चूने के साथ उबालने पर सोडियम हाइड्रॉक्साइड बनता है।

$$\underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} + \underset{\text{बुझा चूना}}{Ca(OH)_2} \longrightarrow \underset{\substack{\text{सोाडियम हाइड्रॉक्साइड} \\ \text{(कॉस्टिक सोडा)}}}{2NaOH} + \underset{\text{कैल्शियम कार्बोनेट}}{CaCO_3}$$

(vii) **काँच का बनना–** सोडियम कार्बोनेट और रेत के मिश्रण को गलाने पर सोडियम सिलिकेट बनता है।

$$\underset{\text{सिलिका ऑक्साइड}}{SiO_2} + \underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम सिलिकेट}}{Na_2SiO_3} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2\uparrow}$$

(viii) **धातु लवणों के साथ क्रिया –** धातु लवणों को सोडियम कार्बोनेट के साथ गर्म करने पर धात्विक कार्बोनेट बनते हैं।

$$\underset{\text{बेरियम क्लोराइड}}{BaCl_2} + \underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} \longrightarrow \underset{\text{बेरियम कार्बोनेट}}{BaCO_3} + \underset{\text{सोडियम क्लोराइड}}{2NaCl}$$

$$\underset{\text{कैल्सियम क्लोराइड}}{CaCl_2} + \underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3} \longrightarrow \underset{\text{कैल्शियम कार्बोनेट}}{CaCO_3} + \underset{\text{सोडियम क्लोराइड}}{2NaCl}$$

उपयोग–

(i) इसका उपयोग काँच, कागज तथा बोरेक्स के निर्माण में होता है।

(ii) कपड़े धोने के सोडे के रूप में प्रयुक्त होता है।

प्रश्न 7. फिटकरी का रासायनिक नाम व अणुसूत्र लिखिए। इस पर ऊष्मा व जल के प्रभाव की विवेचना कीजिए।

उत्तर- **फिटकरी का रासायनिक नाम –** पोटैशियम ऐलुमिनियम सल्फेट

फिटकरी का अणुसूत्र– $K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O$

(i) ऊष्मा का प्रभाव– फिटकरी 90° C पर गर्म करने पर पिघल जाती है तथा 200°C पर इसका संपूर्ण क्रिस्टलन जल निकल जाता है। इस प्रकार एक सफेद रंग का सरंध्र पदार्थ बन जाता है; जिसे दग्धफिटकरी कहते हैं।

$$\underset{\text{फिटकरी (पोटाश ऐलम)}}{K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O} \longrightarrow \underset{\text{दग्ध फिटकरी}}{K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3} + \underset{\text{जल}}{24H_2O}$$

रक्त तप्त ताप पर दग्ध फिटकरी विघटित हो जाती है।

$$\underset{\text{दग्ध फिटकरी}}{K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3} \xrightarrow{\text{रक्त तप्त}} \underset{\text{पोटैशियम सल्फेट}}{K_2SO_4} + Al_2O_3 + 3SO_3$$

(ii) जल का प्रभाव– जल में घुलकर यह आयनिक सिद्धांत के अनुसार अपने आयनों में वियोजित हो जाती है। विलयन के गुण उसमें उपस्थित आयनों के गुणों पर ही निर्भर करते हैं।

$$K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O \xrightarrow{\text{रक्तताप}} K_2SO_4 + Al_2(SO_4)_3 + 24H_2O$$

$$K_2SO_4 \rightleftharpoons 2K^+ + SO_4^{2-}$$

$$Al_2(SO_4)_3 \rightleftharpoons 2Al^{3+} + 3SO_4^{2-}$$

जल की उपस्थिति में ऐलुमिनियम सल्फेट के आयनन के अतिरिक्त इसका जल अपघटन भी हो जाता है।

$$Al_2(SO_4)_3 + 6H_2O \rightleftharpoons 2Al(OH)_3 + 3H_2SO_4$$

ऐलुमिनियम सल्फेट के जल अपघटन के कारण $Al(OH)_3$ तथा H_2SO_4 बनते हैं, जो क्रमश: दुर्बल क्षार तथा प्रबल अम्ल हैं। अत: फिटकरी का जलीय विलयन अम्लीय होता है।

प्रश्न 8. नौसादर का रासायनिक नाम व अणुसूत्र लिखिए। यह कैसे प्राप्त होता है? इसके गुणधर्म व उपयोग लिखिए।

उत्तर- **नौसादर का रासायनिक नाम –** अमोनियम क्लोराइड

नौसादर का अणुसूत्र – NH_4Cl

निर्माण विधि– हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) में अमोनिया (NH_3) गैस प्रवाहित करने पर अमोनियम क्लोराइड प्राप्त होता है।

$$\underset{\text{अमोनिया}}{NH_3} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl} \rightleftharpoons \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड (नौसादर)}}{NH_4Cl}$$

नौसादर के गुणधर्म

(i) यह सफेद रंग का क्रिस्टलीय ठोस पदार्थ है, जल में विलेय है।

(ii) ऊर्ध्वपातन गुण– गर्म करने पर बिना पिघले अमोनिया और हाइड्रोजन क्लोराइड गैस में विच्छेदित हो जाता है।

$$NH_4Cl \overset{\Delta}{\rightleftharpoons} NH_3 + HCl$$

तथा ठंडा करने पर पुन: नौसादर बन जाता है।

$$NH_3 + HCl \xrightleftharpoons{\text{ठंडा}} NH_4Cl$$

(iii) **क्षारों के साथ क्रिया–** इसे कॉस्टिक सोडा या बुझे हुए चूने के साथ गर्म करने पर अमोनिया गैस निकलती है।

$$NH_4Cl + NaOH \longrightarrow NaCl + NH_3\uparrow + H_2O$$

$$Ca(OH)_2 + 2NH_4Cl \longrightarrow CaCl_2 + 2H_2O + 2NH_3\uparrow$$

(iv) इसको सोडियम नाइट्राइट के साथ गर्म करने पर नाइट्रोजन गैस निकलती है।

$$NH_4Cl + NaNO_2 \xrightarrow{\Delta} NaCl + NH_4NO_2$$

$$\underset{\text{अमोनियम नाइट्राइट}}{NH_4NO_2} \longrightarrow \underset{\text{नाइट्रोजन}}{N_2\uparrow} + 2H_2O$$

उपयोग–

(i) प्रयोगशाला अभिकर्मक के रूप में प्रयोग होता है।
(ii) रासायनिक पदार्थ; जैसे– उर्वरक, अमोनिया आदि बनाने के काम में आता है।
(iii) दवाइयों तथा शुष्क सेल के निर्माण में प्रयोग होता है।
(iv) कपड़ों की रँगाई, बर्तनों की कलई एवं टाँका लगाने में प्रयोग किया जाता है।

प्रश्न 9. विरंजक चूर्ण बनाने की हेजनक्लेवर विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। इसके दो मुख्य रासायनिक गुण भी लिखिए।

उत्तर– **विरंजक चूर्ण बनाने की हेजनक्लेवर विधि–** इस विधि में प्रयुक्त संयंत्र को चित्र में प्रदर्शित किया गया है।

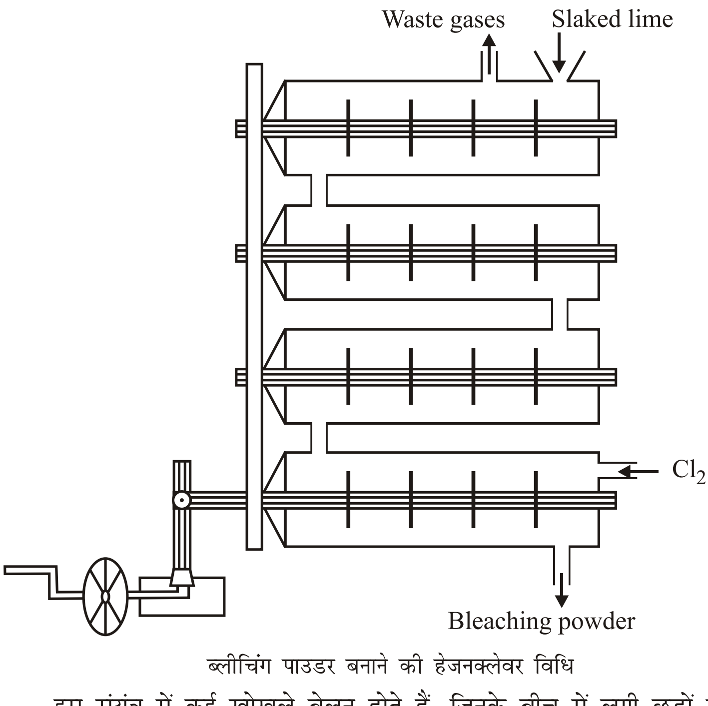

ब्लीचिंग पाउडर बनाने की हेजनक्लेवर विधि

इस संयंत्र में कई खोखले बेलन होते हैं, जिनके बीच में लगी छड़ों मे कई विलोडक लगे होते हैं। इन बेलनों का संबंध एक–दूसरे से इस प्रकार से होता है कि इनमें भरे पदार्थ एक–दूसरे में आ–जा सकते हैं। ऊपरी बेलन में से बुझा हुआ

चूना डालने पर, निचले बेलन में से क्लोरीन गैस प्रवाहित करने पर तथा विलोडकों को चलाने पर क्लोरीन तथा बुझे हुए चूने की क्रिया होती है तथा ब्लीचिंग पाउडर बन जाता है।

दो मुख्य रासायनिक गुण–

(i) ब्लीचिंग पाउडर को जल में घोलकर गर्म करने से क्लोरीन गैस निकलती है।

$$CaOCl_2 + H_2O \longrightarrow Ca(OH)_2 + Cl_2 \uparrow$$

(ii) ब्लीचिंग पाउडर व कार्बन डाइऑक्साइड की अभिक्रिया से क्लोरीन गैस निकलती है।

$$CaOCl_2 + CO_2 \longrightarrow CaCO_3 + Cl_2 \uparrow$$

प्रश्न 10. विरंजक चूर्ण के औद्योगिक निर्माण की बैचमान विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। इसके दो प्रमुख उपयोग भी लिखिए।

उत्तर– बैचमान विधि– यह ब्लीचिंग पाऊडर प्राप्त करने की आधुनिक विधि है।

बैचमान संयंत्र ढले हुए लोहे का बना हुआ एक ऊर्ध्वाधर स्तंभ होता है, जिसमें बहुत-से खाने होते हैं। इस स्तंभ में एक खड़ी शाफ्ट लगी होती है, जिस पर रेक लगे होते हैं। यह शैफ्ट या शाफ्ट खडी अक्ष पर लगातार घूमती रहती है। संयंत्र के ऊपरी भाग में लगे हुए हॉपर के द्वारा बुझा हुआ चूना स्तंभ में डाला जाता है और संपीडित वायु भी प्रवाहित की जाती है, जो बुझे हुए चूने को स्तंभ में चलने में सहायता करती है। स्तंभ में नीचे से गर्म हवा और क्लोरीन गैस की धारा प्रवाहित की जाती है। खड़ी अक्ष पर घूमते हुए शाफ्ट एवं रेकों की सहायता से चूना नीचे चलता जाता है और नीचे से ऊपर आती हुई क्लोरीन से अभिक्रिया करता है, जिससे ब्लीचिंग पाउडर बन जाता है।

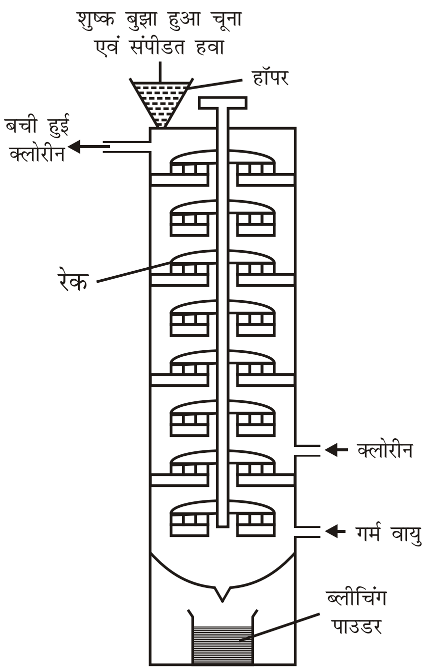

ब्लीचिंग पाउडर निर्माण की बैचमान विधि

ब्लीचिंग पाउडर को संयंत्र के निचले भाग से बाहर निकालकर एकत्रित कर लेते हैं। अवशेष गैसें संयंत्र के ऊपर वाले भाग से बाहर निकल जाती हैं।

दो प्रमुख उपयोग–

(i) पेय जल को जीवाणु रहित करने में काम आता है।

(ii) क्लोरोफॉर्म बनाने, चीनी को सफेद करने तथा ऑक्सीकारक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विरंजक चूर्ण (ब्लीचिंग पाउडर) का रासायनिक नाम, अणुसूत्र तथा उपयोग बताइए।

उत्तर- विरंजक चूर्ण का रासायनिक नाम- कैल्शियम क्लोरो हाइपोक्लोराइट

अणुसूत्र- $CaOCl_2$

विरंजक चूर्ण के उपयोग-

(i) पेय जल को जीवाणु रहित करने में काम आता है।
(ii) सूत, लकड़ी की लुगदी आदि का रंग उड़ाने में विरंजक के रूप में उपयोग होता है।
(iii) क्लोरोफॉर्म बनाने, चीनी को सफेद करने तथा ऑक्सीकारक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

प्रश्न 2. फिटकरी का रासायनिक नाम, अणुसूत्र तथा प्रमुख उपयोग बताइए।

उत्तर- फिटकरी का रासायनिक नाम- पोटैशियम ऐलुमिनियम सल्फेट

अणुसूत्र- $K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O$

उपयोग- फिटकरी के प्रमुख उपयोग निम्नलिखित हैं-

(i) कपड़ों की रँगाई एवं छपाई में रंग बंधक के रूप में।
(ii) जीवाणुनाशक तथा पूर्तिरोधी के रूप में।
(iii) आँखों की दवाई के रूप में।
(iv) चमड़ा तथा कागज उद्योग में इन्हें चिकना करने में।
(v) जल के शोधन में।
(vi) आग बुझाने में।

प्रश्न 3. विरंजक चूर्ण रंगयुक्त पदार्थों को किस प्रकार रंगहीन करता है?

उत्तर- सबसे पहले विरंजक चूर्ण की किसी तनु अम्ल से क्रिया कराते हैं-

$$CaOCl_2 + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow CaSO_4 + H_2O + Cl_2\uparrow$$

इस प्रकार प्राप्त क्लोरीन जल से क्रिया करके नवजात ऑक्सीजन निकालती है। रंगयुक्त पदार्थ नवजात ऑक्सीजन से क्रिया करके रंगहीन पदार्थ बनाते हैं।

$$H_2O + Cl_2 \longrightarrow 2HCl + O \quad \text{(नवजात ऑक्सीजन)}$$

$$\text{रंगयुक्त पदार्थ} + O \longrightarrow \text{रंगहीन पदार्थ}$$

प्रश्न 4. बिना बुझे चूने पर जल डालने पर क्या होता है? इसके तीन प्रमुख उपयोग बताइए।

उत्तर- बिना बुझे चूने (CaO) पर जल डालने पर $Ca(OH)_2$ बनता है तथा ऊष्मा निकलती है।

$$\underset{\text{बिना बुझा चूना}}{CaO} + H_2O \longrightarrow \underset{\text{बुझा चूना}}{Ca(OH)_2} + \text{ऊष्मा}$$

उपयोग-

(i) रँगाई करने में।
(ii) प्रयोगशाला में अभिकर्मक के रूप में।
(iii) धावन सोडा के औद्योगिक निर्माण की सोल्वे की अमोनिया सोडा विधि में।

प्रश्न 5. फिटकरी के फूल किसे कहते हैं?

उत्तर- फिटकरी को 90° C पर गर्म करने पर यह पिघल जाती है तथा 200° C पर इसका संपूर्ण क्रिस्टलन जल निकल जाता है। इस प्रकार एक सफेद रंग का सरंध्र पदार्थ बन जाता है, इस पदार्थ को 'दग्ध फिटकरी' या 'फिटकरी के फूल' कहते हैं।

$$K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O \xrightarrow[\text{पर}]{\text{गर्म करने}} \underset{\substack{\text{फिटकरी के फूल} \\ \text{या दग्ध फिटकरी}}}{K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3} + \underset{\text{जल}}{24H_2O}$$

प्रश्न 6. फिटकरी पर जल मिलाने का क्या प्रभाव होता है?

उत्तर- फिटकरी जल में घुलकर आयनिक सिद्धांत के अनुसार अपने आयनों में वियोजित हो जाती है। इस विलयन के गुण उसमें उपस्थित आयनों के गुणों पर निर्भर करते हैं।

$$K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O \xrightarrow{\text{रक्त तप्त}} K_2SO_4 + Al_2(SO_4)_3 + 24H_2O$$

$$K_2SO_4 \rightleftharpoons 2K^+ + SO_4^{2-}$$

$$Al_2(SO_4)_3 \rightleftharpoons 2Al^{3+} + 3SO_4^{2-}$$

जल की उपस्थिति में ऐलुमिनियम सल्फेट के आयनन के अतिरिक्त इसका जल अपघटन भी हो जाता है।

$$Al_2(SO_4)_3 + 6H_2O \rightleftharpoons 2Al(OH)_3 + 3H_2SO_4$$

ऐलुमिनियम सल्फेट के जल अपघटन के कारण $Al(OH)_3$ तथा H_2SO_4 बनते हैं, जो क्रमश: दुर्बल क्षार तथा प्रबल अम्ल हैं। अत: फिटकरी का जलीय विलयन अम्लीय होता है।

प्रश्न 7. सोडियम बाइकार्बोनेट के उपयोग लिखिए।

उत्तर- सोडियम बाइकार्बोनेट के उपयोग निम्नलिखित हैं-

(i) यह झागदार पेय पदार्थ बनाने के काम आता है।

(ii) यह आग बुझाने वाले यंत्रों में काम आता है।

(iii) कच्चे दूध में मिलाने पर दूध देर तक नहीं फटता है।

(iv) ऐंटीसेप्टिक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

(v) ब्रेड बनाने में प्रयुक्त होता है।

प्रश्न 8. नौसादर बनाने की विधि का उल्लेख कीजिए। इसके दो रासायनिक गुणों एवं दो उपयोगों को भी लिखिए।

उत्तर- नौसादर को हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में अमोनिया गैस प्रवाहित करके प्राप्त किया जाता है।

$$\underset{\text{अमोनिया}}{NH_3} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl} \rightleftharpoons \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड (नौसादर)}}{NH_4Cl}$$

दो रासायनिक गुण-

(i) उर्ध्वपातन गुण- नौसादर को यदि गर्म किया जाए तो यह बिना पिघले अमोनिया और हाइड्रोजन क्लोराइड गैस में विच्छेदित हो जाता है।

$$NH_4Cl \overset{\Delta}{\rightleftharpoons} NH_3 + HCl$$

तथा ठंडा करने पर पुन: नौसादर बन जाता है।

$$NH_3 + HCl \underset{\text{करने पर}}{\overset{\text{ठंडा}}{\rightleftharpoons}} NH_4Cl$$

(ii) क्षारों के साथ क्रिया- इसे कॉस्टिक सोडा या बुझे हुए चूने के साथ गर्म करने पर अमोनिया गैस प्राप्त होती है।

$$NH_4Cl + NaOH \longrightarrow NaCl + NH_3\uparrow + H_2O$$
$$Ca(OH)_2 + 2NH_4Cl \longrightarrow CaCl_2 + 2H_2O + 2NH_3\uparrow$$

दो उपयोग-

(i) दवाइयों तथा शुष्क सेल के निर्माण में प्रयोग होता है।

(ii) कपड़ों की रँगाई, बर्तनों की कलई एवं टाँका लगाने में प्रयोग किया जाता है।

प्रश्न 9. नौसादर का रासायनिक नाम सूत्र लिखिए। इसका उर्ध्वपातन का गुण स्पष्ट कीजिए तथा इसकी सोडियम हाइड्रॉक्साइड के साथ रासायनिक अभिक्रिया लिखिए।

उत्तर- नौसादर का रासायनिक नाम 'अमोनियम क्लोराइड' है। इसका सूत्र 'NH_4Cl' है।

नौसादर का उर्ध्वपातन गुण- गर्म करने पर यह बिना पिघले अमोनिया और हाइड्रोजन क्लोराइड गैस में विच्छेदित हो जाता है तथा ठंडा करने पर पुन: नौसादर बन जाता है।

$$NH_4Cl \xrightarrow[\text{करने पर}]{\text{गर्म}} NH_3 + HCl$$

$$NH_3 + HCl \xrightarrow[\text{करने पर}]{\text{ठंडा}} NH_4Cl$$

नौसादर व सोडियम हाइड्रॉक्साइड की रासायनिक अभिक्रिया- नौसादर को सोडियम हाइड्रॉक्साइड (NaOH) के साथ गर्म करने पर NH_3 (अमोनिया) गैस निकलती है।

$$\underset{\text{नौसादर}}{NH_4Cl} + \underset{\text{सोडियम हाइड्रॉक्साइड}}{NaOH} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम क्लोराइड}}{NaCl} + \underset{\text{जल}}{H_2O} + \underset{\text{अमोनिया}}{NH_3 \uparrow}$$

प्रश्न 10. नौसादर का रासायनिक नाम व अणुसूत्र लिखिए। इसे बनाने की विधि का रासायनिक समीकरण दीजिए।

उत्तर- **नौसादर का रासायनिक नाम-** अमोनियम क्लोराइड

अणुसूत्र- NH_4Cl

नौसादर बनाने की विधि का रासायनिक समीकरण-

$$\underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{HCl} + \underset{\text{अमोनिया}}{NH_3} \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड (नौसादर)}}{NH_4Cl}$$

प्रश्न 11. नौसादर की NaOH व $Ca(OH)_2$ विलयनों के साथ अभिक्रियाओं के समीकरण दीजिए।

उत्तर-

$$NH_4Cl + NaOH \longrightarrow NaCl + H_2O + NH_3 \uparrow$$

$$2NH_4Cl + Ca(OH)_2 \longrightarrow CaCl_2 + 2H_2O + 2NH_3 \uparrow$$

प्रश्न 12. नौसादर पर ऊष्मा के प्रभाव पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- **नौसादर पर ऊष्मा का प्रभाव-** गर्म करने पर यह बिना पिघले अमोनिया (NH_3) तथा हाइड्रोजन क्लोराइड (HCl) में विघटित हो जाता है—

$$NH_4Cl \xrightarrow{\text{ऊष्मा}} NH_3 + HCl$$

प्रश्न 13. नौसादर के प्रमुख उपयोग लिखिए।

उत्तर- **नौसादर के प्रमुख उपयोग-**

(i) प्रयोगशाला अभिकर्मक के रूप में प्रयोग होता है।
(ii) रासायनिक पदार्थ; जैसे- उर्वरक, अमोनिया आदि बनाने के काम में आता है।
(iii) दवाइयों तथा शुष्क सेल के निर्माण में प्रयोग होता है।
(iv) कपड़ों की रँगाई, बर्तनों की कलई एवं टाँका लगाने में प्रयोग किया जाता है।

प्रश्न 14. फिटकरी क्या होती है? ऐलुमिना से फिटकरी बनाने की विधि की रासायनिक समीकरण दीजिए।

उत्तर- **फिटकरी-** फिटकरी पोटैशियम सल्फेट व ऐलुमिनियम सल्फेट का द्विक् लवण है। इसे पोटाश एलम भी कहते हैं। इसके अनुरूप संरचना एवं गुणों वाले द्विक् सल्फेटों को 'फिटकरियाँ' कहते हैं।

ऐलुमिना से फिटकरी बनाने की विधि- ऐलुमिना (Al_2O_3) को पीसकर सांद्र H_2SO_4 के साथ गर्म करने पर प्राप्त घोल को छानकर जो निस्यंद प्राप्त होता है, उसमें पोटैशियम सल्फेट विलयन की उचित मात्रा मिलाकर गर्म करके और फिर ठंडा करने पर फिटकरी के क्रिस्टल प्राप्त होते हैं-

$$\underset{\text{ऐलुमिना}}{Al_2O_3} + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{3H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{ऐलुमिनियम सल्फेट}}{Al_2(SO_4)_3} + \underset{\text{जल}}{3H_2O}$$

$$\underset{\text{ऐलुमिनियम सल्फेट}}{Al_2(SO_4)_3} + \underset{\text{पोटैशियम सल्फेट}}{K_2SO_4} + \underset{\text{जल}}{24H_2O} \longrightarrow \underset{\text{फिटकरी}}{K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O}$$

प्रश्न 15. साधारण फिटकरी का अणुसूत्र क्या है? इसकी क्षार के साथ अभिक्रिया को लिखिए।

उत्तर- साधारण फिटकरी का अणुसूत्र है- $K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O$

फिटकरी की क्षार के साथ अभिक्रिया- कॉस्टिक सोडा एक क्षार है। फिटकरी का विलयन कॉस्टिक सोडा से क्रिया करके ऐलुमिनियम हाइड्रॉक्साइड का सफेद अवक्षेप देता है, जो कि कॉस्टिक सोडा की अधिकता में घुल जाता है।

$$K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O \longrightarrow K_2SO_4 + Al_2(SO_4)_3 + 24H_2O$$

$$Al_2(SO_4)_3 + 6NaOH \longrightarrow \underset{\text{ऐलुमिनियम हाइड्रॉक्साइड}}{2Al(OH)_3 \downarrow} + 3Na_2SO_4$$

$$2Al(OH)_3 + 2NaOH \longrightarrow \underset{\text{सोडियम मेटाऐलुमिनेट (विलेय)}}{2NaAlO_2} + 4H_2O$$

प्रश्न 16. साधारण फिटकरी का रासायनिक नाम एवं सूत्र लिखिए। जल मिलाने का इस पर क्या प्रभाव होता है?

उत्तर- **साधारण फिटकरी का रासायनिक नाम -** पोटैशियम ऐलुमिनियम सल्फेट

सूत्र- $K_2SO_4 \cdot Al_2(SO_4)_3 \cdot 24H_2O$

फिटकरी में जल मिलाने का प्रभाव- इस प्रश्न के उत्तर के लिए 'लघु उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न-6 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 17. फिटकरी के प्रमुख उपयोगों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- **फिटकरी के प्रमुख उपयोग-** फिटकरी के प्रमुख उपयोग निम्नलिखित हैं-

(i) कपड़ों की रँगाई एवं छपाई में रंग बंधक के रूप में।
(ii) जीवाणुनाशक तथा पूर्तिरोधी के रूप में।
(iii) आँखों की दवाई के रूप में ।
(iv) चमड़ा तथा कागज उद्योग में इन्हें चिकना करने में।
(v) जल के शोधन में।
(vi) आग बुझाने में।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक की पृष्ठ संख्या 171 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न . प्रयोगशाला में निम्नलिखित को प्राप्त करना तथा उनके भौतिक तथा रासायनिक गुणों का परीक्षण करना।

(a) धावन सोडा
(b) खाने का सोडा
(c) फिटकरी
(d) नौसादर
(e) विरंजक

उत्तर- स्वयं कीजिए।

▣▣▣

12

धातु व अधातु

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. धातु तथा अधातु में प्रमुख अंतर क्या है? एक सारणी बनाकर स्पष्ट कीजिए। या धातु तथा अधातु तत्वों के किन्हीं चार सामान्य गुणों का उल्लेख कीजिए। या रासायनिक दृष्टिकोण से धातु तथा अधातु में मुख्य अंतर क्या है?

उत्तर- **धातु तथा अधातु में अंतर**

क्र०सं०	गुण	धातु	अधातु
1.	भौतिक अवस्था	अधिकांश धातुएँ ठोस अवस्था में पाई जाती हैं। केवल सीजियम, फ्रैन्शियम, गैलियम तथा मरकरी द्रव हैं।	अधातुएँ द्रव्य की तीनों अवस्थाओं अर्थात् ठोस, द्रव तथा गैस के रूप में पाई जाती हैं।
2.	पारदर्शिता	सामान्यत: धातुएँ अपारदर्शी होती हैं।	अधातुएँ पारदर्शी, अपारदर्शी या पारभासक होती हैं।
3.	विद्युत एवं ऊष्मा चालकता	सभी धातुएँ विद्युत एवं ऊष्मा की सुचालक होती हैं।	ग्रेफाइट को छोड़कर लगभग सभी अधातुएँ विद्युत तथा ऊष्मा की कुचालक होती हैं।
4.	तन्यता	धातुएँ तन्य होती हैं अर्थात् उनके तार खींचे जा सकते हैं।	अधातुएँ तन्य नहीं होती हैं।
5.	आघातवर्धनीयता	धातुएँ आघातवर्धनीय होती हैं अर्थात् हथौड़े से पीटने पर उनके पृष्ठ के क्षेत्रफल में वृद्धि होती है।	अधातुएँ आघातवर्धनीय नहीं होती हैं।
6.	भंगुरता	धातुएँ भंगुर नहीं होती हैं।	अधातुएँ भंगुर होती हैं अर्थात् हथौड़े से पीटने पर वे छोटे-छोटे कणों में टूट जाती हैं।
7.	धात्विक चमक	धातुओं में एक विशेष प्रकार की चमक पाई जाती है, जिसे धात्विक चमक कहते हैं।	ग्रेफाइट तथा आयोडीन को छोड़कर लगभग सभी अधातुओं में कोई विशेष चमक नहीं पाई जाती है।
8.	धात्विक ध्वनि	धातुओं के आपस में टकराने पर विशेष ध्वनि प्राप्त होती है।	अधातुओं के आपस में टकराने पर विशेष ध्वनि प्राप्त नहीं होती है।
9.	धन विद्युतीय तथा ऋण विद्युतीय	धातुएँ धनायन बनाने की प्रवृत्ति रखती हैं तथा धन विद्युतीय तत्व कहलाती हैं।	अधातुएँ ऋणायन बनाने की प्रवृत्ति रखती हैं तथा ऋण विद्युतीय तत्व कहलाती हैं।
10.	विद्युत अपघटन	विद्युत अपघटन के फलस्वरूप धातुएँ ऋणोद या कैथोड पर प्राप्त होती हैं।	विद्युत अपघटन के फलस्वरूप अधातुएँ, धनोद या एनोड पर प्राप्त होती हैं।

11.	ऑक्साइडों की प्रकृति	धातुओं के ऑक्साइड क्षारीय होते हैं अर्थात् जल के साथ क्षार बनाते हैं तथा लाल लिटमस को नीला कर देते हैं।	अधातुओं के ऑक्साइड अम्लीय होते हैं अर्थात् जल के साथ अम्ल बनाते हैं तथा नीले लिटमस को लाल कर देते हैं।

प्रश्न 2. धातुओं की सक्रियता श्रेणी क्या है? इसके मुख्य अभिलक्षण लिखिए।

उत्तर- धातुओं की सक्रियता श्रेणी- अभिक्रियाशील धातु अपने से कम अभिक्रियाशील धातु को उसके यौगिक के विलयन या गलित अवस्था से विस्थापित कर देती है।

सभी धातुओं की अभिक्रियाशल समान नहीं होती है। ऑक्सीजन, जल एवं अम्ल के साथ विभिन्न धातुओं की अभिक्रियाशीलता की जाँच करने पर हम पाते हैं कि सभी धातुएँ इन अभिकर्मकों के साथ अभिक्रिया नहीं करती हैं। इसलिए हम सभी धातुओं के नमूने को अभिक्रियाशीलता के अवरोही क्रम में नहीं रख सकते। लेकिन विस्थापन अभिक्रियाएँ धातुओं की अभिक्रियाशीलता का उत्तम प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। इसे समझना बहुत ही आसान एवं सरल है। अगर धातु (A) धातु (B) को उसके विलयन से विस्थापित कर देती है तो यह धातु (B) की अपेक्षा अधिक अभिक्रियाशील है।

धातु (A) + (B) का लवण विलयन $\longrightarrow$ (A) का लवण विलयन + धातु (B)

सक्रियता श्रेणी वह सूची है, जिसमें धातुओं की क्रियाशीलता को अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। विस्थापन के प्रयोगों के बाद निम्न श्रेणी को विकसित किया गया है, जिसे **सक्रियता श्रेणी** कहते हैं।

सारणी- सक्रियता श्रेणी-धातुओं की सापेक्ष अभिक्रियाशीलताएँ

K	पोटैशियम	सबसे अधिक अभिक्रियाशील
Na	सोडियम	
Ca	कैल्सियम	
Mg	मैग्नीशियम	
Al	ऐलुमिनियम	
Zn	जिंक	घटती अभिक्रियाशील
Fe	आयरन	
P	लेड	
H	हाइड्रोजन	
Cu	कॉपर (ताँबा)	
Hg	मर्करी (पारद)	
Ag	सिल्वर	
Au	गोल्ड	सबसे कम अभिक्रियाशील

सक्रियता श्रेणी के मुख्य अभिलक्षण-

(i) सक्रियता श्रेणी के आधार पर यह बताया जा सकता है कि किसी धातु की किसी अम्ल, जल या धात्विक लवण से अभिक्रिया संभव है या नहीं।

(ii) सक्रियता श्रेणी में हाइड्रोजन से ऊपर रखी गई धातुएँ सक्रिय धातुएँ कहलाती हैं। हाइड्रोजन से नीचे रखी धातुएँ कम सक्रिय या अक्रिय होती हैं।

(iii) हाइड्रोजन से ऊपर रखी धातुएँ अम्लों से क्रिया करके हाइड्रोजन विस्थापित करती हैं, जबकि हाइड्रोजन से नीचे रखी धातुएँ ऐसा नहीं करती हैं।

(iv) सक्रियता श्रेणी में कोई धातु अपने से नीचे रखी धातु को उसके जलीय विलयन से विस्थापित कर देती है।

(v) कम सक्रिय धातु अपने से अधिक सक्रिय धातु को उसके विलयन से विस्थापित नहीं कर सकती है।

(vi) सक्रियता श्रेणी में धातुओं की O_2, H_2O व तनु अम्लों से क्रिया की दर ऊपर से नीचे की ओर घटती है। हाइड्रोजन से नीचे की धातुएँ O_2, H_2O या तनु अम्लों से क्रिया नहीं करती हैं।

प्रश्न 3. A, B, C एवं D चार धातुओं के नमूनों को लेकर एक-एक करके निम्न विलयन में डाला गया। इससे प्राप्त परिणाम को निम्न प्रकार से सारणीबद्ध किया गया है-

धातु	आयरन (II) सल्फेट	कॉपर (II) सल्फेट	जिंक सल्फेट	सिल्वर नाइट्रेट
A	कोई अभिक्रिया नहीं	विस्थापन	–	–
B	विस्थापन	–	कोई अभिक्रिया नहीं	–
C	कोई अभिक्रिया नहीं	कोई अभिक्रिया नहीं	कोई अभिक्रिया नहीं	विस्थापन
D	कोई अभिक्रिया नहीं	कोई अभिक्रिया नहीं	कोई अभिक्रिया नहीं	कोई अभिक्रिया नहीं

इस सारणी का उपयोग कर धातु A, B, C एवं D के संबंध में निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

(a) सबसे अधिक अभिक्रियाशील धातु कौन-सी है?

उत्तर- धातु 'B'

(b) धातु B को कॉपर (II) सल्फेट के विलयन में डाला जाए तो क्या होगा?

उत्तर- कोई विस्थापन नहीं।

(c) धातु A, B, C एवं D को अभिक्रियाशीलता के बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित कीजिए।

उत्तर- B > A > C > D

प्रश्न 4. मिश्र धातु से आप क्या समझते हैं? धातु एवं उसके मिश्र धातु के गुणों में प्रमुख भिन्नता क्या है?

उत्तर- मिश्र धातु- ''जब दो या दो से अधिक धातुओं को एक निश्चित अनुपात में मिलाकर पिघलाया जाता है तो ये धातुएँ परस्पर मिल जाती हैं और एक समांग मिश्रण बनाती हैं। ऐसे मिश्रण को मिश्रधातु कहते हैं।''

इन मिश्रधातुओं के भौतिक गुण मूल धातुओं के भौतिक गुणों से बिल्कुल भिन्न होते हैं। **उदाहरणार्थ**– मिश्रधातु पीतल, जिसमें दो भाग ताँबा व एक भाग जस्ता होता है, ताँबा व जस्ता की अपेक्षा अधिक कड़ा होता है।

मिश्रधातु बनाते समय यदि विभिन्न धातुओं को धीरे-धीरे गर्म किया जाए और फिर उन्हें धीरे-धीरे ठंडा होने दिया जाए तो नरम मिश्रधातु प्राप्त होती है। यदि धातुओं को शीघ्रता से गर्म करके फिर शीघ्रता से ठंडा किया जाए तो मिश्रधातु कठोर और भंगुर होती है। इस प्रकार धातुओं से मिश्रधातु बनाने में उनकी कठोरता, वायु, जल आदि से क्रिया करने का गुण, चमक, रंग, मूल्य आदि बदलकर अधिक उपयोगी बन जाते हैं। अब तक चालीस विभिन्न धातुओं से लगभग पाँच हजार मिश्रधातुएँ बनाई जा चुकी हैं। मिश्र धातुएँ व्यापार की दृष्टि से अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। चूँकि ये शुद्ध धातु की अपेक्षा अधिक कठोर

और सुंदर होती हैं, इसी कारण ये अधिकतर आभूषण, सिक्के, बर्तन, मशीनों के पुर्जें, भारी तोपें, मोटरों और वायुयान के कुछ भाग आदि बनाने में काम आती हैं।

धातु एवं उसके मिश्रधातु के गुणों में प्रमुख भिन्नताएँ-

(i) मिश्रधातु की सक्रियता अवयवी धातुओं से कम होती है।
(ii) मिश्रधातु का गलनांक अवयवी धातुओं से कम होता है।
(iii) मिश्रधातु का विशिष्ट रंग अवयवी धातुओं से भिन्न होता है।
(iv) मिश्रधातु की तन्यता अधिक एवं आघातवर्ध्यता अवयवी धातुओं से कम होती है।
(v) मिश्रधातु की चालकता अवयवी धातुओं से भिन्न होती है।
(vi) मिश्रधातुएँ अपेक्षाकृत कठोर होती हैं।

प्रश्न 5. मिश्रधातु से आप क्या समझते हैं? धातु व उसकी मिश्रधातु के गुणों में प्रमुख भिन्नता क्या है? पीतल का संघटन भी लिखिए।

उत्तर- इस प्रश्न के लिए उपर्युक्त प्रश्न 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

पीतल का संघटन- Cu = 70%, Zn = 30%

प्रश्न 6. विद्युत रासायनिक श्रेणी क्या है? इसके दो प्रमुख अनुप्रयोग लिखिए।

उत्तर- विद्युत रासायनिक श्रेणी- विभिन्न इलेक्ट्रोडों या उन पर होने वाली अर्द्ध अभिक्रियाओं के मानक इलेक्ट्रोड विभवों को बढ़ते हुए क्रम में रखने पर जो श्रेणी प्राप्त होती है, उसे विद्युत रासायनिक श्रेणी कहते हैं। इस श्रेणी में सभी धातु अपनी सक्रियता के घटते हुए क्रम में स्थित हैं।

विद्युत रासायनिक श्रेणी की सहायता से धातुओं की क्रियाशीलता की तुलना की जा सकती है। विद्युत रासायनिक श्रेणी में जो धातुएँ ऊपर की ओर स्थित होती हैं, उनके इलेक्ट्रॉड या अपचयन विभव कम होते हैं। जबकि ऑक्सीकरण विभव अधिक होते हैं तथा उन धातुओं की इलेक्ट्रॉन त्यागकर धनायन बनाने की प्रवृत्ति अधिक होती है अर्थात् वे धातु अधिक क्रियाशील होती हैं।

अत: धातुओं की क्रियाशीलता उनके इलेक्ट्रॉड विभवों के बढ़ते हुए क्रम में घटती है तथा विद्युत रासायनिक श्रेणी में धातुओं को उनकी सक्रियता के घटते हुए क्रम में रखा गया है। उदाहरण के रूप में— श्रेणी में Fe, Cu से ऊपर स्थित है। अत: Fe, Cu से अधिक क्रियाशील धातु है।

कुछ प्रमुख धातुओं की सक्रियता का घटता हुआ क्रम इस प्रकार है—

$$K > Na > Mg > Al > Zn > Fe > Cu > Ag > Pt > Au$$

विद्युत रासायनिक श्रेणी में जो धातु हाइड्रोजन से ऊपर स्थित हैं, वे अम्लों में से हाइड्रोजन को विस्थापित कर देती हैं। दूसरे शब्दों में— जिन धातुओं के इलेक्ट्रॉड विभव हाइड्रोजन के इलेक्ट्रॉड विभव से कम होते हैं, वे धातु अम्लों में से हाइड्रोजन को विस्थापित कर देती हैं। जिन धातुओं के इलेक्ट्रॉड विभव हाइड्रोजन के इलेक्ट्रॉड विभव से अधिक होते हैं, वे धातु अम्लों में से हाइड्रोजन विस्थापित नहीं करती हैं; **उदाहरणार्थ-** ऐलुमिनियम तथा जिंक विद्युत रासायनिक श्रेणी में हाइड्रोजन से ऊपर स्थित हैं। Al, Zn तथा H_2 के मानक इलेक्ट्रॉड विभव क्रमश: – 1.66, – 0.76 तथा 0 वोल्ट हैं। अत: Al तथा Zn, HCl में से हाइड्रोजन विस्थापित कर देते हैं। Al की HCl से अभिक्रिया की गति, Zn की HCl से अभिक्रिया की गति से तीव्र होती है।

$$2Al + 6HCl \longrightarrow 2AlCl_3 + 3H_2$$
$$Zn + 2HCl \longrightarrow ZnCl_2 + H_2$$

कॉपर विद्युत रासायनिक श्रेणी में हाइड्रोजन से नीचे स्थित है। Cu का मानक इलेक्ट्रॉड विभव + 0.34 वोल्ट है जो हाइड्रोजन के मानक इलेक्ट्रॉड विभव से अधिक है। अत: Cu, HCl में से हाइड्रोजन विस्थापित नहीं करता है।

विद्युत रासायनिक श्रेणी की सहायता से विभिन्न ऑक्सीकारकों की ऑक्सीकारक क्षमताओं तथा विभिन्न अपचायकों की अपचायक क्षमताओं की तुलना की जा सकती है। इस श्रेणी से किसी गैल्वेनिक (या वोल्टीय) सेल के E.M.F. की गणना की जा सकती है।

विद्युत रासायनिक श्रेणी के दो प्रमुख अनुप्रयोग–

(i) कॉपर सल्फेट विलयन में डूबी हुई लोहे की कीलों पर ताँबा जम जाता है।

विद्युत रासायनिक श्रेणी में लोहा (Fe), कॉपर (Cu) से ऊपर स्थित है। अत: लोहा (Fe), कॉपर (Cu), से अधिक क्रियाशील धातु है। अधिक क्रियाशील धातु कम क्रियाशील धातु को उसके लवण के विलयन में से विस्थापित कर देती है। अत: लोहे की कीलों को कॉपर सल्फेट के विलयन में डालने पर निम्न अभिक्रिया होगी—

$$\underset{\text{आयरन}}{Fe} + \underset{\text{कॉपर सल्फेट}}{CuSO_4} \longrightarrow \underset{\text{फेरस सल्फेट}}{FeSO_4} + \underset{\text{कॉपर}}{Cu}$$

अत: कॉपर के मुक्त हो जाने के कारण यह लोहे की कीलों पर जम जाता है।

(ii) सोडियम साधारण ताप पर पानी से क्रिया करता है, जबकि Mg गर्म पानी से क्रिया करता है।

विद्युत रासायनिक श्रेणी से पता चलता है कि Na का इलेक्ट्रॉड (अपचयन) विभव Mg के इलेक्ट्रॉड विभव से कम है। अत: Na का ऑक्सीकरण विभव Mg के ऑक्सीकरण विभव से अधिक है। अत: Na की Na^+ में ऑक्सीकृत होने की क्षमता Mg की Mg^{2+} में ऑक्सीकृत होने की क्षमता से अधिक है। इसलिए Na ठंडे जल के साथ ही क्रिया करके Na^+ बनाता है, जबकि Mg गर्म जल के साथ क्रिया करके Mg^{2+} बनाता है।

प्रश्न 7. विद्युत रासायनिक श्रेणी क्या है? समझाइए। कारण सहित स्पष्ट कीजिए कि निम्न रासायनिक अभिक्रिया संभव है या नहीं–

$$\mathbf{Hg + H_2SO_4 \longrightarrow HgSO_4 + H_2}$$

$$\mathbf{Cu + 2AgNO_3 \longrightarrow Cu(NO_3)_2 + 2Ag}$$

उत्तर– विद्युत रासायनिक श्रेणी– इसके लिए प्रश्न–6 के 'विद्युत रासायनिक श्रेणी' का अवलोकन कीजिए।

रासायनिक समीकरण की रासायनिक अभिक्रिया की संभाव्यता–

(i) $Hg + H_2SO_4 \longrightarrow HgSO_4 + H_2$

हम जानते हैं कि विद्युत रासायनिक श्रेणी में मरकरी (Hg), हाइड्रोजन (H) से नीचे स्थित है। स्पष्ट है कि Hg, हाइड्रोजन से कम क्रियाशील धातु है। अत: जो धातु विद्युत रासायनिक श्रेणी में हाइड्रोजन से नीचे स्थित हैं, वे अम्लों में से हाइड्रोजन को विस्थापित नहीं करती। अत: उपर्युक्त रासायनिक अभिक्रिया संभव नहीं है।

(ii) $Cu + 2AgNO_3 \longrightarrow Cu(NO_3)_2 + 2Ag$

विद्युत रासायनिक श्रेणी में कॉपर (Cu), सिल्वर (Ag) से ऊपर स्थित है। अत: कॉपर (Cu), सिल्वर (Ag) से अधिक क्रियाशील धातु है। अधिक क्रियाशील धातु

कम क्रियाशील धातु को उसके लवण के विलयन में से विस्थापित कर देती है। अत: कॉपर को सिल्वर नाइट्रेट विलयन में डालने पर यह धातु सिल्वर नाइट्रेट विलयन में से सिल्वर को विस्थापित कर देती है। अत: उपर्युक्त रासायनिक अभिक्रिया संभव है।

प्रश्न 8. विद्युत रासायनिक श्रेणी क्या है? कॉपर की छड़ को $AgNO_3$ विलयन में डालने पर कुछ समय बाद विलयन का रंग नीला हो जाता है। विद्युत रासायनिक श्रेणी के आधार पर समझाइए।

उत्तर- विद्युत रासायनिक श्रेणी– इसके लिए प्रश्न 6 के 'विद्युत रासायनिक श्रेणी' का अवलोकन कीजिए।

कॉपर की छड़ को $AgNO_3$ विलयन में डालने पर कुछ समय बाद विलयन का रंग नीला हो जाता है।

विद्युत रासायनिक श्रेणी में कॉपर (Cu), सिल्वर (Ag) से ऊपर स्थित है। अत: कॉपर (Cu), सिल्वर (Ag) से अधिक क्रियाशील धातु है। अधिक क्रियाशील धातु कम क्रियाशील धातु को उसके लवण के विलयन में से विस्थापित कर देती है। अत: कॉपर को सिल्वर नाइट्रेट विलयन में डालने पर यह धातु सिल्वर नाइट्रेट विलयन में से सिल्वर को विस्थापित कर देती है।

$$Cu + 2AgNO_3 \longrightarrow Cu(NO_3)_2 + 2Ag$$

कॉपर नाइट्रेट विलयन में कॉपर आयन (Cu^{2+}) तथा नाइट्रेट आयन होते हैं। कॉपर आयन (Cu^{2+}) बनने के कारण विलयन का रंग नीला हो जाता है।

प्रश्न 9. विद्युत रासायनिक श्रेणी की सहायता से धातुओं द्वारा अम्लों से हाइड्रोजन विस्थापित करने की क्षमता किस प्रकार ज्ञात करते हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- विद्युत रासायनिक श्रेणी में जो धातु हाइड्रोजन से ऊपर स्थित हैं, वे अम्लों में से हाइड्रोजन को विस्थापित कर देती हैं।

स्पष्ट रूप से, जिन धातुओं के इलेक्ट्रॉड विभव हाइड्रोजन के इलेक्ट्रॉड विभव से कम होते हैं, वे धातुएँ अम्लों में से हाइड्रोजन को विस्थापित कर देती हैं। जिन धातुओं के इलेक्ट्रॉड विभव हाइड्रोजन के इलेक्ट्रॉड विभव से अधिक होते हैं, वे धातु अम्लों में से हाइड्रोजन विस्थापित नहीं करती हैं। **उदाहरणार्थ**— ऐलुमिनियम तथा जिंक विद्युत रासायनिक श्रेणी में हाइड्रोजन से ऊपर स्थित हैं। Al, Zn तथा हाइड्रोजन के मानक इलेक्ट्रॉड विभव क्रमश: -1.66, -0.76 तथा 0 वोल्ट हैं। अत: Al तथा Zn, HCl में से हाइड्रोजन विस्थापित कर देते हैं। Al की HCl से अभिक्रिया की गति, Zn की HCl से अभिक्रिया की गति से तीव्र होती है।

$$2Al + 6HCl \longrightarrow 2AlCl_3 + 3H_2$$

$$Zn + 2HCl \longrightarrow ZnCl_2 + H_2$$

कॉपर विद्युत रासायनिक श्रेणी में हाइड्रोजन से नीचे स्थित है। Cu का मानक इलेक्ट्रॉड विभव $+0.34$ वोल्ट है जो हाइड्रोजन के मानक इलेक्ट्रॉड विभव से अधिक है। अत: Cu, HCl में से हाइड्रोजन विस्थापित नहीं करता है।

प्रश्न 10. धातुकर्म क्या है? धातुकर्म की क्रिया के विभिन्न पदों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- धातुकर्म– अयस्क से शुद्ध धातु प्राप्त करने के लिए कुछ भौतिक तथा रासायनिक प्रक्रमों का प्रयोग किया जाता है। **अयस्कों से भौतिक तथा रासायनिक प्रक्रमों द्वारा शुद्ध धातु प्राप्त करने की क्रिया को धातुकर्म कहते हैं।**

अयस्क से धातु निष्कर्षण में प्राय: निम्नलिखित प्रक्रम प्रयुक्त होते हैं—

(i) अयस्क का पीसना– खानों से प्राप्त अयस्क के बड़े–बड़े टुकड़ों को पहले हथौड़ों से पीटकर छोटे टुकड़ों में तोड़ा जाता है। फिर दलित्र अथवा स्टाम्प मिल द्वारा कूट–पीसकर उसका पाउडर बना लिया जाता है।

(ii) अयस्क का सांद्रण– अयस्क को आधात्री से पृथक् करना, अयस्क का सांद्रण कहलाता है। सांद्रण की कई विधियाँ होती हैं जो अयस्क की और उसमें उपस्थित आधात्री की प्रकृति के अनुसार प्रयुक्त होती हैं। सांद्रण की कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(a) गुरुत्वीय पृथक्करण विधि– यह विधि अयस्क और उसमें उपस्थित आधात्री के आपेक्षिक घनत्वों के अंतर पर निर्भर करती है। इस विधि में बारीक पिसे हुए अयस्क को जल की धारा के द्वारा धोया जाता है। हल्का गैंग जल के साथ बह जाता है और भारी अयस्क शेष रह जाता है। इस विधि द्वारा भारी अयस्कों (**उदाहरणार्थ**— SnO_2, Fe_3O_4) का सांद्रण किया जाता है।

(b) फेन (झाग) प्लवन विधि – यह विधि अयस्क और आधात्री की किसी द्रव से भीगने की प्रवृत्ति पर निर्भर करती है। सल्फाइड अयस्कों का सांद्रण इसी विधि द्वारा किया जाता है। तेल और जल के मिश्रण में सल्फाइड अयस्क को डालने पर सल्फाइड अयस्क मुख्य रूप से तेल द्वारा और अयस्क में उपस्थित आधात्री जल द्वारा भीगती है।

इस विधि में जल से भरे एक टैंक में बारीक पिसे हुए अयस्क को डालकर उसमें थोड़ा (1%) क्रिओसेट तेल अथवा चीड़ का तेल और थोड़ा पोटैशियम एथिल जैंथेट मिलाया जाता है और फिर मिश्रण में वायु की प्रबल धारा प्रवाहित की जाती है। सल्फाइड अयस्क के कण तेल से भीगकर द्रव की सतह पर फेन (झाग) में एकत्रित हो जाते हैं और गैंग जल से भीगकर टैंक के पैंदे में बैठ जाता है। पोटैशियम एथिल जैंथेट सल्फाइड अयस्क के छोटे कणों को अधिशोषित करके उनको वायु के बुलबुलों के साथ फेन में भेज देता है। इस प्रकार सांद्रित अयस्क प्राप्त होता है।

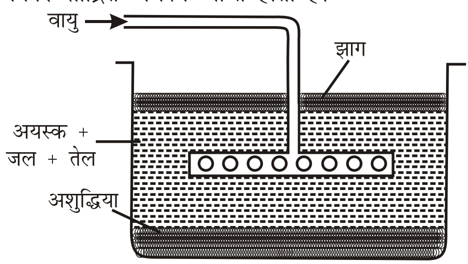

इस विधि द्वारा कॉपर, लेड और जिंक के सल्फाइड अयस्कों का सांद्रण किया जाता है।

(c) चुंबकीय पृथक्करण– यह विधि पदार्थों के चुंबकीय गुणों पर आधारित है। यदि अयस्क चुंबकीय है अथवा उसमें किसी चुंबकीय पदार्थ की अशुद्धि है तो इस विधि द्वारा चुंबकीय और अचुंबकीय पदार्थों का पृथक्करण किया जा सकता है। **उदाहरणार्थ**— टिन के अयस्क टिनस्टोन (SnO_2) में आयरन का मैगनेटिक ऑक्साइड (Fe_3O_4) और आयरन टंगस्टेट मिले रहते हैं। अयस्क को पीसकर एक घूमते हुए पट्टे पर डालते हैं जो चुंबकीय बेलन पर लगी होती है। चुंबकीय पदार्थ चुंबक के समीप एकत्रित हो जाता है और टिनस्टोन अलग हो जाता है।

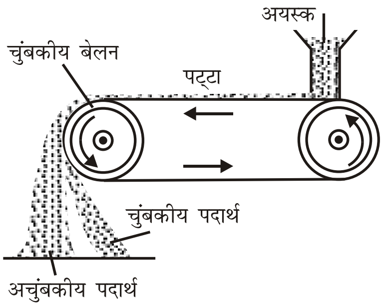

(iii) धातुओं का निष्कर्षण – सांद्रित अयस्क से धातु प्राप्त करने की पूर्ण क्रिया को धातु का निष्कर्षण कहते हैं। अयस्क की प्रकृति तथा धातु के निष्कर्षण के लिए प्रयुक्त विधि पर निर्भर करते हुए इस क्रिया में कई पदों का प्रयोग किया जाता है। धातु के निष्कर्षण में प्रयुक्त होने वाले कुछ प्रमुख पद निम्नलिखित हैं—

(a) निस्तापन– सांद्रित अयस्क को वायु की अनुपस्थिति में उसके गलनांक के नीचे, उच्च ताप पर गर्म करके उसमें उपस्थित नमी, CO_2, SO_2 तथा अन्य वाष्पशील कार्बनिक अपद्रव्य को निष्कासित करने की क्रिया को निस्तापन कहते हैं। इस क्रिया में अयस्क से गैसीय पदार्थ या वाष्पशील पदार्थ अलग-अलग हो जाते हैं तथा वह सरंध्र हो जाता है। इसे सामान्यतया परावर्तनी भट्टी में किया जाता है। **उदाहरणार्थ**—

$$\underset{\text{बॉक्साइट}}{Al_2O_3 \cdot 2H_2O} \xrightarrow{\text{ऊष्मा}} \underset{\text{ऐलुमिनियम ऑक्साइड}}{Al_2O_3} + \underset{\text{जल}}{2H_2O}$$

$$\underset{\text{जिंक कार्बोनेट}}{ZnCO_3} \xrightarrow{\text{ऊष्मा}} \underset{\text{जिंक ऑक्साइड}}{ZnO} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2}$$

$$\underset{\text{लिमोनाइट}}{2Fe_2O_3 \cdot 3H_2O} \xrightarrow{\text{ऊष्मा}} \underset{\text{फेरिक ऑक्साइड}}{2Fe_2O_3} + \underset{\text{जल}}{3H_2O}$$

(b) भर्जन– सांद्रित अयस्क को अकेले या अन्य पदार्थों के साथ मिलकर, गलनांक के नीचे, वायु की नियंत्रित मात्रा में गर्म करने की क्रिया को भर्जन कहते हैं। भर्जन करने पर अयस्क में उपस्थित सल्फर और आर्सेनिक की अशुद्धि वाष्पशील ऑक्साइडों में परिवर्तित होकर वायु के साथ बाहर निकल जाती है। **उदाहरणार्थ**— कॉपर पाइराइट ($CuFeS_2$) से कॉपर का निष्कर्षण करने में सांद्रित अयस्क का भर्जन करने पर निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं—

$$\underset{\text{सल्फर}}{S} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{O_2} \longrightarrow \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{SO_2}$$

$$\underset{\text{आर्सेनिक}}{4As} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{3O_2} \longrightarrow \underset{\text{आर्सेनिक ऑक्साइड}}{2As_2O_3}$$

$$\underset{\text{कॉपर पाइराइट}}{2CuFeS_2} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{O_2} \longrightarrow \underset{\text{क्यूप्रस सल्फाइड}}{Cu_2S} + \underset{\text{फेरस सल्फाइड}}{2FeS} + \underset{\text{सल्फर डाइ ऑक्साइड}}{SO_2 \uparrow}$$

क्युप्रस सल्फाइड (Cu_2S) तथा फेरस सल्फाइड (FeS) के कुछ भाग ऑक्साइड में बदल जाते हैं।

$$\underset{\text{क्यूप्रस सल्फाइड}}{2Cu_2S} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{3O_2} \longrightarrow \underset{\text{क्यूप्रस ऑक्साइड}}{2Cu_2O} + \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{2SO_2 \uparrow}$$

$$2FeS + 3O_2 \longrightarrow 2FeO + 2SO_2\uparrow$$
फेरस सल्फाइड ऑक्सीजन फेरस ऑक्साइड सल्फर डाइऑक्साइड

(c) प्रगलन – इस विधि में उच्च ताप पर अयस्क का अपचयन गलित धातु से होता है। भर्जित या निस्तापित अयस्क में विद्यमान न घुलने वाली अशुद्धियों को गलाकर दूर करने की प्रक्रिया को प्रगलन कहते हैं। इसमें भर्जित या निस्तापित अयस्क में उचित गालक तथा कोक मिलाकर मिश्रण को उच्च ताप पर गलाने पर न घुलने वाली अशुद्धियाँ धातुमल के रूप में अलग हो जाती हैं, जो पिघली धातु के ऊपर तैरती हैं। **उदाहरणार्थ**— कॉपर पाइराइट से कॉपर का निष्कर्षण करने में, भर्जित अयस्क में क्वार्ट्ज (SiO_2) तथा कोक मिलाकर मिश्रण को वात्या भट्टी में प्रगलित करने पर निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं—

$$Cu_2O + FeS \longrightarrow Cu_2S + FeO$$
क्यूप्रस ऑक्साइड फेरस सल्फाइड क्यूप्रस सल्फाइड फेरस ऑक्साइड

$$2FeS + 3O_2 \longrightarrow 2FeO + 2SO_2$$
फेरस सल्फाइड ऑक्सीजन फेरस ऑक्साइड सल्फर डाइऑक्साइड

$$FeO + SiO_2 \longrightarrow FeSiO_3$$
फेरस ऑक्साइड सिलिका ऑक्साइड फेरस सिलिकेट

(d) गालक – वे पदार्थ, जो अयस्क में उपस्थित अशुद्धियों के साथ उच्च ताप पर क्रिया करके इन्हें सरलता से गलाकर दूर कर देते हैं, गालक कहलाते हैं। सरलता से गलकर अलग होने वाले पदार्थों को धातुमल कहते हैं। गालक निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं—

अम्लीय गालक– जब भर्जित अयस्क में क्षारीय अशुद्धियाँ होती हैं, तो अम्लीय गालक प्रयुक्त करते हैं। **उदाहरणार्थ**— सिलिका डॉइऑक्साइड (SiO_2) अम्लीय गालक होता है।

$$SiO_2 + FeO \longrightarrow FeSiO_3$$
सिलिका डाइऑक्साइड फेरस ऑक्साइड आयरन सिलिकेट

क्षारीय गालक– जब भर्जित अयस्क में अम्लीय अशुद्धियाँ होती हैं, तो क्षारीय गालक प्रयुक्त करते हैं। मैग्नीशियम कार्बोनेट ($MgCO_3$) तथा कैल्सियम कार्बोनेट ($CaCO_3$) प्रमुख क्षारीय गालक हैं।

$$MgCO_3 + SiO_2 \longrightarrow MgSiO_3 + CO_2$$
मैग्नीशियम कार्बोनेट सिलिका डाइऑक्साइड मैग्नीशियम सिलिकेट कार्बन डाइ ऑक्साइड

$$CaCO_3 + SiO_2 \longrightarrow CaSiO_3 + CO_2$$
कैल्सियम कार्बोनेट सिलिका डाइ ऑक्साइड कैल्सियम सिलिकेट कार्बन डाइ ऑक्साइड

(e) अपचयन– अयस्क से धातु प्राप्त करने हेतु उसका अपचयन कराया जाता है। अपचयन प्राय: निम्नलिखित किसी एक विधि द्वारा कराया जाता है–

कोक द्वारा– यह क्रिया प्रगलन के दौरान संपन्न हो जाती है। ऑक्साइड अयस्क का अपचयन मुख्यत: इस विधि द्वारा कराया जाता है।

ऐलुमिनियम द्वारा अपचयन– यह प्रक्रम गोल्डस्मिट ऐलुमिनोथर्मिक प्रक्रम कहलाता है। यह प्रक्रम उन धातुओं पर लागू किया जाता है, जिनके गलनांक

अत्यंत उच्च होते हैं तथा जिन्हें इनके ऑक्साइडों से निष्कर्षित करना होता है। इनका कोक द्वारा अपचयन संभव नहीं होता है। इस विधि में सांद्रित अयस्क तथा ऐलुमिनियम चूर्ण मिश्रण को एक स्टील की क्रूसिबल में लेकर रेत की सतह पर रख दिया जाता है।

विद्युत अपघटन द्वारा अपचयन– यह प्रक्रम क्षारीय धातुओं, क्षारीय मृदा धातुओं, ऐलुमिनियम आदि अधिक क्रियाशील धातुओं के लिए प्रयुक्त किया जाता है। ये धातुएँ गलित अवस्था में अपने ऑक्साइडों, हाइड्रॉक्साइडों या क्लोराइडों के विद्युत अपघटन द्वारा निष्कर्षित की जा सकती हैं। सोडियम धातु का निष्कर्षण NaCl तथा $CaCl_2$ के गलित मिश्रण के विद्युत अपघटन से गलित सोडियम हाइड्रॉक्साइड के विद्युत अपघटन से किया जा सकता है। क्रायोलाइट में मिश्रित ऐलुमिना के विद्युत अपघटन से ऐलुमिनियम प्राप्त किया जा सकता है।

अमलगम विधि– इस प्रक्रम द्वारा उत्कृष्ट धातुएँ; **उदाहरणार्थ**— सोना, चाँदी आदि निष्कर्षित की जाती हैं। महीन पिसे हुए अयस्क को मर्करी के संपर्क में लाने से उसमें उपस्थित धातु मर्करी से क्रिया करके धातु अमलगम बनाती है। धातु अमलगम का आसवन करने से मुक्त धातु प्राप्त होती है।

$$\text{अयस्क} + \text{मर्करी} \longrightarrow \text{अमलगम} \xrightarrow{\text{आसवन}} \text{Hg वाष्प} + \text{धातु}$$

प्रश्न 11. कॉपर पाइराइट से ताँबे का निष्कर्षण करने की विधि को मुख्य पदों की समीकरणों सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– कॉपर पायराइट कॉपर का प्रमुख अयस्क है। कॉपर पायराइट तथा कॉपर ग्लांस, सल्फाइड अयस्क हैं। क्यूप्राइट, ऑक्साइड अयस्क है। मैलेकाइट तथा एजुराइट कार्बोनेट अयस्क हैं।

प्राप्ति स्थान– ताँबा मुक्त अवस्था में अमेरिका, स्वीडन तथा यूराल पर्वतों में पाया जाता है। भारतवर्ष में ताँबा संयुक्त अवस्था में ऑक्साइड, सल्फाइड तथा कार्बोनेट अयस्कों के रूप में पाया जाता है। सिंहभूमि (बिहार), राजस्थान तथा आंध्र प्रदेश में यह मुख्य रूप से पाया जाता है।

(i) अयस्क का सांद्रण– बारीक पिसे हुए सल्फाइड अयस्क का सांद्रण झाग प्लवन विधि द्वारा किया जाता है। इस विधि में पिसे हुए अयस्क को पानी से भरे हुए टैंक में डाल दिया जाता है। टैंक में थोड़ी मात्रा में चीड़ का तेल और सोडियम एथिल जैंथेट मिलाकर वायु की तेज धारा प्रवाहित करते हैं। वायु की तेज धारा के कारण मिश्रण में झाग उत्पन्न हो जाते हैं। सल्फाइड अयस्क झाग के साथ द्रव की सतह के ऊपर एकत्रित हो जाता है। अयस्क में उपस्थित जल में अविलेय अशुद्धियाँ टैंक की पेंदी पर बैठ जाती हैं। सांद्रित अयस्क को एकत्रित करके सुखाकर पीस लिया जाता है। इस विधि में 0.6% तक कॉपर का अयस्क सांद्रित किया जा सकता है।

(ii) भर्जन क्रिया – सांद्रित अयस्क का एक परावर्तनी भट्‌टी में उसके गलनांक के नीचे वायु की नियंत्रित मात्रा में भर्जन किया जाता है। भर्जन क्रिया में अयस्क में निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं—

अयस्क में उपस्थित मुक्त सल्फर SO_2 में ऑक्सीकृत होकर बाहर निकल जाती है।

$$\underset{\text{सल्फर}}{S} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{O_2} \longrightarrow \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{SO_2 \uparrow}$$

ऑर्सेनिक तथा ऐंटिमनी की अशुद्धि वाष्पशील ऑक्साइडों के रूप में बाहर निकल जाती है।

$$\underset{\text{आर्सेनिक}}{4As} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{3O_2} \longrightarrow \underset{\text{आर्सेनिक ट्राइ ऑक्साइड}}{2As_2O_3}$$

कॉपर पाइराइट, क्यूप्रस सल्फाइड और फेरस सल्फाइड में बदल जाता है।

$$\underset{\text{कॉपर पाइराइट}}{2CuFeS_2} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{O_2} \longrightarrow \underset{\text{क्यूप्रस सल्फाइड}}{Cu_2S} + \underset{\text{फेरस सल्फाइड}}{2FeS} + \underset{\text{सल्फर डाइ ऑक्साइड}}{SO_2\uparrow}$$

अधिकांश फेरस सल्फाइड फेरस ऑक्साइड में बदल जाता है।

$$\underset{\text{फेरस सल्फाइड}}{2FeS} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{3O_2} \longrightarrow \underset{\text{फेरस ऑक्साइड}}{2FeO} + \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{2SO_2\uparrow}$$

क्यूप्रस सल्फाइड आंशिक रूप से क्यूप्रस ऑक्साइड में बदल जाती है।

$$\underset{\text{क्यूप्रस सल्फाइड}}{2Cu_2S} + \underset{\text{ऑक्सीजन}}{3O_2} \longrightarrow \underset{\text{क्यूप्रस ऑक्साइड}}{2Cu_2O} + \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{2SO_2\uparrow}$$

(iii) भर्जित अयस्क का प्रगलन– कॉपर पायराइट के भर्जित अयस्क को रेत तथा कोक में मिलाकर ऊँचे ताप पर वात्या भट्टी में पिघलाया जाता है। रेत में SiO_2 अधिकता में तथा कोक में कार्बन (C) होता है। इस क्रिया को भर्जित अयस्क का प्रगलन कहते हैं। कॉपर पायराइट के भर्जित अयस्क के प्रगलन के फलस्वरूप उसमें उपस्थित Cu_2O तथा FeS निम्नलिखित प्रकार से अभिक्रिया करते हैं–

$$Cu_2O + FeS \longrightarrow Cu_2S + FeO$$

इस प्रकार प्राप्त FeO, प्रयुक्त गालक (SiO_2) के साथ अभिक्रिया करके आयरन सिलिकेट बनाता है जो धातुमल (Slag) कहलाता है–

$$FeO + SiO_2 \longrightarrow \underset{\text{आयरन सिलिकेट (धातुमल)}}{FeSiO_3}$$

धातुमल हल्का होने के कारण भट्टी के ऊपरी तल पर इकट्ठा हो जाता है, जिसे बहाकर अलग कर लिया जाता है। भट्टी के पेंदे पर फेरस सल्फाइड तथा क्यूप्रस सल्फाइड का मिश्रण जमा हो जाता है जिसे मैट कहते हैं।

(iv) बेसेमरीकरण या बेसेमराइजेशन– बेसेमर परिवर्तक इस्पात का बना एक विशेष आकृति का पात्र होता है। इसकी दीवारें अग्निसह ईंटों की बनी होती हैं तथा दीवारों का अस्तर मैग्नीशिया (MgO) तथा चूने (CaO) का या सिलिका (SiO_2) का बना होता है। इसके ऊपर के भाग

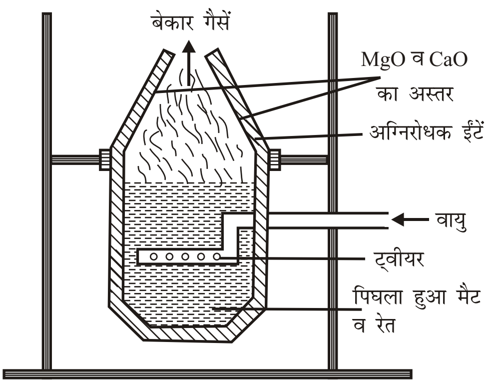

में बेकार गैस निकलने के लिए एक निकास द्वार होता है। इसके नीचे के भाग में ट्वीयर लगे होते हैं जिनके द्वारा गर्म हवा के प्रबल झोंके लगातार लगाए जाते हैं। बेसेमर परिवर्तक एक स्टैंड पर इस प्रकार लगाया जाता है कि यह ऊपर और नीचे घुमाया जा सकता है।

मैट से कॉपर प्राप्त करने के लिए बेसेमर परिवर्तक का प्रयोग किया जाता है। इस क्रिया को मैट का **बेसेमरीकरण या बेसेमराइजेशन** कहते हैं। मैट के बेसेमरीकरण में प्रयुक्त बेसेमर परिवर्तक का अस्तर मैग्नीशिया तथा चूने का बना होता है

पिघले हुए मैट में बालू मिलाकर उसे बेसेमर परिवर्तक में भर देते हैं। ट्वीयर द्वारा वायु का झोंका लगाने पर निम्नलिखित रासायनिक अभिक्रियाएँ होती हैं—

(a) मैट में उपस्थित फेरस सल्फाइड फेरस ऑक्साइड में परिवर्तित हो जाता है।

$$2FeS + 3O_2 \longrightarrow 2FeO + 2SO_2\uparrow$$

(b) FeO, सिलिका से संयोग करके आयरन सिलिकेट बनाता है जो धातुमल कहलाता है। यह हल्का होने के कारण ऊपर आ जाता है।

$$FeO + SiO_2 \longrightarrow \underset{\text{आयरन सिलिकेट (धातुमल)}}{FeSiO_3}$$

(c) SiO_2 की अधिक मात्रा चूने से अभिक्रिया करती है।

$$SiO_2 + CaO \longrightarrow \underset{\text{कैल्सियम सिलिकेट (धातुमल)}}{CaSiO_3}$$

(d) क्यूप्रस सल्फाइड का कुछ भाग क्यूप्रस ऑक्साइड में बदल जाता है। यह पुन: क्यूप्रस सल्फाइड से क्रिया करके फफोलेदार ताँबा बनाता है।

$$2Cu_2S + 3O_2 \longrightarrow 2Cu_2O + 2SO_2\uparrow$$

$$2Cu_2O + Cu_2S \longrightarrow \underset{\text{फफोलेदार ताँबा}}{6Cu} + SO_2\uparrow$$

(v) फफोलेदार ताँबे का शोधन– मैट से बेसेमरीकरण द्वारा प्राप्त फफोलेदार ताँबे की शुद्धता लगभग 98% होती है। इसमें लगभग 2% अशुद्धियाँ होती हैं। इससे अधिक शुद्धता वाला ताँबा प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित दो विधियाँ हैं—

(a) हरी लकड़ियों की बल्लियों से शोधन,

(b) विद्युत अपघटन से शोधन।

(a) हरी लकड़ियों की बल्लियों से शोधन– फफोलेदार कॉपर को सिलिका का अस्तर लगी हुई परावर्तनी भट्टी में पिघलाकर वायु की धारा प्रवाहित की जाती है। सल्फर का SO_2 में तथा आर्सेनिक का वाष्पशील आर्सेनिक ऑक्साइड में ऑक्सीकरण हो जाता है। लोहा तथा कुछ अन्य धातु ऑक्साइडों में बदल जाते हैं और सिलिका के साथ संयुक्त होकर धातुमल के रूप में बाहर निकाल दिए जाते हैं। इस प्रकार से शोधित धातु में क्यूप्रस ऑक्साइड की अशुद्धि रहती है। इसको दूर करने के लिए पिघली हुई धातु को हरी लकड़ी की बल्लियों से अच्छी तरह से हिलाया जाता है। इस क्रिया को पोलिंग कहा जाता है। हरी बल्लियों से प्राप्त हाइड्रोकार्बन बुलबुलों के रूप में तेजी से निकलते हैं जो क्यूप्रस ऑक्साइड को कॉपर में अपचयित कर देते हैं। इस प्रकार से प्राप्त कॉपर 99.5% शुद्ध होता है और इसको टफ पिच कॉपर भी कहते हैं।

(b) विद्युत अपघटन विधि द्वारा– अत्यंत शुद्ध कॉपर प्राप्त करने के लिए पोलिंग विधि द्वारा प्राप्त कॉपर को विद्युत अपघटनी विधि के द्वारा शुद्ध किया जाता है। इस विधि में पोलिंग विधि द्वारा प्राप्त अशुद्ध ताँबें की प्लेटें ऐनोड का कार्य करती हैं और कैथोड शुद्ध कॉपर की प्लेटें होती है। विद्युत अपघट्य कॉपर सल्फेट का अम्लीय विलयन होता है। विद्युत धारा प्रवाहित करने पर शुद्ध

कॉपर कैथोड पर जमा हो जाता है। ऐनोड के नीचे कुछ अशुद्धियाँ, जिनमें सिल्वर, गोल्ड आदि धातुएँ जमा हो जाती हैं इन्हें ऐनोड मड कहते हैं। शेष अशुद्धियाँ घोल में सल्फेट के रूप में आ जाती है; **उदाहरणार्थ**— निकिल, आयरन, जिंक आदि। विद्युत अपघटन में 1.3 वोल्ट का विभवांतर प्रयोग किया जाता है। इस विधि के द्वारा शोधित कॉपर 99.96-99.99% तक शुद्ध होता है।

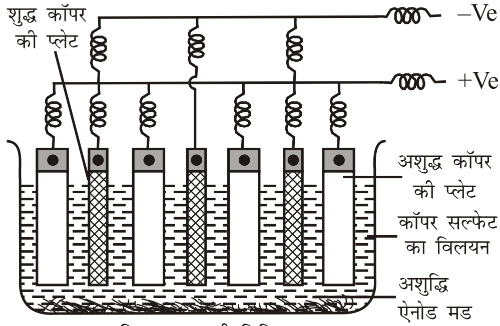

विद्युत उपघटनी विधि

प्रश्न 12. धातुओं के निष्कर्षण में प्रयुक्त होने वाली प्रमुख भट्टियों का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- **भट्टियाँ-** धातुओं के निष्कर्षण में विभिन्न प्रकार की भट्टियाँ प्रयुक्त होती हैं। इन भट्टियों की अपनी अलग-अलग विशेषताएँ होती हैं। इनमें से प्रमुख भट्टियों की विशेषताएँ एवं कार्य विधियाँ निम्न प्रकार हैं—

(i) परावर्तनी भट्टी- परावर्तनी भट्टी अग्निसह की ईंटों की दीवारों की बनी होती है। इस भट्टी के तीन भाग होते हैं—

(a) अग्नि स्थान- यहाँ ईंधन को जलाकर ऊष्मा उत्पन्न की जाती है।

(b) भट्टी का तल- इसे चूल्हा (hearth) भी कहते हैं। यहाँ पर गर्म किए जाना वाला पदार्थ अर्थात् घान (चार्ज) या महीन पीसा हुआ अयस्क रखा जाता है।

(c) चिमनी- यहाँ से व्यर्थ गैसें बाहर निकलती हैं।

इस भट्टी में अयस्क और ईंधन को परस्पर मिलाकर गर्म नहीं किया जाता। इस भट्टी में आग की लपटें भट्टी की छत से परावर्तित होकर चूल्हे पर रखे घान पर आती हैं, उसी से घान गर्म होता है, इसीलिए इसे परावर्तनी भट्टी कहते हैं। चूँकि परावर्तनी भट्टी में ईंधन और घान का सीधे संपर्क नहीं होता, इसलिए इस भट्टी का उपयोग अपचयन और ऑक्सीकरण

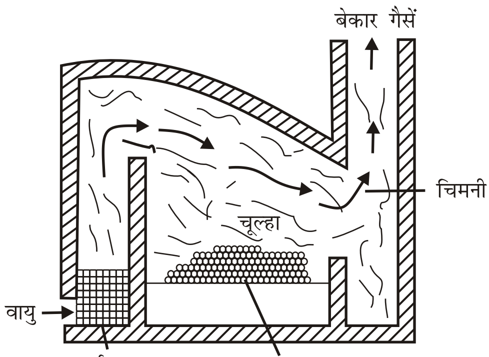

परावर्तनी भट्टी

दोनों ही प्रकार की क्रियाओं के लिए किया जाता है। इस भट्टी में प्रगलन व अन्य प्रक्रियाएँ भी कराई जाती हैं।

(ii) वात्या भट्टी – एक सामान्य वात्या भट्टी चिमनी की भाँति लगभग 25 से 26 मीटर तक ऊँची तथा 6 से 8 मीटर व्यास की होती है। इस भट्टी का बाहरी भाग इस्पात की चादरों का बना होता है, जबकि अंदर की दीवारों में अग्निरोधक ईंटों की परत लगी होती है। इस भट्टी के तीन मुख्य भाग होते हैं—

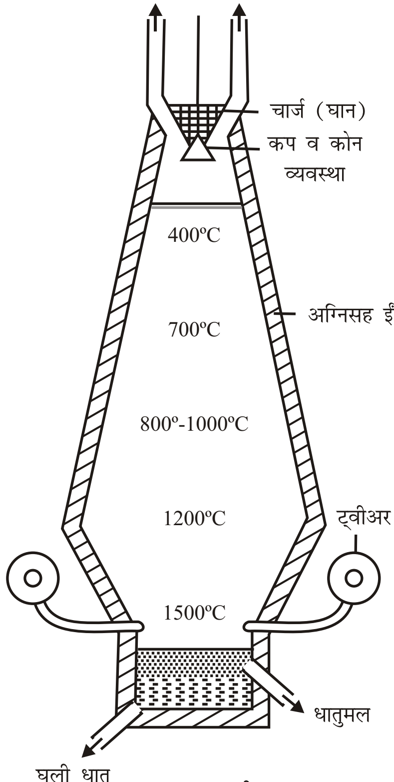

वात्या भट्टी

(a) हॉपर जिसके द्वारा घान (चार्ज) भट्टी में डाला जाता है। हॉपर में कप और कोन व्यवस्था लगी होती है।

(b) भट्टी की बॉडी और बॉश जो दो कोनों से बना होता है। ऊपर के लंबे कोन को **बॉडी** और निचले छोटे कोन को **बॉश** कहते हैं। बॉडी और बॉश स्टील की प्लेटों के बने होते हैं, जिनके अंदर अग्निसह ईंटों का अस्तर लगा रहता है। बॉडी के ऊपरी सिरे में गर्म गैसों (अपशिष्ट गैसों) के निकलने का द्वार होता है तथा बॉश के निचले हिस्से में ट्वीअर लगे होते हैं जिनके द्वारा गर्म वायु भट्टी के अंदर झोंकी जाती है।

(c) चूल्हा, जिसमें गलित पदार्थ एकत्रित होता है। यह भट्टी के सबसे निचले भाग में होता है। इसमें दो द्वार होते हैं। ऊपरी द्वार से धातुमल और निचले द्वार से गलित धातु को बाहर निकाला जाता है।

इस भट्टी में अयस्क और कोक मिलाकर गर्म करते हैं। प्राय: इस भट्टी का प्रयोग अपचयन हेतु करते हैं; क्योंकि ईंधन में जलने से प्राप्त कार्बन मोनोक्साइड अयस्क का अपचयन कर देती है। लोहे के प्रगलन में इस भट्टी का प्रयोग करते हैं।

(iii) मफल भट्टी– इस भट्टी में गर्म किया जाने वाला पदार्थ ईंधन या ज्वाला या गर्म गैसों या ईंटों के सीधे संपर्क में नहीं आता है। यह उच्च ताप सहईंटों के बने हुए एक कक्ष में रहता है, जिसे मफल कहते हैं। मफल ईंधन की ज्वाला तथा गर्म गैसों द्वारा गर्म होता है। इस भट्टी का उपयोग प्राय: जिंक के निष्कर्षण में होता है।

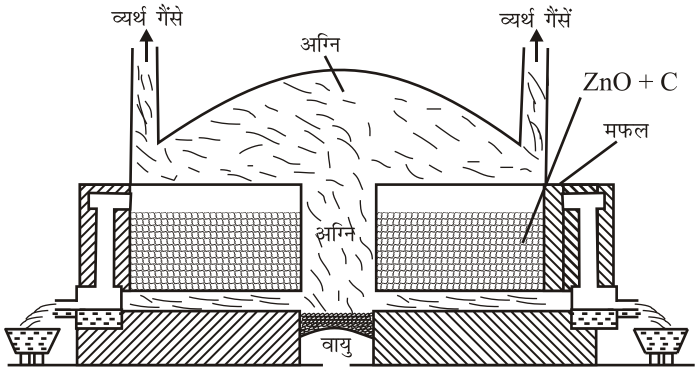

मफल भट्टी

(iv) बेसेमर परिवर्तक– यह इस्पात की चादरों का नाशपाती के आकार का बना होता है। इसके भीतर अग्निसह ईंटों तथा लाइम या मैग्नेसाइट (बेसिक पदार्थ) का अस्तर लगा रहता है। इसकी बगल में, काफी ऊँचाई पर ट्वीअर लगा रहता है जिसके द्वारा वायु का झोंका परिवर्तक में भेजा जाता है। परिवर्तक एक स्टैंड पर लगा रहता है और इसको स्टैंड पर ऊपर-नीचे घुमाया जा सकता है। बेकार गैसें ऊपर से बाहर निकल जाती हैं। इसमें पिघला हुआ अयस्क या धातु लेकर वायु प्रवाहित करते हैं। अशुद्धियों के ऑक्सीकरण से पर्याप्त गर्मी पैदा होती है, अत: बाहर से गर्मी नहीं दी जाती।

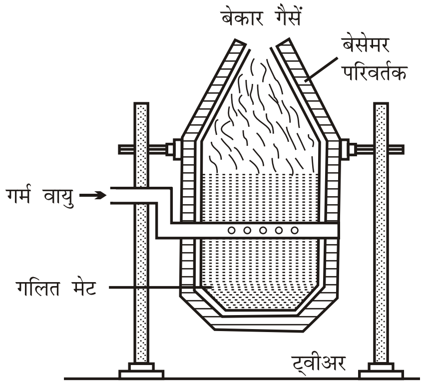

बेसेमर परिवर्तक

(v) विद्युत भट्टी– परावर्तनी भट्टी, मफल भट्टी, खुले चूल्हे की पुनर्योजी भट्टी, वात्या भट्टी आदि में ईंधन की आवश्यकता होती है। यह भी देखा गया है कि उपर्युक्त भट्टियों में अधिक से अधिक ताप 1800°C तक प्राप्त किया जा सकता है। इससे अधिक ताप तक गर्म करने के लिए विद्युत भट्टियों का प्रयोग करते हैं। इनका उपयोग वहीं किया जा सकता है, जहाँ विद्युत अधिक सस्ती होती है। इस प्रकार की भट्टियों में 3000°C से 4000°C तक का ताप प्राप्त किया जा सकता है। विद्युत भट्टी तीन प्रकार की होती है– (a) आर्क भट्टी, (b) प्रतिरोधक भट्टी, तथा (c) प्रेरण भट्टी।

(a) आर्क भट्टी– इस भट्टी में धातु को चूल्हे में रखकर दो कार्बन इलेक्ट्रॉडों की सहायता से विद्युत प्रवाहित करते हैं। ऐसा करने पर विद्युत आर्क बनने लगता है, जिसके कारण भट्टी का ताप लगभग 3000°C से लेकर 3500°C तक पहुँच जाता है तथा जो धातुएँ उच्च ताप पर पिघलती हैं, वे इस ताप पर सरलतापूर्वक पिघल जाती हैं। पिघले हुए द्रव को बगल वाले द्वार से निकाल लेते हैं। भट्टी के चूल्हे में क्षारकीय अस्तर जो चूने तथा मैग्नीशिया के मिश्रण ($CaO + MgO$) का होता है, लगा होता है।

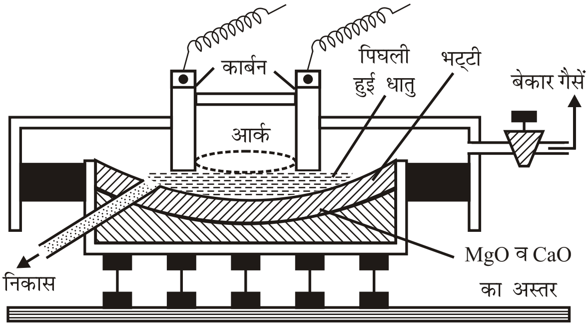

आर्क भट्टी

(b) प्रतिरोधक भट्टी– प्रतिरोधक भट्टी में जब विद्युत धारा को प्रवाहित करते हैं, तब प्रतिरोध होने के कारण विद्युतीय ऊर्जा, ऊष्मा में बदल जाती है। इस प्रकार प्रतिरोध के फलस्वरूप अत्यधिक उच्च ताप ((3000°C से 4000°C) प्राप्त हो जाता है। इस ताप को धातुओं को पिघलाने के काम में लाते हैं। प्रतिरोधक भट्टियाँ दो प्रकार की होती हैं।

- ❖ **प्रत्यक्ष प्रतिरोधक भट्टी–** इस प्रकार की भट्टी में घान (चार्ज) विद्युत परिपथ का एक अंग होता है।
- ❖ **अप्रत्यक्ष प्रतिरोधक भट्टी–** इस प्रकार की भट्टी में घान के ऊपर प्रतिरोधक तारों को लपेटकर, विद्युत प्रवाहित की जाती है। ऐसा करने पर भट्टी गर्म हो जाती है तथा घान को उच्च ताप पर पिघला देती हैं।

(c) प्रेरण भट्टी – इस प्रकार की भट्टियों में, जिस क्रुसिबल में घान रखा जाता है, वह द्वितीयक कुंडली के समान कार्य करती है। प्राथमिक परिपथ के बनने व बिगड़ने के कारण प्रेरण धाराएँ बहने लगती हैं, जिससे घान (चार्ज) गर्म हो जाता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. ऐसी धातु का उदाहरण दीजिए, जो–

(a) कमरे के ताप पर द्रव होती है।

(b) चाकू से आसानी से काटी जा सकती है।

(c) ऊष्मा की सबसे अच्छी चालक होती है।

(d) ऊष्मा की कुचालक होती है।

उत्तर– (a) पारा (b) सोडियम (c) चाँदी (d) लैड

प्रश्न 2. निम्नलिखित को धातु या अधातु में वर्गीकृत कीजिए–

(a) सोडियम (b) जस्ता (c) हाइड्रोजन (d) सीसा

	(e) ऑक्सीजन	(f) गंधक	(g) ताँबा	(h) फॉस्फोरस
उत्तर-	(a) धातु	(b) धातु	(c) अधातु	(d) धातु
	(e) अधातु	(f) अधातु	(g) धातु	(h) अधातु

प्रश्न 3. अधातुओं के भौतिक गुण लिखिए।

उत्तर- अधातुओं के भौतिक गुण- अधातुओं के प्रमुख भौतिक गुण निम्नलिखित हैं—

(i) अधातुएँ आघातवर्धनीय तथा तन्य नहीं होती हैं, ये भंगुर होती हैं।

(ii) डायमंड को छोड़कर अधातुओं के गलनांक तथा क्वथनांक अपेक्षाकृत कम होते हैं।

(iii) अधातुएँ प्रबल नहीं होती हैं, ये सरलता से टूट जाती हैं।

(iv) अधातुएँ ऊष्मा तथा विद्युत का चालन नहीं करती हैं।

(v) अधातुएँ अध्वनिक होती हैं अर्थात् किसी अन्य वस्तु से टकराने पर ये ध्वनि उत्पन्न नहीं करती हैं।

(vi) अधातुओं के रंग भिन्न-भिन्न होते हैं।

(vii) साधारण ताप पर अधातुएँ ठोस, द्रव अथवा गैस हो सकती हैं।

(viii) अधातुओं के घनत्व कम होते हैं अर्थात् अधातुएँ हल्के पदार्थ हैं।

(ix) अधातुएँ सामान्यतया मृदु होती हैं।

(x) अधातुएँ चमकदार नहीं होती हैं, ये मलिन होती हैं।

प्रश्न 4. इन अभिक्रिया के समीकरण लिखिए-

(a) भाप के साथ आयरन (b) जल के साथ कैल्सियम तथा पौटैशियम

उत्तर- (a) भाप के साथ आयरन

$$\underset{\text{आयरन}}{3Fe} + \underset{\text{भाप}}{4H_2O} \longrightarrow \underset{\text{आयरन (II, III) हाइड्रॉक्साइड}}{Fe_3O_4} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{4H_2 \uparrow}$$

(b) जल के साथ कैल्सियम तथा पौटैशियम

$$\underset{\text{कैल्सियम}}{Ca} + \underset{\text{जल (ठंडा)}}{2H_2O} \longrightarrow \underset{\text{कैल्सियम हाइड्रॉक्साइड}}{Ca(OH)_2} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2 \uparrow}$$

$$\underset{\text{पौटैशियम}}{2K} + \underset{\text{जल (ठंडा)}}{2H_2O} \longrightarrow \underset{\text{पौटेशियम हाइड्रॉक्साइड}}{2KOH} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2 \uparrow}$$

प्रश्न 5. अभिक्रियाशील धातु को तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में डाला जाता है तो कौन-सी गैस निकलती है? आयरन के साथ तनु H_2SO_4 की रासायनिक अभिक्रिया लिखिए।

उत्तर- अभिक्रियाशील धातु को तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में डालने पर हाइड्रोजन (H_2) गैस निकलती है।

सोडियम एक अभिक्रियाशील धातु है। इसकी तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से क्रिया कराने पर सोडियम लवण बनता है तथा हाइड्रोजन गैस निकलती है—

$$\underset{\text{सोडियम}}{2Na} + \underset{\text{हाइड्रोक्लोरिक अम्ल}}{2HCl} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम क्लोराइड (लवण)}}{2NaCl} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2 \uparrow}$$

आयरन (Fe) के साथ तनु H_2SO_4 की रासायनिक अभिक्रिया- आयरन के साथ तनु H_2SO_4 की क्रिया कराने पर फेरस सल्फेट बनता है तथा हाइड्रोजन गैस निकलती है—

$$\underset{\text{आयरन}}{Fe} + \underset{\text{सलफ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{फेरस सल्फेट}}{FeSO_4} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2 \uparrow}$$

प्रश्न 6. जिंक को आयरन (II) सल्फेट के विलयन में डालने से क्या होता है? इसकी रासायनिक अभिक्रिया लिखिए।

उत्तर– जब जिंक को आयरन (II) सल्फेट के विलयन में डाला जाता है तो जिंक सल्फेट (लवण) बनता है तथा आयरन (Fe) का विस्थापन हो जाता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जिंक (Zn), आयरन (Fe) की अपेक्षा अधिक सक्रिय धातु है। अत: जब किसी ज्यादा सक्रिय धातु को कम सक्रिय धातु के लवण विलयन में डाला जाता है, तो अधिक सक्रिय धातु कम सक्रिय धातु का स्थान लेकर अपना लवण विलयन बना लेती है तथा कम सक्रिय धातु को उसके लवण से विस्थापित कर देती है।

$$\underset{\text{जिंक}}{Zn} + \underset{\text{आयरन सल्फेट}}{FeSO_4} \longrightarrow \underset{\text{जिंक सल्फेट}}{ZnSO_4} + \underset{\text{आयरन}}{Fe}$$

प्रश्न 7. कारण सहित स्पष्ट कीजिए कि निम्नलिखित रासायनिक अभिक्रिया संभव है या नहीं–

$$\mathbf{Hg + H_2SO_4 \longrightarrow HgSO_4 + H_2}$$

$$\mathbf{Cu + 2AgNO_3 \longrightarrow Cu(NO_3)_2 + 2Ag}$$

उत्तर– इसके लिए 'दीर्घ उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न-7 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 8. उभयधर्मी ऑक्साइड क्या होते हैं? दो उभयधर्मी ऑक्साइडों के उदाहरण दीजिए।

उत्तर– **उभयधर्मी ऑक्साइड–** वे धातु ऑक्साइड जो अम्ल तथा क्षारक दोनों से अभिक्रिया करके लवण तथा जल प्रदान करते हैं, उभयधर्मी ऑक्साइड कहलाते हैं; जैसे—ऐलुमिनियम ऑक्साइड (Al_2O_3) तथा जिंक ऑक्साइड (ZnO)।

प्रश्न 9. दो धातुओं के नाम बताइए, जो तनु अम्ल से हाइड्रोजन को विस्थापित कर देंगी तथा दो धातुएँ, जो ऐसा नहीं कर सकती हैं।

उत्तर– सोडियम (Na) तथा जिंक (Zn) तनु अम्लों से हाइड्रोजन विस्थापित कर सकती हैं, जबकि कॉपर (Cu) तथा मर्करी (Hg) धातुएँ ऐसा नहीं कर सकती हैं।

प्रश्न 10. कॉपर के प्रमुख अयस्कों के नाम तथा सूत्र लिखिए।

उत्तर– **कॉपर के प्रमुख अयस्क–**

(i) कॉपर पायराइट या चैल्कोपायराइट— $CuFeS_2$ या $Cu_2S \cdot Fe_2S_3$

(ii) कॉपर ग्लांस या चैल्कोसाइट— Cu_2S

(iii) क्यूप्राइट— Cu_2O

(iv) मैलेकाइट— $CuCO_3 \cdot Cu(OH)_2$

(v) एजुराइट— $(CuCO_3)_2 \cdot Cu(OH)_2$

प्रश्न 11. निम्नलिखित का वर्णन कीजिए–

(a) अयस्क का सांद्रण (b) धातु का शोधन

उत्तर– (a) **अयस्क का सांद्रण–** अयस्क को आधात्री से पृथक् करना, **अयस्क का सांद्रण** कहलाता है। सांद्रण की कई विधियाँ होती हैं जो अयस्क की और उसमें उपस्थित आधात्री की प्रकृति के अनुसार प्रयुक्त होती हैं। सांद्रण की कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(i) गुरुत्वीय पृथक्करण विधि– यह विधि अयस्क और उसमें उपस्थित आधात्री के आपेक्षिक घनत्वों के अंतर पर निर्भर करती है। इस विधि में बारीक पिसे हुए अयस्क को जल की धारा के द्वारा धोया जाता है। हल्का गैंग जल के साथ

बह जाता है और भारी अयस्क शेष रह जाता है। इस विधि द्वारा भारी अयस्कों (**उदाहरणार्थ**— SnO_2, Fe_3O_4) का सांद्रण किया जाता है।

(ii) **फेन (झाग) प्लवन विधि –** यह विधि अयस्क और आधात्री की किसी द्रव से भीगने की प्रवृत्ति पर निर्भर करती है। सल्फाइड अयस्कों का सांद्रण इसी विधि द्वारा किया जाता है। तेल और जल के मिश्रण में सल्फाइड अयस्क को डालने पर सल्फाइड अयस्क मुख्य रूप से तेल द्वारा और अयस्क में उपस्थित आधात्री जल द्वारा भीगती है।

इस विधि में जल से भरे एक टैंक में बारीक पिसे हुए अयस्क को डालकर उसमें थोड़ा (1%) क्रिओसेट तेल अथवा चीड़ का तेल और थोड़ा पोटैशियम एथिल जैंथेट मिलाया जाता है और फिर मिश्रण में वायु की प्रबल धारा प्रवाहित की जाती है। सल्फाइड अयस्क के कण तेल से भीगकर द्रव की सतह पर फेन (झाग) में एकत्रित हो जाते हैं और गैंग जल से भीगकर टैंक के पैंदे में बैठ जाता है। पोटैशियम एथिल जैंथेट सल्फाइड अयस्क के छोटे कणों को अधिशोषित करके उनको वायु के बुलबुलों के साथ फेन में भेज देता है। इस प्रकार सांद्रित अयस्क प्राप्त होता है।

इस विधि द्वारा कॉपर, लेड और जिंक के सल्फाइड अयस्कों का सांद्रण किया जाता है।

(iii) **चुंबकीय पृथक्करण–** यह विधि पदार्थों के चुंबकीय गुणों पर आधारित है। यदि अयस्क चुंबकीय है अथवा उसमें किसी चुंबकीय पदार्थ की अशुद्धि है तो इस विधि द्वारा चुंबकीय और अचुंबकीय पदार्थों का पृथक्करण किया जा सकता है। **उदाहरणार्थ**— टिन के अयस्क टिनस्टोन (SnO_2) में आयरन का मैगनेटिक ऑक्साइड (Fe_3O_4) और आयरन टंगस्टेट मिले रहते हैं। अयस्क को पीसकर एक घूमते हुए पट्टे पर डालते हैं जो चुंबकीय बेलन पर लगी होती है। चुंबकीय पदार्थ चुंबक के समीप एकत्रित हो जाता है और टिनस्टोन अलग हो जाता है।

(b) **धातु का शोधन–** अयस्क में से धातु के निष्कर्षण से प्राप्त धातु प्राय: अशुद्ध होती हैं। इसमें प्राय: कार्बन, सिलिकन, फॉस्फोरस आदि की अशुद्धियाँ सम्मिलित रहती हैं।

किसी भी धातु के शोधन की विधि उसकी प्रकृति एवं उसमें उपस्थित अशुद्धियों की प्रकृति पर निर्भर करती है। अत: इस हेतु विभिन्न प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है। इनमें विद्युत अपघटनी विधि मुख्य होती है। इस विधि से अत्यंत शुद्ध धातु प्राप्त होती है।

(i) **विद्युत अपघटनी विधि –** इस विधि में अशुद्ध धातु का ऐनोड तथा शुद्ध धातु का कैथोड बनाते हैं। उसी धातु के किसी घुलनशील लवण का विलयन विद्युत अपघट्य के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। विद्युत अपघटन करने पर शुद्ध धातु कैथोड पर एकत्र हो जाती है, जबकि अशुद्धियाँ या तो घुल जाती हैं या ऐनोड के नीचे कीचड़ के रूप में गिर जाती हैं। कॉपर, सिल्वर, टिन, लेड, ऐनुमिनियम तथा क्रोमियम आदि धातुएँ इसी विधि से शुद्ध की जाती हैं।

(ii) **द्रवण विधि –** इस विधि में कम गलनांक की धातुओं (**उदाहरण**— टिन) को गलाकर ढालू तल पर बहने दिया जाता है, जिससे अशुद्धियाँ पीछे रह जाती हैं तथा धातु बहकर पृथक् हो जाती है।

(iii) **आसवन विधि–** वाष्पशील धातुओं (**उदाहरण**— Hg, Zn आदि) को आसवन द्वारा शोधित किया जाता है।

(iv) **खर्परण विधि –** इसमें अशुद्ध धातु को वायु की उपस्थिति में गर्म किया जाता है, जिससे धातु में उपस्थित अशुद्धियाँ ऑक्सीकृत होकर वाष्प के रूप में पृथक् हो जाती हैं तथा शुद्ध धातु शेष रह जाती है। खर्परण विधि सिल्वर में उपस्थित लेड को पृथक् करने में प्रयोग की जाती है।

(v) **बेसेमरीकरण –** अशुद्ध धातु को एक भट्टी में गर्म किया जाता है तथा गलित द्रव्यमान पर वायु का तेज झोंका छोड़ा जाता है। अशुद्धियाँ ऑक्सीकृत हो जाती हैं; जैसे— पिंग आयरन को एक परावर्तनी भट्टी में लेकर वायु प्रवाहित करने पर अशुद्धियाँ ऑक्सीकृत हो जाती हैं।

प्रश्न 12. एक उदाहरण देते हुए अयस्क के सांद्रण का फेन उत्पलावन विधि द्वारा सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- **फेन उत्पलावन विधि द्वारा कॉपर के सल्फाइड अयस्क का सांद्रण–** बारीक पिसे हुए कॉपर के सल्फाइड अयस्क का सांद्रण झाग प्लवन विधि द्वारा किया जाता है। इस विधि में पिसे हुए अयस्क को पानी से भरे हुए टैंक में डाल दिया जाता है। टैंक में थोड़ी मात्रा में चीड़ का तेल और सोडियम एथिल जैंथेट मिलाकर वायु की तेज धारा प्रवाहित करते हैं। वायु की तेज धारा के कारण मिश्रण में झाग उत्पन्न हो जाते हैं। सल्फाइड अयस्क झाग के साथ द्रव की सतह के ऊपर एकत्रित हो जाता है। अयस्क में उपस्थित जल में अविलेय अशुद्धियाँ टैंक की पेंदी पर बैठ जाती हैं। सांद्रित अयस्क को एकत्रित करके सुखाकर पीस लिया जाता है। इस विधि से 0.6% तक कॉपर का अयस्क सांद्रित किया जा सकता है।

चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-10 का उत्तर (ii) (b) का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 13. वात्या भट्टी का सचित्र वर्णन कीजिए। फफोलेदार कॉपर का शोधन किस प्रकार किया जाता है?

उत्तर- **वात्या भट्टी–** इस प्रश्न के उत्तर व चित्र के लिए 'दीर्घ उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न 12 के 'वात्या भट्टी' व चित्र 'वात्या भट्टी' का अवलोकन कीजिए।

फफोलेदार कॉपर का शोधन– मैट से बेसेमरीकरण द्वारा प्राप्त फफोलेदार ताँबे की शुद्धता लगभग 98% होती है। इसमें लगभग 2% अशुद्धियाँ होती हैं। इससे अधिक शुद्धता वाला ताँबा प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित दो विधियाँ हैं—

(i) हरी लकड़ियों की बल्लियों से शोधन,

(ii) विद्युत अपघटन से शोधन।

(i) **हरी लकड़ियों की बल्लियों से शोधन–** फफोलेदार कॉपर को सिलिका का अस्तर लगी हुई परावर्तनी भट्टी में पिघलाकर वायु की धारा प्रवाहित की जाती है। सल्फर का SO_2 में तथा आर्सेनिक का वाष्पशील आर्सेनिक ऑक्साइड में ऑक्सीकरण हो जाता है। लोहा तथा कुछ अन्य धातु ऑक्साइडों में बदल जाते हैं और सिलिका के साथ संयुक्त होकर धातुमल के रूप में बाहर निकाल दिए जाते हैं। इस प्रकार से शोधित धातु में क्यूप्रस ऑक्साइड की अशुद्धि रहती है। इसको दूर करने के लिए पिघली हुई धातु को हरी लकड़ी की बल्लियों से अच्छी तरह से हिलाया जाता है। इस क्रिया को पोलिंग कहा जाता है। हरी बल्लियों से प्राप्त हाइड्रोकार्बन बुलबुलों के रूप में तेजी से निकलते हैं जो क्यूप्रस ऑक्साइड को कॉपर में अपचयित कर देते हैं। इस प्रकार से प्राप्त कॉपर 99.5% शुद्ध होता है और इसको टफ पिच कॉपर भी कहते हैं।

(ii) **विद्युत अपघटन विधि द्वारा–** अत्यंत शुद्ध कॉपर प्राप्त करने के लिए पोलिंग विधि द्वारा प्राप्त कॉपर को विद्युत अपघटनी विधि के द्वारा शुद्ध किया जाता है। इस विधि

में पोलिंग विधि द्वारा प्राप्त अशुद्ध ताँबें की प्लेटें ऐनोड का कार्य करती हैं और कैथोड शुद्ध कॉपर की प्लेटें होती है। विद्युत अपघट्य कॉपर सल्फेट का अम्लीय विलयन होता है। विद्युत धारा प्रवाहित करने पर शुद्ध कॉपर कैथोड पर जमा हो जाता है। ऐनोड के नीचे कुछ अशुद्धियाँ, जिनमें सिल्वर, गोल्ड आदि धातुएँ जमा हो जाती हैं इन्हें ऐनोड मड कहते हैं। शेष अशुद्धियाँ घोल में सल्फेट के रूप में आ जाती हैं; **उदाहरणार्थ**— निकिल, आयरन, जिंक आदि। विद्युत अपघटन में 1.3 वोल्ट का विभवांतर प्रयोग किया जाता है। इस विधि के द्वारा शोधित कॉपर 99.96-99.99% तक शुद्ध होता है।

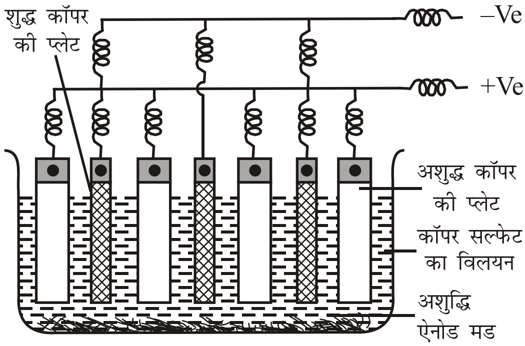

विद्युत अपघटनी विधि

प्रश्न 14. कॉपर के विद्युत अपघटनों शोधन की क्रिया विधि, प्रयुक्त उपकरण का नामांकित चित्र देते हुए वर्णन कीजिए।

उत्तर- **कॉपर के विद्युत अपघटन शोधन की क्रिया विधि–** अधिक शुद्ध कॉपर प्राप्त करने के लिए पोलिंग विधि द्वारा प्राप्त कॉपर को विद्युत अपघटनी विधि के द्वारा शुद्ध किया जाता है। इस विधि में पोलिंग विधि द्वारा प्राप्त अशुद्ध ताँबें की प्लेटें ऐनोड का कार्य करती हैं और कैथोड शुद्ध कॉपर की प्लेटें होती हैं। विद्युत अपघट्य कॉपर सल्फेट का अम्लीय विलयन होता है। विद्युत धारा प्रवाहित करने पर शुद्ध कॉपर कैथोड पर जमा हो जाता है। ऐनोड के नीचे कुछ अशुद्धियाँ, जिनमें सिल्वर, गोल्ड आदि धातुएँ जमा हो जाती हैं इन्हें ऐनोड मड कहते हैं। शेष अशुद्धियाँ घोल में सल्फेट के रूप में आ जाती है; जैसे— निकिल, आयरन, जिंक आदि। विद्युत अपघटन में 1.3 वोल्ट का विभवांतर प्रयोग किया जाता है। इस विधि द्वारा प्राप्त शोधित कॉपर 99.96-99.99% तक शुद्ध होता है।

चित्र के लिए 'दीर्घ उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न–11 का उत्तर (b- विद्युत अपघटन विधि द्वारा) का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 15. खनिज, अयस्क, गालक तथा धातुमल को परिभाषित कीजिए।

उत्तर- **खनिज–** पृथ्वी में धातु तथा उनके यौगिक जिस रूप में प्राप्त होते हैं, खनिज कहलाते हैं।

अयस्क– वह खनिज, जिसमें से किसी धातु को आसानी से तथा अल्प व्यय में अलग किया जाता है, उस धातु का अयस्क कहलाता है।

गालक तथा धातुमल– वे पदार्थ, जो अयस्क में उपस्थित अशुद्धियों के साथ उच्च ताप पर क्रिया करके इन्हें सरलता से गलाकर दूर कर देते हैं, गालक कहलाते हैं। आसानी से गलकर अलग हुए पदार्थों को धातुमल कहते हैं।

प्रश्न 16. भर्जन क्या है?

उत्तर- सांद्रित अयस्क को अकेले या अन्य पदार्थों के साथ मिलकर, गलनांक के नीचे, वायु की नियंत्रित मात्रा में गर्म करने की क्रिया को भर्जन कहते हैं।

प्रश्न 17. अयस्क क्या होते हैं? कॉपर के दो प्रमुख अयस्कों के नाम एवं सूत्र लिखिए।

उत्तर- जिस खनिज से किसी धातु को आसानी से तथा कम व्यय में अलग किया जाता है, उसे उस धातु का अयस्क कहते हैं।

कॉपर के दो प्रमुख अयस्क-

(i) कॉपर पायराइट या चैल्कोपायराइट— $CuFeS_2$ या $Cu_2S \cdot Fe_2S_3$

(ii) क्यूप्राइट— Cu_2O

प्रश्न 18. मिश्रधातु किसे कहते हैं? कॉपर की प्रमुख दो मिश्र धातुओं के नाम, संघटन व उपयोग लिखिए।

उत्तर- **मिश्रधातु-** जब दो या दो से अधिक धातुओं को एक निश्चित अनुपात को मिलाकर पिघलाया जाता है तो ये धातुएँ परस्पर मिल जाती हैं और एक समांग मिश्रण बनाती हैं। यह मिश्रण ही मिश्रधातु कहलाता है।

कॉपर की दो प्रमुख मिश्रधातुएँ-

	मिश्रधातु	संघटन	उपयोग
(i)	पीतल	Cu = 70%, Zn = 30%	तार, मशीनों के पुर्जे, बर्तन बनाने में।
(ii)	काँसा	Cu = 88%, Sn = 12%	बर्तन, मूर्तियाँ बनाने में।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 197 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. किसी धातु की आघातवर्धनीयता, तन्यता तथा चमक का परीक्षण करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. धातुओं की ऊष्मा के प्रति चालकता तथा गलनांक का परीक्षण करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 3. अधातुओं के भौतिक गुणों व रासायनिक गुणों का परीक्षण करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 4. धातुओं के ऑक्साइड बनाने के लिए उनका हवा में जलने का अध्ययन करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 5. धातुओं की जल के साथ सक्रियता का अध्ययन कीजिए।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

13 सल्फर डाइ ऑक्साइड और अमोनिया गैसें

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. शुष्क अमोनिया गैस को प्रयोगशाला में बनाने की विधि का सचित्र वर्णन कीजिए तथा संबंधित रासायनिक अभिक्रिया का समीकरण भी दीजिए।

इसकी निम्नलिखित के साथ होने वाली अभिक्रिया को लिखिए-

(a) Na धातु (b) HCl (c) H_2SO_4 या

अमोनिया गैस बनाने की विधि का रासायनिक समीकरण दीजिए। इसके दो रासायनिक गुण भी लिखिए।

उत्तर- **प्रयोगशाला में शुष्क अमोनिया गैस बनाने की विधि-** प्रयोगशाला में अमोनिया, अमोनियम क्लोराइड (नौसादर) तथा बुझे चूने को गर्म करके बनाई जाती है।

$$\underset{\text{अमोनिया क्लोराइड (नौसादर)}}{2NH_4Cl} + \underset{\text{बूझा चूना}}{Ca(OH)_2} \xrightarrow{\Delta} \underset{\text{अमोनिया}}{2NH_3} + 2H_2O + \underset{\text{कैल्सियम क्लोराइड}}{CaCl_2}$$

उपकरण- गोल पेंदी का फ्लास्क, स्टैंड, बर्नर, बुझा हुआ चूना, नौसादर, गैसजार, निकाल नली आदि।

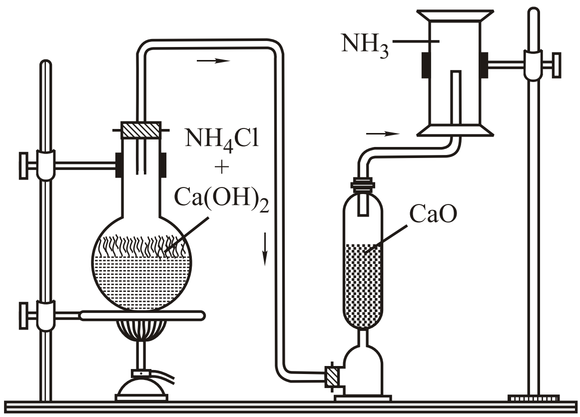

शुष्क अमोनिया बनाना

विधि- एक फ्लास्क में 2:1 के अनुपात में नौसादर और बुझे हुए चूने का मिश्रण लेते हैं। इसमें एक छेद वाला कॉर्क लगा देते हैं। इस कॉर्क में दो बार समकोण पर मुड़ी हुई निकास नली लगा देते हैं। निकास नली का दूसरा सिरा बिना बुझे चूने (CaO) से भरी बोतल के एक सिरे पर लगा देते हैं। बोतल के दूसरे सिरे में कॉर्क लगाकर एक नली देते हैं तथा नली के ऊपर उलटा करके गैसजार रख देते हैं।

फ्लास्क को धीरे-धीरे गर्म करने पर नमीयुक्त अमोनिया गैस निकलती है। नमीयुक्त गैस के बिना बुझे चूने से प्रवाहित होने पर नमी अवशोषित हो जाती है, इस प्रकार शुष्क अमोनिया गैस प्राप्त होती है। इस गैस को वायु के अधोमुखी विस्थापन द्वारा गैसजार में एकत्र कर लेते हैं।

(a) Na धातु के साथ NH_3 की अभिक्रिया- सोडियम धातु से क्रिया करके अमोनिया सोडामाइड बनाती है।

$$\underset{\text{सोडियम}}{2Na} + \underset{\text{अमोनिया}}{2NH_3} \longrightarrow \underset{\text{सोडामाइड}}{2NaNH_2} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2}$$

(b) HCl के साथ NH_3 की अभिक्रिया- HCl के साथ क्रिया करके NH_3, अमोनियम क्लोराइड (लवण) का निर्माण करती है।

$$NH_3 + HCl \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड}}{NH_4Cl}$$

(c) H_2SO_4 के साथ NH_3 की अभिक्रिया- H_2SO_4 के साथ अभिक्रिया करके NH_3, अमोनियम सल्फेट का निर्माण करती है।

$$2NH_3 + H_2SO_4 \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम सल्फेट}}{(NH_4)_2SO_4}$$

प्रश्न 2. अमोनिया के गुण धर्मों का उल्लेख कीजिए तथा यह बताइए कि आप अमोनिया का परीक्षण किस प्रकार करोगे?

उत्तर- अमोनिया के गुण धर्म-

भौतिक गुण-

(i) यह गैस रंगहीन, तीव्र गंध वाली एवं स्वाद में क्षारीय है।

(ii) इसको सूँघने पर आँखों में आँसू आ जाते हैं।

(iii) यह वायु से हल्की है। इसका घनत्व 0.59 होता है।

(iv) यह ठंडा करने पर रंगहीन द्रव में बदल जाती है। द्रव अमोनिया का क्वथनांक $-33.4°$ C तथा हिमांक $-78°$ C होता है।

(v) यह जल में अत्यंत विलेय है। 10° C पर एक भाग जल में 1300 भाग अमोनिया घुल जाती है।

रासायनिक गुण-

(i) ज्वलनशीलता- साधारणतया अमोनिया गैस न तो जलती है और न जलने में सहायता करती है। परंतु ऑक्सीजन के साथ जलने लगती है तथा इससे नाइट्रोजन और जल बनता है।

$$4NH_3 + 3O_2 \longrightarrow 2N_2 + 6H_2O$$

यदि अमोनिया और ऑक्सीजन के मिश्रण को 800°C तक तप्त प्लेटिनम पर प्रवाहित किया जाए, तो नाइट्रिक ऑक्साइड प्राप्त होता है।

$$4NH_3 + 5O_2 \xrightarrow[\text{प्लेटिनम जाली}]{800°C} \underset{\text{नाइट्रिक ऑक्साइड}}{4NO} + 6H_2O$$

(ii) लिटमस से क्रिया- यह गीले लाल लिटमस को नीला कर देती है, अत: इसका जलीय विलयन क्षारकीय होता है।

$$NH_3 + H_2O \longrightarrow \underset{\substack{\text{अमोनियम हाइड्रॉक्साइड} \\ \text{(क्षारकीय विलयन)}}}{NH_4OH}$$

(iii) अम्लों से क्रिया– अम्लों में अमोनिया गैस प्रवाहित करने पर अमोनियम लवण बनते हैं।

$$NH_3 + HCl \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड}}{NH_4Cl}$$

$$NH_3 + HNO_3 \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम नाइट्रेट}}{NH_4NO_3}$$

$$2NH_3 + H_2SO_4 \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम सल्फेट}}{(NH_4)_2SO_4}$$

(iv) विद्युत स्फुलिंग– अमोनिया विद्युत स्फुलिंग के प्रभाव से अपने अवयवों में विभाजित हो जाती है।

$$2NH_3 \xrightleftharpoons{\text{विद्युत स्फुलिंग}} N_2 + 2H_2$$

(v) सोडियम से क्रिया– सोडियम पर अमोनिया प्रवाहित करने पर सोडामाइड तथा हाइड्रोजन गैस प्राप्त होती है।

$$2Na + 2NH_3 \longrightarrow \underset{\text{सोडामाइड}}{2NaNH_2} + H_2$$

(vi) कॉपर ऑक्साइड से क्रिया– रक्त तप्त कॉपर ऑक्साइड पर अमोनिया गैस प्रवाहित करने पर इसका ऑक्सीकरण हो जाता है तथा नाइट्रोजन गैस बनती है।

$$3CuO + 2NH_3 \longrightarrow \underset{\text{कॉपर}}{3Cu} + 3H_2O + \underset{\text{नाइट्रोजन}}{N_2}$$

यह क्रिया अमोनिया के अपचायक गुण को प्रदर्शित करती है।

(vii) क्लोरीन से अभिक्रिया– यदि क्लोरीन की अभिक्रिया अमोनिया के आधिक्य में होती है तो अमोनियम क्लोराइड तथा नाइट्रोजन की प्राप्ति होती है।

$$8NH_3 + 3Cl_2 \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम क्लोराइड}}{6NH_4Cl} + \underset{\text{नाइट्रोजन}}{N_2}$$

परंतु क्लोरीन के आधिक्य में अमोनिया की अभिक्रिया से नाइट्रोजन ट्राइक्लोराइड (NCl_3) नामक एक विस्फोटक पदार्थ बनता है।

$$NH_3 + 3Cl_2 \longrightarrow \underset{\text{नाइट्रोजन ट्राइक्लोराइड}}{NCl_3} + 3HCl$$

(viii) मैग्नीशियम से क्रिया– अमोनिया को मैग्नीशियम के ऊपर उच्च ताप पर प्रवाहित करने से मैग्नीशियम नाइट्राइड और हाइड्रोजन बनती है।

$$3Mg + 2NH_3 \longrightarrow \underset{\text{मैग्नीशियम नाइट्राइड}}{Mg_3N_2} + 3H_2\uparrow$$

(ix) लवणों से क्रिया– अमोनिया कई लवणों से संयोग करके योगात्मक यौगिक बनाती है।

$$CaCl_2 + 6NH_3 \longrightarrow CaCl_2 \cdot 6NH_3$$

$$COCl_2 + 8NH_3 \longrightarrow COCl_2 \cdot 8NH_3$$

इसका जलीय विलयन (NH_4OH) कॉपर, सिल्वर आदि के लवणों के विलयनों से अभिक्रिया करके संकर लवण बनाता है।

$$CuSO_4 + 4NH_4OH \longrightarrow \underset{\substack{\text{टेट्रा ऐमीनो क्युप्रिक सल्फेट} \\ \text{(गाढ़ा नीला रंग)}}}{[Cu(NH_3)_4]SO_4} + 4H_2O$$

$$AgCl + 2NH_4OH \longrightarrow \underset{\text{डाइ एमीन सिल्वर क्लोराइड}}{Ag(NH_3)_2Cl} + 2H_2O$$

अमोनिया का परीक्षण–

अमोनिया गैस का परीक्षण हम निम्न प्रकार कर सकते हैं–

(i) अमोनिया के गैस जार मे हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से भीगी छड़ ले जाने पर यह अमोनियम क्लोराइड का सफेद धुँआ देती है।

(ii) अमोनिया गैस हल्दी-पत्र को भूरा कर देती है।

(iii) कॉपर सल्फेट के विलयन में अमोनिया गैस को प्रवाहित करने पर यह गहरे नीले रंग का हो जाता है।

(iv) अमोनिया गैस गीले लाल लिटमस को नीला कर देती है।

(v) अमोनिया गैस की गंध तीव्र और आँसू लाने वाली होती है।

प्रश्न 3. प्रयोगशाला में SO_2 गैस बनाने की विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। इसके दो ऑक्सीकारक एवं दो अपचायक गुणों के समीकरण लिखिए।

उत्तर– **प्रयोगशाला में SO_2 गैस बनाने की विधि–** प्रयोगशाला में सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस, ताँबे की छीलन को सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ गर्म करके प्राप्त की जाती है।

$$\underset{\text{कॉपर}}{Cu} + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{2H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{कॉपर सल्फेट}}{CuSO_4} + 2H_2O + \underset{\text{सल्फर डाइऑक्साइड}}{SO_2}$$

प्रयोग सामग्री– गोल पेंदी का फ्लास्क, थिसिल कीप, बर्नर, निकास नली, ताँबे की छीलन, सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल आदि।

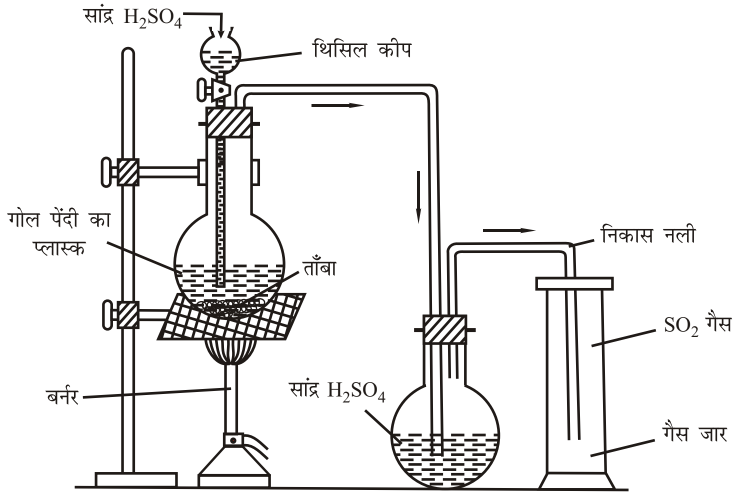

प्रयोगशाला में शुष्क SO_2 गैस बनाना

विधि– एक गोल पेंदी के फ्लास्क में ताँबे की कुछ छीलन लेते हैं। इस फ्लास्क के मुँह पर दो छेद वाली कॉर्क लगाते हैं। एक छेद में थिसिल नली तथा दूसरे छेद में समकोण में मुड़ी हुई निकास नली लगाते हैं। एक अन्य फ्लास्क में सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल लेकर उसमें भी दो छेद वाला कॉर्क लगाते हैं। पहले फ्लास्क में लगी निकास नली का दूसरा सिरा दूसरे फ्लास्क में लगे कॉर्क के पहले छेद में से होकर फ्लास्क में भरे सल्फ्यूरिक अम्ल में डूबा दिया जाता है। कॉर्क के दूसरे छेद में एक अन्य समकोण में मुड़ी निकास नली लगाते हैं। इस निकास नली का दूसरा सिरा गैस जार में लगाया जाता है। अब

थिसिल कीप से इतना सांद्र H_2SO_4 फ्लास्क में डालते हैं कि कीप का निचला सिरा अम्ल में डूब जाए। फ्लास्क को बर्नर की सहायता से गर्म करके सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस बनाई जाती है। अब इसे सांद्र H_2SO_4 से भरे फ्लास्क में पहुँचाया जाता है। वहाँ इसकी नमी को अम्ल द्वारा शोषित कर लिया जाता है तथा इस शुष्क गैस को वायु के ऊर्ध्व विस्थापन द्वारा एकत्र कर लिया जाता है। सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस से गैस जार भरा है या नहीं, इसका पता लगाने के लिए गीले लिटमस पेपर को गैस जार के मुँह पर ले जाते हैं। यदि लिटमस पेपर लाल हो जाता है तो इसका मतलब है कि गैस जार में सल्फर डाइऑक्साइड भरी है।

SO_2 के दो ऑक्सीकारक गुण–

(a) यह हाइड्रोजन सल्फाइड को सल्फर में ऑक्सीकृत कर देती है।

$$2H_2S + SO_2 \longrightarrow 2H_2O + 3S\downarrow$$

(b) यह PbO_2 को $PbSO_4$ में ऑक्सीकृत करती है।

$$PbO_2 + SO_2 \longrightarrow PbSO_4$$

SO_2 के दो अपचायक गुण–

(a) यह जल की उपस्थिति में हैलोजन का अपचयन करके अम्ल बनाती है।

$$SO_2 + 2H_2O + Cl_2 \longrightarrow 2HCl + H_2SO_4$$

(b) यह फेरिक लवण को फेरस लवण में अपचयित करती है।

$$\underset{\text{फेरिक क्लोराइड}}{2FeCl_3} + 2H_2O + SO_2 \longrightarrow \underset{\text{फेरस क्लोराइड}}{2FeCl_2} + 2HCl + H_2SO_4$$

प्रश्न 4. प्रयोगशाला में शुष्क सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस बनाने की विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। इसके दो मुख्य रासायनिक गुण लिखिए। संबंधित अभिक्रियाओं के रासायनिक समीकरण भी दीजिए।

उत्तर– प्रयोगशाला में शुष्क सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस बनाने की विधि–

इसके लिए प्रश्न–3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

SO_2 के दो मुख्य रासायनिक गुण–

(i) ज्वलनशीलता– यह गैस न तो स्वयं जलती है और न ही जलने में सहायता करती है परंतु जलता हुआ मैग्नीशियम अथवा पोटैशियम इसमें जलता रहता है।

$$2Mg + SO_2 \longrightarrow 2MgO + S$$

$$4K + 3SO_2 \longrightarrow K_2SO_3 + K_2S_2O_3$$

(ii) ऊष्मीय अपघटन– सूर्य के प्रकाश में अथवा $1200°\,C$ पर यह सल्फर तथा सल्फर ट्राइ ऑक्साइड में बदल जाती है।

$$3SO_2 \longrightarrow \underset{\text{सल्फर ट्राई ऑक्साइड}}{2SO_3} + S$$

प्रश्न 5. सल्फर डाइ ऑक्साइड की प्रयोगशाला विधि का रासायनिक समीकरण लिखिए। सल्फर डाइ ऑक्साइड की निम्न के साथ रासायनिक अभिक्रियाओं के समीकरण लिखिए–

(a) अम्लीय पोटैशियम डाइक्रोमेट **(b) हाइड्रोजन सल्फाइड**

(c) क्लोरीन

उत्तर– **सल्फर डाइ ऑक्साइड की प्रयोगशाला विधि का रासायनिक समीकरण–**

$$\underset{\text{कॉपर}}{Cu} + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{2H_2SO_4} \xrightarrow[\text{करने पर}]{\text{गर्म}} \underset{\text{कॉपर सल्फेट}}{CuSO_4} + 2H_2O + \underset{\text{सल्फर डाइ ऑक्साइड}}{SO_2}$$

(a) **SO_2 की अम्लीय पोटैशियम डाइक्रोमेट के साथ अभिक्रिया–** SO_2 अम्लीय पोटैशियम डाइक्रोमेट के विलयन का रंग हरा कर देती है।

$$\underset{\text{पोटैशियम डाइक्रोमेट}}{K_2Cr_2O_7} + H_2SO_4 + 3SO_2 \longrightarrow K_2SO_4 + \underset{\text{क्रोमियम सल्फेट}}{Cr_2(SO_4)_3} + H_2O$$

(b) **SO_2 की हाइड्रोजन सल्फाइड के साथ अभिक्रिया–** SO_2,हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) को सल्फर में ऑक्सीकृत कर देती है।

$$2H_2S + SO_2 \longrightarrow 2H_2O + 3S\downarrow$$

(c) **SO_2 की क्लोरीन के साथ अभिक्रिया–** SO_2, सूर्य के प्रकाश में क्लोरीन से संयोग करके सल्फ्यूरिल क्लोराइड बनाती है।

$$SO_2 + Cl_2 \longrightarrow \underset{\text{सल्फ्यूरिल क्लोराइड}}{SO_2Cl_2}$$

प्रश्न 6. प्रयोगशाला में सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस बनाने की विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। संबंधित रासायनिक समीकरण दीजिए। इसकी विरंजक क्रिया को रासायनिक समीकरण द्वारा समझाइए।

उत्तर– **प्रयोगशाला में सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस बनाने की विधि–**

इसके लिए प्रश्न–3 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

SO_2 की विरंजक क्रिया– SO_2 के गैस जार में भीगे हुए रंगीन फूल डालने पर उनका रंग उड़ जाता है। अत: SO_2 रंगीन पदार्थों के रंग उड़ाने में भी प्रयोग की जाती है। इसके द्वारा कोमल पदार्थों; जैसे– रेशम, ऊन आदि का ही रंग उड़ाया जा सकता है। क्योंकि यह निर्बल विरंजक है। SO_2 से विरंजन की हुई वस्तुओं को वायु में रखने पर वायु में उपस्थित ऑक्सीजन से उनका ऑक्सीकरण हो जाता है, जिससे रंगहीन पदार्थ फिर रंगीन हो जाता है। अत: सल्फर डाइ ऑक्साइड की विरंजन अभिक्रिया अस्थाई होती है।

SO_2 जल के साथ अभिक्रिया करके नवजात हाइड्रोजन उत्पन्न करती है–

$$SO_2 + 2H_2O \longrightarrow H_2SO_4 + \underset{\text{नवजात हाइड्रोजन}}{2H}$$

नवजात हाइड्रोजन रंगीन वस्तुओं को अपचयित करके उनका विरंजन कर देती है।

$$\text{रंगीन पदार्थ} + [H] \longrightarrow \text{रंगहीन पदार्थ}$$

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. विरंजक क्रिया क्या होती है? SO_2 गैस की विरंजक क्रिया लिखिए।

उत्तर– **विरंजक क्रिया–** किसी रासायनिक पदार्थ द्वारा रंगीन वस्तु को रंगहीन करने की क्रिया, विरंजक क्रिया कहलाती है।

SO_2 गैस की विरंजक क्रिया– सल्फर डाइऑक्साइड के गैसजार में भीगे हुए रंगीन फूल डालने पर उनका रंग उड़ जाता है। यह रेशम, ऊन आदि से बनी हुई वस्तुओं को विरंजन करने के लिए प्रयोग की जाती है। यह जल के साथ अभिक्रिया कर नवजात हाइड्रोजन उत्पन्न करती है–

$$SO_2 + 2H_2O \longrightarrow H_2SO_4 + \underset{\text{नवजात हाइड्रोजन}}{2H}$$

नवजात हाइड्रोजन रंगीन वस्तुओं को अपचयित करके उनका विरंजन कर देती है।

$$\text{रंगीन पदार्थ} + [H] \longrightarrow \text{रंगहीन पदार्थ}$$

जब इस प्रकार विरंजन की हुई वस्तुओं को वायु में रखा जाता है तब इनका ऑक्सीकरण वायु की ऑक्सीजन से हो जाता है तथा रंगहीन पदार्थ फिर से रंगीन हो जाता है। अत: सल्फर डाइ ऑक्साइड की विरंजन अभिक्रिया अस्थाई होती है।

प्रश्न 2. सल्फर डाइ आक्साइड तथा क्लोरीन के विरंजक गुणों की तुलना कीजिए।

उत्तर– सल्फर डाइ आक्साइड तथा क्लोरीन के विरंजक गुणों की तुलना –

	सल्फर डाइ ऑक्साइड (SO_2)	क्लोरीन (Cl_2)
(i)	SO_2 की विरंजक क्रिया में रंगीन पदार्थ का अपचयन होता है।	क्लोरीन की विरंजक क्रिया में रंगीन पदार्थ का ऑक्सीकरण होता है।
(ii)	SO_2 की विरंजक क्रिया अस्थाई होती है। विरंजित पदार्थ को वायु में रखने पर वह पुन: रंगीन हो जाता है।	क्लोरीन की विरंजक क्रिया स्थाई होती है।
(iii)	यह निर्बल विरंजक है। इसकी सहायता से रेशम, ऊन आदि कोमल पदार्थों का रंग उड़ाया जाता है।	यह प्रबल विरंजक है। इसकी सहायता से लकड़ी, कागज, सूती कपड़ों आदि का रंग उड़ाया जाता है।

प्रश्न 3. अमोनिया गैस बनाने की विधि का रासायनिक समीकरण लिखिए तथा इसके दो रासायनिक गुण लिखिए।

उत्तर– अमोनिया गैस बनाने की विधि का रासायनिक समीकरण–

$$\underset{\text{नौसादर}}{2NH_4Cl} + \underset{\text{बुझा चूना}}{Ca(OH)_2} \xrightarrow{\Delta} \underset{\text{कैल्सियम क्लोराइड}}{CaCl_2} + 2H_2O + \underset{\text{अमोनिया}}{2NH_3}$$

अमोनिया के दो रासायनिक गुण–

(i) लिटमस से क्रिया– अमोनिया गीले लाल लिटमस को नीला कर देती है, अत: इसका जलीय विलयन क्षारकीय होता है।

$$NH_3 + H_2O \longrightarrow \underset{\substack{\text{अमोनियम हाइड्रॉक्साइड} \\ \text{(क्षारकीय विलयन)}}}{NH_4OH}$$

(ii) विद्युत स्फुलिंग– अमोनिया विद्युत स्फुलिंग के प्रभाव से अपने अवयवों में विभाजित हो जाती है।

$$2NH_3 \xrightleftharpoons{\text{विद्युत स्फुलिंग}} N_2 + 3H_2$$

प्रश्न 4. अमोनिया को शुष्क करने में सांद्र H_2SO_4 व फॉस्फोरस पेंटा ऑक्साइड का प्रयोग क्यों नहीं करते हैं? समीकरण भी लिखिए।

उत्तर– अमोनिया को शुष्क करने में सांद्र H_2SO_4 व फॉस्फोरस पेंटा ऑक्साइड का प्रयोग नहीं किया जाता, क्योंकि ये अमोनिया से अभिक्रिया करते हैं।

$$\underset{\text{अमोनिया}}{2NH_3} + \underset{\text{सल्फ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम सल्फेट}}{(NH_4)_2SO_4}$$

$$\underset{\substack{\text{फॉस्फोरस} \\ \text{पेंटा आक्साइड}}}{P_2O_5} + 3H_2O + \underset{\text{अमोनिया}}{6NH_3} \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम फॉस्फेट}}{2(NH_4)_3PO_4}$$

प्रश्न 5. अमोनिया के प्रमुख उपयोग लिखिए।

उत्तर- अमोनिया के प्रमुख उपयोग- अमोनिया गैस के उपयोग निम्नलिखित हैं-

(i) प्रयोगशाला में अमोनिया गैस विलयन अमोनियम हाइड्रॉक्साइड के गुणात्मक विश्लेषण के काम आती है।

(ii) अमोनिया गैस को बर्फ बनाने के कारखानों में प्रयुक्त किया जाता है।

(iii) विस्फोटक पदार्थ बनाने में अमोनिया गैस प्रयुक्त की जाती है।

(iv) अमोनिया गैस का उपयोग कृत्रिम रेशम बनाने में किया जाता है।

(v) अमोनिया गैस अमोनियम लवण बनाने के काम आती है, जिन्हें खाद तथा औषधि के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

(vi) अमोनिया गैस नाइट्रिक अम्ल के निर्माण में प्रयुक्त की जाती है।

(vii) अमोनिया गैस अश्रु गैस बनाने में भी प्रयुक्त की जाती है।

प्रश्न 6. सल्फर डाइ ऑक्साइड के अपचायक गुण से संबंधित दो रासायनिक अभिक्रिया लिखिए।

उत्तर- सल्फर डाइ ऑक्साइड के अपचायक गुण-

(i) जल की उपस्थिति में SO_2 हैलोजन का अपचयन करके अम्ल बनाती है-

$$SO_2 + 2H_2O + Cl_2 \longrightarrow 2HCl + H_2SO_4$$

(ii) SO_2 पोटैशियम परमैंगनेट के अम्लीय विलयन को रंगहीन कर देती है।

$$\underset{\text{पोटैशियम परमैंगनेट}}{2KMnO_4} + 5SO_2 + 2H_2O \longrightarrow K_2SO_4 + 2MnSO_4 + 2H_2SO_4$$

प्रश्न 7. सल्फर डाइ ऑक्साइड की पहचान करने के लिए दो परीक्षण लिखिए।

उत्तर- सल्फर डाइ ऑक्साइड की पहचान करने के लिए दो परीक्षण-

(i) SO_2 की गंध जलते हुए गंधक (सल्फर) की तरह की होती है।

(ii) सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2) अम्लीय पोटैशियम परमैंगनेट के अम्लीय विलयन को रंगहीन कर देती है।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 159 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. प्रयोगशाला में NH_3 तथा SO_2 का निर्माण करना एवं उनके भौतिक गुणों व रासायनिक गुणों का परीक्षण करना।

उत्तर- स्वयं कीजिए।

■■■

14 तत्वों का वर्गीकरण

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मेण्डेलीफ के आवर्त नियम का उल्लेख करते हुए इसकी मूल आवर्त सारणी के सामान्य लक्षण लिखिए।

उत्तर– मेण्डेलीफ के आवर्त नियम – मेण्डेलीफ के आवर्त के नियमानुसार, तत्वों के भौतिक तथा रासायनिक गुण उनके परमाणु भारों के आवर्ती फलन होते हैं अर्थात् यदि तत्वों को उनके बढ़े हुए परमाणु भारों के क्रम में व्यवस्थित किया जाए, तो निश्चित एवं समान अंतरालों के बाद लगभग समान गुण वाले तत्व पाए जाते हैं।

उस समय ज्ञात कुल तत्व 63 थे। 1871 ई० में मेण्डेलीफ ने मूल आवर्त नियम के अनुसार उस समय ज्ञात 63 तत्वों को बढ़ाते हुए परमाणु भारों में एक सारणी के रूप में शृंखलाबद्ध किया। इस सारणी को मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी कहते हैं।

मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के सामान्य लक्षण–

(i) इस सारणी में तत्वों को परमाणु भार के बढ़ते हुए क्रम में रखा गया है।

(ii) इस सारणी में 12 क्षैतिज पंक्तियाँ (horizontal rows) हैं जिन्हे श्रेणियाँ (series) कहा गया।

(iii) इस सारणी में 8 ऊर्ध्वाधर कॉलम (vertical columns) हैं जिन्हें समूह (groups) कहा गया।

(iv) तत्वों को क्रमबद्ध करते हुए यह विशेष रूप से ध्यान रखा गया कि समान गुणों वाले तत्व एक ही समूह में रहें। ऐसा करने के लिए कहीं-कहीं खाली स्थान छोड़ने पड़े। **उदाहरणार्थ–** कैल्सियम (Ca, परमाणु भार = 40) को चतुर्थ श्रेणी में द्वितीय समूह में रखा गया। परमाणु भार के बढ़ते हुए क्रम में उस समय ज्ञात अगला तत्व टाइटेनियम (Ti, परमाणु भार = 48) था। अतः इसे चतुर्थ श्रेणी में ही तृतीय समूह में रखना चाहिए था लेकिन इसके गुण तृतीय समूह के तत्वों के गुणों से समानता नहीं रखते थे वरन् चतुर्थ समूह के तत्वों के गुणों से समानता रखते थे। अतः टाइटेनियम को चतुर्थ श्रेणी के चतुर्थ समूह में रखा गया तथा चतुर्थ श्रेणी के तृतीय समूह में रिक्त स्थान छोड़ दिया गया।

प्रश्न 2. मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के गुणों तथा दोषों का उल्लेख कीजिए। या मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी (मूल) के दोषों का वर्णन कीजिए। या मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी (मूल) के लाभों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के गुण– मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं।

(i) तत्वों के गुणों के अध्ययन में सुविधा– मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी से तत्वों के भौतिक तथा रासायनिक गुणों का अध्ययन सरल हो गया। चूँकि समान गुणों वाले तत्वों को एक ही समूह में रखा गया है; अतः किसी समूह के किसी एक तत्व के अध्ययन से उस समूह के अन्य तत्वों के गुणों का पर्याप्त सीमा तक ज्ञात हो जाता है।

(ii) तत्वों का सही परमाणु भार ज्ञात करने में सहायता–सन् 1869 ई० से पहले बेरीलियम का परमाणु भार 13.5 माना जाता था। बेरीलियम के गुण मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के द्वितीय समूह के तत्व के गुणों के समान हैं। अत: मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में बेरीलियम द्वितीय समूह में स्थित होना चाहिए। इस स्थिति में बेरीलियम का परमाणु भार लीथियम के परमाणु 7 तथा बोरॉन के परमाणु भार 11 के मध्य होना चाहिए। इससे मेण्डेलीफ ने निष्कर्ष निकाला कि बेरीलियम का परमाणु भार 13.5 नहीं है, बल्कि 9.4 है। इसके बाद प्रयोगात्मक परीक्षणों द्वारा यह सिद्ध हो गया कि बेरीलियम का परमाणु भार लगभग 9 है।

इस प्रकार मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी से कुछ अन्य तत्वों के सही परमाणु भार ज्ञात करने में सहायता मिली।

(iii) नए तत्वों की खोज में सहायता– मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी में कुछ स्थान रिक्त छोड़ दिए गए। ये रिक्त स्थान उन तत्वों से संबंधित थे जिनकी खोज तब तक नहीं हुई थी। इन अज्ञात तत्वों के गुणों तथा परमाणु भारों की भविष्यवाणी कर दी गई थी। नए तत्वों की खोज के साथ-साथ इन रिक्त स्थानों की पूर्ति होती चली गई तथा उनके गुण तथा परमाणु भार पहले की गई भविष्यवाणी के अनुरूप थे जिससे इनकी खोज की पुष्टि हुई। स्कैण्डियम (Sc, परमाणु भार = 44.9), गैलियम (Ga, परमाणु भार = 69.7) तथा जर्मेनियम (Ge, परमाणु भार = 72.6) इसके उदाहरण हैं। इस प्रकार मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी से नए तत्वों की खोज तथा अनुसंधान में सहायता मिली।

मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के दोष– मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं-

(i) हाइड्रोजन का स्थान– मेण्डेलीफ की सारणी में हाइड्रोजन को प्रथम समूह में क्षार धातुओं के साथ उनके समान धन विद्युती गुण के कारण तथा सप्तम समूह में हैलोजेन के साथ उनके समान ऋण विद्युती गुण के कारण दो स्थानों पर रखा गया है, परंतु हाइड्रोजन को दोनों समूहों में रखा जाना दोषपूर्ण है।

(ii) भारी तत्वों को हल्के तत्वों से पहले रखना– मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी में कुछ भारी तत्वों को हल्के तत्वों से पहले रखा गया है; जैसे- कोबाल्ट [परमाणु भार = 58.93], निकिल [परमाणु भार = 58.71], से पहले रखा गया है।

इसी प्रकार टैल्यूरियम [परमाणु भार = 127.6], आयोडीन [परमाणु भार = 126.9], से पहले रखा गया है।

मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में परमाणु भारों के बढ़ते हुए क्रम में इस प्रकार के परिवर्तन मेण्डेलीफ के मूल आवर्त नियम के विपरीत हैं।

(iii) समस्थानिकों तथा समभारिकों की खोज– समस्थानिकों तथा समभारिकों की खोज के बाद यह स्पष्ट हो गया कि तत्वों का मूल लक्षण उनका परमाणु भार नहीं होता है। समस्थानिकों के परमाणु भार भिन्न होते हैं; परंतु उनके गुण समान होते हैं। समभारिकों के परमाणु भार समान होते हैं; परंतु उनके गुण भिन्न होते हैं। अत: मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में समस्थानिकों तथा समभारिकों को कोई स्थान नहीं दिया गया।

(iv) अनेक नए तत्वों के लिए उचित स्थान का अभाव– कुछ नए तत्वों की खोज के बाद उनको मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी मे छोड़े गए रिक्त स्थानों में से उचित स्थान मिल गया और इस प्रकार मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में छोड़े गए रिक्त स्थानों की पूर्ति होती गई। इसके विपरीत अनेक नए तत्वों की खोज के बाद उनको मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में उचित स्थान नहीं मिल पाया था।

या तो उन्हें परमाणु भार के बढ़ते हुए क्रम में रखा जा सकता था या उन्हें समान गुणों वाले तत्वों के समूह में रखा जा सकता था; लेकिन ऐसा स्थान नहीं दिया जा सकता था कि परमाणु भार के बढ़ते हुए क्रम के साथ-साथ वे समान गुणों वाले तत्वों के समूह में भी हों।

(v) असमान गुणों वाले तत्वों को एक ही समूह में रखना तथा समान गुणों वाले तत्वों को भिन्न-भिन्न समूह में रखना।

(vi) तत्व का मूल लक्षण उनका परमाणु क्रमांक है परमाणु भार नहीं।

प्रश्न 3. आधुनिक आवर्त नियम क्या है? इसके आधार पर मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के दोषों को किस प्रकार दूर किया गया?

उत्तर- आधुनिक आवर्त नियम- मोसले ने सन् 1913 ई० में मेण्डेलीफ के मूल आवर्त नियम में संशोधन करके एक नया नियम प्रस्तुत किया, जिसे आधुनिक आवर्त नियम कहते हैं। इस नियमानुसार- ''तत्वों के भौतिक तथा रासायनिक गुण उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर एक नियमित अंतर के बाद उनके भौतिक तथा रासायनिक गुणों की पुनरावृत्ति होती है।''

मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी से मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के दोषों का निराकरण-

मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी द्वारा मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी के दोषों का निराकरण हो गया है। मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में तत्वों को उनके परमाणु भारों के बढ़ते हुए क्रम में रखा गया था। तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रख कर बनाई गई आवर्त सारणी में परमाणु भार को आधार मानकर बनाई गई आवर्त सारणी के बहुत से दोष स्वयं दूर हो जाते हैं।

उदाहरणार्थ-

(i) मेण्डेलीफ की मूल सारणी में Te तथा I व Co तथा Ni परमाणु भार के बढ़ते हुए क्रम के विपरीत क्रम में हैं। मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी में ये तत्व परमाणु क्रमांक के बढ़ते हुए क्रम में स्वयं आ जाते हैं।

(ii) मेंण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में अक्रिय गैसों के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं था। मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी में परमाणु क्रमांक के बढ़ते हुए क्रम में इन तत्वों के लिए उपयुक्त स्थान मिल जाता है। जिन तत्वों के लिए मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी में उपयुक्त स्थान नहीं था, उनके लिए भी इस सारणी में उपयुक्त स्थान मिल जाता है।

(iii) समस्थानिकों के परमाणु क्रमांक समान होते हैं। अत: समस्थानिकों को अलग अलग स्थान न दिए जाने का कारण स्पष्ट हो जाता है। समभारिकों के परमाणु क्रमांक भिन्न होते हैं। अत: समभारिकों को भिन्न स्थान दिए जाने का कारण भी स्पष्ट हो जाता है।

प्रश्न 4. मेण्डेलीफ की आधुनिक संशोधित आवर्त सारणी में आवर्तों के सामान्य लक्षण लिखिए। या

आवर्त सारणी के किसी आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर निम्नलिखित गुणों में क्या परिवर्तन होता है-

(a) विद्युत धनात्मकता, **(b) धात्विक गुण,**

(c) ऑक्साइडों का क्षारीय गुण **(d) हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता।**

उत्तर- मेण्डेलीफ की आधुनिक संशोधित आवर्त सारणी में आवर्तों के सामान्य लक्षण-

(i) आधुनिक आवर्त सारणी में तत्वों को परमाणु क्रमांक के बढ़ते हुए क्रम में 10 क्षैतिज पंक्तियों में रखा गया है। इन क्षैतिज पंक्तियों को श्रेणियाँ (series) कहते हैं।

(ii) तत्वों की 10 श्रेणियाँ सात क्षैतिज कॉलमों और नौ खड़े कॉलमों में बाँटी गई है। सात क्षैतिज कॉलमों को आवर्त या पीरियड (Period) और नौ खड़े कॉलमों को वर्ग या ग्रुप (group) कहते हैं। आवर्त सारणी में कुल 7 आवर्त, 1 से 7 तक और 9 वर्ग, I से VIII और 0 (शुन्य) वर्ग हैं। वर्ग 0 और वर्ग VIII को छोड़कर अन्य सभी वर्गों को दो-दो उपवर्गों (sub-group) में विभाजित किया गया है जिन्हें उपवर्ग *A* और *B* कहते हैं। VIII समूह में तीन ऊर्ध्वाधर कॉलम होते हैं। आवर्त 4, 5 और 6 में तत्वों की दो-दो श्रेणियाँ हैं, जिन्हें सम और विषम श्रेणियाँ (even and odd series) कहते हैं।

(iii) पहले, दूसरे व तीसरे आवर्तों को लघु आवर्त (short periods) तथा चौथे, पाँचवें आवर्त को दीर्घ आवर्त (long period) तथा छठे व सातवें आवर्तों को अतिदीर्घ आवर्त (very long periods) कहते हैं। पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, छठे तथा सातवें आवर्तों को अतिदीर्घ आवर्त (very long periods) कहते हैं। पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, छठे तथा सातवें आवर्त में क्रमश: 2, 8, 18, 18, 32 तथा 23 तत्व हैं; सातवाँ आवर्त अपूर्ण है।

अति दीर्घ आवर्त 6 में 32 तत्व हैं जिनमें 14 तत्वों (परमाणु क्रमांक 58 से 71 तक) को सारणी के नीचे दुर्लभ मृदा तत्वों के रूप में लैन्थेनाइड श्रेणी (lanthanide series) के नाम से रखा गया है। इन तत्वों को आवर्त सारणी में परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर सारणी की व्यवस्था भंग हो जाती है। आवर्त 7 के अभी तक 23 तत्व ज्ञात हैं जिनमें 14 तत्वों (परमाणु क्रमांक 90 से 103 तक) को सारणी के नीचे एक श्रेणी के रूप में रखा गया है जिसे एक्टिनाइड श्रेणी (actinide series) कहा जाता है, इन तत्वों को भी परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में सारणी में रखने पर सारणी की व्यवस्था भंग होती है।

(iv) प्रत्येक आवर्त का पहला तत्व क्षार धातु तथा अंतिम तत्व अक्रिय गैस है, परंतु अपवाद के रूप में प्रथम आवर्त का पहला तत्व H है।

आवर्त सारणी के किसी आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर तत्वों के गुणों में क्रमिक परिवर्तन पाया जाता है।

(a) विद्युत धनात्मकता- प्रत्येक आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर तत्वों की विद्युत धनात्मकता में क्रमिक ह्रास तथा ऋण विद्युती प्रकृति में क्रमिक वृद्धि होती जाती है; जैसे तीसरे लघु आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर Na से Mg कम विद्युत धनी है, Al उससे भी कम तथा Si विद्युत उदासीन है। फिर P ऋण विद्युती, *S* उससे अधिक ऋण विद्युती तथा Cl प्रबल ऋण विद्युती तत्व है

(b) धात्विक गुण- प्रत्येक आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर तत्व की धात्विक प्रकृति क्रमश: घटती जाती है। जैसे तीसरे लघु आवर्त में Na प्रबल धात्विक (ठंडे जल से हाइड्रोजन विस्थापित करता है), Mg उससे कम धात्विक (गर्म जल से हाइड्रोजन विस्थापित करता है), Al उससे भी कम धात्विक, Si अधात्विक, P उससे भी अधिक अधात्विक, S पर्याप्त अधात्विक तथा Cl प्रबल अधात्विक तत्व हैं।

$$\underbrace{\text{Na, Mg, Al,}}_{\text{प्रबल धात्विक}} \quad \underbrace{\text{Si}}_{\text{अधात्विक}} \ , \quad \underbrace{\text{P, S, Cl}}_{\text{प्रबल अधात्विक}}$$

(c) **ऑक्साइडों का क्षारीय गुण–** प्रत्येक आवर्त में बाएँ से दाँए चलने पर तत्वों की धात्विकता में ह्रास होता जाता है और तदनुसार उसके ऑक्साइडों की क्षारीयता भी घटती जाती है; जैसे– तीसरे लघु आवर्त में Na_2O, MgO, Al_2O_3 की क्षारीयता में क्रमिक ह्रास है तथा SiO_2 अम्लीय है, SO_3 और अधिक अम्लीय तथा Cl_2O_7 प्रबल अम्लीय है।

Na_2O , MgO, Al_2O_3 , SiO_2 , P_2O_5 , SO_3 , Cl_2O_7
प्रबल क्षारीय प्रबल अम्लीय

(d) **हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता–** बाएँ से दाएँ बढ़ने पर लघु आवर्तों के तत्वों की हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता पहले 1 से 4 तक बढ़ती है फिर 4 से 1 तक घटती है। ऑक्सीजन के प्रति संयोजकता 1 से 7 तक बढ़ती है।

प्रश्न 5. दीर्घाकार आवर्त सारणी द्वारा मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी के दोषों को किस प्रकार दूर किया गया है?

उत्तर– दीर्घाकार आवर्त सारणी द्वारा मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी के दोषों का निराकरण – दीर्घाकार आवर्त सारणी द्वारा मेण्डेलीफ की संशाधित आवर्त सारणी के कई दोष दूर हो जाते हैं। इनमें से प्रमुख हैं–

(i) मेण्डेलीफ की संशाधित आवर्त सारणी का एक बड़ा दोष यह था कि कहीं–कहीं असमान गुणों वाले तत्वों (जैसे–IA तथा IIA समूहों के तत्वों) को अलग–अलग स्थानों पर रखा गया था। दीर्घाकार आवर्त सारणी में मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी के इस दोष को दूर कर दिया गया है।

(ii) मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी में धात्वीय तथा अधात्वीय तत्वों की स्थितियों की व्यवस्था ठीक नहीं है। मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी का यह दोष दीर्घाकार आवर्त सारणी में दूर कर दिया गया है।

(iii) मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी में संक्रमण तत्वों को बीच–बीच में भिन्न–भिन्न स्थान दिए गए थे। इस सारणी में संक्रमण तत्व सारणी के बीच वाले स्थान में एक साथ रखे गए हैं। यह भी मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी में सुधार है।

(iv) इस आवर्त सारणी में मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी की तरह चौथे, पाँचवें तथा छठे आवर्त में सम और विषम प्रकार की श्रेणियाँ नहीं है। यह भी इसका एक गुण है।

(v) यद्यपि परमाणु क्रमांक 58 से 71 तथा परमाणु क्रमांक 90 से 103 तक के तत्वों को मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी की भाँति इस आवर्त में भी कोई उपयुक्त स्थान नहीं मिल पाया है, फिर भी इन तत्वों को आवर्त सारणी के नीचे दो क्षैतिज पंक्तियों में रखे जाने का औचित्य (justification) इस आवर्त सारणी से स्पष्ट हो जाता है। चूँकि इन दोनों श्रेणियों के तत्वों के इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में समानता है, अत: उन्हें एक साथ रखे जाना उचित है। यह भी दीर्घाकार आवर्त सारणी का एक गुण है।

प्रश्न 6. दीर्घाकार आवर्त सारणी पर टिप्पणी लिखिए। इसके द्वारा मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी के दोषों का कैसे निराकरण किया गया? कोई भी दो उदाहरण देकर समझाइए।

उत्तर– दीर्घाकार आवर्त सारणी– इसे प्रवर्धित आवर्त सारणी भी कहते हैं। मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी के दोषों का निराकरण करने के लिए कई वैज्ञानिकों ने प्रयास किया। फलस्वरुप दीर्घाकार आवर्त सारणी सहित अनेक संशोधित व परिवर्तित सारणियाँ

प्रकाश में आई। सभी आवर्त सारणियों के गुणों तथा दोषों के विश्लेषण से यही निष्कर्ष निकला कि दीर्घाकार अथवा प्रवर्धित आवर्त सारणी सबसे महत्वपूर्ण व उपयोगी है। रैंग, वर्नर तथा बरी जैसे कई वैज्ञानिकों का इस सारणी के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा। बोहर द्वारा दीर्घाकार आवर्त सारणी का निर्माण उनके परमाणु की कक्षाओं में इलेक्ट्रॉनों के वितरण के सिद्धांत के बाद तथा उसके आधार पर हुआ। अत: इसे बोहर की आवर्त सारणी या आधुनिक आवर्त सारणी भी कहा जाता है।

दीर्घाकार आवर्त सारणी के निर्माण का आधार यह है कि तत्वों के गुणों तथा उनके इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में गहरा संबंध होता है। जिन तत्वों के इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में समानता होती है। उनके गुण भी समान होते हैं। यदि तत्वों को उसके परमाणु क्रमांक के बढ़ते हुए क्रम में रखा जाए तो तत्वों के एक नियमित अंतर के बाद समान इलेक्ट्रॉनिक विन्यास वाले तत्व पाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर उनके इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में आवर्तिता (periodicity) पाई जाती है। चूँकि समान इलेक्ट्रॉनिक विन्यास वाले तत्वों के गुणों में भी समानता होती है, अत: तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर उनके गुणों में भी आवर्तिता पाई जाती है। अत: दीर्घाकार आवर्त सारणी में तत्वों का वर्गीकरण करते समय इस बात का विशेष ध्यान रख गया है कि समान इलेक्ट्रॉनिक विन्यास वाले तत्वों को एक साथ रखा जाए।

दीर्घाकार आवर्त सारणी द्वारा मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त सारणी के दोषों का निराकरण– इसके लिए प्रश्न–5 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 7. दीर्घाकार आवर्त सारणी की उदाहरण सहित दो विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर– दीर्घाकार आवर्त सारणी की दो प्रमुख विशेषताएँ–

(i) प्रत्येक आवर्त में, उपकोशों में अंतिम इलेक्ट्रॉन के प्रवेश के अनुसार तत्वों को उपवर्गों में निम्नलिखित क्रम में रखा गया है।

s-उपकोश– I–A, II–A

p-उपकोश– III–A, IV–A, V–A, VI–A, VII–A तथा 0

d-उपकोश– III–B, IV–B, V–B, VI–B, VII–B, VIII, I–B, II–B

इस प्रकार इस सारणी में किसी तत्व की स्थिति से ज्ञात हो जाता है कि उसमें अंतिम इलेक्ट्रॉन की आपूर्ति किस कोश तथा किस उपकोश में हुई है। यह स्थिति इसका भी ज्ञान कराती है। कि परमाणुओं में कौन–से कोश तथा उपकोश पूर्णत: भरे जा चुके हैं।

(ii) हाइड्रोजन के अनेक गुण वर्ग I–A के तत्वों से तथा अनेक गुण वर्ग VII–A के तत्वों में मिलते जुलते हैं। अत: इसे दोनों वर्गों में रखा गया है।

प्रश्न 8. दीर्घाकार आवर्त सारणी की चार मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर– दीर्घाकार आवर्त सारणी की चार मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

(i) दीर्घाकार आवर्त सारणी में 7 क्षैतिज पंक्तियाँ हैं, जिन्हें आवर्त कहते हैं तथा 18 ऊर्ध्वाधर स्तंभ हैं, जिन्हें वर्ग या समूह कहते हैं।

(ii) इस सारणी में धात्वीय एवं अधात्वीय तत्वों, संक्रमण तत्वों तथा अक्रिय तत्वों को स्पष्टत: अलग देखा जा सकता है।

(iii) प्रत्येक आवर्त को चाहे वह लघु हो या दीर्घ, एक ही रेखा में रखा गया है। अर्थात् मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी की भाँति इसे प्रथम एवं द्वितीय उपश्रेणियों में नहीं बाँटा गया है।

(iv) इस सारणी में हाइड्रोजन के अनेक गुण वर्ग I-A के तत्वों से तथा अनेक गुण वर्ग VII-A के तत्वों में मिलते-जुलते हैं। अत: इसे दोनों वर्गों में रखा गया है।

प्रश्न 9. दीर्घाकार आवर्त सारणी की चार विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर- इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न-8 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 10. दीर्घाकार आवर्त सारणी के मुख्य लक्षण क्या हैं?

उत्तर- दीर्घाकार आवर्त सारणी के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं-

(i) इस सारणी में 7 क्षैतिज पंक्तियाँ है, जिन्हें आवर्त कहते हैं तथा 18 ऊर्ध्वाधर स्तंभ हैं, जिन्हें वर्ग या समूह कहते हैं।

(ii) प्रत्येक आवर्त को चाहे वह लघु हो या दीर्घ, एक ही रेखा में रखा गया है अर्थात् मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी की भाँति इसे प्रथम एवं द्वितीय उपश्रेणियों में नहीं बाँटा गया है।

(iii) दीर्घाकार आवर्त सारणी के प्रत्येक आवर्त में, उपकोशों में अंतिम इलेक्ट्रॉन के प्रवेश के अनुसार तत्वों को उपवर्गों में निम्नलिखित क्रम में रखा गया है-

s-उपकोश— I–A, II–A

p-उपकोश— III–A, IV–A, V–A, VI–A, VII–A तथा 0

d-उपकोश— III–B, IV–B, V–B, VI–B, VII–B, VIII, I–B, II–B

इस प्रकार इस सारणी में किसी तत्व की स्थिति से ज्ञात हो जाता है कि उसमें अंतिम इलेक्ट्रॉन की आपूर्ति किस कोश तथा किस उपकोश में हुई है। यह स्थिति इसका भी ज्ञान कराती है। कि परमाणुओं में कौन-से कोश तथा उपकोश पूर्णत: भरे जा चुके हैं।

(iv) इस आवर्त सारणी में तत्वों को चार खंडों अथवा ब्लाकों में स्पष्ट रूप से विभाजित किया गया है। इन्हें क्रमश: s, p, d तथा f ब्लॉक के तत्व कहते हैं। किसी एक ब्लॉक के तत्वों के लक्षणों में अनेक समानताएँ तथा अन्य ब्लॉक के तत्वों में भिन्नता होती हैं।

(v) इस सारणी में धात्वीय एवं अधात्वीय तत्वों, संक्रमण तत्वों तथा अक्रिय तत्वों को स्पष्टत: अलग देखा जा सकता है।

(vi) हाइड्रोजन के अनेक गुण वर्ग I–A के तत्वों से तथा अनेक गुण वर्ग VII–A के तत्वों में मिलते-जुलते हैं। अत: इसे दोनों वर्गों में रखा गया है।

प्रश्न 11. आवर्त सारणी में आवर्तों के मुख्य लक्षण लिखिए।

उत्तर- **आवर्त सारणी में आवर्तों के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं-**

आवर्त सारणी में सात क्षैतिज खाने हैं। प्रथम आवर्त से सातवें आवर्त तक कुल 7 आवर्त हैं। प्रथम तीन आवर्तों में तत्वों की संख्या कम होने से उन्हें लघु आवर्त कहते हैं। चौथे आवर्त से सातवें आवर्तों में तत्वों की संख्या अधिक होने से उन्हें दीर्घ आवर्त कहते हैं। तत्वों को उनके बढ़ते परमाणु क्रमांकों के आधार पर आवर्तों में इस प्रकार व्यवस्थित किया गया है कि समान गुण धर्म वाले तत्व एक ही सीध में एक-दूसरे के नीचे स्थित हो जाते हैं।

(i) लघु आवर्त- पहले लघु आवर्त में हाइड्रोजन तथा हीलियम केवल दो ही तत्व हैं। दूसरे लघु आवर्त में आठ तत्व तथा तीसरे लघु आवर्त में भी आठ तत्व हैं।

विकर्ण संबंध- दूसरे और तीसरे आवर्त के कुछ तत्वों में विकर्ण संबंध पाया जाता है। अर्थात् विकर्ण संबंधी तत्व गुणों में समान होते हैं।

समूह	I	II	III	IV
द्वितीय समूह	Li	Be	B	C
तृतीय समूह	Na	Mg	Al	Si

(विकर्ण तीर: Li → Mg, Be → Al, B → Si)

जैसे- द्वितीय आवर्त में लीथियम (Li) के गुण आवर्त में मैग्नीशियम (Mg) के गुणों से मिलते-जुलते हैं। **उदाहरणार्थ-** लीथियम कार्बोनेट तथा मैग्नीशियम कार्बोनेट गर्म करन पर अपघटित हो जाते हैं, जबकि सोडियम कार्बोनेट पर गर्म करने का कोई प्रभाव नहीं होता है।

$$Li_2CO_3 \xrightarrow{\Delta} Li_2O + CO_2;\ MgCO_3 \xrightarrow{\Delta} MgO + CO_2$$

द्वितीय और तृतीय आवर्त के तत्वों को प्रारूपिक तत्व (typical elements) कहते हैं ये तत्व अपने समूहों में उपस्थित अन्य तत्वों का आदर्श प्रतिनिधित्व करते हैं।

(ii) दीर्घ आवर्त- अंतिम चार आवर्त दीर्घ आवर्त हैं। चौथे तथा पाँचवें आवर्तों में से प्रत्येक आवर्त में क्रमश: 18 तथा 18 तत्व हैं। छठे आवर्त में 32 तत्व तथा सातवें आवर्त में 23 तत्व हैं, जो अपूर्ण आवर्त हैं। छठे व सातवें आवर्त को अतिदीर्घ आवर्त भी कहते हैं।

चौथे, पाँचवें तथा छठे दीर्घ आवर्तों में से प्रत्येक में तत्वों की दो श्रेणियाँ हैं- पहली सम तथा दूसरी विषम श्रेणी। सम श्रेणी में 8 तत्व तथा विषम श्रेणी में 7 तत्व हैं तथा शेष 3 तत्व दोनों श्रेणियों के बीच एक ही स्थान पर रखे गए हैं। इस प्रकार तीनों दीर्घ आवर्तों में कुल 9 तत्व सम तथा विषम श्रेणियों के बीच में हैं। इन 9 तत्वों को संक्रमण तत्व कहते हैं।

वर्गों तथा उपवर्गों की विशेषताएँ

(i) '0' से 'VIII' तक कुल 9 वर्ग होते हैं।

(ii) कुल अपवादों को छोड़कर किसी एक वर्ग के तत्वों के गुण समान होते हैं।

(iii) एक वर्ग के नीचे के तत्वों का परमाणु भार ऊपर के तत्वों के परमाणु भार से अधिक होता है।

(iv) शून्य तथा आठवें वर्ग को छोड़कर अन्य वर्गों को उपवर्गों में विभाजित किया गया है। इनको उपवर्ग '*A*' तथा उपवर्ग '*B*' कहते हैं। सारणी में उपवर्ग '*A*' को बाईं ओर तथा उपवर्ग '*B*' को दाईं ओर लिखते हैं। किसी उपवर्ग में उपस्थित तत्वों में अधिक समानता पाई जाती है, जैसे प्रथम वर्ग के उपसमूह '*A*' में 6 तत्व तथा '*B*' में चार तत्व हैं।

(v) एक ही वर्ग में परमाणु क्रमांक के वृद्धि क्रम के साथ तत्वों के गुणों में क्रमबद्ध परिवर्तन होता है।

(vi) विभिन्न समूहों में उपस्थित तत्व सामान्य, संक्रमण, दुर्लभ मृदा तथा एक्टिनाइड हो सकते हैं।

(vii) परमाणु क्रमांक में वृद्धि के साथ धात्विक लक्षण तथा धन विद्युती लक्षण बढ़ते हैं।

(viii) परमाणु क्रमांक में वृद्धि के साथ आयनन विभव घटता है।

प्रश्न 12. आवर्त सारणी के किसी आवर्त में निम्नलिखित गुणों में किस प्रकार का परिवर्तन होता है? समझाइए।

(a) हाइड्रोजन से संबंधित संयोजकता (b) परमाणु आकार तथा

(c) ऑक्साइडों की क्षारीय प्रकृति।

उत्तर– (a) **हाइड्रोजन से संबंधित संयोजकता–** बाएँ से दाएँ चलने पर लघु आवर्तों के तत्वों की हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता पहले 1 से 4 तक बढ़ती है फिर 4 से 1 तक घटती है। ऑक्सीजन के प्रति संयोजकता 1 से 7 तक बढ़ती है।

(b) **परमाणु आकार–** आवर्त मे बाईं से दाईं ओर जाने पर परमाणु त्रिज्या घटती है। नाभिक में आवेश बढ़ने से यह इलेक्ट्रॉनों को नाभिक की ओर खींचता है जिससे परमाणु का आकार घटता जाता है; जैसे—

तृतीय आवर्त	Li	Be	B	C	N	O	F
परमाणु त्रिज्या	1.23	0.89	0.82	0.77	0.75	0.73	0.72

(c) **ऑक्साइडों की क्षारीय प्रकृति–** प्रत्येक आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर तत्वों की धात्विकता में ह्रास होता जाता है और तदनुसार उसके ऑक्साइडों की क्षारीयता भी घटती जाती है; जैसे तीसरे लघु आवर्त में Na_2O, MgO, Al_2O_3 की क्षारीयता में क्रमिक ह्रास है। तथा SiO_2 अम्लीय है, SO_3 और अधिक अम्लीय तथा Cl_2O_7 प्रबल अम्लीय हैं।

$$\underset{\text{प्रबल क्षारीय}}{Na_2O}, MgO, Al_2O_3, SiO_2, P_2O_5, SO_3, \underset{\text{प्रबल अम्लीय}}{Cl_2O_7}$$

प्रश्न 13. आवर्त सारणी के एक ही आवर्त के तत्वों के परमाणु आकार में किस प्रकार परिवर्तन होता है और क्यों?

उत्तर– आवर्त सारणी में परमाणु का आकार परमाणु त्रिज्या द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। किसी परमाणु के नाभिक तथा बाह्यतम कोश के इलेक्ट्रॉनों के बीच की दूरी को उस परमाणु की परमाणु त्रिज्या कहते हैं। परमाणु संरचना की आधुनिक परिक्लपना के अनुसार परमाणु में इलेक्ट्रॉनों की स्थिति निश्चित नहीं होती है। कोई एक इलेक्ट्रॉन कभी नाभिक के पास तथा कभी नाभिक से काफी दूर हो सकता है। परमाणु त्रिज्या दो कारकों पर निर्भर करती हैं– शैलों की संख्या तथा नाभिकीय आवेश। शैलों की संख्या बढ़ने पर परमाणु त्रिज्या कम होती है।

किसी आवर्त में बाएँ से दाएँ IA समूह से VIIA समूह तक जाने पर जैसे–जैसे तत्वों का परमाणु क्रमांक बढ़ता जाता है, वैसे–वैसे तत्वों की परमाणु त्रिज्याएँ कम होती हैं। इसका कारण यह है कि परमाणु क्रमांक बढ़ने पर प्रभावी नाभिकीय आवेश बढ़ता जाता है। जबकि शैलों की संख्या वही रहती है। परिणाम स्वरूप इलेक्ट्रॉनों का खिंचाव नाभिक की ओर बढ़ता जाता है, जिससे परमाणु आकार या परमाणु त्रिज्याएँ कम होती जाती हैं। किसी समूह में ऊपर से नीचे जाने पर जैसे–जैसे तत्वों का परमाणु क्रमांक बढ़ता जाता है, वैसे–वैसे तत्वों की परमाणु त्रिज्याएँ भी बढ़ती जाती है। इसका कारण यह है कि परमाणु क्रमांक बढ़ने पर शैलों की संख्या बढ़ती जाती है लेकिन प्रभावी नाभिकीय आवेश में कोई वृद्धि नहीं होती है। परिणामत: परमाणु त्रिज्याएँ बढ़ती जाती हैं। जैसा कि हमने बताया किसी आवर्त में IA से VII समूह तक बाएँ से दाईं ओर जाने पर परमाणु त्रिज्याओं में इतना अधिक परिवर्तन नहीं होता है जितना कि उसी आवर्त के अन्य तत्वों में होता है।

प्रश्न 14. आवर्त सारणी में किसी लघु आवर्त में निम्नलिखित में किस प्रकार का परिवर्तन होता है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए–

(a) हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता (b) धात्वीयता

उत्तर– (a) **हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता –** लघु आवर्तों के तत्वों की हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता पहले 1 से 5 तक बढ़ती है तथा इसके बाद 4 से 1 तक क्रमश: घटती है।

समूह	I	II	III	IV	V	VI	VII
तत्व के हाइड्रोजन यौगिक	LiH	BeH_2	BH_3 →	CH_4	← NH_3	H_2O	HF
तत्व की संयोजकता	1	2	3	4	3	2	1

(b) धात्वीयता– प्रत्येक आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर तत्वों के परमाणु क्रमांकों में क्रमशः वृद्धि के साथ तत्व की धात्विक प्रकृति क्रमशः घटती है। तीसरे लघु आवर्त में तत्वों की धात्विक प्रकृति का घटता क्रम निम्नलिखित है–

$$Na > Mg > Al > Si > P > S > Cl$$

प्रश्न 15. आधुनिक आवर्त नियम क्या है? किस वर्ग के ऑक्साइड प्रबल क्षारीय एवं किस वर्ग के प्रबल अम्लीय होते हैं? एक आवर्त में हाइड्रोजन के सापेक्ष संयोजकता के क्रमिक परिवर्तन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– आधुनिक आवर्त नियम– परमाणु संरचना, रेडियोएक्टिवता, समस्थानिकों व समभारिकों की खोज तथा मेण्डेलीफ की मूल आवर्त–सारणी की असंगतियों से यह स्पष्ट हो गया कि तत्वों का मूल लक्षण परमाणु भार न होकर उनका परमाणु क्रमांक होता है। इस आधार पर मोसले ने सन् 1913 ई० में मेण्डेलीफ के मूल आवर्त–नियम में संशोधन करके एक नया नियम प्रस्तुत किया जिसे आधुनिक आवर्त–नियम (Modern Periodic Law) कहते हैं। इस नियम के अनुसार–

"तत्वों के भौतिक तथा रासायनिक गुण उनके परमाणु क्रमांकों के आवर्त फलन होते हैं (The physical and chemical properties of elements are periodic functions of their atomic numbers)"।

इस कथन का अभिप्राय यह है कि तत्त्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर एक नियमित अंतर के बाद उनके भौतिक तथा रासायनिक गुणों की पुनरावृत्ति होती है।

मेण्डेलीफ के आधुनिक आवर्त–नियम के आधार पर मोसले ने सन् 1913 ई० में तत्वों को उनके परमाणु क्रमांको के बढ़ते हुए क्रम में रख कर एक सारणी बनाई जिसे मेण्डेलीफ की संशोधित आवर्त–सारणी (Mendeleef's Modified Periodic Table) कहते हैं।

आवर्त सारणी में ऑक्साइडों की प्रकृति– धातुओं के ऑक्साइड क्षारीय प्रवृति के होते हैं। अधातुओं के ऑक्साइड अम्लीय या उदासीन होते हैं, जबकि उप–धातुओं के ऑक्साइड उभयधर्मी होते हैं। अतः तत्वों की ऑक्साइड प्रकृति उनकी धात्वीयता पर निर्भर करती है।

किसी आवर्त में बाएँ से दाएँ चलने पर तत्वों के ऑक्साइडों की क्षारीय प्रकृति घटती जाती है व अम्लीय प्रकृति बढ़ती जाती है; जैसे–

वर्ग	IA	IIA	IIIA	IVA	VA	VIA	VIIA
तृतीय आवर्त	Na	Mg	Al	Si	P	S	Cl
ऑक्साइड	Na_2O	MgO	Al_2O_3	SiO_2	P_2O_5	SO_3	Cl_2O_7
प्रकृति	प्रबल क्षारीय	क्षारीय	उभयधर्मी	दुर्बल अम्लीय	अम्लीय	अधिक अम्लीय	प्रबल अम्लीय

अतः उपर्युक्त आधार पर H_3PO_4, H_2SO_4 व $HClO_4$ की अम्ल शक्ति का बढ़ता हुआ क्रम भी यही होता है।

किसी समूह में ऊपर से नीचे जाने पर ऑक्साइडों की क्षारीय प्रकृति बढ़ती जाती है तथा अम्लीय शक्ति घटती जाती है; जैसे-

IV समूह (C, Si, Ge, Sn व Pb) में CO_2 अम्लीय व PbO_2 उभयधर्मी है। स्पष्ट है कि IA वर्ग के ऑक्साइड प्रबल क्षारीय एवं VIIA वर्ग के ऑक्साइड प्रबल अम्लीय होते हैं।

आवर्त में हाइड्रोजन के सापेक्ष संयोजकता का क्रमिक परिवर्तन- बाएँ से दाएँ बढ़ने पर लघु आवर्तों के तत्वों की हाइड्रोजन के प्रति संयोजकता पहले 1 से 4 तक बढ़ती है फिर 4 से 1 तक घटती है।

	समूह	I	II	III	IV	V	VI	VII
दूसरा लघु	तत्व के हाइड्रोजन यौगिक	LiH	BeH_2	BH_3	CH_4	NH_3	H_2O	HCl
आवर्त	तत्व की संयोजकता	1	2	3	4	3	2	1

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मेण्डेलीफ का आवर्त नियम लिखिए। मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी के दो लाभों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- मेण्डेलीफ का आवर्त नियम- 1869 ई० में रूसी वैज्ञानिक सर डी० आई० मेण्डेलीफ में एक आवर्त नियम प्रतिपादित किया। इस नियम के अनुसार "तत्वों के भौतिक तथा रासायनिक गुण उनके परमाणु भारों के आवर्ती फलन होते हैं।" अर्थात् यदि तत्वों को उनके बढ़े हुए परमाणु भारों के क्रम में व्यवस्थित किया जाए, तो निश्चित एवं समान अंतरालों के बाद लगभग समान गुण वाले तत्व पाए जाते हैं। उस समय कुल ज्ञात तत्वों की संख्या 63 थी।

मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी के दो लाभ- मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी के दो लाभ निम्नलिखित हैं-

इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 2. आधुनिक आवर्त नियम क्या है?

उत्तर- रेडियोएक्टिवता, परमाणु संरचना, समभारिकों, व समस्थानिकों की खोज तथा मेण्डेलीफ की मूल आवर्त सारणी की असंगतियों ने यह स्पष्ट कर दिया कि तत्वों का मूल लक्षण उनका परमाणु भार न होकर उनका परमाणु क्रमांक होता है। अत: इस आधार पर मोसले ने सन् 1913 ई० में मेण्डेलीफ के मूल आवर्त नियम में संशोधित कर एक नए नियम का प्रतिपादन किया, जिसे 'आधुनिक आवर्त नियम' की संज्ञा दी गई।

इस नियम के अनुसार- तत्वों के भौतिक एवं रासायनिक गुण उनके परमाणु क्रमांकों के आवर्ती फलन होते हैं।

अर्थात् तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर एक नियमित अंतर के बाद उनके भौतिक तथा रासायनिक गुणों की पुनरावृत्ति होती है।

प्रश्न 3. मेण्डेलीफ के आवर्त नियम तथा आधुनिक आवर्त नियम में क्या मौलिक अंतर हैं?

उत्तर- मेण्डेलीफ के मूल आवर्त नियम के अनुसार तत्वों के भौतिक एवं रासायनिक गुण उनके परमाणु भारों के आवृत्ति फलन होते हैं परंतु आधुनिक आवर्त नियम के अनुसार तत्वों के भौतिक एवं रासायनिक गुण उनके परमाणु क्रमांकों के आवर्ती फलन होते हैं।

प्रश्न 4. मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी के किन्हीं दो गुणों एवं दोषों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- **मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी के दो गुण-** मेण्डेलीफ की आवर्त सारणी के दो गुण निम्नलिखित हैं।

इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-

(a) न्यूलैण्ड्स का अष्टक नियम, (b) निरूपक तत्व

उत्तर- (a) **न्यूलैण्ड्स का अष्टक नियम-** रसायनविद् न्यूलैण्ड ने 1863 ई० में स्पष्ट किया कि यदि तत्वों को उनके परमाणु भार के बढ़ते हुए क्रम में रखा जाए तो किसी तत्व से सात तत्व छोडकर आठवाँ तत्व पहले तत्व से गुणों में समानता रखता है। यह समानता ठीक उसी प्रकार की होती है; जैसे संगीत में आठवाँ तथा पहला स्वर ध्वनि में समान होते हैं। न्यूलैण्ड का अष्टक नियम कहते हैं।

सा	रे	गा	मा	ना	धा	नि
$_1H$	$_2Li$	$_3Be$	$_4B$	$_5C$	$_6N$	$_7O$
↓	↓	↓	↓	↓	↓	↓
$_8F$	$_9Na$	$_{10}Mg$	$_{11}Al$	$_{12}Si$	$_{13}P$	$_{14}S$
↓	↓	↓	↓	↓	↓	↓
$_{15}Cl$	$_{16}K$	$_{17}Ca$	$_{18}Cr$	$_{19}Ti$	$_{20}Mn$	$_{21}Fe$

Li, Na तथा K के गुणों में समानता पाई जाती है। इसी प्रकार Be, Mg व Ca के गुणों में, B व Al के गुणों में, C व Si के गुणों में, N व P तथा O व S के गुणों में भी समानता पाई जाती है।

यह नियम भी तत्वों के वर्गीकरण के लिए सफल न हो सका, क्योंकि Ca के बाद वाले तत्व इसका पालन नहीं करते।

(b) **निरूपक तत्व-** द्वितीय और तृतीय आवर्त के तत्वों को निरूपक या प्रारूपिक तत्व (tyipical elements) कहते हैं। ये तत्व अपने समूहों में उपस्थित अन्य तत्वों का आदर्श प्रतिनिधित्व करते हैं।

प्रश्न 6. विकर्ण संबंध पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- **विकर्ण संबंध-** दूसरे और तीसरे आवर्त के कुछ तत्वों मे विकर्ण संबंध पाया जाता है। अर्थात् विकर्ण संबंधी तत्व गुणों में समान होते हैं।

समूह	I	II	III	IV
द्वितीय समूह	Li ↘	Be ↘	B ↘	C
तृतीय समूह	Na	Mg	Al	Si

उदाहरण के तौर पर- द्वितीय आवर्त में लीथियम (Li) के गुण तृतीय आवर्त में मैग्नीशियम (Mg) के गुणों से मिलते-जुलते हैं।

लीथियम तथा मैग्नीशियम के कार्बोनेट गर्म करने पर अपघटित हो जाते हैं, जबकि सोडियम कोर्बोनेट पर गर्म करने का कोई प्रभाव नहीं होता है-

$$Li_2CO_3 \xrightarrow{\Delta} Li_2O + CO_2; \quad MgCO_3 \xrightarrow{\Delta} MgO + CO_2$$

प्रश्न 7. तत्वों के इलेक्ट्रॉनिक विन्यास तथा उनकी दीर्घाकार आवर्त सारणी में स्थिति में क्या संबंध है? एक उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- **तत्वों के इलेक्ट्रॉनिक विन्यास तथा उनकी दीर्घाकार आवर्त सारणी में स्थिति में संबंध-** दीर्घाकार आवर्त सारणी के अध्ययन के उपरांत हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं

कि तत्वों वे गुणों तथा उनके इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में गहरा संबंध होता है। जिन तत्वों के इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में समानता होती है, उनके गुण भी समान होते हैं। यदि तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखा जाए तो तत्वों के एक नियमित अंतर के बाद समान इलेक्ट्रॉनिक विन्यास वाले तत्व पाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर उनके इलेक्ट्रॉनिक विन्यासों में आवर्तिता पाई जाती है। चूँकि समान इलेक्ट्रॉनिक विन्यास वाले तत्वों के गुणों में भी समानता होती है, अत: तत्वों को उनके परमाणु क्रमांकों के बढ़ते हुए क्रम में रखने पर उनके गुणों में भी आवर्तिता पाई जाती है। अत: दीर्घाकार आवर्त सारणी में तत्वों का वर्गीकरण करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि समान इलेक्ट्रॉनिक विन्यास वाले तत्वों को एक साथ रखा जाए।

विरल मृदा धातुओं (लैन्थेनाइड, 58-71) तथा रेडियोऐक्टिव धातुओं (ऐक्टिनाइड, 90-100) की सारणी में पृथक् स्थिति इसके इलेक्ट्रॉनिक विन्यास पर आधारित है, जिससे इनके रासायनिक गुणों की समानता प्रदर्शित होती है।

प्रश्न 8. परमाणु क्रमांक 17 वाले तत्व का आवर्त सारणी में वर्ग तथा आवर्त लिखिए।

उत्तर- परमाणु क्रमांक 17, क्लोरीन का है तथा आवर्त सारणी में यह VIIA वर्ग तथा तीसरे आवर्त में स्थित है।

प्रश्न 9. हाइड्रोजन के क्षार धातुओं तथा हैलोजन से समानता प्रदर्शित करने वाले दो-दो गुणों को लिखिए।

उत्तर- हाइड्रोजन के क्षार धातुओं से समानता प्रदर्शित करने वाले दो गुण-

(i) हाइड्रोजन तथा क्षार धातुओं के बाहरी कक्ष में एक इलेक्ट्रॉन है।

$H_1 = 1, Li_3 = 2,1$

(ii) हाइड्रोजन तथा क्षार धातुएँ दोनों ही धनविद्युती तथा एक संयोजी हैं। ये एक इलेक्ट्रॉन निकालकर H^+, Na^+, K^+ आदि धनायन बनाते हैं।

हाइड्रोजन के क्षार धातुओं से समानता प्रदर्शित करने वाले दो गुण-

(i) हाइड्रोजन तथा हैलोजन दोनों ही बाहरी कक्षा में अधिकतम इलेक्ट्रॉन संख्या से एक इलेक्ट्रॉन कम होता है।

$H_1 = 1, Cl_{17} = 2, 8, 7$

(ii) हाइड्रोजन तथा हैलोजन दोनों ही कार्बन तथा सिलिकन के साथ संयोग करके सहसंयोजी यौगिकों का निर्माण करते हैं।

$CCl_4, SiCl_4$, ... क्लोराइड यौगिक

CH_4, SiH_4, ... हाइड्राइड यौगिक

प्रश्न 10. आवर्त सारणी में स्थिति के अनुसार क्लोरीन के दो भौतिक तथा दो रासायनिक गुण लिखिए।

उत्तर- क्लोरीन के दो भौतिक गुण-

(i) क्लोरीन एक अधातु व गैसीय तत्व है।

(ii) क्लोरीन परमाणु किसी दूसरे परमाणु से 1 इलेक्ट्रॉन ग्रहण करके अपने निकटतम अक्रिय गैस का इलेक्ट्रॉनिक विन्यास प्राप्त कर लेता है; अत: इसकी संयोजकता 1 है।

क्लोरीन के दो रासायनिक गुण-

(i) हाइड्रोजन के साथ क्रिया करके क्लोरीन हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का निर्माण करती है।

$$H_2 + Cl_2 \longrightarrow 2HCl$$

(ii) ऑक्सीजन से क्रिया करके क्लोरीन ऑक्साइड बनाती है।

$$2Cl_2 + 7O_2 \longrightarrow 2Cl_2O_7$$

प्रश्न 11. लीथियम किस तत्व के साथ विकर्ण संबंध प्रदर्शित करता है? उसका नाम एवं संकेत लिखिए।

उत्तर- लीथियम, तृतीय आवर्त में मैग्नीशियम के साथ विकर्ण संबंध प्रदर्शित करता है। इसका संकेत Mg है।

प्रश्न 12. विकर्ण समानता को प्रदर्शित करने वाले दो गुणों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- विकर्ण समानता को प्रदर्शित करने वाले दो गुण निम्नलिखित हैं-

(i) द्वितीय आवर्त में लीथियम (Li) के गुण तृतीय आवर्त में मैग्नीशियम (Mg) के गुणों से मिलते-जुलते हैं।

लीथियम कार्बोनेट तथा मैग्नीशियम कार्बोनेट गर्म करने पर अपघटित हो जाते हैं, जबकि सोडियम कार्बोनेट पर गर्म करने का कोई प्रभाव नहीं होता है।

$$Li_2CO_3 \xrightarrow{\Delta} Li_2O + CO_2;\ MgCO_3 \xrightarrow{\Delta} MgO + CO_2$$

(ii) बेरिलियम (Be) के गुण ऐलुमिनियम (Al) के गुणों से तथा बोरॉन (B) के गुण सिलिकन (Si) के गुणों से मिलते-जुलते हैं।

प्रश्न 13. संक्रमण तत्वों की कितनी श्रेणियाँ हैं?

उत्तर- चौथे, पाँचवें तथा छठे दीर्घ आवर्तों में से प्रत्येक में तत्वों की दो श्रेणियाँ हैं— पहली सम तथा दूसरी विषम श्रेणी। सम श्रेणी में 8 तत्व तथा विषम श्रेणी में 7 तत्व हैं तथा शेष 3 तत्व दोनों श्रेणियों के बीच एक ही स्थान पर रखे गए हैं। इस प्रकार तीनों दीर्घ आवर्तों में कुल 9 तत्व सम तथा विषम श्रेणियों के बीच में हैं। इन 9 तत्वों को संक्रमण तत्व कहते हैं।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 222 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. आधुनिक आवृर्त सारणी (दीर्घाकार आवर्त सारणी) को चार्ट पेपर पर निरूपित करना तथा विभिन्न तत्वों का अध्ययन करना ।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई–4: कार्बनिक रसायन

15 कार्बनिक रसायन का परिचय

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. रासायनिक पदार्थों का प्रारंभिक वर्गीकरण देते हुए कार्बनिक रसायन की परिभाषा दीजिए।

उत्तर- रासायनिक पदार्थों का प्रारंभिक वर्गीकरण- रासायनिक पदार्थों का प्रयोग मनुष्य प्राचीन काल से ही करता आ रहा है। शर्करा, शराब, सिरका, यूरिया, माँडी, रस, नीला थोथा, शोरा, पोटाश, कर्पूर (कपूर), नौसादर आदि का प्रयोग भारत में प्राचीनकाल से ही होता रहा है। परन्तु मानव की प्रगति के साथ-साथ उसके विज्ञान संबंधी ज्ञान में भी वृद्धि हुई और प्रयोग में आने वाले रासायनिक पदार्थों के निर्माण में भी वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप वैज्ञानिकों को यौगिकों का अध्ययन जटिल लगने लगा और वे यौगिकों को वर्गीकृत करने के लिए प्रेरित हुए।

सर्वप्रथम रासायनिक पदार्थों के वर्गीकरण का प्रयास निकोलस लेमरी ने सन् 1675 ई० में किया। उन्होंने पदार्थों को उनकी उत्पत्ति के आधार पर निम्नलिखित तीन वर्गों में वर्गीकृत किया—

(i) **खनिज पदार्थ-** वे सभी पदार्थ, जो खनिजों से प्राप्त किए जाते थे; **उदाहरणार्थ**— सोना, चाँदी, ऐलुमिनियम, लोहा, खड़िया तथा नमक आदि।

(ii) **वनस्पति पदार्थ-** वे सभी पदार्थ, जो पेड़-पौधों से प्राप्त किए जाते थे; **उदाहरणार्थ**— रबर, ऐसीटिक अम्ल, गोंद, कपूर, ऑक्सेलिक अम्ल, मैलिक अम्ल तथा प्रोटीन आदि।

(iii) **जंतु पदार्थ-** वे सभी पदार्थ, जो जीव-जंतुओं से प्राप्त किए जाते थे; **उदाहरणार्थ**— जिलेटिन, हीमोग्लोबिन तथा यूरिया आदि।

कार्बनिक रसायन की परिभाषा- कार्बनिक रसायन, रसायन की वह शाखा है जिसमें कार्बन के यौगिकों का अध्ययन किया जाता है। कार्बन के यौगिकों को कार्बनिक यौगिक कहते हैं।

शेष सभी यौगिकों को अकार्बनिक यौगिक कहते हैं। अकार्बनिक रसायन, रसायन की वह शाखा है जिसमें सभी तत्वों तथा उनके शेष यौगिकों का अध्ययन किया जाता है। अधिकांश कार्बनिक यौगिक जीवधारियों में पाए जाते हैं तथा अकार्बनिक यौगिकों का मुख्य स्रोत खनिज तथा वायुमंडल हैं।

प्रश्न 2. कार्बनिक यौगिकों के प्रमुख स्रोत व उनसे प्राप्त कुछ कार्बनिक यौगिकों के नाम लिखिए।

उत्तर- कार्बनिक यौगिक प्राकृतिक स्रोतों और प्रयोगशाला दोनों से प्राप्त किए जा सकते हैं। कार्बनिक यौगिकों के प्रमुख प्राकृतिक स्रोत वनस्पति एवं जंतु जगत हैं। पेट्रोलियम एवं कोलतार से भी विभिन्न कार्बनिक यौगिक प्राप्त किए जाते हैं। संश्लेषित विधि व किण्वन द्वारा भी अनेक कार्बनिक यौगिकों का निर्माण किया जाता है।

कुछ प्रमुख स्रोत व उनसे प्राप्त पदार्थ निम्नलिखित हैं—

(i) **वनस्पति जगत्–** पेड़-पौधों से एल्कोहल, शर्करा, सेलूलोज, स्टार्च, औषधियाँ, वनस्पति तेल, वसा, मेथिल एल्कोहॉल, गोंद, वसा, टार्टरिक एसिड, रेजिन, ऐसीटिक एसिड आदि कार्बनिक यौगिक प्राप्त होते हैं।

(ii) **जंतु जगत्–** जंतुओं से यूरिया, वसा, जिलेटिन, प्रोटीन, एंजाइम, विटामिन आदि कार्बनिक यौगिक प्राप्त होते हैं।

(iii) **पेट्रोलियम–** पेट्रोलियम पदार्थों से भी बहुत से कार्बनिक यौगिक प्राप्त होते है; जैसे– विभिन्न हाइड्रोकार्बन्स, ग्रीस, पैराफिन मोम, प्राकृतिक गैस, ईथर, वैसलीन पेट्रोल, स्नेहक तेल, मिट्टी का तेल, डीजल आदि।

(iv) **कोलतार–** कोलतार से विभिन्न प्रकार के कार्बनिक यौगिक प्राप्त किए जा सकते हैं; जैसे– टॉलूईन, बेंजीन, रंग, नेफ्थेलीन, भायोफीन, जायलीन, पिरिडीन, फीनोल, एंथ्रासीन आदि।

(v) **लकड़ी के भंजक आसवन से–** लकड़ी के भंजन आसवन से ऐसीटोन, मेथिल ऐल्कोहॉल, ऐसीटिक अम्ल आदि कार्बनिक यौगिक प्राप्त होते हैं।

(vi) **किण्वन–** ऐसीटिक अम्ल, ऐथिल ऐल्कोहॉल आदि कार्बनिक यौगिक किण्वन द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं।

(vii) **संश्लेषण–** प्रयोगशाला के अंदर संश्लेषण क्रिया की सहायता से लगभग सभी प्रकार के कार्बनिक यौगिकों का निर्माण किया जा सकता है।

प्रश्न 3. कार्बनिक तथा अकार्बनिक यौगिकों में अंतर लिखिए।

उत्तर– **कार्बनिक तथा अकार्बनिक यौगिकों में अंतर**

क्र०सं०	कार्बनिक यौगिक	अकार्बनिक यौगिक
1.	इन यौगिकों में कार्बन तत्व का होना आवश्यक है।	कार्बोनेट्स, बाइकार्बोनेट्स, सायनाइड आदि को छोड़कर ये यौगिक कार्बन रहित होते हैं।
2.	इन यौगिकों के अणु भार उच्च तथा रचना जटिल होती है।	इनके अणु भार निम्न तथा ये अणु रचना में अपेक्षाकृत सरल होते हैं।
3.	इन यौगिकों के गलनांक तथा क्वथनांक कम होते हैं।	इनके गलनांक तथा क्वथनांक प्राय: उच्च होते हैं।
4.	इसके अणु रासायनिक अभिक्रिया में प्राय: मंद गति से भाग लेते हैं।	इनके बीच होने वाली रासायनिक अभिक्रियाएँ तीव्र होती हैं।
5.	ये प्राय: जल में अविलेय होते हैं। परन्तु कार्बनिक विलायकों, ऐल्कोहॉल आदि में घुल जाते हैं।	ये प्राय: जल में विलेयशल और कार्बनिक विलायकों में अविलेयशील होते हैं।
6.	कार्बनिक यौगिक विद्युत के कुचालक होते हैं। ये आयनीकृत नहीं होते।	अकार्बनिक यौगिक विद्युत के सुचालक होते हैं और जल में घोलने पर आयनीकृत हो जाते हैं।
7.	ये यौगिक सहसंयोजक बंध द्वारा बने होते हैं।	ये यौगिक विद्युत संयोजक बंध द्वारा बने होते हैं।
8.	इनमें समावयवता (isomerism) पाई जाती है।	इन यौगिकों में प्राय: समावयवता नहीं पाई जाती।

प्रश्न 4. कार्बन परमाणु की चारों संयोजकताओं के बारे में ली बेल तथा वांट हॉफ की धारणा का सचित्र वर्णन कीजिए। या

चित्रों की सहायता से कार्बनिक परमाणु की संयोजकता की चतुष्फलकीय आकृति समझाइए। या

कार्बन की चतुष्फलकीय प्रकृति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- कार्बन की चतुष्फलकीय प्रकृति- कार्बन परमाणु की चारों संयोजकताएँ एक ही समतल में समान रूप से 90° के कोण पर वितरित नहीं होती हैं। **ली बेल** तथा **वांट हॉफ** (Le Bel तथा Vant Hoff) 1874 ई० के अनुसार यदि कार्बन परमाणु को किसी समचतुष्फलक (regular tetrahedron) के केंद्र पर स्थित माना जाए तो इसकी चारों संयोजकताएँ समचतुष्फलक के चारों शीर्षों को केंद्र से मिलाने वाली चार सरल रेखाओं को प्रदर्शित करती हुई होती हैं। इस प्रकार किन्हीं भी दो संयोजकताओं के बीच 109°28' का कोण होता है। कार्बन की चारों संयोजकताएँ चित्रानुसार आकाश (space) में वितरित रहती हैं।

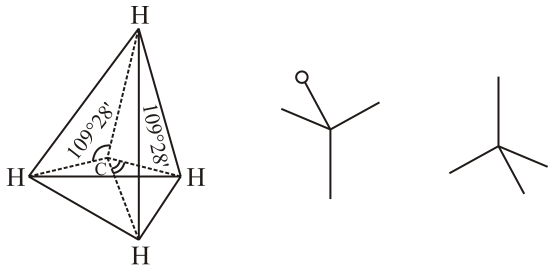

मेथेन (CH_4)

सुविधा के लिए कार्बन की चारों संयोजकताएँ समतल में —C— (ऊपर व नीचे एक-एक बंध सहित) द्वारा प्रदर्शित की जाती है।

कार्बन परमाणु की चारों संयोजकताएँ समान होती हैं- जब **हेनरी** ने मेथेन अणु में बारी-बारी से चारों हाइड्रोजन परमाणुओं का विस्थापन— NO_2 मूलक द्वारा करके चार यौगिक प्राप्त किए तो पाया कि यह चारों यौगिक भिन्न-भिन्न नहीं हैं बल्कि एक ही यौगिक हैं। इससे स्पष्ट होता है कि कार्बन की चारों संयोजकताएँ समान होती हैं और कार्बन परमाणु के प्रति सममित (symmetrical) रूप से स्थित होती हैं।

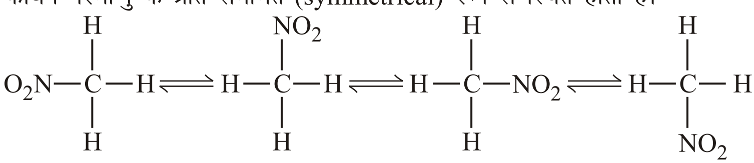

प्रश्न 5. ऐरोमैटिक यौगिकों से आप क्या समझते हैं? इस श्रेणी का प्रथम मूल्यवान यौगिक कौन-सा है? इसका संरचना सूत्र लिखिए। इनमें तथा ऐलिफैटिक यौगिकों में अंतर समझाइए।

उत्तर- ऐरोमैटिक यौगिक- वे सभी कार्बनिक यौगिक जिनकी संवृत शृंखला में 6-कार्बन परमाणु हो तथा एकांतर क्रम में द्विबंध हों, ऐरोमैटिक यौगिक कहलाते हैं; जैसे—

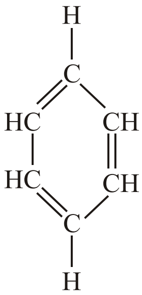
बेंजीन

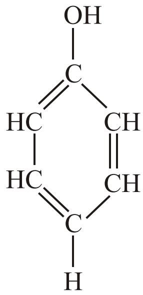
फीनोल

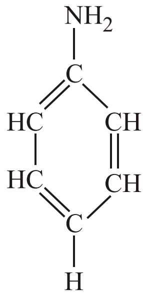
ऐनिलीन

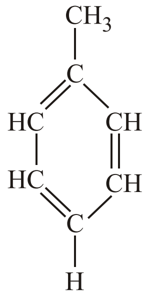
टॉलूईन

ऐरोमैटिक यौगिक का प्रथम मूल्यवान यौगिक बेंजीन है; इसका संरचनात्मक सूत्र है—

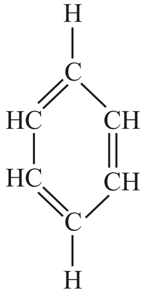
बेंजीन

ऐरोमैटिक यौगिक तथा ऐलिफैटिक यौगिकों में अंतर

क्र०सं०	ऐरोमैटिक यौगिक	ऐलिफैटिक यौगिक
1.	ऐरोमैटिक यौगिक संवृत श्रृंखलायुक्त यौगिक है।	ऐलिफैटिक यौगिक विवृत श्रृंखलायुक्त यौगिक है।
2.	सामान्यत: ऐरोमैटिक यौगिक जलाने पर धुएँदार ज्वाला के साथ जलते हैं।	सामान्यत: ऐलिफैटिक यौगिक जलाने पर धुएँदार ज्वाला से नहीं जलते हैं।
3.	ऐरोमैटिक यौगिक में एकल तथा द्वि-बंध एकांतर क्रम में होते हैं।	ऐलिफैटिक यौगिक में एकल तथा द्वि-बंध का क्रम निश्चित नहीं है।
4.	ऐरोमैटिक यौगिक कम क्रियाशील होते हैं।	ऐलिफैटिक यौगिक अधिक क्रियाशील होते हैं।
5.	ऐरोमैटिक यौगिक में सल्फोनीकरण, नाइट्रीकरण आदि प्रतिस्थापित अभिक्रियाएँ सरलता से होती हैं।	ऐलिफैटिक यौगिक में प्रतिस्थापन अभिक्रियाएँ सरलता से नहीं होती हैं।
6.	ऐरोमैटिक यौगिक में एक विशेष प्रकार की गंध होती है।	ऐलिफैटिक यौगिक में विशेष प्रकार की गंध होना आवश्यक नहीं है।

प्रश्न 6. समूह या मूलक से आप क्या समझते हैं? अभिक्रियात्मक समूह का क्या तात्पर्य है?

उत्तर- समूह या मूलक- किसी कार्बनिक यौगिक की संरचना को देखकर उसे दो या दो से अधिक भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रत्येक भाग एक परमाणु या परमाणुओं के समूह को प्रदर्शित करता है। किसी यौगिक की संरचना में उपस्थित वे परमाणु या परमाणुओं के वे समूह, जिनके अपने विशेष गुण होते हैं, समूह या मूलक कहलाते हैं; जैसे—

(i) एथिल ऐल्कोहॉल के एक अणु में एक एथिल तथा एक ऐल्कोहॉली समूह उपस्थित होते हैं।

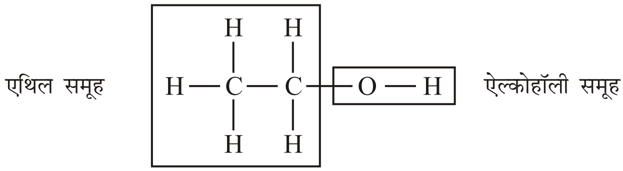

(ii) ऐसीटिक अम्ल के एक अणु में एक मेथिल तथा एक कार्बोक्सिल समूह उपस्थित होते हैं—

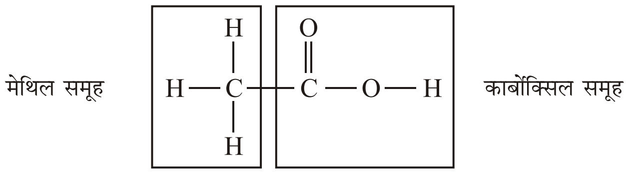

(iii) मेथिल क्लोराइड के एक अणु में एक मेथिल तथा एक क्लोरो समूह उपस्थित हैं—

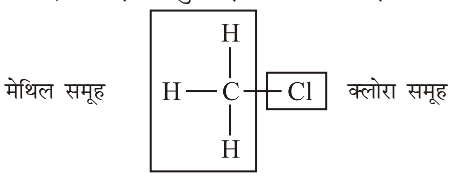

अभिक्रियात्मक समूह– कार्बनिक यौगिक में दो भाग होते हैं। इनमें से प्रत्येक भाग को **समूह** या **मूलक** कहा जाता है। इन दोनों मूलकों में से एक के द्वारा यौगिक के रासायनिक गुणधर्म प्रभावित होते हैं, जबकि दूसरे मूलक द्वारा यौगिक हैं। **उदाहरणार्थ**— मेथिल ऐल्कोहॉल (CH_3OH) में $—OH$ तथा मेथिल ऐमीन (CH_3NH_2) में $—NH_2$ क्रियात्मक समूह हैं।

अत: किसी परमाणु या परमाणुओं का वह समूह जो कार्बनिक यौगिकों के विशिष्ट वर्ग के गुणों का निर्धारण करता है, उसे **क्रियात्मक समूह** कहते हैं। क्रियात्मक समूह के अतिरिक्त कार्बनिक यौगिकों के अणु में एक अन्य मूलक भी होता है, जिसे **ऐल्किल मूलक** कहते हैं। **उदाहरणार्थ**— मेथेन (CH_4) तथा एथेन (C_2H_6) संतृप्त हाइड्रोकार्बन से क्रमश: मेथिल ($—CH_3$) तथा एथिल ($—C_2H_5$) ऐल्किल मूलक प्राप्त होते हैं।

प्रश्न 7. सजातीय श्रेणी किसे कहते हैं? सोदाहरण समझाइए। सजातीय श्रेणी की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए। या

सजातीय श्रेणी पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- सजातीय श्रेणी– कार्बनिक यौगिकों की वह श्रेणी, जिसमें कार्बनिक यौगिकों को अणु भार के बढ़ते हुए क्रम में रखा गया हो, जिसके प्रत्येक सदस्य में समान क्रियात्मक समूह उपस्थित हो तथा जिसके दो क्रमागत सदस्यों के अणु सूत्रों में केवल CH_2 का अंतर हो, सजातीय श्रेणी कहलाती है।

किसी सजातीय श्रेणी का प्रत्येक सदस्य अन्य सदस्यों का समजात कहलाता है।

सजातीय श्रेणी की प्रमुख विशेषताएँ– सजातीय श्रेणी की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(i) किसी सजातीय श्रेणी के सभी सदस्यों को एक सामान्य सूत्र से प्रदर्शित किया जा सकता है।

(ii) किसी सजातीय श्रेणी के सभी सदस्यों को एक जैसी विधियों द्वारा बनाया जा सकता है।

(iii) किसी सजातीय श्रेणी के सदस्यों के भौतिक स्थिरांक उनके अणु भारों की वृद्धि के साथ क्रम से बढ़ते या घटते हैं।

(iv) समान क्रियात्मक समूह उपस्थित होने के कारण किसी सजातीय श्रेणी के सभी सदस्यों के अधिकांश रासायनिक गुण समान होते हैं। कुछ सजातीय श्रेणियों के प्रथम तथा अन्य सदस्यों के रासायनिक गुणों में अधिक अंतर होता है।

कार्बनिक रसायन के अध्ययन में सजातीय श्रेणियों का महत्व अत्यधिक है। सजातीय श्रेणियों की संकल्पना से कार्बनिक रसायन के अध्ययन को सरल बनाने में अत्यंत सहायता मिली है। जैसा कि सजातीय श्रेणियों की विशेषताओं से स्पष्ट है, किसी सजातीय श्रेणी के प्रारंभिक सदस्यों का अध्ययन कर लेने पर शेष सभी सदस्यों के बनाने की विधियों तथा गुणधर्मों का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार 20 लाख से अधिक कार्बनिक यौगिकों का अध्ययन कुछ सजातीय श्रेणियों के अध्ययन तक सीमित रह गया है।

कुछ प्रमुख सजातीय श्रेणियों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित हैं—

(i) ऐल्किन श्रेणी– इस श्रेणी के सदस्यों का सामान्य सूत्र C_nH_{2n+2} है। इस श्रेणी के सदस्यों को ऐल्केन, पैराफिन या ऐलिफैटिक संतृप्त हाइड्रोकार्बन कहते हैं। इस श्रेणी का प्रथम सदस्य मेथेन (CH_4) तथा द्वितीय सदस्य एथेन (C_2H_6) है।

n का मान	अणुसूत्र	यौगिक का नाम
1	CH_4	मेथेन
2	C_2H_6	एथेन
3	C_3H_8	प्रोपेन
4	C_4H_{10}	ब्यूटेन
5	C_5H_{12}	पेण्टेन

किसी ऐल्केन के एक अणु में से एक हाइड्रोजन परमाणु हटा देने पर प्राप्त परमाणुओं के समूह को ऐल्किल समूह कहते हैं। ऐल्किल समूह को R से प्रदर्शित करते हैं। इस आधार पर ऐल्केनों का सामान्य सूत्र RH भी है।

कुछ ऐल्किल समूहों की संरचनाएँ तथा नाम निम्नलिखित हैं—

$—CH_3$	$—C_2H_5$	$—C_3H_7$
मेथिल समूह	एथिल समूह	प्रोपिल समूह

(ii) ऐल्कीन श्रेणी – इस श्रेणी के सदस्यों का सामान्य सूत्र C_nH_{2n} है। इस श्रेणी के सदस्यों को ऐल्कीन या ओलीफिन कहते हैं। इस श्रेणी के प्रत्येक सदस्य की संरचना में एक कार्बन–कार्बन द्वि-बंध उपस्थित होता है।

n का मान	अणुसूत्र	यौगिक का नाम	यौगिक की संरचना
2	C_2H_4	एथीन या एथिलीन	$CH_2 = CH_2$
3	C_3H_6	प्रोपीन या प्रोपिलीन	$CH_3 — CH = CH_2$

(iii) ऐल्काइन श्रेणी – इस श्रेणी के सदस्यों का सामान्य सूत्र C_nH_{2n-2} है। इस श्रेणी के सदस्यों को ऐल्काइन कहते हैं। इस श्रेणी के प्रत्येक सदस्य की संरचना में एक कार्बन–कार्बन त्रि-बंध उपस्थित होता है।

n का मान	अणुसूत्र	यौगिक का नाम	संरचना
2	C_2H_2	ऐसीटिलीन या एथाइन	CH CH
3	C_3H_4	प्रोपाइन	CH_3 — C CH

प्रश्न 8. चक्रीय यौगिक कितने प्रकार के होते हैं? प्रत्येक का एक-एक उदाहरण एवं सूत्र लिखिए।

उत्तर- **चक्रीय यौगिक-** वे सभी कार्बनिक यौगिक, जिनमें कार्बन परमाणु एक बंद शृंखला या चक्र के रूप में प्रतिबंधित रहते हैं, संवृत शृंखला या चक्रीय यौगिक कहलाते हैं। इन्हें पुन: दो वर्गों में विभाजित किया गया है—

(a) समचक्रीय या कार्बोचक्रीय यौगिक

(b) विषमचक्रीय यौगिक

(a) समचक्रीय या कार्बोचक्रीय यौगिक- इन चक्रीय कार्बनिक यौगिक में संवृत शृंखला बनाने के लिए केवल कार्बन परमाणु ही काम में आते हैं अर्थात् इन कार्बनिक यौगिकों की बंद शृंखला में कार्बन के अतिरिक्त कोई अन्य तत्व भाग नहीं ले सकता है। ये कार्बनिक यौगिक भी दो प्रकार के होते हैं—

(I) ऐरोमैटिक यौगिक

(II) ऐलिसाइक्लिक यौगिक

(I) ऐरोमैटिक यौगिक- वे सभी कार्बनिक यौगिक जिनकी संवृत शृंखला में 6-कार्बन परमाणु हों तथा एकान्तर क्रम में द्विबंध हो, ऐरौमैटिक यौगिक कहलाते हैं; **उदाहरणार्थ**—

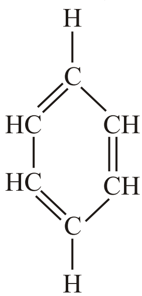

बेंजीन

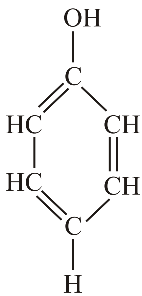

फीनोल

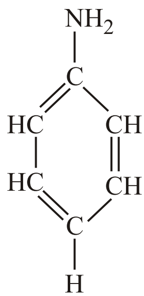

ऐनिलीन

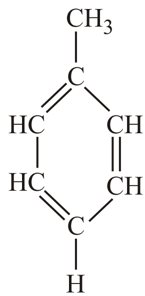

टॉलूईन

(II) ऐलिसाइक्लिक यौगिक – वे संवृत शृंखला वाले कार्बनिक यौगिक, जिनके गुण ऐलिफैटिक यौगिकों के समान होते हैं अर्थात् इनके बंद चक्र में छह कार्बन परमाणुओं का होना आवश्यक नहीं है और न ही इनमें एकांतर क्रम में द्विबंध एवं एकल बंध होते हैं, **ऐलिसाइक्लिक यौगिक** कहते हैं। **उदाहरणार्थ**—

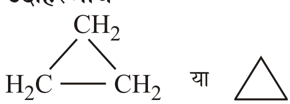

साइक्लोप्रोपेन

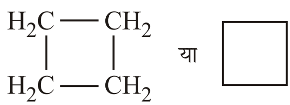

साइक्लोब्यूटेन

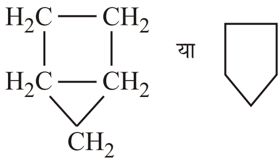

साइक्लोपेन्टेन

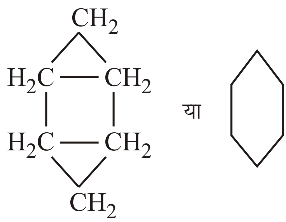

साइक्लोहेक्सेन

(b) विषमचक्रीय यौगिक (Heterocyclic compounds)- वे चक्रीय यौगिक, जिनकी संवृत श्रृंखला में कार्बन के अतिरिक्त अन्य तत्व के परमाणु भी भाग लेते हैं, **विषमचक्रीय यौगिक** कहलाते हैं।

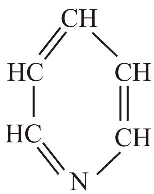

पिरिडीन

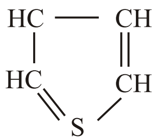

थायोफीन

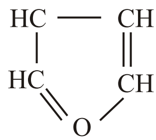

फ्यूरॉन

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जैव-शक्ति सिद्धांत पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- जैव-शक्ति सिद्धांत- फ्रांसीसी वैज्ञानिक बर्जीलियस (Berzelius) से पहले तक वैज्ञानिक जैव-जगत से प्राप्त यौगिकों में से किसी भी यौगिक को प्रयोगशाला में संश्लेषित नहीं कर सके थे, इसलिए यह धारणा बन गई कि जैव-जगत से प्राप्त होने वाले यौगिकों का निर्माण प्रयोगशाला में नहीं किया जा सकता है। बर्जीलियस ने इस धारणा पर आधारित **जैवशक्ति सिद्धांत** का प्रतिपादन किया। इस सिद्धांत के अनुसार, **जैव-जगत से प्राप्त होने वाले यौगिकों के निर्माण में जैवशक्ति की उपस्थिति आवश्यक है।**

जैवशक्ति, जीवित जंतुओं तथा पौधों की कोशिकाओं एवं तंतुओं में ही रहती है; इसलिए इन यौगिकों का निर्माण इन कोशिकाओं और तंतुओं द्वारा ही हो सकता है; अत: वैज्ञानिक इन यौगिकों का निर्माण नहीं कर सकते थे। केवल जैव-जगत से ही प्राप्त होने वाले यौगिक **कार्बनिक यौगिक** कहलाए। रसायनशास्त्र की वह शाखा जिसके अन्तर्गत इन कार्बनिक यौगिकों का अध्ययन किया गया, **कार्बनिक रासयन** कहलाई। दूसरी ओर रसायनशास्त्र की वह शाखा, जिसके अन्तर्गत पृथ्वी से खनिज के रूप में प्राप्त होने वाले तथा प्रयोगशाला में बनाए जाने वाले यौगिकों का अध्ययन तो सरल हो गया, किन्तु कार्बनिक रसायन का क्षेत्र केवल जैव-जगत से प्राप्त यौगिकों तक ही सीमित रह गया; अतएव वैज्ञानिकों की रूचि कार्बनिक रसायन की जगह अकार्बनिक रसायन की ओर ही बढ़ने लगी। 1828 ई० में जब जर्मन वैज्ञानिक **फ्रेडरिक वोहलर** प्रयोगशाला में अमोनियम सायनेट यौगिक के गुणों का अध्ययन कर रहे थे, तो सौभाग्यवश अमोनियम सायनेट को गर्म करने में उन्हें यूरिया प्राप्त हो गया, जो कि एक कार्बनिक यौगिक है।

$$\underset{\text{अमोनियम सायनेट}}{NH_4CNO} \xrightarrow{\text{गर्म}} \underset{\text{यूरिया}}{H_2NCONH_2}$$

यूरिया के निर्माण के पश्चात् जैवशक्ति सिद्धांत का अंत हो गया। अब वैज्ञानिकों ने फिर से कार्बनिक रसायन की ओर अपना ध्यान केंद्रित किया। फिर जल्दी ही कोल्बे तथा बर्थेलो आदि वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में ऐसीटिक अम्ल, मेथेन आदि कार्बनिक यौगिकों का निर्माण कर लिया। ज्ञात यौगिकों के विश्लेषण से यह पता चला कि कुछ यौगिको में कार्बन तत्व पाया जाता है, जबकि कुछ यौगिक कार्बनरहित होते हैं। वैज्ञानिकों ने इस आधार पर कार्बनयुक्त यौगिकों को कार्बनिक यौगिक तथा कार्बनरहित यौगिकों को अकार्बनिक यौगिक कहा।

प्रश्न 2. सजातीय श्रेणी से आप क्या समझते हैं? इसकी प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर– इसके लिए 'दीर्घ उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न संख्या 7 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. क्रियात्मक समूह किसे कहते हैं? ऐल्कोहॉली, ऐल्डीहाइडी, कीटोनी तथा कार्बोक्सिल समूहों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर– **क्रियात्मक समूह–** कार्बनिक यौगिक में दो भाग होते हैं। इनमें से प्रत्येक भाग को समूह या मूलक कहते हैं। इन दोनों मूलकों में से एक के द्वारा यौगिक के रासायनिक गुणधर्म प्रभावित होते हैं, जबकि दूसरे मूलक द्वारा यौगिक के भौतिक गुणधर्म प्रभावित होते हैं। जिस मूलक द्वारा यौगिक के रासायनिक गुणों की पहचान होती है, उसे क्रियात्मक समूह कहते हैं; जैसे– मेथिल ऐल्कोहॉल (CH_3OH) में $—OH$ तथा मेथिल ऐमीन (CH_3NH_2) में $—NH_2$ क्रियात्मक समूह हैं।

स्पष्टत: किसी परमाणु या परमाणुओं का वह समूह जो कार्बनिक यौगिकों के विशिष्ट वर्ग के गुणों का निर्धारण करता है, उसे क्रियात्मक समूह कहते हैं। क्रियात्मक समूह के अतिरिक्त कार्बनिक यौगिकों के अणु में एक अन्य मूलक भी होता है, जिसे ऐल्किल मूलक कहते हैं।

ऐल्कोहॉली समूह– ऐल्केनों के हाइड्रॉक्सी यौगिक को ऐल्कोहॉल कहते हैं। जिन यौगिकों में ऐल्केन का एक हाइड्रोजन परमाणु एक हाइड्रॉक्सिल मूलक द्वारा प्रतिस्थापित होता है, उन्हें मोनो-हाइड्रिक ऐल्कोहॉल कहा जाता है। इनका सामान्य सूत्र $C_nH_{2n+1}—OH$ अथवा ROH होता है तथा इनका अभिक्रियात्मक समूह $—OH$ है। ऐल्कोहॉलों के साधारण नाम उनमें पाए जाने वाले ऐल्किल मूलकों के आधार पर रखे गए हैं। इनके आई०यू०पी०ए०सी० नाम उन ऐल्केनों के आधार पर रखे जाते हैं जिनके ये व्युत्पन्न होते हैं। ऐल्केन के नाम में अन्तिम **–न** को **–नॉल** में बदल दिया जाता है। इस श्रेणी के कुछ विशेष यौगिक निम्नलिखित सारणी में दिए गए हैं–

सूत्र	CH_3OH	C_2H_5OH	C_3H_7OH	C_4H_9OH
साधारण	मेथिल ऐल्कोहॉल	ऐथिल ऐल्कोहॉल	प्रोपिल ऐल्कोहॉल	ब्यूटिल ऐल्कोहॉल
आई०यू०पी०ए०सी० नाम	मेथेनॉल	एथेनॉल	प्रोपेनॉल	ब्यूटेनॉल

ऐल्डीहाइडी समूह– इनका सामान्य सूत्र $RCH{=}O$ या RCHO है जिसमें $—CH{=}O$ या $—CHO$ अभिक्रयात्मक समूह है।

ऐल्डिहाइडों के साधारण नाम इनके ऑक्सीकरण द्वारा प्राप्त हुए अम्लों के नामों से अम्ल हटाकर ऐल्डिहाइड (aldehyde) जोड़ने से प्राप्त होते हैं। आई०यू०पी०ए०सी० प्रणाली पर आधारित नाम के अनुरूप ऐल्केनों के नामों के साथ अनुलग्न अल (al) जोड़कर प्राप्त होते हैं। इसके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

सूत्र	संगत अम्ल	साधारण नाम	आई०यू०पी० ए०सी० नाम
$H-CH=O \xrightarrow{[O]}$	HCOOH फॉर्मिक अम्ल	फॉर्मेल्डिहाइड	मेथेनल
$CH_3-CH=O \xrightarrow{[O]}$	CH_3COOH ऐसीटिक अम्ल	ऐसेटेल्डिहाइड	एथेनल
$C_2H_5-CH=O \xrightarrow{[O]}$	C_2H_5COOH प्रोपिऑनिक अम्ल	प्रोपिऑन-ऐल्डिहाइड	प्रोपेनल

कीटोनी समूह– इनका सामान्य सूत्र $\begin{matrix} R \\ R \end{matrix} > C=O$ है तथा अभिक्रियात्मक समूह $>C=O$ है। ईथर की तरह कीटोन भी सरल या मिश्रित होते हैं। इस श्रेणी के यौगिकों के नाम प्राय: कीटोनिक समूह में संयुक्त ऐल्किल मूलकों के नामों के आधार पर रखे जाते हैं। आई०यू०पी०ए०सी० प्रणाली के अनुसार कीटोन को ओन अनुलग्न द्वारा सूचित किया जाता है। यह अनुलग्न अनुरूप हाइड्रोकार्बन के नामों के पीछे जोड़ दिया जाता है। कुछ विशेष यौगिकों के नाम नीचे दिए गए हैं—

सूत्र	साधारण नाम	आई०यू०पी०ए०सी० नाम
$\begin{matrix} CH_3 \\ CH_3 \end{matrix} > C=O$	डाइ-मेथिल कीटोन या ऐसीटोन (सरल)	प्रोपेनोन

कार्बोक्सिल समूह– वसा अम्लों का अभिक्रियात्मक समूह $-COOH$ है और इनका सामान्य सूत्र RCOOH है। इनके आई०यू०पी०ए०सी० नाम अनुरूप ऐल्केनों के नामों के पीछे **ओइक अम्ल** जोड़ने से प्राप्त होते हैं—

सूत्र	साधारण नाम	आई०यू०पी०ए०सी० नाम
HCOOH	फॉर्मिक अम्ल	मेथेनोइक अम्ल
CH_3COOH	ऐसीटिक अम्ल	ऐथेनोइक अम्ल
C_2H_5COOH	प्रोपिऑनिक अम्ल	प्रोपेनोइक अम्ल
C_2H_7COOH	ब्यूटिरिक अम्ल	ब्यूटेनोइक अम्ल

प्रश्न 4. रासायनिक यौगिकों का वर्गीकरण क्यों आवश्यक समझा गया था?

उत्तर– रासायनिक पदार्थों का प्रयोग मनुष्य प्राचीन काल से ही करता आ रहा है। शर्करा, शराब, सिरका, यूरिया, माँडी, कपूर, नीला थोथा, शोरा, पोटाश, नौसादर आदि का प्रयोग भारत में प्राचीनकाल से ही होता रहा है। परन्तु मानव की प्रगति के साथ-साथ उसके विज्ञान संबंधी ज्ञान में भी वृद्धि हुई और प्रयोग में आने वाले रासायनिक पदार्थों के निर्माण में भी वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप वैज्ञानिकों को यौगिकों का अध्ययन जटिल लगने लगा और वे यौगिकों को वर्गीकृत करने के लिए प्रेरित हुए।

अत: रासायनिक यौगिकों का वर्गीकरण आवश्यक समझा गया।

प्रश्न 5. समचक्रीय और विषमचक्रीय यौगिक क्या हैं? किसी एक समचक्रीय तथा विषमचक्रीय यौगिक का संरचना सूत्र लिखिए।

उत्तर– **समचक्रीय यौगिक–** इन यौगिकों को कार्बोचक्रीय यौगिक भी कहा जाता है। इन यौगिकों में संवृत शृंखला बनाने के लिए केवल कार्बन परमाणु ही काम में आते हैं अर्थात्

इन कार्बनिक यौगिकों की बंद शृंखला में कार्बन के अतिरिक्त कोई अन्य तत्व भाग भी नहीं ले सकता है। ये कार्बनिक यौगिक दो प्रकार के होते हैं— ऐरोमैटिक यौगिक व ऐलिसाइक्लिक यौगिक। बेंजीन एक समचक्रीय ऐरोमैटिक यौगिक है। इसका संरचना सूत्र है—

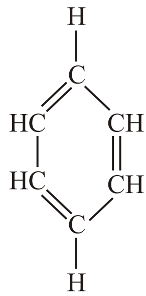

बेंजीन

विषमचक्रीय यौगिक– वे चक्रीय यौगिक, जिनकी संवृत शृंखला में कार्बन के अतिरिक्त अन्य तत्व के परमाणु भी भाग लेते हैं, विषमचक्रीय यौगिक कहलाते हैं।

पिरिडीन एक विषमचक्रीय यौगिक है। इसका संरचनात्मक सूत्र है—

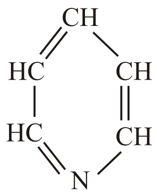

पिरिडीन

प्रश्न 6. कार्बन परमाणु की चतुष्फलकीय प्रकृति को आरेख बनाकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या-4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 7. विवृत शृंखला वाले यौगिक क्या हैं? इनकी विशेषताएँ तथा उदाहरण लिखिए।

उत्तर– **विवृत शृंखला या ऐलिफैटिक यौगिक–** वे सभी कार्बनिक यौगिक, जिनके अणुओं में कार्बन के सभी परमाणु खुली शृंखला में सीधे या शाखायुक्त रूप में व्यवस्थित होते हैं, **विवृत शृंखला** या **ऐलिफैटिक यौगिक** कहलाते हैं। **उदाहरणार्थ**—

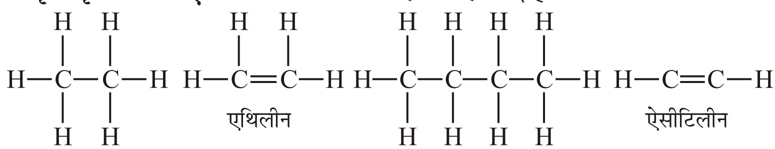

एथेन एथिलीन ब्यूटेन ऐसीटिलीन

ऐलिफैटिक यौगिक संतृप्त तथा असंतृप्त दोनों प्रकार के होते हैं; जैसे— एथेन तथा ब्यूटेन संतृप्त यौगिक हैं और ऐसीटिलीन असंतृप्त यौगिक है।

विवृत शृंखला वाले यौगिकों की विशेषताएँ– इस प्रकार के यौगिकों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(i) विवृत शृंखला वाले यौगिक अधिक क्रियाशील होते हैं।
(ii) सामान्यत: ये धुआँ देकर नहीं जलते हैं।
(iii) इनमें प्रतिस्थापन अभिक्रियाएँ आसानी से नहीं होती हैं।
(iv) इस शृंखला के यौगिकों में एकल तथा द्विबंधों का क्रम निश्चित नहीं है।

प्रश्न 8. कार्बन परमाणु की चारों संयोजकताएँ समान होती हैं। इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 9. सजातीय श्रेणी के दो लक्षण लिखिए।

उत्तर– सजातीय श्रेणी के दो प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं—

(i) किसी सजातीय श्रेणी के सभी सदस्यों को एक सामान्य सूत्र से प्रदर्शित किया जा सकता है।

(ii) किसी सजातीय श्रेणी के सभी सदस्यों को एक जैसी विधियों द्वारा बनाया जा सकता है।

प्रश्न 10. ऐल्किल समूह किसे कहते हैं? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- **ऐल्किल समूह अथवा मूलक-** किसी ऐल्केन के अणु में से एक हाइड्रोजन परमाणु हटा देने के बाद बचे एक-संयोजक मूलक को ऐल्किल मूलक कहते हैं और इसे *R* चिह्न द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

किसी ऐल्किल मूलक का नाम रखने के लिए इसके अनुरूप ऐल्केन के नाम से **एन** (ane) अनुलग्न हटाकर **इल** (yl) जोड़ देते हैं। **उदाहरणार्थ**—

ऐल्केन		ऐल्किल मूलक	
CH_4	मेथेन	$—CH_3$	मेथिल
C_2H_6	एथेन	$—C_2H_5$	एथिल
C_3H_8	प्रोपेन	$—C_3H_7$	प्रोपिल
C_4H_{10}	ब्यूटेन	$—C_4H_9$	ब्यूटिल

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 159 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. कार्बन परमाणु की सम चतुष्फलकीय प्रकृति का अध्ययन करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

16 कार्बनिक यौगिक

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. संतृप्त तथा असंतृप्त हाइड्रोकार्बन से आप क्या समझते हैं? इनमें प्रमुख अंतर बताइए। या

संतृप्त तथा असंतृप्त हाइड्रोकार्बन में क्या अंतर है? उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिए। या

ऐल्केन, ऐल्कीन तथा ऐल्काइन से आप क्या समझते हैं? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- केवल कार्बन व हाइड्रोजन के संयोग से बनने वाले कार्बनिक यौगिक, हाइड्रोकार्बन कहलाते हैं; जैसे– CH_4, C_2H_6, C_2H_4, C_2H_2 आदि।

हाइड्रोकार्बन दो प्रकार के होते हैं–

(i) संतृप्त हाइड्रोकार्बन– वे हाइड्रोकार्बन जिनके अणुओं में उपस्थित कार्बन परमाणुओं में से प्रत्येक की चारों संयोजकताएँ, एकल बंधों (single bonds) द्वारा संतुष्ट होती हैं, संतृप्त हाइड्रोकार्बन कहलाते हैं। **उदाहरणार्थ–**

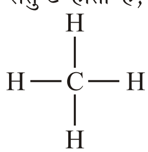
मेथेन

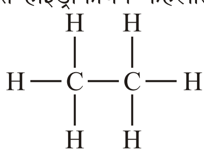
एथेन

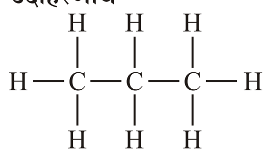
प्रोपेन

इनका सामान्य अणुसूत्र C_nH_{2n+2} होता है।

इस श्रेणी के यौगिकों को ऐल्केन अथवा पैराफिन भी कहते हैं। ये कम क्रियाशील होते हैं, परन्तु प्रतिस्थापित यौगिक बनाते हैं।

(ii) असंतृप्त हाइड्रोकार्बन– ऐसे हाइड्रोकार्बन जिनके अणुओं में उपस्थित कार्बन परमाणुओं के आपस में एक-एक संयोजकता बंध (bond) बनाने के बाद कार्बन परमाणुओं की शेष संयोजकताओं को पूर्णतया सन्तुष्ट करने हेतु हाइड्रोजन परमाणु उपलब्ध नहीं होते हैं और अणु में उपस्थित दो कार्बन परमाणुओं को आपस में द्वि-बंध (double bond) या त्रि-बंध (triple bond) बनाना पड़ता है, असंतृप्त हाइड्रोकार्बन कहलाते हैं। **उदाहरणार्थ–**

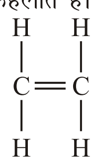
एथिलीन

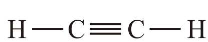
ऐसीटिलीन

असंतृप्त हाइड्रोकार्बन को पुन: दो भागों में विभाजित किया गया है–

(a) **ओलीफिन या ऐल्कीन–** इनमें दो कार्बन परमाणुओं के बीच एक द्वि–बंध होता है, ये एथिलीन श्रेणी के हाइड्रोकार्बन कहलाते हैं। इनका सामान्य सूत्र C_nH_{2n} होता है।

(b) **ऐसीटिलीन या ऐल्काइन–** इनमें दो कार्बन परमाणुओं के बीच एक त्रि–बंध होता है, ये ऐसीटिलीन श्रेणी के हाइड्रोकार्बन कहलाते हैं। इनका सामान्य सूत्र C_nH_{2n-2} होता है।

असंतृप्त यौगिक संतृप्त यौगिकों की अपेक्षा अधिक क्रियाशील होते हैं तथा योगशील यौगिक बनाते हैं।

संतृप्त तथा असंतृप्त हाइड्रोकार्बन में अंतर–

क्र०सं०	संतृप्त हाइड्रोकार्बन	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन
1.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन अत्यधिक स्थाई या कम क्रियाशील होते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन अस्थाई या अधिक क्रियाशील होते हैं।
2.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन प्रतिस्थापित यौगिक बनाते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन शीघ्र ही योगशील यौगिक बनाते हैं।
3.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन क्षारीय $KMnO_4$ विलयन के प्रति उदासीन होते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन क्षारीय $KMnO_4$ विलयन को रंगहीन कर देते हैं।
4.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन ब्रोमीन जल का रंग नहीं उड़ाते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन ब्रोमीन जल का रंग उड़ा देते हैं।
5.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन ओजोन के साथ क्रिया करके ओजोनाइड नहीं बनाते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन ओजोन के साथ अभिक्रिया करके ओजोनाइड बनाते हैं।

प्रश्न 2. प्रयोगशाला में मेथेन बनाने की क्रिया विधि का सचित्र वर्णन कीजिए तथा आवश्यक समीकरण भी लिखिए। या

ऐल्केन श्रेणी के प्रथम सदस्य को प्रयोगशाला में बनाने की विधि का सचित्र एवं रासायनिक समीकरण सहित वर्णन कीजिए।

उत्तर– **मेथेन (Methane)**

अणु सूत्र : CH_4

संरचनात्मक सूत्र :

$$\begin{array}{ccccc} & & H & & \\ & & | & & \\ H & — & C & — & H \\ & & | & & \\ & & H & & \end{array}$$

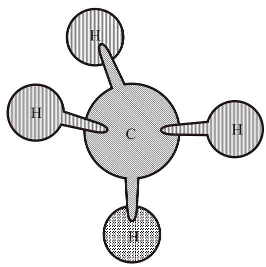

मेथेन अणु

प्राप्ति स्थान– मेथेन श्रेणी का प्रथम सदस्य है। **मेथेन प्रकृति में दलदली (marshy) स्थानों में पाई जाने के कारण मार्श गैस (marsh gas) कहलाती है।** यह कार्बनिक पदार्थों के गलने–सड़ने के स्थान पर पाई जाती है। कोयले की खानों से निकलने वाली गैसों में इसकी मात्रा 40% तक होती है जिसके कारण उनमें प्राय: आग लग जाती है। अत: इसे fire damp भी कहते हैं। मेथेन आँतों में बनने वाली गैसों में भी होती है। ज्वालामुखी से निकलने वाली गैसों में भी मेथेन मिश्रित रहती है। पेट्रोलियम से निकलने वाली प्राकृतिक गैस में मेथेन गैस 90% तक होती है तथा कोल गैस में 35-45% तक पाई जाती है।

प्रयोगशाला में मेथेन निर्माण की विधियाँ– प्रयोगशाला में मेथेन का निर्माण करने के लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाता है—

(i) सोडियम ऐसीटेट से– प्रयोगशाला में मेथेन गैस को निर्जल सोडियम ऐसीटेट तथा सोडालाइम के मिश्रण को गर्म करके बनाया जा सकता है। इस मिश्रण में सोडियम ऐसीटेट तथा सोडालाइम को लगभग 1 : 2 के अनुपात में लेते हैं।

सोडालाइम एक भाग कॉस्टिक सोडा तथा तीन भाग बुझे हुए चूने को गर्म करके बनाया जाता है। इसमें NaOH तथा CaO होते हैं। NaOH अभिक्रिया में भाग लेता है तथा CaO अभिक्रिया के लिए प्रयुक्त काँच के उपकरण को NaOH द्वारा खराब होने से बचाता है।

$$\underset{\text{सोडियम ऐसीटेट}}{CH_3COONa} + NaOH \xrightarrow{CaO} Na_2CO_3 + \underset{\text{मेथेन}}{CH_4}$$

इस विधि से प्राप्त मेथेन गैस को पानी के ऊपर एकत्रित करते हैं। इसमें एथिलीन और हाइड्रोजन गैस अशुद्धियों के रूप में उपस्थित रहती हैं। अशुद्धियों को दूर करने के लिए अशुद्ध गैस को पोटैशियम परमैंगनेट के विलयन में से प्रवाहित करते हैं। इस प्रकार शुद्ध मेथेन गैस प्राप्त हो जाती है।

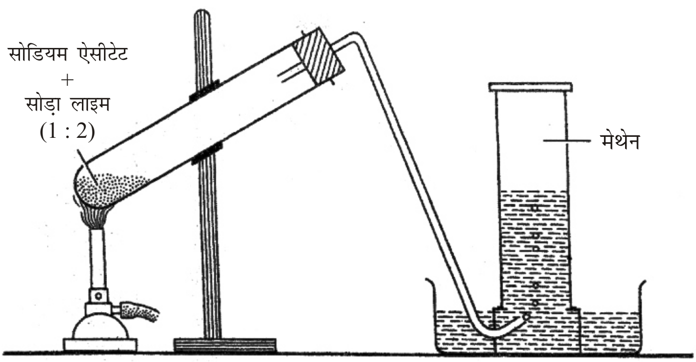

सोडियम ऐसीटेट से मेथेन बनाने की प्रयोगशाला विधि

(ii) मेथिल आयोडाइड से– प्रयोगशाला में मेथेन गैस को मेथिल आयोडाइड के अपचयन से भी प्राप्त किया जाता है। नवजात हाइड्रोजन द्वारा मेथिल आयोडाइड के अपचयन से मेथेन गैस प्राप्त होती है। नवजात हाइड्रोजन, ऐल्कोहॉल पर जिंक कॉपर युग्म की अभिक्रिया से उत्पन्न की जाती है। शुद्ध मेथेन गैस को जल के ऊपर एकत्रित करते हैं।

$$CH_3I + 2H \xrightarrow[CH_3OH]{Zn-Cu} CH_4 + HI$$

(iii) ऐलुमिनियम कार्बाहड से– ऐलुमिनियम कार्बाइड पर जल या तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की अभिक्रिया से कमरे के ताप पर ही मेथेन गैस प्राप्त हो जाती है। इसे जल के ऊपर एकत्रित कर लेते हैं। इसमें हाइड्रोजन गैस अशुद्धि के रूप में उपस्थित रहती है।

$$\underset{\text{ऐलुमिनियम कार्बाइड}}{Al_4C_3} + 12H_2O \longrightarrow \underset{\text{मेथेन}}{3CH_4} + 4Al(OH)_3$$

प्रश्न 3. सोडियम ऐसीटेट से कौन-सी गैस बनाई जाती है? प्रयोगशाला विधि का सचित्र वर्णन कीजिए और प्राप्त गैस की ओजोन और नाइट्रिक अम्ल के साथ अभिक्रिया का समीकरण दीजिए।

उत्तर– सोडियम ऐसीटेट की सहायता से मेथेन गैस का निर्माण किया जाता है। प्रयोगशाला में मेथेन गैस को प्राप्त करने के लिए निर्जल सोडियम ऐसीटेट तथा सोडालाइम के मिश्रण को गर्म किया जाता है। इस मिश्रण में सोडियम ऐसीटेट तथा सोडालाइम को 1 : 2 के अनुपात में लिया जाता है।

सोडालाइम, कॉस्टिक सोडा तथा बुझे हुए चूने को 1 : 3 के अनुपात में लेकर उसे गर्म करके प्राप्त किया जाता है। इसमें NaOH (कॉस्टिक सोडा) तथा CaO होते हैं। NaOH अभिक्रिया में भाग लेता है तथा CaO अभिक्रिया में प्रयुक्त काँच के उपकरण को NaOH द्वारा खराब होने से बचाता है।

$$\underset{\text{सोडियम ऐसीटेट}}{CH_3COONa} + NaOH \xrightarrow{CaO} Na_2CO_3 + \underset{\text{मेथेन}}{CH_4}$$

इस प्रकार प्राप्त मेथेन को पानी के ऊपर एकत्रित करते हैं। इसमें एथिलीन व हाइड्रोजन गैस अशुद्धियों के रूप में उपस्थित रहती हैं। इन अशुद्धियों को दूर करने के लिए अशुद्ध गैस को पोटैशियम परमैंगनेट के विलयन में से प्रवाहित करते हैं। अत: शुद्ध मेथेन गैस प्राप्त हो जाती है।

चित्र के लिए प्रश्न-2 का अवलोकन कीजिए।

मेथेन की ओजोन के साथ अभिक्रिया– मेथेन गैस ओजोन से अभिक्रिया करके फॉर्मेल्डिहाइड (HCHO) बनाती है–

$$\underset{\text{मेथेन}}{2CH_4} + \underset{\text{ओजोन}}{2O_3} \longrightarrow \underset{\text{फॉर्मेल्डिहाइड}}{2HCHO} + 2H_2O + O_2$$

मेथेन की नाइट्रिक अम्ल के साथ अभिक्रिया– मेथेन 400°C पर नाइट्रिक अम्ल के साथ अभिक्रिया करके नाइट्रो मेथेन बनाती है।–

$$CH_4 + HNO_3 \xrightarrow{400°C} \underset{\text{नाइट्रो मेथेन}}{CH_3NO_2} + H_2O$$

प्रश्न 4. एथिलीन के विरजन की प्रयोगशाला विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। रासायनिक अभिक्रियाओं के समीकरण भी लिखिए। या

प्रयोगशाला में एथिलीन गैस बनाने की विधि का सचित्र वर्णन कीजिए। आवश्यक समीकरण भी दीजिए।

उत्तर- एथिलीन बनाने की प्रयोगशाला विधि- प्रयोगशाला में एथिलीन, एथिल ऐल्कोहॉल तथा सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल के मिश्रण को 160-170°C पर गर्म करके प्राप्त की जाती है।

$$\underset{\text{एथिल ऐल्कोहॉल}}{C_2H_5OH} + \underset{\text{सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल}}{H_2SO_4} \longrightarrow \underset{\text{एथिल हाइड्रोजन सल्फेट}}{C_2H_5HSO_4} + H_2O$$

$$C_2H_5HSO_4 \xrightarrow{160\text{–}170°C} \underset{\text{एथिलीन}}{C_2H_4} + H_2SO_4$$

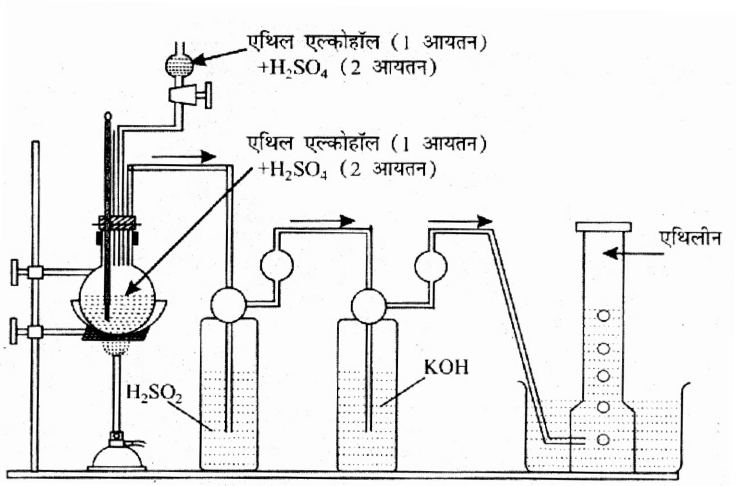

प्रयोगशाला में एथिलीन गैस बनाना

विधि- एक गोल पेंदी के फ्लास्क में एथिल ऐल्कोहॉल तथा सांद्र H_2SO_4 को 1 : 2 के अनुपात में लेते हैं तथा इसमें कुछ निर्जल ऐलुमिनियम सल्फेट मिलाते हैं। यह झाग रोकने के काम आता है। फलास्क को बालू ऊष्मक पर रखते हैं और 170°C तक गर्म करते हैं। इस प्रकार प्राप्त एथिलीन में CO_2, SO_2 तथा ऐल्कोहॉल की अशुद्धियाँ रहती हैं। CO_2 तथा SO_2 को दूर करने के लिए उन्हें NaOH व KOH के विलयन में प्रवाहित करते हैं। टपकाव कीप से ऐल्कोहॉल तथा सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) के 1 : 2 के अनुपात वाले मिश्रण को फ्लास्क में आवश्यकतानुसार टपकाते रहते हैं।

अब प्राप्त शुद्ध एथिलीन गैस को जल-विस्थापन विधि से गैस जार में एकत्रित कर लिया जाता है।

प्रश्न 5. एथिलीन के गुणों एवं उपयोगों का वर्णन कीजिए। या
एथिलीन से एथेन व एथिल ब्रोमाइड प्राप्त करने का समीकरण दीजिए।

उत्तर- एथिलीन के गुण-

(i) भौतिक गुण- एथिलीन के भौतिक गुण निम्नलिखित हैं—

(a) एथिलीन हल्की मीठी गंध वाली गैस है।
(b) इसके सूँघने से मूर्च्छा आ जाती है।
(c) यह जल में अल्प विलेय लेकिन ईथर, ऐल्कोहॉल आदि में अधिक विलेय है।
(d) एथिलीन दीप्तिमान लौ के साथ जलती है।

(e) द्रव एथिलीन का क्वथनांक $-104°C$ तथा ठोस एथिलीन का गलनांक $-169°C$ है।

(ii) एथिलीन (ऐथीन) के रासायनिक गुण– एथिलीन के रासायनिक गुण निम्न लिखित हैं–

(a) वायु में जलने पर– वायु में जलाने पर यह ऑक्सीजन से अभिक्रिया करके कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस तथा जल वाष्प बनाती है।

$$C_2H_4 + 3O_2 \longrightarrow 2CO_2 + 2H_2O$$

(b) योगात्मक अभिक्रियाएँ– एथिलीन के एक अणु में एक कार्बन–कार्बन द्वि–बंध उपस्थित है। इस कारण यह योगात्मक अभिक्रियाएँ प्रदर्शित करती है। **उदाहरणार्थ–**

❖ **हाइड्रोजन के साथ–**

$$\underset{\text{एथिलीन}}{CH_2 = CH_2} + H_2 \xrightarrow[300°C]{Ni(\text{उत्प्रेरक})} \underset{\text{एथेन}}{CH_3 - CH_3}$$

❖ **हैलोजनों के साथ–** क्लोरीन, ब्रोमीन तथा आयोडीन के साथ संयोग करके यह क्रमशः एथिलीन डाइ क्लोराइड, एथिलीन डाइ ब्रोमाइड तथा एथिलीन डाइ आयोडाइड बनाती है। क्लोरीन के साथ यह अभिक्रिया वाष्प अवस्था में या क्लोरीन जल द्वारा कराई जाती है। ब्रोमीन के साथ यह अभिक्रिया ब्रोमीन जल द्वारा कराई जाती है। इस अभिक्रिया में क्लोरीन सबसे अधिक व आयोडीन सबसे कम प्रभावी है।

$$\underset{\text{एथिलीन}}{\begin{matrix} CH_2 \\ \| \\ CH_2 \end{matrix}} + Cl_2 \longrightarrow \underset{\text{एथिलीन डाइ क्लोराइड}}{\begin{matrix} CH_2Cl \\ | \\ CH_2Cl \end{matrix}}$$

$$\underset{\text{एथिलीन}}{\begin{matrix} CH_2 \\ \| \\ CH_2 \end{matrix}} + Br_2 \longrightarrow \underset{\text{एथिलीन डाइ ब्रोमाइड}}{\begin{matrix} CH_2Br \\ | \\ CH_2Br \end{matrix}}$$

❖ **हैलोजेन अम्लों के साथ–** यह HCl, HBr तथा HI से संयोग करके क्रमशः एथिल क्लोराइड (C_2H_5Cl), एथिल ब्रोमाइड (C_2H_5Br) तथा एथिल आयोडाइड (C_2H_5I) बनाती है। इस अभिक्रिया में HI सबसे अधिक प्रभावी है।

$$CH_2 = CH_2 + HI \longrightarrow CH_3 - CH_2I \text{ या } C_2H_5I$$

❖ **हाइपोक्लोरस अम्ल के साथ–**

$$\underset{\text{एथिलीन}}{CH_2 = CH_2} + \underset{\text{हाइपोक्लोरस अम्ल}}{HOCl} \longrightarrow \underset{\text{एथिलीन क्लोरो हाइड्रिन}}{CH_2OH \cdot CH_2Cl}$$

❖ **सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ–** एथिल हाइड्रोजन सल्फेट ($CH_3 \cdot CH_2 \cdot HSO_4$) प्राप्त होता है।

$$CH_2 = CH_2 + H_2SO_4 \longrightarrow CH_3 \cdot CH_2 \cdot HSO_4$$

❖ **ओजोन के साथ–**

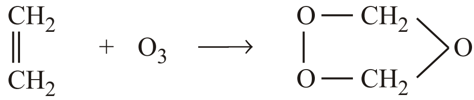

एथिलीन ओजोनाइड

❖ **बेयर अभिकर्मक के साथ–** $KMnO_4$ के क्षारीय एवं तनु घोल को बेयर अभिकर्मक कहते हैं। एथिलीन बेयर अभिकर्मक के साथ अभिक्रिया करके एथिलीन ग्लाइकॉल बनाती है।

$$2KMnO_4 + 2KOH \longrightarrow 2K_2MnO_4 + H_2O + O$$

$$\begin{array}{c} CH_2 \\ \| \\ CH_2 \end{array} + H_2O + O \longrightarrow \begin{array}{c} CH_2OH \\ | \\ CH_2OH \end{array}$$

एथिलीन ग्लाइकॉल

पोटैशियम परमैंगनेट ($KMnO_4$) का रंग गुलाबी तथा पोटैशियम मैंगनेट (K_2MnO_4) का रंग हरा होता है। अत: एथिलीन बेयर अभिकर्मक के गुलाबी रंग को उड़ा देती है तथा हरे रंग का विलयन प्राप्त होता है।

❖ **सल्फर मोनो क्लोराइड के साथ–** एथिलीन और सल्फर मोनो क्लोराइड की योगात्मक अभिक्रिया द्वारा मस्टर्ड गैस की प्राप्ति होती है, जो एक विषैली गैस है। मस्टर्ड गैस (डाइक्लोरो एथिल डाई सल्फाइड) के प्रभाव से शरीर पर फफोले, शरीर में चुभन तथा नाक से द्रव बहने लगता है और मृत्यु हो जाती है। जर्मनी ने द्वितीय विश्व युद्ध में इनका प्रयोग किया था। इसका प्रभाव चूने के क्लोराइड तथा सोडियम बाइकार्बोनेट द्वारा कम किया जा सकता है।

$$2\begin{array}{c} CH_2 \\ \| \\ CH_2 \end{array} + S_2Cl_2 \longrightarrow \begin{array}{ccc} CH_2 & -S- & CH_2 \\ | & & | \\ CH_2Cl & & CH_2Cl \end{array} + S$$

मस्टर्ड गैस

(c) प्रतिस्थापन अभिक्रियाएँ– एथिलीन साधारण योगात्मक अभिक्रियाएँ प्रदर्शित करती है लेकिन कुछ परिस्थितियों में यह प्रतिस्थापन अभिक्रियाएँ भी प्रदर्शित करती है। **उदाहरणार्थ**– एथिलीन तथा क्लोरीन के मिश्रण को लगभग 400°C तक गर्म करने पर इसका एक हाइड्रोजन परमाणु एक क्लोरीन परमाणु द्वारा प्रतिस्थापित हो जाता है।

$$CH_2 = CH_2 + Cl_2 \xrightarrow{400^\circ C} CH_2 = CH - Cl + HCl$$

वाइनिल क्लोराइड

(d) बहुलकीकरण– उचित उत्प्रेरक (ऑक्सीजन या परॉक्साइड) की उपस्थिति में लगभग 500 वायुमंडलीय दाब तथा 250-300°C ताप पर यह पॉलीथीन (Polythene) बनाती है। निम्नलिखित समीकरण में n का मान 100 या 100 से अधिक है।

$$nC_2H_4 \xrightarrow{\text{बहुलकीकरण}} (C_2H_4)_n$$

एथीलीन पॉलीथीन

एथिलीन के उपयोग– एथिलीन के उपयोग निम्नलिखित हैं—

(i) एथिलीन का उपयोग प्लास्टिक उद्योग में होता है।

(ii) एथिलीन का उपयोग मस्टर्ड गैस बनाने में होता है।

(iii) एथिलीन का उपयोग निश्चेतक के रूप में होता है।

(iv) एथिलीन का उपयोग कच्चे फलों को पकाने तथा उनके संरक्षण करने में होता है।

(v) एथिलीन का उपयोग ग्लाइकॉल, एथिल ऐल्कोहॉल जैसे उपयोगी पदार्थों के बनाने में होता है।

(vi) एथिलीन का उपयोग संश्लेषित रबर तथा पॉलीथीन बनाने में होता है।

प्रश्न 6. किण्वन विधि द्वारा एथिल ऐल्कोहॉल कैसे प्राप्त करेंगे? संबंधित अभिक्रिया लिखिए एवं इसके चार रासायनिक गुणधर्म लिखिए।

उत्तर– किण्वन विधि द्वारा एथिल ऐल्कोहॉल प्राप्त करने की विधि– अणु-जीवों द्वारा कार्बनिक यौगिकों के धीरे-धीरे सरल कार्बनिक पदार्थों में अपघटित होने की क्रिया को किण्वन कहते हैं। जिन अणु-जीवों के कारण यह क्रिया सम्पन्न होती है, उन्हें किण्व कहते हैं। दूध का फटना, दही का जमना, गोश्त और पनीर में कुछ समय बाद दुर्गंध आना तथा गन्ने के रस से शराब और सिरके का बनना किण्वन के उदाहरण हैं। किण्वन की क्रिया में किण्वों से प्राप्त कुछ जटिल नाइट्रोजन युक्त कार्बनिक यौगिक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करते हैं। इन यौगिकों को एंजाइम कहते हैं।

एथिल ऐल्कोहॉल को शर्करायुक्त तथा स्टार्चयुक्त पदार्थों के किण्वन द्वारा भी प्राप्त किया जाता है।

शर्करायुक्त पदार्थों के किण्वन में निम्नलिखित अभिक्रियाएँ होती हैं—

$$\underset{\text{सूक्रोस}}{C_{12}H_{22}O_{11}} \quad H_2O \quad \xrightarrow{\text{इन्वर्टेस (यीस्ट से)}} \quad \underset{\text{ग्लूकोस}}{C_6H_{12}O_6} \quad \underset{\text{फ्रक्टोस}}{C_6H_{12}O_6}$$

$$\underset{\text{ग्लूकोस या फ्रक्टोस}}{C_6H_{12}O_6} \quad \xrightarrow{\text{जाइमेस (यीस्ट से)}} \quad \underset{\text{एथिल ऐल्कोहॉल}}{2C_2H_5OH} \quad 2CO_2$$

अभिक्रिया में प्रयुक्त यीस्ट को सक्रिय होने के लिए एक निश्चित ताप लगभग 15°C से 37°C तक की आवश्यकता होती है। अधिक ताप होने पर यीस्ट मृत हो जाता है तथा ताप कम होने पर यह मृतप्राय अथवा अक्रिय हो जाता है।

कार्बन डाइऑक्साइड गैस के उत्पादन की जाँच, अभिक्रिया के दौरान चूने के जल (जलीय कैल्सियम हाइड्रॉक्साइड) में उत्पन्न बुलबुलों के रूप में की जा सकती है। चूने के जल में सफेद अवक्षेप (कैल्सियम कार्बोनेट) की प्राप्ति प्रदर्शित करती है कि कार्बन डाइऑक्साइड गैस निकल चुकी है।

किण्वन मिश्रण से शुद्ध एथेनॉल प्राप्त करने के लिए परिणामी विलयन के साथ प्रभाजी आसवन प्रक्रम की आवश्यकता होती है। इसके लिए उपकरण को दिए गए चित्र के अनुसार समायोजित किया जाता है।

कच्चे तेल के शोधन की प्रक्रिया के समान, एथेनॉल व जल के मिश्रण को प्रभाजी आसवन के द्वारा पृथक्कृत किया जा सकता है; क्योंकि दोनों के क्वथनांकों में अंतर होता है। एथेनॉल 79°C पर तथा जल 100°C पर उबलता है, इसलिए एथेनॉल पहले उबलता है तथा संघनित्र तक पहले पहुँचता है। प्रभाजी स्तम्भ वाष्पों (एथेनॉल) को ठंडा

करके गोल पेंदे के फ्लास्क में संघनित कर देते हैं तथा जल वाष्पों को संघनित्र में प्रवाहित होने से रोक देते हैं।

स्टार्चयुक्त पदार्थों के किण्वन में निम्नलिखित अभिक्रियाएँ होती हैं—

$$2(C_6H_{10}O_5)_n \quad nH_2O \quad \xrightarrow[\text{(माल्ट निष्कर्ष से)}]{\text{डायस्टेस}} \quad nC_{12}H_{22}O_{11}$$

स्टार्च — माल्टोस

$$C_{12}H_{22}O_{11} \quad H_2O \quad \xrightarrow[\text{यीस्ट से}]{\text{माल्टेस}} \quad 2C_6H_{12}O_6$$

स्टार्च — ग्लूकोस

$$C_6H_{12}O_6 \quad \xrightarrow[\text{यीस्ट से}]{\text{जाइमेस}} \quad 2C_2H_5OH \quad 2CO_2$$

ग्लूकोस — एथिल ऐल्कोहॉल

एथिल एल्कोहॉल के चार रासायनिक गुणधर्म-

(i) दहन- एथिल ऐल्कोहॉल एक ज्वलनशील द्रव है। एथिल ऐल्कोहॉल वायु में नीली ज्वाला के साथ जलता है तथा कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) एवं जल वाष्प बनाता है और अत्यधिक ऊष्मा एवं प्रकाश उत्पन्न करता है।

$$C_2H_5OH \quad 3O_2 \quad \xrightarrow[\text{(जलना)}]{\text{दहन}} \quad 2CO_2 \quad 3H_2O \quad \text{ऊष्मा} + \text{प्रकाश}$$

एथिल ऐल्कोहॉल — ऑक्सीजन (वायु से) — कार्बन डाइऑक्साइड — जल वाष्प

(ii) एस्टरीकरण- एथिल ऐल्कोहॉल और ऐसीटिक अम्ल सांद्र सल्फ्यूरिक अम्ल की उपस्थिति में, क्रिया कराने पर एथिल ऐसीटेट तथा जल देता है। एथिल ऐसीटेट यौगिक को **एस्टर** भी कहते हैं।

$$C_2H_5OH \quad CH_3COOH \quad \xrightarrow{\text{सांद्र } H_2SO_4} \quad CH_3COOC_2H_5 \quad H_2O$$

एथेनॉल (एस्टर) — ऐसीटिक अम्ल — एथिल ऐसीटेट (एस्टर) — जल

(iii) सोडियम से क्रिया- एथिल ऐल्कोहॉल, सोडियम से क्रिया करके सोडियम एथॉक्साइड तथा हाइड्रोजन गैस देता है।

$$2C_2H_5OH \quad 2Na \quad \quad 2C_2H_5ONa \quad H_2$$

एथेनॉल — सोडियम — सोडियम एथॉक्साइड — हाइड्रोजन

(iv) क्रोमिक ऐनहाइड्राइड से क्रिया- क्रोमिक ऐनहाइड्राइड (Cr_2O_3) द्वारा एथिल ऐल्कोहॉल का ऑक्सीकरण कराने पर एथेनल प्राप्त होती है।

$$CH_3CH_2OH \quad [O] \quad \xrightarrow[Cr_2O_3]{\text{ग्लेशियल } CH_3COOH \text{ में}} \quad CH_3CHO \quad H_2O$$

एथेनॉल — एथेनल — जल

प्रश्न 7. (a) एथेनॉल के महत्वपूर्ण उपयोग दीजिए।

(b) ऐल्कोहॉल सेवन के हानिकारक प्रभाव बताइए।

उत्तर- (a) **एथेनॉल या एथिल ऐल्कोहॉल के महत्वपूर्ण उपयोग-** एथेनॉल के प्रमुख उपयोग निम्नलिखित हैं—

(i) एथेनॉल या एथिल ऐल्कोहॉल को अनेक कार्बनिक पदार्थों के विलायक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

(ii) एथिल ऐल्कोहॉल का प्रयोग ईथर, क्लोरोफार्म, रंजक, सुगंधित पदार्थों एवं अन्य कई पदार्थों के निर्माण में किया जाता है।

(iii) ऐथिल ऐल्कोहॉल का प्रयोग प्रयोगशाला में अभिकर्मक के रूप में भी किया जाता है।

(iv) अनार्द्र एथिल ऐल्कोहॉल तथा गैसोलिन (पेट्रोल) के मिश्रण को शक्ति ऐल्कोहॉल कहते हैं। इसका प्रयोग स्वचालित वाहनों में पेट्रोल के स्थान पर ईंधन के रूप में किया जा सकता है। शक्ति ऐल्कोहॉल को जिसमें लगभग 10% एथिल ऐल्कोहॉल होता है, गैसोहोल कहते हैं। इसे स्वचालित वाहनों में ईंधन के रूप में प्रयुक्त करने पर इंजन में कोई संशोधन नहीं करना पड़ता है। यदि शक्ति ऐल्कोहॉल में स्थित ऐल्कोहॉल का अनुपात 10-15% से अधिक होता है, तो इंजन में संशोधन करना पड़ता है।

(v) एथिल ऐल्कोहॉल का प्रयोग नशीने पदार्थ के रूप में पीने के लिए भी किया जाता है। जिन नशीले पदार्थों में एथिल ऐल्कोहॉल उपस्थित होता है, वे दो प्रकार के होते हैं— (a) स्प्रिट तथा (b) शराब । यदि ऐल्कोहॉली पेय पदार्थ आसुत है, तो इसे स्प्रिट कहते हैं। यदि ऐल्कोहॉली पेय पदार्थ अनासुत है, तो इसे शराब कहते हैं। ऐल्कोहॉली पेय पदार्थों में मुख्यत: 3 से 40% तक एथिल ऐल्कोहॉल तथा शेष जल होता है। प्रूफ स्प्रिट में भार के अनुसार 49.3% एथिल ऐल्कोहॉल होता है। $x°$ प्रूफ स्प्रिट में $x\%$ प्रूफ स्प्रिट होती है।

(vi) इसका प्रयोग जीव अनुरूपों के परिरक्षण में भी किया जाता है।

(b) ऐल्कोहॉल सेवन के हानिकारक प्रभाव बताइए।

एथिल ऐल्कोहॉल का अत्यधिक सेवन मनुष्य के शरीर पर विपरीत प्रभाव डालता है। इससे उपापचयी प्रक्रिया मंद हो जाती है और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र कमजोर होने लगता है। फलत: मानसिक दुविधा, समन्वयन का अभाव, उनींदापन आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं। मनुष्य में भावशून्यता आ जाती है। व्यक्ति को लगता है कि उसे शान्ति मिली है परन्तु वह सोच भी न पाता कि उसके सोचने-समझने की शक्ति व मांसपेशियाँ विकृत हो गई हैं। ऐथेनॉल में यदि मेथेनॉल की थोड़ी-सी मात्रा भी मिला दी जाए तो उसका सेवन मृत्यु का कारण बन जाता है। मेथेनॉल यकृत की कोशिकाओं को प्रभावित करता है। यह उसके घटकों के साथ तीव्र अभिक्रिया करके प्रोटोप्लाज्म को स्कंदित कर देता है।

ऐथेनॉल के औद्योगिक उपयोग को देखते हुए इसमें मेथेनॉल जैसा जहरीला पदार्थ मिला दिया जाता है, जिससे यह पीने योग्य न रहे। ऐल्कोहॉल की पहचान के लिए इसमें रंजक मिलाते हैं, जिससे इसका रंग नीला हो जाता है। मेथेनॉल मिश्रित ऐल्कोहॉल 'विकृत ऐल्कोहॉल' कहा जाता है।

प्रश्न 8. एथिल ऐल्कोहॉल से ऐसीटिक अम्ल बनाने की विधि का रासायनिक समीकरण लिखिए। इसकी एस्टरीकरण, निर्जलीकरण तथा अपचयन की अभिक्रियाओं के समीकरण लिखिए। या

ऐसीटिक अम्ल बनाने की प्रयोगशाला विधि लिखिए। इससे प्रारम्भ कर एथिल ऐसीटेट, ऐसीटिल क्लोराइड तथा ऐसीटिक एंहाइड्राइड कैसे प्राप्त करेंगे? आवश्यक समीकरण देकर स्पष्ट कीजिए। या

ऐथेनॉल से एथेनोइक अम्ल बनाने की विधि बताइए। एथेनोइक अम्ल की निम्न के साथ अभिक्रिया लिखिए।

(a) सोडियम

(b) $NaHCO_3$

(c) सांद्र H_2SO_4 की उपस्थिति में एथेनॉल के साथ

उत्तर– एथेनोइक अम्ल या ऐसीटिक अम्ल का अणुसूत्र CH_3COOH है। 3.4% ऐसीटिक अम्ल के जल में विलयन को सिरका कहते हैं। शुद्ध एथेनोइक अम्ल का गलनांक 290 K होता है अत: शीत जलवायु में यह जम जाता है। इसी कारण यह ग्लेशियल ऐसीटिक अम्ल कहलाता है।

प्रयोगशाला में ऐसीटिक अम्ल बनाने की विधियाँ– प्रयोगशाला में ऐसीटिक अम्ल को निम्नलिखित विधियों द्वारा प्राप्त किया जाता है–

(i) एथिल ऐल्कोहॉल से– एथिल ऐल्कोहॉल के अम्लीय पोटैशियम डाइक्रोमेट विलयन से ऑक्सीकरण द्वारा ऐसीटिक अम्ल प्राप्त होता है।

$$\underset{\text{एथिल ऐल्कोहॉल}}{C_2H_5OH} \xrightarrow[(K_2Cr_2O_7 + H_2SO_4)]{O} \underset{\text{ऐसेटेल्डिहाइड}}{CH_3CHO} \xrightarrow[(K_2Cr_2O_7 + H_2SO_4)]{O} \underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH}$$

(ii) मेथिल सायनाइड से– मेथिल सायनाइड के तनु अम्ल अथवा तनु क्षार द्वारा जल अपघटन से ऐसीटिक अम्ल प्राप्त होता है।

$$CH_3CN + 2H_2O + HCl \longrightarrow CH_3COOH + NH_4Cl$$

(iii) ऐथिल ऐसीटेट से– ऐथिल ऐसीटेट के तनु अम्ल अथवा तनु क्षार जल अपघटन से ऐसीटिक अम्ल प्राप्त होता है।

$$CH_3COOC_2H_5 + H_2O \xrightarrow{H^+} CH_3COOH + C_2H_5OH$$

(iv) ऐसीटेमाइड से– ऐसीटेमाइड पर नाइट्रस अम्ल की क्रिया से ऐसीटिक अम्ल प्राप्त होता है।

$$CH_3CONH_2 + HNO_2 \longrightarrow CH_3COOH + N_2 + H_2O$$

ऐसीटेमाइड के जल अपघटन से भी ऐसीटिक अम्ल ही प्राप्त होता है।

एथेनोइक अम्ल (ऐसीटिक अम्ल) से एथिल ऐसीटेट प्राप्त करना या ऐसीटिक अम्ल की एस्टरीकरण अभिक्रिया या एथेनोइक अम्ल की सांद्र H_2SO_4 की उपस्थिति में ऐथेनॉल के साथ अभिक्रिया– एथेनोइक अम्ल किसी निर्जलीकारक (सांद्र H_2SO_4) की उपस्थिति में एथिल ऐल्कोहॉल (एथेनॉल) से क्रिया करके एस्टर बनाता है।

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + \underset{\text{एथिल ऐल्कोहॉल}}{CH_3-CH_2OH} \xrightarrow{\text{सांद्र } H_2SO_4} \underset{\text{एथिल ऐसीटेट (एस्टर)}}{CH_3\underset{\underset{O}{\|}}{C}-O-CH_2-CH_3} + H_2O$$

ऐसीटिक अम्ल की निर्जलीकरण अभिक्रिया या ऐसीटिक अम्ल से ऐसीटिक एंहाइड्राइड प्राप्त करना– ऐसीटिक अम्ल को अकेले अथवा निर्जलीकारकों; जैसे– फॉस्फोरस पेंटाऑक्साइड की उपस्थिति में गर्म करने पर इसके दो अणुओं में से जल का एक अणु पृथक् हो जाता है तथा ऐसीटिक एंहाइड्राइड प्राप्त होता है।

$$\begin{matrix} CH_3COOH \\ + \\ CH_3COOH \end{matrix} \xrightarrow[\Delta]{P_2O_5} \underset{\text{एसीटिक एंहाइड्राइड}}{\left.\begin{matrix} CH_3CO \\ CH_3CO \end{matrix}\right\rangle O} + H_2O$$

ऐसीटिक अम्ल की अपचयन अभिक्रिया– लीथियम ऐनुमिनियम हाइड्राइड द्वारा अपचयित होकर ऐसीटिक अम्ल, एथेनॉल बनाता है।

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} \xrightarrow[-H_2O]{LiAlH_4} \underset{\text{एथेनॉल}}{CH_3CH_2OH}$$

उपर्युक्त अपचयन $H_2 / Ni, Na /$ ऐल्कोहॉल या $NaBH_4$ द्वारा भी कराया जा सकता है।

ऐसीटिक अम्ल से ऐसीटिल क्लोराइड प्राप्त करना–

PCl_5 से अभिक्रिया करके ऐसीटिक अम्ल ऐसीटिल क्लोराइड (CH_3COCl) बनाता है। इस अभिक्रिया में– COOH समूह का —OH समूह क्लोरीन परमाणु से विस्थापित हो जाता है।

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + \underset{\text{फॉस्फोरस पेंटा क्लोराइड}}{PCl_5} \longrightarrow \underset{\text{ऐसीटिल क्लोराइड}}{CH_3COCl} + POCl_3 + HCl$$

ऐसीटिक अम्ल की सोडियम के साथ अभिक्रिया– ऐसीटिक अम्ल की सोडियम धातु से अभिक्रिया कराने पर हाइड्रोजन गैस मुक्त होती है तथा सोडियम लवण प्राप्त होता है–

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{2CH_3COOH} + \underset{\text{सोडियम}}{2Na} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम ऐसीटेट}}{2CH_3COONa} + \underset{\text{हाइड्रोजन}}{H_2 \uparrow}$$

ऐसीटिक अम्ल की $NaHCO_3$ के साथ अभिक्रिया– ऐसीटिक अम्ल की सोडियम बाइकार्बोनेट ($NaHCO_3$) से अभिक्रिया कराने पर सोडियम लवण प्राप्त होता है तथा कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) गैस निर्मुक्त होती है।

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + \underset{\text{सोडियम बाइकार्बोनेट}}{NaHCO_3} \longrightarrow \underset{\text{सोडियम ऐसीटेट (लवण)}}{CH_3COONa} + \underset{\text{जल}}{H_2O} + \underset{\text{कार्बन डाइऑक्साइड}}{CO_2}$$

प्रश्न 9. मिसेल क्या है? उदाहरण द्वारा समझाइए। इसका साबुन के स्वच्छीकरण क्रिया में क्या महत्व है?

उत्तर– **मिसेल–** साबुन (RCOONa या RCOOK) को जब जल में घोला जाता है तो साबुन के अणु आयनित हो जाते हैं। इसके आयनन से प्राप्त $RCOO^-$ समूह (ऋणायन) में दो भाग होते हैं। इसमें उपस्थित R समूह लंबी शृंखला वाला समूह है। यह अध्रुवीय है अत: जल विरोधी तथा तैल स्नेही होता है। इस समूह में उपस्थित कार्बोक्सिलेट समूह ध्रुवीय होता है, जो कि जल स्नेही होता है। इस कारण साबुन को जल में घोलने पर अनेक $RCOO^-$ समूह कोलॉइडी कणों के रूप में एकत्रित हो जाते हैं। इन कोलॉइडी कणों में ऋणावेशित कार्बोक्सिलेट आयन जल के संपर्क में रहते हैं। अध्रुवीय ऐल्किल समूह चित्रानुसार जल से दूर रहते हैं। इस प्रकार के कणों को मिसेल कहते हैं। इस प्रकार साबुन को जल में घोलने पर एक कोलॉइडी विलयन का निर्माण होता है।

साबुन की स्वच्छीकरण क्रिया में मिसेल का महत्व– मिसेल कण धूल, तैल तथा चिकनाई के कणों को अवशोषित करके साबुन की स्वच्छीकरण क्रिया में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। साबुन के जल में बना कोलॉइडी विलयन धूल, तैल तथा चिकनाई के कणों का अवशोषित कर लेता है। धूल, तैल तथा चिकनाई के कण मुख्यत: मिसेल के केंद्र में समा जाते हैं। इस प्रकार धूल, तैल तथा चिकनाई की कपड़े पर पकड़ कमजोर हो जाती है। जल की धारा को बहाने पर धूल तथा चिकनाई के कण दूर हो जाते हैं। अत: चिकनई के साथ चिपके गंदगी के कण भी दूर हो जाते हैं।

प्रश्न 10. साबुन क्या है? साबुन का सूत्र लिखिए। इसके निर्माण में प्रयुक्त होने वाले पदार्थों के नाम लिखिए। साबुन के निर्माण की किसी एक विधि का वर्णन कीजिए। अच्छे साबुन में कौन-से गुण होने चाहिए?

उत्तर- **साबुन-** प्राचीन काल की जानकारी के स्रोतों के आधार पर पता चलता है कि लगभग 2000 वर्ष पूर्व रोमवासी साबुन की जानकारी रखते थे। रोमवासी बकरी की चर्बी व करेंज की लकड़ी की राख से साबुन का निर्माण करते थे। आज के समय में बनाए जाने वाले साबुन प्राचीन साबुनों से अधिक परिष्कृत व शुद्ध हैं। विभिन्न वनस्पतियों से प्राप्त तेल; जैसे— महुआ, अरंडी, अलसी, तिल आदि के तैल ग्लिसरीन व उच्च वसीय अम्लों (पामीटिक अम्ल, स्टिऐरिक अम्ल, ओलीक अम्ल आदि) के ग्लिसराइड होते हैं। इन ग्लिसराइडों पर NaOH (कॉस्टिक सोडा) या KOH (कॉस्टिक पोटाश) की क्रिया कराने पर सोडियम या पोटैशियम के वसीय लवण प्राप्त होते हैं। इस प्रकार उच्च वसीय अम्लों के सोडियम व पोटैशियम लवण साबुन कहलाते हैं।

स्पष्टत:,

जब वसाओं (तैलों) को सोडियम हाइड्रॉक्साइड या पोटैशियम हाइड्रॉक्साइड के साथ गर्म किया जाता है, तो ग्लिसरीन के साथ-साथ उच्च वसीय अम्लों के सोडियम या पोटैशियम लवण प्राप्त होते हैं। इन लवणों को साबुन कहते हैं तथा साबुन बनाने की इस अभिक्रिया को साबुनीकरण कहा जाता है। जैसे—

$$\begin{array}{l} CH_2OOCC_{17}H_{35} \\ | \\ CHOOCC_{17}H_{35} \\ | \\ CH_2OOCC_{17}H_{35} \end{array} + \begin{array}{l} NaOH \\ \\ NaOH \\ \\ NaOH \end{array} \xrightarrow{\text{साबुनीकरण}} \begin{array}{l} CH_2OH \\ | \\ CHOH \\ | \\ CH_2OH \end{array}$$

वसा (तेल) एस्टर ट्राइस्टिऐरिन   कॉस्टिक सोडा   ग्लिसरॉल

$$3C_{17}H_{35}COONa$$

सोडियम स्टिऐरेट (साबुन)

जब साबुनीकरण की यह क्रिया पूर्ण हो जाती है तो एक गाढ़ा, चिपचिपा तरल पदार्थ ऊपर आ जाता है, इसे ग्लिसरॉल कहते हैं। इसका स्वाद मीठा होता है।

साबुन के निर्माण में प्रयुक्त पदार्थ- साबुन के निर्माण मे निम्नलिखित पदार्थों का प्रयोग किया जाता है—

(i) वनस्पति तैल- नारियल, अरण्डी, मूँगफल, जैतून, बिनौला, महुआ, सरसों का तैल, आदि।

(ii) कॉस्टिक पदार्थ- कॉस्टिक सोडा तथा कॉस्टिक पोटाश जिन्हें क्रमश: सोडियम हाइड्रॉक्साइड तथा पोटैशियम हाइड्रॉक्साइड भी कहते हैं। इनका जलीय विलयन लाई कहलाता है।

(iii) अन्य पदार्थ-

(a) सोडियम सिलिकेट- इसका प्रयोग साबुन का भार बढ़ाने तथा उसे सख्त, चिकना तथा चमकदार बनाने के लिए किया जाता है। यह साबुन के साफ करने की शक्ति को भी बढ़ाता है।

(b) कार्बोलिक अम्ल- इसका प्रयोग साबुन को कीटाणुनाशक बनाने के लिए किया जाता है।

(c) **बिरोजा या रेजिन–** यह चीड़ के पेड़ से प्राप्त होता है। यह साबुन को चमकदार बनाता है, मैल को काटता है तथा झाग अधिक बनाता है।

(d) **रंग तथा सुगंधित पदार्थ–** साबुन को रंगीन तथा सुगंधित बनाने के लिए चंदन का तैल, नींबू का तैल, चमेली का तैल आदि का प्रयोग करते हैं।

साबुन के निर्माण की विधि– साबुन के निर्माण की कई विधियाँ हैं, उनमें से एक विधि इस प्रकार है—

गर्म विधि– इस विधि में एक बड़े डेग में तैल या पिघला हुआ वसा लेकर उसमें उचित मात्रा में कॉस्टिक सोडा विलयन जिसे लाई भी कहते हैं, मिलाते हैं। इस मिश्रण को भाप की सहायता से गर्म करते हैं। मिश्रण उबलने लगता है। कुछ समय बाद मिश्रण में ठोस सोडियम क्लोराइड अर्थात् साधारण नमक मिलाते हैं। मिश्रण को भाप द्वारा गर्म करने की क्रिया को जारी रखते हैं। सम आयन प्रभाव के कारण साबुन अवक्षेपित हो जाता है तथा हल्का होने के कारण ऊपरी परत बना लेता है। निचली परत में ग्लिसरॉल, शेष NaOH, NaCl तथा जल होते हैं। इसे स्पैंट लाई कहते हैं तथा इससे ग्लिसरॉल को सह उपजात के रूप में प्राप्त किया जाता है। स्पैंट लाई को निकास द्वार से निकाल लेते हैं। शेष मिश्रण में साबुन के अतिरिक्त अन अपघटित तैल या वसा भी होता है। इसमें NaOH विलयन मिलाकर उपरोक्त क्रिया को दोहराते हैं। इस प्रकार डेग में मुख्यत: साबुन प्राप्त होता है। गर्म अर्थात् गलित अवस्था में ही इसे पंप की सहायता से एक-दूसरे डेग में ले जाते हैं। इस दूसरे डेग में एक विलोड़क लगा होता है। इस डेग में साबुन में रंग, सुगंध, कीटाणुनाशक पदार्थ तथा अन्य उपयोगी पदार्थ मिला देते हैं। विलोडक में प्रयोग से इन पदार्थों का समांगी मिश्रण प्राप्त होता है। इस मिश्रण को डेग से बाहर निकाल कर इच्छित आकार के साँचों में डाल कर ठंडा कर लेते हैं।

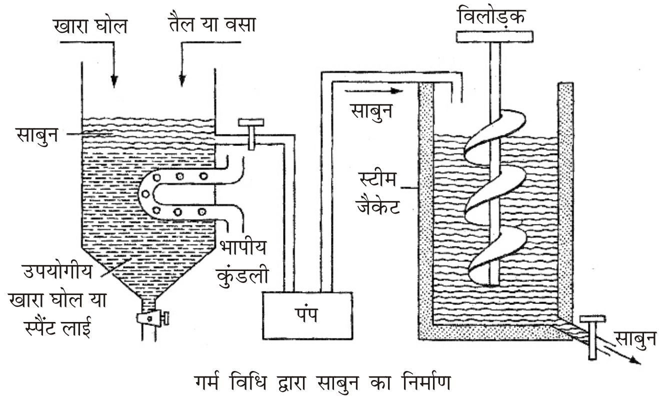

गर्म विधि द्वारा साबुन का निर्माण

अच्छे साबुन के गुण– एक अच्छे साबुन में निम्नलिखित गुण होने चाहिए।

(i) साबुन क्षार रहित होना चाहिए, क्योंकि क्षार वस्त्रों तथा त्वचा को हानि पहुँचता है।
(ii) प्रयोग में लाने पर साबुन चटकना नहीं चाहिए।
(iii) साबुन चिकना एवं मुलायम होना चाहिए, खुरदरा साबुन अच्छा नहीं होता है।
(iv) साबुन ऐल्कोहॉल में विलेय होना चाहिए।
(v) साबुन में जल की मात्रा 10% से अधिक नहीं होनी चाहिए।
(vi) इसमें कीटाणुनाशक पदार्थ मिले होने चाहिए।

प्रश्न 11. मृदु साबुन तथा कठोर साबुन क्या होते हैं? इसकी स्वच्छीकारक क्रिया को समझाइए।

उत्तर– **मृदु साबुन व कठोर साबुन–** जब साबुन बनाने की क्रिया के दौरान वसाओं (तैलों) के साथ कॉस्टिक सोडा (NaOH) का प्रयोग करते हैं, तो इस प्रकार प्राप्त साबुन कठोर साबुन कहलाता है। कठोर साबुन जल के साथ कम झाग देता है।

यदि साबुन बनाने में वसाओं (तेलों) के साथ कॉस्टिक पोटाश (KOH) का प्रयोग किया जाता है, तो इस प्रकार प्राप्त साबुन मृदु साबुन या कोमल साबुन कहलाता है। मृदु साबुन जल के साथ अधिक झाग देता है।

साबुन की स्वच्छीकारक क्रिया– साबुन (RCOONa या RCOOK) को जल में घोलने पर साबुन के अणु आयनित हो जाते हैं। इसके ऋणायन ($RCOO^-$) में दो भाग होते हैं। इसमें उपस्थित समूह R एक लंबी शृंखला वाला समूह है। यह अध्रुवीय है तथा इस कारण जल विरोधी तथा तेल स्नेही होता है। इसमें उपस्थित कार्बोक्सिलेट समूह ध्रुवीय है तथा इस कारण जल स्नेही होता है। इस कारण साबुन को जल में घोलने पर अनेक $RCOO^-$ समूह कोलॉइडी कणों के रूप में एकत्रित हो जाते हैं। इन कोलॉइडी कणों के रूप में एकत्रित हो जाते हैं। इन कोलॉइडी कणों में ऋणावेशित कार्बोक्सिलेट आयन जल के संपर्क में रहते हैं। तथा अध्रुवीय ऐल्किन समूह चित्रानुसार जल से दूर रहते हैं। इस प्रकार के कणों को मिसेल कहते हैं (चित्रानुसार)। इस प्रकार साबुन को जल में घोलने पर एक कोलॉइडी विलयन प्राप्त होता है।

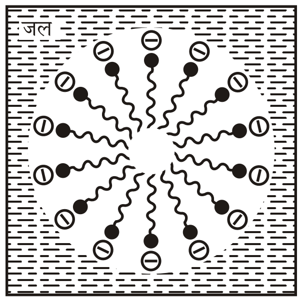

मिसेल

साबुन का जल में बना कोलॉइडी विलयन धूल, तेल तथा चिकनाई के कणों को अवशोषित कर लेता है। धूल, तैल तथा चिकनाई के कण मुख्यत: मिसेल के केंद्र में समा जाते हैं। इस प्रकार धूल, तैल तथा चिकनाई की कपड़े पर पकड़ कमजोर हो जाती है। जल की धारा को बहाने पर धूल तथा चिकनाई के कण दूर हो जाते हैं। चिकनाई के साथ चिपके गंदगी के कण भी दूर हो जाते हैं। साबुन के धनायन, Na^+ तथा K^+ जल में घुलकर जल के पृष्ठ तनाव को कम कर देते हैं, जिस कारण साबुन का विलयन कपड़ों के धागों में आसानी से फैल जाता है तथा गंदगी व चिकनाई के कणों को अवशोषित करके बाहर निकाल देता है।

प्रश्न 12. ऐसीटिक अम्ल बनाने की व्यापारिक विधि लिखे तथा रासायनिक समीकरण भी दें। ऐसीटिक अम्ल की रासायनिक अभिक्रिया तथा समीकरण निम्नलिखित के साथ लिखिए–

(a) क्लोरीन (b) अमोनिया (c) एथिल एल्कोहॉल

इसके दो उपयोग भी लिखिए।

उत्तर– **ऐसीटिक अम्ल बनाने की व्यापारिक विधि–** एथिल ऐल्कोहॉल के किण्वन से औद्योगिक रूप से ऐसीटिक अम्ल का निर्माण किया जाता है। एथिल ऐल्कोहॉल का किण्वन वायु में उपस्थित माइकोडर्मा ऐसीटी नामक जीवाणु की उपस्थिति के कारण होता है। एथिल ऐल्कोहॉल के किण्वन की अभिक्रिया इस प्रकार होती है–

$$\underset{}{C_2H_5OH} + \underset{\text{(वायु से)}}{O_2} \xrightarrow{\text{माइकोडर्मा ऐसीटी}} CH_3COOH + H_2O$$

इस प्राप्त ऐसीटिक अम्ल का विलयन 3-7% होता है। इसे सिरका कहते हैं।

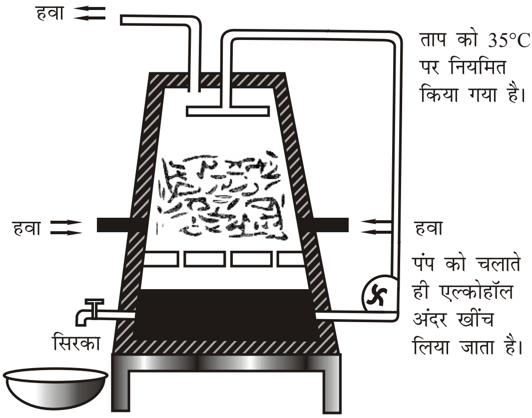

तीव्र सिरका विधि में, छिद्रयुक्त ढ़क्कन तथा आभासी तली वाले लकड़ी के गोल ड्रमों को पुराने सिरके से नम की हुई बीचवुड छीलन के साथ पैक किया जाता है

फिर 10% जलीय एथिल ऐल्कोहॉल विलयन, जिसमें किण्वन के लिए आवश्यक फॉस्फेट तथा अन्य अकार्बनिक लवण मिले रहते हैं, को इसमें बूँद-बूँद करके गिराया जाता है। वायु की धारा भी प्रवाहित की जाती है। प्राप्त तनु अम्ल को समान टावर अथवा अन्य श्रेणीक्रम में लगे टावरों से तब तक गुजारा जाता है, जब तक उसकी सांद्रता 8-10% न हो जाए।

जब किण्वनीकृत द्रव में ऐल्कोहॉल का प्रतिशत 15% से अधिक हो जाता है, बैक्टीरिया की कोशिका भित्ति कठोर हो जाती है तथा अपनी क्रियाशीलता खो देती है। वे शुद्ध ऐल्कोहॉल में उत्पन्न नहीं होते हैं; क्योंकि उनमें वृद्धि के लिए नाइट्रोजनी द्रव्य नहीं होता।

$$CH_3CH_2OH + O_2 \xrightarrow[\text{एसेटिक}]{\text{वैक्टेरियम}} CH_3COOH + H_2O$$

वायु की पूर्ति को सावधानी से नियंत्रित करना चाहिए। कम वायु के साथ, ऑक्सीकरण केवल ऐसीटैल्डिहाइड के बनने तक चलता है। अधिक वायु के साथ, ऑक्सीकरण कार्बन डाइऑक्साइड तथा जल के बनने तक चलता है अर्थात् पूर्ण रूप से ऑक्सीकरण होता है।

$$C_2H_5OH \xrightarrow{[O]} H_3CCH{=}O \xrightarrow{[O]} CH_3COOH \xrightarrow{[O]} 2CO_2 + H_2O$$

ऐल्कोहॉल का प्रवाह नियंत्रित होना चाहिए तथा ताप भी 303-308K के मध्य होना चाहिए। इससे किण्वन अधिकतम लब्धि के साथ होता है। सिरके के प्रभाजी आसवन से ग्लेशियल अम्ल प्राप्त होता है।

(a) **ऐसीटिक अम्ल की क्लोरीन के साथ अभिक्रिया-** लाल फॉस्फोरस की उपस्थिति में ऐसीटिक अम्ल में क्लोरीन प्रवाहित करने पर मेथिल मूलक के हाइड्रोजन परमाणु एक-एक करके क्लोरीन परमाणुओं से विस्थापित हो जाते हैं। इस अभिक्रिया को हैलोजनीकरण भी कहते हैं।

$$CH_3COOH + Cl_2 \xrightarrow{\text{लाल फॉस्फोरस}} \underset{\text{मोनोक्लोरो ऐसीटिक अम्ल}}{CH_2ClCOOH} + HCl$$

$$CH_2ClCOOH + Cl_2 \xrightarrow{\text{लाल फॉस्फोरस}} \underset{\text{डाइक्लोरो ऐसीटिक अम्ल}}{CHCl_2COOH} + HCl$$

$$CHCl_2COOH + Cl_2 \xrightarrow{\text{लाल फॉस्फोरस}} \underset{\text{ट्राइक्लोरो ऐसीटिक अम्ल}}{CCl_3COOH} + HCl$$

(b) ऐसीटिक अम्ल की अमोनिया के साथ अभिक्रिया– ऐसीटिक अम्ल की अमोनिया के साथ अभिक्रिया कराने पर लवण बनता है—

$$\underset{}{CH_3COOH} + \underset{\text{अमोनिया}}{NH_3} \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम ऐसीटेट (लवण)}}{CH_3COONH_4}$$

यदि अमोनियम ऐसीटेट को गर्म किया जाए तो हमें ऐसीटेमाइड प्राप्त होता है—

$$\underset{\text{अमोनियम ऐसीटेट}}{CH_3COONH_4} \xrightarrow[\text{पर}]{\text{गर्म करने}} \underset{\text{ऐसीटेमाइड}}{CH_3CONH_2} + H_2O$$

(c) ऐसीटिक अम्ल की एथिल ऐल्कोहॉल के साथ अभिक्रिया– ऐसीटिक अम्ल की एथिल ऐल्कोहॉल से अभिक्रिया कराने पर एस्टर प्राप्त होते हैं। मुख्यत: एस्टर अम्ल एवं ऐल्कोहॉल से बनते हैं। एथेनोइक (ऐसीटिक) अम्ल किसी निर्जलीकारक की उपस्थिति में एथिल ऐल्कोहॉल (एथेनॉल) से क्रिया करके एथिल ऐसीटेट बनाता है। यह एस्टर होता है। यह क्रिया एस्टरीकरण कहलाती है—

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + \underset{\text{एथिल ऐल्कोहॉल}}{CH_3 - CH_2OH} \xrightarrow[\text{(निर्जलीकारक)}]{\text{सांद्र } H_2SO_4}$$

$$\underset{\text{एथिल ऐसीटेट (एस्टर)}}{CH_3\underset{\underset{O}{\|}}{C} - O - CH_2 - CH_3} + H_2O$$

ऐसीटिक अम्ल के उपयोग–

(i) प्रयोगशाला में अभिकर्मक के रूप में

(ii) सफेद अर्थात कृत्रिम सिरका बनाने में।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. वुर्ट्ज अभिक्रिया पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– वुर्ट्ज अभिक्रिया– वुर्ट्ज अभिक्रिया में, ऐल्किल हैलाइड के दो अणु, सोडियम के साथ शुष्क ईथर की उपस्थिति में क्रिया करके ऐल्केन बनाते हैं।

$$CH_3 \boxed{I + 2Na + I} CH_3 \xrightarrow{\text{शुष्क ईथर}} C_2H_6 + 2NaI$$

प्रश्न 2. संतृप्त तथा असंतृप्त हाइड्रोकार्बन में दो मुख्य अंतर लिखिए।

उत्तर– संतृप्त हाइड्रोकार्बन व असंतृप्त हाइड्रोकार्बन में दो मुख्य अंतर

क्र०सं०	संतृप्त हाइड्रोकार्बन	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन
1.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन अत्यधिक स्थाई या कम क्रियाशील होते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन अस्थाई या अधिक क्रियाशील होते हैं।
2.	संतृप्त हाइड्रोकार्बन क्षारीय $KMnO_4$ विलयन के प्रति उदासीन होते हैं।	असंतृप्त हाइड्रोकार्बन क्षारीय $KMnO_4$ विलयन को रंगहीन कर देते हैं।

प्रश्न 3. कार्बनिक यौगिकों में (a) योगात्मक तथा (b) प्रतिस्थापन क्रिया का एक उदाहरण समीकरण द्वारा दीजिए।

उत्तर- **(a) योगात्मक अभिक्रिया-** एथिलीन के एक अणु में एक कार्बन-कार्बन द्वि-बंध उपस्थित है। इस कारण यह योगात्मक अभिक्रिया प्रदर्शित करती है।

$$\underset{\text{एथिलीन}}{CH_2 = CH_2} + H_2 \xrightarrow[300°C]{Ni(\text{उत्प्रेरक})} \underset{\text{एथेन}}{CH_3 - CH_3}$$

(b) प्रतिस्थापन अभिक्रिया- एथिलीन कुछ परिस्थितियों में प्रतिस्थापन अभिक्रियाएँ भी प्रदर्शित करती है-

$$CH_2 = CH_2 + Cl_2 \xrightarrow{400°C} \underset{\text{वाइनिल क्लोराइड}}{CH_2 = CH - Cl} + HCl$$

प्रश्न 4. ऐल्केन, ऐल्कीन तथा ऐल्काइन से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- **ऐल्केन-** संतृप्त हाइड्रोकार्बन ही ऐल्केन कहलाते हैं। इनके अणुओं में उपस्थित कार्बन परमाणुओं में से प्रत्येक की चारों संयोजकताएँ, एकल बंधों द्वारा संतुष्ट होती हैं। इनका सामान्य अणुसूत्र C_nH_{2n+2} होता है। **उदाहरणार्थ-**

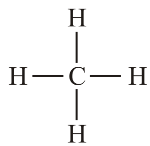

मेथेन

ऐल्कीन- इनमें दो कार्बन परमाणुओं के बीच एक द्वि-बंध होता है, ये एथिलीन श्रेणी के हाइड्रोकार्बन कहलाते हैं। इनका सामान्य सूत्र C_nH_{2n} होता है।

ऐल्काइन- इनमें दो कार्बन परमाणुओं के बीच एक त्रि-बंध होता है, ये ऐसीटिलीन श्रेणी के हाइड्रोकार्बन है। इनका सामान्य सूत्र C_nH_{2n-2} होता है।

प्रश्न 5. एसीटिलीन का एथीलीन में परिवर्तन आप किस प्रकार करेंगे? आवश्यक समीकरण दीजिए।

उत्तर- ऐसीटिलीन के आंशिक अपचयन से हम एथीलीन प्राप्त कर सकते हैं-

$$\underset{\text{एसीटिलीन}}{CH \equiv CH} + H_2 \xrightarrow[200°C]{Ni} \underset{\text{एथिलीन}}{CH_2 = CH_2}$$

प्रश्न 6. एथेन, मेथेन, एथिल ब्रोमाइड तथा फीनॉल का वर्गीकरण ऐलिफैटिक तथा ऐरोमैटिक में कीजिए।

उत्तर- **एथेन-** 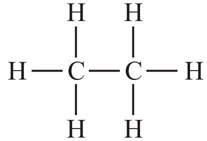 (ऐलिफैटिक)

मेथन- 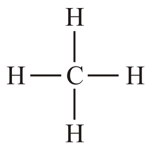 (ऐलिफैटिक)

एथिल ब्रोमाइड- $CH_3 - CH_2 - Br$ (ऐलिफैटिक)

फीनॉल– 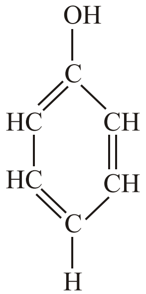 (ऐरोमैटिक)

प्रश्न 7. एथेनॉल के ऐसीटिक अम्ल में परिवर्तन को ऑक्सीकरण अभिक्रिया क्यों कहते हैं?

उत्तर– एथिल ऐल्कोहॉल (एथेनॉल) क्षारीय पोटैशियम परमैंगनेट की उपस्थिति में ऐसीटिक अम्ल में ऑक्सीकृत हो जाता है। इसी कारण इसे ऑक्सीकरण अभिक्रिया कहते हैं—

$$\underset{\text{ऐथेनॉल}}{CH_3CH_2OH} + 2[O] \xrightarrow{\text{क्षारीय } KMnO_4} \underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + H_2O$$

प्रश्न 8. भौतिक एवं रासायनिक गुणधर्मों के आधार पर एथेनॉल एवं ऐसीटिक अम्ल में आप कैसे अंतर करेंगे?

उत्तर– **भौतिक गुणों के आधार पर एथेनॉल एवं ऐसीटिक अम्ल में अंतर**

क्र०सं०	एथेनॉल	ऐसीटिक अम्ल
1.	यह एक रंगहीन, सुगंधित द्रव है।	यह रंगहीन तथा सिरके जैसी गंध वाला संक्षारक द्रव है।
2.	यह जल में हल्का है, जिसका घनत्व 0.789 ग्राम/सेमी^{3} होता है।	यह जल से भारी है। इसका आपेक्षिक घनत्व 1.045 होता है।
3.	यह जल में विलेय है।	यह जल, ऐल्कोहॉल तथा ईथर में पूर्णतया विलेय है।
4.	इसका क्वथनांक 351 K (78°C) है।	इसका क्वथनांक 118°C है।
5.	यह न तो अम्लीय है न क्षारीय।	यह एक दुर्बल अम्ल है।

रासायनिक गुणों के आधार पर एथेनॉल एवं ऐसीटिक अम्ल में अंतर

क्र०सं०	एथेनॉल	ऐसीटिक अम्ल
1.	यह सोडियम से क्रिया करके सोडियम एथॉक्साइड तथा हाइड्रोजन गैस देता है। $2C_2H_5OH + 2Na \longrightarrow 2C_2H_5ONa + H_2\uparrow$	यह सोडियम से क्रिया करके ऐसीटेट लवण बनाता है तथा हाइड्रोजन गैस देता है। $2CH_3COOH + 2Na \longrightarrow 2CH_3COONa + H_2\uparrow$
2.	यह PCl_5 से क्रिया करके एथिल क्लोराइड बनाता है। $C_2H_5OH + PCl_5 \longrightarrow C_2H_5Cl + POCl_3 + HCl$	यह PCl_5 से क्रिया करके एसीटिल क्लोराइड बनाता है। $CH_3COOH + PCl_5 \longrightarrow CH_3COCl + POCl_3 + HCl$

3.	यह क्लोरीन से क्रिया करके ट्राइ क्लोरो ऐसीटेल्डिहाइड बनाता है। $C_2H_5OH + Cl_2 \longrightarrow CH_3CHO + 2HCl$ $CH_3CHO + 3Cl_2 \longrightarrow \underset{\text{ट्राइक्लोरो ऐसीटेल्डिहाइड}}{CCl_3CHO} + 3HCl$	इसमें क्लोरीन प्रवाहित करने पर मेथिल मूलक के हाइड्रोजन परमाणु एक-एक करके क्लोरीन परमाणु से विस्थापित हो जाते हैं। $CH_3COOH + Cl_2 \xrightarrow{\text{लाल फॉस्फोरस}} CH_2ClCOOH + HCl$ $CH_2ClCOOH + Cl_2 \xrightarrow{\text{लाल फॉस्फोरस}} CHCl_2COOH + HCl$ $CHCl_2COOH + Cl_2 \xrightarrow{\text{लाल फॉस्फोरस}} CCl_3COOH + HCl$

प्रश्न 9. ऐसीटिक अम्ल से मेथेन, मेथिल ऐमीन तथा ऐसीटिक एंहाइड्राइड कैसे प्राप्त करेंगे? केवल समीकरण लिखिए।

उत्तर- ऐसीटिक अम्ल से मेथेन प्राप्त करना-

$$CH_3COOH + NaOH \longrightarrow \underset{\text{सोडियम ऐसीटेट}}{CH_3COONa} + H_2O$$

$$CH_3COONa + NaOH \xrightarrow{CaO} \underset{\text{मेथेन}}{CH_4} + Na_2CO_3$$

ऐसीटिक अम्ल से मेथिल ऐमीन प्राप्त करना-

$$\underset{\text{ऐसीटिक अम्ल}}{CH_3COOH} + \underset{\text{हाइड्रेजोइक अम्ल}}{N_3H} \xrightarrow{\text{सांद्र } H_2SO_4} \underset{\text{मेथिल ऐमीन}}{CH_3NH_2} + CO_2\uparrow + N_2\uparrow$$

ऐसीटिक अम्ल से ऐसीटिक एंहाइड्राइड प्राप्त करना-

$$\begin{matrix} CH_3COOH \\ + \\ CH_3COOH \end{matrix} \xrightarrow[\Delta]{P_2O_5} \underset{\text{एसीटिक एंहाइड्राइड}}{\left.\begin{matrix} CH_3CO \\ CH_3CO \end{matrix}\right\rangle O} + H_2O$$

प्रश्न 10. प्रयोग द्वारा आप ऐल्कोहॉल एवं कार्बोक्सिलिक अम्ल में कैसे अंतर कर सकते हैं?

उत्तर- ऐसीटिक अम्ल के एक अणु में एक मेथिल तथा एक कार्बोक्सिल समूह उपस्थित होता है—

मेथिल समूह 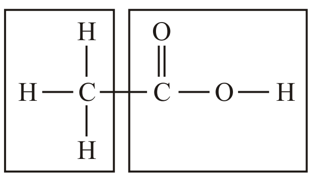 कार्बोक्सिल समूह

एथिल ऐल्कोहॉल अमोनिया से क्रिया करके एथिल ऐमीन बनाता है—

$$C_2H_5OH + NH_3 \longrightarrow \underset{\text{ऐथिल ऐमीन}}{C_2H_5NH_2} + H_2O$$

कार्बोक्सिलिक अम्ल (ऐसीटिक अम्ल) अमोनिया के साथ अभिक्रिया करके लवण बनाता है—

$$CH_3COOH + NH_3 \longrightarrow \underset{\text{अमोनियम ऐसीटेट}}{CH_3COONH_4}$$

प्रश्न 11. ऐसीटिक अम्ल से मेथेन कैसे प्राप्त करेंगे?

उत्तर– ऐसीटिक अम्ल के सोडियम लवण को सोडालाइम (1 भाग CaO + 3 भाग NaOH) के साथ गर्म करने पर मेथेन गैस बनती है।

$$CH_3COONa + NaOH \xrightarrow[\text{ऊष्मा}]{\text{सोडालाइम}} \underset{\text{मेथेन}}{CH_4} \uparrow + \underset{\text{सोडियम कार्बोनेट}}{Na_2CO_3}$$

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 263-264 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. एसीटिक अम्ल के गुणों का निम्न प्रकार अध्ययन करना।

(a) गंध **(b) जल में विलेयता**

(c) लिटमस पर प्रभाव **(d) सोडियम बाइकार्बोनेट से क्रिया**

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

◾◾◾

17 मानव शरीर की संरचना

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मनुष्य की त्वचा का नामांकित चित्र बनाइए और उसमें पाई जाने वाली ग्रंथियों के नाम लिखिए।

उत्तर– मनुष्य की त्वचा में उपचर्म के मैल्पीघी स्तर की कोशिकाओं से निम्नलिखित त्वक् ग्रंथियाँ विकसित होती हैं—

(i) स्वेद ग्रंथियाँ– ये ग्रंथियाँ अशाखित व लंबी–कुंडलित नली के रूप में होती हैं और त्वचा की डर्मिस में पड़ी रहती हैं। ये पसीने का स्राव करती हैं।

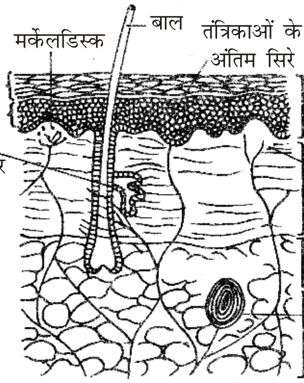

मनुष्य की त्वचा की खड़ी काट

(ii) सीबेशियस ग्रंथियाँ– ये ग्रंथियाँ रोम पुटिका में खुलती हैं और तैलीय पदार्थ का स्राव करती हैं। ये बाल व त्वचा को चिकना एवं जलरोधी बनाती हैं।

(iii) स्तन ग्रंथियाँ– ये सीबेशियस ग्रंथियों का रूपांतरित रूप होती हैं, ये केवल स्त्रियों में विकसित होती हैं। प्रसव के पश्चात् स्तन ग्रंथियों से दूध का स्राव होता है। पुरुषों में स्तन ग्रंथियाँ अवशेषी होती हैं।

(iv) अश्रु ग्रंथियाँ या लैक्राइमल ग्रंथियाँ– लैक्राइमल ग्रंथियाँ प्रत्येक नेत्र के भीतरी कोण पर ऊपर की ओर स्थित होती हैं। इनका जलीय स्राव कॉर्निया को साफ रखता है।

(v) मीबोमियन ग्रंथियाँ– इन ग्रंथियों को स्राव नेत्र के कॉर्निया को नम व चिकना रखता है।

(vi) सीरूमिनस ग्रंथियाँ– इन ग्रंथियों से मोम के समान पदार्थ, सीरूमेन स्रावित होता है। ये कर्णपटह को नम रखता है और बाह्य कर्ण नलिका को चिकना रखता है।

प्रश्न 2. मनुष्य की आहारनाल का वर्णन कीजिए।

उत्तर– मनुष्य के आहारनाल– भोजन को पचाने, पचे हुए अवयवों को अवशोषित करने आदि

के लिए एक लंबी, लगभग 8-9 मीटर लंबी, नली जैसी संरचना होती है जो मुखद्वार से मलद्वार तक फैली रहती है। इस नली को पाचन प्रणाली या आहारनाल कहते है। पाचन संबंधी तथा इससे संबंधित अन्य क्रियाओं को करने के लिए आहारनाल की श्लेष्म कला में अलग-अलग स्थानों पर कई प्रकार की पाचक ग्रंथियाँ होती हैं। जो कई प्रकार के पाचक रस बनाती हैं। इसके विभिन्न भागों के कार्य के अनुसार स्थान-स्थान पर अनेक स्वरूप बन जाते हैं, जिन्हें निम्नलिखित पाँच भागों में बाँटा जाता है—

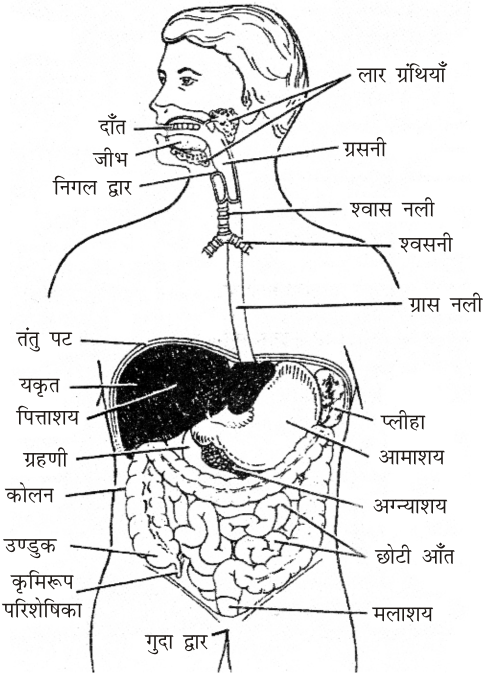

मनुष्य का पाचन तंत्र

(i) मुख व मुखगुहा
(ii) ग्रसनी, व ग्रास नली, (iii) आमाशय तथा (iv) आँत

(i) मुख व मुखगुहा – दो चल होंठों से घिरा हुआ मुखद्वार, मुखगुहा में खुलता है। मुखगुहा दोनों जबड़ों तक गालों से घिरी हुई एक चौड़ी गुहा है जिसमें ऊपरी जबड़ा खोपड़ी के साथ मजबूती से जुड़ा हुआ तथा अचल होता है। निचला जबड़ा पार्श्व-पश्च भाग में ऊपरी जबड़े के साथ संधित तथा चल होता है। मुखगुहा की छत, तालू कहलाती है। तालू का अगला तथा अधिकांश भाग कठोर होता है तथा कठोर तालू कहलाता है। इसके पीछे कंकालरहित कोमल तालू होता है, जो अंत में एक कोमल लटकन के रूप में होता है। इसे काग कहते हैं। काग के इधर-उधर छोटी-छोटी गाँठों के रूप में गलतुंडिका या टाँसिल्स होते हैं।

गाल, होंठ, तालू, जिह्वा आदि मुखगुहा के अंग अंदर से चिकने तथा कोमल प्रतीत होते हैं। ये अंग एक विशेष स्राव, श्लेष्म स्रावित करने वाली कोशिका-युक्त कोमल झिल्ली, श्लेष्म कला से ढ़के रहते हैं। श्लेष्मल एक लसलसा तरल है और इसके साथ ही कुछ लार भी रहती है जो इसी झिल्ली में उपस्थित कोशिकाओं के द्वारा बनाई जाती है, किंतु बड़ी तथा विशेष लार ग्रंथियाँ अलग से भीतरी भागों में होती हैं जिनकी नलियाँ होंठों के पीछे तथा अन्य स्थानों में मुखगुहा के अंदर खुलती हैं।

(a) दाँत – एक वयस्क व्यक्ति में निचले तथा ऊपरी जबड़े में कुल मिलाकर 32 दाँत होते हैं। मनुष्य के जीवन में दो बार दाँत निकलते हैं। अत: इसे **द्विबारदंती** कहते हैं। दाँतों की संख्या उम्र के साथ बदलती रहती है। इस प्रकार आयु के आधार पर दाँत दो प्रकार के होते हैं—

अस्थायी दाँत– इन्हें दूध के दाँत भी कहते हैं। ये बच्चे में लगभग 6 माह से निकलने प्रारंभ हो जाते हैं और 2-3 वर्ष तक कुल 20 निकलते हैं। ये 7-8 वर्ष की अवस्था तक रहते हैं।

स्थाई दाँत– ये दूध के दाँतों के गिरने पर निकलते हैं तथा लगभग 20 वर्ष की आयु तक 28 दाँत निकल निकल आते हैं। बाद में, चार और दाँत निकलते हैं। इन्हें **अक्ल दाढ़** कहते हैं। स्थाई दाँतों की कुल संख्या 32 होती हैं। दोनों जबड़ों में स्थाई दाँत अग्रांकित चार प्रकार के होते हैं—

कृन्तक – ये संख्या में कुल आठ होते हैं। इनके किनारे तेज धार वाले होते हैं, जो भोजन को कुतरने का कार्य करते हैं।

रदनक – इन्हें भेदक भी कहते हैं। इनकी संख्या चार होती हैं। कुछ लंबे व नुकीले होने के कारण ये भोजन को चीरने-फाड़ने का कार्य करते हैं।

अग्रचवर्णक - प्रत्येक जबड़े में दो जोड़ी होते हैं। इनके सिरे पर दो शिखर होते हैं, जो चपटे एवं चौकोर होते हैं। ये भोजन को कुचलने का कार्य करते हैं।

चर्वणक – ये संख्या में बारह होते हैं। इनके सिरे चौरस, तेज धार वाले होते हैं। ये भोजन को पीसते हैं।

(b) **जिह्वा या जीभ –** मुखगुहा के फर्श पर एक अति मुलायम, लचीली और लसलसी जीभ या जिह्वा होती हैं जिसका केवल अगला, थोड़ा-सा भाग ही स्वतंत्र होता है जो नीचे फर्श के साथ एक भंज , जिह्वा फ्रेनुलम के द्वारा जुड़ा दिखाई देता है। जीभ का पिछला भाग फर्श के साथ पूर्णत: जुड़ा होता है। जीभ की ऊपरी सतह पर उपस्थित अंकुरों में विभिन्न स्वाद बताने वाली स्वाद कलिकाएँ होती हैं।

(ii) **ग्रसनी व ग्रासनली–** मुख-ग्रासन का काग के पीछे कीप के आकार का भाग ग्रसनी कहलाता है। यह लगभग 12-15 सेमी लंबा होता है। इसके तीन भाग किए जा सकते हैं—

- ✯ **नासाग्रसनी–** यह श्वसन मार्ग के कुछ पीछे स्थित होता है।
- ✯ **स्वरयंत्री ग्रसनी–** यहाँ वायु मार्ग तथा आहार मार्ग एक-दूसरे को काटते हैं।
- ✯ **मुख ग्रसनी–** ठीक सामने स्थित प्रतिपृष्ठ (अधर) भाग है। यह अंत में निगल द्वार के द्वारा ग्रास नली खुलता है। निगल द्वार सामान्यत: बंद रहता है। निगल द्वार के नीचे श्वास नली का छिद्र घाँटी द्वार या कंठद्वार होता है। इस एक लचीला उपास्थि का बना घाँटी ढापन ढ़के रखता है।

(iii) **आमाशय –** यह J-आकार के एक थैले के समान होता है। इसकी लंबाई 25 से 30 सेमी और चौड़ाई 7 से 10 सेमी तक होती है। यह देह गुहा में बाईं ओर हृदय के पास स्थित होता है, इसको कार्डियक छिद्र कहते हैं। भोजन नली का अंतिम सिरा आमाशय से जुड़ा रहता है जिससे भोजन आमाशय में पहुँचता है। आमाशय के दूसरे सिरे को पाइलोरिक सिरा कहते हैं। जो एक सिरे पर बड़ा परंतु दूसरे सिरे पर संकरा होता है। इसके सिरे पर स्थित छिद्र को पाइलोरिक छिद्र कहते हैं। आमाशय की भित्ति में मोटा, पेशी स्तर होता है और श्लेष्म कला का आवरण होता है, जिसमें अनेक आमाशयिक ग्रंथियाँ होती हैं। इनसे जठर रस निकलता है। आमाशयिक ग्रंथियाँ में तीन प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं—

(a) पेप्टिक या जाइमोसोनिक कोशिकाएँ जो पाचक एंजाइम का स्राव करती हैं।

(b) ऑक्जेंटिक या पैराइटल कोशिकाएँ जो HCl का स्राव करती हैं तथा

(c) म्यूकस कोशिकाएँ जो म्यूकस बनाती हैं। इससे आमाशय के अंदर भोजन का पाचन होता है।

(iv) आँत– आहारनाल का यह अत्यधिक कुंडलित भाग है। यह लगभग पूरी उदर गुहा को घेरे रहता है। इसकी लंबाई लगभग 6.50-7.50 मीटर होती है। इसके दो प्रमुख भाग किए जा सकते हैं– **(a) छोटी आँत–** आमाशय के पश्च भाग (पक्वाशई भाग) से निकलने वाली यह अपेक्षाकृत संकरी, लगभग 6 मीटर लंबी एक अत्यधिक कुंडलित नलिका होती है। कार्य एवं संरचना के आधार पर इसे अग्रलिखित तीन भागों में बाँटा जा सकता है–

(1) ग्रहणी या ड्योडिनम – यह लगभग 25 सेमी लंबी बराबर मोटाई की रचना होती है। यह आमाशय के साथ समांतर घूमकर लगभग 'C' आकार बनाती है। इसी आकार के बीच गुलाबी रंग की अग्न्शाय नामक ग्रंथि होती है। यकृत की पित्त नलिका तथा अग्न्याशय की अग्न्याशयिक नलिका मिलकर ग्रहणी में खुलती है। ग्रहणी मध्यान्त्र में खुलती है।

(2) मध्यान्त्र या जीज्युनम– यह लगभग 2.40 मीटर लंबी, अत्यधिक कुंडलित नलिका होती है। यह पेशीय तथा ग्रंथिल होती है।

(3) शेषान्त्र या इलियम– यह मध्यान्त्र से आगे लगभग 3.60 मीटर लंबी कुंडलित रचना होती है। इसकी संरचना मध्यान्त्र के समान ही होती है। इनकी भित्तियाँ अपेक्षाकृत पतली होती हैं। शेषांत्र बड़ी आंत्र में शेषांत्रउण्डकीय कपाट द्वारा खुलती है।

(b) बड़ी आँत– इसकी लंबाई छोटी आँत से कम, लेकिन चौड़ाई अधिक होती है। यह लगभग 1.50 से 1.80 मीटर लंबी तथा 6 सेमी चौड़ी होती है। इसके तीन भाग किए जा सकती हैं–

(1) अंधात्रं या सीकम– यह बहुत छोटा, लगभग 5 से 5.7 सेमी लंबे व 7.5 सेमी चौड़े थैले के समान आकार का होता है। सीकम का अंतिम भाग लगभग 9 सेमी लंबी, संकरी तथा बंदनलिका में बदला हुआ है, इसे कृमिरूप परिशेषिका कहते हैं। मनुष्य में यह एक अवशेषी अंग है और शरीर के लिए लगभग अनावश्यक है।

(2) बृहदंत्र या कोलन– यह लगभग 1.25 मीटर लंबी, 6 सेमी चौड़ी नलिका होती है। यह छोटी आँत के चारों ओर 'U' के आकार की संरचना बनाती है। इसमें चार खंड दिखाई देते हैं–

☆ **आरोही खंड –** जो अंधांत्र के साथ जुड़ा होता है तथा अग्रभाग की ओर लगभग 15 सेमी लंबा होता है।

☆ **अनुप्रस्थ खंड–** जो लगभग 50 सेमी होता है और आमाशय की वक्रता के साथ-साथ बढ़कर अगला खंड बनाता है।

☆ **अवरोही खंड –** जो छोटी आँत को घेरता हुआ पश्च भाग की ओर बढ़ता है और लगभग 25 सेमी होता है।

☆ **श्रोणि खंड–** जो लगभग 40 सेमी लंबा होता है और बाईं ओर को होकर कुछ घूमकर मलाशय से जुड़ा होता है। कोलन की पार्श्व भित्ति थैली जैसी-संरचनाओं में फूली होने से कोलन का भीतर तल अत्यधिक बढ़ जाता है।

(3) मलाशय या रेक्टम– यह लगभग 12 सेमी लंबा भाग होता है। इसका अंतिम भाग गुदा गुदानाल कहलाता है। यह गुदा द्वार द्वारा शरीर से बाहर खुलता है। गुदा में 8-10 अनुलंब गुदा स्तंभ तथा 2-3 अनुप्रस्थ मंज होते हैं। गुदानाल 2.5 से 3 सेमी लंबा होता है और इसमें प्रारंभ तथा अंत में गुद संकोचक पेशियाँ होती हैं। इनके द्वार गुदा का आवश्यकतानुसार नियंत्रण होता है।

प्रश्न 3. आहारनाल से संबंधित पाचक ग्रंथियों का वर्णन कीजिए और उनके मुख्य कार्य लिखिए।

उत्तर- आहारनाल से संबंधित विभिन्न पाचक ग्रंथियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) लार ग्रंथियाँ – मुखगुहा में अनेक छोटी-छोटी (सूक्ष्म) मुख ग्रंथियाँ उसकी श्लेष्मिका में होती हैं जो थोड़ी मात्रा में लार स्त्रावित करती रहती हैं। जिह्वा की श्लेष्मिका में भी इसी प्रकार की सूक्ष्म ग्रंथियाँ होती हैं। बड़ी तथा अधिक मात्रा में लार उत्पन्न करने वाली तथा वाहिकाओं द्वारा इसे मुखगुहा में पहुँचाने वाली अग्रलिखित तीन जोड़ी लार ग्रंथियाँ होती हैं–

(a) कर्णपूर्व लार ग्रंथियाँ– कानों के पास, कपोलों के पास व कपोलों में स्थित, ये सबसे बड़ी लार ग्रंथियाँ होती हैं तथा ऊपरी जबड़े में वाहिकाओं, स्टेन्सेन्स नलिका द्वारा चर्वणकों के पास खुलती हैं।

(b) अधोजिह्वा लार ग्रंथियाँ– ये जीभ के ठीक नीचे स्थित छोटी व संकरी ग्रंथियाँ होती हैं और निचले जबड़े में दाँतों के पास ही कई स्थानों पर खुलती हैं।

(c) अधोहनु लार ग्रंथियाँ– ये निचले जबड़े के पश्च भाग में स्थित होती हैं। ये अगले दाँतों (निचले कृन्तकों) के पास लंबी वाहिनियों, वारटन्स नलिकाओं के द्वारा खुलती हैं।

(ii) जठर ग्रंथियाँ – ये मनुष्य के आमाशय की श्लेष्मकला में उपस्थित तीन प्रकार की ग्रंथियाँ होती हैं– पायलोरिक, फण्डिक तथा कार्डियक। इनमें श्लेष्मल के अतिरिक्त हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा पेप्सिनोजन व रेनिन नामक एंजाइम से युक्त जठर रस स्त्रावित होता है। इसी श्लेष्मकला में कुछ कोशिकाएँ, जिन्हें एंटेरोएण्डोक्राइन कोशिकाएँ कहते हैं, गैस्ट्रिन नामक हॉर्मोन भी स्त्रावित करती हैं।

(iii) अग्न्याशय – आमाशय के पीछे उदर गुहा की पश्च भित्ति पर तथा ग्रहणी के मध्य बने 'C' आकार के स्थान में स्थित यह यकृत के बाद दूसरे सबसे बड़ी ग्रंथि है। यह चपटी आकृति वाली गुलाबी रंग की अति महत्त्वपूर्ण ग्रंथि होती है। एक संयुक्त ग्रंथि या मिश्रित होती है तथा इसके दो भाग होते हैं–बहि:स्त्रावी भाग और अंत:स्त्रावी भाग। यह छोटे-छोटे अनेक पिण्डकों की बनी होती है, जिनकी घनाकार व स्त्रावी कोशिकाओं के मध्य, स्थान-स्थान पर विशेष कोशिकाओं के समूह पाए जाते हैं। इन्हें लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ कहते हैं।

अग्न्याशय के कार्य – अग्न्याशय के दो प्रमुख कार्य हैं–

(a) अग्न्याशई का स्त्रावण– पाचन क्रिया के लिए अग्न्याशय की बहि:स्त्रावी कोशिकाएँ अग्न्याशयिक रस स्त्रावित करती हैं। इसमें कई एंजाइम; जैसे– ट्रिप्सिन, काइमोट्रिप्सन, एमाइलेज तथा लाइपेज होते हैं।

अग्न्याशिक रस को एकत्र कर ग्रहणी तक पहुँचाने का कार्य अग्न्याशय के छोटे-छोटे पिण्डकों से प्रारम्भ होने वाली छोटी-छोटी वाहिनियाँ करती हैं। ये बाद में जुड़कर एक सामान्य वाहिनी, अग्न्याशिक वाहिनी बनाती हैं। यह वाहिनी सामान्य पित्त नली के साथ जुड़कर ग्रहणी में खुलती है। अग्न्याशायिक रस के एंजाइम्स भोजन के सभी अवयवों अर्थात् प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट तथा वसा के पाचन में सहायक होते हैं।

(b) हार्मोन्स का स्त्रावण– ग्रंथि के बहि:स्त्रावी भाग (लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ) की कोशिकाओं से इन्सुलिन तथा ग्लूकैगॉन नामक हार्मोन्स स्त्रावित होते हैं। ये सीधे रुधिर में डाल दिए जाते हैं। ये कार्बोहाइड्रेट के उपापचय का नियंत्रण एवं नियमन करने में सहायक होते हैं।

प्रश्न 4. मनुष्य के हृदय की आंतरिक संरचना का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– मनुष्य के हृदय की आंतरिक संरचना– मनुष्य का हृदय गहरे लाल रंग की तिकोनी मांसल रचना होती है। इसमें चार वेश्म होते हैं।

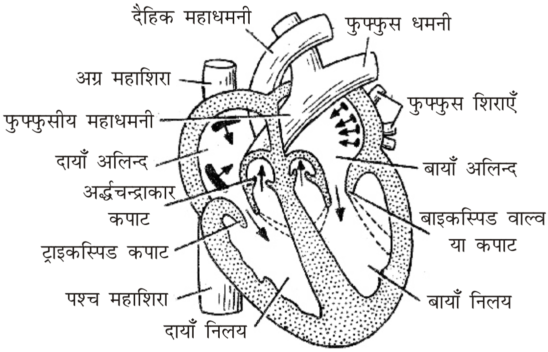

मनुष्य के हृदय की आंतरिक संरचना (अनुलंब काट में)

हृदय की आंतरिक रचना में चारों वेश्म स्पष्ट दिखाई देते हैं। दाएँ अलिन्द में तीन छिद्र होते हैं जिनके द्वारा अग्र तथा पश्च महाशिराएँ खुलती हैं। इन छिद्रों के बीच एक कपाट और एक नोड होता है। नोड से हृदय की धड़कन का संचालन होता है। बाएँ अलिन्द में एक तिरछा छिद्र होता है, जिसके द्वारा पल्मोनरी शिरा खुलती है।

दायाँ अलिन्द अपने नीचे दाएँ निलय में एक अलिन्द–निलय छिद्र द्वारा खुलता है। इस छिद्र पर एक त्रिवलन कपाट लगा होता है जो निलय की ओर लटका रहता है। यह कपाट महीन तंतुओं से निलय की भीतरी सतह से जुड़ा रहता है। इसी प्रकार बायाँ आलिन्द भी अपने बाएँ निलय में छिद्र द्वारा खुलता है। इस छिद्र पर एक द्विवलन कपाट लगा होता है जो निलय में खुलता है।

प्रश्न 5. धमनी, शिरा व कोशिका के बीच पारस्परिक संबंध को चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

उत्तर–

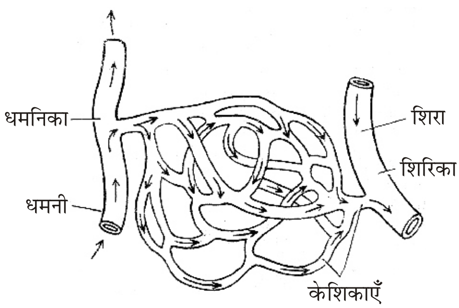

धमनी, शिरा व केशिका
की संरचना तथा इनमें पारस्परिक संबंध

प्रश्न 6. उत्सर्जन से क्या तात्पर्य है? मनुष्य के उत्सर्जी अंगों के नाम लिखिए। वृक्क नलिका का नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर– **उत्सर्जन–** मनुष्य एवं सभी कशेरूकी प्राणियों में उपापचय क्रियाओं के फलस्वरूप बने नाइट्रोजनी उपापचई उत्सर्जी उत्पादों को शरीर से बाहर निकालने की क्रिया को उत्सर्जन कहते हैं।

मनुष्य के उत्सर्जी अंग– यूरिया आदि उपापचई उत्सर्जी उत्पादों को शरीर से बाहर निकालने के लिए वृक्क ही प्रमुख उत्सर्जी अंग है। किन्तु वृक्कों के अलावा मनुष्य एवं सभी कशेरूकी प्राणियों में यकृत, त्वचा, फेफड़े और आंत्र भी उत्सर्जन में मदद करते हैं।

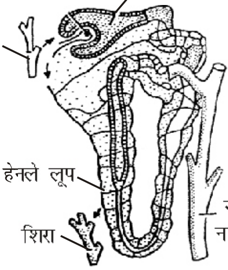

वृक्क नलिका की संरचना

प्रश्न 7. मनुष्य के श्वसन अंगों का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– **मनुष्य के श्वसन अंग**– मनुष्य में ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड के आदान-प्रदान में भाग लेने वाले अंगों को दो समूहों में बाँटते हैं—

(i) सहायक श्वसन अंग तथा

(ii) मुख्य श्वसन अंग

(i) सहायक श्वसन अंग– वे समस्त अंग जो गैस विनिमय में भाग नहीं लेते लेकिन ऑक्सीजन युक्त वायु को बाहर से फेफड़ों तक फेफड़ों से कार्बन डाइऑक्साइड युक्त वायु को शरीर के निकालने में सहायता करते हैं, वे सहायक श्वसन अंग कहलाते हैं। ये अंग निम्नलिखित हैं—

(a) बाह्य नासा रंध्र – मनुष्य में मुख के ऊपर एक जोड़ी बाह्य नासा रंध्र स्थित होते हैं। दोनों नासा रंध्रों के बीच में एक पट होता है जिसे नासापट या अंतर नासिका पट कहते हैं। नासापट नासागुहा को दो नासा पथों में बाँटता है। नासिका तथा नासापट का अगला भाग उपास्थि का बना होता है।

(b) नासा पथ या नासा मार्ग– प्रत्येक नासा रंध्र अपनी ओर पथ में खुलता है। नासा पथ का अगला भाग नासा वेश्म कहलाता है। नासा पथ का पिछला भाग एक टेढ़ा-मेढ़ा, घुमावदार नासा मार्ग कहलाता है। इस भाग में नासा अस्थियाँ नासागुहा को संकर व टेढ़ा-मेढ़ा बनाती हैं। नासा वेश्म श्लेष्मा झिल्ली तथा रोमों से ढ़की रहती है। श्लेष्मा झिल्ली श्लेष्मा का स्राव करती है।

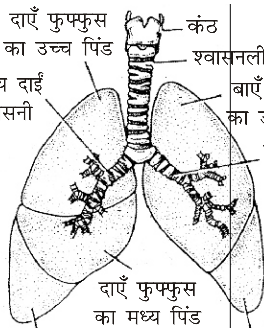

मनुष्य के श्वसन अंग

(c) ग्रसनी – नासा पथ से वायु गले में स्थित ग्रसनी में प्रवेश करती है। ग्रसनी में मुख पथ तथा नासा पथ होते हैं। इसलिए हम मुख से भी श्वास ले सकते हैं।

ग्रसनी में वायु नाल तथा ग्रासनाल दोनों खुलती हैं। वायु का नाल का छिद्र घाँटी द्वार कहलाता है। इस पर एक ढक्कननुमा रचना पाई जाती है। इस

ढक्कननुमा रचना को घाँटी ढक्कन या एपिग्लॉटिस कहते हैं। यह भोजन करते समय भोजन के कणों को वायु नाल में जाने से रोकता है।

(d) **वायु नाल–** यह 10-11 सेमी लंबी तथा 1.5 से 2.5 सेमी व्यास की नलिका है। यह दो भागों में विभेदित होता है— स्वर यंत्र तथा श्वास नली।

☆ **कंठ या स्वर यंत्र–** यह वायु का अगला बक्सेनुमा भाग है यह उपास्थित की बनी तीन प्रकार की चार प्लेटों से बना होता है। इसकी गुहा कंठ कोष कहलाती है। कंठ कोष में जो जोड़ी वाक रज्जु होते हैं। इन वाक रज्जुओं में कंपन से ही ध्वनि उत्पन्न होती है। इस कारण इसे ध्वनि उत्पादन अंग भी कहते हैं। हमारे गले में कंठ की उपास्थि ही उभार के रूप में दिखाई देती हैं। इसे टेंटुआ या Adam's apple भी कहते हैं।

☆ **श्वासनली–** यह गर्दन की पूरी लंबाई में स्थित होती है। इसका कुछ भाग वक्ष गुहा में पहुँचता है। इसकी दीवार पतली लचीली होती है और इसमें '*C*' आकार की उपास्थि से निर्मित 16-20 अधूरे छल्ले पाए जाते हैं। ये छल्ले श्वास नली में वायु न होने पर इसे पिचकने से रोकते हैं।

श्वासनली वक्ष गुहा में आकर दो शाखाओं— श्वसनलियों में बँट जाती है। प्रत्येक श्वसनीका अपनी ओर के फेफड़ों में प्रवेश करने के पश्चात् अनेक शाखाओं— श्वसनिकाओं में बँट जाती है। प्रत्येक श्वसनिका अंत में फुफ्फुस के वायु कोषों में समाप्त हो जाती है। इस प्रकार श्वास के समय ली गई वायु नसिका से वायु कोषों तक पहुँचती हैं।

(ii) **मुख्य श्वसन अंग –** मुख्य श्वसन अंगों में ऑक्सीजन व कार्बन डाइऑक्साइड का आदान-प्रदान होता है।

फेफड़े– मनुष्य के दोनों फेफड़े या फुफ्फुस हृदय के दोनों ओर वक्ष गुहा का अधिकांश भाग घेरे रहते हैं। इनके चारों ओर एक गुहा होती है जिसे प्लूरल फुफ्फुसीय गुहा कहते हैं।

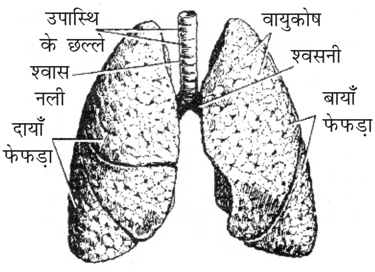

मनुष्य के श्वसनांग-फेफड़े
तथा उनके लिए वायु लाने वाली नलिकाएँ

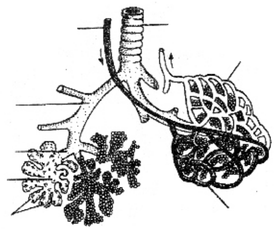

मानव फेफड़ा: श्वसन के लिए
नलिकाएँ तथा उनकी शाखाएँ

प्रत्येक फुफ्फुस शंक्वाकार, हल्के गुलाबी रंग का, स्पंजी तथा लचीला होता है। ये श्वसनियों, श्वसनिकाओं, वायुकोषों, कूपिकाओं एवं रुधिर कोशिकाओं के जाल से बने होते हैं।

वायुकोषों के अधिक संख्या में होने के कारण मनुष्य में गैसीय आदान-प्रदान की सतह लगभग 100 वर्ग मीटर हो जाती है।

प्रश्न 8. नर मानव के जनन तंत्र का वर्णन कीजिए। इसमें शुक्राणु कहाँ संचित रहते हैं?

उत्तर– **नर (मनुष्य) का जनन तंत्र** – मुख्य रूप से नर जनन तंत्र में वृषण, अधिवृषण, शुक्रवाहिनी, शुक्राशय, प्रोस्टेट ग्रंथि, काऊपर ग्रंथि एवं शिश्न हैं। शुक्राशय, प्रोस्टेट ग्रंथि व काऊपर ग्रंथि के द्वारा स्रावित द्रव, शुक्राणु द्रव का अधिकांश भाग बनाते हैं।

एक जोड़ी वृषण पेशीय थैले, जिन्हें वृषण कोष कहते हैं, में उदर गुहा के नीचे शिश्न के पीछे लटके रहते हैं। प्रत्येक वृषण से एक नली, शुक्रवाहिनी निकलती है तथा दोनों ओर की शुक्रवाहिनयाँ अपनी ओर शुक्राशय से निकलने वाली छोटी–सी नली में खुलती हैं। बाद में ये स्खलन नलिका बनाती हैं जो मूत्रमार्ग में खुलती हैं। मूल–मार्ग एक पेशीय अंग से होकर निकलता है जिसे शिश्न कहते हैं। मूत्र मार्ग एक छिद्र से बाहर खुलता है। इसे मूत्रजनन छिद्र कहते हैं। प्रॉस्टेट ग्रंथि शुक्राशय के पास स्थित होती है। इसके द्वारा क्षारीय द्रव पूरे मूत्र मार्ग को क्षारीय बनाता है, जो शुक्राणुओं की सक्रियता निश्चित करता है तथा उन्हें जीवित रखता है। नर के काऊपर, बल्बो–यूरेथ्रल, पैरिनियल आदि ग्रंथियाँ अपने स्राव द्वारा मूत्र मार्ग को चिकना बनाती हैं।

शुक्राणु शुक्राशय में संचित रहते हैं। वृषण की आंतरिक संरचना में असंख्य शुक्रजनन नलिकाएँ पाई जाती हैं। शुक्रजनन नलिकाओं में शुक्राणुओं का निर्माण तथा पोषण होता है।

प्रश्न 9. मनुष्य के फेफड़ों का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– इसके लिए प्रश्न 7 के उत्तर (फेफड़े) का अवलोकन कीजिए।

फेफड़े– मनुष्य के दोनों फेफड़े या फुफ्फुस हृदय के दोनों ओर वक्ष गुहा का अधिकांश भाग घेरे रहते हैं। इनके चारों ओर एक गुहा होती है जिसे प्लूरल या फुफ्फुसीय गुहा कहते हैं।

प्रत्येक फुफ्फुस शंक्वाकार, हल्के गुलाबी रंग का, स्पंजी तथा लचीला होता है। ये श्वसनियों , श्वसनिकाओं, वायुकोषों, कूपिकाओं एवं रुधिर केशिकाओं के जाल से बने होते हैं।

वायुकोषों के अधिक संख्या में होने के कारण मनुष्य में गैसीय आदान–प्रदान की सतह लगभग 100 वर्ग मीटर हो जाती है।

फेफड़ों की संरचना – दाहिना फेफड़ा बाएँ की अपेक्षा कुछ बड़ा होता है और यह अधूरी खाँचों के द्वारा तीन पिंडों में बँटा रहता है। बाएँ फेफड़े पर केवल एक ही खाँच होती है और यह दो पिंडों में बँटा होता है। फेफड़ों की बाहरी सतह सपाट तथा चिकनी होती है।

फेफड़ो की भीतरी संरचना मधुमक्खी के छत्ते की तरह स्पंजी और असंख्या वायुकोषों में बँटी रहती है। नवजात शिशु के एक फेफड़े में इनकी संख्या लगभग दो करोड़ किंतु व्यस्क में यह पंद्रह करोड़ से भी अधिक होती है।

प्रत्येक बार प्रत्येक वायुकोष में वायु महीनतम विभाजित हुई श्वसन नलिका से आती तथा जाती है। इन नलिकाओं को कूपिक नलिकाएँ कहते हैं। ये नलिकाएँ अपने सिरे पर फूलकर एक कूपिका बनाती हैं, जिस पर अनेक वायुकोष लगे रहते हैं।

प्रत्येक वायुकोष अति महीन झिल्ली की तरह की भित्ति से बना होता है तथा यह भित्ति चपटी कोशिकाओं से बनी होती है। इसकी बाहरी सतह पर रुधिर कोशिकाओं का जाल फैला रहता है। यह जाल फुफ्फुस धमनी के अतिरिक्त शखांवित होने से बनता है। बाद में इस जाल की सभी कोशिकाएँ मिलकर क्रमश: मोटी रुधिर वाहिनियाँ बनाती हैं, जो अंत में फुफ्फुस शिरा बनाती हैं।

प्रश्न 10. मानव की हृदय की बाह्य संरचना का नामांकित चित्र बनाइए तथा धमनी एवं शिरा में अंतर कीजिए।

उत्तर- मानव हृदय की बाह्य संरचना का नामांकित चित्र-

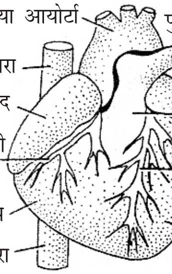

मनुष्य के हृदय की बाह्य रचना

धमनी एवं शिरा में अंतर

क्र० सं०	धमनी	शिरा
1.	धमनियों में रुधिर हृदय से अंगो की ओर बहता है।	शिराओं में रुधिर अंगों से हृदय की ओर बहता है।
2.	हृदय की धड़कनों के कारण इसमें रुधिर रुक-रुककर तथा अधिक दबाव के साथ बहता है।	शिराओं में रुधिर के बहाव की गति धीमी व एक-सी रहती है।
3.	इनकी भित्तियाँ अत्यधिक मोटी तथा लचीली होती हैं।	इनकी भित्तियाँ पतली व कम लचीली होती है।
4.	इनकी गुहा संकरी होती है।	इनकी गुहा चौड़ी होती है।
5.	ये खाली होने पर भी नहीं पिचकती है।	ये खाली होने पर पिचक जाती है।
6.	पल्मोनरी धमनी को छोड़कर शेष सभी धमनियों में शुद्ध (ऑक्सीजनयुक्त) रुधिर होता है।	पल्मोनरी शिरा को छोड़कर शेष सभी शिराओं में अशुद्ध (ऑक्सीजन रहित) रुधिर होता है।
7.	इनमें कपाट नहीं होते हैं।	इनके स्थान-स्थान पर कपाट होते हैं जो रुधिर को उल्टी दिशा में बहने से रोकते हैं।
8.	इनका रंग गुलाबी या चटक लाल होता है।	ये गहरे लाल या नीले-बैगनी रंग की होती है।
9.	ये प्राय: त्वचा से दूर गहराई में स्थित होती हैं।	ये प्राय: त्वचा के समीप स्थित होती हैं।

प्रश्न 11. मानव हृदय की आंतरिक संरचना का नामांकित चित्र बनाइए तथा दोहरे परिसंचरण (परिवहन) का वर्णन कीजिए।

उत्तर- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 4 के मनुष्य के हृदय के आन्तरिक संरचना का अवलोकन कीजिए।

मानव में रुधिर का दोहरा परिसंचरण (परिवहन)– रुधिर संचरण तंत्र में रुधिर, हृदय द्वारा पंप होकर रुधिर वाहिनियों (धमनियों तथा शिराओं) द्वारा पूरे शरीर में भ्रमण करता है। शरीर के विभिन्न अंगों व ऊतकों में वाहिनियाँ अति सूक्ष्म, बारीक केशिकाएँ बनाती हैं, जिनकी भित्तियाँ अत्यन्त महीन होती हैं। इनसे रुधिर में आए पदार्थों का आदान-प्रदान, ऊतक द्रव्य में उपस्थित पदार्थों के साथ होता है। धमनियों में रुधिर को भेजने तथा दबाव के साथ केशिकाओं में पहुँचाने का कार्य हृदय करता है और केशिकाओं से वापस लौटता रुधिर वापस बड़ी नलिकाओं, जिन्हें शिराएँ कहते हैं, के द्वारा हृदय के शिथिलन के समय उसी में आ जाता है। हृदय के जिस भाग में वह रुधिर आता है, उस भाग का संबंध धमनियों द्वारा फेफड़ों से होता है। इस प्रकार संपूर्ण शरीर से वापस लौटा रुधिर फेफड़ों में पहुँचता है।

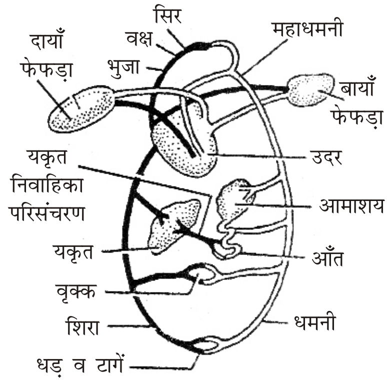

मानव में रुधिर का दोहरा परिसंचरण तंत्र

फेफड़ों में रुधिर केशिकाओं में बाँटकर वहाँ आई वायु के साथ गैसों का आदान-प्रदान करता है और इस प्रकार ऑक्सीजन युक्त होकर एक बार फेफड़ों में ही शिराओं द्वारा एकत्र होकर हृदय के एक अन्य भाग के द्वारा संपूर्ण शरीर में पंप कर दिया जाता है। इस प्रकार, मनुष्य में रुधिर का दोहरा परिसंचरण होता है। एक हृदय व फेफड़ों के मध्य फुफ्फुसीय परिसंचरण तथा दूसरा हृदय तथा फेफड़ों को छोड़कर संपूर्ण शरीर के मध्य होने वाला परिसंचरण अर्थात् दैहिक परिसंचरण ।

प्रश्न 12. मानव हृदय की बाह्य संरचना का नामांकित चित्र बनाइए। दोहरे रुधिर परिसंचरण का महत्त्व समझाइए।

उत्तर– इसके लिए प्रश्न संख्या 10 का अवलोकन कीजिए।

दोहरे रुधिर परिसंचरण का महत्त्व– दोहरे परिसंचरण में हृदय में चार वेश्म होते हैं। दो अलिन्द व दो निलय। अत: हृदय में शुद्ध रुधिर अशुद्ध रुधिर प्रथक रहते हैं। दो अग्र महाशिराएँ शरीर के अगले भाग से तथा एक पश्च महाशिरा शरीर के पिछले भाग से अशुद्ध रुधिर लाकर दाएँ अलिन्द में खुलती हैं। बाएँ अलिन्द में पल्मोनरी शिराएँ खुलती हैं जो फेफड़ों से शुद्ध रुधिर लाती हैं। इस प्रकार दाएँ अलिन्द में अशुद्ध रुधिर और बाएँ अलिन्द में शुद्ध रुधिर एकत्रित होता है।

दाएँ निलय से एक मोटी नलिका पल्मोनरी आयोर्टा या महाधमनी निकलती है। यह शीघ्र दो पल्मोनरी या फुफ्फुस धमनियों में बँट जाती है और अशुद्ध रुधिर को ऑक्सीकृत करने के लिए फेफड़ों में ले जाती है। बाएँ अलिन्द से दैहिक महाधमनी नामक एक मोटी नलिका निकलती है। महाधमनी शुद्ध रुधिर को शरीर के विभिन्न भागों में ले जाती है। यह दैहिक परिसंचरण कहलाता है।

दोहरे परिसंचरण तंत्र में शुद्ध व अशुद्ध रुधिर अलग-अलग रहते है जिस कारण परिसंचरण अधिक प्रभावशाली बना रहता है। दो अलग बन्द वेश्म होने के कारण रुधिर प्रवाह के लिए अधिक दाब बना रहता है। दोहरे परिसंचरण में किसी अंग से रुधिर को वापस उसी अंग में आने के लिए हृदय से दो बार अलग-अलग परिसंचरण मार्गों से गुजरना होता है।

प्रश्न 13. मनुष्य के हृदय की संरचना का चित्र की सहायता से वर्णन कीजिए।

उत्तर- हृदय की बाह्य रचना– चित्र के लिए प्रश्न संख्या 10 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

मनुष्य का हृदय गहरे लाल रंग की तिकोनी मांसल रचना होती है। इसमें चार वेश्म होते हैं। इसके आगे के चौड़े भाग को अलिन्द भाग तथा पीछे के भाग को निलय भाग कहते हैं। अलिन्द व निलय एक पट द्वारा दाएँ व बाएँ अलिन्द व निलय में विभाजित होते हैं। अत: मनुष्य के हृदय में चार वेश्म होते हैं। दो अलिन्द व दो निलय। दो अग्र महाशिराएँ शरीर के अगले भाग से एक पश्च महाशिरा शरीर के पिछले भाग से अशुद्ध रुधिर लाकर दाएँ अलिन्द में खुलती हैं। बाएँ अलिन्द में पल्मोनरी शिराएँ खुलती हैं जो फेफड़ों से शुद्ध रुधिर लाती हैं। इस प्रकार दाएँ अलिन्द में अशुद्ध रुधिर और बाएँ अलिन्द में शुद्ध रुधिर एकत्रित होती है।

प्रश्न 14. प्लाज्मा क्या है? प्लाज्मा के विभिन्न घटकों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- प्लाज्मा– प्लाज्मा, रुधिर का 55% निर्जीव भाग होता है। यह हल्का पीला, साफ, पारदर्शी चिपचिपा तरल पदार्थ है, जो रुधिर में माध्यम का कार्य करता है जिसमें रुधिर कणिकाएँ सर्वत्र फैली रहती हैं।

प्लाज्मा के विभिन्न घटक– प्लाज्मा में 90% पानी, 10% अकार्बनिक तथा कार्बनिक पदार्थ एवं प्रतिरक्षी पदार्थ उपस्थित होते हैं। जिनका वर्णन निम्नलिखित हैं—

1. **अकार्बनिक पदार्थ–** प्लाज्मा में सोडियम क्लोराइड तथा सोडियम बाइकार्बोनेट, लवण, कैल्सियम, मैग्नीशियम, पोटैशिम के फास्फेट, सल्फेट तथा बाइकार्बोनेट लवण सूक्ष्म मात्रा में होते हैं। ये प्लाज्मा को क्षारीय बनाते हैं।
2. **कार्बनिक पदार्थ–** इसमें प्रोटीन्स, एल्बूबिन, ग्लोब्यूलिन, प्रोथ्रोंबिन, फाइब्रिनोजन पाये जाते हैं। इनका कार्य प्लाज्मा के जल में कोलाएड्स बनाना एवं रुधिर का थक्का जमाना है।
3. **पचे हुए भोज्य पदार्थ–** इनमें अमीने अम्ल, वसा, ग्लिसरॉल, वसीय अम्ल, ग्लूकोस, कुछ विटामिन्स, फास्फोलिपिड्स, कोलेस्ट्राल एवं खनिज लवण आते हैं। इनका मुख्य कार्य उपापचई क्रियाओं को पूर्ण करना है।
4. **हॉर्मोन्स–** थाइरॉक्सिन, एड्रिनैलिन नामक हॉमोन्स उपस्थित होते हैं। ये जैविक क्रियाओं पर नियन्त्रण करने में सहायता करते हैं।
5. **एंटीबॉडीस, एंटीटॉक्सिन और लाइसोजाइम–** ये प्लाज्मा के प्रतिरक्षी पदार्थ हैं। इनका कार्य विजातीय पदार्थों (जीवाणु, विषाणु) से शरीर की रक्षा करना है।
6. **एंजीजेंस–** ये लाल रुधिर कणों पर स्थित होते हैं। ये रुधिर वर्ग को निश्चित करते हैं।
7. **प्रतिजामन–** ये प्रतिजामन हिपैरिन या एंटीप्रोथ्रोंबिन होते हैं। इनका कार्य शरीर में बहते हुए रुधिर को जमने से रोकना है।
8. **गैसें–** ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड नाइट्रोजन आदि गैसें उपस्थित होती है, जो श्वसन क्रिया में भाग लेती हैं।
9. **उत्सर्जी पदार्थ–** यूरिया, यूरिक अम्ल, क्रिटीन, क्रिटिनीन आदि उत्सर्जी पदार्थ पाए जाते हैं, जो वृक्क से शरीर के बाहर मूत्र के रूप में भेज दिए जाते हैं।

प्रश्न 15. रुधिर और लसीका में अंतर लिखिए। रुधिर के कार्य लिखिए।

उत्तर-

रुधिर और लसीका में अंतर

क्र० सं०	रुधिर	लसीका
1.	यह सामान्य तरल संयोजी ऊतक है।	यह छना हुआ रुधिर है।
2.	यह गहरे लाल रंग का तरल ऊतक है।	यह रंगहीन ऊतक है।
3.	RBC उपस्थित होती हैं परंतु कम मात्रा में।	RBC अनुपस्थित होती हैं।
4.	WBC उपस्थित होती हैं परंतु कम मात्रा में।	WBC अधिक मात्रा में पाई जाती हैं।
5.	प्रोटीन्स की मात्रा अधिक होती है।	प्रोटीन्स कम मात्रा में पाई जाती है।
6.	न्यूट्रोफिल की संख्या बहुत अधिक होती है।	लिम्फोसाइट्स की संख्या बहुत अधिक होती है।
7.	ऑक्सीजन एवं पोषक पदार्थ अधिक होते हैं।	ऑक्सीजन एवं पोषक पदार्थ कम मात्रा में पाए जाते हैं।
8.	कार्बन डाइऑक्साइड तथा उत्सर्जी पदार्थों की मात्रा सामान्य होती है।	कार्बन डाइऑक्साइड एवं उत्सर्जी पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं।

रुधिर के कार्य– रुधिर एक तरल संयोजी ऊतक है। इसका मुख्य कार्य दो ऊतकों के बीच विभिन्न प्रकार के संयोजन करना है। इन कार्यों को हम निम्नलिखित बिंदुओं में वर्णित कर सकते हैं—

(i) **ऑक्सीजन व अन्य गैसों का परिवहन–** रुधिर की लाल रुधिर कणिकाओं में उपस्थित **हीमोग्लोबिन** ऑक्सीजन ग्रहण करके **ऑक्सीहीमोग्लोबिन** नामक अस्थाई यौगिक बनाता है। ऊतकों में पहुँचने पर ऑक्सीहीमोग्लोबिन टूटकर ऑक्सीजन तथा हीमोग्लोबिन में बदल जाता है। इस प्रकार, श्वसन के लिए ऊतकों को ऑक्सीजन मिल जाती है। इसी प्रकार कार्बन डाइऑक्साइड के साथ भी हीमोग्लोबिन कार्बोएमीन यौगिक बनाता है।

(ii) **पोषक पदार्थों का परिवहन–** जल में विलेय खाद्य पदार्थ (पोषक तत्त्व) अवशोषण के समय रुधिर द्वारा ही ग्रहण किए जाते हैं। तथा शरीर के अन्य भागों को भी रुधिर द्वारा ही परिसंचरित किए जाते हैं। आँतों में से ये पदार्थ पहले यकृत में ले जाए जाते हैं। यकृत इन पोषक तत्त्वों की मात्रा तथा स्वरूप निश्चित करके रुधिर द्वारा सभी ऊतकों को भेजता है।

(iii) **उत्सर्जी पदार्थों का परिवहन–** शरीर में होने वाली अनेक प्रकार की उपापचई क्रियाओं के फलस्वरूप अनेक हानिकारक उत्सर्जी पदार्थ बनते रहते हैं। इनमें नाइट्रोजन यौगिक प्रमुख हैं। इन्हें रुधिर पहले यकृत में तथा बाद में यकृत से वृक्कों में पहुँचता है। वृक्क इन्हें रुधिर से छानकर मूत्र के रूप में बाहर निकाल देता है। श्वसनांगों से कार्बन डाइऑक्साइड भी प्रमुखत: रुधिर के प्लाज्मा द्वारा फेफड़ों तक पहुँचाई जाती है।

(iv) **अन्य पदार्थों का परिसंचरण–** अनेक प्रकार के पदार्थोंय जैसे—हॉर्मोन्स, एंजाइम्स, एंटीबॉडीज आदि को शरीर के विभिन्न भागों तक पहुँचाने का कार्य रुधिर ही करता है।

(v) **रोगों से बचाव व घाव को भरना–** शरीर में जब कोई घाव इत्यादि हो जाता है तो श्वेत रुधिर कणिकाएँ वहाँ पहुँचकर रोगाणुओं से लड़ती हैं तथा **मवाद** या **पस** (pus) बना लेती हैं। मवाद में रोगाणु भी सम्मिलित होते हैं। साथ ही रुधिर उस स्थान पर आवश्यक पदार्थ आदि को भी पहुँचाता है। इस प्रकार रुधिर घाव के भरने में सहायता करता है।

(vi) **शरीर के ताप पर नियंत्रण–** रुधिर शरीर के ताप पर नियंत्रण व नियमन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(vii) **रुधिर का थक्का बनना–** किसी स्थान पर कट-फट जाने से रुधिर बहने लगता है। यदि यह रुधिर बहता रहे तो जंतु की मृत्यु हो सकती है। रुधिर में इस प्रकार की संपूर्ण व्यवस्थाएँ होती हैं कि यदि कहीं पर रुधिर बाहर के संपर्क में आता है तो तुरंत ही उसमें थक्का बनने की कार्यवाही प्रारंभ हो जाती है।

प्रश्न 16. मनुष्य के हृदय की संरचना तथा कार्यविधि का वर्णन कीजिए।

उत्तर– हृदय की बाह्य संरचना के सचित्र वर्णन के लिए दीर्घउत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 13 का अवलोकन कीजिए।

हृदय की आन्तरिक संरचना के सचित्र वर्णन के लिए दीर्घउत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

मानव हृदय की कार्यविधि– हृदय का मुख्य कार्य शरीर के विभिन्न भागों में रुधिर को पहुँचाना होता है साथ ही ये शरीर के विभिन्न भागों से रुधिर को ग्रहण भी करता है।

हृदय शरीर में रुधिर को पम्प करने के लिए हर समय सिकुड़ता तथा फैलता रहता है। हृदय के सिकुड़ने के क्रिया के प्रंकुचन (सिस्टोल) तथा फैलने की क्रिया अनुशिथिलन (डायस्टोल) कहलाती है।

मनुष्य के हृदय में चार वेश्म होते हैं। दो अलिन्द व दो निलय। अलिन्दों के शिथिल होने से रुधिर महाशिराओं से आकर अलिन्दों में एकत्रित हो जाता है जबकि निलयों के शिथिल होने से रुधिर अलिन्दों से निलयों में एकत्रित हो जाता है। अलिन्दों तथा निलयों में ये क्रियाएँ एक के बाद एक होती है। जिससे रुधिर अलिन्दों से निलय में तथा निलयों से महाधमनियों में पहुँचता है। ये क्रियाएँ क्रमश: एक के बाद एक निरंतर चलती रहती हैं।

प्रश्न 17. परिवहन (संवहन) से आप क्या समझते हैं? मानव हृदय की संरचना एवं कार्य का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– **परिवहन (संवहन)–** सजीवों, विशेषकर बहुकोशिकीय जीवों, जिनमें सहस्रों कोशिकाएँ एक-दूसरे से बहुत दूर-दूर होती हैं, के अंदर लगातार चलने वाली जैविक क्रियाओं को सुचारु रूप से चलाने के लिए यह आवश्यक है कि शरीर के विभिन्न अंगों, ऊतकों तथा कोशिकाओं के बाह्य वातावरण से ऑक्सीजन, पोषक पदार्थ (भोजन) तथा पानी की आपूर्ति निरंतर बनी रहे। यह क्रिया उक्त पदार्थों के परिवहन से ही संभव है। साथ ही, विभिन्न अपचयिक क्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले छोटे-बड़े यौगिक भी शरीर से बाहर नहीं निकाले गए तो कोशिकाओं या ऊतकों में एकत्र होकर कुछ-न-कुछ हानि तो अवश्य करेंगे। कभी-कभी तो यह हानि अति भयंकर भी हो सकती है। ऐसे पदार्थों को बनने के स्थान से बाह्य वातवरण में निकालने वाले अंगों तक पहुँचाने के लिए परिवहन तंत्र का होना आवश्यक है। जंतुओं विशेषकर स्तनधारियों (कॉर्डेट्स) जिनमें मनुष्य भी सम्मिलित है शरीर अत्यंत जटिल होता है। विभिन्न ग्रंथियों, अंगों आदि के द्वारा अन्यान्य क्रियाओं इत्यादि को करने-कराने तथा समन्वय बनाए रखने के लिए कुछ विशेष रस आदि के स्रावण आदि को भी सही स्थान पर सामान्य परिवहन द्वारा ही पहुँचाया जाता है।

मानव हृदय की संरचना एवं कार्य के सचित्र वर्णन के लिए दीर्घउत्तरीय प्रश्न 4, 13 व 16 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 18. रुधिर कोशिकाएँ (कणिकाएँ) कितने प्रकार की होती हैं? विभिन्न रुधिर कणिकाओं की संरचना व कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **रुधिर कोशिकाएँ (कणिकाएँ)-** हमारे रुधिर का 40-50% भाग रुधिर कणिकाएँ होती हैं। ये प्रमुखत: तीन प्रकार की होती हैं—

(i) लाल रुधिर कणिकाएँ

(ii) श्वेत रुधिर कणिकाएँ

(iii) प्लेटलेट्स

रुधिर कणिकाओं की संरचना एवं कार्य-

(i) लाल रुधिर कणिकाएँ अथवा एरिथ्रोसाइट्स– ये रुधिर में उपस्थित कोशिकाओं का लगभग 99% होती है। मानव में, ये स्त्रियों में 50 लाख तथा पुरुषों में 55 लाख प्रति क्यूबिक मिली रुधिर होती हैं। नवजात शिशुओं में इनकी संख्या और भी अधिक होती है। मानव में इनका व्यास औसतन 8.0 μ तथा मोटाई 2μ होती है। इनका जीवनकाल मनुष्य में 127 दिन होता है।

प्रत्येक लाल रुधिर कणिका प्लामा कला द्वारा अवतरित रहती है। इसमें स्ट्रोमैटिन नामक संरचनात्मक प्रोटीन का जाल फैला होता है। स्ट्रोमैटिन के जाल में रंगायुक्त हीमोग्लोबिन नामक ग्लोब्यूलर प्रोटीन के करोड़ों अणु व्यवस्थित रहते हैं। ये कणिका का लगभग 90% भाग बनाते हैं। इन कणिकाओं में किसी प्रकार के सामान्य कोशिकांग नहीं होते तथा ये केंद्रकविहीन होती हैं। इनके अतिरिक्त लाल रुधिर कणिकाओं में एंजाइम्स, विटामिन्स, प्रतिजन या एंटीजन तथा कुछ लवण भी पाए जाते हैं।

(ii) श्वेत रुधिर कणिकाएँ अथवा ल्यूकोसाइट्स– ये हीमोग्लोबिन रहित अपेक्षाकृत बड़े आकार की, श्वेत एवं केंद्रकयुक्त कोशिकाएँ होती हैं। ये अमीबा के समान अनिश्चित आकृति की तथा प्रमुखत: दो प्रकार की होती हैं—

कणिकामय श्वेत रुधिर कणिकाएँ अथवा ग्रैंयूलोसाइट्स ग्रेयूलोसाइट्स प्राय: गोलाकार तथा 2-5 पालियुक्त केंद्रक वाली होती हैं। ये निम्नलिखित तीन प्रकार की होती हैं—

(a) इओसिनोफिल्स– इन्हें इओसीन से रंगा जा सकता है। इनका केंद्रक द्विपालित होता है। मनुष्य में इनकी संख्या कुल श्वेत रुधिर कणिकाओं की 2-4% तक होती है। इओसिनोफिल्स शरीर के प्रतिरक्षण, एलर्जी तथा अतिसंवेदनशीलता में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं।

(b) बेसोफिल्स- इन कोशिकाओं का केंद्रक 'S' के आकार का होता है। मनुष्य के शरीर में इनकी संख्या श्वेत रुधिर कणिकाओं की 0.5-2% तक होती है।

(c) न्यूट्रोफिल्स अथवा हेटेरोफिल्स- इन गोलाकार कोशिकाओं का केंद्रक 2-5 पालित होता है। इनकी कणिकाएँ संख्या में अधिक तथा आकार में छोटी होती हैं। मनुष्य की श्वेत रुधिर कणिकाओं में इनकी संख्या प्राय 60-70% तक होती है। इनका मुख्य कार्य फैगोसाइटोसिस अर्थात् जीवाणुओं व अन्य बाह्य पदार्थों का भक्षण करना है।

☆ **अंकणिकामय श्वेत रुधिर कणिकाएँ अथवा एग्रैन्यूलोसाइट्स-** इनके कोशिकाद्रव्य में कणिकाओं का अभाव होता है तथा केंद्रक पालियुक्त नहीं होता। ये दो प्रकार की होती हैं—

(a) **लिम्फोसाइट्स**– इनमें कोशिकाद्रव्य कम तथा केंद्रक गोलाकार व बड़ा होता है। ये मनुष्य की श्वेत रुधिर कणिकाओं की कुल संख्या का 20-30% भाग बनाती हैं। ये शरीर में प्रतिरक्षण का कार्य करती हैं।

(b) **मोनोसाइट्स**– ये कोशिकाएँ बड़े आकार की तथा श्वेत कणिकाओं की लगभग 4-10% होती हैं। इनका केंद्रक बड़ा तथा एक ओर से कटा होता है। इनका मुख्य कार्य **फैगोसाइटोसिस** है।

(iii) **प्लेटलेट्स**– प्लेटलेट्स या थ्रोम्बोसाइट्स केवल स्तनियों (मनुष्य) के रुधिर में ही पाई जाती हैं। ये गोल, अंडाकार अथवा द्विउन्नतोदर, प्लेट के आकार की तथा **केंद्रकविहीन** कोशिकाएँ होती हैं। रुधिर में इनकी संख्या प्रति क्यूबिक मिली 2.5 से 5 लाख तक होती है। इनका मुख्य कार्य रुधिर का थक्का जमने में सहायता करना है।

प्रश्न 19. रक्त (रुधिर) की संरचना तथा कार्य का वर्णन कीजिए।

उत्तर– **रक्त (रुधिर) की संरचना–** रुधिर संयोजी ऊतक का रूपांतर है। संरचना में तरल होने के कारण तरल संयोजी ऊतक कहलाता है। यह वाहिनियों तथा कोशिकाओं द्वारा शरीर में बहता रहता है और विभिन्न अंगों/भागों के बीच पदार्थों के संवहन में सहायता करता है।

रुधिर की संरचना– रुधिर लाल रंग का अपारदर्शी, गाढ़ा, क्षारीय एवं चिपचिपा पदार्थ है। यह स्वाद में नमकीन तथा जल से भारी होती है। इसका भार संपूर्ण शरीर के भार का लगभग 5-8 प्रतिशत होता है। स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा रुधिर की थोड़ी कम मात्रा होती है। 70 किग्रा भार के एक स्वस्थ पुरुष में 5-6 लीटर रुधिर होता है, जबकि स्त्री में इसकी मात्रा 4-5 लीटर होती है। रुधिर का pH मान 7.3 से 7.4 तथा **श्यानता** (viscosity) पानी से 25 गुना गाढ़ी होती है।

रुधिर की संरचना में दो मुख्य भाग होते हैं— (1) प्लाज्मा तथा (2) रुधिर कणिकाएँ।

(a) **प्लाज्मा**– प्लाज्मा, रुधिर का 55% निर्जीव भाग होता है। यह हल्का पीला, साफ, पारदर्शी चिपचिपा तरल पदार्थ है, जो रुधिर में माध्यम का कार्य करता है जिसमें रुधिर कणिकाएँ सर्वत्र फैली रहती हैं। प्लाज्मा में 90% पानी, 10% अकार्बनिक तथा कार्बनिक पदार्थ एवं प्रतिरक्षी पदार्थ उपस्थित होते हैं।

(b) **रुधिर कणिकाएँ–** इसके लिए प्रश्न संख्या 18 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

रुधिर के कार्य– प्रश्न संख्या 15 के अन्तर्गत ''रुधिर के कार्य'' का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 20. लसीका क्या है? इसका क्या महत्त्व है? रुधिर एवं लसीका में अंतर बताइए।

उत्तर– **लसीका–** रुधिर वाहिनियों तथा ऊतकों के मध्य खाली स्थान के एक रंगहीन स्वच्छ तरल पदार्थ पाया जाता है, जिसे लसीका कहते हैं। रुधिर प्लाज्मा रुधिर कोशिकाओं की पतली दीवार से छनकर ऊतक कोशिकाओं के संपर्क में आ जाता है। इस छने हुए द्रव को लिम्फ या लसीका या ऊतक द्रव कहते हैं। लसीका में लाल रुधिर कणिकाएँ (RBC) व हीमोग्लोबिन नहीं पाई जाती हैं, परंतु श्वेत रुधिर कणिकाएँ अधिक मात्रा में पाई जाती है। इसमें ऑक्सीजन तथा पोषक पदार्थों की मात्रा रक्त की अपेक्षा कम होती है तथा CO_2 एवं उत्सर्जी पदार्थों की मात्रा अधिक होती है।

लसीका ऊतक से हृदय की ओर केवल एक ही दिशा में बहती है। लसीका में रुधिर प्लाज्मा में पाए जाने वाले सभी लवण, शर्करा, अमीनों अम्ल तथा ऑक्सीजन आदि गैसें होती हैं। ऊतक कोशिकाएँ इसी लसीका से आवश्यक पदार्थ प्राप्त करती है और अमोनिया तथा कार्बन डाइऑक्साइड को ऊतक द्रव में छोड़ देती हैं। ऊतक द्रव की कुछ मात्रा कोशिकाओं द्वारा सोख ली जाती है जो शिराओं के रुधिर में मिल जाती है। बाकी

ऊतक द्रव लसीका वाहिनियों में पहुँचता है और लसीका के रूप में महाशिरा में डाल दिया जाता है। अत: यह भी रुधिर के प्लाज्मा में मिल जाता है। इस प्रकार रुधिर में उत्सर्जी पदार्थ एकत्रित होते हैं।

लसीका का महत्व–

(i) लसीका ऊतकीय द्रव एवं पदार्थों को रुधिर तंत्र में वापस लाती है, जो धमनी केशिका से विसरित हो जाते हैं।

(ii) लसीका केशिकाएँ लसीका तथा रुधिर के मध्य भोज्य पदार्थ, गैस, हॉर्मोस, विकर आदि के प्रसारण के माध्यम का कार्य करती है।

(iii) लसीका गाँठों में लिम्फोसाइट्स का निर्माण होता है।

(iv) केशिका के चारों ओर जलीय वातावरण बनाकर केशिका के बाहर एवं भीतर परासरण संतुलन बनाता है।

(v) लसीका ऊतक से कार्बन डाइऑक्साइड व अन्य उत्सर्जी पदार्थ को रुधिर केशिकाओं तक पहुँचाता है।

(vi) लसीका की मैक्रोपेज कोशिकाएँ जीवाणुओं व अन्य बाहरी पदार्थ का भक्षण करके शरीर की रक्षा करती हैं।

(vii) लसीका में श्वेत कणिकाओं की मात्रा अधिक होने के कारण घाव भरने में सहायता होती है।

(viii) छोटी आँत के रसाकुंरों में उपस्थित लसीका वाहिनियाँ वसा का अवशोषण करके इसे **काइलोमाइक्रॉन बूँदों** के रूप में रुधिर में पहुँचाती हैं।

(ix) मनुष्य में लसीका गाँठें जैविक छलनी की तरह कार्य करती हैं। हानिकारक जीवाणु, धूल-मिट्टी के कण, कैंसर कोशिकाएँ आदि इन गाँठों में रुक जाते हैं और अन्य आवश्यक पदार्थ रुधिर परिसंचरण में पहुँच जाते हैं।

(x) लसीका तंत्र, रुधिर परिसंचरण तंत्र सहायक के रूप में कार्य करता है। लसीका सदैव एक दिशा में, ऊतकों से हृदय की ओर बहता है; अत: रुधिर की मात्रा तथा गुणवत्ता को बनाएँ रखने का कार्य करता है।

रुधिर एवं लसीका में अंतर– प्रश्न संख्या 15 के उत्तर में 'रुधिर एवं लसीका में अन्तर' का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 21. उत्सर्जन क्या है? मनुष्य के उत्सर्जन अंगों की संरचना तथा कार्यविधि का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– उत्सर्जन– मनुष्य एवं सभी कशेरुकी प्राणियों में उपापचय क्रियाओं के फलस्वरूप बने नाइट्रोजनी उपापचई उत्सर्जी उत्पादों को शरीर से बाहर निकालने की क्रिया को उत्सर्जन कहते हैं।

मनुष्य के उत्सर्जन अंगों की संरचना तथा क्रियाविधि– मनुष्य में एक जोड़ी वृक्क उत्सर्जी अंग होते हैं। ये उदरगुहा में कशेरुक दंड के दोनों ओर स्थित होते हैं। बायाँ वृक्क दाहिने वृक्क के कुछ आगे स्थित होता है। प्रत्येक वृक्क के अगले सिरे से एक गोल अधिवृक्क ग्रंथि जुड़ी होती है। प्रत्येक वृक्क **रीनल**

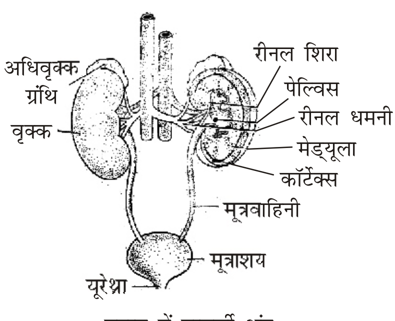

मनुष्य में उत्सर्जी अंग

धमनी द्वारा रुधिर प्राप्त करता है। और **रीनल शिरा** वृक्क से रुधिर एकत्रित करके पश्च महाशिरा में पहुँचाती है। प्रत्येक वृक्क के भीतरी किनारे से एक मूत्रवाहिनी (यूरेटर) निकलकर मूत्राशय में खुलती है। मूत्राशय मूत्रमार्ग द्वारा शरीर के निचले भाग में खुलता है।

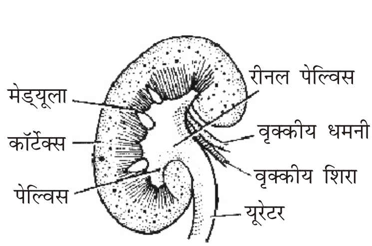

मानव के वृक्क की आंतरिक संरचना

वृक्क की संरचना – मनुष्य में वृक्क सेम के बीज के आकार का होता है। यह लगभग 10 सेमी लंबा, 5-6 सेमी चौड़ा तथा 2-5 सेमी मोटा होता है। वयस्क पुरुषों में वृक्क का भार 125-170 ग्राम तथा स्त्रियों में 115-155 ग्राम होता है। वृक्क का भीतरी किनारा धँसा हुआ या अवतल तथा बाहरी किनारा उभरा हुआ या उत्तल होता है। इस धँसे हुए स्थान को हाइलम कहते हैं। इससे मूल नलिका निकलती है तथा रीनल धमनी व रीनल शिरा भी जुड़ी होती है।

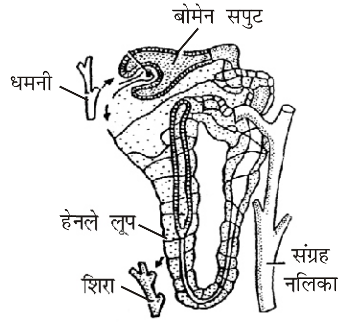

वृक्क नलिका की संरचना

वृक्क की खड़ी काट में इसकी आंतरिक संरचना देखी जा सकती है। वृक्क के भीतर धँसे हुए किनारे के मध्य में कीप के आकार की खोखली संरचना होती है। इसे पेल्विस कहते हैं। वृक्क का भाग ठोस होता है और दो भागों में बँटा होता है।

(1) बाहरी, हल्का बैंगनी रंग का परिधीय भाग— कॉर्टेक्स

(2) भीतरी, गहरे रंग का केंद्रीय भाग— मेड्यूला

प्रत्येक वृक्क में लाखों की संख्या में (लगभग दस लाख) सूक्ष्म व लंबी कुंडलित वृक्क नलिकाएँ (नेफ्रॉन) होती हैं। प्रत्येक वृक्क नलिका के दो सिरे होते हैं।

एक सिरा तो संग्रह नलिका में खुलता है और दूसरा सिरा एक प्याले जैसी रचना बनाता है। इसे बोमेन संपुट कहते हैं। इसके अंदर केशिकाओं की एक गाँठ होती हैं जिसे केशिकागुच्छ या ग्लोमेरुलस कहते हैं। यह रीनल धमनी की अभिवाही धमनिका की केशिकाओं से बनता है। इन केशिकाओं के दूसरे सिरे मिलकर अभिवाही धमनिका बनाते हैं। अभिवाही धमनिका बोमेन संपुट से बाहर निकलकर वृक्क नलिका के चारों ओर केशिका जाल बनाती हैं। ये केशिकाएँ अंत में रीनल शिरा से जुड़ती हैं। प्रत्येक वृक्क नलिका में निम्नलिखित भाग होते हैं—

1. प्यालेनुमा बोमेन संपुट, 2. समीपस्थ कुंडलित नलिका

3. हेनले लूप 4. दूरस्थ कुंडलित नलिका

बोमेन संपुट में परानिस्यंदन द्वारा रुधिर से उत्सर्जी पदार्थ व जल को अलग करते हैं। इस प्रकार बने फिल्ट्रेट में यूरिया, अमोनिया, लवण, ग्लूकोज, विटामिन आदि भी होते हैं। वृक्क नलिका के शेष भाग फिल्ट्रेट से लाभदायक यौगिकों व जल का पुन: अवशोषण करते हैं।

मनुष्य के अन्य उत्सर्जी अंग – वृक्कों के अलावा मनुष्य एवं सभी कशेरुकी प्राणियों में यकृत, त्वचा, फेफड़े और आंत्र भी उत्सर्जन में मदद करते हैं।

(i) यकृत– यकृत में यद्यपि उत्सर्जन की क्रिया नहीं होती परंतु यह उत्सर्जन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है—

(a) यकृत में विशेष एंजाइमों की सहायता से NH_3 और CO_2 से यूरिया बनता है। यह NH_3 से कम हानिकारक और पानी में अधिक घुलनशील है। यदि यकृत अपने इस काम को रोक दे तो शरीर में अमोनिया की अधिकता का क्या परिणाम होगा?

(b) यकृत में मृतक R.B.Cs के हीमोग्लोबिन के टूटने में पित्त वर्णक बनते हैं। पित्त वर्णक पित्त रस के साथ आंत्र में पहुँचते हैं और विष्ठा के साथ शरीर से बाहर निकाल दिए जाते हैं।

(ii) त्वचा– त्वचा की स्वेद ग्रंथियाँ रुधिर से जल, लवण और कुछ मात्रा में यूरिया अलग करके पसीने के रूप में शरीर से बाहर निकालती हैं।

(iii) फेफड़े– फेफड़े श्वसन क्रिया के अंतर्गत रुधिर में घुली CO_2 का उत्सर्जन करते हैं। श्वास छोड़ते समय CO_2 भी वायु के साथ फेफड़ों से बाहर आ जाती है।

प्रश्न 22. मनुष्य के उत्सर्जी तंत्र का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– इसके लिए प्रश्न संख्या 21 के अन्तर्गत ''मनुष्य के उत्सर्जन अंग की संरचना तथा क्रियाविधि' का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 23. उत्सर्जन किसे कहते हैं। मनुष्य के वृक्क की संरचना को सचित्र समझाइए।

उत्तर– प्रश्न संख्या 21 के अन्तर्गत ''उत्सर्जन' व 'वृक्क' की संरचना का अवलोकन करें।

प्रश्न 24. वृक्क की संरचना तथा कार्य पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– इसके लिए प्रश्न संख्या 21 का अवलोकन कीजिए।

वृक्क के कार्य– वृक्क के दो मुख्य कार्य हैं— उत्सर्जन एवं परासरणनियमन।

(i) उत्सर्जन– प्रोटीन उपापचय में उत्पन्न एमीनों अम्लों की फालतू मात्रा को विएमाइनीकरण से यकृत कोशिकाएँ यूरिया में बदल लेती हैं। वृक्क यूरिया को पानी में घुले मूत्र के रूप में शरीर से बाहर निकालते हैं। अत: यूरिया आदि उपापचई उत्सर्जी उत्पादों को शरीर से बाहर निकालने के लिए वृक्क ही प्रमुख उत्सर्जी अंग है।

(ii) परासरणनियमन – शरीर में लवणों की मात्रा के तदानुसार जल की मात्रा के नियमन को परासरणनियमन कहते हैं। बहुत अधिक मात्रा में पानी पीने पर रुधिर प्लाज्मा तथा ऊतक द्रव में लवणों के प्रति जल का आपेक्षिक अनुपात बढ़ जाता है। ऐसे में वृक्क केवल जल की थोड़ी-सी मात्रा का पुन:शोषण करते हैं तथा बड़ी मात्रा में तनु मूत्र उत्पन्न करते हैं। रुधिर बहने या पसीने के कारण जब शरीर में पानी की कमी हो जाती है तो शरीर में पानी की आवश्यक मात्रा को बनाए रखने के लिए वृक्क अधिक जल का पुन: शोषण करते हैं जिसके कारण मूत्र अधिक गाढ़ा एवं कम मात्रा में बनता है।

प्रश्न 25. वृक्क नलिका की संरचना तथा मूत्र निर्माण की क्रिया का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर– **वृक्क नलिका की संरचना** के लिए प्रश्न संख्या 21 का अवलोकन कीजिए।

मूत्र निर्माण की क्रिया– मूत्र निर्माण की प्रक्रिया में अग्रलिखित तीन पद निहित होते हैं।

(a) केशिकागुच्छीय फिल्टरीकरण– इस पद में प्रोटीन मुक्त द्रव केशिकागुच्छीय फिल्ट्रेट है। केशिकागुच्छीय केशिकाओं के रक्त से छनकर बोमन कैप्सूल के लुमेन में जाता है।

(b) चयनित पुनरवशोषण– केशिकागुच्छीय फिल्ट्रेट में शरीर के लिए उपयोगी कई पदार्थ होते हैं। जैसे ही यह फिल्ट्रेट अत्यधिक लंबी मूत्रवाहिनी में प्रवाहित होता है

कई चयनित उपयोगी पदार्थ वापस छोटी नली में आ जाते हैं। इस प्रक्रिया को चयनित पुनरवशोषण कहते हैं। ग्लूकोज तथा अमीनो एसिड जैसे पदार्थ जो कि शरीर के लिए अत्यधिक उपयोगी है तुरंत पुनरवशोषित कर लिए जाते हैं, जबकि कुछ पदार्थ जैसे यूरिया, अमोनिया, क्रिएटिनिन, कीटोन कण आदि विसरण की भौतिक विधि द्वारा धीरे-धीरे छोटी नली से पनरवशोषित कर लिए जाते हैं।

केशिकागुच्छीय फिल्ट्रेट मूत्रवाहिनी के विभिन्न भागों से सफलतापूर्वक धीरे-धीरे प्रवाहित होकर मूत्र नलिका तंत्र में एकत्र हो जाता है। फिर यह निकलकर वृक्क के श्रोणि क्षेत्र में पहुँचता है जहाँ से यह मूत्र के रूप में अलग कर दिया जाता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. त्वचा के कोई चार महत्वपूर्ण कार्य बताइए।

उत्तर- त्वचा के चार महत्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित हैं—

1. त्वचा शरीर के भीतरी कोमल अंगों पर एक रक्षक आवरण बनाती है।
2. मनुष्य व अन्य स्तनधारियों में पसीने की ग्रंथियाँ, पसीने के रूप में अनेक हानिकारक पदार्थों का विसर्जन करती हैं।
3. त्वचा में पाए जाने वाले वसा स्तर शरीर की गर्मी को रोकते हैं। पसीने के द्वारा अधिक गर्मी निकल जाती है और ठंडक पैदा होती है।
4. त्वचा में तंत्रिकाओं के सूत्र समाप्त होते हैं इसलिए यह स्पर्श, दबाव, सर्दी, गर्मी, पीड़ा इत्यादि उद्दीपनों का अनुभव करती है।

प्रश्न 2. मानव हृदय की आंतरिक संरचना का एक स्वच्छ नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर- मानव हृदय की आंतरिक संरचना के चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. रुधिर के चार कार्य बताइए।

उत्तर- रुधिर के चार कार्य निम्नलिखित हैं—

1. जल में विलेय खाद्य पदार्थ (पोषक तत्त्व) अवशोषण के समय रुधिर द्वारा ही ग्रहण किए जाते हैं तथा शरीर के अन्य भागों को भी रुधिर द्वारा ही परिसंचरित किए जाते हैं।
2. अनेक प्रकार के पदार्थों; जैसे— हॉर्मोन्स, एंजाइम्स, एंटीबॉडीज आदि को शरीर के विभिन्न भागों तक पहुँचाने का कार्य रुधिर ही करता है।
3. रुधिर घाव भरने में सहायता करता है। ये घाव पर रक्त बहने की स्थिति में थक्का बनाता है।
4. रुधिर शरीर के ताप नियंत्रण व नियमन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

प्रश्न 4. मनुष्य की आहारनाल का एक स्वच्छ नामांकित चित्र बनाइए। (वर्णन की आवश्यकता नहीं है।)

उत्तर- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 5. अग्न्याशय की संरचना तथा कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **अग्न्याशय-** आमाशय के पीछे उदर गुहा की पश्च भित्ति पर तथा ग्रहणी के मध्य बने 'C' आकार के स्थान पर स्थित यह यकृत के बाद दूसरी सबसे बड़ी ग्रंथि है। यह चपटी आकृति वाली गुलाबी रंग की अति महत्वपूर्ण ग्रंथि होती है। एक संयुक्त ग्रंथि या मिश्रित होती है तथा इसके दो भाग होते हैं— बहि:स्रावी भाग और अंत:स्रावी भाग। यह छोटे-छोटे अनेक पिण्डकों की बनी होती है, जिनकी घनाकार व स्रावी कोशिकाओं के

मध्य, स्थान-स्थान पर विशेष कोशिकाओं के समूह पाए जाते हैं। इन्हें लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ कहते हैं।

अग्न्याशय के कार्य– अग्न्याशय के दो प्रमुख कार्य हैं—

(a) अग्न्याशई रस का स्रावण– पाचन क्रिया के लिए अग्न्याशय की बहि:स्रावी कोशिकाएँ अग्न्याशयिक रस स्रावित करती है। इसमें कई एंजाइम; जैसे— ट्रिप्सिन, क्राइमोट्रिप्सिन, एमाइलेज तथा लाइपेज होते हैं।

अग्न्याशिक रस को एकत्र कर ग्रहणी तक पहुँचाने का कार्य अग्न्याशय के छोटे-छोटे पिण्डकों से प्रारम्भ होने वाली छोटी-छोटी वाहिनियाँ करती हैं। ये बाद में जुड़कर एक सामान्य वाहिनी, अग्न्याशिक वाहिनी बनाती हैं। यह वाहिनी सामान्य पित्त नली के साथ जुड़कर ग्रहणी में खुलती है। अग्न्याशायिक रस के एंजाइम्स भोजन के सभी अवयवों अर्थात् प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेटस तथा वसा के पाचन में सहायक होते हैं।

(b) हॉर्मोन्स का स्रावण– ग्रंथि के बहि:स्रावी भाग (लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ) की कोशिकाओं से इन्सुलिन तथा ग्लूकैगॉन नामक हॉर्मोन्स स्रावित होते हैं। ये सीधे रुधिर में डाल दिए जाते हैं। ये कार्बोहाइड्रेट के उपापचय का नियंत्रण एवं नियमन करने में सहायक होते हैं।

प्रश्न 6. मानव शरीर में पाए जाने वाली सबसे बड़ी ग्रंथि कौन-सी है? उसके कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– यकृत शरीर में उपस्थित सभी ग्रंथियों में सबसे बड़ी ग्रंथि है। जो विभिन्न उपापचई क्रियाओं को चलाने में सहायता करता है। इसका भार 1.5 किग्रा होता है। यह उदरगुहा में डायाफ्राम के नीचे तथा आमाशय के ऊपर स्थित होता है। यकृत में तीन पालियाँ होती हैं। यकृत के पिंड अनेक बहुभुजीय पिंडकों से बने होते हैं जिनको ग्लीसन कैप्सूल कहते हैं।

यकृत पिण्डक का निर्माण यकृत कोशिकाओं के द्वारा होता है। यकृत कोशिकाओं से पित्त का स्रावण होता है जो पित्ताशय में संचित होता है और आवश्यकता के अनुरूप स्रावित होता रहता है।

यकृत के कार्य-

1. यकृत पित्त रस का स्रावण करता है जो आमाशय से आए भोजन को क्षारीय बनाता है। ये भोजन को सड़ने से रोकता है व हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट करता है।
2. रुधिर में ग्लूकोज की मात्रा अधिक होने पर यकृत कोशिकाएँ ग्लूकोज को ग्लाइकोजन में बदलकर संचित कर लेती हैं। यह क्रिया ग्लाइकोजेनेसिस कहलाती है।
3. रुधिर में ग्लूकोज की मात्रा कम होने पर संचित ग्लाइकोजन को यकृत कोशिकाएँ पुन: ग्लूकोज में बदल देती है। यह क्रिया ग्लूकोजिनोलाइस कहलाती है।
4. ग्लाइकोनियोजेनेसिस क्रिया में यकृत कोशिकाएँ आवश्यकता अनुरूप एमीनो अम्लों तथा वसीय अम्लों आदि से भी ग्लूकोज का निर्माण कर सकती हैं।
5. वसा एवं विटामिन्स का संश्लेषण एवं संचय, यकृत कोशिकाओं में होता है।
6. यकृत कोशिकाएँ विषाक्त पदार्थों का विषहरण करती हैं।
7. ये यूरिया का संश्लेषण करती हैं, आवश्यक होने पर ऐमीनों से प्राप्त अमोनिया को यूरिया में बदल देती हैं।
8. ये हिपैरिन का स्रावण करती हैं तथा रुधिर वाहिनियों को जमने नहीं देती हैं।

प्रश्न 7. लसीका क्या है? यह रुधिर से किस प्रकार भिन्न है?

उत्तर- **लसीका-** रुधिर वाहिनियों तथा ऊतकों के मध्य खाली स्थान में एक रंगहीन स्वच्छ तरल पदार्थ पाया जाता है, जिसे लसीका कहते हैं। रुधिर प्लाज्मा रुधिर कोशिकाओं की पतली दीवार से छनकर ऊतक कोशिकाओं के संपर्क में आ जाता है। इस छने हुए द्रव को लिम्फ या लसीका या ऊतक द्रव कहते हैं। लसीका में लाल रुधिर कणिकाएँ (RBC) व हीमोग्लोबिन नहीं पाई जाती हैं, परंतु श्वेत रुधिर कणिकाएँ अधिक मात्रा में पाई जाती है। इसमें ऑक्सीजन तथा पोषक पदार्थों की मात्रा रक्त की अपेक्षा कम होती है तथा CO_2 एवं उत्सर्जी पदार्थों की मात्रा अधिक होती है।

प्रश्न 8. वृक्कों के मुख्य कार्य लिखिए।

उत्तर- **वृक्क के कार्य** – वृक्क के दो मुख्य कार्य हैं- उत्सर्जन एवं परासरणनियमन।

(i) उत्सर्जन– प्रोटीन उपापचय में उत्पन्न एमीनों अम्लों की फालतू मात्रा को विएमाइनीकरण से यकृत कोशिकाएँ यूरिया में बदल लेती हैं। वृक्क यूरिया को पानी में घुले मूत्र के रूप में शरीर से बाहर निकालते हैं। अत: यूरिया आदि उपापचई उत्सर्जी उत्पादों को शरीर से बाहर निकालने के लिए वृक्क ही प्रमुख उत्सर्जी अंग है।

(ii) परासरणनियमन – शरीर में लवणों की मात्रा के तदानुसार जल की मात्रा के नियमन को परासरणनियमन कहते हैं। बहुत अधिक मात्रा में पानी पीने पर रुधिर प्लाज्मा तथा ऊतक द्रव में लवणों के प्रति जल का आपेक्षिक अनुपात बढ़ जाता है। ऐसे में वृक्क केवल जल की थोड़ी–सी मात्रा का पुन:शोषण करते हैं तथा बड़ी मात्रा में तनु मूत्र उत्पन्न करते हैं। रुधिर बहने या पसीने के कारण जब शरीर में पानी की कमी हो जाती है तो शरीर में पानी की आवश्यक मात्रा को बनाए रखने के लिए वृक्क अधिक जल का पुन: शोषण करते हैं जिसके कारण मूत्र अधिक गाढ़ा एवं कम मात्रा में बनता है।

प्रश्न 9. मानव में वृषण शरीर के बाहर क्यों होते हैं? या मानव में वृषण कहाँ स्थित होते हैं? इनकी संरचना तथा कार्य बताइए।

उत्तर- मानव में वृषण शरीर के बाहर स्थित होते है। वृषण के शरीर से बाहर स्थित होने के कारण इनका ताप शरीर के ताप से 2 से 2.5°C कम बना रहता है जिससे इनमें शुक्राणुओं का निर्माण होने की सहायता मिलती है।

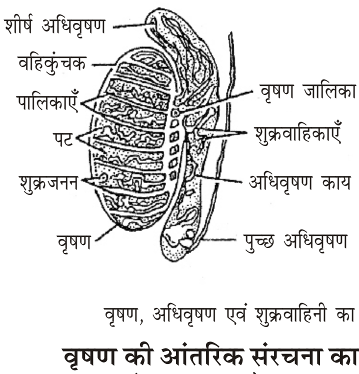

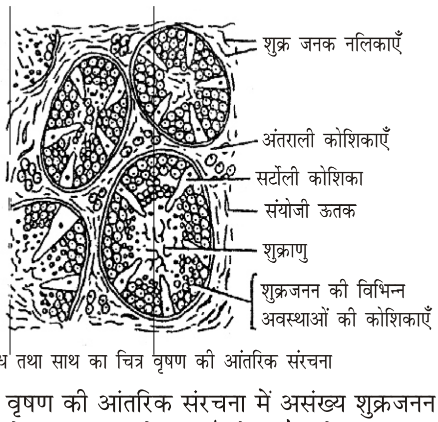

वृषण, अधिवृषण एवं शुक्रवाहिनी का संबंध तथा साथ का चित्र वृषण की आंतरिक संरचना

वृषण की आंतरिक संरचना कार्य- वृषण की आंतरिक संरचना में असंख्य शुक्रजनन नलिकाएँ पाई जाती हैं। इनके चारों ओर अंतराली कोशिकाएँ होती हैं, जो अंत:स्रावी ग्रंथियों की तरह कार्य करती है और टेस्टोस्टेरॉन हार्मोन स्रावित करती हैं। शुक्रजन नलिकाओं में शुक्राणुओं का निर्माण होता हैं तथा इसमें पाई जाने वाली सर्टोली कोशिकाएँ शुक्राणुओं को पोषण देती हैं। वृषण में अनेक बारीक नलिकाओं की जालिका

जैसी संरचना पाई जाती है, जिसे वृषण जालिका कहते हैं। इस जालिका की वृषण से बाहर निकल कर इसी इसी के ऊपर एक जिस कुंडलित रचना का निर्माण करती हैं, इसे अधिवृषण या एपिडिडिमिस कहते हैं। इसके तीन भाग शीर्ष अधिवृषण, अधिवृषण काय तथा पुच्छ अधिवृषण होते हैं।

इसका मुख्य कार्य शुक्राणुओं का निर्माण तथा उनको पोषण प्रदान करना है।

प्रश्न 10. मानव शुक्राणु की संरचना चित्र की सहायता से समझाइए।

उत्तर– **मानव शुक्राणु की संरचना–** प्रत्येक शुक्राणु एक अगुणित कोशिका है जो विशेष आकार–प्रकार की होती है। यह एक विशिष्ट, दीर्घित तथा पुच्छयुक्त संरचना होती है जो एक विशेष तरल, वीर्य में रहती है।

प्रत्येक शुक्राणु सिर, सूक्ष्म ग्रीवा, मध्य भाग तथा पूंछ में विभेदित होती है। इसके सबसे चौड़े भाग, सिर में एक केंद्रक होता है जिसमें गुणसूत्र की अगुणित संख्या होती है। यह निषेचन में सहायक होती है। मध्य भाग में अनेक माइटोकॉण्ड्रिया सर्पिल क्रम में व्यवस्थित होते हैं, जो शुक्राणुओं के चलन के लिए ऊर्जा (ATP) प्रदान करते हैं। ग्रीवा के अंदर उपस्थित दो तारक केंद्रों में से पिछले से एक लंबा अक्षीय तंतु पुच्छ तक में रहता है।

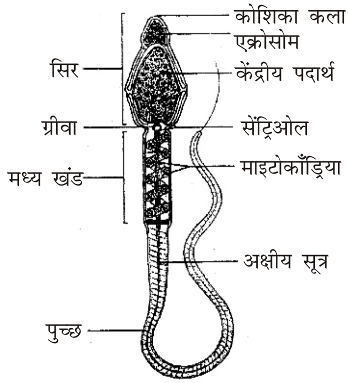

एक शुक्राणु की संरचना

शुक्राशय की ग्रंथिल दीवारों से निकला हुआ द्रव (लगभग 65%) अन्य ग्रंथियों द्वारा स्रावित रसों के साथ मिलकर शुक्राणुओं का पोषण करता है तथा उसे सुरक्षित रखता है। यह सफेद रंग का तरल बनाता है, जिसे वीर्य कहते हैं। यह एक तरल माध्यम का कार्य करता है जिससे स्त्री की योनि में शुक्राणु सुरक्षित स्थानांतरित होकर आगे अंड के निषेचन के स्थान तक पहुँच सकें। यह क्षारीय होता है ताकि नर के मूत्र मार्ग और मादा की योनि में मूत्र की अम्लीयता को नष्ट कर सके। इसके प्रभाव से योनि मार्ग चिकना व नम हो जाता है।

प्रश्न 11. रुधिर कणिकाएँ क्या हैं तथा ये कितने प्रकार की होती हैं?

उत्तर– रुधिर का 40-50% भाग रुधिर कणिकाएँ होती हैं। ये प्रमुखत: तीन प्रकार की होती हैं—

(i) लाल रुधिर कणिकाएँ
(ii) श्वेत रुधिर कणिकाएँ
(iii) प्लेटलेट्स

(i) लाल रुधिर कणिकाएँ अथवा एरिथ्रोसाइट्स– ये रुधिर में उपस्थित कोशिकाओं का लगभग 99% होती है। मानव में, ये स्त्रियों में 50 लाख तथा पुरुषों में 55 लाख प्रति क्यूबिक मिली रुधिर होती हैं। नवजात शिशुओं में इनकी संख्या और भी अधिक होती है। इनका जीवनकाल मनुष्य में 127 दिन होता है।

(ii) श्वेत रुधिर कणिकाएँ अथवा ल्यूकोसाइट्स– ये हीमोग्लोबिन रहित अपेक्षाकृत बड़े आकार की, श्वेत एवं केंद्रकयुक्त कोशिकाएँ होती हैं। ये अमीबा के समान अनिश्चित आकृति की तथा प्रमुखत: दो प्रकार की होती हैं—

(a) कणिकामय श्वेत रुधिर कणिकाएँ अथवा ग्रैन्यूलोसाइट्स
(b) अकणिकाय श्वेत रुधिर कणिकाएँ अथवा एग्रैन्यूलोसाइट्स

(iii) **प्लेटलेट्स–** प्लेटलेट्स या थ्रोम्बोसाइट्स केवल स्तनियों (मनुष्य) के रुधिर में ही पाई जाती हैं। ये गोल, अंडाकार अथवा द्विउन्नतोदर, प्लेट के आकार की तथा केंद्रकविहीन कोशिकाएँ होती हैं। रुधिर में इनकी संख्या प्रति क्यूबिक मिली 2.5 से 5 लाख तक होती है। इनका मुख्य कार्य रुधिर का थक्का जमने में सहायता करना है।

प्रश्न 12. नाड़ी क्या है? हृदय की धड़कन का नाड़ी के साथ क्या संबंध है?

उत्तर– जब हृदय के निलय में संकुचन होता है तो रुधिर रुक-रुक कर झटके के साथ धमनियों में प्रवाहित होता है जिसके प्रभाव से धमनियाँ भी रुक-रुक कर फूलती व पिचकती हैं, जिससे धमनियों में स्पंदन होता है जिन स्थानों पर धमनियाँ किसी कड़े भाग; जैसे अस्थि पर होकर निकलती हैं तथा इससे बाहर पेशियाँ इत्यादि अधिक नहीं होती हैं, ऐसे स्थानों पर धमनियों के स्पंदन को आसानी से अनुभव किया जा सकता है। इसी को नाड़ी कहते हैं।

हृदय की धड़कन का पता नाड़ी को गिनने से ज्ञात किया जा सकता है। नाड़ी का अनुभव शरीर के उन स्थानों पर आसानी से किया जा सकता है जहाँ पर धमनियाँ त्वचा के अधिक निकट संपर्क में होती हैं जैसे-कलाई, गर्दन, टखने और माथा आदि पर। अधिकतर डाक्टर कलाई की रेडियल धमनियों पर अँगुलियाँ रखकर नाड़ी को गिनते हैं और हृदय की स्पंदन गति का पता चल जाता है। एक स्वस्थ मनुष्य में नाड़ी की दर 70-80 प्रति मिनट, बालक में 120 प्रति मिनट तक वृद्धों में 60-70 प्रति मिनट होती है।

प्रश्न 13. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए–

(a) यकृत, (b) वृषण, (c) कपाट, (d) रसांकुर (विलाई)

उत्तर– (a) **यकृत–** इसके लिए लघुउत्तरीय प्रश्न संख्या-6 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

(b) **वृषण–** एक जोड़ी वृषण पेशीय थैले, जिन्हें वृषण कोष कहते हैं, में उदर गुहा के नीचे शिश्न के पीछे लटके रहते हैं। प्रत्येक वृषण से एक नली, शुक्रवाहिनी निकलती है तथा दोनों ओर की शुक्रवाहिनियाँ अपनी ओर शुक्राशय से निकलने वाली छोटी-सी नली में खुलती हैं। बाद में ये स्खलन नलिका बनाती हैं जो मूत्रमार्ग में खुलती है। मूल-मार्ग एक पेशीय अंग से होकर निकलता है जिसे शिश्न कहते हैं। मूत्र मार्ग एक छिद्र से बाहर खुलता है। इसे मूत्रजनन छिद्र कहते हैं। प्रॉस्टेट ग्रंथि शुक्राशय के पास स्थित होती है। इसके द्वारा क्षारीय द्रव पूरे मूत्रमार्ग को क्षारीय बनाता है, जो शुक्राणुओं की सक्रियता निश्चित करता है तथा उन्हें जीवित रखता है। नर की काऊपर, बल्बो-यूरेथ्रल, पैरिनियल आदि ग्रंथियाँ अपने स्राव द्वारा मूत्रमार्ग को चिकना बनाती हैं।

(c) **कपाट–** हृदय का दायाँ आलिन्द अपने नीचे दाएँ निलय में एक अलिन्द-निलय छिद्र द्वारा खुलता है। इस छिद्र पर एक त्रिवलन कपाट लगा रहता है जो निलय की ओर लटका रहता है। यह कपाट महीन तंतुओं से निलय की भीतरी सतह से जुड़ा रहता है। इसी प्रकार दायाँ अलिन्द भी अपने नीचे बाएँ निलय में छिद्र द्वारा खुलता है। इस छिद्र पर एक द्विवलन कपाट लगा होता है जो निलय में खुलता है। कपाट अलिन्द व निलय के बीच रुधिर के आवागन को नियन्त्रित करते हैं।

(d) **रसांकुर (विलाई)–** छोटी आँत के मध्यांत्र या जीज्युनम तथा शेषांत्र या इलियम की पतली भित्ति में आंत्रीय ग्रंथियाँ पाई जाती हैं। छोटी आँत के इन्हीं भागों की भीतरी सतह पर रसांकुर तथा सूक्ष्म रसांकुर पाए जाते हैं जिनकी उपस्थिति से अवशोषण सतह की लगभग 600 गुना वृद्धि हो जाती है।

प्रश्न 14. अधिवृषण (एपिडिडिमिस) के कार्य लिखिए।

उत्तर- अधिवृषण (एपिडिडिमिस) में शुक्राणु परिपक्व होते हैं अर्थात् इनका पोषण अधिवृषण में ही होता है। एपिडिडिमिस के पश्च भाग अर्थात् पुच्छ से शुक्रवाहिनी निकलकर उदर गुहा में जाती है। परिपक्व शुक्राणु अधिवृषण से शुक्रवाहिनी के द्वारा आगे स्थानांतरित हो जाते हैं।

प्रश्न 15. फेफड़ों की संरचना का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर- फेफड़ों की संरचना के सचित्र वर्णन के लिए दीर्घउत्तरीय प्रश्न संख्या 9 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 16. वृक्क की खड़ी काट का चित्र बनाइए और उसके मुख्य भागों को लेबल कीजिए।

उत्तर- वृक्क की खड़ी काट के चित्र के लिए दीर्घउत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 21 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 17. हृदय के कपाटों का क्या महत्व है?

उत्तर- हृदय के चापों के आधार पर तीन-तीन अर्द्धचंद्रकार कपाट लगे रहते हैं। जो चाप द्वारा सारे शरीर में भेजे गए रुधिर को वापस हृदय में आने से रोकते हैं। अलिन्द, अलिन्द-निलय छिद्र द्वार निलय में खुलते हैं। इन छिद्रों पर अलिन्द-निलय कपाट स्थित होते हैं। जो रुधिर को अलिन्द से निलय में जाने देते हैं, परन्तु वापस निलय से अलिन्द में नहीं आने देते हैं।

प्रश्न 18. पुरुषों/स्त्रियों में पाए जाने वाले कोई तीन गौण लैंगिक लक्षण लिखिए।

उत्तर- **पुरुषों के गौण लैंगिक लक्षण-** यौवनावस्था के साथ लड़कों में निम्नलिखित परिवर्तन शुरू हो जाते हैं—

(i) शुक्रजनन नलिकाएँ शुक्राणुओं का निर्माण शुरू कर देती हैं।
(ii) वृषण कोषों तथा शिश्न के आकार में वृद्धि।
(iii) कंधे चौड़े हो जाते हैं तथा अस्थियों के आकार एवं पेशीन्यास में वृद्धि होती है।

स्त्रियों का गौण लैंगिक लक्षण- यौवनारम्भ के समय लड़कियों में निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं—

(i) बाह्य जनन अंगों तथा स्तनों का विकास।
(ii) अंडोत्सर्ग तथा आर्तव चक्र का प्रारंभ।
(iii) श्रोणि प्रदेश का फैलकर चौड़ा होना।

प्रश्न 19. गौण लैंगिक लक्षण किसे कहते हैं? लड़के व लड़कियों में कितने वर्ष की आयु में उनका विकास होता है?

उत्तर- पुरुष तथा स्त्री में ऐसे कुछ लक्षण प्रदर्शित होते हैं, जो इनमें विभेद करते हैं। इन लक्षणों को जो कुछ समय पश्चात् अधिकता से विकसित होते हैं, द्वितीयक या गौण लैंगिक लक्षण कहलाते हैं।

लड़कों में प्राय: 13 से 16 वर्ष की आयु में, तथा लड़कियों में प्राय: 12 से 14 वर्ष की आयु में इनका विकास प्रारंभ होता है।

प्रश्न 20. त्वचा की स्वेद ग्रंथियों के कार्य लिखिए।

उत्तर- त्वचा की स्वेद ग्रंथियाँ पसीने की स्राव करती हैं। गर्मियों में शरीर के तापमान नियन्त्रण में पसीना सहायता करता है। अधिक परिश्रम करने से शरीर में उत्पन्न अनावश्यक ऊर्जा (उष्मा) को शरीर से निकालकर ताप नियमन में पसीना सहायता करता है। पसीने के स्रावण के लिए शरीर से उष्मा ली जाती है जिससे शरीर का तापमान कम हो जाता है। ये कार्य स्वेद ग्रंथियों के द्वारा ही होता है।

प्रश्न 21. वृक्कों के अतिरिक्त मनुष्य के तीन उत्सर्जी अंगों के नाम लिखिए। (संकेत- यकृत, त्वचा व फेफड़े)

उत्तर- वृक्कों के अतिरिक्त मनुष्य के तीन उत्सर्जी अंग निम्नलिखित हैं—

1. **यकृत-** यकृत में विशेष एंजाइमों की सहायता से NH_3 और CO_2 से यूरिया बनता है। यह NH_3 से कम हानिकारक और पानी में अधिक घुलनशील है तथा अमोनिया की मात्रा नियन्त्रित होती है।
2. **त्वचा-** त्वचा की स्वेद ग्रंथियाँ रुधिर से जल, लवण और कुछ मात्रा में यूरिया अलग करके पसीने के रूप में शरीर से बाहर निकालती है।
3. **फेफड़े-** फेफड़े श्वसन क्रिया के अन्तर्गत रुधिर में घुली CO_2 का उत्सर्जन करते हैं। श्वास छोड़ते समय CO_2 भी वायु के साथ फेफड़ों से बाहर आ जाती है।

प्रश्न 22. मानव के वृक्क की आंतरिक संरचना का चित्र बनाइए।

उत्तर- वृक्क की आन्तरिक संरचना के लिए दीर्घउत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 21 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 22. पाचन किसे कहते हैं? मनुष्य के पाचन तंत्र का नामांकित चित्र बनाइए। (वर्णन की आवश्यकता नहीं।)

उत्तर- **पाचन-** शरीर के पोषण व ऊर्जा के लिए ग्रहण किए गए भोज्य पदार्थों के विभिन्न एंजाइमों द्वारा आहारनाल में पचने की क्रिया पाचन कहलाती है।

मनुष्य के पाचन तंत्र के नामांकित चित्र के लिए 'दीर्घ उत्तरीय प्रश्न' के प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

▶ प्रयोगात्मक कार्य-

प्रश्न. मनुष्य के हृदय की संरचना का मॉडल तैयार करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

18 जीवन की प्रक्रियाएँ

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. पोषण क्या है? जीवों में पोषण क्यों आवश्यक है तथा मनुष्य की पाचन क्रिया का वर्णन कीजिए।

उत्तर- पोषण- जीवों को जीवित रहने तथा शरीर में होने वाली विभिन्न उपापचयी क्रियाओं को करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा भोजन से प्राप्त होती है। विभिन्न प्रकार के जीव भोजन के लिए विभिन्न विधियाँ अपनाते हैं। भोजन ग्रहण करने से लेकर, पाचन, अवशोषण, कोशिकाओं तक पहुँचाने, कोशिका में उसके ऊर्जा उत्पादन में प्रयोग करने अथवा जीवद्रव्य में स्वांगीकृत करने तथा भविष्य के लिए उसे शरीर में संगृहित करने तक की सभी क्रियाओं का सम्मिलित नाम पोषण है।

जीवों में पोषण की आवश्यकता- शरीर को स्वस्थ रखने के लिए पोषक पदार्थ अति आवश्यक हैं जो कि भोज्य पदार्थों में पाए जाते हैं। जिनका उचित मात्रा में उपलब्ध होना आवश्यक होता है। ये पोषक पदार्थ शरीर के टूट-फूट की मरम्मत, उचित वृद्धि, जीव द्रव्य निर्माण एवं रोगों से प्रतिरक्षा के लिए ऊर्जा प्रदान करते हैं अत: जीवों में पोषण इन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक होता है।

मनुष्य की पाचन क्रिया- पाचन क्रिया ठोस, अविसरणीय खाद्य पदार्थों के जटिल अणुओं एवं आयनों में विभाजित होने की क्रिया है।

भोजन का पाचन दो प्रकार से होता है—

(i) यांत्रिक पाचन तथा

(ii) रासायनिक पाचन

मनुष्य में अन्य जंतुओं की अपेक्षा पाचन तंत्र; विशेषकर इसकी आहारनाल एक लंबी एवं जटिल प्रणाली होती है। भोजन आहारनाल के विभिन्न अंगों में से होता हुआ आगे बढ़ता है तथा धीरे-धीरे पचाया जाता है। विभिन्न क्रियाओं के फलस्वरूप भोजन लेई के समान हो जाता है। इन क्रियाओं के लिए आहारनाल की दीवार में क्रमाकुंचन गति होती है जो भोजन को आगे बढ़ाती है तथा आमाशय में इसे पीसती है और पाचक एंजाइम्स को मिलाती है। आहारनाल की श्लेष्मक कला में अलग-अलग स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकार की पाचक ग्रंथियाँ होती हैं। पाचक ग्रंथियाँ पाचक रस बनाती हैं। इन पाचक रसों में एक या अधिक प्रकार के एंजाइम्स होते हैं, जो भोजन के विभिन्न घटकों को पचाने में सहायता करते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी ग्रंथियाँ आहारनाल से संबंधित होती हैं, जो अपना एंजाइमयुक्त पाचक रस आहारनाल में भेजती हैं।

अत: स्पष्ट है कि मनुष्य की आहारनाल में भोजन का पाचन मुखगुहा से प्रारंभ हो जाता है तथा इसके विभिन्न अवयवों का पाचन विभिन्न एंजाइम्स के कारण होता है। भोजन को आहारनाल में आगे बढ़ाने के लिए क्रमाकुंचन नामक एक विशेष प्रकार की गति होती है जिससे भोजन पाचक रस के साथ अच्छी तरह से मिल जाता है।

आहारनाल के विभिन्न भागों में पाचन निम्न प्रकार से होता है—

(i) **मुखगुहा में पाचन–** मुखगुहा में भोजन को दाँतों द्वारा चबाकर लार मिलाई जाती है। लार में टायलिन या सैलाइवरी एमाइलेज एंजाइम होता है। यह मंड पर क्रिया करके उसे शर्करा में बदल देता है। भोजन लेई–सा होकर ग्रसनी के निगलद्वार तथा ग्रास नली में से होकर, अंत में आमाशय में पहुँचता है।

(ii) **आमाशय में पाचन –** आमाशय में लगातार क्रमाकुंचन के कारण भोजन पिसता है। साथ ही जठर ग्रंथियों से निकला जठर रस भी इसमें मिलता है। जठर रस में नमक के अम्ल या हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) के अतिरिक्त प्रोपेप्सिन तथा प्रोरेनिन नामक प्रोएंजाइम्स होते हैं। (a) हाइड्रोक्लोरिक अम्ल, इन प्रोएजाइम्स को क्रियाशील बनाता है तथा भोजन को सड़ने से बचाता है। (b) यह भोजन के साथ आए बैक्टीरिया को नष्ट करता है। प्रोपेप्सिन अम्ल के साथ मिलकर पेप्सिन में बदल जाता है और भोजन के प्रोटीन पर क्रिया करता है। प्रोरेनिन भी रेनिन में बदलकर दूध को फाड़कर उनके प्रोटीन्स को अलग करता है। प्रोटीन्स पेप्सिन के प्रभााव से पेप्टोन्स में बदल जाते हैं।

उपर्युक्त प्रक्रियाओं के कारण भोजन भूरे रंग की लेई के रूप में बदल जाता है। इसे काइम कहते हैं। यह अब ग्रहणी में पहुँचता है।

ग्रहणी में पाचन – ग्रहणी में काइम (अधपचा भोजन) में पहले पित्त रस तथा बाद में अग्न्याशयिक रस मिलता है। पित्त रस क्षारीय होता है। यह भोजन की अम्लीयता को दूर करता है तथा अग्न्याशयिक रस के प्रोएंजाइम्स को क्रियाशील अवस्था में बदलता है। अग्न्याशयिक रस में तीन प्रमुख एंजाइम्स होते हैं–

(i) **ट्रिप्सिन–** शेष अधपचे प्रोटीन और पेप्टोन्स पर क्रिया करके उनको अमीनो अम्लों में बदलता है।

(ii) **एमाइलोप्सिन–** विभिन्न प्रकार की शर्कराओं और मंड को ग्लूकोज में बदलता है।

(iii) **स्टीएप्सिन–** वसाओं पर क्रिया करके उन्हें वसीय अम्ल तथा ग्लिसरॉल में बदलता है।

ग्रहणी में अधिकतर पाचन पूरा हो जाता है। शेष पाचन क्षुद्रांत्र में पूरा किया जाता है।

क्षुद्रांत्र में पाचन– क्षुद्रांत्र में आँत्र ग्रंथियों से आँत्र रस स्त्रावित होता है। इसमें कई एंजाम्स होते हैं, जैसे इरेप्सिन। ये शेष प्रोटीन तथा उसके अवयवों को अमीनो अम्ल में और माल्टेज, इन्वर्टेल, लैक्टेज इत्यादि विभिन्न शर्कराओं को ग्लूकोज में तथा लाइपेज शेष वसाओं को ग्लिसरॉल तथा वसीय अम्लों में बदल देते हैं।

पचे हुए भोजन का अवशोषण छोटी आँत्र द्वारा किया जाता है। इसके पश्चात् बचा अपच तथा अपशिष्ट बड़ी आंत को स्थानांतरित हो जाता है। जहाँ इससे जल का अवशोषण होता है। तथा बाद में उसका बहि:क्षेपण हो जाता है।

प्रश्न 2. पाचन से क्या तात्पर्य है? इसमें कौन-कौन से पाचक रस भाग लेते हैं। पचे हुए भोजन के अवशोषण तथा स्वांगीकरण की क्रिया का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **पाचन–** अंतर्ग्रहीत ठोस भोजन (कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन व वसा) के अवयव जल में अविलेय होने के कारण जंतु शरीर के लिए ग्राह्य नहीं होते। इन्हें कुछ भौतिक तथा रासायनिक क्रियाओं के द्वारा विलेय स्वरूप क्रमश: मोनोसेकेराइड्स, अमीनो अम्ल तथा वसा अम्ल के छोटे–छोटे सरल अणुओं या आयनों के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है, जिससे कि जंतु शरीर उसका शोषण सरलता से कर सकें। खाद्य पदार्थों के इस रासायनिक परिवर्तन को जल विश्लेषण कहते हैं। इसी जल विश्लेषण को वास्तव में पाचन क्रिया कहते हैं, अर्थात् पाचन क्रिया ठोस, अविसरणशील खाद्य पदार्थों के जटिल अणुओं एवं आयनों में विभाजित होने की क्रिया है, जिससे वह शोषण होने योग्य बनकर

विसरण अथवा परासरण द्वारा आमाशय तथा आँतों की श्लेष्म कला में फैली हुई रुधिर कोशिकाओं के रुधिर में मिलकर ऊतकों में पहुँच सके।

भोजन को पचाने में पाचक ग्रंथियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनसे स्रावित पाचक रसों में एक या एक से अधिक एंजाइम्स होते हैं। जो भोजन के विभिन्न घटकों को पचाने में सहायता प्रदान करते हैं। मुखगुहा में भोजन को दाँतों द्वारा चबाकर लार मिलाई जाती है। जिसमें उपस्थित टायलिन या सैलाइवरी एंजाइम मड पर क्रिया करके उसे शर्करा में बदल देता है। इसके पश्चात् भोजन आमाशय में चला जाता है। आमाशय में पहुँचा भोजन जठर ग्रंथियों से निकले जठर रस से क्रिया करता है। जठर रस में नमक के अम्ल या हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के अतिरिक्त प्रोपेप्सिन तथा प्रोरेनिन नामक प्रोएंजाइम्स होते हैं। प्रोपेप्सिन अम्ल के साथ क्रिया करके पेप्सिन में बदल जाता है। भोजन के प्रोटीन पेप्सिन के प्रभाव से पेप्टोन्स में बदल जाते हैं। इन सभी प्रक्रियाओं के पश्चात् लेई के रूप में बदला भोजन काइम कहलाता है। जो अवशोषण के लिए आगे स्थानांतरित हो जाता है।

पचे हुए भोजन का अवशोषण– पाचन के द्वारा भोजन के सभी आवश्यक अवयव प्राय: जल में विलेय अवस्था में आ जाते हैं। अत: जल के साथ इनका रुधिर में पहुँचना ही अवशोषण कहलाता है। भोजन का अवशोषण मुख्य रूप से छोटी आँत्र में होता है। तथा इसके लिए छोटी आँत्र की संरचना में भोजन के अवशोषण के लिए निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं—

(i) छोटी आँत्र की श्लेष्मिका में अनेक वर्तुल एवं अनुलंब सलवटें होती हैं। मनुष्य में इनकी उपस्थिति के कारण आँत्र का अवशोषण तल लगभग तीन गुना बढ़ जाता है।

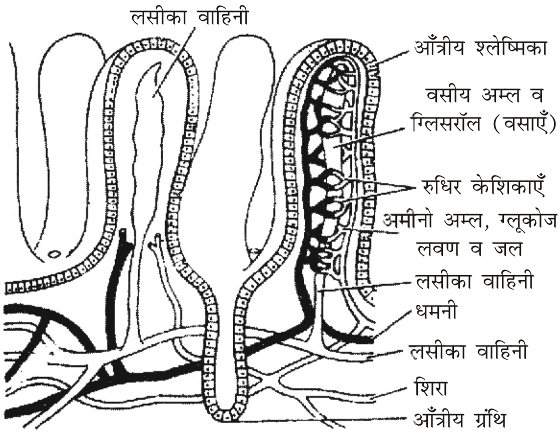

आँत्रीय श्लेष्मिका में रसांकुर द्वारा
भोज्य पदार्थों का अवशोषण

(ii) आँत्र के पूरे तल पर छोटे-छोटे अनेकानेक उभार पाए जाते हैं, इन्हें रसांकुर कहा जाता है। ये अवशोषण तल को दस गुना और बढ़ा देते हैं।

(iii) श्लेष्मिका की प्रत्येक कोशिका की स्वतंत्र सतह पर लगभग 600-650, ब्रश के बालों के समान सूक्ष्मांकुर पाए जाते हैं। ये अवशोषण तल में बीस गुना और वृद्धि कर देते हैं। श्लेष्मिका की कोशिकाओं में अवशोषण का विशिष्ट गुण होने के कारण इन्हें अवशोषी कोशिकाएँ भी कहा जाता है।

(iv) रसांकुरों में रुधिर केशिकाओं तथा लसीका केशिकाओं की उपस्थिति इनको अवशोषण का अत्यधिक सटीक तथा विशिष्ट स्वरूप प्रदान करती है।

(v) आँत्र आहारनाल का सबसे लंबा भाग है। आँत्र में भोजन एक लंबी अवधि तक रुकता है। आँत्र की भित्तियों में क्रमाकुंचन तथा मंथन गतियाँ तीव्रता से होती रहती हैं। इससे अवशोषण में और अधिक सहायता मिलती है।

(vi) पचे हुए भोजन का अवशोषण दो प्रकार से होता है। कुछ पोषक पदार्थों का अवशोषण तो अवशोषी कोशिकाएँ विसरण तथा कोशिकापायन द्वारा निश्चेष्ट आवागमन की विधि से कर लेती हैं, परंतु मुख्य अवशोषण ऊर्जा की उपस्थिति में सक्रिय संवहन द्वारा होता है। अत: इस प्रकार के अवशोषण के समय इन कोशिकाओं में ए०टी०पी० की बहुत खपत होती है।

(vii) रुधिर केशिकाओं के रुधिर में अमीनो अम्लों, शर्कराओं, लवणों इत्यादि का जल के साथ विसरण द्वारा अवशोषण होता है।

(viii) वसाओं के अपघटन से बना ग्लिसरॉल अध:श्लेष्मा से अवशोषित होता है। इसी प्रकार वसीय अम्ल कुछ लवणों के साथ संयोजित होकर अध:श्लेष्मा में पहुँचते हैं। लवणों के अलग होने पर वसीय अम्ल उपस्थित ग्लिसरॉल के साथ मिलकर वसा बिंदु बना लेते हैं। वसा बिंदु लसीका केशिका या अक्षीर वाहिनी में पहुँचते हैं। अक्षीर वाहिनी प्रत्येक रसांकुर में उपस्थित होती है। बाद में लसीका वाहिनियाँ भी रुधिर वाहिनियों में ही खुलती हैं।

भोजन का स्वांगीकरण– पचे हुए भोजन को अवशोषित कर कोशिका के जीवद्रव्य तक पहुँचाने के बाद भोजन के तत्वों को कोशिका में जीवद्रव्य के स्वरूप में विलीन होने की क्रिया को स्वांगीकरण कहते हैं। सभी जीवों में यह क्रिया आवश्यक है। इसी से जीवद्रव्य की वृद्धि होती है अर्थात् जीव की वृद्धि होती है। पाचन से कोशिका को भोज्य पदार्थ अत्यन्त सरल तथा जल में विलेय अवस्था में प्राप्त होते हैं। इन सरल पदार्थों को कोशिका में होने वाली विशेष क्रियाओं के द्वारा जीवद्रव्य के जटिल यौगिकों के रूप में संश्लेषित किया जाता है। इस प्रकार इनको जीवद्रव्य के स्वरूप में ढाल दिया जाता है।

स्वांगीकृत खाद्य तत्वों का भाग अलग-अलग हो सकता है; जैसे ग्लूकोज ऊर्जा उत्पादन के लिए काम में आता है। कुछ ग्लिसरॉल तथा वसीय अम्ल भी इसी काम में आ जाते हैं। अन्य पदार्थ टूट-फूट की मरम्मत करते हैं अर्थात् जीवद्रव्य का अंश बनते हैं। कुछ तत्व हॉर्मोन्स आदि बनाने के काम आते हैं। अधिकांश एमीनो अम्ल प्रोटीन्स के संश्लेषण में उपयोगी होते हैं। इन कोशिकांगों के निर्माण, मरम्मत, वृद्धि आदि के काम आते हैं। अन्य एन्जाइम बनाते हैं। कुछ एमीनो अम्लों का उपयोग ऊर्जा के उत्पादन में भी हो सकता है।

प्रश्न 3. मनुष्य में पाए जाने वाली विभिन्न पाचक ग्रंथियों का नाम लिखिए। पाचन क्रिया में इनका क्या महत्व है?

उत्तर- मनुष्य में पाए जाने वाली विभिन्न पाचक ग्रंथियाँ तथा पाचन क्रिया में इनका महत्व–

(i) लार ग्रंथियाँ– मुख-गुहा में अनेक छोटी-छोटी (सूक्ष्म) मुख ग्रंथियाँ उसकी श्लेष्मिका में होती हैं जो थोड़ी मात्रा में लार स्रावित करती हैं। जिह्वा की श्लेष्मिका में भी इसी प्रकार की सूक्ष्म ग्रंथियाँ पाई जाती हैं। बड़ी तथा अधिक मात्रा में लार उत्पन्न करने वाली तथा वाहिकाओं द्वारा इसे मुखगुहा में पहुँचाने वाली निम्नलिखित तीन लार जोड़ियाँ होती हैं—

(a) कर्णपूर्व लार ग्रंथियाँ– कानों के पास, कपोलों के पास व कपोलों में स्थित, ये सबसे बड़ी लार ग्रंथियाँ होती हैं तथा ऊपरी जबड़े में वाहिकाओं, स्टेन्सेन्स नलिका द्वारा चर्वणकों के पास खुलती हैं।

(b) अधोजिह्वा लार ग्रंथियाँ– ये जीभ के ठीक नीचे स्थित छोटी व संकरी ग्रंथियाँ होती हैं और निचले जबड़े में दाँतों के पास ही कई स्थानों पर खुलती हैं।

(c) **अधोहनु लार ग्रंथियाँ–** ये निचले जबड़े के पश्च भाग में स्थित होती हैं। ये अगले दाँतों (निचले कृन्तकों) के पास लंबी वाहिनियों, वारटन्स नलिकाओं के द्वारा खुलती हैं।

(ii) **जठर ग्रंथियाँ –** ये मनुष्य के आमाशय की श्लेष्मकला में उपस्थित तीन प्रकार की ग्रंथियाँ होती हैं— पायलोरिक, फण्डिक तथा कार्डियक। इनसे श्लेष्मल के अतिरिक्त हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा पेप्सिनोजन व रेनिन नामक एंजाइम से युक्त जठर रस स्रावित होता है। इसी श्लेष्मकता में कुछ कोशिकाएँ, जिन्हें एंटेरोएण्डोक्राइन कोशिकाएँ कहते हैं, गैस्टिन नामक हॉर्मोन भी स्रावित करती हैं।

(iii) **अग्न्याशय–** अग्नाशय यकृत के बाद शरीर की दूसरी सबसे बड़ी ग्रंथि है। यह आमाशय के पीछे उदर गुहा की पश्च भित्ति पर तथा ग्रहणी के मध्य बने C आकार के स्थान में स्थित होती है। यह चपटी आकृति वाली गुलाबी रंग की ग्रंथि है। ये पाचन क्रिया के लिए अग्न्याशई रस का स्रावण करती है। इसमें कई एंजाइम्स; जैसे— ट्रिप्सिन, काइमोट्रिप्सिन, एमाइलेज, तथा लाइपेज होते हैं। अग्न्याशायिक रस के एंजाइम्स भोजन के सभी अवयवों अर्थात् प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट तथा वसा के पाचन में सहायक होते हैं।

अग्न्याशय ग्रंथि के बहि:स्रावी भाग (लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ) की कोशिकाओं से इन्सुलिन तथा ग्लूकैगॉन नामक हॉर्मोन्स स्रावित होते हैं। ये सीधे रुधिर में डाल दिए जाते हैं। ये कार्बोहाइड्रेट के उपापचय का नियंत्रण एवं नियमन करने में सहायक होते हैं। अत: इस प्रकार ये सभी पाचक ग्रंथियाँ भोजन के पाचन क्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

प्रश्न 4. मनुष्य में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के एंजाइमों का वर्णन कीजिए। पाचन क्रिया में इनका क्या महत्व है?

उत्तर– मनुष्य में विभिन्न प्रकार के एंजाइम पाए जाते हैं। जो भोजन के पाचन में सहायक होते हैं। भोजन को मुखगुहा में चबाकर लार मिलाई जाती है जो मुख में उपस्थित लार ग्रंथियाँ स्रावित करती हैं। लार में टायलिन या सैलाइवरी एमाइलेज एंजाइम उपस्थित होता है। आमाशय की जठर ग्रंथियों से निकले रस में पेप्सिन व रेनिन नामक एंजाइम उपस्थित होते हैं। ग्रहणी के अग्न्याशिक रस में ट्रिप्सिन एनाइलेज तथा लाइपेज एंजाइम्स पाए जाते हैं तथा क्षुदांत्र में आँत्र ग्रंथियों से आँत्र रस स्रावित होता है। इनमें कई प्रकार के एंजाइम्स पाए जाते हैं; जैसे इरेप्सिन, माल्टेज, लैकटेज, सुक्रेज, लाइपेज, न्यूलिऐज।

सारणी–मानव आहारनाल के पाचक एंजाइम, उनके स्रोत तथा प्रभाव–

कार्य क्षेत्र	रस का नाम	स्रोत	एंजाइम	भोज्य पदार्थ	अंतिम उत्पाद (प्रभाव)
मुख	लार	लार ग्रंथियाँ	टायलिन	मंड	शर्कराएँ
आमाशय	जठर रस	जठर ग्रंथियाँ	पेप्सिन रेनिन	प्रोटीन दूध (केसीन)	पेप्टोन दही (पैराकेसीन)
ग्रहणी	पित्त रस	यकृत	—	वसा को पचाने में सहायक	पायसीकृत वसा

ग्रहणी	अग्न्याशयिक	अग्न्याशय	ट्रिप्सिन व कार्बोक्सीडेज एमाइलेज लाइपेज	प्रोटीन + पेप्टोन मंड (कार्बोहाइड्रेट्स) वसा	पॉलीपेप्टाइड्स तथा अमीनो अम्ल मल्टोज शर्करा तथा ग्लूकोज वसीय अम्ल तथा ग्लिसरॉल
क्षुद्रांत्र	आँत्र रस	आँत्र ग्रंथियाँ	इरेप्सिन माल्टेज लैक्टेज सुक्रेज लाइपेज न्यूक्लिएजेज	पॉलीपेप्टाइड्स माल्टोज लेक्टोज सुक्रोज शेष वसा न्यूक्लिक अम्ल, न्यूक्लिओटाइड्स	अमीनो अम्ल तथा ग्लूकोज ग्लूकोज शर्करा ग्लूकोज शर्करा ग्लूकोज शर्करा वसीय अम्ल तथा ग्लिसरॉल न्यूक्लिओसाइड्स, शर्कराएँ

पाचन क्रिया में एंजाइम्स का महत्व– पाचन क्रिया में आहारनाल में उपस्थित विभिन्न प्रकार के एंजाइम्स महत्वपूर्ण क्रिया करके भोजन को पचाने में सहायक होते हैं। मुखगुहा में उपस्थित टायालिन मंड पर क्रिया करके उसे शर्करा में बदल देता है। जहाँ से भोजन लेई के रूप में परिवर्तित होकर ग्रासनली से होकर आमाशय में पहुँचता है। वहाँ जठर ग्रंथियों से उत्पन्न जठर रस में उपस्थित पेप्सिन व रेनिन क्रमश: प्रोटीन को पेप्टोन व केसीन को पैराकेसीन में परिवर्तित कर देते हैं। भोजन इन सभी प्रक्रियों के पश्चात् भूरे रंग की लई में परिवर्तित हो जाता है। जिसे काइम कहते हैं। यह काइम ग्रहणी में पहुँच जाता है। जहाँ अग्न्याशिक रस में उपस्थित ट्रिप्सिन, एमाइलोप्सिन, तथा स्टीएप्सिन क्रमश: क्रिया करके उसे अमीनों अम्ल, ग्लूकोज व ग्लिसरॉल में परिवर्तित करता है। अब यह क्षुद्रांत्र में भेज दिया जाता है। क्षुद्रांत्र में कई प्रकार के एंजाइम्स होते हैं; जैसे इरेप्सिन। ये शेष प्रोटीन तथा उसके अवयवों को अमीनो अम्ल में और माल्टेज, इन्वर्टेल, लैक्टेज इत्यादि विभिन्न शर्कराओं को ग्लूकोज में तथा लाइपेज शेष वसाओं को ग्लिसरॉल तथा वसीय अम्लों में बदल देते हैं। शेष प्रक्रिया छोटी आँत्र व बड़ी आँत्र में पूर्ण होती है तथा भोजन का पाचन पूर्ण हो जाता है। इस प्रकार सभी एंजाइम्स भोजन के पाचन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रश्न 5. खुले व बंद परिवहन तंत्र में अन्तर लिखिए।

उत्तर– खुले परिवहन तंत्र– पैरामीशियम, अमीबा जैसे एककोशिक जंतुओं में ऑक्सीजन, भोज्य पदार्थ तथा पानी के अणु उनके बाह्य वातावरण में उपस्थित पानी के माध्यम से विसरण द्वारा प्रवेश करते रहते हैं और कोशिकाद्रव्य की गति द्वारा कोशिका के विभिन्न भागों में पहुँचा दिए जाते हैं। बहुकोशिक हाइड्रा जैसे निम्न स्तर के जंतुओं में जिनकी कोशिकाएँ अंतर गुहिका या गैस्ट्रोवास्कुलर कैविटी से दूसरी कोशिकाओं में पहुँचती रहती हैं विसरण की यह प्रक्रिया इन अणुओं को कुछ सेंटीमीटर तक स्थानांतरित कर देती है।

बंद परिवहन तंत्र– बहुकोशिकीय उच्च स्तरीय जंतुओं में ऑक्सीजन, पानी तथा भोज्य पदार्थों के अणुओं के स्थानांतरण हेतु शरीर की विभिन्न कोशिकाओं तक दो प्रकार की व्यवस्था होती है—

(i) आहारनाल के समीप के अंगों की कोशिकाओं में, जो इसके संपर्क में रहती हैं, भोजन के ये अणु विसरण द्वारा ही पहुँचते रहते हैं; जैसे— स्पंज, हाइड्रा आदि।

(ii) आहारनाल से दूर के अंगों की कोशिकाओं में ये अणु रुधिर या लसीका नलिकाओं से निर्मित एक विशेष तंत्र द्वारा जाते हैं। शरीर में इन नलिकाओं का एक जाल बिछा रहता है जिनमें से कुछ नलिकाएँ इन अणुओं तथा ऑक्सीजन को शरीर के दूर-दूर के अंगों तक पहुँचाती हैं और कुछ नलिकाएँ विभिन्न भागों से इन्हें वापस ले आती हैं। इस प्रकार इन अणुओं का परिसंचरण शरीर के सभी भागों में होता रहता है। इन भागों की कोशिकाएँ आवश्यकतानुसार इस परिसंचारी धारा में से पोषक अणुओं को जीव द्रव्य संश्लेषण हेतु ग्रहण करती रहती हैं। रुधिर एवं लसीका की इस संचरण व्यवस्था को परिसंचारी तंत्र कहते हैं।

प्रश्न 6. श्वासोच्छ्वास किसे कहते हैं? श्वसन क्रियाविधि का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– श्वासोच्छ्वास– वायुमंडल की शुद्ध वायु का फेफड़ों में पहुँचने तथा अशुद्ध वायु का फेफड़ों से बाहर निकलने की क्रिया को श्वासोच्छ्वास कहते हैं। इस क्रिया में बाहरी वायुमंडल एवं फेफड़ों के बीच गैसों का आदान-प्रदान होता है।

मनुष्य में श्वसन की क्रिया विधि– श्वासोच्छ्वास के लिए निरंतर वायु को अंदर लेने तथा बाहर निकालने अर्थात् गैसों का आदान-प्रदान करने या कराने वाले अथवा इस कार्य में सहायता करने वाले अंगों को हम श्वसनांग कहते हैं और सभी श्वसनांगों को, जो सम्मिलित रूप से श्वसन क्रिया संपन्न करते हैं, श्वसन तंत्र कहते हैं। श्वसनांगों में फेफड़े महत्वपूर्ण तथा प्रमुख अंग हैं।

श्वसन की संपूर्ण क्रिया विधि को समझने के लिए इसे निम्नांकित चरणों में बाँट सकते हैं—

(i) बाह्य श्वसन– इसमें मनुष्य श्वसनांगों की सहायता से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) निष्कासित पर ऑक्सीजन (O_2) ग्रहण करता है। यही क्रिया श्वासोच्छ्वास है।

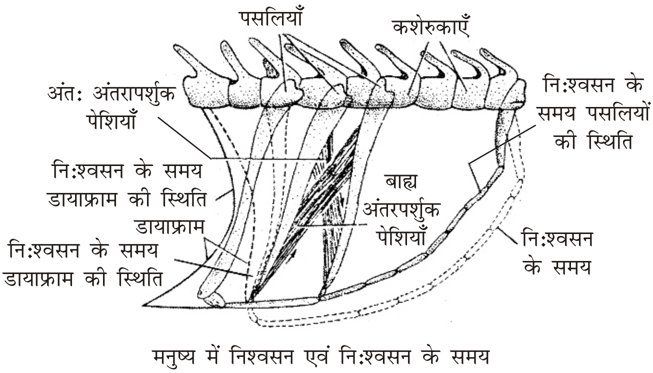

मनुष्य में निश्वसन एवं नि:श्वसन के समय पसलियों एवं डायाफ्राम की स्थिति

(ii) गैसीय संवहन– रुधिर में संवहन के माध्यम से ऑक्सीजन का श्वसनांगों से ऊतकों तक तथा कार्बन डाइऑक्साइड का ऊतकों से श्वसनांगों तक निरंतर पहुँचते रहना।

(iii) गैसीय विनिमय– ऊतक द्वारा द्रव्य से कोशिकाओं द्वारा ऑक्सीजन ग्रहण करना, श्वसन पदार्थ पर ऑक्सीकारक क्रियाएँ करके कार्बन डाइऑक्साइड निष्कासित करना तथा उसे कोशिकाओं के रुधिर में डालना।

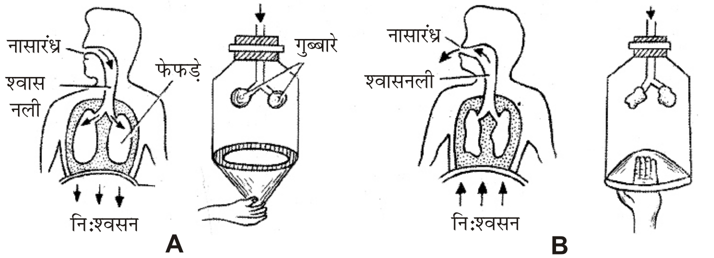

मनुष्य में साँस लेने की क्रिया का प्रदर्शन

(iv) अंत:श्वसन या कोशिकीय श्वसन– वास्तविक श्वसन जिसमें कोशिका के जीवद्रव्य अथवा किसी कोशिकांग में ग्लूकोज- जैसे कार्बनिक पदार्थ का ऑक्सीकरण होना तथा उत्पादित ऊर्जा को ATP अणुओं के रूप में बदलना।

प्रश्न 7. निम्नलिखित विटामिन्स के स्रोत एवं उनकी कमी से होने वाली व्याधियों का वर्णन कीजिए–

(a) विटामिन A (b) विटामिन B (c) विटामिन C (d) विटामिन D

उत्तर– (a) **विटामिन A-रेटिनॉल–** विटामिन A के मुख्य स्रोत गाजर, हरी सब्जियाँ, घी, मक्खन, अंडे, जिगर व मछली का तैल आदि होते हैं। विटामिन A दृष्टिवर्णक के संश्लेषण व एपीथीलियल स्तरों की वृद्धि एवं विकास में योगदान करता है। मनुष्य में इसकी कमी से रतौंधी, शारीरिक वृद्धि व भार में कमी, कॉर्निया तथा त्वचा की कोशिकाओं का शल्कीभवन आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(b) **विटामिन B–** विटामिन B समूह में B_1–थाइमीन, B_2G–राइबोफ्लेविन, B_3–पेंटोथेनिक अम्ल, B_5(PP)–निकोटिनिक अम्ल, B_6–पाइरीडॉक्सिन व B_{12}–सायनोकोबेलमिन आते हैं। इन समूहों के मुख्य स्रोत अनाज, फलियाँ, यीस्ट, मांस, अंडे, दूध, मूंगफली आदि होते हैं। B समूह की कमी से शरीर में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं; जैसे— बेरी-बेरी, चर्म रोग, जनन क्षमता में कमी, बालों का सफेद होना, पेलाग्रा, रुधिराल्पता आदि।

(c) **विटामिन C-एस्कॉर्बिक अम्ल–** विटामिन C के मुख्य स्रोत आँवला, मुसम्मी, संतरा, नींबू, सब्जियाँ व रसीले फल आदि हैं। इसका कार्य अंतराकोशिकीय मैट्रिक्स, कोलैजन तंतु, हड्डियों के मैट्रिक्स तथा दाँतों के डेंटाइन के निर्माण में योगदान करना है। इसकी कमी से स्कर्वी रोग, मसूड़ों में रुधिर स्राव व शरीर के भार में कमी होना आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(d) **विटामिन D-कैल्सीफेरॉल–** विटामिन D का मुख्य प्राकृतिक स्रोत सूर्य का प्रकाश है। इसके अतिरिक्त ये मक्खन, दूध, जिगर, गुर्दे, मछली के तैल आदि में भी पाया जाता है। विटामिन D हड्डियों व दांतों के विकास के लिए अतिमहत्वपूर्ण है। शरीर में विटामिन D की कमी से सूखा रोग ऑस्टिओमैलेशिया आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

प्रश्न 8. श्वसन को परिभाषित कीजिए। श्वसन एवं श्वासोच्छ्वास में अंतर बताइए। श्वसन दर पर ऊँचाई के प्रभाव का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **श्वसन की परिभाषा –** जीवों में कोशिकीय स्तर पर ऑक्सीजन की उपस्थिति में भोजन के जैविक ऑक्सीकरण की क्रिया को श्वसन कहते हैं। इसमें ग्लूकोज के ऑक्सीकरण से कार्बन डाइऑक्साइड और जल बनते हैं और ग्लूकोज में बंधित ऊर्जा धीमी गति से विभिन्न पदों में मुक्त होती है जिसे कोशिका के अंश ATP में संग्रहित कर लिया जाता है।

श्वसन एवं श्वासोच्छ्वास में अंतर

क्र०सं०	श्वसन	श्वासोच्छ्वास
1.	यह जैव रासायनिक क्रिया है जिसमें ग्लूकोज का ऑक्सीकरण होता है जिससे कार्बन डाइऑक्साइड तथा ऊर्जा उत्पन्न होती है।	यह एक भौतिक क्रिया है जिससे शरीर ऑक्सीजन का अंतर्ग्रहण करता है तथा कार्बन डाइआक्साइड का बहि:क्षेपण करता है।
2.	यह क्रिया कोशिकाओं के अंदर होती है।	यह क्रिया कोशिकाओं के बाहर होती है।
3.	इसमें एंजाइम्स की आवश्यकता होती है।	इसमें एंजाइम्स की आवश्यता नहीं होती है।
4.	इसमें ऊर्जा उत्पन्न होती है।	इसमें ऊर्जा उत्पन्न नहीं होती।
5.	इसमें श्वसनांगों की आवश्यकता नहीं होती।	इसमें श्वसनांगों की आवश्यकता होती है।

श्वसन दर पर ऊँचाई का प्रभाव– वायु का घनत्व समुद्र सतह से ऊपर उठने पर कम होता जाता है। जिससे इसमें उपस्थित गैसों का वायुदाब भी कम होता जाता है। अत: पहाड़ों पर चढ़ते समय ऊँचाई के साथ–साथ O_2 की मात्रा कम होती जाती है। शरीर में O_2 की कमी के कारण श्वास फूलने लगता है एवं श्वसन दर बढ़ जाती है। विभिन्न ऊँचाइयों का श्वसन दर पर अलग–अलग प्रभाव पड़ता है।

(i) 3,500-4,000 मीटर की ऊँचाई पर O_2 की अधिक कमी के कारण थकावट, शिथिलता, सिर दर्द व मिचली आदि का आभास होता है।

(ii) 5,000-6,000 मीटर की ऊँचाई पर शरीर के रुधिर से CO_2 के निकलने से pH बढ़ जाता है। जिससे श्वसन दर बढ़ जाती है।

(iii) 6,000 मीटर से अधिक की ऊँचाई पर O_2 की मात्रा बहुत कम हो जाती है और व्यक्ति को मूर्च्छा आने लगती है। इस समय कृत्रिम O_2 की आवश्यकता होती है।

(iv) 11,000 मीटर या उससे ऊपर कृत्रिम O_2 से भी काम नहीं चलता। इसी कारण हवाई जहाज वायुरुद्ध बनाए जाते हैं।

प्रश्न 9. प्रभावी विसरण हेतु श्वसन अंगों का विकास किस क्रम में हुआ है? संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

उत्तर- **प्रभावी विसरण हेतु श्वसन अंगों का विकास–** ऑक्सीजन, पानी तथा भोज्य पदार्थों के अणुओं के परिवहन का एक सरल उपाय विसरण है। जिसके प्रभावी विसरण हेतु सभी जीवों के श्वसन अंगों में विकास हुआ है।

पैरामीशियम अमीबा जैसे एक कोशिकीय जीवों में गैसों का विनिमय सामान्य विधि द्वारा होता है। इनमें ऑक्सीजन, भोज्य पदार्थ तथा पानी के अणु उनके शरीर में बाह्य वातावरण से प्रवेश करते हैं और कोशिकाद्रव्य की गति के द्वारा कोशिका के विभिन्न भागों तक पहुँचा दिए जाते हैं। सरल बहुकोशिकीय जंतु जैसे हाइड्रा स्पंज आदि में भी गैसों का विनिमय इसी प्रकार सामान्य विसरण द्वारा ही पूर्ण होता है। कुछ अन्य जंतु जैसे केंचुए आदि में ऑक्सीजन जल में घुलकर, रुधिर में विसरित होकर उनके शरीर के भीतरी भागों में पहुँचती है। प्राणियों में गैसों के परिवहन के लिए जैव विकास के

साथ-साथ अनेक प्रकार की युक्तियाँ विकसित हुई हैं। संघ ऑर्थोपोडा के प्राणियों में श्वासनाल और जलीय ऑर्थोपोड्स के जंतुओं में क्लोम पाए जाते हैं। जलीय कशेरुकी प्राणियों जैसे मछलियों में गैसीय विनिमय क्लोमो द्वारा होता है। कुछ उभयचरों में गैसीय विनिमय के लिए फेफड़े विकसित होते हैं तो कुछ में यह त्वचा तथा मुखगुहा के द्वारा ही होता है।

कशेरुकी जंतुओं के रुधिर में लौहयुक्त एक विशेष प्रकार का यौगिक हीमोग्लोबिन पाया जाता है। जिसका उपयोग ऑक्सीजन के परिवहन के लिए होता है।

सामान्य ताप पर एक लीटर जल में 5 मिली ऑक्सीजन घुल जाती है। मनुष्य के एक लीटर रुधिर में 250 मिली ऑक्सीजन घुल जाती है। जबकि केंचुए के हीमोग्लोबिन रुधिर में 1 लीटर में 65 मिली ऑक्सीजन घुल जाती है। अत: ऑक्सीजन धारण करने की यह क्षमता मनुष्य के रुधिर में जल की अपेक्षा 50 गुना अधिक है। इससे स्पष्ट होता है कि प्रभावी विसरण हेतु सभी वर्ग के जीवों के श्वसन अंगों का विकास हुआ है।

प्रश्न 10. कोशिकीय श्वसन से क्या तात्पर्य है? यह कहाँ और किस प्रकार होता है?

उत्तर- **कोशिकीय या वास्तविक श्वसन-** कोशिकीय श्वसन एक ऐसी नियंत्रित क्रिया है, जिसमें कोशिका में कार्बनिक यौगिकों; प्राय: ग्लूकोज का ऑक्सीकरण होता है। इस क्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा उत्पन्न होती है। श्वसन की प्रक्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा लिखा जाता है।

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \qquad 6CO_2 \qquad 6H_2O \quad 673\,kcal$$

सामान्यत: श्वसन की ये क्रियाएँ जीवित कोशिकाओं के अंदर कोशिकाद्रव्य तथा विशेष प्रकार के कोशिकांगों आइटोकाण्ड्रिया में होती है। प्रथम चरण में ग्लूकोज को पाइरुविक अम्ल में तोड़ने के लिए कोशिकाद्रव्य में होती है। अत: यह क्रिया बिना साँस लिए (गैस का बिना आदान-प्रदान किए) कोशिका में होनी संभव है। द्वितीय चरण, यदि ऑक्सीजन उपस्थित है, तो माइटोकाण्ड्रिया में होता है तथा पाइरुविक अम्ल भी पूरी तरह टूट कर जल तथा कार्बन डाइऑक्साइड बना लेता है। इस प्रकार निकली संपूर्ण ऊर्जा अत्यधिक होती है। ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में बाद वाली क्रिया नहीं हो सकती है। इस प्रकार श्वसन दो प्रकार के होते हैं।

उपर्युक्त क्रियाएँ, सम्मिलित रूप में, कोशिकीय श्वसन कहलाती हैं। इनमें पहला चरण ग्लाइकोलिसिस तथा ऑक्सी श्वसन का द्वितीय चरण क्रेब्स चक्र के रूप में जाना जाता है। इन क्रियाओं में उत्पन्न व्यर्थ पदार्थों को कोशिका तथा बाद में शरीर से बाहर कर दिया जाता है। श्वसन की इन क्रियाओं में जो ऊर्जा उत्पन्न होती है उसे ए०टी०पी० (ATP) नामक पदार्थ में एकत्र कर लिया जाता है। प्रत्येक जीव की प्रत्येक जीवित कोशिका में कोशिकीय श्वसन आवश्यक रूप से संपन्न होता है। लगभग सभी जंतुओं तथा पौधों में यह क्रिया समान रूप से घटित होती रहती है।

प्रश्न 11. मनुष्य में आंतरिक परिवहन की क्या व्यवस्था होती है? संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

उत्तर- **मनुष्य में आंतरिक परिवहन-** मनुष्य में आंतरिक परिवहन द्वितीय व्यवस्था के अंतर्गत होता है। इसके लिए इनके शरीर में दो प्रकार के परिसंचरण तंत्र होते हैं— रुधिर परिसंचरण तंत्र तथा लसीका परिसंचरण तंत्र । संपूर्ण शरीर में इन तंत्रों की नलिकाओं, वाहिनियों आदि के जाल बिछे होते हैं तथा वाहिनियों में तरल पंप करने के लिए हृदय होता है। तरल जो इन तंत्रों में बहते हैं एक विशेषीकृत तरल संयोजी ऊतक क्रमश: रुधिर तथा लसिका होते हैं।

मनुष्य में रुधिर परिसंचरण तंत्र- सर्वप्रथम एक अंग्रेज वैज्ञानिक हार्वे (Harvey, 1578-1657) ने यह प्रदर्शित किया कि रुधिर एक स्थाई तरल न होकर जीवन भर

शरीर के अंदर बहने वाला तरल है, जो हृदय से प्रारंभ करता है और शरीर के विभिन्न अंगों में होते हुए वापस हृदय में आता रहता है।

मनुष्य में रुधिर परिसंचरण के लिए विशेष तंत्र होता है। इस तंत्र में अनेक वाहिनियाँ तथा हृदय आदि सम्मिलित होते हैं। रुधिर के लिए हृदय एक पम्प के समान कार्य करके जिन वाहिनियों में रुधिर को भेजता है, उन्हें धमनियाँ कहते हैं। धमनियाँ ऊतकों में पहुँचकर केशिकाओं में बँट जाती है तथा बाद में एकत्रित होकर शिराओं का निर्माण करती हैं। शिराएँ ही रुधिर को वापस हृदय में लाती हैं। इस प्रकार मनुष्य में बंद रुधिर परिसंचारी तंत्र पाया जाता है। यह परिसंचरण दो चक्रों में होता है। इसके लिए हृदय में चार वेश्म होते हैं तथा ऑक्सीजन रहित व ऑक्सीजन युक्त रुधिर को हृदय में ग्रहण करने के लिए अलग-अलग स्थान होते हैं तथा उसे अलग-अलग स्थानों में पहुँचाने के भी अर्थात् संपूर्ण शरीर से आने वाला ऑक्सीजन की कमी वाला रुधिर फेफड़ों को भेजा जाता है, जबकि फेफड़ों से हृदय में प्राप्त किया गया रुधिर संपूर्ण शरीर को भेजा जाता है। इस प्रकार दोनों प्रकार के रुधिर एक-दूसरे को नहीं मिल सकते हैं। मनुष्य में यह क्रिया अत्यधिक स्पष्ट होती है और परिसंचरण तंत्र पूर्ण रूप से बंद तथा दोहरा होता है। मानव शरीर में रुधिर परिसंचरण निम्नलिखित मुख्य दो भागों में बँटा होता है—

(i) **फुफ्फुसी परिसंचरण–** यह दाएँ निलय के संकुचन से प्रारंभ होता है, जिससे अशुद्ध रुधिर फुफ्फुसी धमनी द्वारा फेफड़ों में शुद्धिकरण के लिए जाता है। फेफड़ों से शुद्ध रुधिर फुफ्फुसी शिरा द्वारा हृदय के बाएँ अलिंद में वापस पहुँचता है।

(ii) **दैहिक परिसंचरण–** यह बाएँ निलय के सकुंचन से प्रारंभ होता है, जिससे शुद्ध रुधिर महाधमनी में आता है और फिर इसकी शाखाओं के द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचता है। हृदय के ऊपर एवं इससे नीचे स्थित अंगों से रुधिर दो अलग-अलग महाशिराओं के द्वारा वापस दाएँ अलिन्द में पहुँचाया जाता है। इस प्रकार दैहिक परिसंचरण बाएँ निलय से प्रारंभ होकर दाएँ अलिन्द में पूरा हो जाता है।

प्रश्न 12. रुधिर की संरचना तथा कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– रुधिर की संरचना तथा कार्यों के वर्णन के लिए अध्याय-17 मानव शरीर की संरचना का दीर्घ उत्तरीय प्रश्न 15, 18 व 19 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 13. प्रकाश संश्लेषण की परिभाषा लिखिए तथा इसकी क्रियाविधि का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर– **प्रकाश संश्लेषण की परिभाषा–** प्रकाश संश्लेषण, वह उपचायक क्रिया है जिसके द्वारा हरे पौधे अकार्बनिक सरल यौगिकों, जल तथा कार्बन डाइऑक्साइड को प्रकाशीय ऊर्जा के द्वारा कार्बोहाइड्रेट के रूप में बदल देते हैं तथा भोजन का निर्माण करते हैं। इस क्रिया में प्रकाशीय ऊर्जा का उपयोग हरे पौधों में उपस्थित पर्णहरित की उपस्थिति में किया जाता है तथा इसमें ऑक्सीजन उप-उत्पाद के रूप में निकलती है।

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्णहरित}]{\text{सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा}} \underset{\text{ग्लूकोज}}{C_6H_{12}O_6} + 6H_2O + 6O_2$$

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया विधि– प्रकाश संश्लेषण एक अत्यंत जटिल एवं विशिष्ट जैव रासायनिक क्रिया है, जो सामान्यत: हरितलवकों में उपस्थित पर्णहरित की उपस्थिति में प्रारंभ होती है तथा मुख्यत: दो भागों में घटित होती है—

(I) **प्रकाशीय अभिक्रियाएँ–** इनके लिए प्रकाश आवश्यक है। इन अभिक्रियाओं में प्रकाश संश्लेषण के वे सभी पद सम्मिलित हैं जिनके लिए प्रकाश अनिवार्य है। ये प्रक्रियाएँ हरितलवक के ग्रैना नामक भाग में होती हैं। संक्षेप में ये क्रियाएँ निम्नवत् संपन्न होती हैं—

(i) सूर्य के प्रकाश की विकिरण ऊर्जा के कारण क्लोरोफिल के अणु सक्रिय हो जाते हैं और उत्तेजित इलेक्ट्रॉन्स का निष्कासन करते हैं।

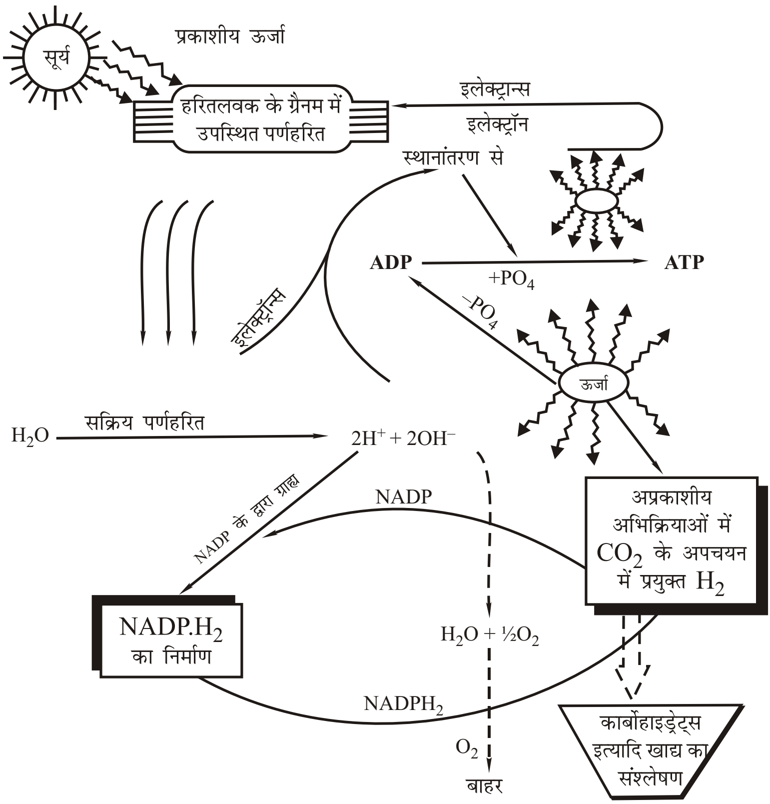

प्रकाशीय अभिक्रियाएँ : सभी क्रियाएँ क्लोरोप्लास्ट के ग्रैना पर होती हैं– एक संक्षिप्त रेखाचित्र।

(ii) सक्रिय क्लोरोफिल की उपस्थिति में आवश्यक ऊर्जा प्राप्त कर जल के अणुओं का विच्छेदन होता है जिससे हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन प्राप्त होते हैं।

$$2H_2O \rightleftharpoons 2H^+ + 2OH^-$$

$$2OH \qquad H_2O \quad \frac{1}{2}O_2$$

(iii) उत्तेजित इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण तंत्र के द्वारा अपनी ऊर्जा मुक्त करता है। मुक्त ऊर्जा को ADP के अणुओं में एक फॉस्फेट गुट और जोड़कर (ATP अणु बनाकर) संचित कर लिया जाता है।

(iv) मुक्त ऑक्सीजन पौधे से बाहर निकल जाती है।

(v) मुक्त हाइड्रोजन NADP नामक हाइड्रोजन ग्राही के द्वारा ग्रहण कर ली जाती है। इसमें $NADP.H_2$ का निर्माण होता है।

ये सभीक्रियाएँ हरित लवक के ग्रैना पर होती हैं।

(II) अप्रकाशीय अभिक्रियाएँ – इन क्रियाओं के लिए सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है।

अभिक्रियाओं को इनकी खोज करने वाले वैज्ञानिक के नाम के आधार पर ब्लैकमैन अभिक्रियाएँ भी कहते हैं। ये क्रियाएँ हरितलवक की पीठिका या स्ट्रोमा में होती हैं। इन समस्त क्रियाओं को जो एक विशेष पदार्थ रिबुलोस बाइफॉस्फेट की उपस्थिति में एक चक्र के रूप में होती हैं, कैल्विन चक्र कहते हैं। संक्षेप में ये अभिक्रियाएँ निम्नवत् संपन्न होती हैं—

(i) कुछ विशेष पदार्थों की उपस्थिति में वातावरण से प्राप्त CO_2 का प्रकाशीय क्रियाओं से प्राप्त $NADP.H_2$ के H से अवकरण होता है और PGAL नामक पदार्थ बनता है। इन क्रियाओं में निम्नलिखित अभिक्रियाएँ सम्मिलित हैं—

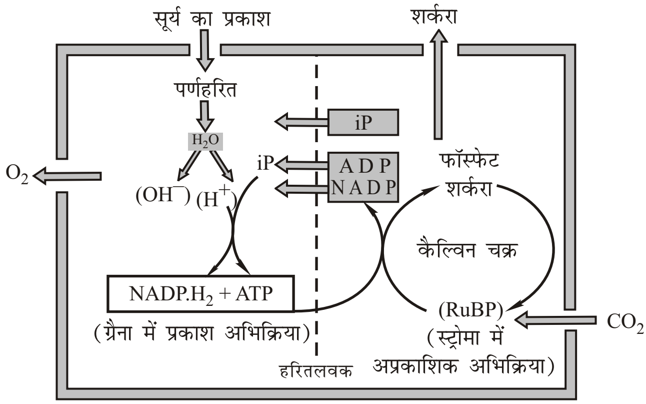

प्रकाश संश्लेषण का सारांश

(a) 5 कार्बन वाले यौगिक RuBp (रिबुलोस बाइफॉस्फेट) के साथ कार्बन डाइऑक्साइड के अणु $(6CO_2)$ मिलकर एक 6 कार्बन अस्थाई यौगिक का निर्माण करते हैं—

$$6RuBP \quad 6CO_2 \quad \xrightarrow[H_2O]{\text{एंजाइम}} \quad 6C_6 \text{ यौगिक (अस्थाई)}$$

(b) यह अस्थाई यौगिक शीघ्र ही अपचयित होकर PGA (फॉस्फोग्लिसरिक अम्ल) बना के दो अणु लेता है। यह तीन कार्बन वाला यौगिक (C_3) है—

(c) PGA अणु बाद में और अधिक अपचयित होकर PGAL (फॉस्फोग्लिसरैल्डीहाइड) का निर्माण करते हैं।

(d) PGAL के दो अणु मिलकर, अपचयन के द्वारा फॉस्फोरस शर्करा का तथा बाद में शर्करा का निर्माण करते हैं।

(ii) PGAL स्वयं भी भोजन की तरह काम कर सकता है। यह तीन कार्बन परमाणु वाला यौगिक है। इसके दो अणु मिलकर पहले एक अणु ग्लूकोज का निर्माण करते हैं।

$$2C_3H_5O_3 \quad 2[H] \qquad C_6H_{12}O_6$$

(iii) ग्लूकोज से ही अन्य सभी प्रकार के भोज्य पदार्थों; जैसे— प्रोटीन, वसा, मंड इत्यादि; का निर्माण भी पौधे के अंदर ही हो जाता है।

(iv) कैल्विन चक्र में PGAL तथा इसके उत्पादों से रिबुलोस बाइफॉस्फेट (RuBP) का फिर से निर्माण हो जाता है अर्थात् यह चक्र की अभिक्रियाओं को चलाने के लिए फिर से तैयार होता है।

प्रश्न 14. प्रकाश संश्लेषण को परिभाषित कीजिए। इस क्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों का उल्लेख कीजिए। प्रयोग द्वारा सिद्ध कीजिए कि प्रकाश संश्लेषण क्रिया में ऑक्सीजन निकलती है।

उत्तर- **प्रकाश संश्लेषण की परिभाषा-** प्रकाश संश्लेषण को हम इस प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं— प्रकाश संश्लेषण, वह उपचायक क्रिया है जिसके द्वारा अकार्बनिक सरल यौगिकों, जल तथा कार्बन डाइऑक्साइड को प्रकाशीय ऊर्जा के द्वारा कार्बोहाइड्रेट्स के रूप में बदल दिया जाता है। प्रकाशीय ऊर्जा का उपयोग पर्णहरित की उपस्थिति में किया जाता है तथा इसमें ऑक्सीजन उप-उत्पाद के रूप में निकलती है।

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्णहरित}]{\text{सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा}} \underset{\text{ग्लूकोज}}{C_6H_{12}O_6} + 6H_2O + 6O_2$$

प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक - प्रकाश संश्लेषण की दर अनेक बाह्य तथा अंत:कारकों से प्रभावित होती है। ये कारक निम्नलिखित हैं—

(I) **बाह्य कारक-** प्रकाश, ताप, वायु, जल, प्राप्त खनिज आदि प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करते हैं।

(i) **प्रकाश-** सूर्य का प्रकाश प्रकाश संश्लेषण के लिए ऊर्जा देता है। विद्युतीय प्रकाश में भी प्रकाश संश्लेषण होता है।

(a) नीले व लाल प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया सबसे अधिक गति से होती है।

(b) इन्फ्रारेड प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण की दर कम हो जाती है इसे रेड ड्रॉप कहते हैं।

(c) कम तीव्रता का प्रकाश अधिक समय तक दिए जाने पर प्रकाश संश्लेषण अधिक होता है।

(d) प्रकाश की तीव्रता बढ़ने पर प्रकाश संश्लेषण की दर भी बढ़ती है।

(e) हरे रंग की प्रकाश किरणें पत्ती में अवशोषित नहीं होती हैं।

(ii) **तापमान-** $10^{\circ}C$ से $35^{\circ}C$ के बीच का तापमान प्रकाश संश्लेषण के लिए उपयुक्त माना जाता है। यदि सभी कारक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हों तो प्रत्येक $10^{\circ}C$ वृद्धि पर प्रकाश संश्लेषण की दर दोगुनी हो जाती है, किंतु $40^{\circ}C$ के बाद और अधिक तापमान में वृद्धि होने पर प्रकाश संश्लेषण में कमी आ जाती है।

(iii) **जल-** जल की कमी का प्रकाश संश्लेषण की दर पर प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों प्रकार से प्रभाव पड़ता है। निश्चित मात्रा से कम जल मिलने पर प्रकाश संश्लेषण की दर कम हो जाती है। साथ ही पानी की कमी के कारण सभी जैविक क्रियाएँ भी धीमी हो जाती हैं और प्रकाश संश्लेषण की गति भी धीमी हो जाती है।

(iv) **खनिज लवण-** Fe तथा Mg खनिज पर्णहरिम के संश्लेषण के लिए जरूरी हैं। इनकी कमी में पर्णहरिम की कमी होगी जिससे प्रकाश संश्लेषण भी कम होगा।

(II) **अंत:कारक-** पत्ती की संरचना, स्टोमेटा की स्थिति, संरचना संख्या एवं वितरण तथा पेलिसेड कोशिकाओं में पर्णहरिम की मात्रा भी प्रकाश संश्लेषण की गति को प्रभावित करते हैं।

प्रयोग– प्रकाश संश्लेषण में ऑक्सीजन गैस निकलती है, यह सिद्ध करने के लिए एक प्रयोग करते हैं। इसके लिए एक बीकर, फनल, कोई जलीय पौधा जैसे हाइड्रिला, परखनली तथा पानी लेते हैं।

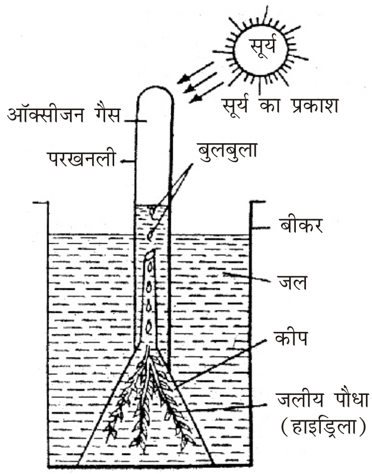

प्रकाश संश्लेषण में ऑक्सीजन निकलती है, को दिखाने के लिए एक प्रयोग

अब हाइड्रिला या अन्य कोई जलीय पौधा पानी से भरे बीकर में रखकर कीप से ढक दो। बीकर के पानी में कुछ ग्राम सोडियम बाइकार्बोनेट मिला दो जिससे पौधे को CO_2 मिलती रहे। कीप की नली के ऊपर पानी से भरी एक टैस्ट ट्यूब उल्टी खड़ी कर दो। इस उपकरण को धूप में रख दो। थोड़ी देर में आप देखेंगे कि ऑक्सीजन के बुलबुले हाइड्रिला के पौधे से निकलकर टैस्ट ट्यूब में इकट्ठे होने लगते हैं तथा इसका पानी नीचे की ओर गिरना आरंभ कर देता है। परखनली को हटाओ और एक जलती हुई तीली द्वारा गैस की परीक्षा करो। तीली को इसमें डालने पर आप देखेंगे कि यह और तेजी से जलने लगती है। अत: इस प्रयोग द्वारा सिद्ध होता है कि प्रकाश संश्लेषण में ऑक्सीजन गैस निकलती है।

प्रश्न 15. प्रकाश संश्लेषण किसे कहते हैं? प्रयोगों द्वारा सिद्ध कीजिए कि प्रकाश संश्लेषण के लिए प्रकाश एवं कार्बन डाइऑक्साइड आवश्यक है।

उत्तर– **प्रकाश संश्लेषण–** केवल हरे पौधों तथा कुछ सूक्ष्म प्राणियों में ही यह क्षमता होती है कि वे सूर्य द्वारा नि:सृत तथा पृथ्वी पर प्राप्त प्रकाशीय ऊर्जा की मात्र 4.0% ऊर्जा को ग्रहण करके भोजन हेतु उपयोग में ला सकते हैं। पौधों द्वारा प्रकाशीय ऊर्जा रासायनिक ऊर्जा में बदल ली जाती है जो भोजन के रूप में संगृहित होती है। यह कार्य पर्णहरित की उपस्थिति में प्रकाश संश्लेषण के द्वारा होता है।

अत: प्रकाश संश्लेषण, वह उपापचय क्रिया है जिसके द्वारा अकार्बनिक सरल यौगिकों, जल तथा कार्बन डाइऑक्साइड को सूर्य से ग्रहण प्रकाशीय ऊर्जा के द्वारा कार्बोहाइड्रेट्स के रूप में बदल दिया जाता है। यह क्रिया पर्णहरित की उपस्थिति में होती है।

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्णहरित}]{\text{सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा}} \underset{\text{ग्लूकोज}}{C_6H_{12}O_6} + 6H_2O + 6O_2$$

प्रकाश संश्लेषण के लिए सूर्य का प्रकाश आवश्यक है। इसकी अनुपस्थिति में तथा रात्रि के समय पौधों में प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है। इसी प्रकार कार्बन डाइऑक्साइड भी

प्रकाश संश्लेषण के लिए अति आवश्यक होता है। इनकी उपयोगिता जानने के लिए दो प्रयोग करते हैं—

प्रयोग-1– प्रकाश संश्लेषण के लिए प्रकाश आवश्यक है।

सामग्री– गमले में लगा पौधा, काला कागज, विलयन आदि।

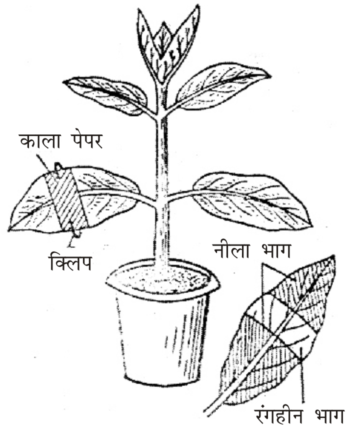

प्रकाश संश्लेषण में
प्रकाश के महत्व का प्रदर्शन

प्रयोग– गमलें में लगे पौधे को 48 घंटे के लिए अँधेरे स्थान पर रखते हैं ताकि इसकी पत्तियाँ मंड रहित हो जाएँ। अब इस पौधे की कुछ पत्तियों की दोनों सतहों को क्लिप की सहायता से काले कागज से ढ़क देते हैं ताकि इस पर सूर्य का प्रकाश न पड़े। इस पौधे को 6 घंटे के लिए धूप में रख देते हैं। ढकी पत्ती को पौधे से अलग करके क्लोरोफिल रहित करने के लिए एथिल ऐल्कोहॉल में उबालते हैं। इस रंगहीन पत्ती को आयोडीन के हल्के घोल में रखने पर आप देखेंगे कि पत्ती के वे भाग जिन पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है नीले हो गए हैं किंतु वह भाग जिस पर प्रकाश नहीं पड़ा, आयोडीन का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इससे स्पष्ट है कि मंड पत्ती के केवल उन्हीं भागों से बना जिन पर प्रकाश पड़ता है।

निष्कर्ष– इससे निष्कर्ष निकलता है कि प्रकाश संश्लेषण के लिए प्रकाश आवश्यक है।

प्रयोग-2— प्रकाश संश्लेषण में कार्बन डाइऑक्साइड की आवश्यकता के प्रदर्शन के लिए मॉल का आधी पत्ती का प्रयोग

चौड़े मुँह की एक बोतल रबर के कॉर्क के साथ लेते हैं। कॉर्क को दो अर्द्धांशों में लंबाई में काट देते हैं। एक मंडरहित पत्ती को पौधे पर लगी हुई अवस्था में ही (अथवा तोड़कर) आधा बोतल के अंदर तथा आधा बाहर (कॉर्क की सहायता से) लगाकर, कुछ समय के लिए उपकरण को धूप में छोड़ देते हैं। यदि पौधे से पत्ती को अलग किया गया है तो उसके वृंत को जल में डुबाकर रखना चाहिए। बोतल में पहले से ही

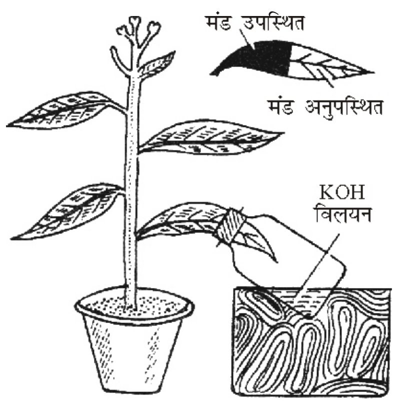

मॉल का आधी पत्ती का प्रयोग

पौटेशियम हाइड्रॉक्साइड (KOH) विलयन रखा जाता है जो बोतल के अंदर की वायु से CO_2 को अवशोषित कर लेता है।

प्रयोग में लाई गई पत्ती को पौधे से अलग करके मंड परीक्षण करने पर पता लगता है कि बोतल के अंदर रहे भाग में कोई मंड नहीं बना (यह भाग नीला या काला नहीं होता) जबकि बोतल के बाहर रहे भाग में मंड बना है। अत: सिद्ध होता है कि कार्बनडाइऑक्साइड के बिना प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है। इस प्रयोग को मॉल का आधी पत्ती का प्रयोग कहते हैं।

प्रश्न 16. वाष्पोत्सर्जन किसे कहते हैं? यह कितने प्रकार का होता है? रंध्रीय वाष्पोत्सर्जन क्रिया विधि का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- **वाष्पोत्सर्जन-** पौधे अपने वायवीय भागों; जैसे— पत्तियों, हरे प्ररोह आदि के द्वारा आंतरिक ऊतकों से, अतिरिक्त जल के वाष्प के रूप में बाहर निकालते हैं। यह क्रिया वाष्पोत्सर्जन कहलाती है। पौधे अपनी जड़ों द्वारा मृदा से जल अवशोषित करते रहते हैं जो पौधों में होने वाली विभिन्न उपापचई क्रियाओं में काम आता है किंतु इसका अत्यधिक अंश पौधे के लिए बेकार होता है। जो पौधों के वायवीय भागों में जल वाष्प के रूप में बाहर निकाल दिया जाता है। पौधे में वाष्पोत्सर्जन निरंतर होता रहता है, परंतु इसकी दर समान नहीं होती, दिन में वाष्पोत्सर्जन अधिक व रात्रि में कम होता है।

पत्तियाँ वाष्पोत्सर्जन करने वाले महत्वपूर्ण अंग हैं, यद्यपि वाष्पोत्सर्जन पौधे के सभी वायवीय भागों से होता है। पत्तियाँ अत्यधिक चौरस होती हैं और पौधे की वायवीय सतह का एक महत्वपूर्ण भाग बनाती हैं। इनकी चौरस सतहों पर अत्यधिक संख्या में पर्णरंध्र वितरित रहते हैं।

वाष्पोत्सर्जन के प्रकार- वाष्पोत्सर्जन मुख्यत: तीन प्रकार का होता है—

(i) **उपचर्मी-** पौधे की बाह्यत्वचा की कोशिकाओं का संपर्क सीधा वायवीय पर्यावरण से होता है; अत: प्राय: इसकी सुरक्षा के लिए इस पर कोई-न-कोई आवरण जैसे उपचर्म उपस्थित होता है, यद्यपि उपचर्म जो क्यूटिन नामक पदार्थ का बना होता है, वाष्पोत्सर्जन की दर को कम करता है, फिर भी इस उपचर्म में होकर वाष्पोत्सर्जन तो होता है। साधारण पौधों में लगभग 10% वाष्पोत्सर्जन इसी विधि के द्वारा होता है। मरुद्भिदों; जैसे— नागफनी , विभिन्न यूफोर्बिया जातियाँ आदि में उपचर्म अत्यधिक मोटा हो जाने से इस प्रकार का वाष्पोत्सर्जन नहीं के बराबर होता है।

(ii) **पर्णरंध्री –** पौधे के हरे और शाकीय भागों पर उपस्थित विशेष प्रकार के छिद्रों द्वारा होने वाला वाष्पोत्सर्जन पर्णरंध्री वाष्पोत्सर्जन कहलाता है। इन छिद्रों को जिन्हें विशेष प्रकार की द्वार कोशिकाओं के द्वारा खोला या बंद किया जा सकता है, पर्णरंध्र कहते हैं। पौधे में जल की अधिकांश हानि (लगभग 80-85%) इसी विधि के द्वारा होती है। कभी-कभी; जैसे— उष्णकटीबंधीय पौधों में उपचर्मी तथा पर्णरंध्री वाष्पोत्सर्जन लगभग बराबर हो सकता है।

(iii) **वातरंध्री-** प्रौढ़ तनों एवं काष्ठीय पौधों विशेषकर द्विबीजपत्री पौधों में तथा फल इत्यादि में द्वितीयक वृद्धि होने तथा काग बनने के कारण, भीतरी जीवित ऊतकों का वायु आदि के लिए बाह्य वातावरण से संबंध वातरंध्रों के द्वारा होता है। इनके अंदर एक प्रकार की ढीली, मृदूतकीय, संपूरक कोशिकाएँ भरी रहती है। इनके द्वारा होने वाला वाष्पोत्सर्जन इसी मार्ग से जलवाष्प के बाह्य वातावरण में चले जाने से होता है अत: इसे वातरंध्री वाष्पोत्सर्जन कहते हैं।

रंध्रीय वाष्पोत्सर्जन की क्रियाविधि- जड़ों द्वारा अवशोषित जल जाइलम के द्वारा पत्तियों तक पहुँचाता है। जाइलम वाहिकाओं तथा वाहिनिकाओं द्वारा जल रसारोहण क्रिया के द्वारा पत्ती की पर्णमध्यक कोशिकाओं में पहुँचता है पत्ती की पर्णमध्यक कोशिकाओं के बीच में अन्तराकोशिकीय स्थान होते हैं जिनसे जल वाष्पीकरण क्रिया के

द्वारा जलवाष्प में बदलकर अंतराकोशीय स्थानों में आ जाता है तथा जल वाष्प सामान्य विसरण द्वारा रंध्रों से वातावरण में चली जाती है वाष्पोत्सर्जन की दर रंध्रों के खुलने व बंद होने पर निर्भर होती है।

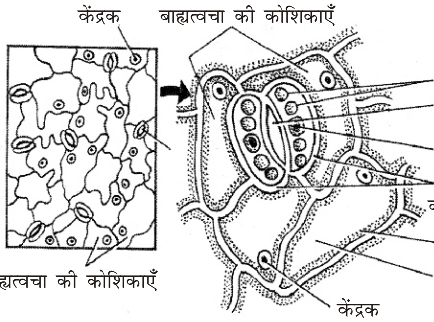

पृष्ठधारी पत्ती की निचली बाह्यत्वचा
पर स्थित रंध्र तथा उनकी संरचना

अँधेरे या रात्रि के समय द्वारा कोशिकाओं में मंड अधिक होता है किंतु प्रकाश के समय यह फॉस्फोरिलेज एंजाइम की उपस्थिति में विलेयशील शर्करा में बदल जाता है जबकि पर्ण मध्योतक कोशिकाओं में ठीक इसके विपरीत होता है। दिन के समय मंड के विलेयशील शर्करा में बदल जाने से द्वार कोशिकाओं के कोशिका रस का परासरण दाब बढ़ जाता है और ये पर्ण मध्योतक कोशिकाओं से जल अवशोषित कर स्फीति हो जाती है। इसके कारण पतली बाह्य भित्ति तन जाती है जिससे द्वार कोशिकाओं की मोटी भित्ति भी बाहर की ओर खिंचती है और रंध्र खुल जाते हैं। अँधेरे में प्रकाश संश्लेषण नहीं होता तथा शर्करा अघुलनशील मंड में बदल जाती है। इसके फलस्वरूप द्वार कोशिकाओं का परासरण दाब कम हो जाता है और पानी बाहर निकल जाता है जिससे द्वार कोशिकाएँ शिथिल हो जाती हैं और रंध्र बंद हो जाता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. पोषण किसे कहते हैं? स्वपोषण तथा परपोषण में अंतर बताइए।

उत्तर– सभी जीवधारियों को जैविक क्रियाओं के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा जीवधारियों द्वारा ग्रहण किए गए भोजन के ऑक्सीकरण से प्राप्त की जाती है। जीवधारियों को ऊर्जा ग्रहण किए हुए भोजन से सीधे नहीं मिल पाती है। भोजन के पाचन अवशोषण तथा स्वांगीकरण के उपरान्त ही कोशिकाओं द्वारा ग्रहण किए गए पदार्थों से ऊर्जा का उत्पादन होता है जो जैविक क्रियाओं में प्रयोग की जाती है। इस संपूर्ण क्रिया को पोषण कहा जाता है।

स्वपोषण तथा परपोषण में अंतर–

स्वपोषण– ऐसे जीव जो अकार्बनिक यौगिकों, जल तथा प्रकाश के माध्यम से अपना भोजन स्वयं बनाते हैं, स्वपोषी कहलाते हैं तथा यह क्रिया स्वपोषण कहलाती है; जैसे— पादप।

परपोषण– ऐसे जीव जो अपना भोजन स्वयं नहीं बना सकते तथा अपने भोजन के लिए पौधों तथा अन्य जीवों पर निर्भर होते है, परपोषी कहलाते हैं, तथा यह क्रिया परपोषण कहलाती है; जैसे— जंतु, कवक आदि।

प्रश्न 2. पोषण से क्या तात्पर्य है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– पोषण के लिए लघुउत्तरीय प्रश्न-1 के अन्तर्गत देखिए।

प्रश्न 3. कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन का पाचन करने वाले एक-एक एंजाइम का नाम लिखिए।

उत्तर- कार्बोहाइड्रेट का पाचन ग्रहणी के अग्न्याशयिक रस में पाए जाने वाले एमाइलेज नामक एंजाइम से होता है। वसा का पाचन भी अग्न्याशयिक रस के लाइपेज एंजाइम द्वारा होता है तथा प्रोटीन का पाचन आमाशय के जठर ग्रंथियों से उत्पन्न पेप्सिन नामक एंजाइम द्वारा होता है।

प्रश्न 4. स्वांगीकरण क्या होता है? इस क्रिया के दो लाभ बताइए।

उत्तर- आहारनाल में पचा हुआ भोजन कोशिका के जीवद्रव्य में पहुँचने के बाद इससे प्राप्त पोषक तत्व कोशिका के जीवद्रव्य के द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं, यह क्रिया ही स्वांगीकरण कहलाती है।

इस क्रिया के दो लाभ निम्नलिखित हैं—

(i) इस क्रिया से जीवद्रव्य की वृद्धि होती है, अर्थात् जीव की वृद्धि होती है।

(ii) इस क्रिया के फलस्वरूप प्राप्त पोषक तत्वों से कोशिकाओं के निर्माण, मरम्मत, वृद्धि आदि में सहायता मिलती है।

प्रश्न 5. पित्त रस भोजन के पाचन में किस प्रकार सहायता करता है?

उत्तर- ग्रहणी में पित्ताशय से पित्त रस का स्रावण होता है। पित्त रस क्षारीय होता है। यह भोजन की अम्लीयता को दूर करता है। इसका pH मान लगभग 7.7 होता है। पित्त रस भोजन की वसा का इमल्सीकरण करते हैं। पित्त भोजन से बने लाइम की अम्लता को समाप्त करके उसे क्षारीय बनाता है तथा ऑत्र की क्रमांकुचन गति बढ़ाने में सहायता करता है। यह पित्त वर्णकों तथा कोलेस्ट्राल को मल द्वारा शरीर से बाहर निकालने में भी सहायक होते हैं

प्रश्न 6. मनुष्य की दो पाचक ग्रंथियों के नाम तथा कार्य लिखिए।

उत्तर- (i) **लार ग्रंथियाँ-** मुख गुहा में अनेक छोटी-छोटी (सूक्ष्म मुख ग्रंथियाँ उसकी श्लेष्मिका में होती हैं जो थोड़ी मात्रा में लार उत्पन्न करती हैं। इस लार में टायलिन या सैलावरी एमाइलेज एंजाइम होता है। यह भोजन में मिलकर मंड पर क्रिया करके उसे शर्करा में बदल देता है।

(ii) **जठर ग्रंथियाँ-** मनुष्य के आमाशय की जठर ग्रंथियों से जठर रस स्रावित होता है। इसमें प्रोप्सिन तथा प्रोरेनिन नामक प्रोएंजाइम्स होते हैं। प्रोपेप्सिन अम्ल के साथ मिलकर पेप्सिन में बदल जाता है और भोजन के प्रोटीन पर क्रिया करके पेप्टोन्स में बदल देता है।

प्रश्न 7. एंजाइम क्या है? पाचन में दो एंजाइम्स की उपयोगिता समझाइए।

उत्तर- जीवों के शरीर में विभिन्न प्रकार की ग्रंथियों द्वारा रसायनिक पदार्थ स्रावित होते हैं जो विभिन्न क्रियाओं जैसे पाचन आदि में रसायनिक क्रिया करके क्रियाविधि को प्रभावित करते हैं, एंजाइम कहलाते हैं।

पाचन में मुखगुहा से उत्पन्न लार में टायलिन या सैलाइवरी एंजाइम स्रावित होता है जो भोजन की मंड पर क्रिया करके उसे शर्करा में परिवर्तित कर देता है। दूसरे अग्न्याशय के अग्न्याशयिक रस में पाया जाने वाला एंजाइम **ट्रिप्सिन**, अधपचे प्रोटीन और पेप्टोन्स पर क्रिया करके उसे अमीनों अम्ल में बदल देता है।

प्रश्न 8. जल में घुलनशील विटामिन्स के नाम व उनके स्रोत लिखिए।

उत्तर- जल में घुलनशील विटामिन्स-

(i) **विटामिन B, मुख्य स्रोत-** अनाज, फलियाँ, यीस्ट, मांस, अंडें मछली आदि।

(ii) **फोलिक अम्ल समूह के विटामिन्स, मुख्य स्त्रोत–** हरी पत्तियाँ, सोयाबीन, यीस्ट, जिगर, गुर्दे तथा अंडे आदि।

(iii) **विटामिन H– बायोटिन, मुख्य स्त्रोत–** सब्जियाँ, फल, मूँगफली, गेहूँ, चॉकलेट, यीस्ट, व अंडा आदि।

(iv) **विटामिन C, मुख्य स्त्रोत–** आँवला, मुसम्मी, नींबू, सब्जियाँ व रसीले फल आदि।

प्रश्न 9. पाचन क्रिया में यकृत की भूमिका बताइए।

उत्तर– पाचन क्रिया में यकृत अनेक महत्वपूर्ण कार्य करता है।

(i) यह पित्त रस का स्त्रावण करता है। जो आमाशय से आए भोजन को क्षारीय बनाता है। यह वसा के इमल्सीकरण में भी सहायक है।

(ii) रुधिर में ग्लूकोज की मात्रा अधिक होने पर ग्लूकोज को ग्लाइकोजन में बदलकर संचित कर लेती है। आवश्यकता पड़ने पर ये संचित ग्लाइकोजन पुनः ग्लूकोज में बदल दिया जाता है।

(iii) यकृत कोशिकाएँ अकार्बनिक पदार्थों का संचय भी करती हैं।

(iv) ये कोशिकाएँ शरीर में उपस्थित विषाक्त पदार्थों को हानि रहित पदार्थों में बदल देती हैं।

(v) ये चोट लगने पर रुधिर का थक्का बनाने के कार्य में प्रयोग होने वाले प्रोथ्रोम्बिन व फ्राइब्रिनोजन रुधिर प्रोटीन का संश्लेषण करती हैं।

(vi) ये हिपैरिन का स्त्राव करती है जिसे रुधिर, रुधिर वाहिनियों में नहीं जमता है।

प्रश्न 10. वसा मे घुलनशील तीन विटामिन्स के नाम तथा उनके कार्य लिखिए।

उत्तर– **वसा मे घुलनशील विटामिन्स–**

(i) विटामिन A (रेटिनॉल); इसका कार्य दृष्टि वर्णक के संश्लेषण व एपिथीलियल स्तरो की वृद्धि एवं विकास में योगदान करना है।

(ii) विटामिन D (कैल्सीफेरोल); यह हड्डियों व दाँतो के स्वास्थ्य में योगदान करता है।

(iii) विटामिन K (नेफ्थोक्विनॉन); यह रुधिर का थक्का जमाने में अति महत्वपूर्ण है तथा जिगर में प्रोथ्रोम्बिन के निर्माण में भी सहायक होता है।

प्रश्न 11. जीभ पाचन तंत्र का एक महत्वपूर्ण अंग है। स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– जीभ भोजन को मुखगुहा से निगलने का कार्य करती है। यह मुखगुहा मे लार स्त्रावित करती है जो भोजन को लुगदी बनाने मे सहायक है। जीभ मे उपस्थित स्वाद कालिकाएँ भोजन के स्वाद का ज्ञान कराती है अत: जीभ पाचन तंत्र का एक महत्वपूर्ण अंग है।

प्रश्न 12. पाचक रस पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– आहारनाल की श्लेष्मक कला में अलग–अलग स्थानो पर भिन्न–भिन्न प्रकार की पाचक ग्रंथियाँ होती है। पाचक ग्रंथियाँ पाचक रस बनाती है। इन पाचक रसो मे एक या अधिक प्रकार के एंजाइम्स होते हैं, जो भोजन के विभिन्न घटको को पचाने मे सहायता करते है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी ग्रंथियाँ आहारनाल से संबंधित होती है, जो अपना एंजाइमयुक्त पाचक रस आहारनाल में भेजती है। मनुष्य की आहारनाल में पाचन विभिन्न पाचक रस द्वारा ही होता है।

प्रश्न 13. क्रमाकुंचन से आप क्या समझते हैं?

उत्तर– आमाशय में लगातार पेशीय क्रंमाकुंचन के कारण भोजन पिसता रहता है। जिस कारण भोजन की लुगदी बन जाती है। अत: क्रमाकुंचन क्रिया द्वारा भोजन में पाचक रस अच्छी तरह मिल जाते हैं जिसके फलस्वरूप भोजन आहारनाल में आगे बढ़ने के लिए लुग्दी के रूप में बदल जाता है।

प्रश्न 14. पाचन का अर्थ स्पष्ट कीजिए तथा बताइए कि इसकी क्यों आवश्यकता है?

उत्तर- पाचन क्रिया ठोस, अविसरणीय खाद्य पदार्थों के जटिल अणुओं एवं आयनों में विभाजित होने की क्रिया है, जिससे वह शोषण होने योग्य बनकर विसरण अथवा परासरण द्वारा आमाशय तथा आँतों की श्लेष्म कला में फैली हुई रुधिर कोशिकाओं के रुधिर में मिलकर ऊतकों में पहुँच सके।

जंतुओं का शरीर सीधे भोजन द्वारा ऊर्जा प्राप्त नहीं कर सकता। यह भोजन पाचन के द्वारा पचकर सरल अणुओं या आयनों के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। जिससे कि जंतु का शरीर उसका शोषण सरलता से कर सके तथा शरीर को विभिन्न कार्यों के लिए ऊर्जा मिल सके।

प्रश्न 15. श्वसन को परिभाषित कीजिए तथा श्वसन क्रिया में किस प्रकार ऊर्जा ATP में स्थानांतरित होती है?

उत्तर- **श्वसन की परिभाषा-** जीवों में कोशिकीय स्तर ऑक्सीजन की उपस्थिति में भोजन के जैविक ऑक्सीकरण की क्रिया को श्वसन कहते हैं।

श्वसन क्रिया में ग्लूकोज में संचित ऊर्जा ATP में स्थानांतरित होती है।

$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O + 673\,kcal$ ऊर्जा(38ATP के रूप में)

प्रश्न 16. श्वसन तथा श्वासोच्छ्वास में अंतर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 8 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 17. सहायक श्वसन अंग किसे कहते हैं? यह कौन-कौन से होते हैं?

उत्तर- वे समस्त अंग जो गैस विनिमय में भाग नहीं लेते लेकिन ऑक्सीजन युक्त वायु को बाहर से फेफड़ों तक तथा फेफड़ों से कार्बन डाइऑक्साइड युक्त वायु को शरीर से बाहर निकालने में सहायता करते है, सहायक श्वसन अंग कहलाते हैं। ये अंग निम्नलिखित हैं—

(i) नासिका एवं नासामार्ग (ii) स्वर यंत्र और (iii) श्वास नलिका।

प्रश्न 18. टिप्पणी लिखिए-

(a) श्वासनली (b) कंठ (c) फेफड़े (d) पैंक्रियास

उत्तर- (a) **श्वासनली**- यह गर्दन की पूरी लंबाई में स्थित होती है। इसका कुछ भाग वक्ष गुहा में पहुँचता है। इसकी दीवार पतली तथा लचीली होती है और इसमें 'C' आकार की उपास्थि से निर्मित 16-20 अधूरे छल्ले पाए जाते हैं। ये छल्ले श्वासनली में वायु में न होने पर इसे पिचकने से रोकते हैं।

(b) **कंठ**- यह वयु नाल का अगला बक्सेनुमा भाग है यह उपास्थि की बनी तीन प्रकार की चार प्लेटों से बना होता है। इसकी गुहा कंठ कोष कहलाती है। कंठ कोष में जो जोड़ी वाक् रज्जु होते हैं। इन वाक रज्जुओं में कंपन से ही ध्वनि उत्पन्न होती है। इस कारण इसे ध्वनि उत्पादन अंग भी कहते हैं। हमारे गले में कंठ की उपास्थि ही उभार के रूप में दिखाई देती है। इसे टेंटुआ कहते हैं।

(c) **फेफड़े**- मनुष्य के दोनों फेफड़े या फुफ्फुस हृदय के दोनों ओर वक्ष गुहा का अधिकांश भाग घेरे रहते हैं। इनके चारों ओर एक गुहा होती है जिसे प्लूरल या फुफ्फुसीय गुहा कहते हैं।

प्रत्येक फुफ्फुस शंक्वाकार, हल्के गुलाबी रंग का, स्पंजी तथा लचीला होता है। ये श्वसनियों, श्वसनिकाओं, वायुकोषों, कूपिकाओं एवं रुधिर केशिकाओं के जाल से बने होते हैं।

(d) **पैंक्रियास- आमाशय-** आमाशय के पीछे उदर गुहा की पश्च भित्ति पर ग्रहणी के मध्य बने 'C' आकार के स्थान में स्थित यह यकृत के बाद दूसरी सबसे बड़ी ग्रंथि है। यह चपटी आकृति वाली गुलाबी रंग की अति महत्वपूर्ण ग्रंथि होती है। एक

संयुक्त ग्रंथि या मिश्रित होती है तथा इसके दो भाग होते हैं— बहि:स्रावी भाग और अंत:स्रावी भाग । यह छोटे-छोटे अनेक पिण्डकों की बनी होती है, जिनकी घनाकार व स्रावी कोशिकाओं के मध्य, स्थान-स्थान पर विशेष कोशिकाओं के समूह पाए जाते हैं। इन्हें लैंगरहैन्स की द्वीपिकाएँ कहते हैं।

प्रश्न 19. मनुष्य के परिसंचरण तंत्र में कौन-कौन से तंत्र आते हैं तथा इसके कितने भाग होते हैं?

उत्तर- मनुष्य के दो प्रकार के परिसंचरण तंत्र पाए जाते हैं—

1. रुधिर परिसंचरण तंत्र
2. लसीका तंत्र

मानव में रुधिर परिसंचरण तंत्र दो भागों में बँटा होता है—

(i) फुफ्फुसी परिसंचरण

(ii) वैहिक परिसंचरण

प्रश्न 20. टिप्पणी लिखिए-

(a) दैहिक या सिस्टेमिक परिवहन **(b) रुधिर दाब**

(c) लसीका **(d) हीमोग्लोबिन**

उत्तर- (a) **दैहिक या सिस्टेमिक परिवहन-** यह बाएँ निलय के संकुचन से प्रारंभ होता है, जिससे शुद्ध रुधिर महाधमनी में आता है और फिर इसकी शाखाओं के द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचता है। हृदय के ऊपर एवं इससे नीचे स्थित अंगों से रुधिर दो अलग-अलग महाशिराओं के द्वारा वापस दाएँ अलिन्द में पहुँचाया जाता है। इस प्रकार दैहिक परिसंचरण बाएँ निलय से प्रारंभ होकर आलिन्द में पूरा हो जाता है।

(b) **रुधिर दाब-** अंगों तथा उनकी ऊतकों तक रुधिर पहुँचाने के लिए रुधिर को संकरी वाहिनियों तथा केशिकाओं में पहुँचाने के लिए हृदय जिस झटके के साथ रुधिर पंप करता है, यदि यह दाब नहीं होगा तो रुधिर केशिकाएँ पिचक जाएँगी। रुधिर का दाब विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न होता है। निलय के सिकुड़ने से रुधिर महाधमनी तथा पल्मोनरी धमनी में चला जाता है जिससे एक सामान्य दाब उत्पन्न होता है, इसे ही रुधिर दाब कहते हैं। यह दाब प्राय: पारे के 120-140 मिमी स्तंभ द्वारा बने दाब के बराबर होना चाहिए। इसे प्रकुंचन दाब कहते हैं। इसके विपरीत जब रुधिर अलिन्द से निलय में आता है तो दाब पारे के 80 मिमी स्तंभ द्वारा बने दाब के बराबर होता है। इसे अनुशिथिलन दाब कहते हैं। अत: एक सामान्य वयस्क एवं स्वस्थ मनुष्य का स्थिर दाब 120/80 मिमी होना चाहिए।

इस प्रकार, वाहनियों की भित्ति के इकाई क्षेत्रफल पर रुधिर आरोपित बल रुधिर दाब या रक्त दाब कहलाता है।

(c) **लसिका-** रुधिर वाहिनियों तथा ऊतकों के मध्य खाली स्थान में एक रंगहीन स्वच्छ तरल पदार्थ पाया जाता है, जिसे लसिका कहते हैं। रुधिर प्लाज्मा रुधिर कोशिकाओं की पतली दीवार से छनकर ऊतक कोशिकाओं के संपर्क में आ जाता है। इस छने हुए द्रव को लिम्फ या लसिका या ऊतक द्रव कहते हैं। लसिका में लाल रुधिर कणिकाएँ (RBC) व हीमोग्लोबिन नहीं पाई जाती हैं, परंतु श्वेत रुधिर कणिकाएँ अधिक मात्रा में पाई जाती हैं। इसमें ऑक्सीजन तथा पोषक पदार्थों की मात्रा रक्त की अपेक्षा कम होती है तथा CO_2 एवं उत्सर्जी पदार्थों की मात्रा अधिक होती है।

(d) **हीमोग्लोबिन-** यह एक लौहयुक्त प्रोटीन है, जिसका निर्माण लौहयुक्त वर्णक हीम (heam) तथा ग्लोबिन (globin) प्रोटीन के द्वारा होता है।

कुछ जंतुओं जैसे केंचुआ आदि के रुधिर प्लाज्मा में हीमोग्लोबिन घुला रहता है तथा सभी vertebrates जंतुओं में ये लाल रुधिर कणिकाएँ (Rbcs) में ही पाया

जाता है। ये वायु के साथ मिलकर एक अस्थायी यौगिक ऑक्सीहीमोग्लोबिन का निर्माण करता है। जो रक्त में घुलकर शरीर के ऊतकों में पहुँचता है, जहाँ ये विखंडित हो जाता है और ऑक्सीजन मुक्त करता है। यह क्रिया लगातार चलती रहती है, अत: हीमोग्लोबिन श्वसन क्रिया में सहायता करता है।

प्रश्न 21. रुधिर दाब किसे कहते हैं?

उत्तर- इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 20(b) का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 22. रुधिर के कार्य लिखिए।

उत्तर- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 12 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 23. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-

(a) रुधिर वाहिनियाँ **(b) ग्लाकोलिसिस**

(c) मुंच की व्यापक प्रवाह परिकल्पना **(d) वाष्पोत्सर्जन कर्षण**

(e) प्रकाश संश्लेषण का महत्व **(f) हृदय स्पंद**

(g) रसारोहण

उत्तर- (a) **रुधिर वाहिनियाँ-** ये हृदय से रुधिर को लाने व ले जाने का कार्य करती हैं। ये निम्न तीन प्रकार की होती है—

(i) **धमनियाँ-** हृदय से रुधिर धमनियों द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचाया जाता है। धमनियों की दीवार मोटी व लचीली होती है। इनके अंदर रुधिर झटके के साथ बहता है। इनकी गुहा में कपाट नहीं होते। अंगों के अंदर पहुँचकर धमनियाँ धमनिकाओं में बँट जाती हैं। इनकी दीवार कोशिकाओं के समान पतली होती हैं। धमनिकाएँ पुन: विभाजित होकर केशिकाएँ बनाती हैं।

(ii) **केशिकाएँ-** केशिकाएँ की दीवार एककोशिकीय स्तर की बनी होती हैं और ऊतक कोशिकाओं के संपर्क में रहती है। केशिकाओं के रुधिर ऊतक द्रव एवं ऊतक कोशिकाओं के बीच पदार्थों का आदान-प्रदान होता है।

(iii) **शिराएँ-** ऊतक में बहुत-सी केशिकाओं के जुड़ने से शिराएँ बनती हैं। ये ऊतक से रुधिर को हृदय में वापस पहुँचाती हैं। इनकी दीवार पतली होती हैं और इनकी गुहा में कपाट होते हैं। इनमें रुधिर का बहाव हृदय की ओर तथा समान गति से होता है।

(b) **ग्लाइकोलिसिस-** ग्लाइकोलिस कोशिका द्रव्य में होता है। इस प्रक्रिया में ग्लूकोज का एक अणु विघटन क्रिया द्वारा पाइरुविक अम्ल के दो अणु बनाता है। इस प्रक्रिया में उत्पन्न ऊर्जा से चार A.T.P. अणु बनते हैं किंतु अभिक्रिया में दो A.T.P. अणु ही प्राप्त होते हैं।

$$\underset{\text{(ग्लूकोज)}}{C_6H_{12}O_6} + 2ATP + 2ADP + 2H_3PO_4 + 2NAD \longrightarrow \underset{\text{(पाइरुविक अम्ल)}}{2CH_3COCOOH}$$

$$+ 4ATP + 2NADH_2 + 2H_2O$$

(c) **मुंच की व्यापक प्रवाह की परिकल्पना-** खाद्य पदार्थों के स्थानांतरण के संदर्भ में अनेक परिकल्पनाएँ प्रस्तुत की गई हैं, इनमें से मुंच परिकल्पना सर्वमान्य है। मुंच (Munch, 1927-39) ने फ्लोएम में भोज्य पदार्थों के स्थानांतरण के संबंध में कहा है कि यह क्रिया अधिक सांद्रता वाले स्थानों से कम सांद्रता वाले स्थानों की ओर होती है। पर्णमध्योतकी कोशिकाओं में निरंतर भोज्य पदार्थों के बनते रहने के कारण परासरण दाब अधिक हो जाता है। उधर जड़ों में या अन्य स्थानों में इन पदार्थों के उपयोग में आते रहने अथवा अघुलनशील रूप में संचित हो जाने से

सांद्रता कम हो जाती है। अत: पर्णमध्योतक कोशिकाओं से फ्लोएम में होकर आवश्यकता के स्थानों को स्थानांतरण, सामूहिक रूप में अथवा परासरण दाब के कारण होता है।

पर्णमध्योतक कोशिकाओं में निरंतर शर्करा का निर्माण होता रहता है। इससे इन कोशिकाओं का परासरणी दाब कम नहीं हो पाता। जड़ अथवा भोजन संचय करने वाले भागों में शर्करा के उपयोग के कारण अथवा भोज्य पदार्थों के अघुलनशील अवस्था में बदलकर संचित होने के कारण कोशिकाओं का परासरणी दाब कम रहता है। इसके फलस्वरूप पर्णमध्योतक कोशिकाओं से भोज्य पदार्थ अविरल रूप से फ्लोएम में प्रवाहित होते रहते हैं।

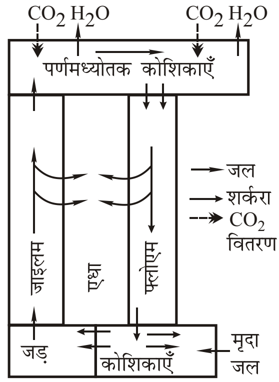

मुंच की परिकल्पना का रेखीच चित्रण

(d) वाष्पोत्सर्जन कर्षण– वाष्पोत्सर्जन कर्षण के कारण पौधे में जल–स्तंभ पर तनाव उत्पन्न होता है तथा जल स्तम्भ पत्तियों के जाइलम तक ऊपर उठता चला जाता है। इससे जल बड़े–बड़े वृक्षों में भी अत्यधिक ऊँचाई तक पहुँच जाता है। वाष्पोत्सर्जन कर्षण क्रिया के द्वारा ही पौधे जड़ों द्वारा जल का निष्क्रीय अवशोषण करते हैं।

(e) प्रकाश संश्लेषण का महत्व– प्रकाश संश्लेषण अत्यंत उपयोगी प्रक्रिया है। इसके निम्न महत्व अंकित किए जा सकते हैं—

(i) भोज्य पदार्थों का उत्पादन– पौधे अपने लिए खाद्य पदार्थों को इसी प्रक्रिया द्वारा बनाते हैं जबकि शेष जीव (उपभोक्ता) अपने भोजन के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पौधे (उत्पादक) पर ही निर्भर हैं।

(ii) ऊर्जा का स्रोत– सभी जीवों, जिनमें पौधे भी सम्मिलित हैं, के लिए पौधों द्वारा निर्मित भोजन ही ऊर्जा का स्रोत हैं।

(iii) वायुमंडल का नियन्त्रण, शुद्धिकरण तथा जैव संतुलन– प्रकाश संश्लेषण द्वारा ही वायुमंडल में कार्बन डॉइऑक्साइड तथा आक्सीजन गैसों के अनुपात को नियन्त्रित किया जाता है। इस प्रकार जैवीय संतुलन बना रहता है।

(iv) अंतरिक्ष यात्रा में– अंतरिक्ष यात्रा के लिए ऑक्सीजन तथा भोजन, दोनों प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा प्राप्त करने के लिए प्रयास किए गए हैं।

(f) हृदय स्पंद– हृदय शरीर में रुधिर को पंप करने का कार्य करता है। इस कार्य के लिए हृदय हर समय सिकुड़ता तथा शिथिल होता रहता है। इस कारण हृदय लगातार स्पंद होता रहता है। मनुष्य का हृदय एक मिनट में 72 से 75 बार स्पंदित होता है। यह हृदय स्पंदन की दर कहलाती है।

(g) रसारोहण– पौधों में भूमि से जल तथा खनिज लवण अवशोषित होकर जाइलम ऊतक द्वारा तने से होकर पत्तियों तक पहुँचते हैं। इस क्रिया को रसारोहण कहते हैं।

प्रश्न 24. प्रकाश संश्लेषण में पर्णहरित का क्या योगदान है?

उत्तर– प्रकाश संश्लेषण में पर्णहरित का योगदान– पर्णहरित या क्लोरोफिल हरे रंग का वर्णक है जो मुख्य रूप से पत्तियों में मिलता है। केवल उन्हीं कोशिकाओं में प्रकाश संश्लेषण होता है जिनमें पर्णहरित होता है। यह हरित लवकों में मिलता है। क्योंकि पर्णहरित मुख्य रूप से पत्तियों में पाया जाता है, अत: इन्हें प्रकाशसंश्लेषी अंग कहते हैं। क्लोरोफिल में ही सौर ऊर्जा को शर्करा में रासायनिक ऊर्जा के रूप में बंधित करने का गुण होता है।

प्रश्न 25. जल का प्रकाश अपघटन क्या होता है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– प्रकाश संश्लेषण क्रिया में सक्रिय क्लोरोफिल की उपस्थिति में आवश्यक ऊर्जा प्राप्त कर जल के अणुओं का अपघटन होता है जिससे हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन प्राप्त होती है।

$$2H_2O \rightleftharpoons 2H^+ + 2OH^-$$

$$2OH \qquad H_2O \quad \frac{1}{2}O_2$$

प्रश्न 26. प्रयोग द्वारा सिद्ध कीजिए कि प्रकाश संश्लेषण क्रिया में पर्णहरित तथा प्रकाश आवश्यक है?

उत्तर– **प्रकाश संश्लेषण क्रिया में पर्णहरित की आवश्यकता–** क्रोटन या कोलियस के पौधे की किसी एक चितकबरी पत्ती का कागज पर चित्र बनाते हैं और उसके हरे, रंगीन व सफेद प्रदेशों को अंकित कर लेते हैं। पत्तियों को मंड रहित करने के लिए गमले को दो–तीन दिनों तक अँधेरे में रखते हैं। अब गमले को तेज धूप में रखते हैं। 4-5 घंटे बाद एक–दो पत्तियों को तोड़कर ऐल्कोहॉल में उबालकर मंड के लिए आयोडीन द्वारा परीक्षण करते हैं। आप देखेंगे कि आयोडीन से पत्ती के केवल हरे प्रदेश ही नीले होते हैं क्योंकि क्लोरोफिल की उपस्थिति के कारण केवल इन्हीं स्थानों में मंड बनता है। पत्ती के उन भागों में जहाँ दूसरे रंग की धारियाँ थी, वहाँ का रंग नीला नहीं पड़ता, क्योंकि उन स्थानों पर मंड नहीं बना था।

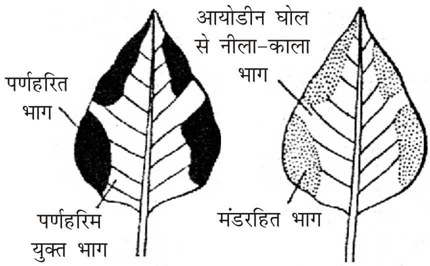

प्रकाश संश्लेषण में क्लोरोफिल के महत्व का प्रदर्शन

प्रकाश संश्लेषण क्रिया में प्रकाश की आवश्यकता– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या के प्रश्न संख्या 15 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 27. प्रकाश संश्लेषण के लिए CO_2 आवश्यक होती है, कथन की पुष्टि प्रयोग द्वारा स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 15 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 28. प्रकाश संश्लेषण क्रिया के अंतिम उत्पाद तथा उनके महत्व पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– **प्रकाश संश्लेषण क्रिया के अंतिम उत्पाद तथा उनके महत्व–** प्रकाश संश्लेषण के अंत में सामान्यत: ग्लूकोज व ऑक्सीजन का निर्माण होता है जो बाद में पौधों की कोशिकाओं में मंड के रूप में परिवर्तित होकर पौधें के कुछ विशेष संचय केंद्रों में एकत्र कर लिया जाता है। पौधे कुछ अन्य विशेष पदार्थों के सहयोग से कुछ अन्य रासायनिक क्रियाओं द्वारा खाद्य पदार्थों (वसा, प्रोटीन्स आदि) का निर्माण भी करते हैं। अन्य विशेष पदार्थों के सहयोग से कुछ अन्य रासायनिक क्रियाओं द्वारा खाद्य पदार्थों (वसा, प्रोटीन्स आदि) का निर्माण भी करते हैं। इस प्रकार सभी प्रकार के खाद्य पदार्थ एक जीव को हरे पौधे अर्थात् उत्पादकों से मिलते हैं। खाद्य पदार्थों में से कार्बोहाइड्रेट्स तथा वसा का उपयोग शरीर में प्रमुखत: ऊर्जा उत्पादन के लिए होता है, जबकि प्रोटीन का कुछ वसा

के साथ शरीर की वृद्धि में। इसके अतिरिक्त प्रकाश संश्लेषण में उत्पादित ऑक्सीजन पौधों सहित सभी जीवों के श्वसन के लिए आवश्यक है। यही नहीं, इस क्रिया के द्वारा प्रकृति में कार्बन डाइऑक्साइड का उपयोग होने से वातावरण में ऑक्सीजन तथा कार्बान डाइऑक्साइड का संतुलन बना रहता है।

प्रश्न 29. पर्णरंध्र की संरचना का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- **पर्णरंध्र की संरचना-** रंध्र मुख्यत: पत्तियों की बाह्य त्वचा पर पाए जाते हैं। प्रत्येक रंध्र में दो अर्धचंद्राकार द्वार कोशिकाएँ होती हैं। इनमें रंध्र को छोटा, बड़ा या बंद करने की क्षमता होती है। रंध्र के नीचे एक अधोरंध्रीय गुहा होती है। इसका संबंध अंतरकोशिकीय अवकाशों से होता है।

चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न-16 (रंध्रीय वाष्पोत्सर्ज की क्रियाविधि) का उत्तर देखें।

द्वार कोशिकाओं की अंदर वाली भित्ति मोटी तथा बाहर की भित्ति पतली होती है। इनमें हरित लवक पाए जाते हैं। रंध्र दिन के समय खुले रहते हैं और रात्रि के समय बंद हो जाते हैं। शुष्क हवा के चलने तथा अधिक वाष्पोत्सर्जन होने पर ये भी बंद हो जाते हैं।

प्रश्न 30. रंध्रों के खुलने तथा बंद होने की क्रियाविधि का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **रंध्रों के खुलने तथा बंद होने की क्रियाविधि-** अँधेरे या रात्रि के समय कोशिकाओं में मंड अधिक होता है किंतु प्रकाश के समय या फॉस्फोरिलेज एंजाइम की उपस्थिति में विलेयशील शर्करा में बदल जाता है। जबकि पर्ण मध्योतक कोशिकाओं में ठीक इसके विपरीत होता है। दिन के समय मंड के विलेयशीय शर्करा में बदल जाने से द्वार कोशिकाओं के कोशिका रस का परासरण दाब बढ़ जाता है और ये पर्णक मध्योतक कोशिकाओं से जल अवशोषित कर स्फीति हो जाती है। इसके कारण पतली बाह्य भित्ति तन जाती है जिससे द्वार कोशिकाओं की मोटी भित्ति भी बाहर की ओर खिंचती है और रंध्र खुल जाते हैं। अँधेर में प्रकाश संश्लेषण नहीं होता तथा शर्करा अघुलनशील मंड में बदल जाती है। इसके फलस्वरूप द्वार कोशिकाओं का परासरण दाब कम हो जाता है और पानी बाहर निकल जाता है जिससे द्वार कोशिकाएँ शिथिल हो जाती हैं और रंध्र बंद हो जाता है।

प्रश्न 31. वाष्पोत्सर्जन क्या है? इसे प्रभावित करने वाले चार बाह्य कारकों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर- जीवित पौधे मृदा से जड़ों के द्वारा जल एवं खनिज पदार्थों का अवशोषण करते हैं। पौधे इस अवशोषित जल का 1% भाग ही अपनी जैविक क्रियाओं में प्रयोग करते हैं तथा शेष जल पौधे अपने वायवीय भागों से जलवाष्प के रूप में बाहर निकाल देते हैं। पौधे के वायवीय भागों के द्वारा हुई जलहानि को वाष्पोत्सर्जन कहते हैं।

वाष्पोत्सर्जन को प्रभावित करने वाले चार बाह्य कारक निम्नलिखित हैं—

(i) **वायु की आपेक्षिक आर्द्रता –** दिए हुए तापमान पर वायु में उपस्थित जलवाष्प की मात्रा ही यह निश्चित करेगी कि कितनी जलवाष्प किसी सतह से वायु में और धारण की जा सकती है। यदि वायु इस ताप पर पहले ही संतृप्त है तो वह वायु और अधिक वाष्प को ग्रहण नहीं कर सकेगी अथवा वायु की आपेक्षिक आर्द्रता अधिक होने पर वह कम जलवाष्प ग्रहण कर सकेगी, जबकि यदि वायु की आपेक्षिक आर्द्रता बहुत कम है अर्थात् वायु बहुत शुष्क है तो वह अधिक मात्रा में पौधे की सतह से आने वाली जलवाष्प को ग्रहण कर सकती हैं। अत: वायु की अपेक्षिक आर्द्रता बढ़ने से वाष्पोत्सर्जन की दर कम हो जती है और आपेक्षिक आर्द्रता घटने से वाष्पोत्सर्जन की दर बढ़ सकती है।

(ii) तापमान – ताप का सीधा प्रभाव वायु की आपेक्षिक आर्दता पर पड़ता है और वायु की आपेक्षिक आर्द्रता अधिक तापमान पर कम हो जाती है, तापमान अधिक होने पर वायु और अधिक जलवाष्प धारण करने की शक्ति प्राप्त कर लेती है।

(iii) वायु की गति – वाष्पोत्सर्जन करने वाले अंग के बाहर वायु की गति यदि कम है अथवा वह स्थिर है तो शीघ्र ही पौधे का बाह्य पर्यावरण वाष्प से संतृप्त हो जाएगा तथा पौधा और अधिक जलवाष्प इसमें नहीं डाल सकेगा अर्थात् वायु की आपेक्षिक आर्द्रता संतृप्ता की ओर होने पर वाष्पोत्सर्जन की दर घटती है।

(iv) वायु का दाब – वायु का दाब कम होने से उसकी आपेक्षिक आर्द्रता कम हो जाने के कारण उसमें जलवाष्प ग्रहण करने की शक्ति बढ़ जाती है। अत: वाष्पोत्सर्जन की दर भी बढ़ती है।

प्रश्न 32. वाष्पोत्सर्जन को परिभाषित कीजिए। इसके महत्व पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– **वाष्पोत्सर्जन–** जीवित पौधे, अपने वायवीय भागों; जैसे– पत्तियों, हरे प्ररोह आदि के द्वारा अंतरिक ऊतकों से, अतिरिक्त पानी को वाष्प के रूप में बाहर निकालते हैं। यह क्रिया वाष्पोत्सर्जन कहलाती हैं।

पौधों के लिए वाष्पोत्सर्जन के निम्नलिखित महत्व हैं—

(i) वाष्पोत्सर्जन के द्वारा चूषण बल उत्पन्न होता है जो रसारोहण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है इससे जल बड़े-बड़े वृक्षों में भी अत्यधिक ऊँचाई तक पहुँच जाता है।

(ii) जड़ों द्वारा जल अत्यधिक मात्रा में अवशोषित होता है तथा वाष्पोत्सर्जन द्वारा वातावरण में वाष्पित हो जाता है। इससे जल चक्र निरंतर चलता रहता है।

(iii) पौधों में तापक्रम का नियमन होता है अत: तेज गर्मी में पौधे झुलसने से बच जाते हैं।

(iv) हानिकारक पदार्थों का उत्सर्जन होता है।

प्रश्न 33. परासरण किसे कहते हैं? चित्र की सहायता से परासरण के प्रयोग का प्रदर्शन कीजिए।

उत्तर– दो विभिन्न सांद्रता वाले विलयनों को एक अर्द्धपारगम्य झिल्ली द्वारा अलग कर देने पर, कम सांद्रता वाले विलयन से अधिक सांद्रता वाले विलयन की ओर जल या विलायक के अणु गति करते हैं। यह क्रिया ही परासरण कहलाती है।

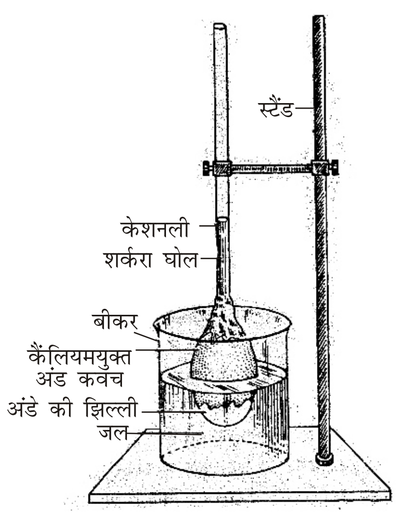

ऑस्मोमीटर द्वारा अंडे के परासरण का प्रर्दशन

परासरण के प्रयोग का प्रदर्शन– इस प्रयोग के लिए अंडे का आस्मोमीटर का प्रयोग करते हैं। इसके लिए मुर्गी के अंडे में एक तरफ छिद्र बनाकर संपूर्ण कोशाद्रव्य बाहर निकाल देते हैं। अब इसे बंद (बिना छिद्र वाले भाग को) आधार मानकर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) में रख देते हैं जिससे कैल्सियम कार्बोनेट का छिलका घुल जाता है। तथा अंड़े की झिल्ली स्पष्ट दिखाई देने लगती है।

अब अंडे की झिल्ली के अंदर शक्कर का घोल भर दिया जाता है। छिद्र में एक केशनली लगा दी जाती है जिससे उपकरण वायुरुद्ध बन जाता है। एक जल से भरे बीकर में अंडें को डुबाकर केशनली को स्टैंड में लगा देते हैं। केशनली में घोल का तल अंकित करके उसे कुछ समय के लिए छोड़ देते हैं। कुछ समय पश्चात् निरीक्षण करने पर देखते हैं कि घोल की ऊँचाई केशनली में बढ़ जाती है तथा एक ऊँचाई तक चढ़ने पर रुक जाती है। अंडे की झिल्ली से जल परासरण दाब के कारण अंडे के अंदर परसारित हो जाता है। अत: प्रयोग द्वारा परासरण का प्रदर्शन स्पष्ट देखा जा सकता है।

प्रश्न 34. मूलदाब किसे कहते हैं? इसका क्या महत्व है? नामांकित चित्र की सहायता से मूलदाब को दर्शाइए।

उत्तर- **मूलदाब-** कॉर्टेक्स की कोशिकाएँ जल को मूल रोमों से लेकर जाइलम वाहिनियों तक पहुँचाती हैं। इस क्रिया में परासरण का विशेष महत्व है। इन कोशिकाओं में इस प्रकार का दाब होता है जो जल को जाइलम तक निरंतर ढकेलन में सहायक होता है। इसी दाब को मूलदाब कहा जाता है।

पौधों में मूलदाब का विशेष महत्व है। जाइलम वाहिकाओं में इस दाब के कारण जल काफी ऊँचाई तक चढ़ता रहता है जिससे अधिक ऊँचाई वाले पौधों में पानी ऊपर तक चढ़ता रहता है।

मूल दाब का प्रदर्शन- गमले में लगा एक छोटा पौधा लेकर एक जल से भरी नाँद में रख देते हैं जल के अंदर ही पौधे को मिट्टी से 7-8 सेमी ऊपर तेज चाकू की सहायता से काट देते हैं। तने के कटे हुए सिरे पर रबर की एक नली चढ़ा दी जाती है। चित्र में दिए उपकरण की भाँति काँच का एक मैनोमीटर इस रबर की नली के दूसरे सिरे पर फिट कर दिया जाता है। मैनोमीटर के 'U' भाग में पारा भरा है। रबर की नली के अंदर तथा मैनोमीटर के शेष भाग में जल भर लिया जाता है। उपकरण को स्टैंड में कसकर कुछ समय के लिए छोड़ दिया जाता है।

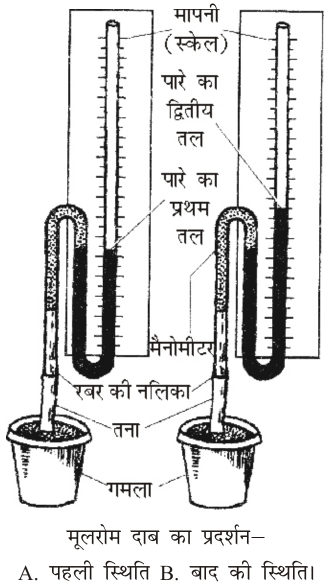

मूलरोम दाब का प्रदर्शन–
A. पहली स्थिति B. बाद की स्थिति।

मापनी (स्केल) का पारे का तल प्रयोग के प्रारंभ में तथा बाद में पढ़ लिया जाता है। पारे का तल, जो मैनोमीटर की खड़ी भुजा में चढ़ा रहता है, मूलदाब को प्रदर्शित करता है। कटे हुए तने की जाइलम वाहिनियों में से मूल दाब के कारण जल रबर की नली में उपस्थित जल में आया जिसने मैनोमीटर के पारे को धकेल कर खड़ी भुजा में चढ़ा दिया।

प्रश्न 35. रसारोहण का क्या महत्व है? प्रयोग द्वारा स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- पौधे में भूमि से जल तथा खनिज लवण रसारोहण क्रिया द्वारा ही पत्तियों व पौधे के अन्य भागों तक पहुँचते हैं। यह जल व खनिज लवण भूमि से जड़ों द्वारा अवशोषित होते हैं तथा जाइलम ऊतक द्वारा तने से होकर पत्तियों तक पहुँचते हैं। अत: रसारोहण का पौधे के लिए अत्यधिक महत्व है। इस क्रिया को निम्न प्रयोग द्वारा समझा जा सकता है—

वलयन प्रयोग– इसमें गमले में लगी एकसामन दो शाखाओं में से एक शाखा से तेज चाकू की सहायता से वल्कुट, फ्लोएम तथा मज्जा को निकाल देते हैं। दूसरी शाखा से जाइलम ऊतक को निकाल दिया जाता है।

कुछ समय पश्चात् पौधे का प्रेक्षण करने पर ज्ञात होता है कि शाखा (A) जिसमें से जाइमल निकाल दिया गया था, सूख गई है; किंतु शाखा (B) जिसमें जाइलम नहीं निकाला गया था, हरी–भरी है।

प्रश्न 36. प्रकाश संश्लेषण क्रिया में हरे पौधे ऑक्सीजन मुक्त करते हैं, कथन की पुष्टि प्रयोग द्वारा स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 14 का अवलोकन कीजिए।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. यह दर्शाना कि प्रकाश संश्लेषण क्रिया के लिए सूर्य का प्रकाश अनिवार्य है।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. यह दर्शाना कि श्वसन क्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड उत्पन्न होती है।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

19 पौधों व जंतुओं में नियंत्रण एवं समन्वयन

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. पादप हॉर्मोन्स क्या हैं? उनके नाम लिखिए तथा किसी एक पादप हॉर्मोन के कार्य लिखिए।

उत्तर– **पादप हॉर्मोन्स –** पादपों में वृद्धि तथा विकास को नियंत्रित करने के लिए कुछ विशिष्ट रासायनिक पदार्थ होते हैं जिन्हें पादप हॉर्मोन या वृद्धि नियामक कहते हैं। पादप हॉर्मोन्स जटिल कार्बनिक पदार्थ हैं जो पेड़–पौधों में निश्चित स्थानों पर बनते हैं तथा संवहन ऊतकों द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में संचरित होकर उनकी वृद्धि को नियंत्रित करते हैं।

पादप हॉर्मोन्स को मुख्यत: पाँच भागों में बाँटा गया है—

(i) ऑक्सिन

(ii) जिबरेलिन

(iii) साइटोकाइनिन्स

(iv) एथिलीन

(v) वृद्धिरोधक

जिबरेलिन के कार्य–

(i) कोशिका दीर्घाकरण– इसके द्वारा ये पौधों की लंबाई में वृद्धि करते हैं।

(ii) पुष्पन के प्रकाश दीप्तिकाल– इनके प्रयोग से पौधों में पुष्पन के प्रकाश दीप्तिकाल को कम किया जा सकता है।

(iii) देरी से पुष्प देने वाले पौधों में जिबरेलिन देकर पुष्पन की क्रिया जल्दी कराई जा सकती है।

(iv) अनिषेक फलन– इसके द्वारा बिना निषेचन के ही बीज रहित फल प्राप्त किए जा सकते हैं।

(v) प्रसुप्ति काल– बीजों में प्रसुप्ति काल को कम किया जा सकता है।

(vi) आकार में वृद्धि– इसके प्रयोग से मटर, सेम, टमाटर, लेट्यूस की पत्तियाँ अधिक चौड़ी हो जाती हैं।

प्रश्न 2. पादपों में पाए जाने वाले हॉर्मोन्स के कार्यों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– पादपों में पाए जाने वाले हॉर्मोन्स के कार्य निम्नलिखित हैं—

(i) ऑक्सिन्स के कार्य–

(a) कोशिका दीर्घन तथा वृद्धि दर पर प्रभाव– ऑक्सिन से कोशिका दीर्घन होने के कारण ही तनों तथा फलों के आयतन में वृद्धि होती है। कोशिका दीर्घन ऑक्सिन्स की उपस्थिति में भित्ति दाब घट जाने तथा जल के लिए भित्ति की पारगम्यता बढ़ जाने के कारण परासरणी सांद्रता बढ़ने से तथा कोशिका भित्ति का लचीलापन बढ़ जाने के कारण होता है।

(b) **संवहन एधा में कोशिका विभाजन–** कोशिका विभाजन की दर तथा एधा की मौसमी सक्रियता ऑक्सिन से नियंत्रित होती है। रोपण, क्षति आदि के समय कैलस का निर्माण इसी के कारण होता है।

(c) **शीर्ष प्रमुखता–** अधिकतर पादपों में शीर्ष कलिका की उपस्थिति में पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि रुकी रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रमुखता कहते हैं। शीर्ष कलिका को हटाने पर पार्श्व कलिकाएँ तेजी से बढ़ती हैं। ऐसा माना जाता है कि शीर्ष कलिका में अवरोधक, ऑक्सिन बनते हैं जो नीचे जाकर पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि को रोकते हैं।

(d) **वर्तन गतियाँ–** एकदिशीय प्रकाश के कारण अंधकार के क्षेत्र में ऑक्सिन की सांद्रता अधिक हो जाती है। तनों में अधिक सांद्रता अधिक वृद्धि प्रेरित करती है, अत: तने प्रकाश की ओर मुड़ जाते हैं अर्थात् धनात्मक प्रकाशानुवर्तन प्रदर्शित करते हैं। दूसरी ओर जड़ों में ऑक्सिन की अधिक सांद्रता वृद्धि को संदमित करती है, अत: जड़ें प्रकाश के विपरीत मुड़ जाती हैं और ऋणात्मक प्रकाशानुवर्तन प्रदर्शित करती हैं।

इसी प्रकार गुरुत्वाकर्षण के कारण अनुप्रस्थ स्थिति में निचले स्तर पर ऑक्सिन की सांद्रता अधिक होने से तने व जड़ में क्रमश: ऋणात्मक एवं धनात्मक गुरुत्वानुवर्तन प्रभावित होता है।

(e) **मूल प्रेरण–** यदि कलम को ऑक्सिन में डुबोकर भूमि में लगाया जाए तो जड़ें शीघ्रता से उत्पन्न होती हैं। ऑक्सिन्स पार्श्व मूलों का प्रेरण भी करते हैं।

(f) **प्रसुप्तावस्था–** आलू जैसे कंदों पर ऑक्सिन के छिड़काव से कलियों का अंकुरण रुका रहता है जिससे उनका संग्रहण अधिक समय तक किया जा सकता है।

(g) **अनिषेकफलन–** बीज रहित फलों के निर्माण में ऑक्सिन्स का उपयोग होता है। ये अनिषेकफलन प्रेरित करते हैं।

(h) **खरपतवारनाशक–** 2, 4-D जैसे ऑक्सिन संकीर्ण पत्ती वाली फसल (एकबीजपत्री) के साथ उगने वाली बड़ी पत्तियों वाली खरपतवार को नष्ट कर देते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य अनेक प्रक्रिया आदि में ऑक्सिन्स का उपयोग महत्वपूर्ण है; जैसे— पक्वनपूर्व फलों की गिरने से रोकथाम, पातन की रोकथाम, फलों को मीठा करने में, लघु शाखाओं के निर्माण में (जैसे— सेब में), फलन का प्रेरण आदि में।

(ii) **जिबरेलिन के कार्य–**

इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 1 का अवलोकन कीजिए।

(iii) **साइटोकाइन्सि के कार्य–**

(a) **कोशिका विभाजन–** साइटोकाइनिन्स ऑक्सिन के साथ ही स्थाई व जीवित कोशिका में भी विभाजन प्रेरित कर सकते हैं किंतु ये अकेले प्राय: सक्रिय नहीं होते हैं।

(b) **कोशिका दीर्घन तथा भिन्नन–** ये कोशिकाओं में दीर्घन प्रेरित करते हैं। कैलस में उच्च ऑक्सिन व कम साइटोकाइनिन सांद्रता से जड़ों का तथा उच्च साइटोकाइनिन व कम ऑक्सिन से प्ररोह का निर्माण प्रेरित होता है।

(c) **शीर्ष प्रमुखता का प्रतिरोध–** शीर्षस्थ कलिका के होते हुए भी पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि साइटोकाइनिन की उपस्थिति से संभव हो जाती है अर्थात् साइटोकाइनिन तथा ऑक्सिन सांद्रता के संतुलन से शीर्ष प्रमुखता नियंत्रित होती है।

(d) **प्रकाश संवेदी बीजों का अंकुरण –** जिन बीजों को अंकुरण के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है, साइटोकाइनिन से उपचारित करने पर अंधकार में ही उगाए जा सकते हैं, जैसे— तंबाकू, सलाद आदि।

(e) **प्रसुप्तता भंग करना–** अनेक प्रकार के बीजों को अंकुरण के लिए लाल प्रकाश की आवश्यकता होती है। लाल प्रकाश इन बीजों की प्रसुप्तता भंग करता है। यदि इन बीजों को साइटोकाइनिन से उपचारित किया जाए तो ये लाल प्रकाश के अभाव से भी अंकुरित हो जाते हैं।

(f) **अन्य–** खनिजों का एकत्रण, संवहन नियंत्रण, जड़ों का प्रेरण, वाहिनिकाओं का लिग्नीफिकेशन आदि भी साइटोकाइनिन से प्रेरित होते हैं।

(iv) **एथिलीन के कार्य–**

(a) यह फलों के पकने में सहायता करता है। यह फल पकाने वाला हॉर्मोन के नाम से भी जाना जाता है।

(b) यह पौधों की लंबाई में वृद्धि को रोकता है।

(c) यह पुष्पन को कम करता है किंतु अन्नानास में पुष्पन को बढ़ाता है।

(d) यह पौधों में मादा पुष्पों की संख्या में वृद्धि करता है।

(e) यह पत्तियों, फलों व पुष्पों के विलगन को तीव्र करता है।

(f) यह मूलरोमों के निर्माण तथा बीजों के अंकुरण को प्रेरित करता है।

(v) **ऐब्सिसिक अम्ल (वृद्धिरोधक) के कार्य–**

(a) यह पत्तियों, पुष्पों एवं फलों में विलगन प्रेरित करता है।

(b) इससे कलिकाओं तथा बीजों में प्रसुप्तावस्था उत्पन्न होती है।

(c) यह कोशिका विभाजन एवं कोशिका दीर्घन दोनों को रोकता है।

(d) इससे पत्तियों का पर्णहरित नष्ट हो जाता है तथा प्रोटीन्स का विघटन होने से पत्तियाँ 2-3 दिन में ही पीली पड़ जाती हैं अर्थात् यह जीर्णावस्था उत्पन्न करता है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त यह पुष्पन को रोकता है, आलू में कंदों का अधिक निर्माण प्रेरित करता है। ऐब्सिसिक अम्ल का निर्माण पत्तियों की कोशिकाओं में जलाभाव की स्थितियों में बढ़ जाता है। इससे स्टोमेटा बंद होना प्रेरित होता है। ऐब्सिसिक अम्ल कम तापमान के प्रति प्रतिरोधी शक्ति उत्पन्न करता है।

प्रश्न 3. अंत:स्रावी ग्रंथियाँ किन्हें कहते हैं? मनुष्य में पाए जाने वाली इन ग्रंथियों के नाम लिखिए। शरीर से पैराथाइरॉइड ग्रंथि निकालने का क्या प्रभाव पड़ेगा?

उत्तर– सभी कशेरुकी प्राणियों में विशेष प्रकार की नलिका विहीन ग्रंथियाँ पाई जाती हैं, जिनको अंत:स्रावी ग्रंथियाँ कहा जाता है। ये ग्रंथियाँ विशेष प्रकार के रासायनिक पदार्थों का स्राव करती हैं जिन्हें हॉर्मोन्स कहते हैं।

मनुष्य में पाई जाने वाली अंत:स्रावी ग्रंथियाँ – मानव शरीर में निम्नलिखित अंत:स्रावी ग्रंथियाँ पाई जाती हैं—

(i) **पीयूष अथवा पिट्यूटरी ग्रंथि–** यह मस्तिष्क में स्थित होती है।

(ii) **थाइरॉइड ग्रंथि–** यह गले में स्थित होती है।

(iii) **पैराथाइरॉइड ग्रंथि–** यह भी गले में स्थित होती है।

(iv) **एड्रीनल ग्रंथि–** यह उदर में वृक्क के पास स्थित होती है।

(v) **थाइमस ग्रंथि–** यह वक्ष में स्थित होती है।

(vi) **पीनियल काय–** यह मस्तिष्क में स्थित होती है।

यदि शरीर से पैराथाइरॉइड ग्रंथि निकाल दी जाए तो रुधिर में इस ग्रंथि के द्वारा स्रावित होने वाला पैराथॉरमोन नहीं मिल पाएगा जिससे रुधिर व ECF में हाइपोकैल्सिमिया तथा हाइपरफास्फेटेमिया स्थिति उत्पन्न हो जाएगी जिससे दाँतों के निर्माण के लिए कैल्सियम तथा फास्फोरस की कमी हो जाएगी।

प्रश्न 4. पीयूष ग्रंथि को मास्टर ग्रंथि क्यों कहते हैं?

उत्तर– **पीयूष ग्रंथि : मास्टर ग्रंथि–** यह एक जटिल ग्रंथि है जो अग्र मस्तिष्क के पश्च भाग में डाइएनसेफैलॉन नामक संरचना के अधर तल पर स्थित होती है। यह इन्फण्डिबुलम नामक वृंत के द्वारा मस्तिष्क से जुड़ी रहती है। यह ग्रंथि अग्र, मध्य तथा पश्च तीन पिंडों में विभक्त होती है।

सामान्य अध्ययन तथा कार्य—

(i) **अग्र पिंड से स्रावित हॉर्मोन–**

(a) **सोमैटोट्रॉपिक या वृद्धि हॉर्मोन –** यह शरीर की वृद्धि का सबसे महत्वपूर्ण प्रेरक होता है। इसके अल्प स्रावण से व्यक्ति बौना रह जाता है और अति स्रावण से शरीर आनुपातिक भीमकाय हो जाता है।

(b) **पुटिका प्रेरक हॉर्मोन –** यह पुरुषों में वृषण की शुक्रजनन नलिकाओं की वृद्धि तथा शुक्राणुजनन को प्रेरित करता है। स्त्रियों में यह अंडाशयों की ग्रैफियन पुटिकाओं की वृद्धि और विकास, अंडजनन तथा मादा हॉर्मोन्स, एस्ट्रोजेन्स के स्रावन को प्रेरित करता है।

(c) **ल्यूटीनाइजिंग हॉर्मोन (LH)–** यह एण्ड्रोजेन्स के स्रावण को प्रेरित करता है।

(d) **थाइरोट्रॉपिक या थाइरॉइड प्रेरक हॉर्मोन्स (TSH)–** यह थाइरॉइड ग्रंथि की वृद्धि एवं स्रावण क्रिया का प्रेरक होता है।

(e) **प्रोलैक्टिन या मैमोट्रॉपिक हॉर्मोन्स (MTH)–** मानव में यह एक दुर्बल वृद्धि हॉर्मोन का काम करता है। स्त्रियों में, गर्भकाल के चलते अधिक मात्रा में स्रावित होकर यह स्तनों की वृद्धि प्रेरित करता है। शिशु जन्म के बाद यह दुग्ध के स्राव को प्रेरित करता है।

(f) **एड्रीनोकॉर्टिकोट्रॉपिक हॉर्मोन्स (ACTH)–** यह अधिवृक्क ग्रंथियों के वल्कीय भाग को स्रावण के लिए प्रेरित करता है।

(ii) **पश्चपिंड से स्रावित हॉर्मोन–**

(a) **वैसोप्रेसिन (ADH)–** यह वृक्क नलिकाओं में जल के पुनरावशोषण में वृद्धिकर मूत्र की मात्रा में कमी करता है तथा शरीर के कुछ भागों की रुधिर वाहिनियों को संकुचित कर रुधिर दाब में वृद्धि करता है।

(b) **ऑक्सीटोसिन–** यह गर्भावस्था में गर्भाशय की पेशियों के संकुचन को प्रेरित कर प्रसव पीड़ा उत्पन्न करता है। यह दुग्ध ग्रंथियों से दुग्ध स्रावण में सहायता करता है। सम्भोगावस्था में गर्भाशय की भित्ति में संकुचन प्रेरित कर शुक्राणुओं का अंडवाहिनियों तक मार्ग प्रशस्त करता है।

(iii) मध्य पिंड– मध्य पिंड मनुष्य में अल्पविकसित होता है।

पीयूष ग्रंथि से स्रावित हॉर्मोन्स शरीर की अन्य ग्रंथियों के स्रावण पर नियंत्रण रखते हैं, अत: इसको मास्टर ग्रंथि कहते हैं।

प्रश्न 5. जब रुधिर में थाइरॉक्सिन की मात्रा वांछित मात्रा से कम हो जाती है तो पीयूष ग्रंथि के किस हॉर्मोन्स के स्राव पर क्या प्रभाव पड़ता है?

उत्तर– थाइरॉक्सिन हॉर्मोन उपापचय की दर (BMR), ऑक्सीजन की खपत व हृदय स्पंदन दर का नियमन करते हैं। ये ग्लूकोज का अवशोषण तथा ग्लूकोनिओजेनेसिस को भी नियंत्रित करते हैं। बाल्यवस्था में थाइरॉक्सिन के अल्पस्राव से जड़मानवता या क्रिटिनिज्म तथा वयस्क में मिक्सीडीमा रोग उत्पन्न हो जाता है। यह हॉर्मोन पीयूष ग्रंथि के थाइरोट्रोपिक हॉर्मोन को प्रभावित करता है। इस हॉर्मोन की रुधिर में वांछित मात्रा की कमी से पीयूष ग्रंथि से स्रावित होने वाला थाइरोट्रोपिक हॉर्मोन्स प्रभावित होते हैं तथा थाइरॉइड ग्रंथि की वृद्धि एवं स्रावण क्रिया प्रभावित होती है। जिसकी कमी से शारीरिक उपापचयी क्रियाओं का नियंत्रण सामान्य नहीं हो पाता है। इसकी कमी से हृदय की गति धीमी, शरीर सुस्त तथा मस्तिष्क दुर्बल हो जाता है।

प्रश्न 6. अंत:स्रावी ग्रंथियों की हाइपर व हाइपो क्रियावस्थाएँ दोनों ही रोग उत्पन्न करती हैं। इनके स्राव का नियंत्रण किस प्रकार होता है?

उत्तर– अंत:स्रावी ग्रंथियों से स्रावित हॉर्मोन्स प्रेरक और कुछ निरोधक प्रकार के होते हैं। हॉर्मोन्स की हाइपो व हाइपर दोनों ही क्रियावस्थाएँ शरीर में रोग उत्पन्न करती हैं। अर्थात् हॉर्मोन्स की मात्रा में थोड़ी-सी भी कमी या अधिकता रोग का कारण हो सकती है। ये ग्रंथियाँ नलिका विहीन होती हैं। इन ग्रंथियों का स्राव 'हॉर्मोन्स' रक्त द्वारा वितरित होता है; जैसे— थायरॉइड, अधिवृक्क, पीयूष ग्रंथि आदि।

पीयूष ग्रंथि से स्रावित हॉर्मोन्स अधिकांश अंत:स्रावी ग्रंथियों के स्रावण को नियंत्रित करते हैं। अत: इस ग्रंथि को मास्टर ग्रंथि के नाम से भी जाना जाता है।

इस ग्रंथि में मुख्यत: दो भाग होते हैं—

(i) अग्र पिण्ड

(ii) पश्च पिण्ड

(i) अग्र पिण्ड– यह पीयूष ग्रंथि का 3/4 भाग होता है। इस पिंड से निम्न हॉर्मोन्स स्रावित होते हैं—

(a) सौमैटोट्रॉपिक या वृद्धि हॉर्मोन– यह हॉर्मोन शरीर की वृद्धि को नियंत्रित करता है। यह हड्डियों तथा पेशियों की वृद्धि के लिए भी आवश्यक होता है। बाल्यावस्था में इस हॉर्मोन की अधिकता से शरीर अनुपातिक रूप से भीमकाए हो जाता है। तथा इसके अल्प स्राव के कारण शरीर बौना रह जाता है।

(b) जनन ग्रंथि प्रेरक हॉर्मोन (GTH)– यह हॉर्मोन जनन अंगों की क्रियाशीलता को प्रभावित करते हैं। ये निम्न प्रकार के होते हैं—

- **पुटिका प्रेरक हॉर्मोन (FSH)–** यह हॉर्मोन पुरुषों में शुक्रजनन तथा स्त्रियों में अंडजनन तथा एस्ट्रोजन हॉर्मोन्स के स्रावण को प्रेरित करता है।
- **ल्यूटिनाइजिंग हॉर्मोन–** यह पुरुषों में वृषणों की लेडिग कोशिकाओं से नर हॉर्मोन तथा स्त्रियों में अंडाशय में पीत पिंड से हॉर्मोन स्रावण को प्रेरित करता है।
- **प्रोलेक्टिन या मैमोट्रॉपिक हॉर्मोन (MTH)–** यह गर्भकाल की अवस्था में स्तनों की वृद्धि तथा दूध के स्रावण को प्रेरित करता है।

(c) **थाइरॉइड प्रेरक हॉर्मोन (TSH)–** यह हॉर्मोन थाइरॉइड ग्रंथि को क्रियाशील बनाए रखता है।

(d) **एड्रीनोकॉर्टिकोट्रॉपिन–** ये अधिवृक्क ग्रंथियों को क्रियाशील बनाए रखता है।

(ii) **पश्च पिंड–** इस भाग से दो हॉर्मोन स्रावित होते हैं, जो निम्न हैं—

(a) **वैसोप्रेसिन या प्रतिमूत्रक हॉर्मोन (ADH)–** यह हॉर्मोन वृक्क नलिकाओं में जल अवशोषित करने की क्षमता को बढ़ाता है। ADH की कमी से डायबिटीज इन्सिपिडस रोग हो जाता है। इस रोग में मूत्र की मात्रा में अधिक वृद्धि हो जाती है तथा ADH की अधिकता से मूत्र गाढ़ा व रुधिर पतला हो जाता है।

(b) **ऑक्सिटोसिन या पिटोसिन–** यह शिशु के जन्म के समय गर्भाशय की पेशियों में संकुचन करता है, जिससे प्रसव पीड़ा उत्पन्न होती है। यह दुग्ध स्रावण को भी प्रेरित करता है।

प्रश्न 7. अंतःस्रावी ग्रंथियों की परिभाषा दीजिए। किन्हीं दो अंतःस्रावी ग्रंथियों के नाम तथा उनसे स्रावित हॉर्मोन के नाम व कार्य लिखिए।

उत्तर– **अंतःस्रावी ग्रंथियाँ–** हमारे शरीर में विशेष प्रकार की नलिका विहीन ग्रंथियाँ पाई जाती हैं, जिन्हें अंत:स्रावी ग्रंथियाँ कहते हैं। इन ग्रंथियों से विशेष प्रकार के रासायनिक पदार्थ स्रावित होते हैं। जिनको हॉर्मोन्स कहते हैं। ये हॉर्मोन्स रक्त द्वारा वितरित होते हैं; जैसे- थाइरॉइड, अधिवृक्क आदि।

दो अंत:स्रावी ग्रंथियों के नाम तथा उनके कार्य निम्नलिखित हैं—

(i) **थाइरॉइड ग्रंथि –** मानव शरीर में यह सबसे बड़ी अंत:स्रावी ग्रंथि है। यह द्विपालित 'H' अथवा तितली के आकार की ग्रंथि ग्रीवा में वायुनाल के अग्रभाग में कंठ के निचले सिरे पर स्थित होती है और पार्श्व भागों में फैली रहती है।

थाइरॉइड ग्रंथि द्वारा स्रावित हॉर्मोन तथा उनका प्रभाव–थाइरॉक्सिन व ट्राइआयडोथाइरोनीन हॉर्मोन उपापचय की दर (BMR), ऑक्सीजन की खपत व हृदय स्पंदन दर का नियमन करते हैं। ये ग्लूकोज का अवशोषण तथा ग्लूकोनिओजेनेसिस को भी प्रेरित करते हैं।

थाइरॉइड की कमी से बच्चों में जड़वामनता और व्यस्कों में मिक्सीडीमा एवं घेंघा रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

(ii) **पैराथाइरॉइड ग्रंथि–** इस ग्रंथि से पैराथॉरमोन स्रावित होता है जो कैल्सियम व फॉस्फेट के उपापचय पर नियंत्रण रखता है। इस हॉर्मोन की कमी से रुधिर व ECF में हाइपोकैल्सिमिया तथा हाइपरफॉस्फेटेमिया स्थिति होती है जिससे दाँतों के निर्माण के लिए कैल्सियम तथा फॉस्फोरस की कमी हो जाती है तथा अधिकता होने पर रुधिर व ECF में हाइपरकैल्सिमिया तथा हाइपोफॉस्फेटेमिया स्थिति बनती है जिससे अस्थियाँ कोमल तथा टेढ़ी हो जाती हैं।

प्रश्न 8. पीयूष ग्रंथि को मास्टर ग्रंथि क्यों कहते हैं? शरीर में यह कहाँ स्थित होती है? इस ग्रंथि द्वारा स्रावित किन्हीं दो हॉर्मोन्स के नाम तथा कार्य लिखिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 9. अधिवृक्क ग्रंथि से स्रावित हॉर्मोन्स के नाम तथा कार्य लिखिए।

उत्तर– **अधिवृक्क ग्रंथि से स्रावित हॉर्मोन्स के नाम तथा इनके कार्य–** अधिवृक्क ग्रंथि दो भागों में विभेदित होती है—

(i) वल्कीय भाग **(ii)** मज्जक पिंड

एड्रीनल कॉर्टेक्स में बनने वाले हॉर्मोन्स प्राय: वसा में घुलनशील स्टेरॉइड्स होते हैं—

(a) **मिनरैलोकॉर्टिकॉइड्स–** इस श्रेणी में एल्डोस्टेरोन वृक्कों में सोडियम व क्लोराइड आयन्स के पुनरावशोषण तथा पोटैशियम आयन्स के उत्सर्जन को प्रोत्साहित कर रुधिर का उपयुक्त परासरणी दाब बनाए रखता है। इसी के कारण रुधिर की मात्रा एवं रुधिर दाब सामान्य बने रहते हैं।

(b) **ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स–** कॉर्टिसोल व कॉर्टिकोस्टेरोन इस श्रेणी के उल्लेखनीय हॉर्मोन्स हैं। कॉर्टिसोल लगभग सभी अंगों एवं उनकी विभिन्न ऊतकों आदि की कोशिकाओं में ग्लूकोज के उपभोग तथा प्रोटीन–संश्लेषण पर अवरोधी प्रभाव डालता है जिससे इनमें वसाओं एवं प्रोटीन्स के विखंडन को बढ़ावा मिलता है। इस गतिविधि के कारण रुधिर दाब में वृद्धि होती है। यह यकृत में, यूरिया संश्लेषण आदि क्रियाओं को प्रेरित करता है। ये कोलैजन तंतुओं को बनने से रोकते हैं; अत: गठिया जैसे रोगों में अत्यंत लाभप्रद रहते हैं। ये प्रतिरक्षी–निषेधात्मक होते हैं; अत: इनका उपयोग एलर्जी के उपचार तथा शल्य चिकित्सा द्वारा अंगों के प्रत्यारोपण करते समय किया जाता है।

प्रश्न 10. मनुष्य में पाई जाने वाली किन्हीं चार नलिकाविहीन ग्रंथियों के नाम तथा उनके कार्य लिखिए।

उत्तर– **मनुष्य में पाई जाने वाली चार नलिकाविहीन ग्रंथियाँ (अंत:स्त्रावी ग्रंथियाँ) तथा उनके कार्य–**

(i) **पीयूष ग्रंथि तथा उसके कार्य–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

(ii) **थाइरॉइड ग्रंथि तथा उसके कार्य–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 7 का अवलोकन कीजिए।

(iii) **पैराथाइरॉइड ग्रंथि तथा उसके कार्य–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 7 का अवलोकन कीजिए।

(iv) **एड्रीनल अथवा अधिवृक्क ग्रंथि तथा उसके कार्य–** मनुष्य के प्रत्येक वृक्क के अगले सिरे पर एक सिकुड़ी हुई, छोटी सी एवं टोपी के आकार की अधिवृक्क अथवा एड्रीनल ग्रंथि पाई जाती है। इसका भार लगभग 4-6 ग्राम होता है। यह निम्नलिखित दो भागों में विभेदित होती है—

(a) **वल्कलीय भाग –** यह ग्रंथि का लगभग 80-90% भाग होता है। यह चारों ओर से एक आवरण द्वारा रक्षित रहता है। वल्कलीय भाग की कोशिकाएँ प्राय: वसायुक्त होती हैं।

(b) **मज्जक पिंड–** एड्रीनल ग्रंथि का यह लगभग 10-20% भाग होता है।

कार्य– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 9 का अवलोकन कीजिए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. साइटोकाइनिन्स के दो प्रमुख प्रभावों का विवरण दीजिए।

उत्तर– **साइटोकाइनिन्स के दो प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं–**

(i) **कोशिका दीर्घन तथा भिन्नन–** ये कोशिकाओं में दीर्घन प्रेरित करते हैं। कैलस में उच्च ऑक्सिन व कम साइटोकाइनिन सांद्रता से जड़ों का तथा उच्च साइटोकाइनिन व कम ऑक्सिन से प्ररोह का निर्माण प्रेरित होता है।

(ii) **शीर्ष प्रमुखता का प्रतिरोध–** साइटोकाइनिन के प्रभाव से शीर्षस्थ कलिका के होते हुए भी पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि साइटोकाइनिन की उपस्थिति से संभव हो जाती है अर्थात् साइटोकाइनिन तथा ऑक्सिन सांद्रता के संतुलन से शीर्ष प्रमुखता नियंत्रित होती है।

प्रश्न 2. ऑक्सिन व जिबरेलिन के कार्य लिखिए।

उत्तर– ऑक्सिन के कार्य–

(i) यह रोपण, क्षति आदि के समय कैलस का निर्माण करता है।

(ii) यह पार्श्व मूलों का प्रेरण करता है अर्थात् यदि कलम को ऑक्सिन के घोल में डुबाकर लगाया जाये तो जड़ें शीघ्रता से उत्पन्न होती हैं।

(iii) आलू जैसे कंदों पर ऑक्सिन के छिड़काव से कलियों का अंकुरण रुका रहता है जिससे उनका संग्रह अधिक समय तक किया जा सके।

(iv) बीज रहित फलों के निर्माण में ऑक्सिन का उपयोग होता है।

(v) 2, 4-D जैसे ऑक्सिन फसल के साथ उगने वाली खरपतवार को नष्ट करने का कार्य भी करते हैं।

जिबरेलिन के कार्य–

(i) इसके प्रयोग से पौधों की लंबाई में वृद्धि कराई जा सकती है।

(ii) इनके प्रयोग से पौधों में पुष्पन के प्रकाश दीप्तिकाल पुष्पन को कम किया जा सकता है।

(iii) देरी से उगने वाले पौधों में जिबरेलिन देकर पुष्पन क्रिया जल्दी कराई जा सकती है।

(iv) इसके द्वारा बिना निवेचन के ही बीज रहित फल प्राप्त किए जा सकते हैं।

(v) इसके द्वारा बीजों में प्रसुप्ति काल को कम किया जा सकता है।

प्रश्न 3. पादप हॉर्मोन्स क्या है? इनका पादप शरीर में महत्व बताइए।

उत्तर– पादप हॉर्मोन्स– पादप हॉर्मोन्स जटिल कार्बनिक पदार्थ हैं जो पौधों के विभिन्न भागों में संचरित होकर उनकी विभिन्न क्रियाओं का नियंत्रण व समन्वयन करते हैं; जैसे— वृद्धि, पतझड़, फल निर्माण, पुष्पों का बनना, अनुवर्तन गतियाँ, प्रसुप्ति आदि।

पादप शरीर में इनका महत्व निम्नलिखित है—

(i) ये जड़, तना एवं कलिका के शीर्षस्थ विभज्योतक में बनते हैं तथा फ्लोएम में से होकर अन्य अंगों में पहुँचते हैं और सभी भागों में विसरित होकर वृद्धि का नियंत्रण करते हैं।

(ii) इन्हें पौधों से निष्कासित किया जा सकता है।

(iii) ये पादप वृद्धि तथा वृद्धिरोधन को नियंत्रित करते हैं।

(iv) सामान्य से कम या अधिक मात्रा में होने पर इनका उल्टा प्रभाव पड़ता है।

प्रश्न 4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए–

(i) ऑक्सिन, **(ii) जिबरेलिन,**

(iii) पादप हॉर्मोन्स, **(iv) अनिषेक फलन**

उत्तर– (i) ऑक्सिन– ये पदार्थ पौधों में प्ररोह की कोशिकाओं में दीर्घीकरण प्रेरित करते हैं। ऑक्सिन्स सामान्यत: कार्बनिक अम्ल हैं जिनमें एक असंतृप्त चक्रिक केंद्र होता है या फिर इसी प्रकार के अम्लों के व्युत्पन्न होते हैं। यद्यपि ऑक्सिन्स प्रमुखत: दीर्घीकरण प्रेरित करते हैं किंतु अनेक अन्य कार्यिकी क्रियाओं को भी प्रभावित करते हैं। अब, प्राकृतिक रूप में पौधे के अंदर मिलने वाले ऑक्सिन्स के

अतिरिक्त समान व्यवहार व रासायनिक संरचना वाले संश्लेषित पदार्थ ज्ञात हैं जो बाहर से पौधों को दिए जा सकते हैं।

ऑक्सिन की उपस्थिति पौधे में सभी जगह होती है विशेषकर वृद्धि बिंदुओं पर इसकी सांद्रता अधिक पाई जाती है; जैसे— शीर्ष विभज्योतक, कलिकाओं, तरुण पत्तियों, विस्तारित पत्तियों आदि स्थानों में। थीमान (1934) ने अपने प्रयोगों में प्रांकुरचोल शीर्ष से आधार की ओर इसकी मात्रा को क्रमश: कम होता हुआ पाया। ऑक्सिन का निर्माण विभाजन व दीर्घन करती हुई कोशिकाओं में होता है। प्रांकुर शीर्ष में इसकी सर्वाधिक मात्रा किंतु मूल शीर्घ में अपेक्षाकृत काफी कम मात्रा होती है।

(ii) **जिबरेलिन–** जिबरेलिन की खोज कुरोसावा नामक वैज्ञानिक ने सन् 1926 ई० में फारमोसा में धान के खेत में हुई थी जहाँ एक फफूँद से संक्रमित धान के पौधे सामान्य पौधों से अधिक लंबाई के थे। याबुता तथा हयाशी ने फफूँद से इस पदार्थ को अलग किया था। यह पौधों के ऊपरी सिरों तथा भ्रूण में बनता है तथा इसके सभी भागों में वृद्धि को नियंत्रित करता है। इसका पौधे की जड़ों पर सामान्यत: कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(iii) **पादप हॉर्मोन्स–** इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

(iv) **अनिषेक फलन–** बीज रहित फलों के निर्माण में ऑक्सिन का प्रयोग होता है। इस प्रक्रिया में ऑक्सिन को पुष्पन के पश्चात् पौधे पर छिड़क देते हैं जिससे बिना निषेचन के फल निर्माण प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। इस क्रिया को ही अनिषेक फलन कहते हैं।

प्रश्न 5. पादप हॉर्मोन्स क्या होते हैं? ये वृद्धि को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?

उत्तर– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 6. एथिलीन की पादपों में उपयोगिता बताइए।

उत्तर– **एथिलीन की पादपों में उपयोगिता–**

(i) यह फलों के पकने में सहायता करता है। यह फल पकाने वाला हॉर्मोन के नाम से भी जाना जाता है।

(ii) यह पौधों की लंबाई में वृद्धि को रोकता है।

(iii) यह पुष्पन को कम करता है किंतु अन्नानास में पुष्पन को बढ़ाता है।

(iv) यह पौधों में मादा पुष्पों की संख्या में वृद्धि करता है।

(v) यह पत्तियों, फलों व पुष्पों के विलगन को तीव्र करता है।

(vi) यह मूलरोमों के निर्माण तथा बीजों के अंकुरण को प्रेरित करता है।

प्रश्न 7. पादप हॉर्मोन्स से क्या तात्पर्य है? इनके मुख्य लक्षण लिखिए।

उत्तर– इसके लिए लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 8. पादपों में अग्रीय प्रभावितता (शीर्ष प्रमुखता) को समझाइए।

उत्तर– अधिकतर पादपों में शीर्ष कलिका की उपस्थिति में पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि रुकी रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रमुखता कहते हैं। शीर्ष कलिका को हटाने पर पार्श्व कलिकाएँ तेजी से बढ़ती हैं।

प्रश्न 9. पादप हॉर्मोन्स क्या हैं? किन्हीं तीन पादप हॉर्मोन्स के नाम तथा कार्य लिखिए।

उत्तर– **पादप हॉर्मोन्स–** लघु उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 के अंतर्गत देखिए।

किन्हीं तीन पादप हॉर्मोन्स के नाम तथा कार्य–

इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 10. ऑक्सिन्स हमारे लिए लाभदायक हैं। इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उत्तर– ऑक्सिन का प्रयोग कृषि क्षेत्र में किया जाता है। जो हमारे लिए निम्न प्रकार लाभदायक है—

(i) **कोशिका दीर्घन तथा वृद्धि दर पर प्रभाव–** ऑक्सिन से कोशिका दीर्घन होने के कारण ही तनों तथा फलों के आयतन में वृद्धि होती है। कोशिका दीर्घन ऑक्सिन्स की उपस्थिति में भित्ति दाब घट जाने तथा जल के लिए भित्ति की पारगम्यता बढ़ जाने के कारण परासरणी सांद्रता बढ़ने से तथा कोशिका भित्ति का लचीलापन बढ़ जाने के कारण होता है।

(ii) **संवहन एधा में कोशिका विभाजन–** कोशिका विभाजन की दर तथा एधा की मौसमी सक्रियता ऑक्सिन से नियंत्रित होता है। रोपण, क्षति आदि के समय कैलस का निर्माण इसी के कारण होता है।

(iii) **शीर्ष प्रमुखता–** अधिकतर पादपों में शीर्ष कलिका की उपस्थिति में पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि रुकी रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रमुखता कहते हैं। शीर्ष कलिका को हटाने पर पार्श्व कलिकाएँ तेजी से बढ़ती है। ऐसा माना जाता है कि शीर्ष कलिका में अवरोधक, ऑक्सिन बनते हैं जो नीचे जाकर पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि को रोकते हैं।

(iv) **वर्तन गतियाँ–** एकदिशीय प्रकाश के कारण अंधकार के क्षेत्र में ऑक्सिन की सांद्रता अधिक हो जाती है। तनों में अधिक सांद्रता अधिक वृद्धि प्रेरित करती है, अत: तने प्रकाश की ओर मुड़ जाते हैं अर्थात् धनात्मक प्रकाशानुवर्तन प्रदर्शित करते हैं। दूसरी ओर जड़ों में ऑक्सिन की अधिक सांद्रता वृद्धि को संदमित करती है, अत: जड़ें प्रकाश के विपरीत मुड़ जाती हैं और ऋणात्मक प्रकाशानुवर्तन प्रदर्शित करती हैं।

इसी प्रकार गुरुत्वाकर्षण के कारण अनुप्रस्थ स्थिति में निचले तल पर ऑक्सिन की सांद्रता अधिक होने से तने व जड़ में क्रमश: ऋणात्मक एवं धनात्मक गुरुत्वानुवर्तन प्रभावित होता है।

(v) **मूल प्रेरण–** यदि कलम को ऑक्सिन में डुबोकर भूमि में लगाया जाए तो जड़ें शीघ्रता से उत्पन्न होती हैं। ऑक्सिन्स पार्श्व मूलों का प्रेरण भी करते हैं।

(vi) **प्रसुप्तावस्था–** आलू जैसे कंदों पर ऑक्सिन के छिड़काव से कलियों का अंकुरण रुका रहता है जिससे उनका संग्रहण अधिक समय तक किया जा सकता है।

(vii) **अनिषेकफलन–** बीज रहित फलों के निर्माण में ऑक्सिन्स का उपयोग होता है। ये अनिषेकफलन प्रेरित करते हैं।

(viii) **खरपतवारनाशक–** 2, 4-D जैसे ऑक्सिन संकीर्ण पत्ती वाली फसल (एकबीजपत्री) के साथ उगने वाली बड़ी पत्तियों वाली खरपतवार को नष्ट कर देते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य अनेक प्रक्रिया आदि में ऑक्सिन्स का उपयोग महत्वपूर्ण है; जैसे— पक्वनपूर्व फलों की गिरने से रोकथाम, पातन की रोकथाम, फलों को मीठा करने में, लघु शाखाओं में निर्माण में (जैसे— सेब में), फलन का प्रेरण आदि में।

प्रश्न 11. अंत:स्रावी ग्रंथि किसे कहते हैं? हमारे शरीर में पाई जाने वाली मुख्य अंत:स्रावी ग्रंथियों के नाम लिखिए।

उत्तर– **अंत:स्रावी ग्रंथि–** ये नलिकाविहीन होती हैं। इन ग्रंथियों का स्राव 'हॉर्मोन्स' रक्त द्वारा वितरित होता है; जैसे— थाइरॉइड, अधिवृक्क, पीयूष ग्रंथि आदि।

मानव शरीर में निम्नलिखित अंत:स्रावी ग्रंथियाँ पाई जाती हैं—

(i) पीयूष ग्रंथि, (ii) थाइरॉइड ग्रंथि,
(iii) पैराथाइरॉइड ग्रंथि, (iv) एड्रीनल ग्रंथि,
(v) थाइमस ग्रंथि, (vi) पीनियल काय

प्रश्न 12. हॉर्मोन्स तथा एन्जाइम में अंतर लिखिए।

उत्तर– **हॉर्मोन्स तथा एन्जाइम में अंतर**

क्र०सं०	हॉर्मोन्स	एन्जाइम
1.	इनका स्रावण अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा किया जाता है। ये रुधिर के माध्यम से अपने कार्यकारी अंग में पहुँचते हैं।	इनका स्रावण बहि:स्रावी ग्रंथियों द्वारा किया जाता है। ये प्राय: नलिकाओं द्वारा अपनी-अपनी लक्ष्य कोशिकाओं में पहुँचाए जाते हैं।
2.	रासायनिक स्वभाव से ये प्रोटीन्स, पेप्टोन्स, ऐमीनो अम्ल, स्टेरॉइड्स अथवा इनके व्युत्पन्न हैं।	रासायनिक स्वभाव से ये कोलॉइडी प्रोटीन्स होते हैं।
3.	इनका आण्विक भार कम होता है।	इनका आण्विक भार अधिक होता है।
4.	ये रासायनिक क्रियाओं के बाद विघटित हो जाते हैं अर्थात् पुन: उपयोग नहीं होते हैं।	ये रासायनिक क्रियाओं के बाद बचे रहते हैं, अत: इनका पुन: प्रयोग सम्भव है।
5.	ये उपापचयी क्रियाओं में सीधे भाग नहीं लेते हैं।	ये रासायनिक क्रियाओं को उत्प्रेरित करते हैं।

प्रश्न 13. अंत:स्रावी तथा बहि: स्रावी ग्रंथियों में अंतर बताइए।

उत्तर– **अंत:स्रावी तथा बहि: स्रावी ग्रंथियों में अंतर**

क्र०सं०	अंत:स्रावी ग्रंथि	बहि:स्रावी ग्रंथि
1.	अंत:स्रावी ग्रंथियाँ नलिकायुक्त होती हैं।	बहि:स्रावी ग्रंथियाँ नलिकायुक्त होती हैं।
2.	इनके स्राव को हॉर्मोन कहते हैं।	इनके स्राव अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे— पाचक रस, तैलीय पदार्थ, म्यूकस आदि।
3.	स्रावित पदार्थ रुधिर द्वारा सारे शरीर में वितरित होते हैं।	स्रावित पदार्थ नलिकाओं द्वारा संबंधित अंग में पहुँचाते हैं।

प्रश्न 14. शरीर में रासायनिक समन्वयन क्या है? यह किस प्रकार होता है?

उत्तर– कोशिका में केंद्रक द्वारा नियंत्रण रासायनिक समन्वयन का सरलतम रूप है। रासायनिक समन्वयन विशेष पदार्थों द्वारा किया जाता है। ये पदार्थ कोशिकाओं में उत्पन्न होते हैं। इनमें एन्जाइम्स तथा हॉर्मोन्स प्रमुख हैं। कशेरुकी प्राणियों में अंत: स्रावी ग्रंथियों से

उत्पन्न विशिष्ट रसायन 'हॉर्मोन्स' सूक्ष्ममात्रा में स्रावित होकर रक्त के माध्यम से लक्ष्य कोशिकाओं में पहुँचकर उनकी क्रियाओं का नियंत्रण तथा नियमन करते हैं।

प्रश्न 15. हॉर्मोन्स क्या है? शरीर में इनका महत्व बताइए।

उत्तर– हमारे शरीर में विशेष प्रकार की ग्रंथियाँ होती हैं। उच्च कोटि के जंतुओं में तंत्र के अलावा विशेष रासायनिक पदार्थों के द्वारा शारीरिक क्रियाओं का नियंत्रण होता है। ये ग्रंथियाँ विशेष प्रकार के रासायनिक पदार्थों का स्राव करती हैं जिन्हें हॉर्मोन कहते हैं। हॉर्मोन जटिल कार्बनिक यौगिक हैं। इनमें से अधिकांश स्टेरॉएड होते हैं किंतु कुछ प्रोटीन एवं एमीनों अम्ल भी होते हैं। ये बहुत कम मात्रा में बनते हैं। और सीधे रुधिर में पहुँच जाते हैं। रुधिर ही हॉर्मोन्स को शरीर के विभिन्न अंगों में पहुँचाता है। यद्यपि सभी हार्मोन्स सारे शरीर में संचरित होते हैं, परंतु प्रत्येक हॉर्मोन विशिष्ट अंग की कोशिकाओं के कार्यों को ही प्रभावित करता है। हॉर्मोन्स शरीर के उपापचय, वृद्धि, जनन, रुधिर दाब, रुधिर में जल और लवण की मात्रा आदि क्रियाओं का नियंत्रण करते हैं। कुछ हॉर्मोन्स प्रेरक और कुछ निरोधक प्रकार के होते हैं। हॉर्मोन्स की मात्रा में थोड़ी-सी भी कमी या अधिकता से ही रोग हो जाते हैं।

प्रश्न 16. वृषण से कौन-कौन से हॉर्मोन्स स्रावित होते हैं? इनके कार्य बताइए।

उत्तर– **वृषण के हॉर्मोन्स–** वृषण में उपस्थित लेडिग कोशिकाएँ अंत:स्रावी ग्रंथियों के रूप में कार्य करती हैं। इनमें एण्ड्रोजन्स नामक हॉर्मोन्स उत्पन्न होते हैं। इनमें प्रमुख टेस्टोस्टेरॉन है, जो एक महत्वपूर्ण पौरुष विकास हार्मोन है। इससे जनदों के विकास, द्वितीयक लैंगिक लक्षण, लैंगिक परिपक्वता आदि विकसित होने में सहायता मिलती है। मैथुन इच्छा आदि नर लक्षण इन्हीं के प्रभाव तथा प्रेरण से विकसित होते हैं।

प्रश्न 17. इन्सुलिन का निर्माण शरीर के किस अंग में होता है? इसकी कमी से होने वाले रोग का नाम बताइए।

उत्तर– अग्न्याशय ग्रंथि के बहि:स्रावी भाग (लैगरहैन्स की द्वीपिकाएँ) की कोशिकाओं से इन्सुलिन नामक हॉर्मोन स्रावित होता है। इसका कार्य रुधिर की शर्करा का नियमन करना है। इसकी कमी से मधुमेह रोग हो जाता है।

प्रश्न 18. अंडाशय से उत्पन्न होने वाले हॉर्मोन्स के नाम तथा कार्य बताइए।

उत्तर– **अंडाशय से उत्पन्न होने वाले हार्मोन्स तथा उनके कार्य–** अंडाशय में निम्नलिखित हॉर्मोन्स उत्पन्न होते हैं।

(i) **एस्ट्रोजन–** यह अंडाशय की पुटिका कोशिकाओं से स्रावित होता है। इसे नारी विकास हॉर्मोन भी कहते हैं, क्योंकि यह मादा में लैंगिक परिपक्वता तथा द्वितीयक लैंगिक लक्षणों जैसे स्तनों के विकास आदि को प्रेरित करता है।

(ii) **प्रोजेस्टेरॉन–** इसे गर्भधारक हॉर्मोन कहते हैं; क्योंकि यह गर्भधारण के लिए आवश्यक दशाओं के विकास का प्रेरक है। यह अंडाशय की पुटिका कोशिकाओं तथा अंडोत्सर्ग के बाद बने कॉर्पस ल्यूटिस द्वारा स्रावित होता है। इसके प्रभाव से गर्भाशय की भित्तियों में रुधिर परिवहन बढ़ता है तथा नई ग्रैफियन पुटिकाओं का निर्माण रूकता है।

(iii) **रिलैक्सिन –** यह गर्भकाल की समाप्ति पर कॉर्पस ल्यूटियम द्वारा स्रावित होता है। यह हॉर्मोन श्रोणी मेखला की प्यूबिक सिम्फाइसिस को चौड़ा करता है, जिससे प्रसव में सुविधा होती है।

प्रश्न 19. लेडिग कोशिकाएँ कहाँ होती हैं? इनके कार्य लिखिए।

उत्तर– लेडिग कोशिकाएँ वृषण में होती हैं। ये अंत: स्रावी ग्रंथियों के रूप में कार्य करती हैं। इन कोशिकाओं से एण्ड्रोजन नामक हॉर्मोन्स स्रावित होते हैं। इनमें टेस्टोस्टेरॉन प्रमुख हैं जो पुरुषों में जनदों के विकास, द्वितीय लैंगिक लक्षण, लैंगिक परिपक्वता आदि के विकास में सहयोग करता है। पुरुषों में मैथुन इच्छा आदि नर लक्षण इसी के प्रभाव से विकसित होते हैं।

प्रश्न 20. जब रक्त (रुधिर) में थायरॉक्सिन की मात्रा वांछित मात्रा से कम हो जाती है, तो पीयूष ग्रंथि के उत्पादन पर क्या प्रभाव पड़ता है? किन्हीं दो ऋणात्मक पुनर्निवेश के दो उदाहरण दीजिए।

उत्तर– जब रक्त (रुधिर) में थाइरॉक्सिन की मात्रा वांछित मात्रा से कम हो जाती है, तो पीयूष ग्रंथि से थाइरोट्रोपिक या थाइरॉइड प्रेरक हॉर्मोन्स (TSH) स्रावित होते हैं। यह थाइरॉइड ग्रंथि की वृद्धि एवं स्रावण क्रिया का प्रेरक है जिससे थाइरॉइड ग्रंथि से थाइरॉक्सिन नामक हॉर्मोन स्रावित होने में सहायता मिलती है।

थाइरॉक्सिन की कमी से बच्चों में जड़वामनता और वयस्कों में मिक्सीडीमा नामक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

प्रश्न 21. थाइरॉइड ग्रंथि व लैंगरहैंस की द्वीपिकाएँ के कार्य लिखिए।

उत्तर– **थाइरॉइड ग्रंथि के कार्य–** थाइरॉइड ग्रंथि से थाइरॉक्सिन व ट्राइआयडोथाइरोनीन हॉर्मोन स्रावित होते हैं जो जीवों में उपापचय की दर (BMR), ऑक्सीजन की खपत व हृदय स्पंदन दर का नियमन करते हैं। ये ग्लूकोज का अवशोषण तथा ग्लूकोनिओंजेनेसिस को भी प्रेरित करते हैं।

लैंगरहैंस की द्वीपिकाओं के कार्य– लैगरहैंस की द्वीपिकाओं से इन्सुलिन, ग्लूकैगॉन तथा वृद्धि रोधक हार्मोंस स्रावित होते हैं, जिनके कार्य निम्नलिखित हैं—

(i) इन्सुलिन– इसे बीटा कोशिकाएँ बनाती हैं। ऊतकों, विशेषकर पेशियों में कार्बोहाइड्रेट्स के उपयोग पर नियंत्रण तथा यकृत कोशिकाओं में **ग्लाइकोजेनिसिस** को प्रेरित करता है।

(ii) ग्लूकैगॉन– इसे अल्पा कोशिकाएँ बनाती हैं। रुधिर में ग्लूकोज की मात्रा कम होने पर ग्लाइकोजन व वसा को विखंडित करके इसके निर्माण का प्रेरक है। कैल्सियम आयन (Ca^{++}) का नियमन करता है।

(iii) वृद्धि हॉर्मोन रोधक हॉर्मोन– डेल्टा कोशिकाएँ बनाती हैं। यह ग्लूकैगॉन एवं इन्सुलिन के संश्लेषण को नियमित करने के लिए उनके संश्लेषण पर अंकुश रखता है।

प्रश्न 22. एड्रिनल ग्रंथि के कॉर्टेक्स भाग से स्रावित हॉर्मोन्स के नाम बताइए। प्रत्येक के कार्य लिखिए।

उत्तर– एड्रीनल ग्रंथि के कॉर्टेक्स भाग से स्रावित हॉर्मोन्स तथा उनके कार्य–

(i) मिनरैलोकॉर्टिकॉइड्स– इस श्रेणी में एल्डोस्टेरोन वृक्कों में सोडियम व क्लोराइड आयन्स के पुनरावशोषण तथा पोटैशियम आयन्स के उत्सर्जन को प्रोत्साहित कर रुधिर का उपयुक्त परासरणी दाब बनाए रखता है। इसी के कारण रुधिर की मात्रा एवं रुधिर दाब सामान्य बने रहते हैं।

(ii) ग्लूकोकॉर्टिकॉइडस– कार्टिसोल व कॉर्टिकोस्टेरोन इस श्रेणी के उल्लेखनीय हॉर्मोन्स हैं। कॉर्टिसोल लगभग सभी अंगों एवं उनकी विभिन्न ऊतकों आदि की कोशिकाओं में ग्लूकोज के उपभोग तथा प्रोटीन–संश्लेषण पर अवरोधी प्रभाव डालता

है जिससे इनमें वसाओं एवं प्रोटीन्स के विखंडन को बढ़ावा मिलता है। इस गतिविधि के कारण प्रोटीन-संश्लेषण पर अवरोधी प्रभाव डालता है जिससे इनमें वसाओं एवं प्रोटीन्स के विखंडन को बढ़ावा मिलता है। इस गतिविधि के कारण रुधिर दाब में वृद्धि होती है। यह यकृत में, यूरिया संश्लेषण आदि क्रियाओं को प्रेरित करता है। ये कोलैजन तंतुओं को बनने से रोकते हैं; अत: गठिया जैसे रोगों में अत्यंत लाभप्रद रहते हैं। ये प्रतिरक्षी-निषेधात्मक होते हैं; अत: इनका उपयोग एलर्जी के उपचार तथा शल्य चिकित्सा द्वारा अंगों के प्रत्यारोपण करते समय किया जाता है।

(iii) **लिंग हॉर्मोन्स–** एड्रीनल कॉर्टेक्स से कुछ मात्रा में एण्ड्रोजेन्स तथा इस्ट्रोजेन्स भी स्त्रावित होते हैं। इन हॉर्मोन्स का कार्य पेशियों व जननांगों के विकास को प्रेरित करना है।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. मनुष्य की प्रमुख अंत: स्त्रावी ग्रंथियों, उनसे स्त्रावित हॉर्मोन्स तथा उनके कार्यों का अध्ययन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. पादप हॉर्मोन्स का वर्गीकरण करना तथा उनके कार्यों का अध्ययन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

20 जंतुओं में तंत्रिकीय समन्वयन- प्रतिवर्ती क्रिया

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जंतुओं में समन्वयन को विस्तार से समझाइए।

उत्तर- जीव शरीर के अंदर के वातावरण को समान अथवा नियमित भौतिक-रासायनिक दशाओं में बनाए रखने की अंतनिर्हित प्रवृत्ति समन्वयन कहलाती है, ताकि इस वतावरण में कोशिकाएँ, अंग, अंगतंत्र आदि अपने-अपने कार्यों को कुशलतापूर्वक तथा बिना किसी बाधा के संचालित कर सकें, अर्थात् विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को कर सकने के लिए विभिन्न तंत्रों में समन्वयन आवश्यक है।

बहुकोशिकीय जंतुओं में जटिलता बढ़ने के साथ-साथ विभिन्न अंगों के मध्य समन्वयन दो प्रकार से होता है—

(i) रासायनिक समन्वयन

(ii) तंत्रिका समन्वयन

(i) रासायनिक समन्वयन- रासायनिक समन्वयन विशेष पदार्थों द्वारा किया जाता है। ये पदार्थ कोशिकाओं में उत्पन्न होते हैं। इनमें एन्जाइम्स तथा हॉर्मोन्स प्रमुख होते हैं।

शरीर का रासायनिक समन्वयन नियमन करके इसकी कार्यात्मक गति को बनाए रखने के साथ-साथ वृद्धि, सुरक्षा, लैंगिक लक्षणों, जनन, उपापचय आदि का नियमन-नियंत्रण करते हैं। वास्तव में बिना समस्थैतिकता प्राप्त किए जीवित कोशिकाएँ, ऊतक आदि अपना कार्य सुचारू रूप से कर ही नहीं सकती हैं और हॉर्मोन्स इस कार्य में अति सूक्ष्म होकर सहयोग करते रहते हैं।

(ii) तंत्रिका समन्वयन- जंतुओं में तंत्रिका तंत्र, शरीर के समस्त अंगों के मध्य समन्वय बनाए रखता है तथा शरीर के विभिन्न तंत्रों, कार्य प्रणालियों तथा बाह्य उद्दीपनों आदि का समन्वयन करता है। जिसके अंतर्गत तंत्रिकाओं के कार्यों को समन्वित करने के लिए एक केंद्रीय भाग होता है जिसमें मस्तिष्क एक नियामक व नियंत्रक अंग की तरह तथा इसके क्रम में ही उपस्थित अन्य तंत्रिकाओं से संवेदना प्राप्त कर, आवश्यकतानुसार कार्य के लिए आदेश देने का कार्य करता है। सरल बहुकोशिकीय जीवों; जैसे हाइड्रा में तंत्रिका कोशिकाएँ एवं कुछ तंत्रिका तंतु ही तंत्रिका समन्वयन के आधार पर सभी भिन्न-भिन्न कार्य करने वाली कोशिकाओं को परस्पर सहयोग के लिए एकजुट बनाए रखता है।

इस प्रकार, तंत्रिकीय नियंत्रण-समन्वयन तथा हॉर्मोन्स नियमन-समन्वयन परस्पर सहयोग में तथा नियामक रूप में कार्य करता रहता है। यही नहीं, ये दोनों प्रकार के तंत्र परस्पर तथा अपने आप में भी पुनर्निवेश करके शरीर की समस्त क्रियाओं को सफलतापूर्वक तथा संतुलित अवस्था में संचालित होने देते हैं। हॉर्मोन्स काफी सीमा तक प्राणी के शरीर में बाहरी वातावरण के प्रति अनुकूलन की क्षमता प्राप्त करते हैं जिससे कि वातावरणीय कारक शरीर की जैविक क्रियाओं को प्रभावित कर सकें।

प्रश्न 2. तंत्रिकीय समन्वयन पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– तंत्रिकीय समन्वन– तंत्रिका तंत्र केवल जंतुओं में ही होता है। पौधों में तंत्रिका तंत्र नहीं पाया जाता है। ये तंतु ही शरीर में एक स्थान से दूसरे स्थान पर संवेदना पहुँचाते हैं। ग्राही अंगों तथा अपवाहक अंगों से संबंधित तंत्रिकाएँ जंतुओं के शरीर में जाल की भाँति बिछी रहती हैं, जिनका नियंत्रण एक केंद्रीय स्थान मस्तिष्क द्वारा होता है। अत: मस्तिष्क एक प्रकार का केंद्रीय तारघर है, जहाँ से तंत्रिकाएँ फैले हुए तारों की भाँति समाचार लाती/ले जाती हैं।

जब किसी जंतु के शरीर के अंदर अथवा बाहर कोई परिवर्तन होता है तो कुछ अंग इससे प्रभावित होकर इसकी सूचना तंत्रिकाओं द्वारा मस्तिष्क या रीढ़ रज्जु को पहुँचा देते हैं।

तंत्रिका तंत्र की सामान्य संरचना– मनुष्य तथा स्तनियों सहित सभी कशेरुकियों में तंत्रिका तंत्र विशेष प्रकार के ऊतक, तंत्रिका ऊतक द्वारा निर्मित होता है। इस ऊतक में अत्यंत विशिष्ट कोशिकाएँ, तंत्रिका कोशिकाएँ होती हैं।

मनुष्य जैसे जंतुओं में तंत्रिकाओं के कार्यों को समन्वित करने के लिए एक केंद्रीय भाग होता है जिसमें मस्तिष्क एक नियामक व नियंत्रक अंग की तरह तथा इसके क्रम में ही उपस्थित रीढ़ रज्जु या सुषुम्ना होते हैं। मनुष्य का तंत्रिका तंत्र सबसे अधिक विकसित और सबसे अधिक जटिल होता है। यह भाग अन्य तंत्रिकाओं से संवेदना प्राप्त कर आवश्यकतानुसार कार्य के लिए आदेश देने का कार्य करता है। मस्तिष्क ही इन प्राणियों में स्मरण, अनुभव तथा आदतों को संचित करता है और इन सूचनाओं के आधार पर अनुकूलन के कार्य करता है।

प्रश्न 3. एक तंत्रिका कोशिका का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– तंत्रिका कोशिका का सचित्र वर्णन– तंत्रिका कोशिकाएँ 1.5 मीटर से 2 मीटर तक लंबी होती हैं। एक तंत्रिका कोशिका के निम्नलिखित तीन भाग होते हैं—

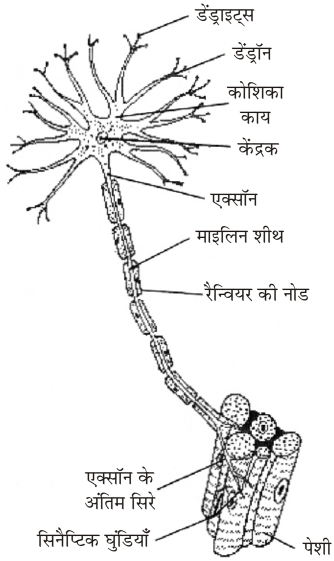

एक तंत्रिका कोशिका के न्यूरॉन की संरचना

(i) **कोशिका काय**– यह तंत्रिका कोशिका का मुख्य भाग है। इसमें एक केंद्रक व चारों ओर कोशिकाद्रव्य में प्रोटीनयुक्त निसिल के कण होते हैं।

(ii) **वृक्षिकाएँ या डेंड्रॉन**– ये कोशिका काय से निकले प्रवर्ध हैं, जिनसे अनेक शाखाएँ; **द्रुमाश्य** या वृक्षिकांत निकलते हैं

(iii) **तंत्रिकाक्ष या एक्सॉन**– कोशिकाय से न्यूरीलेमा में बंद लंबा, मोटा तथा बेलनाकार प्रवर्ध निकलता है। यह किसी ग्रंथि, पेशी या ज्ञानेंद्रिय से जुड़ा रहता है। एक्सॉन तथा न्यूरीलेमा के बीच में एक वसीय पदार्थ होता है। यह रैन्वियर की नोड पर टूटा हुआ होता है। इस संपूर्ण आवरण को मज्जा आच्छद कहते हैं। एक्सॉन के मध्य से पार्श्व तंतु व अंतिम सिरे से छोटी-छोटी घुंडी रूपी शाखाएँ सिनैप्टिक घुंडियाँ निकलती हैं, जो दूसरी तंत्रिका कोशिका के वृक्षिकांत से मिलकर सिनैप्स बनाती हैं। इन्हीं स्थानों से संवेदनाएँ एक तंत्रिका कोशिका से दूसरी तंत्रिका कोशिका तक पहुँचती हैं। तंत्रिका

कोशिकाएँ तीन प्रकार की होती हैं–

(a) संवेदीन्यूरॉन– ये अंगों से संवेदानाओं को ग्रहण करते हैं तथा केंद्रीय तंत्र (मस्तिष्क अथवा सुषुम्ना) को पहुँचाते हैं।

(b) चालक या प्रेरकन्यूरॉन– यें केंद्रीय तंत्र से संदेश लेकर कार्यकारी अंगों तक पहुँचाते हैं।

(c) साहचर्य तंत्रिका कोशिकाएँ– ये संवेदी तथा चालक तंत्रिका कोशिकाओं के बीच संबंध स्थापित करती हैं।

प्रश्न 4. मस्तिष्क की संरचना का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– मस्तिष्क की संरचना– खोपड़ी के कपाल में बद मेरु रज्जु का अगला चौड़ा भाग मस्तिष्क कहलाता है। यह तीन मस्तिष्कावरण झिल्लियों द्वारा ढ़का होता है– (i) ड्यूरामेटर, (ii) ऐसेक्नॉइड, (iii) पायामेटर। इसमें निम्नांकित भाग होते हैं–

(a) अग्रमस्तिष्क – यह मस्तिष्क का प्रमुख (लगभग दो-तिहाई) भाग बनाता है। यह भी दो भागों का बना होता है– (1) सेरीब्रम, (2) डाइएनसिफेलॉन।

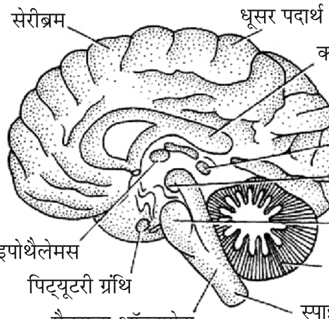

मानव मस्तिष्क के विभिन्न भाग

(1) प्रमस्तिष्क या सेरीब्रम– यह दो गोलार्द्धों का बना होता है जिन्हें सेरीब्रम अर्द्ध-गोलार्द्ध कहते हैं। प्रत्येक सेरीब्रम गोलार्द्ध में तीन गहरी दरारें होती हैं, जिनके कारण यह चार भागों में बँट जाता है। सेरीब्रम में देखने, सूँघने तथा स्पर्श के अलग-अलग केंद्र होते हैं। यह मनुष्य की चेतना, स्मृति, तर्क तथा वृद्धि का भी केंद्र है। इस भाग के अल्प विकसित होने पर मनुष्य अधिक बुद्धिमान नहीं होता। सेरीब्रम मस्तिष्क के अन्य भागों पर भी नियंत्रण रखता है।

(2) डाइएनसिफेलॉन– इस भाग में पीनियल काय तथा पिट्यूटरी ग्रंथि जुड़ी होती है। थैलेमस व हाइपोथैलेमस इस के भाग हैं।

(b) **मध्य मस्तिष्क** – यह भी दो भागों का बना होता है– (i) कार्पोरा क्वार्डीजेमिना जो चार ठोस पिंडों का बना होता है, ये दृष्टि ज्ञान से संबंधित होते हैं। इनसे दृष्टि तंत्रिकाएँ निकलकर नेत्रों को जाती हैं तथा (ii) सेरीब्रम पिडन्कल जो तंतुओं का बना होता है।

(c) **पश्च मस्तिष्क या अनुमस्तिष्क**– यह सेरीबेलम तथा मेड्यूला ऑब्लांगेटा का बना होता है। सेरीबेलम बड़ी ठोस व जटिल संरचना होती है तथा सेरीब्रम के बिल्कुल नीचे पश्च भाग में मिलती है। यह गति नियंत्रण, समन्वय, शरीर का संतुलन तथा ऐच्छिक पेशियों की क्रिया का नियमन करता है।

मेड्यूला ऑब्लांगेटा मस्तिष्क का सबसे पीछे का त्रिभुजाकार भाग होता है।

प्रश्न 5. मानव मस्तिष्क का नामांकित चित्र बनाइए तथा इसके विभिन्न भागों के कार्य लिखिए।

उत्तर– मानव के मस्तिष्क का नामांकित चित्र देखने के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

मस्तिष्क के विभन्न भागों के कार्य–

सेरीब्रम– ये बुद्धिमत्ता, चेतना, शक्ति व स्मरण शक्ति के केंद्र हैं। ज्ञानेंद्रियों से प्राप्त प्रेरणाओं का यह विश्लेषण व समन्वय होता है तथा ऐच्छिक पेशियों को समुचित प्रतिक्रिया हेतु संवेदना प्रसारित की जाती है–

(i) फ्रण्टल पालि द्वारा ऐच्छिक पेशियों पर नियंत्रण होता है।

(ii) पेराइटल पालि द्वारा हमारी त्वचा से प्राप्त संवेदन प्राप्त किए जाते हैं और सर्दी, गर्मी, स्पर्श, दबाव व दर्द के प्रति अनुक्रियाओं को प्रेरित करता है।

(iii) ऑक्सीपिटल पालि द्वारा दृश्य संवेदनाएँ ग्रहण की जाती हैं।

(iv) टेम्पारेल पालि श्रवण में सहायक होते हैं।

डाइएनसिफेलॉन– यह अग्रमस्तिष्क का पिछला भाग है। इसमें दो प्रमुख भाग होते हैं– थैलेमस तथा हाइपोथैलेमस। थैलेमस दर्द, ठंडा व गर्म को पहचानने का कार्य करता है जबकि हाइपोथैलेमस भूख, प्यार, घृणा व ताप नियंत्रण का केंद्र है। ये वसा तथा कार्बोहाइड्रेट के उपापचय का भी नियंत्रण करते हैं।

मध्य मस्तिष्क– यह दृष्टि, श्रवण एवं प्रतिवर्ती क्रियाओं का नियंत्रण करता है।

अनुमस्तिष्क– यह कंकाल पेशियों के संकुचन एवं शिथिलन का नियमन करता है, शरीर का संतुलन बनाए रखता है, शरीर में साम्यावस्था स्थापित रखता है।

मेड्यूला ऑब्लांगेटा– यह शरीर की सभी अनैच्छिक क्रियाओं का केंद्र है।

प्रश्न 6. मेरुरज्जु किसे कहते हैं? मेरुरज्जु की अनुप्रस्थ काट का सचित्र वर्णन कीजिए। मेरुरज्जु के कार्यों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर– **मेरु रज्जु–** मेड्यूला ऑब्लांगेटा खोपड़ी के महारंध्र से निकलकर कशेरुकाओं की तंत्रिका नाल से होता हुआ अंत तक फैला रहता है, जिसे रीढ़ रज्जु या मेरु रज्जु कहते हैं। यह एक लंबी, खोखली व बेलनाकार रचना है। मस्तिष्क के समान ही

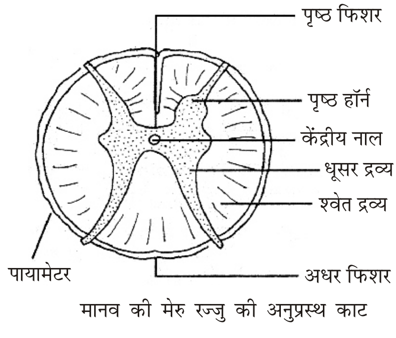

मानव की मेरु रज्जु की अनुप्रस्थ काट

इसके ऊपर वही तीन झिल्लियों का आवरण होता है। इनके बीच की गुहा में भी तरल पदार्थ भरा रहता है। परंतु इसका धूसर द्रव्य 'H'की आकृति का होता है।

मेरु रज्जु के कार्य (Function of Spinal Cord)–

(i) यह प्रतिवर्ती क्रियाओं का मुख्य केंद्र है।

(ii) यह अनैच्छिक क्रियाओं को संतुलित करती है।

(iii) मेरु रज्जु मस्तिष्क को जाने तथा मस्तिष्क से आने वाली प्रेरणाओं के लिए मार्ग प्रदान करती है।

प्रश्न 7. स्वायत्त तंत्रिका तंत्र किसे कहते हैं? यह शरीर की जैविक क्रियाओं का किस प्रकार नियंत्रित करता है? संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर– स्वायत्त तंत्रिका तंत्र– विभिन्न प्रकार की अनैच्छिक क्रियाओं को उचित रूप से चलाने के लिए स्वायत्त तंत्रिका तंत्र होता है। इसमें अनेक तंत्रिका गुच्छक तथा तंत्रिकाएँ आदि होती हैं। इस प्रकार का तंत्रिका तंत्र दो भागों में बँटा रहता है—

(i) अनुकंपी तंत्र तथा

(ii) परानुकंप तंत्र

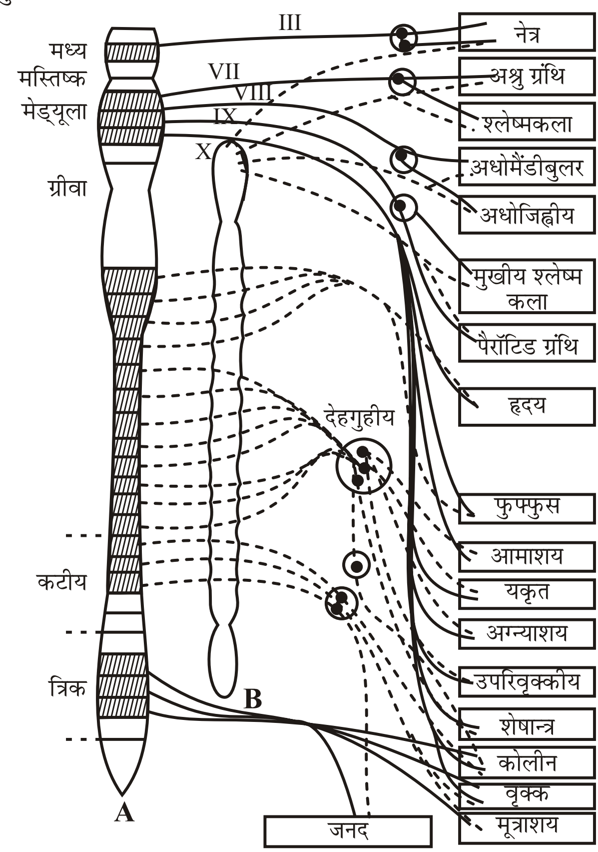

स्वायत्त तंत्रिका तंत्रः A. परानुकंपी तथा B. अनुकंपी तंत्र।

दोनों प्रकार के तंत्र एक-दूसरे के विपरीत कार्य करते हैं। यहाँ विशेषता यह है कि अनुकंपी गुच्छक लड़ी के रूप में गर्दन से पश्च भाग तक मेरुरज्जु के दोनों ओर फैले रहते हैं तथा योजि उपशाखाओं के द्वारा समीप की रीढ़ तंत्रिका से जुड़े रहते हैं। गुच्छकों से तंत्रिकाएँ निकलकर किसी-न-किसी अंग में आ जाती है।

जिन अंगों में अनुकंपी तंत्रिकाएँ जाती हैं उन अंगों में या उनके समीप परानुंकपी गुच्छक स्थित होते हैं।

दोनों प्रकार की स्वायत्त तंत्रिकाओं में केवल चालक तंत्रिका कोशिकाएँ होती हैं।

इस प्रकार, स्तनियों में अन्य कशेरुकियों की भाँति संपूर्ण तंत्रिका तंत्र अति जटिल तथा कई प्रकार के तंत्रों में विन्यासित होता है।

प्रश्न 8. प्रतिवर्ती क्रिया पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- प्रतिवर्ती क्रियाएँ या रिफ्लेक्स क्रियाएँ- ज्ञानेंद्रियों से प्राप्त उद्दीपनों का विश्लेषण मुख्यत: मस्तिष्क में होता है। प्रमस्तिष्क से नियंत्रित क्रियाओं को ऐच्छिक क्रियाएँ कहते हैं। परंतु बाह्य उद्दीपनों के प्रति बहुत-सी क्रियाएँ मस्तिष्क के सहयोग के बिना भी होती हैं। ये क्रियाएँ अनैच्छिक होती हैं और मेरु रज्जु में इनका नियंत्रण होता है इसको प्रतिवर्ती क्रियाएँ कहते हैं। मस्तिष्क का इन क्रियाओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

प्रतिवर्ती क्रिया के उदाहरण- यदि अनजाने में आपका हाथ किसी गर्म चीज से छू जाए या कोई आपके हाथ में पिन चुभा देता है तो आप तुरंत अपने हाथ को हटा लेते हैं। हाथ हटाने के पश्चात् ही आपको दर्द का अनुभव होता है। इस क्रिया में बहुत कम समय लगता है। तेज रोशनी में पलकें एकदम झपक जाती हैं या जोर की आवाज सुनते ही मुँह खुल जाता है। इस प्रकार की सभी क्रियाओं को प्रतिवर्ती क्रियाएँ कहते हैं। इस क्रिया के दो सोपान हैं—

(i) गर्म चीज की छूने पर उसकी संवेदनाएँ (उद्दीपन) तंत्रिका द्वारा तुरंत मेरु रज्जु में पहुँचाती हैं।

(ii) इसके उत्तर में मेरु रज्जु का आदेश प्रेरक तंत्रिकाओं द्वारा कार्यकर की अंग की पेशियों को पहुँचता है और माँसपेशियाँ तुरंत हाथ को दूर हटा लेती हैं।

प्रतिवर्ती चाप- प्रतिवर्ती क्रिया के आवेग के संवेदी अंग से प्रेरक तक पहुँचने के मार्ग को प्रतिवर्ती चाप कहते हैं। इसमें निम्नलिखित अंग होते हैं—

(a) ग्राही अंग
(b) संवेदी न्यूरॉन तथा संवेदी तंत्रिका
(c) सहबंधक न्यूरॉन
(d) चालक न्यूरॉन तथा चालक तंत्रिका
(e) कार्यकर अंग

किसी उद्दीपन से होने वाली स्वचालित, जल्दी से और अनैच्छिक क्रिया को प्रतिवर्ती क्रिया कहते हैं।

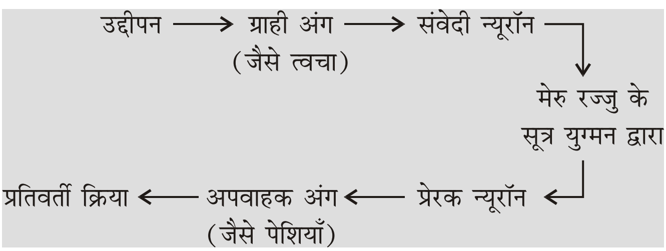

प्रतिवर्ती चाप का फ्लो चार्ट

प्रतिवर्ती क्रियाएँ दो प्रकार की होती हैं—

(i) **अंबंधित प्रतिवर्ती क्रियाएँ–** ये प्रतिवर्ती क्रियाएँ जन्मजात होती हैं; जैसे— प्रजनन करना, घोंसला बनाना, छींकना, खाँसना आदि।

(ii) **अनुबंधित प्रतिवर्ती क्रियाएँ–** ये पूर्व अनुभव, प्रशिक्षण एवं सीखने आदि पर निर्भर होती हैं जैसे— गाड़ी चलाना, नाचना, तैरना आदि।

प्रश्न 9. प्रतिवर्ती क्रिया से आप क्या समझते हैं? चित्र की सहायता से इस क्रिया को स्पष्ट कीजिए। इस क्रिया का क्या महत्त्व है?

उत्तर– किसी उद्दीपन से होने वाली स्वचालित, जल्दी से और अनैच्छिक क्रिया को प्रतिवर्ती क्रिया कहते हैं।

दीर्घ वर्णन के लिए प्रश्न 8 का अवलोकन कीजिए।

प्रतिवर्ती क्रिया का महत्व– प्रतिवर्ती क्रियाओं का सम्पादन रीढ़ रज्जु द्वारा होता है। इससे मस्तिष्क का संबंध नहीं होता है। क्रिया के पश्चात् मस्तिष्क को इसकी सूचना तंत्रिकाओं द्वारा भेज दी जाती है।

स्वभाव के आधार पर प्रतिवर्ती क्रियाएँ दो प्रकार की होती हैं–

(i) **अबंधित या सरल प्रतिवर्ती क्रियाएँ–** ये प्रतिवर्ती क्रियाएँ वंशानुगत या आनुवंशिक एवं निश्चित और जन्मजात होती हैं। जंतु इनमें अपनी इच्छानुसार कोई परिवर्तन नहीं कर सकता है। ये प्राकृतिक मूल प्रवृत्ति के अंतर्गत आती हैं। किसी विशेष ऋतु में ही प्रजनन करना, प्रणय निवेदन करना, घोंसला बनाना तथा पक्षियों में देशांतरण आदि क्रियाएँ इसी प्रवृत्ति के कारण होती हैं। इन्हें जंतु बिना किसी पूर्व अनुभव के ही करने लगते हैं।

(ii) **अनुबंधित या प्रतिबंधित प्रतिवर्ती क्रियाएँ** – इन्हें जंतु अपने जीवन काल में अर्जित करता है। ये पूर्व अनुभव, प्रशिक्षण एवं सीखने/अधिगम आदि पर निर्भर होती हैं, प्रारंभ में तो ये क्रियाएँ प्रमस्तिष्क के नियंत्रण में होती है, किंतु बाद में भली–भाँति स्थापित हो जाने पर यह आदत में परिवर्तित हो जाती हैं और स्वत: होने लगती हैं। नाचना, गाना, बजाना, साइकिल चलाना, जल में तैरना आदि क्रियाएँ इसी व्यवहार के अंतर्गत आती हैं।

प्रतिवर्ती क्रियाओं के कुछ सामान्य उदाहरण –

(i) **खाँसना–** श्वसन मार्ग में कोई ठोस कण पहुँचने पर फेफड़ों से मुख के द्वारा तीव्र गति से वायु बाहर निकाली जाती है, जिससे कि अवांछित कण वायु के दबाव से बाहर निकल जाएँ तीव्र उच्छ्वास के कारण स्वर पट्टियों में कंपन्न उत्पन्न होने से खाँसी की ध्वनि उत्पन्न होती है।

(ii) **छींकना–** छींकने में भी उपर्युक्त क्रिया ही होती है, अंतर केवल इतना है कि इसमें वायु मुख के स्थान पर नाक से बाहर निकलती है।

(iii) **नेत्र प्रतिक्षेप क्रिया–** किसी वस्तु के अचानक सामने आने पर पलकों का अविलंब झपकना नेत्र प्रतिक्षेप क्रिया कहलाता है।

(iv) **जानु-झटक–** किसी व्यक्ति के स्टूल अथवा मेज पर बैठे होने पर यदि उसके घुटने के जानुफलक स्नायु पर थपथपाया जाए, तो उसकी टाँग स्वत: ही झटके के साथ उठकर आगे बढ़ जाती है।

(v) **लार स्त्रावण प्रतिवर्ती क्रिया–** वांछित भोजन के सामने आने पर लार का स्त्रावण होने लगना एक प्रतिवर्ती क्रिया है।

(vi) **अन्य उदाहरण–** नृत्य करना, वाद्य संगीत, उबासी (yawning) आना आदि प्रतिवर्ती क्रियाओं के कुछ सामान्य उदाहरण हैं।

प्रश्न 10. मनुष्य में स्वायत्त तंत्रिका क्या होता है? अनुकंपी तथा परानुकंपी तंत्रिका तंत्रों के कार्यों की तुलना कीजिए।

उत्तर– **मनुष्य में स्वायत्त तंत्रिका तंत्र–** इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 7 का अवलोकन कीजिए।

अनुकंपी तथा परानुकंपी तंत्रिका तंत्र के कार्यों की तुलना

क्र०सं०	अनुकंपी तंत्र	परानुकंपी तंत्र
1.	आँख की पुतली को फैलाता है।	आँख की पुतली को सिकोड़ता है।
2.	अश्रु ग्रंथियों से अश्रु स्रावण को प्रेरित करता है।	अश्रु स्रावण को रोकता है।
3.	लार ग्रंथियों से लार के स्रावण को कम करता है।	लार स्रावण को बढ़ाता है।
4.	यह श्वास दर, हृदय स्पंदन दर तथा रुधिर दाब को बढ़ाता है।	यह श्वास दर, हृदय स्पंदन दर तथा रुधिर दाब को कम करता है।
5.	आहारनाल में पेशियों में क्रमाकुंचन को कम करता है।	क्रमाकुंचन गति को बढ़ाता है।
6.	एड्रीनल, अंत:स्रावी ग्रंथि को प्रेरित करके सुरक्षा प्रतिक्रिया को बढ़ाता है।	इन्सुलिन के स्रावण को उत्तेजित करता है।
7.	यकृत तथा अन्याशय के स्रावण को कम करता है।	यकृत तथा अग्न्याशय के स्रावण को बढ़ाता है।
8.	मूत्राशय की पेशियों को शिथिल कर फैलाता है।	मूत्राशय की पेशियों को सिकोड़ता है।
9.	रोमों की पेशियों को सिकोड़कर रोमों को खड़ा करता है।	पेशियों को शिथिल कर रोमों को गिराता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. प्रमस्तिष्क या सेरीब्रम के कार्य लिखिए।

उत्तर– प्रमस्तिष्क या सेरीब्रम के निम्नलिखित कार्य होते हैं—

(i) यह फ्रण्टल पालियों द्वारा ऐच्छिक पेशियों पर नियंत्रण करता है।

(ii) यह पेराइटल पालि द्वारा हमारी त्वचा से संवेदना प्राप्त करता है और सर्दी, गर्मी, स्पर्श, दबाव व दर्द के प्रति अनुक्रियाओं को प्रेरित करता है।

(iii) यह ऑक्सीपिटल पालि द्वारा दृश्य संवेदनाएँ ग्रहण करता है।

(iv) इसकी टेम्पारेल पालि श्रवण में सहायक होती हैं।

प्रश्न 2. मस्तिष्क के चारों ओर पाई जाने वाली सुरक्षा झिल्लियों के नाम लिखिए।

उत्तर– मस्तिष्क के चारों ओर पाई जाने वाली झिल्लियों के नाम निम्नलिखित हैं—

(i) ड्यूरामेटर (ii) ऐसेक्नॉइड तथा (iii) पायामेटर

प्रश्न 3. ऐक्सॉन की संरचना एवं कार्य बताइए। माइलिन शीथ का क्या महत्व है?

उत्तर– कोशिका काय से न्यूरीलेमा में बंद लंबा मोटा तथा बेलनाकार प्रवर्ध निकलता है इसे एक्सॉन या अक्ष तंतु कहा जाता है। यह किसी ग्रंथि, पेशी या जानेंद्रिय से जुड़ा रहता है। यह प्राय: दूसरे सिरे पर शाखित होता है। एक्सॉन चारों ओर से तंत्रिकाच्छद से घिरा रहता है। एक्सॉन तथा न्यूरीलेमा के बीच एक वसीय पदार्थ होता है। यह रैन्वियर की नोड पर टूटा हुआ होता है। इस संपूर्ण आवरण को माइलिन शीथ (मज्जा आच्छद) कहते हैं। इन स्थानों से ही स्वेदनाएँ एक तंत्रिका कोशिका से दूसरी तंत्रिका कोशिका तक पहुँचती हैं।

प्रश्न 4. मेरु रज्जु किसे कहते हैं तथा इसके क्या कार्य हैं?

उत्तर– इसके लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या 6 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 5. प्रतिवर्ती क्रियाएँ क्या हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– ऐसी अनैच्छिक क्रियाएँ, जो किसी उत्तेजना के फलस्वरूप हमारे शरीर में स्वयं ही होती रहती हैं प्रतिवर्ती क्रियाएँ कहते हैं जैसे छींकना, खासना, आँख झपकना आदि। उदाहरणत: गर्म चीज को छूने से उसकी संवेदनाएँ (उद्दीपन) तंत्रिका द्वारा तुरंत मेरुरज्जु में पहुँचती हैं तथा इसके उत्तर में मेरुरज्जु का आदेश प्रेरक तंत्रिकाओं द्वारा कार्यकारी अंग की पेशियों में पहुँचता है और मांसपेशियाँ तुरंत हाथ को दूर हटा लेती है।

प्रश्न 6. प्रतिवर्ती क्रिया को परिभाषित कीजिए तथा ये कितने प्रकार की होती हैं?

उत्तर– **प्रतिवर्ती क्रिया की परिभाषा–** किसी उद्दीपन से होने वाली स्वचालित, जल्दी से और अनैच्छिक क्रिया को प्रतिवर्ती क्रिया कहते हैं। ये स्वभाव के आधार पर दो प्रकार की होती हैं—

(i) आबंधित या सरल प्रतिवर्ती क्रियाएँ

(ii) अनुबंधित या प्रतिबंधित क्रियाएँ

प्रश्न 7. प्रतिवर्ती चाप के विभिन्न घटकों को क्रमवार लिखिए।

उत्तर– प्रतिवर्ती चाप के विभिन्न घटक निम्नलिखित हैं—

(i) ग्राही अंग (ii) संवेदी न्यूरॉन तथा संवेदी तंत्रिका

(iii) सहबंधक न्यूरॉन (iv) चालक न्यूरॉन तथा चालक तंत्रिका

(v) कार्यकर अंग

प्रश्न 8. अनुकंपी तथा परानुकंपी तंत्र में एक मुख्य अंतर लिखिए।

उत्तर– अनुकंपी तंत्रिका तंत्र प्रतिकूल परिस्थिति में ऊर्जा व्यय करके शरीर की सुरक्षा प्रतिक्रियाओं को बढ़ाता है, जबकि परानुकंपी तंत्रिका तंत्र ऊर्जा संचय से संबंधित क्रियाओं को बढ़ाता है।

प्रश्न 9. प्रतिवर्ती क्रिया का क्या महत्व है?

उत्तर– प्रतिवर्ती क्रियाएँ रीढ़ रज्जु से नियंत्रित होती हैं। मस्तिष्क से इनका कोई संबंध नहीं होता अर्थात् मस्तिष्क का कार्यभार कम हो जाता है। क्रिया होने के बाद मस्तिष्क को इसकी सूचना दे दी जाती है।

प्रश्न 10. एक तंत्रिका कोशिका का नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर– तंत्रिका कोशिका का नामांकित चित्र के लिए विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 11. प्रतिवर्ती क्रिया पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– विस्तृत उत्तरीय प्रश्न संख्या 8 के अंतर्गत देखिए।

प्रश्न 12. मानव मस्तिष्क के तीन प्रमुख भाग होते हैं–

उत्तर– मानव मस्तिष्क के तीन प्रमुख भाग होते हैं—

अग्र, मध्य तथा पश्चमस्तिष्क। इनके आधार पर मस्तिष्क निम्नलिखित कार्य करता है—

(i) अग्र मस्तिष्क– यह गंध का ज्ञान कराता है।

(ii) मध्य मस्तिष्क– यह दृष्टि का ज्ञान कराता है।

(iii) पश्च मस्तिष्क– इसके दो प्रमुख भाग होते हैं—

- **(a) अनुमस्तिष्क–** चलना, दौड़ना, कूदना, आदि सभी कार्य तथा यह शरीर का सन्तुलन बनाने में भी सहायता करता है।
- **(b) मस्तिष्क पुच्छ–** यह भाग श्वसन, हृदय स्पंदन आदि पर नियंत्रण करता है।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. जंतुओं में प्रतिवर्ती क्रियाओं का अध्ययन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

21 पौधों एवं जंतुओं में जनन-परिवार नियोजन

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. अलैंगिक जनन किसे कहते हैं? जीवों में इसकी विभिन्न विधियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर– **अलैंगिक जनन –** अलैंगिक जनन के अन्तर्गत शरीर के किसी भाग से या इससे बनी हुई किसी विशेष संरचना से नए जीव का निर्माण होता है। इस प्रकार के जनन में युग्मकों या जनन इकाइयों का संलयन नहीं होता है। अलैंगिक जनन सामान्यत: निम्न श्रेणी के जन्तुओं में होता है। उच्च श्रेणी के जंतुओं में अलैंगिक जनन नहीं पाया जाता है।

जीवों में अलैंगिक जनन– जीवों में अलैंगिक जनन विभिन्न विधियों द्वारा होता है—

(i) एक कोशिकीय जंतुओं में अलैंगिक जनन–

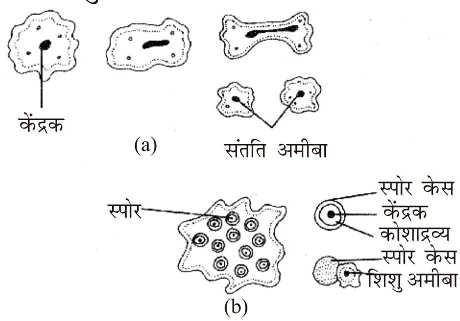

(a) *अमीबा* में द्विविखंडन द्वारा जनन
(b) *अमीबा* में बहुविखंडन

(a) विखंडन– एक कोशिकीय जीव समसूत्री विभाजन द्वारा दो या दो से अधिक जीवों में विभाजित हो जाता है। जैसे— अमीबा, पैरामीशियम, यूग्लीना आदि। जब जीव दो जंतुओं में बँटता है तो इसे द्विविखंडन कहते हैं।

(b) बहुविखंडन– बहुविखंडन में एक पैतृक कोशिका से दो-से अधिक संतति जीव बनते हैं। अमीबा व प्लाज्मोडियम (मलेरिया परजीवी) में बहुविखंडन पाया जाता है।

(c) बीजाणु जनन– अमीबा आदि में कभी-कभी केंद्रक कला जगह-जगह से खंडित हो जाती है। जिससे केंद्रक के क्रौमेटिन कण कोशिकाद्रव्य बिखर जाते हैं। क्रोमेटिन कणों के चारों ओर कोशाद्रव्य एकत्रित हो जाता है जिससे बीजाणु कहते हैं। अनुकूल परिस्थिति में इनके चारों ओर बना कठोर आवरण फट जाता है और बीजाणु मुक्त होकर जीव का निर्माण करते हैं।

(ii) बहुकोशिकीय जंतुओं में अलैंगिक जनन–

(a) कलिकात्पादन– सरल बहुकोशिक जीवों (साइकन, हाइड्रा आदि) में पाया जाता है। इसमें वयस्क जंतु के शरीर पर एक छोटा-सा उभार बनता है जो धीरे-धीरे बड़ा होकर एक पूर्ण विकसित जीव बन जाता है।

(b) पुनरुद्भवन– पुनरुद्भवन में शरीर से टूटकर अलग हुए सभी टुकड़े नए जंतुओं में विकसित हो जाते हैं। पुनरुद्भवन निम्नकोटि के अकशेरुकी जंतुओं जैसे कुछ प्रोटोजोअन्स, सीलेन्ट्रेन्ट्स तथा कुछ चपटे कृमियों तथा सितारा मछली में पाया जाता है।

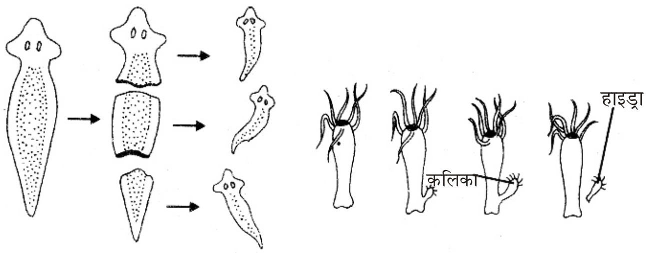

(a) (b)
(a) प्लेनेरिया में पुनरुद्भवन, (b) हाइड्रा में कलिकाओं के द्वारा जनन

प्रश्न 2. जनन क्या है? ये कितने प्रकार का होता है? पौधों तथा जंतुओं में अलैंगिक जनन की विभिन्न क्रियाओं का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

उत्तर– जनन– सभी जीवधारियों द्वारा अपने वंश को चलाए रखने के लिए, अपने समान संतान उत्पन्न करने की क्षमता को जनन कहते हैं।

सामान्यत: जनन दो प्रकार का होता है—

(i) अलैंगिक जनन

(ii) लैंगिक जनन

पौधों में अलैंगिक जनन– अलैंगिक जनन में दैहिक कोशिकाओं से नए जीव उत्पन्न होते हैं तथा जनन इकाइयाँ या तो बनती ही नहीं अथवा बिना अर्धसूत्री विभाजिन से बनती है। पादपों में अलैंगिक जनन की निम्नलिखित विधियाँ पाई जाती हैं—

(i) विखंडन– यह एककोशिकीय जीवों में पाया जाता है। इसमें कोशिका सूत्री या असूत्री विभाजन द्वारा दो या अधिक कोशिकाओं में बँट जाती है और संतति कोशिकाएँ नया जीव बनाती हैं।

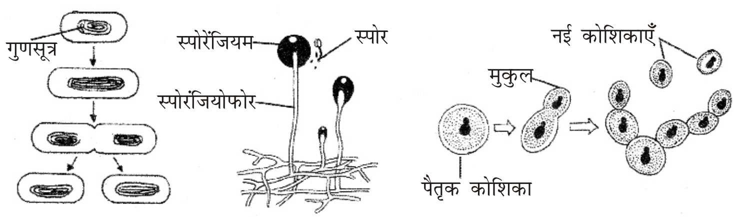

(a) (b) (c)
(a) जीवाणु में विखंडन, (b) कवक में बीजाणु निर्माण, (c) यीस्ट कोशिका में मुकुलन

जीवाणुओं व प्रोटोजोआ (अमीबा, यूग्लीना) में विखंडन द्वारा जनन होता है। मलेरिया परजीवी (प्लाज्मोडियम) जैसे एकाकोशिक प्रोटोजोआ में जनन बहुखंडन विधि से होता है।

(ii) बीजाणु निर्माण – कम विकसित पादपों में दृढ़ आवरण वाली विशेष एककोशिक रचनाएँ बनती हैं जिन्हें बीजाणु कहते हैं। ये प्रतिकूल वातावरण में सुरक्षित रहते हैं और अनुकूल परिस्थितियाँ आने पर अंकुरित होकर नए पादप बनाते हैं। कवक तथा शैवाल में बीजाणु निर्माण द्वारा जनन होता है।

(iii) कलिकोत्पादन – यीस्ट कोशिका से छोटे कलिका–सदृश उभार या मुकुल बनते हैं जो कोशिका से अलग होकर नई यीस्ट कोशिकाएँ बनाते हैं। यीस्ट में ये मुकुल मातृ कोशिका से अलग हुए बिना नए बिना मुकुल बना लेते हैं जिससे एक ही यीस्ट कोशिका पर मुकुलों (कलिकाओं) की श्रृंखला बन जाती है।

(iv) खंडन– सरल संरचना वाले बहुकोशिक पादपों जैसे स्पाइरोगाइरा का फिलामेंट छोटे–छोटे टुकड़ों में टूट जाता है और प्रत्येक खंड नए तंतु में विकसित हो जाता है।

जंतुओं में अलैंगिक जनन– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 1 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. कायिक प्रवर्धन क्या होता है? पौधों में इसकी विधियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर- कायिक प्रवर्धन — कायिक प्रवर्धन या प्रजनन अलैंगिक जनन की विधि है। इस विधि में पादप शरीर के किसी भी कायिक भाग (पुष्प को छोड़कर) से नए पौधे का विकास होता है। यह मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है—

(i) प्राकृतिक (ii) कृत्रिम

प्राकृतिक कायिक प्रवर्धन– पौधों में स्वत: होने वाले कायिक प्रवर्धन को प्राकृतिक कायिक प्रवर्धन कहते हैं। पौधे के निम्नलिखित भागों से कायिक प्रवर्धन होता है—

(i) जड़ों द्वारा– डहेलिया, सतावर तथा शकरकंद की जड़ें भोजन इकट्ठा कर फूल जाती हैं और सुप्तावस्था में चली जाती हैं। उन पर लगी अपस्थानिक कलियाँ अगले जननकाल में नए पौधों को जन्म देती हैं।

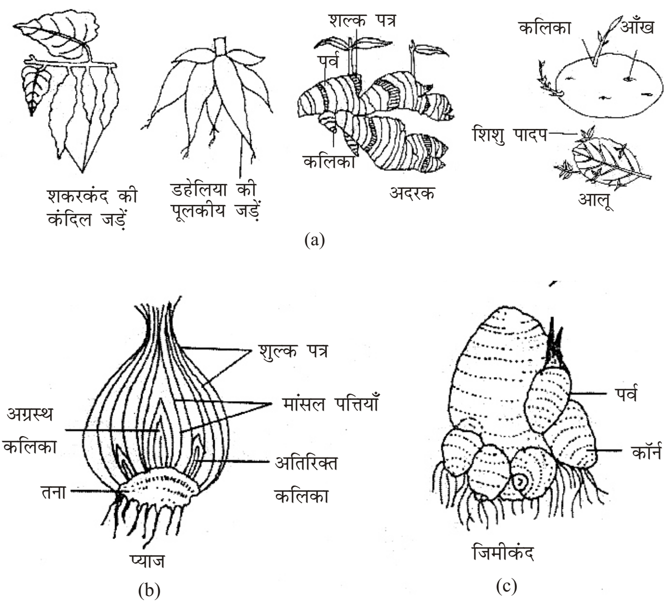

कायिक जनन की विभिन्न विधियाँ: (a) जड़ द्वारा, (b) तने द्वारा, (c) पत्र कलिकाओं द्वारा

(ii) तनों द्वारा– अदरक, हल्दी, आलू, अरबी, प्याज व लहसुन के भूमिगत तनों, दूबघास, ब्राह्मी, पुदीना, गुलदाउदी आदि अर्धवायवीय तनों तथा गन्ना, अमरबेल, मनीप्लांट के वायवीय तनों से नए पौधे उगते हैं।

(iii) **पत्तियों द्वारा–** बिग्नोनिया तथा ब्रायोफलिम या अजूबा की पत्तियों के किनारों पर अपस्थनिक कलिकाएँ व जड़ें उग आती हैं और प्रत्येक कली एक नए पौधे में विकसित होती है।

(iv) **पत्र प्रकलिकाओं द्वारा–** कुछ पौधों में कलिकाओं के समूह इकट्ठे होकर **प्रकलिकाएँ** या **बुलबिलस** बनाते हैं जो मातृ पौधे से अलग होकर नए पौधे में विकसित हो जाती हैं।

प्रश्न 4. पौधों में कायिक प्रजनन की विधियों का उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 5. पौधों में कृत्रिम कायिक जनन की विभिन्न विधियों का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– अच्छी किस्म के पौधे प्राप्त करने के लिए पादप वैज्ञानिक कटिंग, लेयरिंग, ग्राफ्टिंग व गूटी द्वारा एक ही पौधे से कई पौधे बनाते हैं। जिनका वर्णन निम्नलिखित हैं—

(i) **कलम लगाना–** गुलाब, गुड़हल, अंगूर आदि पौधे इस विधि द्वारा उगाए जाते हैं। इस विधि में विकसित परिपक्व पौधों की शाखा को काटकर भूमि में या गमले में गाड़ दिया जाता है। शाखा की भूमिगत भाग की पर्व संधियों से अपस्थानिक जड़े निकलती हैं तथा शाखा पर उपस्थित वक्षस्थ कलिकाएँ वृद्धि करके नए पौधे का निर्माण करती हैं। कलम को खड़ी या पड़ी अवस्था में लगाया जा सकता है।

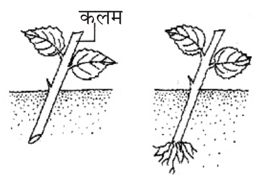

(ii) **दाब लगाना –** चमेली, स्ट्राबेरी, नींबू आदि पौधे में कलम सफलतापूर्वक नहीं बन पाती क्योंकि इनकी शाखाएँ कठोर होती हैं। इस विधि में पौधे पर लगी हुई शाखा को छीलकर भूमि में दबा दिया जाता है। कुछ दिनों बाद शाखा के भूमि में दबे हुए भाग से अपस्थानिक जड़ें निकलती हैं। अब इस शाखा को पौधे से अलग करके मिट्टी में लगा देते हैं इससे नया पौधा बन जाता है।

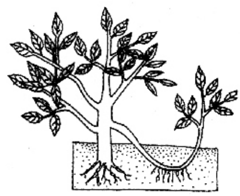

(iii) **कशारोपण–** इस विधि में घटिया किस्म के पौधे को तिरछा काटकर कलम की भाँति आकार बना देते हैं। इसे स्कंध कहते हैं। अब इच्छित जाति के पौधे की कलम को तिरछे भाग पर मिलान करके बाँध देते हैं तथा संधि स्थल पर मोम आदि का लेप करके छोड़ देते हैं कुछ दिन बाद स्कंध तथा कलम जुड़ जाते हैं तथा इच्छित जाति वाले पौधे के गुणों वाले नए पौधे का विकास हो जाता है।

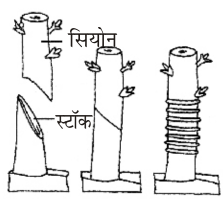

(iv) **कलिका रोपण–** इस विधि में स्कंध पर गहराई तक तिरछी काट लगाते हैं। अब इस काट में अच्छी जाति के पौधे से कलिका निकालकर सावधानीपूर्वक फँसा दी जाती है। इसे चारों ओर से बाँधकर मोम का लेप चढ़ा देते हैं। कुछ दिनों पश्चात् कलिका वृद्धि करने लगती है।

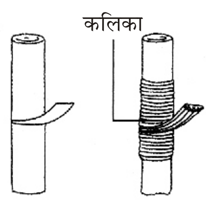

प्रश्न 6. पुष्प का नामांकित चित्र बनाइए और इसके विभिन्न चक्रों के कार्यों को लिखिए।

उत्तर– **पुष्प तथा इसके विभिन्न चक्रों के कार्य–** पुष्पी पौधों में लैंगिक जनन के मुख्य अंग पुष्प होते हैं क्योंकि नर तथा मादा जननांग (पुमंग व जायांग) पौधों में ही स्थित होते हैं जो एक पुष्पीय कलिका से बनते हैं। अधिकतर पौधों में पुष्प चार प्रकार की रूपांतरित पत्तियों का बना होता है जो पुष्पवृंत के फूले हुए सिरे (पुष्पासन) पर चक्रों के रूप में क्रमश: बाहर से अंदर की ओर (बाह्यदल, दलपुँज, पुमंग तथा जायांग के रूप में) विन्यासित रहती हैं—

(i) बाह्यदल पुँज– पुष्प का सबसे बाहरी चक्र बाह्यदलपुँज कहलाता है। यह प्राय: हरे रंग का होता है। इसके एक भाग को बाह्यदल या बाह्यदल पत्र कहते हैं।

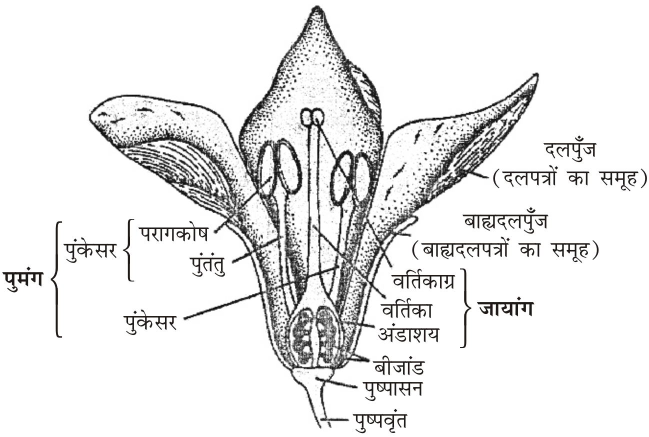

एक पूर्ण पुष्प की संरचना

(ii) दल पुँज– बाह्यदलपुँज के अंदर पुष्प का यह दूसरा चक्र होता है। यह प्राय: 4–6 अथवा अनेक दलों का बना होता है जो प्राय: रंगीन या श्वेत होते हैं। इनका मुख्य कार्य परागण के लिए कीटों को आकर्षित करना होता है।

(iii) पुमंग– यह पुष्प का तीसरा चक्र होता है और पुंकेसरों का बना होता है। ये पुष्प के **नर जननांग** हैं। प्रत्येक पुंकेसर के निम्नलिखित तीन भाग होते हैं—

(a) पुंतंतु– जो एक डंठल जैसी रचना होती है।

(b) परागकोष– जो पुंतंतु के ऊपर एक फूली हुई संरचना होती है तथा

(c) योजि– जो परागकोष को पुंतंतु से जोड़े रहती है।

प्रत्येक परागकोष के परागपुटों में असंख्या सूक्ष्म संरचनाएँ होती हैं जिन्हें परागकण कहते हैं।

(iv) जायांग– पुष्प के केंद्र में स्थित पुष्प का यह चौथा चक्र होता है। ये पुष्प के मादा जननांग है। प्रत्येक जायांग एक या अनेक अंडपो (स्त्रीकेसरों) का बना होता है। प्रत्येक अंडप के तीन भाग होते हैं—

(a) अंडाशय– पुष्पासन से लगा चौड़ा व फूला हुआ भाग अंडाशय कहलाता है। इसमें अनेक छोटी–छोटी संरचनाएँ पाई जाती हैं जिन्हें बीजांड कहते हैं।

प्रत्येक बीजांड अंडाशय की भीतरी दीवार से एक छोटे–से डंठल द्वारा लगा रहता है जिसे बीजांडवृंत कहते हैं। जिस स्थान पर बीजांड बीजांडवृंत से जुड़ता है, उसे नाभिका या हाइलम कहते हैं। बीजांड के अंदर का अधिकांश

भाग बीजांडकाय का बना होता है। यह चारों ओर से दो पर्तों से ढ़का रहता है। बीजांड के अग्र भाग में एक छिद्र-सा रह जाता है। यह बीजांडद्वार कहलाता है। बीजांडद्वार की ओर बीजांडकाय के भीतर स्थित एक थैलेनुमा संरचना होती है जिसे भ्रूणकोष कहते हैं। भ्रूणकोष के अंदर बीजांडद्वार की ओर स्थित तीन विशेष कोशिकाएँ होती हैं, जिनमें से दो सहायक कोशिकाएँ व एक अंड कोशिका कहलाती हैं। ध्यान रखिए, अंड कोशिका ही मादा युग्मक का कार्य करती है। भ्रूणकोष के निभाग वाले सिरे पर तीन प्रतिमुख कोशिकाएँ एवं मध्य में दो केंद्रक (चित्र C) होते हैं जो संयुक्त होकर एक द्वितीयक केंद्रक बनाते हैं।

(b) वर्तिका – यह अंडाशय के ऊपर वाला लंबा व पतला भाग होता है।

(c) वर्तिकाग्र – वर्तिका का सबसे ऊपर का स्वतंत्र तथा चिपचिपा भाग वर्तिकाग्र कहलाता है।

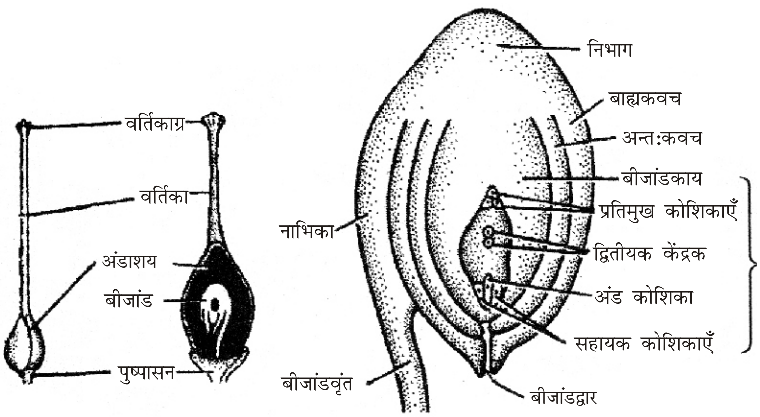

(a) एक अंडप के विभिन्न भाग (b) अंडाशय के अंदर उपस्थित एक बीजांड तथा (c) एक बीजांड की आंतरिक संरचना

चित्र- (a) एक अंडप के विभिन्न भाग (b) अंडाशय के अंदर उपस्थित एक बीजांड तथा (c) एक बीजांड की आंतरिक संरचना

ऐसे पुष्प, जिनमें पुमंग और जायांग दोनों होते हैं, द्विलंगी पुष्प कहलाते हैं। इसके विपरीत, जिन पुष्पों में या तो पुमंग होता है या जायांग होता है, वे एकलिंगी कहलाते हैं। ऐसे पौधे, जिन पर नर व मादा दोनों प्रकार के पुष्प हों, उभयलिंगाश्रयी पौधे कहलाते हैं, परंतु वे पौधे, जिन पर नर पुष्प व मादा पुष्प अलग-अलग पौधों पर होते हैं, एकलिंगाश्रयी पौधे कहलाते हैं।

प्रश्न 7. पर-परागण किसे कहते हैं? पर-परागण की विभिन्न विधियों के नाम लिखिए। परागकण के अंकुरण का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर- पर-परागण- एक पुष्प के परागकणों का अपनी ही प्रजाति के किसी अन्य पौधे (जिसकी जीन संरचना भिन्न होती है।) के पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँचने की क्रिया को पर-परागण कहा जाता है।

पर-परागण की विभिन्न विधियाँ निम्नलिखित हैं–

(i) कीट-परागण (ii) वायु-परागण

(iii) जन्तु-परागण

परागकण का अंकुरण– वर्तिकाग्र से एक तरल पदार्थ स्रावित होता है। इस तरल पदार्थ का अवशोषण करके परागकण फूल जाता है। अन्त: चोल जनन छिद्रों द्वारा परागनली के रूप में बाहर आ जाता है। इस प्रकार परागनली के अंदर जनन केंद्रक और वर्धी केंद्रक आ जाते हैं।

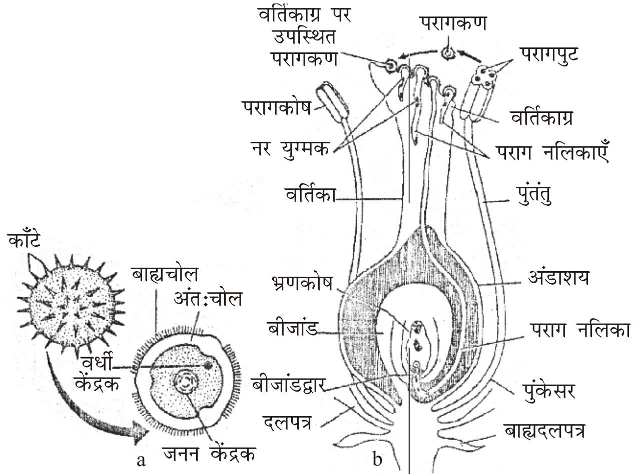

परागकण तथा उसकी आंतरिक संरचना तथा b. परागकण, पराग नलिका का बनना तथा एक पराग नलिका का बीजांड के अंदर प्रवेश

पराग नलिका वर्तिकाग्र के ऊतक में होकर वर्तिका में पहुँचती है। यह दोनों नर युग्मकों तथा अपने सिरे पर उपस्थित नलिका केंद्रक के साथ वर्तिका में नीचे आ जाती है और बढ़ती ही रहती है। इस प्रकार पराग नलिका वर्तिका में से होती हुई अंडाशय में पहुँचती है और बीजांड में प्रवेश कर नर युग्मकों को भ्रूणकोष के जीवद्रव्य में मुक्त कर देती है।

प्रश्न 8. परागकण को परिभाषित कीजिए। पर–परागण की विभिन्न विधियों तथा महत्व का वर्णन कीजिए।

उत्तर– परागण की परिभाषा– परागकोषों में परागकण बनने के बाद आवश्यक है कि पराग्कण के नर केंद्रक मादायुग्मक (अंड) तक पहुँचे। पुष्प के परागकोष से परागकणों के उसी पुष्प अथवा दूसरे पौधे के किसी पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँचने की क्रिया को परागण कहते हैं।

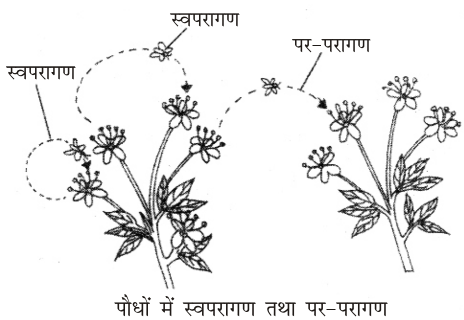

पौधों में स्वपरागण तथा पर–परागण

परागण के प्रकार– परागण की क्रिया दो प्रकार से होती है—

(i) स्वपरागण में एक पुष्प के परागकण उसी पुष्प के या उसी पौधे के अन्य पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँचते हैं। **उदाहरणार्थ–** सदाबहार, पैंजी, गुलमेंहदी, मूँगफली व खट्टी–बूटी।

(ii) पर-परागण में एक पुष्प के पराकगण उसी जाति के किसी दूसरे पौधे पर लगे पुष्प के वर्तिकाग्र पर पहुँचते हैं। पर-परागण के लिए परागकणों को अन्य पुष्पों पर पहुँचाने के लिए किसी न किसी साधन की आवश्यकता होती है; जैसे— कीट, वायु, जल, पक्षी अथवा जंतु।

उदाहरणार्थ– सूरजमुखी, गेंदा, साल्विया आदि में कीट परागण होता है। मक्का, गेहूँ, धान व सभी घास में वायु परागण पाया जाता है। आम, बबूल, सेमल आदि में गिलहरी व चिड़ियों द्वारा, कदम व कचनार में चमगादड़, आर्किड्स में घोंघों द्वारा परागण होता है।

पर-परागण की विभिन्न विधियाँ तथा महत्व– परपरागण दो पौधों पर उपस्थित पुष्पों के बीच होता है; अत: इसे संपन्न करने के लिए अर्थात् परागकणों को एक पुष्प से दूसरे पौधे पर उपस्थित पुष्प के वर्तिकाग्र तक पहुँचाने के लिए किसी-न-किसी माध्य साधन या कारक की आवश्यकता होती है। परपरागण के ये कारक, जिन्हें कर्मक भी कहते हैं, सामान्यत: वायु, जल तथा **जंतु** होते हैं। इन कर्मकों के अनुसार, इस प्रकार परपरागण की तीन प्रमुख विधियाँ मानी जाती हैं। इनके अतिरिक्त पादप प्रजनक भी कृत्रिम विधियों द्वारा पौधों में परपरागण करते हैं।

(i) वायु परागण– अनेक पौधों में परपरागण वायु के द्वारा होता है। वायु के साथ, धूल के कणों की तरह, परागकण पुष्पों से उड़ाए जाते रहते हैं और दूसरे पुष्पों तक पहुँचते रहते हैं। इस प्रकार के परागण के लिए पुष्प, उनके अवयव तथा परागकण विशेष प्रकार से अनुकूलित होते हैं—

(a) वायु परागित पुष्प प्राय: अनाकर्षक तथा छोटे होते हैं। इनमें सुंगध, मधु इत्यादि नहीं होते हैं।

(b) पुष्प सामान्यत: पतझड़ के समय निकलते हैं। जब पौधे नग्न होते हैं और पुष्प तथा उनके जनन अंग आसानी से वायु के सपंर्क में आ सकें।

(c) पुष्प अधिकतर समूह में विशेषकर मंजरी या कैटकिन पुष्पक्रम में विन्यासित होते हैं।

(d) वायु परागित पुष्पों में पुंकेसर के पुंतंतु प्राय: लंबे होते हैं ताकि परागकण वायु से ही पुष्प के बाहर निकाले जा सकें। पुंतंतु तथा परागकोषों का जुड़ना प्राय: मुक्तदोली होता है।

(e) परागकोषों में परागकणों की संख्या अत्यधिक होती है क्योंकि वायु द्वारा परागण में अनेक परागकण तो व्यर्थ हो जाते हैं। परागकण भी शुष्क, छोटे, हल्के तथा धूल के कणों की तरह होते हैं ताकि वायु में आसानी से तैर सकें।

(f) वायु परागित पुष्पों में मादा अंग (जायांग) अनेक प्रकार से अनुकूलित होते हैं। **उदाहरणार्थ–** वर्तिका प्राय: लंबी होती है। यह पुष्प के बाहर निकली रहती है। अनेक बार वर्तिका व वर्तिकाग्र अत्यधिक शाखित, पंखदरि, रोमायुक्त या चिपचिपा होता है।

(ii) जंतु परागण – अनेक जंतु, विशेषकर कीट; परपरागण के सबसे महत्वपूर्ण साधन हैं। परपरागण के जंतु कर्मकों के अनुसार जंतु परागण को कई प्रकार का माना जाता है—

(a) कीट परागण – आकर्षक तथा रंग-बिरंगे पुष्प प्राय: कीटपरागित ही होते हैं। इन पुष्पों में निम्नलिखित अनुकूलन प्राप्त किए जा सकते हैं—

- **आकर्षण–** आकृति, रंग, अवयवों की अनियमितता, परिमाप तथा छोटे पुष्पों का बड़े समूह या पुष्पक्रम के रूप में एकत्रित होना आदि विशेषताएँ; पुष्पों में आकर्षण तथा दिखावटीपन के लिए लिए उत्तरदायी होती हैं।
- **दलों** का रंग; जैसे— लाल, नीला, पीला तथा अन्य रंगों को विभिन्न प्रकार के कीट पसंद करते हैं। कभी-कभी; जैसे— म्यूसैण्डा में पाँच में से एक बाह्यदल काफी बड़ा तथा रंगीन होता है। सहपत्र रंगीन होकर स्पेथ बना लेते हैं। **उदाहरणार्थ**— लाल पत्ता, बोगेनविलिया, केला आदि में।
- पुष्प का अनियमित तथा बड़ा आकार, छोटे परिमाप के पुष्पों का समूहों (पुष्पक्रमों) में गुँथा होना, उनको आकर्षक बना देता है; जैसे— मुंडक, मंजरी, समुंड आदि प्रकार के पुष्पक्रमों में।
- **मकरंद–** अनेक पुष्पों में मधु या मकरंद कीटों के लिए महत्वपूर्ण आकर्षण है।
- **सुंगध–** अनेक पुष्प, जो रात्रि को खिलते हैं, अत्यधिक सुंगंध फैलाते हैं और कीटों द्वारा परागित होते हैं। ऐसे पुष्प रंग में तो प्राय: सफेद ही होते हैं।
- **खाद्य पदार्थ–** कुछ पुष्पों का पराग (परागकण) कुछ कीटों का खाद्य होता है; अत: ऐसे कीट इन परागकणों को खाने के लिए इन पुष्पों का निरीक्षण करते हैं। कुछ पुष्पों; जैसे— कुछ ऑर्किड्स; में पुष्प में से मधु के स्थान पर एक खाद्य रस स्रावित होता है। इनमें मकरंद ग्रंथियाँ नहीं होती हैं।
- **सुरक्षा–** कुट कीट बड़े पुष्पों में अथवा पुष्पक्रमों में बैठकर अपनी सुरक्षा धूप, वर्षा, सर्दी आदि से करते हैं तो कुछ अपने अंडे देने के लिए पुष्प या पुष्पक्रम के अनेक भागों को अपना निवास बनाते हैं।

(b) पक्षी परागण– पक्षी परागण थोड़े-से पौधों में ही होता है। छोटी–छोटी चिड़ियाँ; जैसे हमिंग बर्ड, हनी थ्रशेस आदि शहद के लिए बिगनोनिया, स्ट्रेलिटजिया जैसे पौधों के पुष्पों पर आती हैं

(c) जतुका परागण– बोहिनिया, कदंब, सेमल आदि के वृक्षों में चमगादड़ों के द्वारा परागण किए जाने के अनेक प्रमाण दिए गए हैं।

(d) गैस्ट्रोपोड परागण – घोंघे आदि भी जल के आस-पास के पौधों पर आते-जाते रहते हैं। ऐसा समझा जाता है कि इन पौधों के पुष्पों में परागण के लिए इनसे सहायता मिलती है।

(e) अन्य जंतुओं द्वारा परागण– उपर्युक्त जंतुओं के अतिरिक्त कुछ अन्य जंतुओं जैसे गिलहरी, हाथी आदि द्वारा परपरागण में सहायता प्रदान की जाती है।

- **जल परागण –** जलीय पौधों, जिनके पुष्प जल के ऊपर खिले रहते हैं, में बहुधा कीटों या अन्य साधनों द्वारा परपरागण हो जाता है, किंतु अनेक जलीय पौधों के पुष्पों में जो जल के अंदर निमग्न होते हैं परागण की क्रिया के संपादन के लिए जल को साधन के रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

- **कृत्रिम परागण–** अनेक पौधों में मनुष्य द्वारा कृत्रिम परागण किया जाता है। पादप प्रजनन के लिए अनेक स्थानों पर पादप प्रजनक परपरागण कराते हैं। अधिक पैदावार, पौधे की अधिक जनन शक्ति, रोग निरोधक जातियाँ उत्पन्न करने तथा स्वस्थ बीज आदि उत्पन्न करने के लिए आजकल विश्व-भर में अनेकानेक स्थानों पर उन्नतिशील प्रजातियाँ उत्पन्न की जा रही हैं।

प्रश्न 9. पुष्पी पौधों में परागण से प्रारंभ करके बीज बनने तक जनन की प्रक्रियाओं को समझाइए।

उत्तर– लैंगिक जनन के लिए पुष्पी पादप के पुष्प में निम्नलिखित प्रक्रियाएँ होनी आवश्यक है—

(i) नर व मादा युग्मकों का इनके युग्मकोद्भिद में निर्माण।

(ii) परागण के द्वारा नर युग्मकोद्भिद का मादा के पास पहुँचना।

(iii) नर व मादा युग्मक का संलयन—निषेचन।

(iv) फल व बीज का परिवर्द्धन।

जीवन चक्र को पूरा करने के लिए नर युग्मक मादा युग्मक के पास पहुँचता है तथा उसके साथ संलयित हो जाता है। इसी क्रिया के बाद जीत ताम्रफल का निर्माण होता है।

नर युग्मक, नर युग्मकोद्भिद् तथा मादा युग्मक, मादा युग्मकोद्भिद पर बनते हैं।

पुष्पी पौधों में परागकण ही नर युग्मकोद्भिद हैं, जो संपूर्ण रूप में परागकोष के स्फुटन के बाद, किसी प्रकार, उसी पुष्प अथवा उसी जाति के अन्य पुष्प के जायांग के वर्तिकाग्र पर पहुँचकर परागण करते हैं।

जब तक परागकण या लघुबीजाणु परागपुट के अंदर ही होता है इसका एकमात्र केंद्रक साधारण विभाजन से विभाजित होकर एक नलिका केंद्रक तथा दूसरा जनन केंद्रक बनाता है। अब जीवद्रव्य सहित दूसरे केंद्रक को ही जनन कोशिका भी कहते हैं।

पराग नलिका वर्तिकाग्र के ऊतक में होकर वर्तिका में पहुँचती है। यह दोनों नर युग्मकों तथा अपने सिरे पर उपस्थित नलिका केंद्रक के साथ वर्तिका में नीचे की ओर बढ़ती ही रहती है। इस प्रकार पराग नलिका वर्तिका में से होती हुई अंडाशय में पहुँचती है और बीजांड में प्रवेश कर नर युग्मकों को भ्रूणकोष के जीवद्रव्य में मुक्त कर देती है।

बीजांड भ्रूणकोष में प्रवेश करने के बाद पराग-नलिका का शीर्ष गल जाता है तथा इसमें उपस्थित केंद्रक भी लुप्त हो जाता है। दोनों नर युग्मक भ्रूणकोष के केंद्रक में आ जाते हैं। इस प्रकार मुख्य निषेचन क्रिया समाप्त हो जाती है और युग्मनज का निर्माण होता है। जिससे भ्रूण बनता है। दूसरा नर युग्मक, दोनों ध्रुवीय केंद्रकों के साथ मिलकर त्रिगुणित केंद्रक बनाता है जिसे प्राथमिक भ्रूणपोष केंद्रक कहते हैं। ये बार-बार विभाजित होकर भ्रूणपोष बनाता है जो भ्रूण के परिवर्धन के समय उसे पोषण प्रदान करता है।

निषेचन के पश्चात् बीजांड के भीतर युग्मनज से भ्रूण का तथा त्रिगुणित केंद्रक से भ्रूणपोष का निर्माण होता है। बीजांडों का आकार बढ़ जाता है। अध्यावरण सख्त होकर बीजावरण बनाते हैं। जिस स्थान पर बीजांड बीजांडवृंत से जुड़ता है, वहाँ एक चिह्न बन जाता है जो वृंतक कहलाता है। भोज्य पदार्थ या तो बीजपत्र में, या भ्रूणपोष में एकत्र हो जाते हैं। पानी की मात्रा धीरे-धीरे कम हो जाती है। कोमल बीजांड अब कड़ी व शुष्क रचना में बदल जाता है। धीरे-धीरे बीजांड के अंदर की जैविक क्रियाएँ रुक जाती हैं तथा भ्रूण सुषुप्तावस्था में पहुँच जाता है। अत: बीजांड बीजावरण से घिरे, भोजन संचित किए हुए तथा सुषुप्त भ्रूण को अपने अंदर समेटे होते हैं, इस रचना को बीज कहते हैं।

प्रश्न 10. द्विनिषेचन एवं निषेचनोपरांत पुष्प में होने वाले परिवर्तनों को समझाइए।

उत्तर– दूसरे नर युग्मक द्वितीयक केंद्रक से संयोग करके एक त्रिगुणित भ्रूणपोष कोशिका बनाता है। इस प्रकार निषेचन क्रिया दो बार होती है एक बार भ्रूण बनने में तथा दूसरी बार भ्रूणपोष बनने में। इसके उपरांत पुष्प में कई परिवर्तन होते हैं।

निषेचन के पश्चात् पुष्प में होने वाले परिवर्तन– पुष्प में निषेचन के पश्चात् अनेक परिवर्तन होते हैं। इसके फलस्वरूप पुष्प के अंडाशय से फल का तथा बीजांडों से बीजों का निर्माण होता है। पुष्प में निम्नलिखित प्रमुख परिवर्तन होते है—

(i) **बाह्यदल–** प्राय: मुरझाकर गिर जाते हैं। टमाटर, बैंगन, रसभरी आदि में फलों में लगे रहते हैं।

(ii) **दल–** प्राय: मुरझाकर झड़ जाते हैं।

(iii) **पुंकेसर–** सूखकर गिर जाते हैं।

(iv) **वतिकाग्र–** सूखकर गिर जाते हैं।

(v) **वर्तिका–** मुरझा जाते हैं।

(vi) **अंडाशय–** फल में बदल जाता है।

(vii) **बीजांड–** बीज में बदल जाता है।

(viii) **अंडाशय की भित्ति–** फलभित्ति बनाती है।

(ix) **बीजांड–** इसमें निम्नलिखित परिवर्तन होने से बीज का निर्माण होता है—

(a) **अंडकोशिका–** भ्रूण बनाती है।

(b) **सहायक कोशिकाएँ–** नष्ट हो जाती हैं।

(c) **प्रतिमुख कोशिकाएँ–** नष्ट हो जाती हैं।

(d) **द्वितीयक केंद्रक–** भ्रूणकोष बनाता है।

इस प्रकार अंत में, फल तथा इसके अंदर एक या अनेक भ्रूणपोषी बीज होते हैं।

प्रश्न 11. निषेचन किसे कहते है? द्विनिषेचन एवं निषेचनोपरांत पुष्प में होने वाले परिवर्तनों को समझाइए।

उत्तर– **निषेचन–** बीजांड में प्रवेश करने के बाद पराग नलिका नर युग्मकों को मुक्त कर देती है। इनमें से एक युग्मक अंड कोशिका से संलयित हो जाता है। यह क्रिया निषेचन कहलाती है। निषेचन क्रिया के पश्चात युग्मनज का निर्माण होता है जो आगे जाकर भ्रूण में परिवर्तित हो जाता है।

द्विनिषेचन एवं निषेचनोपरांत पुष्प में होने वाले परिवर्तन– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 10 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 12. पुष्पों वाले पौधों में निषेचन क्रिया का सचित्र वर्णन कीजिए। द्विनिषेचन तथा त्रिक् संलयन समझाइए।

उत्तर– **पुष्पों वाले पौधों में निषेचन–** बीजांड के भ्रूणकोष में प्रवेश करने के बाद पराग नलिका का शीर्ष गल जाता है तथा इसमें उपस्थि नलिका केंद्रक भी लुप्त हो जाता है। दोनों नर युग्मक अब भ्रूणकोष के जीवद्रव्य में मुक्त हो जाते हैं और इनमें से एक अंड–कोशिका में घुसकर उसके केंद्रक के साथ संलयित हो जाता है। इस प्रकार मुख्य निषेचन क्रिया समाप्त हो जाती है। इसमें युग्मनज का निर्माण होता है। यह युग्मनज आगे चलकर भ्रूण बनाता है। दूसरा नर युग्मक, दोनों ध्रुवीय केंद्रकों (या द्विगुणित केंद्रक) के साथ संलयन करके एक त्रिगुणित केंद्रक बनाता है जिसे प्राथमिक भ्रूणपोष केंद्रक कहते हैं। इस क्रिया को त्रिक् संलयन कहते हैं।

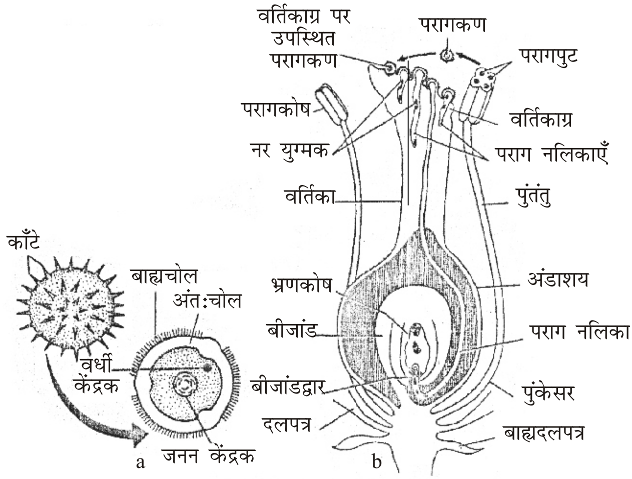

परागकण तथा उसकी आंतरिक संरचना तथा b. परागकण, पराग नलिका का बनना तथा एक पराग नलिका का बीजांड के अंदर प्रवेश

इस प्रकार द्वितीय केंद्रक से संयोग करके त्रिगुणित $[(n+n)+n)]$ भ्रूणपोष कोशिका बनने की क्रिया में निषेचन क्रिया दो बार होती है। एक बार भ्रूण बनने में तथा दूसरी बार भ्रूणपोष बनने में। इसे द्विनेषचन कहते हैं।

प्राथमिक भ्रूणपोष केंद्रक बार-बार विभाजित हो जाता है तथा इसके फलस्वरूप सभी केंद्रकों के चारों ओर भित्तियाँ बन जाती हैं। इस प्रकार जो ऊतक बनता है उसे भ्रूणपोष कहते हैं। भ्रूणपोष में भोज्य-पदार्थ एकत्रित हो जाते हैं। यह भ्रूण के परिवर्धन के समय उसे पोषण प्रदान करता है।

प्रश्न 13. जंतुओं में लैंगिक जनन की प्रमुख क्रियाएँ समझाइए।

उत्तर- जंतुओं में लैंगिक जनन – जब किसी जीव अथवा एक जीव जाति के दो सदस्यों द्वारा उत्पन्न दो युग्मकों के संलयन से बने युग्मनज से संतान का जन्म होता है, तो यह जनन लैंगिक जनन कहलाता है। इस संतान में दोनों युग्मकों के लक्षणों का मिश्रण होता है, अत: लैंगिक जनन के फलस्वरूप अनेक विभिन्नताओं की संभावना रहती है।

जनन की इस महत्वपूर्ण क्रिया में यह आवश्यक है कि दो विशेष प्रकार की कोशिकाएँ, जिन्हें युग्मक कहते हैं, परस्पर संयुक्त हों। ये युग्मक प्राय: भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार के होते हैं और इनमें से एक नर युग्मक तथा दूसरा मादा युग्मक कहलाता है। नर युग्मक सक्रिय होता है और इसे प्राय: शुक्राणु कहते हैं। मादा युग्मक प्राय: निष्क्रिय होता है और इसे अंडाणु कहते हैं। शुक्राणु नर जननांग में व अंडाणु मादा जननांग अलग-अलग जीवधारियों में मिलते हैं, तो उन्हें एकलिंगी कहते हैं; जैसे— मनुष्य, बिल्ली, हाथी आदि। इसके विपरीत अनेक जीव जातियों; जैसे— केंचुआ, हाइड्रा तथा अनेक पादपों में, एक ही जीवधारी में नर व मादा दोनों प्रकार के जननांग होते हैं। ऐसे जीवों को उभयलिंगी या द्विलिंगी कहते हैं।

लैंगिक जनन में शुक्राणु व अंडाणु संयुग्मित होकर एक युग्मनज बनाते हैं, जिसमें अनेक प्रकार के विभाजन होने से संतान का परिवर्द्धन होता है। जीवों में लैंगिक जनन की विधि किसी जीव के जीवन चक्र को बनाती है।

यदि जीव एककोशिकीय है, तो उनकी संतान बनाने के लिए और यदि जीव बहुकोशिकीय है, तो कोशिकाओं की संख्या बढ़ाने के लिए पूर्ववर्ती कोशिका विभाजित

होकर नई कोशिकाओं का निर्माण करती है। सामान्यत: किसी भी जीव (पौधे या जंतु) का जीवन एक कोशिकीय अवस्था से प्रारंभ होता है। यह अवस्था निषेचित अंड है तथा एक अंड और एक शुक्राणु के मिलने से बनती है। ये संरचनाएँ अगुणित होती हैं और प्राय: अर्द्धसूत्री विभाजन से बनती हैं। निषेचित अंडकोशिका बारंबार विभाजित होकर ही परिवर्द्धन करती है और भ्रूण बनाती है। निषेचित अंड कोशिका में साधारण सूत्री विभाजनों के द्वारा भ्रूण का निर्माण होता है। यह भ्रूण पौधे का एक छोटा रूप है। इनकी कोशिकाओं में विभाजनों के द्वारा ही नई–नई कोशिकाएँ बनती हैं और इस प्रकार पूरा जीवन बनता है। बाद में भी जीव की संपूर्ण वृद्धि कोशिका विभाजन पर ही निर्भर करती है। जीव को नई संतानें बनाने के लिए भी विभाजन करने पड़ते हैं तथा अपने शरीर की वृद्धि के लिए भी।

मनुष्य में लैंगिक जनन– आप पढ़ चुके हैं कि लैंगिक जनन में अर्धसूत्री कोशिका विभाजन से बने नर तथा मादा प्रकार के युग्मकों के संयोग से युग्मनज बनता है जो समसूत्री विभाजनों द्वारा नए जंतु में विकसित होता है।

(i) नर युग्मक शुक्राणु कहलाते हैं। इनका निर्माण वृषण में होता है। वृषण पुरुषों के शरीर में उदरगुहा से बाहर त्वचा की बनी एक थैली में शिश्न के दोनों तरफ लटके होते हैं।

स्तनधारी जंतुओं (मनुष्य में भी) में शुक्राणुओं का निर्माण देहगुहा के तापक्रम पर नहीं हो सकता। इसके लिए उन्हें देहगुहा के तापक्रम में 2-3° C कम ताप चाहिए।

(ii) मादा युग्म अंडा कहलाता है। इसका निर्माण स्त्री के अंडाशय में होता है।

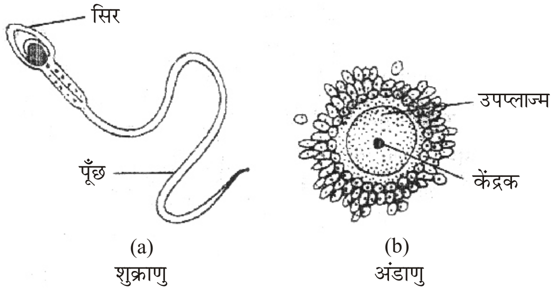

(a) नर का शुक्राणु (युग्मक);
(b) मादा का अंडाणु

प्रश्न 14. परिवार नियोजन से आप क्या समझते हैं? छोटे परिवार के महत्व को समझाइए।

उत्तर– **परिवार नियोजन व इसकी आवश्यकता –** परिवार कल्याण हेतु बच्चों की संख्या सीमित कर, परिवार को नियोजित करने की प्रक्रिया को परिवार नियोजन कहते हैं।

आवश्यकता– भारत की जनसंख्या बड़ी तीव्र गति से बढ़ रही है, वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 121 करोड़ से अधिक हो गई है। जिस तीव्र गति से जनसंख्या बढ़ रही है, उस गति से न तो कृषि क्षेत्र में अनाजों का ही उत्पादन हो रहा है और न ही प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो रही है। अत: जनसंख्या विस्फोट की स्थिति उत्पन्न हो गई है। इस दृष्टि से बढ़ती जनसंख्या को रोकने का उपाय परिवार नियोजन ही है। परिवार नियोजन की आवश्यकता इस कारण भी है कि बढ़ती जनसंख्या से लोगों के रहन–सहन, खान–पान, शिक्षा, रोजगार आदि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। बहुत समय पूर्व जनसंख्या नियंत्रण प्रकृति स्वयं ही कर लेती थी और मृत्यु–दर, जन्म–दर से अधिक होती थी, परंतु वर्तमान समय में विज्ञान एवं चिकित्सा के क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति

होने के फलस्वरूप मृत्यु-दर में कमी आई है। जन्म-दर पर नियंत्रण समाप्त हुआ है, अत: जन्म-दर को नियंत्रित करने हेतु परिवार नियोजन की आवश्यकता है।

छोटे परिवार का महत्व- यदि परिवार में बच्चों की संख्या सीमित होगी, तो वह परिवार अच्छा रहन-सहन एवं खुशहाल जीवन का निर्वाह कर सकेगा। छोटे परिवार में पारिवारिक आय का वितरण प्रत्येक सदस्य पर अधिक होगा जिससे उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति सरलता से हो पाएगी। परिवार के सदस्यों को सन्तुलित व पर्याप्त भोजन मिलेगा। जिससे सभी सदस्य स्वस्थ रहेंगे। छोटा परिवार होने से धन की बचत होगी तथा परिवार की आर्थिक स्थिति भी मजबूत होगी और भविष्य की नींव सुदृढ़ और सुरक्षित होगी।

प्रश्न 15. जनसंख्या रोकने की स्थायी तथा अस्थाई विधियाँ कौन-सी हैं?

उत्तर- जनसंख्या रोकने की स्थाई तथा अस्थाई विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(i) जनसंख्या रोकने की स्थाई विधियाँ- जनसंख्या रोकने के लिए महिला तथा पुरुषों में ऑपरेशन की विधि अपनाई जाती है जिससे भविष्य में संतान न हो सके।

(a) महिला का ऑपरेशन- अंडनलिका के ऑपरेशन से गर्भधारण की समस्या स्थायी रूप से दूर हो जाती है। इसके अंतर्गत फैलोपियन नलियों का काटकर बाँध दिया जाता है। यह विधि पूर्ण तथा स्थायी विधि है। यह कार्य संतान उत्पत्ति के समय ही कराया जा सकता है।

(b) पुरुष का ऑपरेशन- शुक्रनलिका के ऑपरेशन से भी गर्भधारण की समस्या स्थायी रूप से दूर हो जाती है। यह ऑपरेशन अत्यंत सरल है तथा कभी भी कराया जा सकता है।

(ii) जनसंख्या रोकने की अस्थाई विधियाँ- ये निम्नलिखित प्रकार की होती हैं—

(a) सुरक्षित काल- मासिक धर्म से एक सप्ताह पूर्व व एक सप्ताह बाद का समय सुरक्षित काल माना जाता है। इस काल में लैंगिक संपर्क स्थापित करने पर गर्भधारण की संभावना कम रहती है, परंतु यह विधि अधिक विश्वसनीय नहीं है।

(b) आत्मसंयम- असुरक्षित काल में आत्मसंयम रखना चाहिए तथा लैंगिक संपर्क स्थापित नहीं करना चाहिए।

(c) लूप - स्त्रियाँ लूप लगवाकर गर्भधारण करने से अपना बचाव कर सकती हैं।

(d) निरोध या कंडोम- निरोध (कंडोम) का प्रयोग पुरुष द्वारा किया जाता है। इसके प्रयोग से गर्भधारण होने की कोई भी संभावना नहीं हो सकती।

(e) गोलियाँ – आजकल ऐसी गोलियाँ उपलब्ध हैं, जिनके सेवन से गर्भधारण की संभावनाएँ समाप्त हो जाती हैं।

(f) गर्भ समापन - गर्भधारण करने के बाद भी एक सीमित काल के भीतर, किसी कुशल व शिक्षित विशेषज्ञ डॉक्टर से गर्भ समापन किया जा सकता है।

प्रश्न 16. परिवार नियोजन किसे कहते हैं? इसकी मुख्य विधियों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- परिवार कल्याण हेतु बच्चों की संख्या सीमित कर, परिवार को नियोजित करने की प्रक्रिया को परिवार नियोजन कहते हैं।

परिवार नियोजन की मुख्य विधियाँ- परिवार नियोजन की मुख्य विधियों का वर्णन निम्नवत् है—

(i) परिवार नियोजन की स्थाई विधियाँ- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 15 का अवलोकन कीजिए।

(ii) परिवार नियोजन की अस्थाई विधियाँ– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 15 का अवलोकन कीजिए।

(iii) अन्य विधियाँ–

(a) वैक्सीन– गर्भधारण रोकने हेतु सीमित प्रभाव वाली वैक्सीन विकसित कर ली गई है। अधिक प्रभावशाली वैक्सीन के विकास के लिए विश्व स्तर पर निरंतर प्रयत्न किए जा रहे हैं।

(b) विवाह योग्य आयु– विवाह के लिए कानूनी रूप से निम्नतम आयु सीमा लड़कों के लिए 21 वर्ष व लड़कियों के लिए 18 वर्ष कर दी गई है। इस सीमा को और बढ़ाया जाना चाहिए तथा यह लड़के के लिए 25 वर्ष तथा लड़की के लिए 23 वर्ष की जानी चाहिए।

प्रश्न 17. सगर्भता का चिकित्सीय समापन से क्या तात्पर्य है? इसके दुरुपयोग रोकने के लिए क्या उपाय किए गए हैं?

उत्तर– सगर्भता का चिकित्सकीय समापन – कभी–कभी स्त्री की कुछ विशेष संरचनात्मक या क्रियात्मक स्थिति के कारण स्वत: गर्भपात हो जाता है, किंतु आजकल परिवार को सीमित रखने के उद्देश्य से प्रेरित गर्भ समापन या गर्भपात या सगर्भता का चिकित्सीय समापन भी किया जाता है। इसके लिए अधिकतम 3 माह की आयु के पहले ही भ्रूण को वैक्यूम पंप द्वारा गर्भाशय से खींचकर निकाल दिया जाता है या कुछ रसायनों द्वारा आँवल को नष्ट कर दिया जाता है या फिर शल्य क्रिया द्वारा भ्रूण को निकाल दिया जाता है। माइफ प्रिस्टोन (mife pristone or RU 486) नामक औषधि गर्भाशय की दीवार में प्रोजेस्टिरॉन हॉर्मोन के प्रभाव को समाप्त करके एंडोमीट्रियम के खंडन को प्रेरित करती है। गर्भसमापन की सुविधा सभी सरकारी अस्पतालों में उपलब्ध है, जहाँ पर अनावश्यक गर्भ का समापन कराया जा सकता है। 12 सप्ताह से अधिक गर्भ (भ्रूण) का गर्भपात घातक तथा संकट उत्पन्न करने वाला होता है। इसमें माता की जान भी जा सकती है। किसी प्रकार जैसे अल्ट्रा साउंड इत्यादि के द्वारा भ्रूण के लिंग का पता लगाने के बाद कन्या भ्रूण का समापन कानून में प्रतिबंधित है।

संपूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 45 से 50 मिलियन (4.5-5 करोड़) चिकित्सीय सगर्भता समापन कराए जाते हैं। इस प्रकार जनसंख्या घटाने में एम०टी०पी० (MTP) की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है, किंतु इसका उद्देश्य जनसंख्या घटाना कदापि नहीं है। इनके साथ भावनात्मक, नैतिक, धार्मिक एवं सामाजिक पहलुओं के जुड़े होने के कारण अनेक देशों में अभी तक चिकित्सीय सगर्भता समापन को स्वीकृति नहीं मिल पाई है। भारत सरकार ने इसके दुरुपयोग को रोकने के लिए सन् 1971 ई० में चिकित्सीय सगर्भता समापन को कठोर प्रतिबंधों के अंतर्गत कानूनी स्वीकृति प्रदान कर दी थी। इस प्रकार के प्रतिबंध अंधाधुंध और गैरकानूनी मादा भ्रूण हत्या तथा भेदभाव को रोकने के लिए बनाए गए हैं।

चिकित्सीय सगर्भता समापन निश्चित रूप में अनचाही सगर्भताओं से मुक्ति पाना है फिर चाहे वे लापरवाही से किए गए असुरक्षित यौन संबंधों का परिणाम हो अथवा संभोग के समय गर्भ निरोधक उपायों के असफल रहने जैसी घटनाओं के कारण हों। इसके साथ ही चिकित्सीय सगर्भता समापन की अनिवार्यता कुछ विशेष स्थितियों में भी होती है। जब सगर्भता बने रहना माँ अथवा भ्रूण अथवा दोनों के लिए हानिकारक या घातक सिद्ध हो सकती है।

परिवार नियोजन अथवा गर्भ समापन आदि सभी उपाय योग्य चिकित्सक की देख–रेख में ही किए जाने चाहिए, जिससे स्त्री या पुरुष पर कोई हानिकारक प्रभाव न पड़े।

प्रश्न 18. जनसंख्या वृद्धि के कारण होने वाली हानि तथा जनसंख्या वृद्धि रोकने के लिए किए गए उपायों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- जनसंख्या वृद्धि के कारण होने वाली हानियाँ- जनसंख्या में तेजी से वृद्धि के कारण देश की विकास योजनाएँ बेकार सिद्ध हो रही हैं तथा आर्थिक व सामाजिक विकास की गति धीमी हो रही है। जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न कुछ समस्याएँ इस प्रकार हैं—

(i) खाद्य समस्या- जनसंख्या की लगातार वृद्धि के कारण खाद्यान्नों की आपूर्ति दूभर होती जा रही है। एक व्यक्ति को स्वस्थ रहने के लिए प्रतिदिन लगभग 3000 कैलोरी ऊर्जा की आपूर्ति आवश्यक है किंतु देश में यह औसत 2000 कैलोरी से भी कम है। खाद्यान्नों की कमी के कारण निम्नलिखित दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं—

(a) उपलब्ध खाद्य सामग्री पर्याप्त नहीं है तथा उसमें पोषक गुणों का अभाव होता जा रहा है।

(b) पर्याप्त खाद्य सामग्री के अभाव में बच्चों का शारीरिक विकास मंद पड़ रहा है तथा 3-4 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों के मानसिक एवं शारीरिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

(c) कुपोषण एवं संक्रमण के कारण बच्चों की मृत्यु-दर बढ़ रही है।

(d) पोषक तत्त्वों की कमी के कारण व्यक्तियों का स्वास्थ्य गिर रहा है और उनकी कार्य करने की क्षमता कम हो रही है।

(e) कार्यक्षमता कम होने के कारण उद्योगों में उत्पादन गिर रहा है।

(f) उत्पादन गिरने के कारण आपूर्ति समस्या बढ़ रही है तथा गरीबी कम न होकर बढ़ रही है।

यदि सीमित परिवारों द्वारा उपर्युक्त दुष्परिणामों को नियंत्रित नहीं किया गया तो आने वाली पीढ़ियों में निम्नलिखित विकारों के उत्पन्न होने की संभावना हैं; (1) बौनापन, (2) शारीरिक भार में कमी, (3) शारीरिक शक्ति में कमी, (4) कार्य करने की क्षमता में कमी तथा (5) विकलांग बच्चों का जन्म।

(ii) शिक्षा व्यवस्था की समस्या- जनसंख्या वृद्धि के कारण विद्यालयों की सामर्थ्य कम होती जा रही है और कितने ही बच्चे शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। जिन बच्चों को प्रवेश मिल जाता है, उनको उचित मात्रा में भौतिक साधन; जैसे— मेज, कुर्सी, प्रकाश, प्रयोगशाला, खेल का सामान व खेल के लिए मैदान आदि उपलब्ध नहीं हो पाते। इसके फलस्वरूप विद्यार्थियों में अनेक रोग हो जाते हैं; जैसे— आँखों का कमजोर होना, कमर झुक जाना, चेहरा पीला पड़ जाना आदि।

(iii) रोजगार समस्या- बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ रोजगार के साधन उस गति से नहीं बढ़ रहे हैं। इसके कारण बेरोजगारी तेजी से बढ़ रही है। बेरोजगारी के कारण बच्चों को भूखा रहना पड़ता है जिससे परिवार के सदस्य कुपोषण एवं अन्य रोगों के शिकार हो रहे हैं। शिक्षितों में बेरोजगारी अपराधी प्रवृत्तियों को जन्म दे रही है।

(iv) स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाओं की समस्या- बार-बार गर्भ धारण करने एवं निरंतर दुग्धपान कराने से माता के स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ता है। जल्दी-जल्दी गर्भ धारण करने के कारण निम्नलिखित कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं—

(a) शिशु को माता का दूध जल्दी छोड़ना पड़ता है जिससे उसका शारीरिक एवं मानसिक विकास ठीक से नहीं होता।

(b) जल्दी गर्भ धारण करने से पहले शिशु की देखभाल ठीक से नहीं हो पाती।

(c) अनेक बच्चों के कारण परिवार को कुपोषण का सामना करना पड़ता है। जनसंख्या में वृद्धि से अस्पतालों में स्थान सीमित होता जा रहा है। सीमित स्थान के कारण अस्पतालों में पर्याप्त सुविधाएँ नहीं मिलतीं तथा रोगियों की देखभाल भी ठीक प्रकार से नहीं हो पाती। उचित चिकित्सा के अभाव में अस्वस्थ नागरिकों की जनसंख्या बढ़ती जा रही है।

(v) **आवास समस्या–** आवास की कमी के कारण अधिकांश परिवार गंदे, प्रकाशहीन घरों व झुग्गी–झोपंड़ियों में रहने को बाध्य है। साथ ही सफाई की उचित व्यवस्था के अभाव एवं साफ पानी की कमी के कारण अस्वस्थ नागरिकों की संख्या तेजी से बढ़ती जा रही है।

(vi) **यातायात एवं परिवहन की समस्या–** जनसंख्या में तेजी से होने वाली वृद्धि के कारण बसों व ट्रेनों में भीड़ बढ़ रही है और परिवहन के साधन अपर्याप्त हैं।

(vii) **रहन–सहन का निम्न स्तर–** जनसंख्या में वृद्धि के कारण परिवारों के रहन–सहन का स्तर गिरता जा रहा है। सीमित साधनों के कारण सबकी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करना असंभव–सा होता जा रहा है। पारिवारिक संघर्ष, प्रतियोगिता, ईर्ष्या बढ़ती जा रही है।

जनसंख्या वृद्धि रोकने के उपाय– परिवार नियोजन जनसंख्या को कम करने का एक प्रभावपूर्ण उपाय है। परिवार नियोजन का उद्देश्य परिवार कल्याण हेतु बच्चों की संख्या सीमित कर परिवार को नियोजित करना है। इसके अंतर्गत जनसंख्या वृद्धि को रोकने के निम्न उपाय हैं—

इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 16 का अवलोकन कीजिए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मुकुलन से आप क्या समझते हैं? उदाहरण देकर समझाइए।

उत्तर– मुकुलन सरल बहुकोशिकीय जीवों में पाया जाता है। इसमें वयस्क जंतु के शरीर पर एक छोटा–सा उभार बनता है जो धीरे–धीरे बड़ा होकर एक पूर्ण विकसित जीव बन जाता है।

उदाहरणार्थ— हाइड्रा में मुकुलन द्वारा अलैंगिक जनन होता है। इसमें हाइड्रा के शरीर पर एक छोटा–सा उभार बनता है जिसे मुकुल कहते हैं। यह कुछ समय तक हाइड्रा के शरीर पर बढ़ता है तथा बाद में अलग होकर नए हाइड्रा के रूप में विकसित हो जाता है।

प्रश्न 2. पौधों में द्विनिषेचन तथा त्रिसंलयन क्या होता है? समझाइए। या आवृतबीजियों में द्विनेषचन किसे कहते हैं?

उत्तर– द्विनिषेचन तथा त्रिसंलयन– पुष्पी पौधों में अंड कोशिका के संयुग्मन के फलस्वरूप द्विगुणित भ्रूण बनता है। ध्रुवीय केंद्रकों के संलयन के फलस्वरूप द्विगुणति भ्रूण बनता है। नर युग्मक दोनों ध्रुवीय केंद्रकों के साथ मिलकर एक त्रिगुणित केंद्रक बनाता है जिसे प्राथमिक भ्रूणपोष केंद्रक कहते हैं। इस प्रक्रिया को त्रिसंलयन कहते हैं। आवृतबीजी पौधों में संयुग्मन तथा त्रिसंलयन को द्विनिषेचन कहते हैं।

प्रश्न 3. एक प्रारूपिक पुष्प की खड़ी काट का नामांकित चित्र बनाइए। इसके विभिन्न भागों को बताइए और स्पष्ट कीजिए कि लैंगिक जनन के सभी भाग पुष्प में होते हैं।

उत्तर– इस प्रारूपिक पुष्प की खड़ी काट का नामांकित चित्र दीर्घ उत्तरीय प्रश्न 6 के अंतर्गत देखिए।

पुष्प के विभिन्न भाग होते हैं—

(i) बाह्यदल पुंज (ii) दलपुंज (iii) पुमंग (iv) जायांग

पुष्प में लैंगिक जनन के सभी भाग अर्थात् नर युग्मक के मादा युग्मक होते हैं। नर युग्मक जनन क्रिया पुंकेसरों में होती है तथा परागकण या नर कोशिकाएँ बनती हैं तथा मादा युग्मक जनन क्रिया स्त्रीकेसर के बीजांडों में होती है और अंड का निर्माण होता है।

प्रश्न 4. आवृत्तबीजी बाह्य अंडप के अनुदैर्ध्य काट का नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर– आवृत्तबीजी बाह्य अंडप के अनुदैर्ध्य काट का नामांकित चित्र दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 6 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 5. अलैंगिक तथा लैंगिक जनन में अंतर बताइए।

उत्तर– अलैंगिक व लैंगिक जनन में अंतर

क्र०सं०	अलैंगिक जनन	लैंगिक जनन
1.	इसमें केवल एक ही जनक भाग लेता है।	इसमें दो जनक भाग लेते हैं।
2.	यह जनन केवल असूत्री या समसूत्री विभाजन द्वारा होता है। अगुणित युग्मक नहीं बनते।	इस जनन में अर्धसूत्री विभाजन द्वारा अगुणित युग्मक बनते हैं।
3.	युग्मनज नहीं बनता	अगुणित युग्मकों के मिलन से द्विगुणित युग्मनज बनता है।
4.	पैत्रक कोशिकाओं से नया जीवन बनता है।	युग्मनज से नए जीव का विकास होता है।
5.	बिना बीज वाले पौधों जैसे गुलाब, अंगूर तथा केले में अलैंगिक जनन द्वारा जनन संभव है।	केवल बीज वाले पौधों में ही लैंगिक जनन हो सकता है।
6.	इस विधि द्वारा जनन कम समय में वह तेजी से हो सकता है।	इस विधि द्वारा जनन में अधिक समय लगता है।
7.	संतति जीवों की जीनी संरचना मातृ जीवों के एकदम समान होती है।	संतति जीवों में माता व पिता दोनों जीवों के लक्षण पाए जाते हैं। अत: संतति जीव माता व पिता दोनों से ही थोड़ा भिन्न होते हैं।
8.	नई किस्में विकसित नहीं हो सकतीं।	विभिन्नताओं के एकत्र होने से नए लक्षणों वाले जीवों का विकास होता है।

प्रश्न 6. लैंगिक जनन से क्या तात्पर्य है? जंतुओं में निषेचन के बारे में लिखिए।

उत्तर– जब किसी जीव अथवा एक ही जीव जाति के दो सदस्यों द्वारा उत्पन्न दो युग्मकों के संलयन से बने युग्मनज से संतान का जन्म होता है, तो यह जनन लैंगिक जनन कहलाता है।

नर व मादा के युग्मकों के संलयित होने से द्विगुणित युग्मनज के बनने की क्रिया निषेचन कहलाती है। जब अंड़ों का निषेचन मादा जंतु के शरीर के बाहर होता है तो इसे बाह्य निषेचन है, जैसे— जलीय कशेरुकी जंतु, मछलियाँ, मेढ़क आदि तथा जब अंडों का निषेचन मादा जंतु के शरीर के अंदर होता है तो इसे आंतरिक निषेचन कहते हैं, जैसे— मनुष्य सहित सभी स्तनधारी, सरीसृप, पक्षी आदि।

प्रश्न 7. परागण को परिभाषित कीजिए। परागण की विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए तथा इसके महत्व को समझाइए।

उत्तर– दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 8 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 8. बीजरहित पौधों में जनन-क्रिया विधि द्वारा होती है? उदाहरण भी दीजिए।

उत्तर– बीजरहित पौधों में जनन कायिक प्रवर्धन द्वारा होता है। विवरण के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 9. पर-परागण तथा स्वपरागण में अंतर लिखिए।

उत्तर– **पर-परागण तथा स्वपरागण में अंतर**

क्र०सं०	पर-परागण	स्व-परागण
1.	दो अलग-अलग पौधों पर लगे फूलों के बीच होता है।	एक ही पुष्प में या एक ही पौधे के दो पुष्पों के बीच होता है।
2.	परागकणों के दूसरे फूल पर पहुँचने के लिए वायु, जल, कीट या जंतु की आवश्यकता होती है।	किसी बाह्य साधन की आवश्यकता नहीं होती।
3.	एक ही पुष्प के पुमंग व जायांग अलग-अलग समय पर परिपक्व होते हैं ताकि स्वपरागण न हो सके।	स्वपरागण के लिए पुष्प के पुमंग तथा जायांग एक साथ परिपक्व होते हैं।
4.	पर-परागण के लिए पुष्प चटकीले रंग के होते हैं और उनमें मकरंद होता है।	स्वपरागण वाले पुष्प छोटे तथा कम आकर्षक होते हैं और इसमें मकरंद नहीं होता।

प्रश्न 10. परिवार नियोजन की विभिन्न विधियों को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 16 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 11. परिवार नियोजन कार्यक्रम को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है?

उत्तर– **परिवार नियोजन के कार्यक्रम में कठिनाइयाँ–** परिवार नियोजन जनसंख्या को कम करने का एक प्रभावपूर्ण उपाय है। परिवार नियोजन का अर्थ है— परिवार को योजनाबद्ध तरीके से सीमित करना। भारत में परिवार नियोजन राष्ट्रीय स्तर पर अपनाया गया है। इसके बावजूद हमें परिवार नियोजन कार्यक्रमों में अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी है। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित हैं—

(i) अशिक्षा एवं अंधविश्वास– हमारे देश में लगभग 48% जनता अभी भी अशिक्षित है। अत: वे परिवार कल्याण कार्यक्रमों के महत्व को ठीक प्रकार से नहीं समझ पाते। इसके अतिरिक्त उनका यह विश्वास है कि संतान ईश्वर की देन है। अत: वे परिवार नियोजन के उपायों को नहीं अपनाते।

(ii) धार्मिक दृष्टि से पुत्र को अधिक महत्व– धार्मिक दृष्टि से परिवार में एक पुत्र को आवश्यक माना जाता है और पुत्र की आशा में परिवार का आकार बढ़ता जाता है।

(iii) राष्ट्रीय भावना में कमी– हम राष्ट्रीय हित की तुलना में व्यक्तिगत हित को अधिक महत्व देते हैं। यही कारण है कि हम परिवार कल्याण कार्यक्रम की सफलता के लिए प्रयास नहीं करते।

(iv) धार्मिक मान्यताएँ– धार्मिक मान्यताएँ परिवार नियोजन के उपायों को अपनाने के लिए अनुमति प्रदान नहीं करतीं।

(v) परिवार नियोजन की विधियाँ– संतान निरोध की कोई ऐसी विधि नहीं है जो सरल, प्रभावी एवं सुरक्षित हो। उपलब्ध विधियाँ अधिक प्रभावी नहीं हैं और ऑपरेशन कराने से लोग डरते हैं।

प्रश्न 12. जनसंख्या विस्फोट से क्या तात्पर्य है? 1 अप्रैल, 2011 को भारत की जनसंख्या बताइए।

उत्तर- भारत की जनसंख्या बड़ी तीव्र गति से बढ़ रही है, सन् 2011 ई० की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 121 करोड़ से अधिक हो गई है। चीन विश्व की सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश माना जाता है परंतु अगर भारत में जनसंख्या इसी गति से बढ़ती रही तो भारत जो आज जनसंख्या वृद्धि में चीन के बाद दूसरा देश है। सन् 2050 ई० तक पहले स्थान पर पहुँच जाएगा। जिस तीव्र गति से जनसंख्या बढ़ रही है, उस गति से न तो कृषि क्षेत्र में अनाजों का उत्पादन हो रहा है और न ही प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो रही है। अत: जनसंख्या विस्फोट की स्थिति उत्पन्न हो गई है। यह अनियन्त्रित जनसंख्या वृद्धि ही जनंख्या विस्फोट का कारण है। सन् 2011 ई० की जनसंख्या गणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 1 अप्रैल 2011 को 1 अरब 21 करोड़ 1 लाख 90 हजार हो गई।

प्रश्न 13. जनसंख्या वृद्धि के चार कारण लिखिए।

उत्तर- जनसंख्या वृद्धि के निम्नलिखित कारण हैं—

(i) अधिकतर निर्धन परिवार के लोग इस बात पर विश्वास करते हैं कि जितने बच्चे होंगे उतना ही धनोपार्जन होगा अर्थात् वे उतना ही धन कमा कर लाएँगे। अत: निर्धन परिवार के लोग जनसंख्या वृद्धि पर ध्यान नहीं देते हैं।

(ii) शिक्षा के अभाव के कारण लोग छोटे परिवार का महत्व नहीं समझते हैं।

(iii) कम आयु में विवाह होना, जिस कारण कम आयु में ही सन्तान उत्पन्न होना है।

(iv) बच्चों को ईश्वर की देन मानकर परिवार नियोजन की विधियाँ न अपनाने से भी जनसंख्या में वृद्धि होती है।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. किसी पुष्पी पादप में उसके जनन अंगों का अध्ययन करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभावों से संबंधित एक चार्ट का निर्माण करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

22 मादक पदार्थ- तंबाकू, ऐल्कोहॉल और नशीली दवाएँ

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मादक पदार्थों से क्या तात्पर्य है? ये कौन-कौन से होते हैं? इनसे शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन कीजिए। या

मादक पदार्थ कितने प्रकार के होते हैं? इनका मानव स्वास्थ्य पर होने वाले दुष्प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- मादक पदार्थ – अति प्राचीनकाल से ही मनुष्य किसी न किसी ऐसे पदार्थ का सेवन करता रहा है जो उसके शरीर में विशेष प्रकार के नशे के लक्षण उत्पन्न करता है। ये पदार्थ, मादक पदार्थ कहलाते हैं। इन पदार्थों के सेवन से जहाँ एक ओर नशा हो जाता है, वहीं दूसरी ओर कुछ समय के लिए शरीर में उत्तेजना भी आ जाती है। इसी उत्तेजना और नशे के प्रभाव से व्यक्ति को लगता है कि वह कुछ समय के लिए चिंताओं और समस्याओं को भूल गया है। परिणामस्वरूप वह स्वयं को सुखी अनुभव करता है। मादक पदार्थ का यह उत्तेजनात्मक प्रभाव चूँकि अस्थायी होता है, अत: सुखी होने की यह अनुभूति भ्रामक तथा क्षणिक होती है। स्पष्ट है, वही उत्तेजना और अनुभूति वह फिर से प्राप्त करना चाहता है; अत: वह इसका आदी हो जाता है। निरंतर नशा करते रहने से अनेक हानियाँ होने लगती हैं।

ऐल्कोहॉल (शराब), अफीम, भाँग, तंबाकू, कोको, कहवा, कोकीन आदि अनेक पदार्थ, मादक पदार्थ होते हैं जिनका सेवन व्यक्ति को इनकी लत (आदत) डाल देता है। मादक पदार्थों की लत जिस प्रकार से भयंकर होती है उसी प्रकार ये विभिन्न प्रकार से शरीर को हानि पहुँचाते हैं और अनेक छोटे-बड़े तथा भयंकर रोग अथवा उनके लक्षण उत्पन्न करते हैं। पदार्थों की उत्तेजना से अल्प समय के लिए तंत्रिका तंत्र से शेष शरीर का संतुलन बिगड़ जाता है। इसका शरीर पर बुरा तथा स्थायी प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। मादक वस्तुओं के सेवन की मात्रा पहले कम किंतु बाद में क्रमश: अधिक होती जाती है और अंतत: इनकी आदत पड़ जाती है। इस प्रकार संपूर्ण शरीर या उसके कुछ भाग या तंत्र दुर्बल हो जाते हैं, रोगों से लड़ने की शक्ति क्षीण हो जाती है अथवा अन्य अनेक भयानक दुष्प्रभाव पड़ते हैं।

मादक पदार्थों के प्रकार-

नशा उत्पन्न करने वाले अर्थात् इन मादक पदार्थों को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(i) **तीव्र प्रभावकारी मादक पदार्थ-** ऐसे मादक पदार्थ जो अत्यंत तीव्र गति से मनुष्य के शरीर और तंत्रिका तंत्र पर प्रभाव डालते हैं। **उदाहरणार्थ-** ब्राउन शुगर, हेरोइन, कोकीन, स्मैक, शराब, अफीम, चरस, नशीली दवाएँ आदि।

(ii) **मध्यम प्रभावकारी मादक पदार्थ-** ऐसे मादक पदार्थ, जो कुछ कम गति से अपना दुष्प्रभाव प्रदर्शित करते हैं। **उदाहरणार्थ-** तंबाकू, भाँग आदि।

(iii) **कम प्रभावकारी मादक पदार्थ–** ऐसे मादक पदार्थ जिनका प्रभाव अत्यंत धीमी गति से पार्श्व प्रभावों के समान होता है। इनके परिणाम काफी लंबे समय के बाद प्रकट होते हैं। **उदाहरणार्थ–** चाय, कॉफी, कोको आदि आते हैं।

मादक पदार्थ व इनके प्रभाव या मानव स्वास्थ्य पर होने वाले इनके दुष्प्रभाव–

(i) **अफीम –** अफीम पॉपी या पोस्त नामक पौधे के फल (संपुट = Capsule) से निकले रबर क्षीर, सफेद दूध जैसे पदार्थ से बनाए जाने वाला मादक पदार्थ है। इसके सेवन से शरीर पर प्रत्यक्ष रूप से अत्यधिक दुष्प्रभाव पड़ता है अत: इसका प्रयोग गैरकानूनी माना जाता है। शरीर पर इसके दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं—

(a) व्यक्ति आलसी हो जाता है और उसे हर समय नींद आती रहती है।

(b) व्यक्ति की आँखों की चमक कम हो जाती है और अपने शरीर से उसका नियंत्रण पूरी तरह समाप्त हो जाता है।

(c) व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ नष्ट होने लगती हैं और आँखें व श्रवण शक्ति कमजोर हो जाती है और शरीर कुपोषण से दुर्बल हो जाता है।

अफीम में मॉरफीन नामक ऐल्केलॉयड होता है।

(ii) **गाँजा-भाँग–** कैनाबिस नामक पौधे की पत्तियों से भाँग तथा पुष्प से गाँजा प्राप्त होता है। इनके सेवन से तंत्रिका तंत्र प्रभावित होता है, व्यक्ति भ्रमित होने लगता है, दृष्टि दोष उत्पन्न हो जाता है। इनके अधिक प्रयोग से व्यक्ति पागल भी हो सकता है। गाँजे का सेवन सिगरेट तंबाकू की जगह, हुक्के, चिलम या पाइप में भरकर किया जाता है। भाँग का प्रयोग कुल्फी, शरबत, मिठाई आदि में मिलाकर किया जाता है। इसके प्रभाववश व्यक्ति कोई भी कार्य; जैसे— हँसना, उल्टा-सीधा बकना, रोना आदि निरंतर करने लगता है।

(iii) **कोकीन–** कोकीन कोका नामक पौधे की पत्तियों से बनता है। इसको सूँघते हैं और इंजेक्शन भी लगाते हैं। इस दुर्व्यसन से ग्रसित व्यक्ति अपनी विचार-शक्ति को खो बैठता है और कभी-कभी हिंसात्मक कार्य भी कर बैठता है उसको वास्तविक तथा भ्रमात्मक स्थितियों का सही-सही ज्ञान नहीं रहता।

(iv) **हशीश या चरस–** यह कैनाबिस पौधे के पुष्पों के रस से प्राप्त होती है। इसे सुखाकर पाउडर के रूप में तैयार करते हैं। चरस का उपयोग तंबाकू के साथ किया जाता है। इसके प्रयोग से तंत्रिका तंत्र की दुर्बलता, पाचन-शक्ति की कमजोरी, कार्य क्षमता में कमी आदि लक्षण विकसित हो जाते हैं। व्यक्ति एकांकी व गुमसुम हो जाता है।

नशीले पदार्थों से केवल कुछ समय के लिए ही व्यक्ति चिंतामुक्त होता है, परंतु सदैव के लिए अपना स्वास्थ्य खो बैठता है। नशा उतरते ही वह अधिक खिन्न तथा निरुत्साहित हो जाता है।

प्रश्न 2. ऐल्कोहॉल पीने वाले व्यक्तियों के शरीर पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है? क्या शराब पीकर वाहन चलाना उचित है? यदि नहीं तो क्यों?

उत्तर– ऐल्कोहॉल पीने वाले व्यक्तियों के शरीर पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। ऐल्कोहॉल के दुष्परिणाम धीरे-धीरे प्रकट होते हैं। इसकी बारंबारता तादाद धीमे-धीमे क्रमश: बढ़ती ही जाती है, क्योंकि जो उत्तेजना होती है वह क्षणिक होती है और व्यक्ति उसे बार-बार प्राप्त करना चाहता है, इसी से उसको ऐल्कोहॉल पीने की लत लग जाती है।

ऐल्कोहॉल पीने से व्यक्तियों के शरीर पर होने वाले दुष्प्रभाव–

ऐल्कोहॉल (शराब) का सेवन करने से शरीर पर निम्नलिखित प्रमुख दुष्प्रभाव होते हैं—

(i) शराब के प्रभाव से तंत्रिका तंत्र; विशेषकर केंद्रीय तंत्रिका तंत्र दुर्बल हो जाता है जिससे आत्म-नियंत्रण समाप्त होना, मस्तिष्क कमजोर होना, स्मरणशक्ति क्षीण होना, विचारशक्ति लुप्त होना, अच्छे-बुरे का ज्ञान समाप्त होना, एकाग्रता की कमी होना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। बाद में ऐसा व्यक्ति अपना आत्मसंयम तथा आत्मसम्मान खो देता है।

(ii) ऐल्कोहॉल कोशिकाओं से जल और शरीर की आंतरिक ग्रंथियों से होने वाले स्रावों को तेजी से अवशोषित करता है। परिणामस्वरूप पहले तो यकृत (लिवर) सिकुड़कर छोटा हो जाता है और इसके बाद उसका आकार सामान्य से अधिक हो जाता है, जिससे उसकी प्राकृतिक क्रियाशीलता नष्ट हो जाती है। पाचन तंत्र तथा श्वसन तंत्र में अनेक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। शरीर का पोषण उचित न होने के कारण दुर्बलताएँ और अधिक बढ़ती हैं।

(iii) ऐल्कोहॉल आमाशय तथा आँतों की श्लेष्मिका झिल्ली को हानि पहुँचाता है। इसके फलस्वरूप पेप्टिक अल्सर हो जाता है। कभी-कभी पेप्टिक अल्सर के फोड़े कैंसर भी बन जाते हैं।

(iv) कोशिकाओं से जल अवशोषित होने के कारण वे नष्ट हो जाती हैं और धीरे-धीरे शरीर, विशेषकर माँसपेशियाँ, दुर्बल होकर शिथिल (ढीला-ढाला) पड़ जाता है।

(v) शरीर में विटामिनों की कमी हो जाती है, विशेषकर विटामिन B श्रेणी के विटामिन (थायमीन आदि) और उनका वितरण अनियमित हो जाता है और शरीर में अनेक प्रकार की विकृतियाँ और रोग उत्पन्न करता है।

(vi) रुधिर परिसंचरण प्रमुखत: त्वचा की ओर अधिक होने से त्वचा का रंग लाल हो जाता है। वास्तव में, इन स्थानों की रुधिर कोशिकाएँ चौड़ी हो जाती हैं, अत: इस स्थान पर ताप अधिक हो जाता है।

(vii) भावनात्मकता यद्यपि बढ़ी हुई दिखाई देती है किंतु शीघ्र ही उसमें आक्रामकता झलकने लगी है जो बाद में घृणास्पद हो जाती है।

ऐल्कोहॉल का आदी व्यक्ति अपने समस्त पारिवारिक संबंधों की ओर उदासीन अथवा कटु हो जाता है, उसमें सामाजिकता का अभाव होता जाता है तथा धीरे-धीरे वह आत्मकेंद्रित हो जाता है। अनेक प्रकार की जटिलताएँ आयु के साथ (35-40 वर्ष से आगे) बढ़ती ही जाती हैं। कम से कम 5 प्रतिशत व्यक्ति हृदय अथवा वृक्कीय जटिलताओं के कारण मर जाते हैं।

शराब पीकर गाड़ी चलाना उचित नहीं है क्योंकि ऐल्कोहॉल पीने से व्यक्ति का अपने शरीर तथा मस्तिष्क पर नियंत्रण नहीं रह पाता तथा उसमें एकाग्रता, विचार शक्ति, फैसला ले सकने की क्षमता तथा नियंत्रण की कमी हो जाती है।

मद्यपान का लती व्यक्ति अथवा मद्यपान किया हुआ व्यक्ति निम्नांकित कारणों से दुर्घटना का कारण बन सकता है—

(i) वाहन के चालन तथा वाहन पर उसका पूर्ण नियंत्रण नहीं रह सकता है।

(ii) तंत्रिका तंत्र में उत्तेजना के बाद आई शिथिलता प्रतिक्रिया करने के लिए सोचता ही रह जाता है, अधिक समय लेता है। तब तक दुर्घटना घटित हो जाएगी।

(iii) मद्यपान दृष्टि भ्रम उत्पन्न करता है, अत: दुर्घटनाएँ होने की संभावना बनी रहती है।

(iv) अपनी आक्रामकता की प्रवृति के चलते ट्रैफिक नियमों के पालन में अनियमितता बरतता है, अत: दुर्घटना की संभावना बलवती रहती है।

(v) शारीरिक एवं मानसिक विकृतियों के कारण सोचने, समझने एवं करने में ताल-मेल न बैठ पाने से दुर्घटना किसी भी क्षण हो सकती है।

प्रश्न 3. विभिन्न नशीली दवाओं के शरीर पर होने वाले प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– **नशीली औषधियाँ–** रोगों से बचने अथवा इलाज के लिए या फिर शारीरिक तथा मानसिक भलाई के लिए औषधियों का प्रयोग करते हैं। कुछ औषधियाँ संक्रमण को खत्म करने में सहायता करती हैं। कुछ हमारे मूड को बदलने में सहायता करती हैं। कुछ औषधियों से खतरा भी हो सकता है अर्थात् रोगी पूरी तरह से इन पर निर्भर हो जाता है।

ऐसी औषधि या जिन पर व्यक्ति निर्भर हो जाता है वे व्यसन की श्रेणी में आती हैं। इन औषधियों को साइकोट्रॉपिक औषधियाँ कहते हैं। ये दवाइयाँ मस्तिष्क पर प्रभाव डालती हैं तथा व्यवहार में परिवर्तन लाती हैं। इसी कारण इन्हें मानसिक परिवर्तन करने वाली औषधियाँ कहते हैं। मस्तिष्क पर प्रभाव डालने के आधार पर ये निम्न प्रकार की हो सकती हैं—

(i) **शामक व निद्राकारक–** ये मस्तिष्क की क्रियाशीलता को कम करती हैं। निद्राकारक औषधियाँ तनाव व बैचेनी को कम करके निद्रा लाती हैं, जैसे वेलियम व बार्बीट्यूरेट्स।

(ii) **उत्तेजक –** उत्तेजक वे दवाएँ हैं जो तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित करती हैं। इनमें से सबसे हल्की कैफीन है, जिसे हम चाय अथवा कॉफी, कोको तथा कोला पेय पदार्थों के रूप में लेते हैं। अधिक मात्रा में कैफीन लेने से इसका व्यसन हो जाता है।

एम्फीटेमिन तथा कोकीन तेज उत्तेजक हैं। इनसे उत्साह, आत्मविश्वास में वृद्धि तथा विचारों के प्रवाह का आभास होता है। एम्फीटेमिन का उपयोग चुस्ती तथा क्रियाओं को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग भूख को कम करने के लिए तथा वजन पर नियंत्रण करने के लिए भी करते हैं। लेकिन इनसे एकाग्रता में वृद्धि नहीं होती और न ही ये शारीरिक थकावट पर नियंत्रण कर सकते हैं। इनके प्रयोग से मानसिक निर्भरता की अधिक संभावना रहती हैं, क्योंकि इससे बैचेनी, चिंता आदि होती है।

(iii) **विभ्रमक–** ये विचार एवं भावनाओं में बदलाव लाने वाली औषधियाँ हैं। इनका उपयोग करने वाले व्यक्ति इनके प्रभाव से ऐसी गलत धारणाएँ बना लेते हैं जैसे कि वे ध्वनि को देख सकते हैं। LSD, मेस्कालाइन, सीलोसाइविन तथा भाँग के उत्पाद (चरस, गाँजा, हशीश) आदि विभ्रमकों के उदाहरण हैं।

भाँग, चरस, गाँजा का उपयोग भारत में होता है। इनके उपयोग से दो समस्याएँ सामने आती हैं— प्रथम, इसके उपयोग से व्यक्ति हेरोइन का व्यसनी बन जाता है तथा दूसरा यह कि जब इसे ऐल्कोहॉल के साथ लिया जाता है तो इसके खतरनाक प्रभाव पड़ते हैं।

(iv) **ओपिएट–** ये दर्द, चिंता तथा तनाव को कम करते हैं। ये रक्तचाप तथा श्वसन दर को भी कम करते हैं। इनसे निद्रा व सुस्ती आती है। व्यसनी स्वयं को अच्छा महसूस करते हैं। अफीम के व्यसनी के शरीर का भार कम हो जाता है, व्यक्ति बंध्य हो जाता है और काम में रुचि कम हो जाती है।

ओपिएट नारकोटिक दर्दनाक दवाइयों का एक वर्ग है जिसमें अफीम तथा इसके स्राव से बने मोरफीन, कोडीन तथा हेरोइन, पैथिडीन तथा मीथाडोन आते हैं। इनमें से हेरोइन सबसे खतरनाक है। चिकित्सा जगत में इसका उपयोग वर्जित है। इस दवाई की बिक्री पर रोग लगाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास जारी हैं।

इन औषधियों को मुँह द्वारा, निश्वसन द्वारा अथवा इंजेक्शन द्वारा लिया जाता है। हेरोइन में हानिकारक पदार्थों का उपयोग किया जाता है और इंजेक्शन लगाने से

पहले सुई को भी निर्जमीकृत नहीं किया जाता। इसके कारण दूसरे रोग भी हो जाते हैं जैसे एड्स तथा हिपेटाइटिस।

हेरोइन के व्यसनी शारीरिक रूप से दवा पर निर्भर करते हैं। इसके अभाव में रोगी को उल्टी आना, डायरिया, कँपकँपी, पसीना आना तथा पेट व पेशियों में अकड़न आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं। सही उपचार करने पर ये लक्षण कुछ दिन बाद कम हो जाते हैं और शरीर धीरे-धीरे सामान्य हो जाता है।

प्रश्न 4. तंबाकू क्या है? इसमें उपस्थित हानिकारक पदार्थ का नाम बताइए। इसके सेवन से शरीर पर क्या-क्या प्रभाव पड़ते हैं? संक्षेप में बताइए।

उत्तर– **तंबाकू–** तंबाकू का उपयोग सर्वप्रथम अमेरिका में हुआ। वहाँ रैड इंडियन इसका धूम्रपान करते थे। 1600 ई० में यह यूरोप में आ गया और आज विश्व की बहुत बड़ी आबादी इसका सेवन करती है। तंबाकू निकाटिआना टैबेकम नामक पौधे की पत्तियाँ हैं। इसमें निकोटिन नामक क्षारीय पदार्थ होता है जिसका मादक पदार्थ के रूप में उपयोग किया जाता है। इसको सिगरेट, बीड़ी व सिगार के रूप में उपयोग किया जाता है। भारत तथा कुछ अन्य देशों में लोग इसे चबाते भी हैं। इसका प्रयोग किसी भी रूप में कैंसर जैसा भयानक रोग पैदा करता है।

तंबाकू के सेवन से शरीर पर होने वाले प्रभाव–

तंबाकू में निकोटिन होता है जो एक उत्तेजक एवं विषैला पदार्थ है। तंबाकू पीते समय कुछ निकोटिन जलकर नष्ट हो जाता है तथा शेष विषैले पदार्थ का अधिकांश भाग धुँए के द्वारा रुधिर में मिलकर शरीर में फैल जाता है और शरीर को हानि पहुँचाता है।

यदि किसी मनुष्य में एक सिगार में पाए जाने वाली निकोटिन की मात्रा के बराबर इंजेक्शन लगाया जाए तो उसकी मृत्यु तक हो सकती है। जब धूम्रपान करते हैं, तब 10% निकोटिन साँस द्वारा शरीर में जाता है। चूँकि यह बहुत धीरे-धीरे लंबे समय में शरीर में अवशोषित होता है, इसलिए तत्काल इसका कोई प्रभाव दिखाई नहीं पड़ता। हमारे शरीर पर निकोटिन के बहुत-से प्रभाव पड़ते हैं—

(i) निकोटिन धमनियों की दीवारों को सख्त व मोटा कर देता है जिससे धमनियाँ सिकुड़ जाती हैं और रुधिर प्रवाह में रुकावट आने से हृदय रोग हो जाता है, हृदय-गति की दर तथा रक्तचाप दोनों ही बढ़ जाते हैं।

(ii) गर्भवती महिलाओं द्वारा धूम्रपान करने से भ्रूण की वृद्धि कम हो जाती है।

(iii) तंबाकू में ऐसे अनेक पदार्थ होते हैं, जिनके लगातार संपर्क से मुँह, जीभ, गले एवं फेफड़ों आदि में कैंसर होने की संभावना रहती है।

(iv) सिगरेट व बीड़ी पीने से कार्बन मोनोक्साइड उत्पन्न होती है जो रक्त की ऑक्सीजन ले जाने की क्षमता को कम कर देती है।

(v) धूम्रपान करने वाले व्यक्ति के शरीर में हीमोग्लोबिन की मात्रा लगभग 15 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

(vi) इससे ब्रोन्काइटिस, एम्फीसेमा, जठर व ग्रहणी में फोड़े हो जाते हैं।

प्रश्न 5. धूम्रपान एवं मदिरापान के प्रभाव पर एक निबंध लिखिए।

उत्तर– **धूम्रपान–** तंबाकू निकाटिआना टैबेकम नामक पौधे की पत्तियों से प्राप्त किया जाता है। इसमें निकोटिन नामक क्षारीय पदार्थ पाया जाता है जिसका उपयोग मादक पदार्थ के रूप में सिगरेट, बीड़ी, चुरुट तथा हुक्के में किया जाता है कुछ लोग तंबाकू को चबाकर भी प्रयोग करते हैं। तंबाकू खाकर या धुँए के रूप में ग्रहण करके व्यक्ति के शरीर में उत्तेजना होती है जिससे व्यक्ति को सुख का अनुभव होता है। तंबाकू को जलाकर सिगरेट, बीड़ी के रूप में पीने से कुछ निकोटिन जलकर नष्ट हो जाता है तथा शेष भाग धुँए के द्वारा रुधिर में मिलकर शरीर को हानि पहुँचाता है। यदि किसी मनुष्य में एक

सिगार में पाए जाने वाली निकोटिन की मात्रा के बराबर इंजेक्शन लगाया जाए तो उसकी मृत्यु तक हो सकती है।

धूम्रपान से शरीर पर होने वाले प्रभाव–

इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

मदिरापान– अति प्राचीनकाल से परिस्थितियों तथा तनाव आदि में राहत के लिए ऐल्कोहॉल (मदिरापान) का प्रयोग होता रहा है। यह एक सर्वाधिक प्रयोग होने वाला मादक पदार्थ है। वर्तमान समय में रम, ब्रांडी, व्हिस्की, वोदका, शैम्पेन, ताड़ी आदि शराबों का प्रयोग होता है। शराब गन्ने, गुड़, जौं, अंगूर आदि अनेक अन्य खाद्य पदार्थों से विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा अनेक प्रकार के स्वादों एवं प्रभावों की तैयार की जाती है। एक औसत व्यक्ति लगभग 2 ओंस शुद्ध ऐल्कोहॉल 24 घंटे में उपाचयित कर लेता है। रुधिर में इसका 0.2 प्रतिशत से अधिक होने पर इसके प्रभाव प्रदर्शित होने लगते हैं। शराब पीने वाला व्यक्ति अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों में तो विकृति उत्पन्न करता ही है, अपने सामाजिक, आर्थिक और व्यक्तिगत जीवन को भी बिगाड़ता है। सामाजिक कार्यकर्ताओं का मानना है कि शराब पीने से शारीरिक हानि होने के अतिरिक्त नैतिक, चारित्रिक एवं आर्थिक हानि भी होती है। इसीलिए सभी समाज-सुधारक, विचारक तथा सरकार भी शराब के विरोध में प्रचार करते हैं।

सामान्य रूप से शराब का सेवन नशा, सामाजिक स्तर का प्रदर्शन, अपनी दुर्बलताओं को छिपाने के लिए तथा उत्तेजना के लिए किया जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि शराब में विभिन्न गुण हैं, परंतु वास्तविकता यह है कि शराब में कोई भी गुण नहीं हैं। शराब हमारे विभिन्न तंत्रों को दुर्बल बनाती है तथा हमारी आँतों एवं आमाशय को भी नुकसान पहुँचाती है। अधिक ऐल्कोहॉल पीने से हमारे यकृत, वृक्कों (गुर्दों) फेफड़ों तथा रुधिर वाहिनियों पर अत्यधिक बुरा प्रभाव पड़ता है। ऐल्कोहॉल के दुष्परिणाम धीरे-धीरे प्रकट होते हैं। इसकी बारंबारता तादाद धीमे-धीमे क्रमश: बढ़ती ही जाती है, क्योंकि जो उत्तेजना होती है वह क्षणिक होती है और व्यक्ति उसे बार-बार प्राप्त करना चाहता है, इसी से उसमें लत (आदत) पड़ती जाती है।

मदिरापान से शरीर पर होने वाले प्रभाव–

इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

निष्कर्ष– धूम्रपान एवं मदिरापान का शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। अत: व्यक्ति को इनसे बचना चाहिए तथा जो लोग धूम्रपान अथवा मदिरापान करते हैं उनको इसकी आदत से छुटकारा पाने की कोशिश करनी चाहिए यही उनके तथा उनके परिवार के लिए अच्छा है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. धूम्रपान से क्या-क्या हानियाँ होती हैं?

उत्तर– धूम्रपान से हानियाँ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न 4 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 2. औषधि व्यसन किसे कहते हैं? नशीली औषधियों के दो प्रभाव लिखिए।

उत्तर– ऐसी औषधियाँ जिनका प्रयोग तंत्रिका तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है नशीली या साइकोट्रोपिक औषधियाँ कहलाती हैं। इनको नियमित रूप से प्रयोग करने वाले व्यक्ति को इनकी लत लग जाती है और व्यक्ति इन पर निर्भर हो जाता है इसे ही औषधि व्यसन कहते हैं। नशीली औषधियों के दो प्रभाव निम्नलिखित हैं—

(i) ये मस्तिष्क की क्रियाशीलता को कम करती हैं।

(ii) ये तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित करके प्रभावित करती हैं।

प्रश्न 3. मानव शरीर पर तंबाकू के चार प्रभाव बताइए।

उत्तर– (i) तंबाकू के प्रयोग से मुँह, जीभ, गले, फेफड़े आदि में कैंसर होने की संभावना रहती है।

(ii) इसके प्रयोग से शरीर में हीमोग्लोबिन की मात्रा कम हो जाती है।

(iii) इसके प्रयोग से हृदय रोग होने की संभावना बढ़ जाती है।

(iv) गर्भवती महिलाओं में धूम्रपान करने से भ्रूण की वृद्धि कम हो जाती है।

प्रश्न 4. ऐल्कोहॉल सेवन के दुष्प्रभाव का वर्णन कीजिए।

उत्तर– ऐल्कोहॉल सेवन के दुष्प्रभाव दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 2 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 5. विभ्रमक पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– यह विचार एवं भावनाओं में बदलाव लाने वाली नशीली औषधियाँ हैं। इनका प्रयोग करने वाले व्यक्ति इनके प्रभाव से ऐसी गलत धारणाएँ बना लेते हैं जैसे कि वे ध्वनि को देख सकते हैं। व्यसनी को स्वपनिल दुनिया का आभास होता है तथा समय, स्थान व दूरी का सामंजस्य नहीं रहता है। LSD, मैस्कालाइन, सीलोसाइविन तथा भाँग के उत्पाद (चरस, गाँजा, हशीश) आदि विभ्रमकों के उदाहरण हैं।

प्रश्न 6. नशीली औषधियों से आप क्या समझते हैं? किन्हीं दो उत्तेजक दवाओं के नाम भी लिखिए।

उत्तर– ऐसी औषधियाँ जिनके प्रयोग करने से व्यक्ति के तंत्रिका तंत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है नशीली औषधियाँ कहलाती हैं। ऐसी औषधि जिन पर व्यक्ति निर्भर हो जाता है व्यसन की श्रेणी में आती हैं। ये दवाइयाँ मस्तिष्क पर प्रभाव डालती हैं तथा व्यवहार में परिवर्तन लाती हैं।

दो उत्तेजक दवाएँ टॉफरेनिल तथा कैफीन हैं।

प्रश्न 7. नशीली औषधि किसे कहते हैं? उपयुक्त उदाहरणों सहित समझाइए।

उत्तर– नशीली औषधि— इसके लिए लघुउत्तरीय प्रश्न 6 का अवलोकन कीजिए।

मस्तिष्क पर प्रभाव डालने के आधार पर ये निम्न प्रकार की हो सकती हैं—

(i) शामक व निद्राकारक, **उदाहरण**— वैलियम व बार्बीट्यूरेट्स आदि।

(ii) उत्तेजक, **उदाहरणार्थ**— टॉफरेनिल, कैफीन आदि।

(iii) विभ्रमक, **उदाहरणार्थ**— चरस, हशीश, गाँजा, सीलोसाइविन आदि।

(iv) ओपिएट, **उदाहरणार्थ**— मॉर्फीन, कोडीन, हेरोइन आदि।

प्रश्न 8. तंबाकू में कौन-सा व्यसनकारी रसायन पाया जाता है? सिगरेट पीने से रक्त की ऑक्सीजन वाहकता किस प्रकार प्रभावित होती है?

उत्तर– तंबाकू में निकोटिन नामक व्यसनकारी रसायन पाया जाता है। सिगरेट पीने से कार्बन मोनोक्साइड उत्पन्न होती है, जिससे शरीर में हीमोग्लोबिन की मात्रा लगभग 15 प्रतिशत तक कम हो जाती है। जिससे रक्त को ऑक्सीजन ले जाने के लिए पर्याप्त मात्रा में हीमोग्लोबिन नहीं मिल पाता तथा रक्त की ऑक्सीजन वाहकता प्रभावित होती है।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. नशीले या मादक पदार्थों का व उनसे होने वाली हानियों का एक चार्ट तैयार करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

इकाई–6: आनुवंशिकी एवं जैव विकास

23 आनुवंशिकता के सिद्धांत

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मेंडेल कौन था? मेंडेल के आनुवंशिकता के नियमों की विवेचना कीजिए। या मेंडेल के वंशागति के नियमों का वर्णन कीजिए।

उत्तर- ग्रेगॉर जॉहन मेंडेल का जन्म ऑस्ट्रिया के ब्रुन शहर के छोटे से सिलीसियन गाँव में 22 जुलाई, 1822 ई० में एक अत्यंत साधारण स्थिति के माली परिवार में हुआ था। वे सन् 1847 ई० में एक गिरजाघर में पादरी नियुक्त हुए। उन्होंने सन् 1857 ई० में मटर के बीज एकत्रित करके उनकी भिन्नताओं का अध्ययन किया। इस अध्ययन और सिद्धांतों के प्रतिपादन के आधार पर इन्हें आनुवंशिकी का जनक कहा जाता है।

नियम- मेंडेल के आनुवंशिकी के नियम तीन प्रकार के हैं जो निम्नलिखित हैं—

(i) एकल लक्षण तथा प्रभाविता का नियम,

(ii) पृथक्करण या युग्मकों की शुद्धता का नियम,

(iii) स्वतंत्र अपव्यूहन का नियम

(i) एकल लक्षण तथा प्रभाविता का नियम- प्रत्येक एकल लक्षण किसी विशेष कारक के जोड़े या युग्म से नियंत्रित होता है। एक ही लक्षण के ये दो कारक परस्पर विपरीत प्रभाव के भी हो सकते हैं। तब, सामान्यत: एक कारक अपना प्रभाव प्रदर्शित करता है तथा प्रभावी कारक कहलाता है, जबकि दूसरा अप्रभावी होता है। यह भी कि संकरण के समय प्रभावी कारक का प्रभाव ही प्रदर्शित होता है।

उदाहरणार्थ— जब शुद्ध समयुग्मनजी अर्थात् गुणसूत्रों में एक ही प्रकार के लक्षणों की उपस्थिति, लंबे तथा शुद्ध बौने पौधों के बीच संकरण कराया जाता है, तो प्रथम संतानीय पीढ़ी (F_1) में विपरीत लक्षणों में से केवल एक लक्षण, जैसे मटर के पौधे में लंबापन जो प्रभावी है, दिखाई देता है और अप्रभावी लक्षण छिपा रहता है अर्थात् F_1 पीढ़ी के संतानीय पौधे विषमयुग्मनजी (Tt) या संकर होते हैं।

(शुद्ध) लंबे पौधे — प्रभावी (TT)   ×   **(शुद्ध) बौने पौधे** — अप्रभावी (tt)

सभी लंबे पौधे (tt) (संकर) **........(F_1 पीढ़ी)**

प्रभाविता का स्पष्टीकरण

(ii) पृथक्करण या युग्मकों की शुद्धता का नियम- कारकों का युग्म जो किसी लक्षण को संतति में ले जाता है, जनन की किसी अवस्था में विच्छेदित हो जाता है अर्थात् प्रत्येक कारक अलग-अलग हो जाता है। अत: यह अगली पीढ़ी में जाने के

पूर्व किसी कारक से फिर जोड़ा बनाता है। इसलिए एक मातृक तथा एक पैतृक कारक संतति में अपना प्रभाव दिखाते हैं।

उदाहरणार्थ— मटर के पौधे के एकसंकर संकरण के उदाहरण में द्वितीय संतति पीढ़ी (F_2) प्राप्त करने के लिए स्वपरागण कराया जाता है। इसके लंबेपन तथा बौनेपन के लक्षण 3 : 1 के अनुपात में फिर से प्राप्त हो जाते हैं।

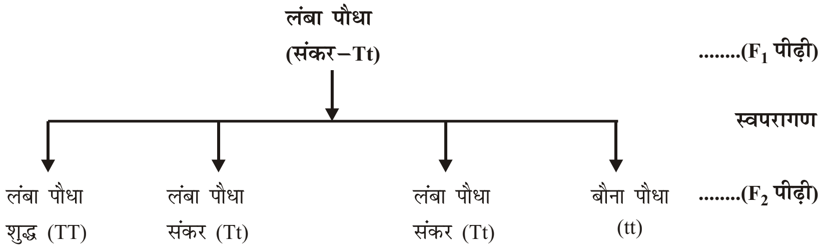

लक्षणों के पृथक्करण का स्पष्टीकरण

(iii) स्वतंत्र अपव्यूहन का नियम– किसी लक्षण के कारक युग्म में से कारकों का चयन स्वतंत्र होता है।

उदाहरणार्थ— द्विसंकर क्रॉस में जब मटर के पौधे के लिए मेंडेल ने दो लक्षणों का एक साथ अध्ययन किया, जैसे— बीज का आकार तथा बीजावरण का रंग है, तो F_1 पीढ़ी में सभी बीज दोनों लक्षणों के लिए प्रभावी थे, किंतु F_2 पीढ़ी के लिए जब F_1 के पौधों का स्वपरागण किया गया, तो 9 : 3 : 3 : 1 का अनुपात प्राप्त हुआ। F_2 पीढ़ी के लिए जो युग्मक मिले उनका अपव्यूहन स्वतंत्र रूप से हुआ।

प्रश्न 2. मेंडेल के पृथक्करण के नियम का उदाहरण सहित सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– मेंडेल का पृथक्करण का नियम– कारकों का युग्म जो किसी लक्षण को संतति में ले जाता है, जनन की किसी अवस्था में विच्छेदित हो जाता है अर्थात् प्रत्येक कारक अलग-अलग हो जाता है। अत: यह अगली पीढ़ी में जाने के पूर्व किसी कारक से फिर जोड़ा बनाता है। इसलिए एक मातृक तथा एक पैतृक कारक संगति में अपना प्रभाव दिखाते हैं।

उदाहरणार्थ— मटर के पौधे के एकसंकर संकरण के उदाहरण में द्वितीय संतति पीढ़ी (F_2) प्राप्त करने के लिए स्वपरागण कराया जाता है। इससे लंबेपन तथा बौनेपन के लक्षण 3 : 1 के अनुपात में फिर से प्राप्त हो जाते हैं।

चित्र के लिए प्रश्न 1 का अवलोकन कीजिए।

व्याख्या– लंबेपन का कारक (T) तथा बौनेपन का कारक (t) शुद्ध रूप में फिर से मिलकर 3 : 1 के अनुपात में लंबे तथा बौने पौधे उत्पन्न करते हैं। इनमें 25% शुद्ध लंबे, 50% संकर लंबे तथा 25% शुद्ध बौने पौधे होते हैं अर्थात् शुद्धता की दृष्टि से यह अनुपात 1 : 2 : 1 का होता है।

एक समजातीय जोड़े के प्रत्येक क्रोमोसोम पर जीन युग्म की एक-एक जीन उपस्थित होती है। अर्द्धसूत्री विभाजन के समय जब प्रत्येक समजातीय जोड़े का एक-एक क्रोमोसोम अलग-अलग युग्मक में जाता है, तो जीन युग्म का एक-एक जीन भी अलग-अलग युग्मकों में पहुँच जाता है। युग्मज के निर्माण के लिए दो युग्मक एक नर तथा दूसरा मादा मिलते हैं तो समजातीय क्रोमोसोम तथा साथ ही समजातीय जीन का फिर जोड़ा बन जाता है। इसका यह भी तात्पर्य है एक लक्षण के लिए युग्मक पूर्णत: शुद्ध होता है, क्योंकि उसमें जीन युग्म का एक ही जीन होता है। इसलिए, इस नियम को युग्मकों की शुद्धता का नियम भी कहते हैं।

प्रश्न 3. आनुवंशिकता किसे कहते हैं? मेंडेल द्वारा किए गए मटर के एकसंकरीय संकरण (क्रॉस) एवं उसके परिणाम का विस्तार से वर्णन कीजिए। या

आनुवंशिकता किसे कहते हैं? मेंडेल द्वारा किए गए एकसंकर संकरण को रेखाचित्र (चेकर बोर्ड) बनाकर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- **आनुवंशिकता-** जीवों में कुछ लक्षण ऐसे होते हैं जो माता-पिता से संतान में आते हैं, जिनके कारण माता-पिता व उनकी संतानों में समानता होती है। संतानों में उनके माता-पिता से प्राप्त इस प्रकार के लक्षणों को आनुवंशिक लक्षण या वंशागत लक्षण तथा संतान में माता-पिता से लक्षणों के वंशागत होने को वंशागति या आनुवंशिकता कहते हैं।

एकसंकर संकरण- मेंडेल ने मटर के लंबे (लगभग 2 मीटर) पौधों का बौने पौधों (लगभग आधा मीटर लंबे) के साथ संकरण कराया। इनसे बने बीजों को अंकुरित करने पर संकर बीजों से लंबे पौधे लगे। इस प्रकार दो विपरीत गुण वाले शुद्ध जनक पौधों के संकरण से उत्पन्न पौधों को संकर तथा इन पीढ़ी को प्रथम संतानीय पीढ़ी कहते हैं। इसे F_1 द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

अब मेंडेल ने लंबे पौधों वाली प्रथम संकर पीढ़ी में स्व-परागण कराया और उससे बने बीजों को बोने पर द्वितीय संतानीय पीढ़ी F_2 में लंबे व बौने प्रकार के पौधे 3 : 1 के अनुपात में उगे। अगली पीढ़ी अर्थात् तृतीय संतानीय पीढ़ी (F_3) का अध्ययन करने पर पता चला कि F_2 के सभी बौने पौधों से स्व-परागण के बाद बौने पौधे बनते हैं। अत: बौने पौधे बौनेपन के लिए शुद्ध हैं। किंतु लंबे पौधों में से एक-तिहाई पौधे लंबेपन के लिए शुद्ध हैं जबकि दो-तिहाई अशुद्ध लंबे थे। अशुद्ध लंबे पौधों से शुद्ध लंबे, अशुद्ध लंबे व शुद्ध बौने पौधे 1 : 2 : 1 के अनुपात में बने। अत: F_2 पीढ़ी में लंबे व बौने पौधों में 3 : 1 का अनुपात वास्तव में 1 : 2 : 1 का अनुपात है, शुद्ध लंबे 1 : अशुद्ध लंबे 2 : बौने 1। इन परिणामों को चित्रानुसार प्रदर्शित किया गया है।

उपर्युक्त प्रयोग को एकसंकर क्रॉस कहते हैं। इस प्रयोग से प्राप्त परिणामों की पुष्टि के लिए मेंडेल ने कुछ और विपरीत लक्षणों जैसे फूलों का रंग (लाल व सफेद), बीजों का रंग (हरा व पीला) तथा बीजों की आकृति (गोल व झुर्रीदार) को लेकर प्रयोग किए और प्रत्येक दशा में उन्हें वही 3 : 1 अनुपात मिला।

मेंडेल द्वारा प्रयोगों के परिणाम की व्याख्या- पौधों का लंबापन व बौनापन एक जोड़ी विपरीत लक्षण हैं जो युग्मक कोशिकाओं के जीवद्रव्य में किसी-न-किसी रूप में अवश्य पाए जाते हैं। मेंडेल ने इनको कारक या यूनिट का नाम दिया। प्रत्येक लक्षण के लिए एक-एक कारक होता है जो आनुवंशिक लक्षणों को माता-पिता से संतान में ले जाता है।

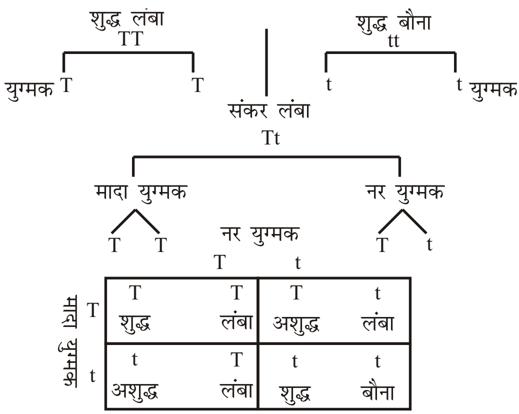

चेकर बोर्ड विधि द्वारा लक्षणों व उनसे संबंधित जीन की वंशागति का निरूपण

यदि लंबेपन को ''T'' से और बौनेपन को 't' से निरूपित करें तो पौधे में TT, Tt, tt में से कोई भी दो कारक साथ आ सकते हैं। इनमें से Tt संकर है जिसमें लंबे व बौनेपन, दोनों के कारक एक साथ हैं। किंतु इनमें केवल लंबे पौधे ही बनते हैं, इसका कारण यह है कि लंबापन पौधों के बौनेपन को दबा लेता है, अर्थात् T प्रभावी लक्षण है तथा t अप्रभावी। मेंडेल ने इसे 'प्रभाविता का नियम' माना।

मेंडेल ने देखा कि F_1 संकरों में स्व-परागण कराने पर इससे प्राप्त बीजों के अंकुरण से लंबे व बौने पौधे 3 : 1 के अनुपात में उगते हैं। किंतु इन तीनों लंबे पौधों में से एक शुद्ध है तथा शेष दो संकर है। तीसरी पीढ़ी में इनमें से केवल एक ही से लंबे पौधे बनते हैं (शुद्ध) तथा शेष दो (संकर) से लंबे व बौने पौधे पुन: 3 : 1 अनुपात में बनते हैं। इस प्रकार F_2 पीढ़ी में इनके बीच 1 : 2 : 1 का अनुपात होता है।

अत: मेंडेल ने कहा कि F_1 पीढ़ी में संकर बनने पर यद्यपि दोनों कारक एक साथ आ जाते हैं किंतु उनमें से केवल एक ही प्रकट होता है। जर्मप्लाज्म में दोनों कारक अलग-अलग रहते हैं और युग्मक बनने पर एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। दो विपरीत लक्षणों के इस प्रकार एक-दूसरे से पृथक हो जाने की क्रिया मेंडेल के दूसरे नियम की विशेषता है। मेंडेल ने इसे 'पार्थक्य का नियम या पृथक्करण का नियम' कहा।

प्रश्न 4. मेंडेल के स्वतंत्र अपव्यूहन के नियम को द्विसंकरीय संकरण द्वारा स्पष्ट कीजिए।

या

मेंडेल के द्विसंकर संकरण से आप क्या समझते हैं? मटर के गोल एवं पीले बीजों का मटर के हरे व झुर्रीदार बीजों के साथ संकरण किया। F_1 पीढ़ी में सभी मटर के बीज पीले व गोल थे। F_2 पीढ़ी का फीनोटाइप अनुपात ज्ञात कीजिए।

उत्तर- **मेंडेल द्वारा संपादित द्विसंकर संकरण-** जब दो युग्म विकल्पी लक्षणों वाले पौधों के अध्ययन के लिए संकरण कराया जाता है तो उसे द्विसंकरीय या द्विसंकर संकरण कहते हैं। एक उदाहरण में मटर के बीज के बीजावरण के रंग तथा उसके आकार के आधार पर अध्ययन किया गया है।

इस अध्ययन के लिए निम्न प्रकार के मटर के बीज लिए गए तथा संकरण कराया गया-

क्र०सं०	लक्षण	प्रभावी	अप्रभावी
1.	बीजावरण का रंग	पीला	हरा
2.	बीज का आकार	गोल	झुर्रीदार

इन दो युग्मविकल्पी लक्षणों वाले पौधों में संकरण कराने पर जो प्रथम संतानीय पीढ़ी (F_1) उत्पन्न हुई उसमें सभी बीज गोल तथा पीले थे। इस प्रथम संतानीय पीढ़ी (F_1) से उत्पन्न द्वितीय संतानीय पीढ़ी (F_2) में चार प्रकार के बीज प्राप्त हुए–

(i) गोल-पीले (ii) गोल-हरे
(iii) झुर्रीदार-पीले (iv) झुर्रीदार-हरे

इन चार प्रकार के बीजों में 9 : 3 : 3 : 1 का अनुपात था अर्थात् 16 बीजों में से 9 बीज गोल-पीले, 3 बीज गोल-हरे, 3 बीज झुर्रीदार-पीले तथा 1 बीज झुर्रीदार-हरा प्राप्त हुआ अर्थात् बीजावरण का पीला या हरा रंग बीज को गोल या झुर्रीदार आकार में से किसी के साथ भी जा सकता है या यों कहें– ''किसी लक्षण के कारक युग्म में से कारकों का चयन स्वतंत्र होता है।''

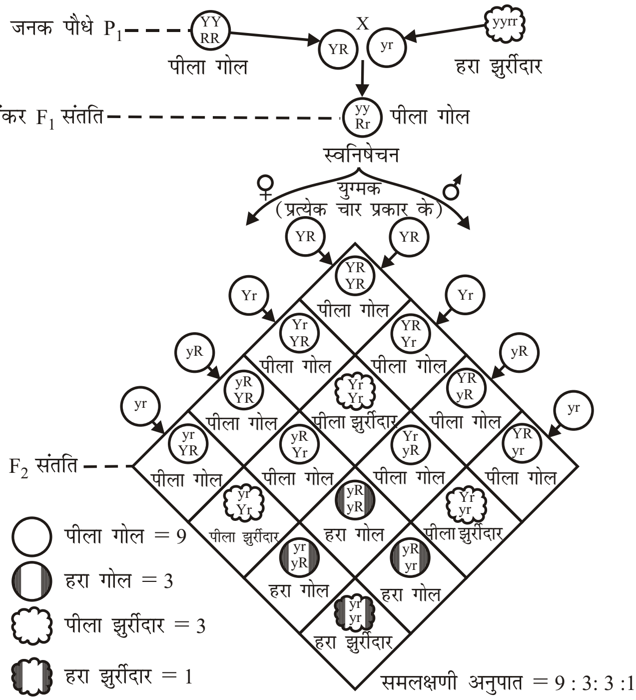

मेंडेल द्वारा संपादित द्विसंकर संकरण का रेखाचित्र (चेकर बोर्ड)

स्वतंत्र अपव्यूहन का नियम– किसी लक्षण के कारक-युग्म में से कारकों का चयन स्वतंत्र होता है।

उदाहरण एवं व्याख्या– द्विसंकर क्रॉस में जब मटर के पौधे के लिए मेंडेल ने दो लक्षणों का एक साथ अध्ययन किया, जैसे– बीज का आकार (गोल-प्रभावी तथा झुर्रीदार-अप्रभावी) तथा बीजावरण का रंग (पीला-प्रभावी तथा हरा-अप्रभावी) है, तो F_1 पीढ़ी में सभी बीज दोनों लक्षणों के लिए प्रभावी थे, किंतु F_2 पीढ़ी के लिए जब F_1 के पौधों का स्वपरागण किया गया, तो 9 : 3 : 3 : 1 का अनुपात प्राप्त हुआ। F_2 पीढ़ी के लिए जो युग्मक मिले उनका अपव्यूहन स्वतंत्र रूप से हुआ अर्थात्

(i) हरा रंग सदैव गोल बीज के साथ ही नहीं, बल्कि झुर्रीदार बीज के साथ भी मिला।

(ii) पीला रंग सदैव झुर्रीदार बीज के साथ ही नहीं, बल्कि गोल बीज के साथ भी मिला अर्थात् लक्षणों ने स्वतंत्र प्रदर्शन किया।

प्रश्न 5. आनुवंशिकता की खोज किसने की? उन वैज्ञानिकों के नाम बताइए जिन्होंने मेंडेल के सिद्धांतों को नियमों के रूप में खोज निकाला। मेंडेल के किसी एक नियम की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

उत्तर– आनुवंशिकता की खोज ग्रेगॉर जॉहन मेंडेल ने की। सन् 1900 ई० में तीन देशों के अलग-अलग वैज्ञानिकों ने लगभग साथ-साथ, किंतु स्वतंत्र रूप से, अपने प्रयोगों के आधार पर मेंडेल जैसे निष्कर्ष निकाले तथा मेंडेल के सिद्धांतों को नियमों का रूप दिया, उन वैज्ञानिकों के नाम निम्न हैं–

(i) हॉलैंड के ह्यूगो डी व्रीज,

(ii) जर्मनी के कार्ल कारेंस,

(iii) ऑस्ट्रिया के एरिक वॉन शैरमैक।

मेंडेल के किसी एक नियम की उदाहरण सहित व्याख्या के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 का अवलोकन कीजिए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. ग्रेगॉर जॉहन मेंडेल के संबंध में आप क्या जानते हैं?

उत्तर- ग्रेगॉर जॉहन मेंडेल को उनके स्पष्ट तथा प्रायोगिक विधि से किए गए अध्ययन तथा सिद्धांतों के प्रतिपादन के आधार पर आनुवंशिकी का जनक कहा जाता है।

ग्रेगॉर जॉहन मेंडेल का जन्म ऑस्ट्रिया के ब्रुन शहर के छोटे-से सिलीसियन गाँव में 22 जुलाई, 1822 ई० में एक अत्यंत साधारण स्थिति के माली परिवार में हुआ था। वे सन् 1847 ई० में एक गिरीजाघर में पादरी नियुक्त हुए। उन्होंने सन् 1857 ई० से मटर के बीज एकत्रित करके उनकी भिन्नता का अध्ययन किया।

प्रश्न 2. प्रभाविता के नियम पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- प्रभाविता का नियम- इस नियम के अनुसार जीन के जोड़े में से प्रभावी जीन अप्रभावी जीन को प्रदर्शित नहीं होने देता है, अर्थात् जब परस्पर विरोधी लक्षण वाले पौधों के बीच संकरण कराया जाता है तो उनकी संतानों में विरोधी लक्षणों में से एक प्रभावी लक्षण प्रदर्शित होता है तथा दूसरा अप्रभावी लक्षण प्रदर्शित नहीं होता है। इसे प्रभाविता का नियम कहते हैं। मेंडेल ने इसे एकसंकरण क्रॉस के प्रयोग के पश्चात् प्रतिपादित किया।

प्रश्न 3. एकसंकर (मोनोहाइब्रिड) तथा द्विसंकर (डाइहाइब्रिड) से आप क्या समझते हैं?

उत्तर- एकसंकर संकरण- विपरीत लक्षण वाले नर तथा मादा के मध्य जब केवल एक जोड़ा विपरीत लक्षणों के अध्ययन के लिए संकरण कराया जाता है तो इन विपरीत लक्षणों के संकरण को एकसंकर (गुण) संकरण कहते हैं, जैसे— लाल फूल वाले तथा सफेद फूल वाले पौधों के मध्य संकरण।

द्विसंकर संकरण- जब विपरीत लक्षणों वाले नर तथा मादा के मध्य दो जोड़ा विपरीत लक्षणों के अध्ययन के लिए संकरण कराया जाता है तो इसे द्विसंकर संकरण कहते हैं, जैसे— पीले-गोल बीज वाले हरे-झुर्रीदार बीज वाले पौधों के मध्य संकरण।

प्रश्न 4. प्रभावी तथा अप्रभावी लक्षण की परिकल्पना लिखिए।

उत्तर- प्रभावी तथा अप्रभावी लक्षण- जब विपरीत लक्षणों वाले पौधों के बीच संकरण कराया जाता है तो पहली संतानीय पीढ़ी (F_1) में केवल एक लक्षण प्रकट होता है और दूसरा छिपा रहता है। जो लक्षण संकर संतान में प्रकट होता है उसे प्रभावी और जो छिपा रहता है उसे अप्रभावी लक्षण कहते हैं; जैसे— लंबे और बौने पौधों के मध्य संकरण से प्रथम संतानीय पीढ़ी में लंबे पौधे प्रकट होते हैं अर्थात् यहाँ लंबापन का लक्षण प्रभावी है और बौनापन का लक्षण अप्रभावी है।

प्रश्न 5. मेंडेल के संकर क्रॉस को केवल नामांकित चित्रों द्वारा स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न 3 व प्रश्न 4 के उत्तर का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 6. आनुवंशिकता में प्रभावी तथा अप्रभावी लक्षणों से क्या तात्पर्य है? मेंडेल के प्रयोगों से किसी एक प्रभावी लक्षण का वर्णन कीजिए।

उत्तर- आनुवंशिकता में प्रभावी तथा अप्रभावी लक्षण- जब विपरीत लक्षणों वाले पौधों के बीच संकरण कराया जाता है तो पहली संतानीय पीढ़ी (F_1) में केवल एक लक्षण प्रकट होता है और दूसरा छिपा रहता है। जो लक्षण संकर संतान में प्रकट होता है उसे प्रभावी तथा जो छिपा रहता है उसे अप्रभावी लक्षण कहते हैं। जैसे— लंबे और बौने पौधे के मध्य संसकरण से प्रथम संतानीय पीढ़ी में लंबे पौधे प्रकट होते हैं। अर्थात् यहाँ लंबापन का लक्षण प्रभावी तथा बौनापन का लक्षण अप्रभावी है।

प्रश्न 7. मेंडेल की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर– **मेंडेल की उपयोगिता–** यह निम्न प्रकार हैं–

(i) मेंडेल के नियम मुर्गी पालन, अंडों की नस्ल में सुधार, अधिक दूध देने वाले पालतू पशुओं व अन्य लाभप्रद जंतुओं की नस्ल को सुधारने में उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

(ii) मेंडेल के नियमों के आधार पर फसली पौधों व फल प्रदान करने वाले वृक्षों की नवीन किस्में विकसित की गई हैं।

(iii) मेंडेल के नियमों ने मनुष्य के जीवन को सुलभ बनाने में अत्यधिक सहयोग किया है। कई प्रकार के नए भोज्य पदार्थ, अनाज, फल आदि पैदा करने में मनुष्य ने सफलता प्राप्त की है।

(iv) मानव जाति के सुधार हेतु तथा आनुवंशिक रोगों से बचने के लिए मेंडेल के नियमों पर आधारित सुजनिकी विज्ञान की स्थापना हुई है।

प्रश्न 8. आनुवंशिकता का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

उत्तर– आनुवंशिकता के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 9. समयुग्मजी एवं विषमयुग्मजी में अंतर लिखिए।

उत्तर– **समयुग्मजी एवं विषमयुग्मजी में अंतर**

क्र०सं०	समयुग्मजी	विषमयुग्मजी
1.	एक जीन के दोनों युग्मविकल्पी समान होते हैं।	एक जीन के दोनों युग्मविकल्पी अलग-अलग होते हैं।
2.	केवल एक प्रकार के युग्मक बनते हैं।	दो अलग-अलग प्रकार के युग्मक बनते हैं।
3.	स्वपरागण या अंत: प्रजनन होने पर संतति माता-पिता के समलक्षणी व सम जीनी होती हैं।	स्वपरागण या अंत: प्रजनन होने पर संतति में प्रभावी व अप्रभावी दोनों विपर्यासी लक्षण व्यक्त होते हैं।

प्रश्न 10. मेंडेल ने अपने प्रयोगों के लिए किस पौधे का प्रयोग किया था? उसका वानस्पतिक नाम लिखिए। मेंडेल के प्रभावी गुणों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– मेंडेल ने अपने प्रयोगों के लिए मटर के पौधे का प्रयोग किया था। मटर का वानस्पतिक नाम पाइसम सैटाइवम है।

मेंडेल के प्रभावी गुण– जब विपरीत लक्षणों वाले पौधों के बीच संकरण कराया जाता है तो पहली संतानीय पीढ़ी (F_1) में केवल एक लक्षण प्रकट होता है और दूसरा छिपा रहता है। जो लक्षण संतान में प्रकट होता है उसे प्रभावी और जो छिपा रहता है उसे अप्रभावी लक्षण कहते हैं।

प्रश्न 11. मेंडेल के पृथक्करण नियम को उपयुक्त उदाहरण देते हुए समझाइए।

उत्तर– **मेंडेल का पृथक्करण नियम–** कारकों का युग्म जो किसी लक्षण को संतति में ले जाता है, जनन की किसी अवस्था में विच्छेदित हो जाता है अर्थात् प्रत्येक कारक अलग-अलग हो जाता है। अत: यह अगली पीढ़ी में जाने के पूर्व किसी कारक से फिर जोड़ा बनाता है। इसलिए एक मातृक तथा एक पैतृक कारक संतति में अपना प्रभाव दिखाते हैं।

उदाहरणार्थ– मटर के पौधे के एकसंकर संकरण में द्वितीय संतति पीढ़ी (F_2) प्राप्त करने के लिए स्वपरागण कराया जाता है। इसमें लंबेपन तथा बौनेपन के लक्षण 3 : 1 के अनुपात में फिर से प्राप्त हो जाते हैं।

प्रश्न 12. मेंडेल की सफलता के क्या कारण थे?

उत्तर– **मेंडेल की सफलता–** दूरदर्शिता के कारण ही मेंडेल को अपने प्रयोगों में सफलता मिली। उनकी सफलता के निम्नलिखित कारण थे—

(i) मेंडेल की कार्यविधि–

(a) मेंडेल ने एक समय में केवल एक ही लक्षण की वंशागति का अध्ययन किया, जबकि पहले वैज्ञानिकों ने पूरे जीव को एक लक्षण माना था।

(b) मेंडेल ने अपने प्रयोगों का F_2 (दूसरी) तथा F_3 (तीसरी) पीढ़ियों तक अध्ययन किया।

(c) उन्होंने अपने प्रयोगों का पूरा रिकॉर्ड रखा और उनका सावधानीपूर्वक अध्ययन किया।

(d) उन्होंने केवल ऐसे पौधों को चुना जो आनुवंशिक रूप से शुद्ध थे। इसकी पुष्टि उन्होंने अगली पीढ़ियों के स्व-परागण परीक्षणों से की।

(e) उन्होंने संकरण के लिए सदैव स्वस्थ पौधों को चुना।

(f) उन्होंने शुद्ध लक्षण वाले पौधों को वाटिका में अलग-अलग क्यारियों में बोया जिससे उनमें अन्य लक्षणों वाले पौधों से मिलने की संभावना न रहे।

(g) स्व-परागण की संभावना को समाप्त करने के लिए उन्होंने कुछ लंबे और छोटे पौधों के पुंकेसर काट दिए।

(ii) प्रयोगों के लिए वस्तु का चयन– प्रयोगों के लिए मेंडेल ने मटर के पौधों का चयन निम्नलिखित कारणों के आधार पर किया—

(a) मटर का पौधा एकवर्णी पौधा है। अत: इसका जीवन-चक्र छोटा होता है जिससे कुछ ही समय में इसकी अनेक पीढ़ियों का अध्ययन करना संभव है।

(b) इसके पुष्पों में नर तथा मादा जननांग एक ही पुष्प में होते हैं।

(c) इसमें कृत्रिम पर-परागण द्वारा संकरण कराया जा सकता है।

(d) स्व-निषेचन के कारण मटर के पौधे समयुग्मजी होते हैं, अत: पीढ़ी-दर-पीढ़ी इसके पौधे शुद्ध लक्षण वाले बने रहते हैं।

(e) मटर के पौधों में बहुत-से ऐसे लक्षण मिलते हैं जो एक-दूसरे के विपरीत हैं।

प्रश्न 13. संकरण क्या है? इससे जाति को क्या लाभ है?

उत्तर– **संकरण–** जब तुलनात्मक लक्षणों वाले नर और मादा के बीच निषेचन कराया जाता है तो उससे उत्पन्न हुई संतानों को संकर कहते हैं। और यह क्रिया संकरण कहलाती है।

संकरण से जाति को लाभ–

(i) संकरण के अनुसार, जब शुद्ध लंबे तथा बौने पौधों के बीच संकरण कराया जाता है तो प्रथम पीढ़ी (F_1) में प्राप्त सभी पौधे लंबे होते हैं, क्योंकि लंबेपन का गुण प्रभावी तथा बौनेपन का गुण अप्रभावी होता है।

(ii) जब शुद्ध बैंगनी एवं शुद्ध सफेद पुष्प वाले मटर के पौधों के बीच संकरण कराया जाता है तो प्रथम पीढ़ी के सभी पौधे बैंगनी पुष्प वाले होते हैं। अत: बैंगनी पुष्प प्रभावी तथा सफेद पुष्प अप्रभावी होता है।

प्रश्न 14. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए–

(a) सेण्ट्रोमीयर, (b) मेंडेल का स्वतंत्र अपव्यूहन का नियम

उत्तर– **(a) सेण्ट्रोमीयर–** इसे प्राथमिक संकीर्णन भी कहते हैं। इससे गुणसूत्र माइटोसिस के तर्कु के साथ जुड़ा रहता है।

सेण्ट्रोमीयर की स्थिति के आधार पर गुणसूत्र मध्यकेंद्री, उपमध्यकेंद्री, अग्रबिंदुकी या अंतकेंद्री होते हैं।

(b) स्वतंत्र अपव्यूहन का नियम– किसी लक्षण के कारक युग्म में से कारकों का चयन स्वतंत्र होता है।

उदाहरण एवं व्याख्या– द्विसंकर क्रॉस में जब मटर के पौधे के लिए मेंडेल ने दो लक्षणों का एक साथ अध्ययन किया, जैसे— बीज का आकार (**गोल**–प्रभावी तथा **झुर्रीदार**–अप्रभावी) तथा बीजावरण का रंग (**पीला**–प्रभावी तथा **हरा**–अप्रभावी) है, तो F_1 पीढ़ी में सभी बीज दोनों लक्षणों के लिए प्रभावी थे, किंतु F_2 पीढ़ी के लिए जब F_1 के पौधों का स्वपरागण किया गया, तो 9 : 3 : 3 : 1 का अनुपात प्राप्त हुआ। F_2 पीढ़ी के लिए जो युग्मक मिले उनका अपव्यूहन स्वतंत्र रूप से हुआ अर्थात्—

(a) हरा रंग सदैव गोल बीज के साथ ही नहीं, बल्कि झुर्रीदार बीज के साथ भी मिला अर्थात् लक्षणों ने स्वतंत्र प्रदर्शन किया।

(b) पीला रंग सदैव झुर्रीदार बीज के साथ ही नहीं, बल्कि गोल बीज के साथ भी मिला अर्थात् लक्षणों ने स्वतंत्र प्रदर्शन किया।

प्रश्न 15. मेंडेल पर विज्ञान के क्षेत्र में उनके योगदान पर टिप्पणियाँ लिखिए।

उत्तर– मेंडेल का विज्ञान के क्षेत्र में योगदान–

(i) आनुवंशिक विज्ञान, जिसकी नींव मेंडेल ने डाली आज काफी विकसित हो चुका है। इस विज्ञान ने मनुष्य के जीवन को सुलभ बनाने में अत्याधिक सहयोग किया है। कई प्राकर के नए भोज्य पदार्थ, अनाज, फल इत्यादि पैदा करने में मनुष्य ने सफलता प्राप्त की है।

(ii) मेंडेल के नियम मुर्गी पालन, अंडों की नस्ल में सुधार, अधिक दूध देने वाले पालतू पशुओं (गाय, भैंस) अच्छी नस्ल की भेड़, बकरियों, अधिक गोश्त प्रदान करने वाले सुअरों व अन्य लाभप्रद जंतुओं की नस्ल को सुधारने में उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

(iii) मेंडेल के नियमों के आधार पर फसली पौधों (चावल, गेहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि) व फल प्रदान करने वाले वृक्षों की नवीन किस्में विकसित की गई हैं, जो रोग प्रतिरोधी, पीड़क प्रतिरोधी तथा अधिक उत्पादन देने वाली हैं। नए प्रकार के बीज का निर्माण पादप प्रजनन के विभिन्न प्रकार के प्रयोगों पर निर्भर करते हैं। इन विधियों द्वारा अधिक उत्पादन देने वाले बीज रोगों से बचने की योग्यता प्राप्त बीज आदि अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं।

(iv) भारतवर्ष में इस संबंध में सरकारी तथा गैर सरकारी अनेक संस्थान विभिन्न क्षेत्रों में अनेक महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। इनमें भारतीय कृषि शोध संस्थान, नई दिल्ली (IARI), उत्तर प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पंतनगर (वर्तमान उत्तराखंड), आलू शोध संस्थान शिमला, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना आदि स्थानों में अनेक महत्वपूर्ण कार्य करने में देश के वैज्ञानिक जुटे हैं।

(v) मानव जाति के सुधार हेतु तथा आनुवंशिक रोगों से बचने के लिए मेंडेल के नियमों पर आधारित सुजनिकी विज्ञान की स्थापना हुई है।

प्रश्न 16. निम्नलिखित जोड़ों के बीच केवल दो अंतर लिखिए–

(a) लक्षण प्ररूप तथा जीन प्ररूप

(b) समयुग्मजी तथा विषमयुग्मजी

उत्तर- (a) **लक्षण प्ररूप तथा जीन प्ररूप में अंतर**

क्र०सं०	लक्षण प्ररूप	जीन प्ररूप
1.	समलक्षणी जीवों के विभिन्न गुणों जैसे आकार एवं आकृति रंग तथा स्वभाव आदि को व्यक्त करता है।	जीनी-संरचना जीव के जैनिक संगठन को व्यक्त करती है जो कि उसमें विभिन्न लक्षणों को निर्धारित करता है।
2.	जीवों को प्रत्यक्ष देखने से ही समलक्षणी का पता चल जाता है।	जीनी-संरचना को जीवों की पूर्वज-कथा या संतति के आधार पर ही स्थापित किया जा सकता है।
3.	समान समलक्षणी वाले जीवों की जीनी-संरचना समान हो भी सकती है और नहीं भी।	समान जीनी-संरचना वाले जीवों के एक ही पर्यावरण में होने पर उनका समलक्षणी भी समान होता है।

(b) **समयुग्मजी तथा विषमयुग्मजी में अंतर**

क्र०सं०	समयुग्मजी	विषमयुग्मजी
1.	एक जीन के दोनों युग्मविकल्पी समान होते हैं।	एक जीन के दोनों युग्मविकल्पी अलग-अलग होते हैं।
2.	केवल एक प्रकार के युग्मक बनते हैं।	दो अलग-अलग प्रकार के युग्मक बनते हैं।
3.	स्वपरागण या अंत:प्रजनन होने पर संतति माता-पिता के समलक्षणी व सम-जीनी होती हैं।	स्वपरागण या अंत:प्रजनन होने पर संतति में प्रभावी व अप्रभावी दोनों विपर्यासी लक्षण व्यक्त होते हैं।

प्रश्न 17. मेंडेल के आनुवंशिकता नियमों का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।

उत्तर- मेंडेल के आनुवंशिकता नियमों के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 1 का अवलोकन कीजिए।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. मेंडेल के आनुवंशिकी के नियमों का अध्ययन करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।

□□□

24 मानव आनुवंशिकी

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. मानव आनुवंशिकता का क्या अर्थ है? इसके अध्ययन से मानव समाज को क्या लाभ है? अपने विचार प्रस्तुत कीजिए। या

मानव आनुवंशिकी से आप क्या समझते हैं? इसके जनक कौन थे? इसके क्या लाभ हैं?

उत्तर- मानव आनुवंशिकी या सुजननिकी- मानव आनुवंशिकी या सुजननिकी, आनुवंशिकी की वह शाखा है, जो मानव के विभिन्न गुणों, विशेषकों (लक्षणों) की आनुवंशिकी का अध्ययन कराती है। यह मानव जाति की भावी पीढ़ियों में लक्षणों की वंशागति को आनुवंशिकी के सिद्धांतों को सहायता से, नियंत्रित करके जाति को सुधारने के प्रयासों का अध्ययन कराती है।

अनेक कठिनाइयों के कारण मानव पर सीधे प्रयोगों द्वारा आनुवंशिकी का अधिक प्रायोगिक अध्ययन संभव नहीं हो सका है, परंतु वंशों के इतिहास के अध्ययन तथा अन्य कुछ विधियों के द्वारा कुछ वैज्ञानिकों ने अनेकानेक लक्षणों की वंशागति मनुष्य में प्रदर्शित की है। ये लक्षण आनुवंशिकी विशेषक कहलाते हैं। लगभग 200 विशेषकों का महत्वपूर्ण अध्ययन अब तक मनुष्य के विषय में हो चुका है। वर्तमान में नई-नई तकनीकें विकसित की जा रही हैं, जो मानव जाति के लिए भी आनुवंशिकी अध्ययनों को सरल बना रही हैं। अन्यथा आनुवंशिकी के विभिन्न क्षेत्रों में सबसे कठिन क्षेत्र मानव वंशागति का अध्ययन ही है। वास्तव में प्रयोगात्मक अध्ययन, जो आनुवंशिकीय अध्ययन की कुंजी है, मनुष्य में संभव ही नहीं है। कोशिकानुवंशिकीय रूप में भी अधिक संख्या, अत्यधिक छोटे तथा अतिसूक्ष्म कोशिकाओं के अंदर गुणसूत्रों की उपस्थिति के कारण यह कार्य दुर्लभ अवश्य है। मानव एक धीमा प्रजनक, आनुवंशिकीय संगठन में विषमयुग्मनजी प्राणी है। उसके भ्रूण का परिवर्द्धन अत्यंत जटिल तथा निश्चित वातावरण में ही संभव है, जो परिवर्तनीय वातावरण में अत्यधिक प्रभावित होता है। अनेकानेक सामाजिक बंधनों आदि के कारण मानव में इच्छित संगम परीक्षण भी संभव नहीं है।

इन अनेक कठिनाइयों तथा अन्य कारणों से वंशों (परिवारों) के इतिहास के अध्ययन के द्वारा कुछ वैज्ञानिकों, जैसे— सर फ्रांसिस गाल्टन (1868-1876) हार्डी एवं वीनबर्ग (1908), जोरगर, गोडार्ड आदि ने यह ज्ञात किया कि मनुष्य में अनेकानेक लक्षण वंशानुगत होते हैं। फिर भी मानव आनुवंशिकी का अधिकांश भाग अन्य जंतुओं पर किए गए प्रयोगों पर आधारित है। **उदाहरणार्थ-** लिंग निर्धारण के प्रयोग अन्य जंतुओं, जैसे ड्रॉसोफिला पर किए गए हैं तथा लिंग निर्धारण के गुणसूत्र सिद्धांत को स्थापित किया गया।

इस पर भी मानव, आनुवंशिक अध्ययन के लिए लंबी आयु, अनेक वंशावलियों की उपलब्धि तथा वर्णांधता, बुद्धिलब्धि, हीमोफीलिया, गंजापन जैसे अनेक विशेष विशेषकों के रूप में अति महत्वपूर्ण सामग्री है।

मानव आनुवंशिकी का लाभ– मानव आनुवंशिकी का अध्ययन मानव समाज के लिए अनेक प्रकार से लाभप्रद है। इसके द्वारा मानव संततियों में आने वाले रोगों के बारे में अध्ययन किया जाता है। इन रोगों के निदान के बारे में जानकारी प्राप्त कर, मनुष्य इनकी चिकित्सा पहले से ही कर सकता है। सुजननिकी द्वारा अच्छे लक्षणों की वंशागति के लिए समाज के आनुवंशिकी स्तर का अध्ययन किया जाता है। इसके बाद निषेधात्मक अथवा स्वीकारात्मक विधियाँ काम में लाई जाती हैं, अर्थात् निम्नकोटि के आनुवंशिकी लक्षणों की वंशागति से व्यक्तियों को रोका जाता है अथवा उच्च कोटि के लक्षणों वाले व्यक्तियों को वंशागति के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। दोनों प्रकार की सुजननिकी के लिए विभिन्न प्रकार की विधियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं, जैसे– निषेधात्मक सुजननिकी के लिए वैवाहिक प्रतिबंध, बंहयीकरण, संतति नियंत्रण आदि के लिए गर्भपात इत्यादि, तथा स्वीकारात्मक सुजननिकी के लिए उत्कृष्ट चयन, उच्च आनुवंशिक लक्षणों का अधिकाधिक उपयोग, उच्चकोटि के लक्षणों वाले पुरुष का वीर्य संचित करना तथा कृत्रिम गर्भाधान के लिए उसका उपयोग करना आदि।

प्रश्न 2. वंशागति का गुणसूत्र मत क्या है? इसकी मान्यता समाप्त होने पर जीन मत का प्रतिपादन किस आधार पर किया गया?

उत्तर– वंशागति का गुणसूत्र मत– मानव जाति की भावी पीढ़ियों में लक्षणों की वंशागति को आनुवंशिकी के सिद्धांतों की सहायता से, नियंत्रित करके जाति को सन् 1900 ई० में मेंडेल के नियमों की पुन: खोज के बाद वाल्टन एस० सटन ने आनुवंशिकी का गुणसूत्र सिद्धांत प्रस्तुत किया। इस सिद्धांत के अनुसार—

(i) सभी जीवों में प्रत्येक लक्षण के लिए कम-से-कम एक जोड़ी या कारक अवश्य होते हैं।

(ii) आनुवंशिक लक्षणों के जीन या आनुवंशिक कारक गुणसूत्रों पर पंक्तिबद्ध होते हैं और गुणसूत्रों के साथ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में वंशागत होते हैं।

(iii) बहुकोशिकीय जीवों में जनन कोशिकाओं के माध्यम से विभिन्न पीढ़ियों में जैविक संबंध स्थापित रहता है। इसका अर्थ है कि आनुवंशिक लक्षणों के जीन जनन कोशिकाओं या युग्मकों द्वारा दूसरी पीढ़ी के जीवों में पहुँचते हैं।

(iv) किसी जीव के लक्षणों में शुक्राणु व अंडाणु दोनों ही का बराबर योगदान होता है।

(v) युग्मक निर्माण के समय अर्धसूत्री विभाजन में गुणसूत्रों के व्यवहार से प्रमाणित होता है कि जीन गुणसूत्रों पर होते हैं।

(vi) जीवों की प्रत्येक कोशिका में गुणसूत्र जोड़ों में मिलते हैं किंतु युग्मकों में प्रत्येक गुणसूत्र-युग्म में केवल एक गुणसूत्र होता है।

(vii) अगुणित शुक्राणु या अंडाणु के संलयन से बना युग्मज द्विगुणित होता है जिससे पूर्ण जीव का विकास होता है।

इस प्रकार, वंशागति का भौतिक आधार गुणसूत्र ही है। आधुनिक धारणा और प्रायोगिक कार्य भी यही प्रदर्शित करता है।

वंशागति का गुणसूत्रीय मत प्रस्तुत होने के बाद कुछ नई खोजों से पता चला कि जीवों में अनेक आनुवंशिक लक्षण होते हैं। इनकी संख्या उनके गुणसूत्रों की संख्या से बहुत अधिक होती है। वंशागति एवं वातावरणीय विविधताओं के बीच अन्तर स्पष्ट करने के लिए जॉहन्सेन ने सन् 1909 ई० में जीनप्ररूप-लक्षणप्ररूप धारणा (genotype-phenotype concept) का सूत्रपात किया। उनके अनुसार, एक जीव का जीनप्ररूप उसकी संपूर्ण आनुवंशिकता का निरूपण करता है। उन्होंने बताया कि ये संरचनाएँ

गुणसूत्रों पर ही छोटे-छोटे दानों के रूप में उपस्थित होती हैं। इसी आधार पर उन्होंने ही वंशागति का जीन मत प्रस्तुत किया।

सन् 1941 ई० में बीडल एवं टैटम ने न्यूरोस्पोरा नामक एककोशिकीय कवक पर प्रयोग करके सिद्ध किया कि प्रत्येक जीन एक निर्दिष्ट एंजाइम के संश्लेषण का संदेश होता है। इस आधार पर उन्होंने एक जीन-एक एंजाइम (one gene - one enzyme) की धारणा प्रस्तुत की, जिसके लिए उन्हें सन् 1958 ई० में नोबेल पुरस्कार भी मिला। परंतु बाद में नई खोजों से पता चला कि एक जीन में केवल एक पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला के संश्लेषण का संदेश होता है, जबकि अधिकतर एंजाइम्स एक से अधिक पॉलीपेप्टाइड श्रृंखलाओं के बने होते हैं। एक जीन एक एन्जाइम परिकल्पना एक जीन-एक पॉलीपेप्टाइड (one gene-one polypeptide) में परिवर्तित हो गई। इस परिकल्पना को आनुवंशिकी का मूल सिद्धांत कहते हैं।

प्रश्न 3. लिंग गुणसूत्र का क्या अर्थ है? मनुष्य में लिंग निर्धारण किस प्रकार होता है? रेखाचित्र की सहायता से समझाइए। या

लिंग गुणसूत्र से आप क्या समझते हैं? इनके प्रमुख कार्य लिखिए। या

लिंग निर्धारण को समझाइए।

उत्तर- लिंग निर्धारण- इस सिद्धांत के अनुसार सभी पृथकलिंगी जंतुओं में दो प्रकार के गुणसूत्र होते हैं—

(i) कायिक गुणसूत्र या ऑटोसोम्स- इन पर केवल दैहिक लक्षणों के जीन होते हैं। इनके प्रत्येक युगल या जोड़े के दोनों गुणसूत्र एक जैसे होते हैं।

(ii) लिंग गुणसूत्र- ये गुणसूत्र केवल लिंग निर्धारित करते हैं। जंतुओं में इनका केवल एक जोड़ा होता है। मादा जंतुओं में दोनों लिंग गुणसूत्र एक जैसे होते हैं। इन्हें X-गुणसूत्र कहते हैं। नर जंतुओं में दोनों लिंग गुणसूत्र अलग-अलग आकार के होते हैं। एक गुणसूत्र तो मादा के X-गुणसूत्र जैसा होता है किंतु दूसरा गुणसूत्र अलग होता है। इसे Y-गुणसूत्र कहते हैं।

X-गुणसूत्र मादा निर्धारक और Y-गुणसूत्र नर निर्धारक होता है। अत: मादा में XX गुणसूत्र और नर में XY गुणसूत्र होते हैं।

लिंग गुणसूत्रों (X and Y-chromosomes) को अतिरिक्त गुणसूत्र या एलोसोम्स कहते हैं।

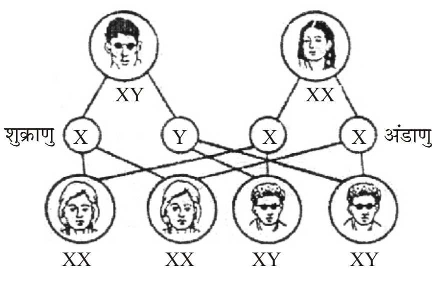

मनुष्य में लिंग निर्धारण

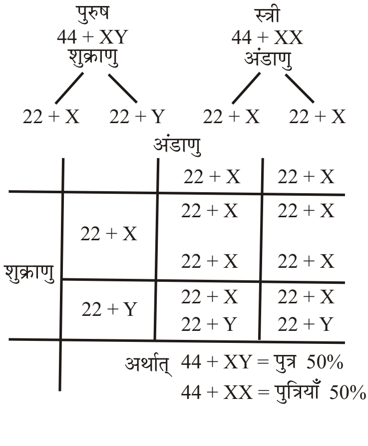

मनुष्य में लिंग निर्धारण– मनुष्य में 23 जोड़ी गुणसूत्रों में से 22 जोड़ी ऑटोसोम्स तथा एक जोड़ी लिंग गुणसूत्र होते हैं। स्त्रियों में तो ये दोनों लिंग गुणसूत्र समान होते हैं किंतु पुरुषों में एक गुणसूत्र दूसरे की अपेक्षा बहुत छोटा होता है। इस छोटे गुणसूत्र को Y-गुणसूत्र कहते हैं तथा इसके साथी लंबे व छड़नुमा गुणसूत्र को X द्वारा प्रदर्शित करते हैं। स्त्रियों के दोनों लिंग गुणसूत्र X-गुणसूत्र के समान होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पुरुषों में XY तथा स्त्रियों में XX लिंग गुणसूत्र होते हैं।

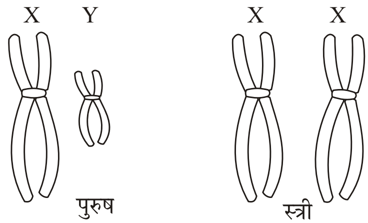

मनुष्य में लिंग गुणसूत्रः
पुरुष में XY तथा स्त्री में XY गुणसूत्र

(i) पुरुषों में गुणसूत्र = 44 + XY

(ii) स्त्रियों में गुणसूत्र = 44 + XX

गुणसूत्रों के कार्य–

(i) गुणसूत्रों पर जीन उपस्थित होते हैं। जीन आनुवंशिक लक्षणों के वाहक होते हैं। इनको वंशागति का भौतिक आधार कहा जाता है।

(ii) गुणसूत्रों जीवों की विभिन्न शारीरिक एवं उपापचयी क्रियाओं का नियंत्रण एवं नियमन करते हैं।

(iii) गुणसूत्रों की संरचना एवं संख्या में परिवर्तन से जीवों में अनेक विभिन्नताएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

प्रश्न 4. मनुष्य में लिंग सहलग्न लक्षणों को समझाइए। ये किस प्रकार वंशागत होते हैं? मानव में पाए जाने वाले प्रमुख लिंग सहलग्न लक्षणों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– मनुष्य में लिंग सहलग्न लक्षण– सामान्यत: लिंग गुणसूत्रों पर लैंगिक गुणों से संबंधित जीन्स होते हैं, जिसके कारण गुणसूत्रों पर उपस्थित जंतु में लैंगिक द्विरूपता प्रमुखत: होती है। यद्यपि जंतुओं का यह गुण अत्यंत जटिल तथा व्यापक होता है और इसे निर्मित करने के लिए अनेक ऑटोसोमल गुणसूत्रों पर उपस्थित जीन्स भी प्रभावी होते हैं। दूसरी ओर लिंग गुणसूत्रों पर कुछ जीन्स कायिक लक्षणों वाले भी होते हैं। इन्हीं को लिंग सहलग्न जीन्स या लिंग सहलग्न लक्षण कहते हैं तथा इनकी वंशागति लिंग सहलग्न वंशागति कहलाती है। मनुष्य में 120 से भी अधिक इस प्रकार के लक्षणों की वंशागति ज्ञात हो चुकी है।

मनुष्य में लिंग निर्धारित करने वाले X तथा Y गुणसूत्र यद्यपि संरचना में भिन्न दिखाई देते हैं, फिर भी आधुनिक ज्ञान के आधार पर यह ज्ञात है कि इन गुणसूत्रों में कुछ भाग समजात होता है, जो सूत्रयुग्मन के समय जोड़ा बनाता है, किंतु शेष भाग असमजात होता है। इस प्रकार लिंग सहलग्न लक्षण तीन प्रकार के हो सकते हैं—

(i) **X-सहलग्न लक्षण–** ऐसे लक्षण हैं जिनके जीन्स X गुणसूत्र के असमजात विखंडों पर रहते हैं अर्थात् इनका समजात जीन Y-गुणसूत्र पर नहीं होगा। इस प्रकार के जीन माता व पिता दोनों से पुत्री को तथा केवल माता से पुत्र प्राप्त हो सकते हैं। मनुष्य में अधिकतर लिंग-सहलग्न गुण इसी प्रकार के होते हैं और सामान्यत: लिंग सहलग्नता का अर्थ X सहलग्नता ही समझा जाता है। उदाहरण के लिए प्रमुख हैं— वर्णांधता, हीमोफीलिया व रतौंधी।

(ii) **Y-सहलग्न लक्षण–** इनके लक्षण के जीन्स Y गुणसूत्र के असमजात खंड पर स्थित होते हैं। अर्थात् इनके समजात जीन्स साथ के X गुणसूत्रों पर नहीं होते हैं। इसका अर्थ यह भी हुआ कि ये लक्षण प्रत्येक संतति में पिता से केवल पुत्रों तक ही जाते हैं। इन्हें होलैण्ड्रिक लिंग सहलग्न गुण भी कहते हैं तथा इनकी वंशागति को होलैण्ड्रिक वंशागति कहा जाता है। **उदाहरणार्थ**— बाह्य कर्ण पर मोटे बालों की उपस्थिति हाइपरट्राइकोसिस आदि।

(iii) **XY-सहलग्न लक्षण–** इन लक्षणों के जीन्स X एवं Y दोनों गुणसूत्रों के समजात खंडों पर स्थित होते हैं। अत: इनकी वंशागति पुत्रों एवं पुत्रियों के सामान्य कायिक लक्षणों के समान होती है। सामान्य लिंग सहलग्न लक्षण तथा इनकी वंशागति सामान्य लिंग सहलग्न X-सहलग्न लक्षण ही होते हैं। ये जीन्स सामान्यत: अप्रभावी होते हैं अर्थात् माता से प्राप्त गुणसूत्र (X) पर। यदि ये उपस्थित हैं तो लड़कों में ये लक्षण प्रकट होंगे ही। लड़कियों में पिता यदि रोगी है और माता से इस प्रकार का गुणसूत्र प्राप्त होता है, तभी रोग के लक्षण प्रकट हो सकते हैं, किंतु सामान्य पिता से प्राप्त लिंग गुणसूत्र तथा माता का रोगी गुणसूत्र लड़की को केवल वाहक ही बना सकते हैं। ध्यान रहे, रोग को रोकने वाला प्रभावी जीन भी चूँकि X गुणसूत्र पर ही होता है, केवल वही पुत्री लक्षणों को प्रकट कर सकती है, जिसका पिता उस रोग से ग्रसित हो तथा माता भी रोगी या कम-से-कम वाहक तो हो ही। इन रोगों के सामान्य उदाहरण हैं— वर्णांधता, हीमोफीलिया, रतौंधी, रोमविहीनता, नेत्र का अनैच्छिक दोलन या मिस्टेग्मस, मायोपिया आदि।

प्रश्न 5. सिकिल सेल रक्ताल्पता से क्या आशय है? यह मनुष्य में किस प्रकार होती है?

उत्तर– **सिकिल सेल रक्ताल्पता–** यह एक उपापचयी विकार है। इसमें मनुष्य का हीमोग्लोबिन दोषयुक्त होता है। सामान्य हीमोग्लोबिन को Hb^A तथा अपसामान्य हीमोग्लोबिन को Hb^S द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

जिन RBC में Hb^S हीमोग्लोबिन होता है उनकी ऑक्सीजन धारिता कम होती है। ऑक्सीजन की कमी में लाल रुधिराणु सिकुड़कर हँसियाकार हो जाते हैं। हीमोग्लोबिन-A का संश्लेषण जीन Hb^A और हीमोग्लोबिन-S संश्लेषण जीन Hb^S द्वारा नियंत्रित होता है। जीन प्रभावी और Hb^S अप्रभावी है परंतु Hb^A, Hb^S पर पूर्ण प्रभावी नहीं है।

(i) समजीनी मनुष्यों में सामान्य हीमोग्लोबिन-A बनता है।

(ii) समजीनी मनुष्यों में केवल हीमोग्लोबिन-S बनता है, जिससे पूर्ण अरक्तता के कारण व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

(iii) विषमजीनी मनुष्य में कुछ RBC में सामान्य और कुछ RBC में हीमोग्लोबिन-S होता है। ऑक्सीजन की कमी में Hb^S वाले RBC हँसियाकर हो जाते हैं। इसी कारण इस रोग को दात्र कोशिका रोग कहते हैं।

प्रश्न 6. लिंग सहलग्न रोग क्या है? दो लिंग सहलग्न रोगों का संक्षिप्त में विवरण दीजिए। या उस रोग का नाम बताइए जिसमें चोट लगने पर थक्का नहीं बनता और रुधिर बहता रहता है। ऐसा क्यों होता है?

उत्तर– लिंग सहलग्न गुण– सामान्यत: लिंग गुणसूत्रों पर लैंगिक गुणों से संबंधित जीन्स होते हैं, जिनके कारण गुणसूत्रों पर उपस्थित जंतु में लैंगिक द्विरूपता प्रमुखत: होती है। यद्यपि जंतुओं का यह गुण अत्यंत जटिल तथा व्यापक होता है और इसे निर्मित करने के लिए अनेक ऑटोसोमल गुणसूत्रों पर उपस्थित जीन्स भी प्रभावी होते हैं। दूसरी ओर लिंग गुणसूत्रों पर कुछ जीन्स कायिक लक्षणों वाले भी होते हैं। इन्हीं को लिंग सहलग्न जीन्स या लिंग सहलग्न लक्षण कहते हैं तथा इनकी वंशागति लिंग सहलग्न वंशागति कहलाती है। मनुष्य में 120 से भी अधिक इस प्रकार के लक्षणों की वंशागति ज्ञात हो चुकी है।

लिंग–सहलग्न रोगों के जीन लिंग गुणसूत्र X अथवा Y-गुणसूत्र पर स्थित होते हैं और लिंग गुणसूत्र के साथ ही वंशागत होते हैं। हीमोफीलिया, वर्णांधता आदि X-लिंग सहलग्न रोग हैं।

(i) हीमोफीलिया– इसके रोगी में चोट लगने या कट जाने पर रुधिर का बहना नहीं रुकता। अधिक रुधिर स्राव के कारण रोगी की मृत्यु भी हो सकती है। हीमोफीलिया के रोगी के रुधिर में रुधिर का थक्का बनाने वाले किसी–न–किसी प्रोटीन की कमी होती है और उस प्रोटीन को बनाने वाला जीन X-गुणसूत्र पर स्थित होता है और अप्रभावी होता है। अत: इसे X-लिंग सहलग्न रोग कहते हैं। इसे रक्त स्रावण रोग भी कहते हैं। यह रोग अधिकतर पुरुषों में होता है। पुत्रियाँ या स्त्रियाँ इस रोग के वाहक का कार्य करती हैं।

(ii) वर्णांधता – यह भी लिंग सहलग्न रोग है। इसका जीन भी X-गुणसूत्र पर होता है। वर्णांध व्यक्ति लाल व हरे रंग को नहीं पहचान पाता। इस रोग की लिंग–सहलग्नता की खोज सन् 1876 ई० में होरनर नामक वैज्ञानिक ने की थी। वर्णांध पुरुष के X-गुणसूत्र पर वर्णांधता का जीन होता है। यह जीन पिता से पुत्री में और पुत्री से बेटे में वंशागत होता है। सामान्य स्त्री एवं वर्णांध पुरुष की पुत्रियाँ वाहक होती हैं क्योंकि उनमें सामान्य X-गुणसूत्र माता से और वर्णांध जीन वाला X-गुणसूत्र पिता से मिलता है।

(a) वर्णांध पुरुष X^cY व सामान्य स्त्री (XX) की सभी संतानें सामान्य होती हैं। सभी बेटों को माता से सामान्य X-गुणसूत्र मिलता है, अत: वे सभी सामान्य होते हैं। बेटियों को सामान्य X-गुणसूत्र माता से तथा दूसरा X^c-गुणसूत्र पिता से मिलता है जिस पर वर्णांधता का जीन होता है। इस जीन के अप्रभावी होने के कारण लड़कियों में वर्णांधता का लक्षण प्रकट नहीं हो पाता। अत: लड़कियाँ सामान्य दृष्टि वाली किंतु विषमयुग्मजी होती हैं और इन्हें वाहक कहते हैं।

(b) वाहक स्त्री X^cX व सामान्य पुरुष (XY) की संतानों में सभी लड़कियाँ सामान्य दृष्टि वाली होती हैं किंतु इनके पुत्रों में से आधे सामान्य और आधे वर्णांध होते हैं।

(c) वाहक स्त्री X^cX व वर्णांध पुरुष X^cY के 50% लड़के व लड़कियाँ सामान्य होते हैं और बाकी 50% वर्णांध होते हैं।

प्रश्न 7. मानव में लिंग सहलग्न रोग कौन से हैं? बच्चों के गुणसूत्रों की संख्या में परिवर्तन होने पर कुछ दोष होते हैं। वे क्या हैं?

उत्तर- मानव में लिंग सहलग्न रोग निम्न हैं—

(i) वर्णांधता, (ii) हीमोफीलिया, (iii) रतौंधी, (iv) हाइपरट्राइकोसिस, (v) रोमविहीनता, (vi) मिस्टेग्मस, (vii) मायोपिया।

बच्चों के गुणसूत्रों की संख्या में परिवर्तन होने पर दोष- नर और मादा युग्मकों के मिलने के बाद बने युग्मनज, भ्रूण तथा उससे विकसित होने वाले बच्चे में गुणसूत्रों की संख्या सामान्य अवस्था में $n+n=2n$ अर्थात् $23+23=46$ होती है। इस संख्या में किसी प्रकार का परिवर्तन बच्चे में कोई-न-कोई विकार या दोष (रोग) उत्पन्न कर देता है। अनेक बार यह बच्चा जीवित नहीं रह पाता अथवा जीवन-भर किसी विशेष रोग से पीड़ित रहता है। इस प्रकार के विकार में गुणसूत्रों की संख्या 46 के स्थान पर कम, जैसे— 44, 45 अथवा अधिक जैसे— 47, 48 आदि हो सकती है। कभी-कभी लिंग गुणसूत्र भी कम या अधिक हो सकते हैं। अन्य प्रकार के विकारों में गुणसूत्रों के समुच्चय ही कम या अधिक हो जाते हैं, जैसे— $2n$ के स्थान पर $3n$, $4n$ आदि।

विभिन्न प्रकार से गुणसूत्रों की संख्या में परिवर्तन से निम्नलिखित प्रमुख विकार पाए गए हैं—

(i) डाउन संलक्षण- गुणसूत्र 21 की संख्या दो के स्थान पर जब तीन हो जाती है तो ऐसे व्यक्ति की आँखें तिरछी, पलकें मंगोलों की भाँति, सिर गोल, त्वचा खुरदरी, जीभ मोटी होती है तथा मुख थोड़ा खुला रहता है। बुद्धि मंद होती है। कद छोटा होता है। जननांग सामान्य होते हैं, किंतु पुरुष नपुंसक होता है। इस प्रकार की विकृति को मंगोली जड़ता या मंगोलिक बेवकूफी कहते हैं।

(ii) टरनर्स संलक्षण- जब लिंग गुणसूत्र दो के स्थान पर एक ही होता है अर्थात् XO अवस्था होती है। तो इनमें गुणसूत्रों की कुल संख्या 45 होगी। इस प्रकार का शरीर अल्पविकसित मादा (लड़की) के समान होता है। यह लड़की बाँझ होती है। जननांग अविकसित होते हैं, कद छोटा होता है तथा वक्ष चपटा होता है। बाल्यकाल में यह सामान्य लड़की के समान दिखाई देती है, किंतु किशोरावस्था आने तक नपुंसक हो जाती है। इसमें अंडाशय विकसित नहीं होते हैं।

(iii) क्वाइनफेल्टर्स संलक्षण- यह लिंग गुणसूत्रों की अधिकता के कारण होता है तथा कुछ गुणसूत्रों की संख्या 47 होती है। इसमें गुणसूत्रों की संख्या को इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं—

22 जोड़ा ऑटोसोम्स + XXY = 47

इस प्रकार के संलक्षण में वृषण अल्पविकसित रह जाते हैं तथा स्त्रियों के समान स्तन विकसित हो जाते हैं। इनके शरीर पर बालों की कमी होती है। यद्यपि Y गुणसूत्र की उपस्थिति के कारण ये पुरुष होते हैं, किंतु XX गुणसूत्रों की उपस्थिति इनमें स्त्री जैसे लक्षण भी उत्पन्न कर देती हैं। ये नपुंसक होते हैं तथा इन्हें गाइनेकोमैस्टिया कहते हैं। अधिक संख्या X गुणसूत्रों की होने पर ये अतिमादाएँ किंतु अधिक Y गुणसूत्रों की होने पर अतिनर होते हैं। ये लंबे, बुद्धू अतिकामुक तथा गुस्से वाले होते हैं। इसी प्रकार XXX संलक्षण वाली स्त्रियाँ अतिमादाएँ बुद्धू किंतु बाँझ होती हैं।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. गुणसूत्र का नामांकित चित्र बनाइए।

उत्तर-

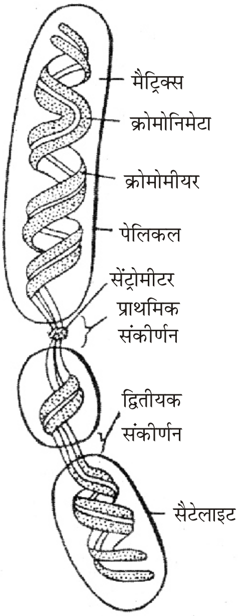

मेटाफेज गुणसूत्र की संरचना

प्रश्न 2. वर्णांधता रोग क्या है? एक उदाहरण देकर समझाइए।

उत्तर- वर्णांधता तथा उसकी वंशागति- वर्णांधता से पीड़ित व्यक्ति प्राय: लाल व हरे रंग में अंतर नहीं कर पाते। अत: रोग को लाल-हरा अंधापन भी कहा जाता है। प्रोटॉन दोष अथवा डाल्टॉनिज्म इस रोग के अन्य नाम हैं। इस रोग के कारण चित्रकार, पेंटर तथा वाहन चालक आदि अत्यधिक कठिनाई का अनुभव करते हैं। इस रोग का जीन अप्रभावी होता है तथा लिंग गुणसूत्रों में से X-गुणसूत्र पर स्थित होता है। Y-गुणसूत्र पर इसका एलील नहीं पाया जाता। एक वर्णांध पुरुष और एक सामान्य स्त्री की सभी संतानें सामान्य होती हैं, परंतु पुत्रियों में एक X-गुणसूत्र पर पिता का वर्णांधता का अप्रभावी जीन पहुँचता है, अत: ये इस जीन के वाहक का कार्य करती हैं। एक सामान्य पुरुष तथा एक वाहक स्त्री की संतानों में केवल लड़कों में वर्णांधता विकसित होती है तथा एक X-गुणसूत्र पर वर्णांधता का जीन होने पर भी लड़कियों में यह रोग नहीं होता, परंतु ये वाहक का कार्य करती हैं। एक अन्य स्थिति में यदि एक वाहक स्त्री की एक वर्णांध पुरुष के साथ संतानों में आधे पुत्र वर्णांध व आधे सामान्य होंगे तथा आधी पुत्रियाँ वर्णांध व आधी पुत्रियाँ वाहक होंगी।

प्रश्न 3. वंशागत रोग तथा सहलग्न रोग में क्या संबंध है?

उत्तर- वंशागत रोग तथा सहलग्न रोग में संबंध- वंशागत रोग; जैसे— गंजापन, गठिया आदि पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ते जाते हैं जबकि सहलग्न रोग; जैसे— वर्णांधता, हीमोफीलिया, रतौंधी आदि एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी में माता व पिता के गुणसूत्र पर निर्भर करते हैं। अत: यह दोनों रोग एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में आगे बढ़ते जाते हैं।

प्रश्न 4. जीन का क्या अर्थ है? जीन की प्रकृति का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

उत्तर- **जीन-** गुणसूत्र में क्रोमोनीमा पर माला के समान क्रम में लगी रचनाएँ हैं जो आनुवंशिक लक्षणों को नियंत्रित करती हैं।

जीन की प्रकृति- जीन एक वंशागत कारक है, जो एक जैविक लक्षण का निर्धारण करता है।

(i) जीन संचरण की इकाई हैं जो जनक से संतानों में पहुँचती हैं।

(ii) जीन उत्परिवर्तन की इकाई हैं जिनकी संरचना में परिवर्तन होता रहता है।

(iii) जीन कार्यिकी की इकाई हैं। ये जीवों के विभिन्न लक्षणों का नियंत्रण करती हैं।

(iv) जीन DNA का वह भाग है जिसमें एक प्रोटीन या पालिपेप्टाइड श्रृंखला के संश्लेषण की सूचना होती है।

प्रश्न 5. लिंग गुणसूत्र से आप क्या समझते हैं? स्त्री तथा पुरुष में ये किस प्रकार के होते हैं?

उत्तर- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 6. आनुवंशिकी के गुणसूत्र सिद्धांत से आप क्या समझते हैं?

उत्तर- **आनुवंशिकी के गुणसूत्र सिद्धांत-** यह निम्न प्रकार हैं—

सन् 1990 ई० में मेंडेल के नियमों की पुन: खोज के बाद वाल्टन एस० सटन ने आनुवंशिकी का गुणसूत्र सिद्धांत प्रस्तुत किया। इस सिद्धांत के अनुसार—

(i) सभी जीवों में प्रत्येक लक्षण के लिए कम-से-कम एक जोड़ी या कारक अवश्य होते हैं।

(ii) आनुवंशिक लक्षणों के जीन या आनुवंशिक कारक गुणसूत्रों पर पंक्तिबद्ध होते हैं और गुणसूत्रों के साथ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में वंशागत होते हैं।

(iii) बहुकोशिकीय जीवों में जनन कोशिकाओं के माध्यम से विभिन्न पीढ़ियों में जैविक संबंध स्थापित रहता है। इसका अर्थ है कि आनुवंशिक लक्षणों के जीन जनन कोशिकाओं या युग्मकों द्वारा दूसरी पीढ़ी के जीवों में पहुँचते हैं।

(iv) किसी जीव के लक्षणों में शुक्राणु व अंडाणु दोनों ही का बराबर योगदान होता है।

(v) युग्मक निर्माण के समय अर्धसूत्री विभाजन में गुणसूत्रों के व्यवहार से प्रमाणित होता है कि जीन गुणसूत्रों पर होते हैं।

(vi) जीवों की प्रत्येक कोशिका में गुणसूत्र जोड़ों में मिलते हैं किंतु युग्मकों में प्रत्येक गुणसूत्र-युग्म में केवल एक गुणसूत्र होता है।

(vii) अगुणित शुक्राणु व अंडाणु के संलयन से बना युग्मज द्विगुणित होता है जिससे पूर्ण जीव का विकास होता है।

प्रश्न 7. जीन क्या है? इसके चार स्वरूप बताइए।

उत्तर- जीन के विषय में लघुउत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 8. लिंग गुणसूत्र की खोज किस प्रकार की गई? मनुष्य में ये किस प्रकार के होते हैं?

उत्तर- **लिंग गुणसूत्र की खोज-** स्टीवेन्स एवं विल्सन ने सन् 1905 ई० में लिंग गुणसूत्रों की सहायता से कीटों में लिंग निर्धारण का अध्ययन किया। उन्होंने देखा कि कीटों के 50% शुक्राणुओं में एक अतिरिक्त गुणसूत्र होता है। इसे X-बॉडी या X-गुणसूत्र का नाम दिया।

लिंग गुणसूत्र- ये गुणसूत्र केवल लिंग निर्धारित करते हैं। जंतुओं में इनका केवल एक जोड़ा होता है। मादा जंतुओं में दोनों लिंग गुणसूत्र एक जैसे होते हैं। इन्हें X-गुणसूत्र कहते हैं। नर जंतुओं में दोनों लिंग गुणसूत्र अलग-अलग आकार के होते हैं। एक

गुणसूत्र तो मादा के X-गुणरूप जैसा होता है किंतु दूसरा गुणसूत्र अलग होता है। इसे Y-गुणसूत्र कहते हैं।

X-गुणसूत्र मादा निर्धारक और Y-गुणसूत्र नर निर्धारक होता है। अत: मादा में XX गुणसूत्र और नर में XY गुणसूत्र होते हैं।

प्रश्न 9. जीन सहलग्नता को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- जीन सहलग्नता या स्थानांतरण- यह जानना आवश्यक है कि जीन संतानों में किस प्रकार स्थानांतरित होते हैं। जनन अंगों का कोशिकाओं में युग्मकों के निर्माण के समय अर्द्धसूत्री विभाजन होता है। इस विभाजन से युग्मकों में गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। निषेचन के समय माता तथा पिता के युग्मकों के संयोग से संतान में गुणसूत्रों की संख्या पूर्ववत् हो जाती है। इस प्रकार संतान के आधे गुणसूत्र माता से तथा आधे पिता से प्राप्त होते हैं। गुणसूत्रों के साथ ही उन पर स्थित जीन भी माता-पिता से संतानों में स्थानांतरित हो जाते हैं।

प्रश्न 10. एक वर्णांध पुरुष किसी सामान्य स्त्री से विवाह करता है तो इसकी संतान में इस लक्षण का प्रदर्शन किस प्रकार होता है? रेखाचित्र द्वारा समझाइए।

उत्तर- इस प्रकार की स्थिति में सभी पुत्र सामान्य (XY) तथा सभी पुत्रियाँ (XX) वाहक होंगी।

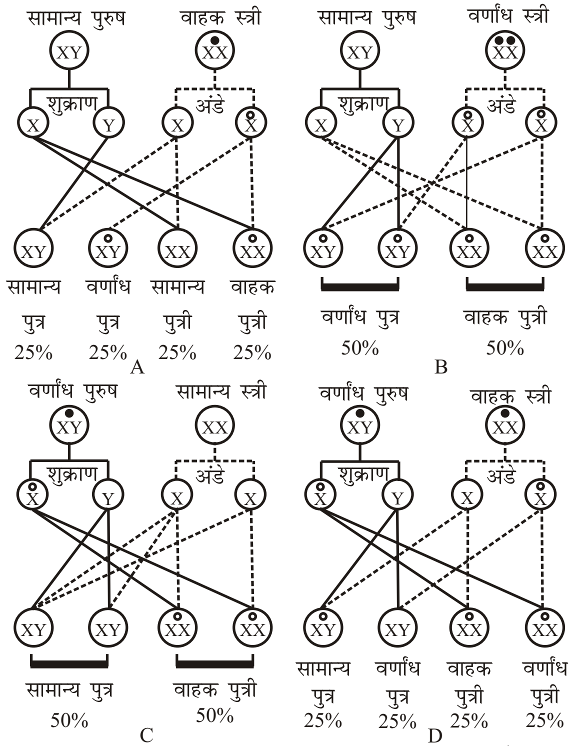

वर्णांधता की वंशागति की विभिन्न संभावित परिस्थितियाँ

प्रश्न 11. लिंग प्रभावित लक्षण को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- लिंग प्रभावित लक्षण- इन लक्षणों के जीन दैनिक गुणसूत्र या ऑटोसोम्स पर होते हैं, परंतु इनका प्रभाव केवल एक ही लिंग के व्यक्तियों में अभिव्यक्त होता है। आनुवंशिक गंजापन एक जोड़ी ऑटोसोमल ऐलील जीन (Bb) पर निर्भर होता है। होमोजाइगस

प्रभावी जीनरूप (BB) हो तो पुरुष और स्त्रियाँ दोनों ही गंजे होते हैं लेकिन हेटेरोजाइगस जीनरूप (Bb) होने पर गंजापन स्त्रियों में नहीं होता केवल पुरुषों में विकसित होता है, क्योंकि इस जीनरूप में इसके विकास के लिए नर हार्मोन्स का होना आवश्यक होता है। होमोजाइगस अप्रभावी जीनरूप (bb) में गंजापन नहीं होता।

प्रश्न 12. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए-

(a) Y—सहलग्न लक्षण, **(b)** दात्र कोशिका अरक्तता,
(c) डाउन्स संलक्षण, **(d)** जीन,
(e) सुजननिकी, **(f)** हीमोफीलिया,
(g) सेण्ट्रोमीअर

उत्तर- **(a) Y-सहलग्न लक्षण-** इनके लक्षण के जीन्स Y गुणसूत्र के असमजात खंड पर स्थित होते हैं अर्थात् इनके समजात जीन्स साथ के X गुणसूत्रों पर नहीं होते हैं। इसका अर्थ यह भी हुआ कि ये लक्षण प्रत्येक संतति में पिता से केवल पुत्रों तक ही जाते हैं। इन्हें होलैण्ड्रिक लिंग सहलग्न गुण भी कहते हैं तथा इनकी वंशागति को होलैण्ड्रिक वशांगति कहा जाता है। **उदाहरणार्थ**— बाह्य कर्ण पर मोटे बालों की उपस्थिति हाइपरट्राइकोसिस आदि।

(b) दात्र कोशिका अरक्तता- यह मनुष्य में एक अप्रभावी जीन से होने वाला रोग है, इसमें हीमोग्लोबिन के स्थान पर असामान्य हीमोग्लोबिन का निर्माण होने लगता है। असामान्य हीमोग्लोबिन ऑक्सीजन का वहन नहीं कर सकता तथा लाल रुधिराणु हँसिए के आकार के हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप घातक रक्ताल्पता हो जाती है और रोगी की मृत्यु हो जाती है। लाल रुधिराणु के हँसियाकार के कारण इस रोग को दात्र कोशिका अरक्तता या सिकिल सेल रक्ताल्पता कहते है।

(c) डाउन्स संलक्षण- गुणसूत्र 21 की संख्या दो के स्थान पर जब तीन हो जाती है तो ऐसे व्यक्ति की आँखे तिरछी, पलकें मगोलों की भांति, सिर गोल, त्वचा खुरदरी, जीभ मोटी होती है तथा मुख थोड़ा खुला रहता है। बुद्धि मंद होती है। कद छोटा होता है। जननांग सामान्य होते हैं, किंतु पुरुष नपुंसक होता है। इस प्रकार की विकृति को मंगोली जड़ता या मंगोलिक बेवकूपी कहते हैं।

(d) जीन- गुणसूत्र में क्रोमोनीमा तथा क्रोमोनिमेटा पर जीन पाए जाते हैं। DNA का वह छोटे-से-छोटा खंड, जिसमें आनुवंशिक कोड निहित रहता है, 'जीन' कहलाता है। जोहनसन ने सर्वप्रथम सन् 1909 ई० में जीन शब्द का प्रयोग किया था। जीन ही लक्षणों के निर्धारिक, नियंत्रक एवं वाहक होते हैं, अर्थात् ये जीन लक्षणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते हैं।

(i) ''जीन आनुवंशिकी की प्राथमिक इकाई है।''
(ii) ''जीन उस पदार्थ की एक इकाई है जो माता-पिता से संतति में जाता है।''
(iii) ''जीन वंशागत कारक है, जो एक जैविक लक्षण का निर्धारण करता है।''

जीन की आधुनिक विचारधारा के अनुसार जीन को कार्य, उत्परिवर्तन एवं पुनर्संयोजन की इकाई मानते हैं—

(a) सिस्ट्रॉन- डी०एन०ए० वह भाग जो एक पॉलिपेप्टाइड शृंखला को निर्दिष्ट करता है, सिस्ट्रॉन कहलाता है। सिस्ट्रॉन कार्यिकी की इकाई है।

(b) म्यूटॉन- गुणसूत्र की वह छोटी-से-छोटी इकाई जिसमें उत्परिवर्तन हो सकता है, म्यूटॉन कहलाती है। अत: जीन को उत्परिवर्तन की इकाई कहते हैं।

(c) रिकोन- डी०एन०ए० का वह छोटे-से-छोटा भाग, जिसमें पुनर्संयोजन हो सके, रिकोन कहलाता है; इसे पुनर्संयोजन की इकाई कहा जाता है।

(e) **सुजननिकी–** सुजननिकी, आनुवंशिकी की वह व्यवहारिक शाखा है, जिसके अंतर्गत मानव के विभिन्न गुणों, विशेषताओं या लक्षणों की आनुवंशिकी का अध्ययन किया जाता है। सुजननिकी, इस प्रकार आनुवंशिकी सिद्धांतों की सहायता से मानव की भावी पीढ़ियों में लक्षणों की वंशागति को नियंत्रित करके मानव लक्षणों अर्थात् मानव जाति को सुधारने का सम्भावित प्रयास है।

सर फ्रांसिस गाल्टन ने सुजननिकी की नींव रखी। इस कारण गाल्टन को 'सुजननिकी का जनक' कहा जाता है।

मानव पर भी अन्य जीवों की भांति आनुवंशिकी सिद्धांत लागू होते हैं, किंतु इनका अध्ययन करना मनुष्य में असम्भव नहीं तो अति कठिन अवश्य है। इसके अनेक कारणों में से प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं—

(i) मानव की कोशिकाएँ अति सूक्ष्म, किंतु गुणसूत्रों की संख्या अधिक होती है।
(ii) प्रयोगशाला में प्रजनन नहीं कराया जा सकता।
(iii) भ्रूणीय विकास में बाल्यावस्था (वृद्धिकाल) काफी लंबी होती है।
(iv) संतानोत्पत्ति की दर बहुत कम होती है।

(f) **हीमोफीलिया–** हीमोफीलिया एक लिंग-सहलग्न रोग है। इसके जीन लिंग गुणसूत्रों में सहलग्न होते हैं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते रहते हैं। हीमोफीलिया रोग प्राय: पुरुषों में होता है, परंतु स्त्रियों द्वारा पुत्रों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी पहुँचता रहता है। इस रोग में रोगी को चोट लगने पर रुधिर का थक्का नहीं बनता, रुधिर निरन्तर बहता रहता है। रोगी में रक्त का थक्का बनाने के लिए उत्तरदायी कारक का अभाव होता है।

(i) सामान्य पुरुष तथा हीमोफीलिया की वाहक स्त्री की संतानों में 50% पुत्र सामान्य, 50% पुत्र हीमोफीलिक, 25% पुत्रियाँ सामान्य तथा 25% पुत्रियाँ हीमोफीलिया के लिए वाहक होती हैं।

(g) **सेण्ट्रोमीयर–** प्राथमिक संकीणर्न में सेण्ट्रोमीयर स्थित होता है। इसके द्वारा यह माइट्रोसिस के तुर्क के साथ जुड़ा रहता है।

सेण्ट्रोमीयर की स्थिति के आधार पर गुणसूत्र मध्यकेंद्री, उपमध्य-केंद्री, अग्रबिंदुकी की या अंत:केंद्री होते हैं। इसे गुणसूत्र बिंदु भी कहते हैं।

प्रश्न 13. एक व्यक्ति हीमोफिलिया का रोगी है और उसकी पत्नी में हीमोफीलिया का एक जीन है, उस दंपति में रोग ग्रसित होने की क्या संभावना है?

उत्तर– **हीमोफीलिक पुरुष तथा वाहक स्त्री–** यदि किसी हीमोफीलिक पुरुष का विवाह किसी हीमोफीलिक की वाहक स्त्री से होता है, तो उस स्त्री से उत्पन्न संतानों में 25% पुत्रियाँ हीमोफीलिक, 25% पुत्रियाँ रोग की वाहक, 25% पुत्र हीमोफीलिक तथा 25% पुत्र सामान्य होंगे।

▶ अतिलघु उत्तरीय प्रश्न

अतिलघु उत्तरीय प्रश्नों के उत्तर के लिए पाठ्य पुस्तक के पृष्ठ संख्या 409 पर देंखे।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न 1. 'DNA-एक आनुवंशिक पदार्थ' विषय पर चाट प्रस्तुत करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

प्रश्न 2. सामान्य लिंग सहलग्न लक्षण तथा इनकी वंशागति का अध्ययन करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

25

जैव प्रौद्योगिकी

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जैव प्रौद्योगिकी से आप क्या समझते हैं? विभिन्न क्षेत्रों में जैव प्रौद्योगिकी की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **जैव प्रौद्योगिकी- जैव प्रौद्योगिकी या तकनीकी ऐसी विधि है जिसमें औद्योगिक स्तर पर सजीवों अथवा उनसे प्राप्त पदार्थों का उपयोग किया जाता है।** वैसे तो जैव तकनीक का उपयोग प्राचीनकाल से हो रहा है और इसका विकास मानव इतिहास से जुड़ा हुआ है। किण्वन एक प्रचीनतम तकनीक है। इसका उपयोग खाना पकाने से पहले दानों को लंबे समय तक भिगोकर रखने अथवा फलों का रस संग्रह करने में किया जाता था। जैव तकनीकी का पहला उत्पाद एल्कोहॉल व एल्कोहॉलीय पेय पदार्थ थे। आजकल जैव तकनीकी का उपयोग करके औद्योगिक स्तर पर अनेक उत्पाद बनाए जा रहे हैं।

वर्तमान में सूक्ष्मजीवों पर आधारित एक विशाल उद्योग विकसित हुआ है। ध्यान से चुने सूक्ष्मजीव के स्ट्रेन, शुद्धिकरण तथा पृथक्करण की उन्नत विधियों के कारण विभिन्न पदार्थों का उत्पादन पर्याप्त मात्रा में बढ़ा है। पिछले दो दशकों में जीनी इंजीनियरिंग के क्षेत्र में नई-नई खोज होने के कारण जैव तकनीकी में काफी उन्नति हुई है।

जैव प्रौद्योगिकी की उपोगिता- आपने पढ़ा है कि जैव प्रौद्योगिकी का अर्थ है— जैव तकनीकी का उपयोग अर्थात् जैविक क्रियाओं द्वारा विभिन्न लाभदायक उत्पादों का निर्माण करना है। इन उपयोगी उत्पदों के निर्माण की प्रक्रियाओं में सूक्ष्म जीवों, जैसे— जीवाणुओं, शैवालों, कवकों; जैसे यीस्ट तथा उच्च श्रेणी के पादपों व जंतुओं की कोशिकाओं अथवा इनके किन्हीं उपतंत्रों आदि अथवा इनके जैविक पदार्थों से विलंगित यौगिकों का उपयोग किया जाता है। संपूर्ण ज्ञान या तकनीक को निम्नांकित क्षेत्रों में व्यवसायिक अथवा औद्योगिकी के उपयोग में लाया जाता है—

कृषि क्षेत्र में- जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान द्वारा पौधों की अनेक नई खेती योग्य किस्में (प्रजातियाँ) तैयार करके पोषण क्षमता व उत्पादन में वृद्धि की गई है। इस क्षेत्र में निम्नांकित उपलब्धियाँ महत्वपूर्ण हैं—

(i) रोगरहित एवं रोग प्रतिरोधक पौधों का उत्पाद।

(ii) कीट, कवक, विपरीत मृदा अवस्थाओं, सूखा, शाकनाशी आदि की प्रतिरोधक प्रजातियों का उत्पादन।

(iii) विशेष तकनीक द्वारा अगुणित पौधे तैयार करना।

(iv) भूमि व पौधों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्रिया को बढ़ाना।

(v) पौधों में पोषण क्षमता बढ़ाना।

(vi) जैव उर्वरकों की खोज तथा उत्पादन।

(vii) पौधों में रासायनिक उत्पादों का उत्पादन बढ़ाना।

औद्योगिक क्षेत्र में- जैव प्रौद्योगिकी ने मानव-जीवन के कल्याण के लिए निम्नलिखित प्रमुख पदार्थों तथा रसायनों के रूप में औद्योगिक उत्पादों को उत्पन्न करने की संभावनाओं को बढ़ाया है—

(i) औद्योगिक सूक्ष्मजीवी उत्पाद।
(ii) किण्वन उत्पाद (शराबें आदि)
(iii) सूक्ष्मजीवी जीवभार (बायोमास) बढ़ाना एवं एककोशिकीय प्रोटीन का निर्माण।
(iv) जीवाणु से कीटनाशी पदार्थों का उत्पादन।
(v) कृत्रिम ईंधन, जैसे— एथेनॉल, मेथेन, हाइड्रोजन का सूक्ष्मजीवी उत्पादन।
(vi) सूक्ष्मजीवी खनन प्रक्रिया द्वारा धातुओं को उनकी कच्ची धातुओं से प्राप्त करना।
(vii) सोमेटोस्टेटिन उत्पादन— यह जीवाणु कोशिका में कृत्रिम तरीके से बनाया हुआ प्रथम वृद्धि हार्मोन है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में– लक्षणों के आधार पर रोग निदान एवं रोगों के उपचार करने में जैव प्रौद्योगिकी का विशेष योगदान रहा है, इनमें मुख्य हैं—

(i) विभिन्न प्रकार के टीकों का उत्पादन।
(ii) स्टीरॉइड हॉर्मोन्स का उत्पादन।
(iii) गर्भ पूर्व रोग की जानकारी।
(iv) बीटा-थेलेसीमिया (हीमोग्लोबिन निर्माण का वंशानुगत रोग), सिकल सेल एनिमिया (इसमें लाल रुधिर कणिकाओं के रवे (क्रिस्टल) बन जाते हैं, जो प्लीहा द्वारा निकाल दिए जाने से रुधिरहीनता रोग उत्पन्न करते हैं), एड्स (AIDS = एक्वायर्ड इम्यूनो डेफीसियेन्सी सिण्ड्रोम) आदि रोग के पहचाने में।
(v) जीन्स के विनिमय के द्वारा चिकित्सा।
(vi) विभिन्न प्रतिजैविकों का उत्पादन।

पर्यावरण के क्षेत्र में– पर्यावरण संरक्षण में जैव प्रौद्योगिकी ने प्रमुख भूमिका निभाई है, इनमें मुख्य हैं—

(i) अपशिष्ट पदार्थों का निष्पादन।
(ii) जैवभार से एथेनॉल, बायोगैस, हाइड्रोजन, पेट्रो पाइपों द्वारा ऊर्जा उत्पादन।

उपर्युक्त उपयोगिता को प्राप्त करने के लिए भारत तथा अन्य देशों में बड़े पैमाने पर बड़े-बड़े उद्योग विकसित किए जा चुके हैं। तथा अन्य अनेक प्रकार के उद्योग विकास की दिशा में प्रयत्नशील हैं।

प्रश्न 2. जैव प्रौद्योगिकी का मानव कल्याण में उपयोग पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न संख्या 1 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. आनुवंशिक अभियांत्रिकी क्या है? इसके उपयोग बताइए।

उत्तर– आनुवंशिक अभियांत्रिकी या जीनी अभियांत्रिकी– अब वैज्ञानिकों ने एक ऐसी तकनीक का विकास किया है, जिससे जीन की आणविक प्रकृति को बदला जा सकता है अर्थात् पूरी संरचना को ही बदला जा सकता है जिससे जीवों में जीनों के पुन: संयोजनों द्वारा नए गुण पैदा हो सकें। इस प्रकार कृत्रिम रूप में जीन की प्रकृति में परिवर्तन करने को जीन हेर-फेर या जीनी इंजीनियरिंग कहते हैं।

इस तकनीक का उपयोग करके आनुवंशिक वैज्ञानिक जीवों व मनुष्य की जीनी संरचना में सुधार करके अथवा विकृत जीन को सामान्य जीन द्वारा विस्थापित करके आनुवंशिक रोगों से मानव-जाति की रक्षा कर सकेंगे तथा मानव के लिए उपयोगी पौधों व जंतुओं की नस्लों में सुधार कर सकेंगे। इसके लिए वैज्ञानिकों ने एक अत्यधिक आधुनिक तकनीक का विकास किया है जिसे DNA- पुनर्योगज तकनीक कहते है।

जीनी अभियांत्रिकी के उपयोग– आनवुंशिक इंजीनियरिंग का प्रयोग व्यवसायिक उत्पादनों, अनेक मानव जीन्स की खोज, रोगों के कारण व उनके इलाज की सहायता में

हो रहा है। हम जीन्स के नियंत्रण में संश्लेषित होने वाले अनेक लाभदायक पदार्थों का औद्योगिक स्तर पर उत्पादन कर सकते हैं। इस प्रौद्योगिकी के महत्वपूर्ण प्रयोज्य निम्नलिखित हैं—

(i) जीन्स का निर्माण– किसी विशेष कोशिका से m-RNA अणु को अलग करके प्रतिवर्ती ट्रांस्क्रिप्टेज एंजाइम की सहायता से DNA शृंखला का संश्लेषण कराया जा सकता है।

(ii) जीन का विश्लेषण तथा संग्रह– DNA अणुओं को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़कर इनका पुंजकीकरण करके किसी भी जीव के संपूर्ण जीनोम का विश्लेषण किया जा सकता है। इसे 'जीनी संग्रह' के रूप में रिकार्ड किया जा सकता है। पुंजकीकरण की इस विधि को शॉटगन विधि कहते हैं।

(iii) जीन्स का प्रतिस्थापन– जीनी चिकित्सा से अवांछित जीन्स को हटाया जा सकता है और इसके स्थान पर नए वांछित जीन्स का प्रवेश कराया जा सकता है। इस प्रकार व्यक्ति की लंबाई, बुद्धि, ताकत आदि को नियंत्रित किया जा सकता है।

(iv) रोगजनक विषाणुओं का रूपांतरण– रोगजनक विषाणुओं के आनुवंशिक पदार्थ में परिवर्तन करके कैंसर, एड्स (AIDS) आदि रोगों के विषाणुओं को रोगजनक के बजाय इन्हीं रोगों के उपचार में प्रयोग किया जा सकता है।

(v) विषाणु प्रतिरोधी मुर्गियाँ– जेनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा मुर्गियों की ऐसी प्रजातियों का विकास किया गया है जो विषाणुओं के संक्रमण का प्रतिरोध करती हैं।

(vi) व्यक्तिगत जीन्स को अलग करना– कुछ जीन्स को अलग करने की तकनीक विकसित की गई, जो निम्नलिखित समूहों में वर्गीकृत की जा सकती है—

(a) विशेष प्रकार की प्रोटीन बनाने वाली जीन,

(b) r-RNA की जीन्स तथा

(c) नियंत्रण करने वाली जीन्स; जैसे– प्रोमोटर जीन तथा रेगुलेटरी जीन। चूजों में ओवोएल्ब्यूमिन की जीन, चूहों में ग्लोबिन तथा इम्यूनोग्लोबिन जीन्स, अनाजों व लेग्यूम्स में प्रोटीन संग्रह की जीन्स आदि को पृथक् किया जा चुका है।

(d) समुद्री तैल फैलाव का सफाया– इसमें पहले एक प्लाज्मिड में कई जीन्स को जोड़कर एक पुनर्संयोजित DNA बनाया जाता है और इसका पुंजकीकरण करके एक समुद्री जीवाणु में प्रवेश कराया जाता है। यह जीवाणु समुद्री सतह पर फैले तैल का सफाया कर देता है। इसे उच्चझक्की जीवाणु कहते हैं।

(e) पौधों में नाइट्रोजन अनुबंधन– पुनर्संयोजी DNA प्रौद्योगिकी के द्वारा **नाइट्रोजन स्थिरीकरण** की क्षमता रखने वाले जीवाणुओं का संवर्धन करके इन्हें फलीरहित पादपों में प्रविष्ट कराया जाता है।

(f) आनुवंशिक रोगों का पता लगाना– अनेक रोगों का गर्भ में ही **एमिओसिण्टेसिस तकनीक** द्वारा पता लगाया जाता था, किंतु DNA पुनर्संयोजन तकनीक द्वारा पुंजकीकृत डी०एन०ए० क्रम के उपलब्ध होने से गर्भस्त शिशु के पूरे जीनोटाइप का निरीक्षण किया जा सकता है। इस विधि के द्वारा बिंदु उत्परिवर्तन, विलोपन आदि सभी उत्परिवर्तनों का पता लगाया जा सकता है। इस विधि का प्रयोग गर्भस्थ शिशु में थैलेसीमिया, फिनाइलकीटोन्यूरिया आदि रोगों का पता लगाने के लिए किया जा रहा हैं।

(g) औद्योगिक रसायन– पेट्रोल, ईंधन, कीटनाशी, आसंजक, प्रणोदक, विलायक, रंजक, विस्फोटक आदि कई प्रकार के पदार्थ हमें खनिज तैल

पदार्थों से प्राप्त होते हैं। इन्हें हम जीनी अभियांत्रिकी द्वारा रूपांतरित जीवाणुओं की सहायता से पादपों के किण्वन से प्राप्त कर सकते हैं।

(h) इस तकनीक के द्वारा इन्सुलिन तथा मानव वृद्धि हॉर्मोन जैसे जैविक पदार्थों का उत्पादन किया जा रहा है।

(i) इस तकनीक द्वारा मानव इंटरफेरॉन (ल्यूकोसाइटिक इंटरफेरॉन, फाइब्रोब्लास्टिक इंटरफेरोन, प्रतिरक्षक इंटरफेरॉन) का उत्पादन किया जा रहा है।

प्रश्न 4. जीनी अभियांत्रिकी क्या है? जीनी अभियांत्रिकी की संक्षित क्रिया-विधि एवं उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

उत्तर- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

जीनी अभियंत्रिकी की क्रिया-विधि- पुनर्योगज DNA की क्रिया-विधि निम्नलिखित पदों में पूरी होती हैं—

(i) वांछित DNA खंड- जिससे पुनर्योगज DNA तैयार करना है, को पाने के लिए कोशिका के आनुवंशिक पदार्थ को विशेष एण्डोन्यूक्लीएज एंजाइम की सहायता से DNA खंडों में विखंडित किया जाता है। फिर इन खंड़ों में वांछित DNA खंड़ों का वरण किया जाता है। कभी-कभी वांछित DNA खंड का mRNA की प्रतिलिपिकरण द्वारा संश्लेषण किया जाता है।

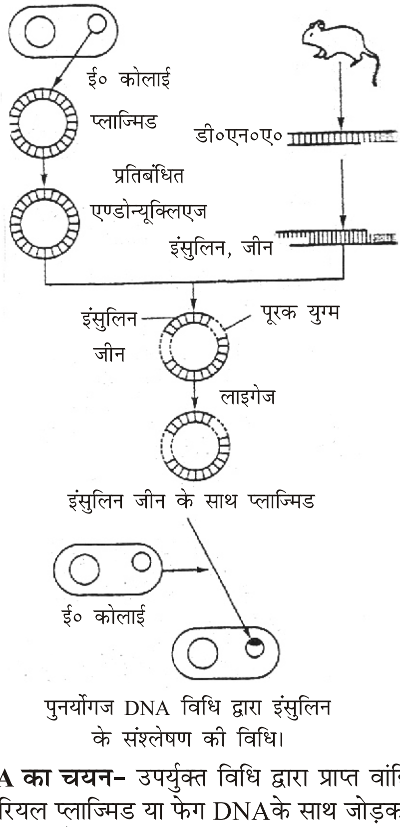

पुनर्योगज DNA विधि द्वारा इंसुलिन के संश्लेषण की विधि।

(ii) वाहक DNA का चयन- उपर्युक्त विधि द्वारा प्राप्त वांछित DNA खंड किसी विशेष बैक्टीरियल प्लाज्मिड या फेग DNAके साथ जोड़कर पुनर्योगज DNA का निर्माण किया जाता है। वांछित DNA खंड को विदेशी DNA कहते हैं। प्लाज्मिड या फेग DNA को वाहक DNA कहते हैं।

(iii) पुनर्योगज DNA का उचित पोषक कोशिकाओं के अंदर प्रवेश कराया जाता है। ये पोषक कोशिकाएँ मुख्यत: बैक्टीरियल कोशिकाएँ होती हैं।

(iv) पुनर्योगज DNA वाली परिवर्तित बैक्टीरियल कोशिकाओं का चयन किया जाता है और उन्हें उचित वर्धी में वृद्धि व जनन के लिए रख दिया जाता है। इस प्रकार पुनर्योगज DNA की बहुत-सी प्रतिलिपि तैयार हो जाती हैं। इनको **क्लोन DNA** कहते हैं।

(v) पुनर्योगज DNA की इन प्रतिलिपियों या क्लोन को या तो दूसरे पोषक की कोशिकाओं में प्रवेश करा देते हैं, जिसमें पुनर्योगज DNA संक्रिय होकर संबंधित पदार्थ का संश्लेषण करता है। इस उत्पाद को औद्योगिक स्तर पर भी प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रयोग में छोटी-छोटी बैक्टीरियल कोशिकाओं को मिनिफैक्ट्रीज के रूप में प्रयोग करके प्रयोगशाला में किसी भी जीन के उत्पाद के रूप में औद्योगिक स्तर पर विभिन्न जैव पदार्थों का संश्लेषण किया जा सकता है।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जैव प्रौद्योगिकी को परिभाषित कीजिए। किसी एक उद्योग के बारे में लिखिए जिसमें सूक्ष्म जीवों का अत्यधिक योगदान होता है।

उत्तर- जैव प्रौद्योगिकी- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 1 का अवलोकन कीजिए।

औद्योगिक क्षेत्र में सूक्ष्म जीवों का अत्यधिक योगदान है जैसे आनुवंशिक अभियांत्रिक सूक्ष्म जीवों के उपयोग से तैल का शोधन।

प्रश्न 2. जीनी इंजीनियरिंग का औद्योगिक क्षेत्र में क्या उपयोग हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- जीनी इंजीनियरिंग का औद्योगिक क्षेत्र में उपयोग- पेट्रोल, ईंधन, कीटनाशी, आसंजक, प्रणोदक, विलायक, रंजक, विस्फोटक आदि कई प्रकार के पदार्थ हमें खनिज तेल पदार्थों से प्राप्त होते हैं। इन्हें हम जीनी अभियांत्रिकी द्वारा रूपातंरित जीवाणुओं की सहायता से पादपों के किण्वन से प्राप्त कर सकते हैं।

प्रश्न 3. जीनी इंजीनियरिंग का कृषि-क्षेत्र में उपयोग पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- जीनी इंजीनियरिंग का कृषि-क्षेत्र में उपयोग- जैव प्रौद्योगिक या जीनी इंजीनियरिंग अनुसंधान द्वारा पौधों की अनेक खेती योग्य किस्में तैयार करके पोषण क्षमता व उत्पादन में वृद्धि की गई है। इस क्षेत्र में निम्नांकित उपलब्धियाँ महत्वपूर्ण हैं—

(i) रोगरहित एवं रोग प्रतिरोधक पौधों का उत्पादन।

(ii) पौधों में पोषण क्षमता बढ़ाना।

(iii) कीट, कवक, विपरीत मृदा अवस्थाओं, सुखा, शाकनाशी आदि की प्रतिरोधक प्रजातियों का उत्पादन।

(iv) जैव उर्वरकों की खोज तथा उत्पादन।

(v) विशेष तकनीक द्वारा अगुणित पौधे तैयार करना।

(vi) पौधों में रसायनिक उत्पादों का उत्पादन बढ़ाना।

(vii) भूमि व पौधों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्रिया को बढ़ाना।

प्रश्न 4. रोगजनक सूक्ष्म जीवों में प्रतिजैविक प्रतिरोधकता क्यों पैदा हो जाती है? कोई दो कारण बताइए।

उत्तर– रोगजनक विषाणुओं के आनुवंशिक पदार्थ में परिवर्तन करके कैंसर, एड्स आदि रोग के विषाणुओं को रोगजनक के बजाय इन्हीं रोगों के उपचार में प्रयोग किया जा सकता है।

कारण– इसके प्रमुख दो कारण निम्न हैं—

(i) इसमें पालतु पशुओं व पक्षियों के आनुवंशिक पदार्थ को सुधारा जा सकता है।

(ii) इससे विषाणु-प्रतिरोधी किस्मों का विकास किया जा सकता है।

प्रश्न 5. प्लाज्मिड्स क्या होते हैं? ये कहाँ पाए जाते हैं?

उत्तर– **प्लाज्मिड्स–** बैक्टीरियल कोशिकाओं में गुणसूत्र-DNA के अतिरिक्त भी छोटे-छोटे छल्लेनुमा DNA- अणु पाए जाते हैं। इन्हें प्लाज्मिड्स कहते हैं। ये स्वतंत्र रूप से गुणन कर सकते हैं। यह बैक्टीरियल कोशिकाओं के गुणसूत्र-DNA में पाए जाते हैं।

प्रश्न 6. ऊतक संवर्द्धन तकनीक द्वारा जर्मप्लाज्म व भंडारण की उपयोगिता किन स्थितियों में महत्वपूर्ण होती हैं?

उत्तर– ऊतक संवर्द्धन तकनीक द्वारा जर्मप्लाज्म व भंडारण की उपयोगिता DNA फिंगर प्रिंटिंग तथा अपराधों में अपराधी की तथा पीड़ित या मरने वाले की पहचान करने आदि में अत्यधिक उपयोगी व महत्वपूर्ण है।

प्रश्न 7. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(a) क्लोनिंग तथा इसके लाभ, **(b) लोनिंग साधन या वेक्टर,**

(c) ट्रांसजेनिक जीव।

उत्तर– (a) **क्लोनिंग तथा इसके लाभ–** जो DNA विखंड की बनी होती है के पुनर्संयोजन के लिए उसके पुंजीकरण या क्लोनिंग की विधि है। अनेक विशिष्ट एंजाइम की उपस्थित में होने वाली यह एक अति जटिल प्रक्रिया है, जिसके अनेक चरण-उपचरण होते हैं—

1. **वांछित जीन का विलगन–** यह जीनी अभियांत्रिकी का प्रथम चरण है। वांछित जीन विलगन का कार्य विभिन्न उपचरणों में कुछ विशिष्ट एंजाइम्स; जैसे— लाइसोजाइम, निर्बन्धन अन्त: न्यूक्लिएज की सहायता से विभिन्न क्रिया-प्रक्रिया द्वारा पूरा किया जाता है। वांछित जीन को प्राप्त करने की इस विधि को संकरण विधि कहते हैं।
2. **वाहक डी०एन०ए०अणु का चयन–** इस चरण में वांछित जीन को DNA के दूसरे अणु से जोड़कर पुनर्संयोजी DNA अणु का निर्माण किया जाता है। जिस DNA के अणु में वांछित जीन को जोड़ते हैं उसे वाहक कहते हैं। जीवाणुभोजी तथा प्लाज्मिड्स वाहक की भाँति प्रयुक्त होते हैं।
3. वांछित जीन को वाहक DNA अणु से जोड़कर पुनर्संयोजित DNA अणु का निर्माण किया जाता है।
4. **वांछित जीन को वाहक DNA अणु का पुंजकीकरण–** पुनर्संयोजित DNA अणु में तीव्र द्विगुणन की प्रवृत्ति होती है। ये द्विगुन करके अनेक प्रतिलिपियाँ बना लेते हैं। इसे पुनर्संयोजित DNA अणु का पुंजकीकरण या क्लोनिंग कहते हैं।

लाभ– इसके लाभ निम्न प्रकार हैं—

1. क्लोनिंग से पशुओं व पक्षियों तथा मानव के क्लोन तैयार किए जा सकते हैं।
2. क्लोनिंग के द्वारा जीव-जंतुओं के आनुवंशिक रोगों को दूर करने का प्रयास भी किया जा सकता है।

(b) **लोनिंग साधन या वेक्टर–** वांछित जीन विलगन का कार्य विभिन्न उपचरणों में कुछ विशिष्ट एंजाइम्स; जैसे– लाइकोजोसम निर्बन्धन अन्त: न्यूक्लिसन की सहायता से विभिन्न क्रिया–प्रक्रिया द्वारा पूरा किया जाता है। वांछित जीन को प्राप्त करने की इस विधि को संकरण विधि कहते हैं।

वांछित जीन को DNA के किसी दूसरे अणु से जोड़कर पूनर्संयोजी DNA अणु का निर्माण किया जाता है। जिस DNA के अणु में वांछित जीन को जोड़ते हैं उसे वाहक या लोनिंग साधन या वेक्टर कहते हैं। जीवाणुभोजी तथा प्लाज्मिड्स वाहक की भाँति प्रयुक्त होते हैं।

(c) **ट्रांसजेनिक जीव–** जिन जीवों के जीवोम में जीन अभियांत्रिकी द्वारा किसी दूसरी जाति के क्रियात्मक जीन्स का प्रवेश करा दिया जाता है, उन्हें ट्रांसजेनिक जीव तथा प्रविष्ट की गई जीन्स को ट्रांसजीन्स कहते हैं। ट्रांसजीन्स के प्रवेश द्वारा जीवों में नये आनुवंशिक गुणों का समावेश संभव हो जाता है। वैज्ञानिकों ने ट्रांसजेनिक जंतुओं, पादपों व जीवाणुओं की उत्पत्ति में सफलता प्राप्त कर ली है। इन्हें जेनेटिकली मॉडिफाइड जीव कहते हैं। आजकल आपने GM प्रकार के कपास व बैंगन के बारे में अवश्य सुना होगा। ट्रांसजेनिक तंबाकू, टमाटर व आलू तो काफी समय से उगाए जा रहे हैं। ट्रांसजेनिक टमाटर को काफी समय तक रखा जा सकता है। GM corps विषाणु रोगों के प्रतिरोधी होते हैं और इन पौधों की उत्पादन क्षमता बहुत होती है।

प्रश्न 8. DNA फिंगर प्रिंटिंग का क्या अर्थ है तथा इसका क्या महत्व है?

उत्तर– **DNA फिंगर प्रिंटिंग–** DNA का एण्डोक्यूक्लीयेज एंजाइम की सहायता से विदलन करके DNA खंड़ों की मैंचिंग द्वारा किसी व्यक्ति की पहचान की जा सकती है। इसे फिंगर प्रिंटिंग कहते हैं। प्रत्येक जीव के DNA की संरचना तथा आनुवंशिकता विशिष्ठ और अन्य जीवों से भिन्न होती है। इस तकनीक द्वारा किसी व्यक्ति, उसके माता–पिता, सन्तान, अपराधी व बलात्कारी मनुष्य की पहचान की जा सकती है। इस तकनीक की खोज एलेक जेफ्रीव ने सन् 1986 ई० में की थी।

महत्व– इसके निम्नलिखित महत्व इस प्रकार हैं—

(i) इस तकनीक द्वारा अपराधी की पहचान की जा सकती है।

(ii) इस तकनीक के द्वारा किसी व्यक्ति के माता–पिता की या संतान की पहचान की जा सकती है।

प्रश्न 9. चित्र की सहायता से पुनर्योजन DNA विधि द्वारा इन्सुलिन के संश्लेषण की विधि स्पष्ट कीजिए। (वर्णन की आवश्यकता नहीं है।)

उत्तर– उक्त प्रश्न के चित्र हेतु दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

इसके लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 418 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. जैव प्रौद्योगिकी चिकित्सा, कृषि एवं उद्योग के क्षेत्र में 'महत्व' विषय पर एक प्रोजेक्ट तैयार करना

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

26 जीवन की उत्पत्ति

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जीवन की उत्पत्ति के संबंध में ओपैरिन के सिद्धांत का वर्णन कीजिए।

उत्तर- **ओपैरिन सिद्धांत या जीवन की उत्पत्ति का जैव रासायनिक सिद्धांत- ए० आई० ओपैरिन** (A.I. Oparin) के अनुसार पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति निम्नलिखित चरणों में हुई—

प्रथम चरण : परमाणु अवस्था- पृथ्वी का अति प्रारंभिक स्वरूप एक ज्वलित वाष्प पुंज के रूप में था। इसमें सभी तत्व परमाणु के रूप में विद्यमान थे। पृथ्वी का ताप लगभग 5000-6000°C था। धीरे-धीरे पृथ्वी का ताप कम होने से भारी परमाणु; जैसे— ताँबा, निकिल, लौह, आदि पृथ्वी के केंद्र में एकत्र हुए जिससे पृथ्वी का केंद्रीय भाग बना है, जबकि हल्के परमाणु; जैसे— हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, कार्बन, ऑक्सीजन आदि से आदि वायुमंडल बना। आज भी पृथ्वी का केंद्रीय भाग पिघले हुए लावा के रूप में ही है।

द्वितीय चरण : अणु अवस्था- धीरे-धीरे पृथ्वी ठंड़ी हो रही थी। वातावरण अपचायक था। सबसे हल्के तथा क्रियाशील परमाणु, हाइड्रोजन ने विभिन्न तत्वों से संयोग करके जल, मेथेन, अमोनिया तथा हाइड्रोजन सायनाइड आदि का निर्माण किया। पृथ्वी के गर्म होने के कारण जल तरल रूप में न होकर वाष्प के रूप में था। जलवाष्प ठंडा होने पर जल के रूप में पृथ्वी पर बरसने लगी और शनैः शनैः पृथ्वी ठंडी होती गई। यद्यपि अनेक वर्षों तक पृथ्वी पर गिरे हुए पदार्थ गर्मी के कारण गैस में परिवर्तित होते रहे। इस समय तक कुछ पदार्थ ठोस भी हो गए होंगे। जिससे आदि पृथ्वी का स्थलमंडल बना होगा। अंत में अतिवृष्टि के कारण आदि सागरों का निर्माण हुआ। आदि वातावरण में ऑक्सीजन के परमाणु स्वतंत्र रूप से नहीं रहे।

तृतीय चरण : कार्बनिक यौगिकों का बनना- संभवतया आदि वायुमंडल में मेथेन सबसे पहले बनने वाला कार्बनिक यौगिक था। मेथेन से एथेन, प्रोपेन, ऐसीटिलीन, ऐल्कोहॉल, ऐल्डिहाइडस, कीटोन्स तथा कार्बनिक लवणों का निर्माण हुआ। विभिन्न कार्बनिक यौगिकों के बहुलीकरण तथा संघनन के फलस्वरूप निम्नलिखित जटिल यौगिक बने होंगे—

(i) शर्कराएँ, (ii) ग्लिसरॉल, (iii) वसीय अम्ल, (iv) ऐमीनो अम्ल,
(v) पिरीमिडीन्स, (vi) प्यूरिन्स आदि।

सूर्य की पराबैंगनी किरणों, विद्युत (घर्षण) ऊर्जा, अन्तरिक्षी किरणों तथा ज्वालामुखियों से उत्पन्न ताप ने उपर्युक्त पदार्थों के संश्लेषण के लिए ऊर्जा प्रदान की होगी।

चतुर्थ चरण : विशिष्ट जटिल कार्बनिक पदार्थों का निर्माण- शर्कराओं के बहुलीकरण से स्टार्च, सेलुलोस तथा दूसरे प्रकार के जटिल कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण हुआ होगा। ग्लिसरॉल तथा वसीय अम्लों के संयोग से वसाओं का निर्माण हुआ। एमीनो अम्लों के संयोजन से जटिल प्रोटीन्स का निर्माण हुआ। इनमें से कुछ प्रोटीन के अणु रासायनिक क्रियाओं के उत्प्रेरण का कार्य करने लगे। ऐसे उत्प्रेरकों को एंजाइम्स कहा

गया। प्यूरिन्स पिरीमिडीन्स, फॉस्फोरिक अम्ल तथा पेन्टोज शर्करा अणुओं के मिलने से न्यूक्लिक अम्लों का निर्माण हुआ। आदि सागर में इस प्रकार बने विभिन्न कार्बनिक पदार्थ मिश्रण के रूप में उबल रहे थे। हैल्डेन सन् 1920 ई० ने आदि सागर में उपस्थित कार्बनिक यौगिकों के इस जटिल मिश्रण को पूर्वजीवी सूप कहा।

पंचम चरण : कोलॉइड्स, कोएसरवेट्स तथा न्यूक्लियोप्रोटीन्स का निर्माण– आदि सागर के गर्म पूर्वजीवी सूप में यौगिकों के अणु आपस में संयोग तथा अभिक्रियाएँ करके अघुलनशील बूँदों के रूप में कोलॉइडी कण बनाते थे। प्रोटीन्स से बने कोलॉइडी कणों को फॉक्स ने माइक्रोस्फीयर्स कहा। विरोधी विद्युत आवेशयुक्त कोलॉइडी कणों के परस्पर मिलने से कोएसवरवेट्स का निर्माण हुआ। कोएसरवेट्स अपनी सतह से जल का अवशोषण करके कला का निर्माण करती थीं। ये किण्वन द्वारा ऊर्जा प्राप्त करती थीं और गुणन द्वारा संख्या में वृद्धि करती थीं।

न्यूक्लिक अम्लों तथा प्रोटीन्स के मिलने से न्यूक्लियोप्रोटीन्स का निर्माण हुआ होगा। आधुनिक वाइरस न्यूक्लियोप्रोटीन्स से बने होते हैं। **जीन** न्यूक्लिक अम्लों से तथा गुणसूत्र न्यूक्लियोप्रोटीन्स से बने होते हैं। 'गुणसूत्र' को जीवधारी की जन्मपत्री माना जाता है।

वास्तव में न्यूक्लिक अम्ल बनने की क्रिया एक महत्वपूर्ण घटना रही, क्योंकि इनमें द्विगुणन की क्षमता होती है; अत: जनन संभव हो गया।

षष्ठम चरण : कोशिकाओं का निर्माण– ओपैरिन के अनुसार कोएसरवेट्स द्वारा न्यूक्लियोप्रोटीन्स के ग्रहण कर लेने के फलस्वरूप आदि कोशिकाओं की उत्पत्ति हुई होगी। एक अन्य मत के अनुसार न्यूक्लियोप्रोटीन्स स्वभाव से चिपचिपे होते हैं, इस कारण इनके चारों ओर विभिन्न कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थों के एकत्र हो जाने से आदि कोशिकाओं का निर्माण लगभग 3.7 अरब वर्ष पूर्व हुआ होगा।

ऐसा समझा जाता है कि आदि कोशिकाएँ रासायनिक परपोषी रही होगी। ये अपने आस-पास उपस्थित कार्बनिक पदार्थों को भोजन के रूप में ग्रहण करके किण्वन द्वारा ऊर्जा प्राप्त करती रही होगी। आदि कोशिकाएँ आजकल मिलने वाली परपोषी पूर्वकेंद्रकीय, प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं की तरह रही होंगी। परपोषी आदि कोशिकाओं से पहले रसायन संश्लेषी स्वपोषी कोशिकाओं का विकास हुआ और फिर पर्णहरिम जैसे वर्णक के बन जाने से प्रकाश संश्लेषी स्वपोषी पूर्वकेंद्रकीय कोशिकाओं की उत्पत्ति हुई होगी। प्रकाश संश्लेषण क्रिया के फलस्वरूप ऑक्सीजन क्रान्ति हुई जिससे वातावरण ऑक्सीकारक हो गया। कोशिकाएँ ऑक्सी श्वसन द्वारा ऊर्जा प्राप्त करने लगीं। आदि वायुमंडल में उपस्थित मेथेन ने ऑक्सीजन से क्रिया द्वारा CO_2 तथा H_2O और अमोनिया से क्रिया करके N_2 तथा H_2O का निर्माण किया। ऑक्सीजन अणु तथा परमाणु से ओजोन (O_3) का निर्माण हुआ। ओजोन ने समतापमंडल में पहुँचकर एक सुरक्षात्मक आवरण का निर्माण किया जिससे पराबैंगनी किरणों का पृथ्वी पर आना लगभग रुक गया।

सप्तम चरण : सुकेंद्रकीय कोशिकाओं की उत्पत्ति– लगभग 1.5 अरब वर्ष पहले पूर्वकेंद्रकीय कोशिकाओं से जैव विकास के फलस्वरूप सुकेंद्रकीय कोशिकाओं की उत्पत्ति हुई। **ओपैरिन** के अनुसार सुकेंद्रकीय कोशिकाओं की उत्पत्ति जैव विकास के फलस्वरूप पूर्वकेंद्रकीय कोशिकाओं से हुई है, जबकि वालिन (सन् 1920 ई०), मारगुलिस (सन् 1970 ई०) आदि के सहजीविता मतानुसार अनेक पूर्वकेंद्रकीय कोशिकाओं के परस्पर मिलने के फलस्वरूप सुकेंद्रकीय कोशिकाओं की उत्पत्ति हुई।

कोशिकाओं में उपस्थित क्लोरोप्लास्ट, माइटोकॉण्ड्रिया आदि अंगकों में स्वद्विगुणन की क्षमता होने से इस मत की पुष्टि होती है।

प्रश्न 2. पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति किस प्रकार हुई? आधुनिक परिकल्पना का वर्णन कीजिए।

उत्तर- पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति- पृथ्वी का निर्माण जिन दशाओं में भी हुआ हो, उसके अंदर व बाहर अनेक प्रकार के परिवर्तन सदैव से होते ही आए हैं और आगे भी होते रहेंगे। पृथ्वी का आज स्वरूप, उसका बाह्य पर्यावरण, जिसमें जीव का उद्भव हुआ तब निश्चित ही ऐसा नहीं हुआ था। उस समय से पहले पृथ्वी पर केवल कुछ ही तत्व थे, जैसे-जैसे पृथ्वी ठंड़ी हुई, तत्व भी अपना स्वरूप प्राप्त करते गए। ऐसे में कम भार वाले तत्वों ने उसके बाहर की पर्तें तथा अति हल्के पदार्थों ने उसका वायुमंडल बनाने में सहायता की होगी अर्थात् जैसे-जैसे तापमान कम होता गया, पृथ्वी का स्वरूप ठोस होता गया। ऐसा सब होने में निश्चय ही करोड़ों वर्ष लगे होंगे। अनुमानतः ऐसा पृथ्वी का विकास 4-5 अरब वर्ष पूर्व हुआ होगा।

आधुनिक परिकल्पना- इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या-1 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. जीव की उत्पत्ति के संबंध में आधुनिक परिकल्पना को सिद्ध करने के लिए स्टैनले मिलर ने क्या प्रयोग किया? उसका वर्णन कीजिए तथा बताइए कि उसने इसके क्या निष्कर्ष निकाले?

उत्तर- जीव की उत्पत्ति के संबंध में आधुनिक परिकल्पना के लिए स्टैनले मिलर का प्रयोग- ओपैरिन के जीवन की उत्पत्ति के सिद्धांत की पुष्टि के लिए अमेरिकन वैज्ञानिक स्टैनले मिलर (1953, 57) ने अपने गुरु हैरोल्ड यूरे के निर्देशन में निम्नलिखित प्रयोग किया—

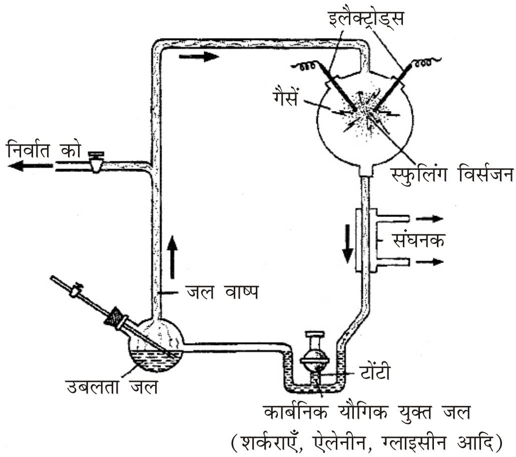

5 लीटर की क्षमता वाले एक फ्लास्क में 2 : 1 : 2 के अनुपात में मेथेन, अमोनिया तथा हाइड्रोजन का गैसीय मिश्रण भर दिया जैसा कि आदि वायुमंडल में उपस्थित माना गया है। इस फ्लॉस्क को एक ओर से दो समकोणों पर मुड़ी एक काँच की नली से जोड़ दिया। इस नली को मध्य में एक निर्वात पंप से जोड़ा गया। फ्लास्क के दूसरे सिरे पर आधा लीटर क्षमता वाले काँच का एक फ्लास्क जोड़ दिया गया। इसमें जल भरकर इसे एक विशिष्ट संरचना वाली नली से जोड़ दिया। इस नली को U आकार वाले भाग के ऊपर एक संघनक से होकर निकाला गया। बड़े फ्लास्क में टंगस्टन के बने हुए दो

इलेक्ट्रोड्स लगाए गए। इनमें विद्युत प्रवाहित करने पर ये चिंगारियाँ मुक्त करते थे, अत: इसको चिंगारी विमुक्ति उपकरण कहा गया। इस प्रयोग में छोटे वाले फ्लास्क के जल को गर्म करने पर संबंधित नली में जलवाष्प का संचार प्रारंभ हो जाता था। बड़े फ्लास्क में होने वाली क्रियाओं में बनने वाले पदार्थ जलवाष्प के साथ जब संघनक से निकलते तो ठंडे हो जाते और 'U' नली में एकत्रित हो जाते। यह लाल से रंग का तरल पदार्थ होता।

प्रेक्षण निष्कर्ष– इस प्रयोग को प्रारंभ करने पर आदि पृथ्वी की दशाओं के समान परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं।

(i) इनमें संपूर्ण उपकरण में जलवाष्प का संचार, बड़े फ्लास्क में आदि वायुमंडल में पाई जाने वाली गैसें तथा इलेक्ट्रोड्स द्वारा तड़ित जैसे प्रभाव को उत्पन्न करना आदि प्रमुख हैं।

(ii) प्रयोग के अंत में 'U' नली वाले भाग में एक लाल रंग के गंदले से तरल पदार्थ का एकत्र होना।

(iii) लाल तरल का विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि यह ग्लाइसीन व ऐलेनीन जैसे सरल अमीनो अम्ल, शर्करा, कार्बनिक अम्लों , एवं उनके यौगिकों का मिश्रण था।

(iv) ओपैरिन के यहाँ वर्णित प्रमुख तृतीय चरण 'कार्बनिक यौगिकों का निर्माण' की पूर्णत: पुष्टि करता है।

इस प्रकार, स्पष्ट रूप से स्टैनले मिलर एवं अन्य समकालीन वैज्ञानिकों ने अपने प्रयोगों द्वारा ओपैरिन के जीवन की उत्पत्ति संबंधी सिद्धांतों की पूर्णत: पुष्टि की कि यदि आदि समुद्र में अत्यंत सरल पदार्थों से रासायनिक विकास के द्वारा तथा बाद में रासायनिक-जैव विकास के द्वारा जीवन की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार जीवन का उद्भव केवल उन आदि परिस्थितियों में ही संभव था और वर्तमान परिस्थितियों में इस प्रकार की उत्पत्ति संभव नहीं है।

प्रश्न 4. जीवात् जीवोत्पत्ति का सिद्धांत क्या है? यह स्वत: जननवाद से किस प्रकार भिन्न है? लुई पाश्चर के प्रयोग का सचित्र वर्णन कीजिए।

उत्तर– **जीवात् जीवोत्पत्ति या जीव जननवाद–** यह मत अजीवात् जीवोत्पत्ति के प्रतिवाद के रूप में 17 वीं शताब्दी में **हार्वे** द्वारा दिया गया। इस सिद्धांत के अनुसार जीवों में स्वत: जनन नहीं होता, बल्कि जीवों की उत्पत्ति जीवों से ही संभव है। स्वत: जनन को गलत सिद्ध करने तथा जीव जननवाद के प्रबल समर्थन में अनेक वैज्ञानिकों- फ्रांसेस्को रेडी, लैजेरो स्पेलैन्जनी तथा लुई पाश्चर ने अपने विशिष्ट प्रयोग प्रस्तुत किए। बाद में हक्सले (1870) ने इसे जीवात् जीवोत्पत्ति का सिद्धांत कहा।

स्वत: जननवाद अथवा अजीवात् जीवोत्पत्ति मत– इस प्रचीनतम मत के अनुसार उपर्युक्त वातावरणीय परिस्थितियों से भिन्न-भिन्न प्रकार के जीवों की उत्पत्ति विभिन्न अजैव पदार्थों से समय-समय पर स्वत: ही हुई है। थेल्स, प्लेटो, अरस्तू आदि ग्रीक दार्शनिकों के मतानुसार तालाबों के कीचड़ से मछलियों, मेढकों व कछुओं आदि की, माँस, गोबर, व कूड़ा-करकट आदि से कीड़े-मकोड़ों आदि की तथा पसीने से जूँ आदि की उत्पत्ति स्वत: ही हुई।

वॉन हेल्मोण्ट (1642), का विचार था कि मनुष्य के पसीने से भीगी कमीज तथा गेहूँ की बालियों को संदूक में बंद करके रखने से 21 दिन में चूहे स्वत: ही उत्पन्न हो जाते हैं। अरस्तू के अनुसार, ''विभिन्न प्रकार के जीव निर्जीव पदार्थों से स्वत:उत्पन्न होते हैं, परंतु एक बार स्वत: उत्पादन से बन जाने के पश्चात् जीव जनन के द्वारा अपने जैसे जीवों की

उत्पत्ति करता रहता है।'' मिस्त्र के दार्शनिकों के विचारानुसार सूर्य के प्रकाश एवं गर्मी के कारण नील नदी की कीचड़ में सर्प, मेढ़क, मछली, कछुए एवं घड़ियाल आदि स्वत: उत्पन्न हो जाते हैं।

वैज्ञानिक प्रगति के फलस्वरूप वैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा निष्कर्ष निकाले कि निर्जीव पदार्थों से जीवों की उत्पत्ति असंभव है तथा जीवों की उत्पत्ति पूर्व उपस्थिति जीवों से ही होती है। अत: यह मत अस्वीकार कर दिया गया।

लुई पाश्चर (1862) का प्रयोग– फ्रांसिसी वैज्ञानिक लुई पाश्चर ने एक फ्लास्क में यीस्ट तथा शर्करा का विलयन भरकर उसे दो मिनट तक उबाला और फिर उसकी गर्दन को गर्म करके चित्र के अनुसार लंबी 'S' आकार (हंस की गर्दन के समान) की नली के रूप में मोड़ दिया और नली के मुँह को खुला रखा। अब फ्लास्क को इतना गर्म किया कि उसकी नली से वाष्प निकलने लगी और नली में उपस्थित सभी सूक्ष्म जीव मर गए। पलास्क को अब ठंड़ा होने दिया गया। इस समय इसके खुले मुँह को रुई की एक डाट से बंद कर दिया गया। देखा गया कि इस प्रकार से बाहर की वायु पलास्क में प्रवेश करने पर भी अनेक दिनों तक विलयन में सूक्ष्म जीव उत्पन्न नहीं हुए। इसका कारण यह था कि मुड़ी हुई नली द्वारा वायु के फ्लास्क में प्रवेश कर जाने पर भी वायु में उपस्थित सूक्ष्म जीव नली में फँस जाते थे। कुछ दिनों बाद फ्लास्क की गर्दन तोड़ दी गई तो दो–तीन दिन बाद ही विलयन में दुर्गन्ध आ रही थी तथा इसमें सूक्ष्म जीव पाए गए। गर्दन टूट जाने से सूक्ष्म जीव आसानी से फ्लास्क में प्रवेश कर गए और उन्होंने अनेक सूक्ष्म जीवों को जन्म दिया। इस प्रयोग से पाश्चर ने सिद्ध कर दिया कि जीवों की उत्पत्ति जीवों से ही होती है, निर्जीव पदार्थों से नहीं। पाश्चर के प्रयोग से स्वत: जननवाद की धारणा सदैव के लिए गलत सिद्ध हो गई।

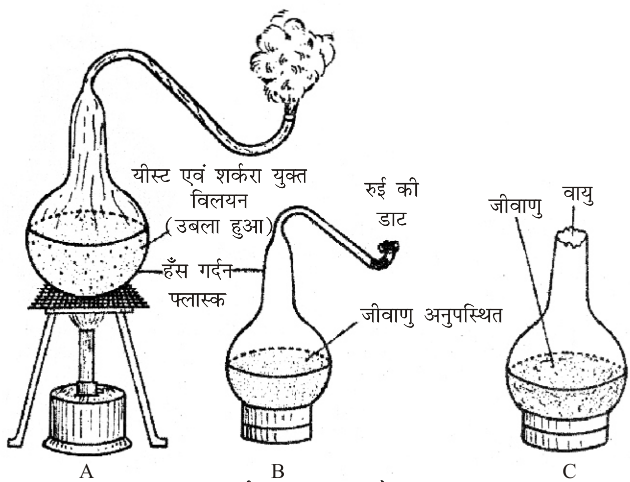

लुई पाश्चर का प्रयोग

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

(i) स्वत: जनन, **(ii) स्टैनली मिलर का प्रयोग,**

(iii) ओपैरिन परिकल्पना, **(iv) विशिष्ट सृष्टिवाद**

उत्तर– (i) **स्वत: जनन–** इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

(ii) **स्टैनले मिलर का प्रयोग–** इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 3 का अवलोकन कीजिए।

(iii) **ओपैरिन परिकल्पना–** इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 1 का अवलोकन कीजिए।

(iv) **विशिष्ट सृष्टिवाद–** जीवन की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न धर्म-प्रचारकों ने भी अपने मत प्रस्तुत किए हैं। इनमें ईश्वर अथवा उनके प्रतिनिधि (अवतार) अथवा किसी अदृश्य/दृश्य दिव्य या अलौकिक शक्ति ''सर्वशक्तिमान ईश्वर' ने छ: प्राकृतिक दिनों में संपूर्ण सृष्टि की रचना की है।'' पहले दिन पृथ्वी एवं स्वर्ग, दूसरे दिन जल एवं आकाश, तीसरे दिन शुष्क भूमि एवं वनस्पत्तियाँ, चौथे दिन सूर्य, चंद्रमा एवं तारें, पाँचवें दिन मछलियों एवं पक्षियों तथा छठवें दिन स्थलीय जंतुओं एवं मनुष्य की रचना हुई। प्रथम पुरुष आदम था, जिसकी बारहवीं पसली से प्रथम स्त्री हौवा उत्पन्न हुई।

हिंदू-धर्म-ग्रंथों पुराणों के अनुसार ब्रह्मा ने अपने शरीर के भागों से सृष्टि की रचना की है। ब्रह्मा के सिर से देवताओं, राक्षसों एवं मनुष्यों की, छाती से पक्षियों की, मुख से बकरियों की तथा बालों से वनस्पत्तियों एवं अन्य जंतुओं की उत्पत्ति हुई।

वर्तमान में वैज्ञानिक प्रगति होने के कारण इस प्रकार के मत एवं धारणाएँ अथवा आस्थाएँ कितनी भी मूल्यवान हों वैज्ञानिक कसौटी पर निराधार ही लगती है।

प्रश्न 2. स्वत: जनन सिद्धांत के प्रतिवाद में लुई पाश्चर द्वारा किए प्रयोग का वर्णन कीजिए।

उत्तर– इसके लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न संख्या 4 का अवलोकन कीजिए।

प्रश्न 3. जीव की उत्पत्ति के संबंध में कौन-सा सिद्धांत वैज्ञानिकों द्वारा माना जाता है? इस संबंध में चार वैज्ञानिकों के नाम बताइए जिन्होंने प्रयोगों द्वारा इस सिद्धांत की पुष्टि की हो।

उत्तर– **ओपैरिन का सिद्धांत** (मत) वर्तमान में सर्वमान्य है क्योंकि इसको अनेकानेक वैज्ञानिकों का समर्थन प्राप्त है। अनेक वैज्ञानिकों ने इस संबंध में अनेक प्रयोग भी किए हैं, जिनसे इस मत की पुष्टि होती है। कुछ प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं—

(i) अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्टैनले मिलर तथा उनके गुरु हैराल्ड यूरे ने प्रयोगों द्वारा उपर्युक्त सिद्धांत का समर्थन तथा पुष्टि की।

(ii) होरोविट्ज (1945), लेसली ऑर्गेल (1973), आदि वैज्ञानिकों ने इस मत का समर्थन किया तथा व्यक्त किया कि समुद्र में नग्न जीन्स के रूप में जीवन का उद्भव हुआ।

(iii) डैविड बूल (1969) ने पुन: मिलर के प्रयोगों की पुष्टि की किंतु व्यक्त किया कि बड़े तथा जटिल यौगिकों का संश्लेषण पहले अंतरिक्ष में हुआ।

(iv) डॉ० हरगोबिंद खुराना ने अमेरिका के विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में परखनली में अनेक न्यूक्लियोटाइड्स का निर्माण किया तथा बाद में इनको निश्चित क्रमों में युग्मित करके RNA अणुओं का कृत्रिम संश्लेषण किया। इस अभूतपूर्व उपलब्धि के लिए उन्हें 1970 ई० में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

प्रश्न 4. जीवन की उत्पत्ति के संबंध में किए गए प्रयोगों में लुई पाश्चर ने फ्लास्क की नली 'S' आकार में क्यों मोड़ी? इस प्रयोग द्वारा उसने किस सिद्धांत को गलत सिद्ध किया?

उत्तर– लुई पाश्चर ने फ्लास्क की नली 'S' आकार में मोड़नें का कारण था कि मुड़ी हुई नली द्वारा वायु के फ्लास्क में प्रवेश कर जाने पर भी वायु में उपस्थित सूक्ष्म जीव नली में फँस जाए और फ्लास्क तक न पहुँचे। लुई पाश्चर ने इस प्रयोग से स्वत: जननवाद की धारणा सदैव के लिए गलत सिद्ध हो गई।

प्रश्न 5. स्टैनले मिलर के प्रयोग का केवल नामांकित चित्र बनाइए। इस प्रयोग में प्रयुक्त रसायनों के नाम तथा अंतिम उत्पाद के नाम लिखिए।

उत्तर– चित्र के लिए दीर्घ उत्तरीय प्रश्न के प्रश्न 3 का का अवलोकन कीजिए।

प्रयोग में प्रयुक्त रसायनों के नाम– मेथेन, अमोनिया तथा हाइड्रोजन।

अंतिम उत्पाद का नाम– ग्लाइसीन व ऐलेनीन जैसे सरल अमीनो अम्ल, शर्करा, कार्बनिक अम्लों एवं उनके यौगिकों का मिश्रण था।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

इसके लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 427 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. ओपैरिन के सिद्धांत का अध्ययन करना तथा स्टैनले मिलर के प्रयोग को चार्ट द्वारा प्रस्तुत करना।

उत्तर– विद्यार्थी स्वयं करें।

▣▣▣

27 जैव विकास-विकास के सिद्धांत

▶ दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जैव विकास के संबंध में डार्विन के प्राकृतिक वरण एवं योग्यतम की उत्तरजीविता के सिद्धांत को समझाइए। या

डार्विनवाद का विस्तृत वर्णन कीजिए। या

चार्ल्स डार्विन के अनुसार जैव विकास के मुख्य कारकों का वर्णन कीजिए। या

डार्विनवाद की आलोचना किन आधारों पर की गई है?

उत्तर- डार्विनवाद- चार्ल्स डार्विन (1809-1882) एक अंग्रेज जीव वैज्ञानिक था। डार्विन ने समुद्री यात्राओं द्वारा विभिन्न देशों तथा द्वीपों के जीवों का अध्ययन किया और जीवों के विकास के संबंध में अपने सिद्धांत को प्राकृतिक वरण द्वारा जातियों का उद्‌भव नामक पुस्तक में प्रकाशित किया। डार्विन का सिद्धांत प्राकृतिक वरणवाद (चयनवाद) या डार्विनवाद के नाम से प्रचलित है। यह सिद्धांत निम्नलिखित तथ्यों को आधार मानकर प्रतिपादित किया गया—

(i) जीवों में संतोनोत्पत्ति की प्रचुर क्षमता- प्रत्येक जीव प्रजनन द्वारा अपनी संतान उत्पन्न करता है। जीवों में संतान उत्पन्न करने की बहुत अधिक क्षमता होती है। निम्न श्रेणी के जंतुओं में तो प्रजनन क्षमता इतनी अधिक होती है कि अगर सभी संतानें जीवित रहें तो पृथ्वी उनके अतिरिक्त और कोई जंतु दिखाई भी न देगा, परंतु ऐसा नहीं होता। उन्होंने हाथी का उदाहरण देकर बताया कि एक हथिनी 30 से 90 वर्ष की आयु तक औसतन 6-7 संतानें उत्पन्न करती है। यदि ये सभी जीव जीवित रहें और रेखागणितीय अनुपात में वृद्धि करें, तो लगभग 750 वर्षों में हाथियों के एक जोड़े से लगभग 2 करोड़ हाथी अस्तित्व में आ जाएँगे।

डार्विन ने स्पष्ट किया कि प्रकृति में किसी भी जीव–जाति की इस प्रकार रेखागणित अनुपात में वृद्धि नहीं होती है, क्योंकि अनेक बार अनेक कारकों के प्रभाव से सभी शिशु वयस्क होने तक जीवित नहीं रहते अथवा जनन योग्य नहीं रह पाते। इस प्रकार प्रत्येक जीव–जाति की स्थिर व संतुलित समष्टि रहती है।

(ii) जीवन-संघर्ष- सभी जीवों को जीवित रहने के लिए स्थान, प्रकाश तथा भोजन चाहिए, परंतु सीमित स्थान तथा भोजन के कारण यह संभव नहीं हो पाता। अत: पैदा होते ही प्रत्येक जीव को जीवित रहने की आवश्यक सुविधाओं के लिए संघर्ष करना पड़ता है। इसको जीवन–संघर्ष कहते है। इस जीवन संघर्ष के कारण ही इनकी संख्या रेखागणितीय अनुपात में नहीं बढ़ती तथा लगभग स्थिर रहती है। यह जीवन संघर्ष अंत:जातीय या सजातीय अर्थात् एक ही जाति के जीवों के मध्य तो सबसे अधिक होता ही है, अंतरजातीय अर्थात् विभिन्न जातियों के मध्य भी कम नहीं होता। यहीं नहीं, अनेक बार तो यह वातावरणीय संघर्ष के रूप में ही सामने होता है।

(iii) विभिन्नताएँ- प्रत्येक जाति के जीवों में विभिन्नताएँ मिलती हैं। इन्हीं विभिन्नताओं के कारण कुछ जीव वातावरण के अनुकूल होते हैं। जो विभिन्नताएँ उत्पन्न होती

हैं, वे संतानों में वंशानुगत हो जाती हैं, जिससे संतान भी उस वातावरण के लिए अनुकूलित हो जाती हैं। यहाँ यह भी माना गया है कि विभिन्नताएँ लाभदायक अथवा हानिकारक हो सकती हैं। लाभदायक अथवा उपयोगी विभिन्नताएँ ही जीव को योग्य बनाने में सक्षम होती हैं तथा उस जीव को जीवित रहने में सहायता करती हैं।

(iv) योग्यतम की उत्तरजीविता– वही जीव जीवित रहता है, जो जीवन संघर्ष में वातावरण के अनुकूल होता है और आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके स्वयं को और अधिक अनुकूल बना लेता है। अनुकूलन से वह सशक्त हो जाता है। संघर्ष में निर्बल जीव नष्ट हो जाते हैं अर्थात् योग्यतम ही जीवित रहता है। इस प्रकार प्रत्येक जाति के जीवों की संख्या लगभग स्थिर रहती है।

(v) प्राकृतिक वरण या चयन– जीवित रहने के लिए जीवों में जो संघर्ष होता है, इसमें वो जीव प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल होते हैं, वे ही जीवित रहते हैं तथा अन्य नष्ट हो जाते हैं। इसे योग्यतम की उत्तरजीविता कहा गया है, अत: प्रकृति स्वयं ही श्रेष्ठ व अनुकूल जीवों का वरण करती हैं जिसको प्राकृतिक वरण कहते हैं।

(vi) नई जातियों की उत्पत्ति– जीवन संघर्ष में योग्य सिद्ध करने के लिए उत्पन्न विभिन्नताएँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में वंशानुगत होती रहती हैं, साथ ही संतान में भी स्वयं कुछ विशेष लक्षण तथा विभिन्नताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। कुछ पीढ़ियों के बाद लक्षणों तथा विभिन्नताओं की वंशागति इतनी अधिक हो जाती है कि संतानें अपने पूर्वजों से भिन्न हो जाती हैं और इस तरह नई जातियों की उत्पत्ति हो जाती है।

डार्विनवाद के प्रति आपत्तियाँ– डार्विनवाद का प्राकृतिक वरणवाद इतना युक्तिसंगत था कि शुरू में लगभग सभी वैज्ञानिकों ने उसका समर्थन किया किंतु बाद में वैज्ञानिकों ने इसके प्रति निम्नलिखित अपवाद प्रस्तुत किए—

(i) डार्विनवाद अवशेषी अंगों की उपस्थिति तथा अंगों के प्रयोग में लाने या न लाने के प्रभाव का उल्लेख नहीं करता।

(ii) डार्विन ने दैहिक व जनन कोशिकाओं में पाई जाने वाली विभिन्नताओं में अंतर नहीं किया। उनके अनुसार दोनों प्रकार की विभिन्नताएँ समान रूप से वंशागत होती है।

(iii) विभिन्न जातियों के जीवों में कुछ अंतर बिल्कुल भी अनुकूली महत्व के नहीं होते क्योंकि जीन्स में कुछ परिवर्तन किसी भी कारण अचानक ही उत्पन्न हो जाते हैं, डार्विन द्वारा इन परिवर्तनों की उत्पत्ति तथा वंशागति के कारणों पर कोई प्रकाश नहीं डाला गया।

(iv) डार्विन का सिद्धांत समर्थ के जीवत्व की व्याख्या तो करता है किंतु समर्थ की उत्पत्ति नहीं बताता।

(v) डार्विन ने कृत्रिम वरण द्वारा पालतू जानवरों की नस्ल व फसलों वाले पौधों की किस्में सुधारने का वर्णन किया है। किंतु वैज्ञानिकों ने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि वातावरण के कारण जीवों में होने वाले कायिक परिवर्तन संतति में वंशागत नहीं होते।

(vi) डार्विन का प्राकृतिक वरणवाद संयोजी कड़ियों की उपस्थिति की व्याख्या नहीं करता।

(vii) डार्विनवाद रचनाओं की उत्पत्ति एवं अतिवृद्धि की व्याख्या नहीं करता क्योंकि अनेक अनुपयोगी लक्षण भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनकी संतानों में वंशागत होते हैं—

(a) आयरलैंड के बारहसिंघे के सींग उसके नष्ट होने के कारण बने फिर भी ये छोटे होने की अपेक्षा पीढ़ी-दर-पीढ़ी विकसित होते गए। शत्रुओं से बचने के

लिए ये जंगल में भागते समय इन सींगों के कारण झाड़ियों में उलझकर गिर पड़ते थे और शत्रुओं द्वारा पकड़ लिए जाते थे।

(b) **स्वीडलोन–** चीतों में दाँत का अत्यधिक विकास पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनकी संतानों में होता गया जो उनके लिए अनुपयोगी और हानिकारक सिद्ध हुए।

प्रश्न 2. लैमार्कवाद क्या है? इसे वैज्ञानिकों ने क्यों अस्वीकार कर दिया? प्रमाण सहित स्पष्ट कीजिए। या

लैमार्कवाद को समझाइए।

उत्तर- लैमार्कवाद– फ्रांस के प्रसिद्ध जीवशास्त्री जीन बैप्टिस्ट डी लैमार्क (1744-1829) ने जैव विकास क्रिया को समझाने के लिए सर्वप्रथम वैज्ञानिक परिकल्पना उपार्जित लक्षणों का वंशागति सिद्धांत प्रस्तुत किया, जो उनकी पुस्तक फिलोसफी जूलोजिक में 1809 ई० में प्रकाशित हुआ। उन्होंने अंगों के उपयोग एवं अनुप्रयोग के प्रभाव का सिद्धांत भी दिया। उनके विचार लैमार्कवाद के नाम से प्रसिद्ध हैं। सिद्धांत को संक्षेप में निम्न प्रकार समझा जा सकता है—

(i) आकार वृद्धि की प्रवृत्ति– लैमार्क के अनुसार जीवित जंतुओं तथा उनके अंगों में आकार वृद्धि की स्वाभाविक प्रवृति होती है।

(ii) वातावरण का सीधा प्रभाव– लैमार्क के अनुसार जीवों के विकास में वातावरण का सीधा प्रभाव पड़ता है, जैसे— एक ही जाति के पौधों को प्रकाश व नम छायादार स्थान में अलग-अलग रखा जाए, तो छायादार स्थानों पर उगने वाले पौधों के तने लंबे व पत्तियाँ बड़ी हो जाती हैं, जबकि प्रकाश में उगने वाले पौधों के तने मोटे व पत्तियाँ सामान्य रहती हैं, इस प्रकार शुष्क स्थानों पर उगने वाले पौधों की जड़ें अपेक्षाकृत लंबी और गहराई तक जाने वाली होती हैं।

(iii) अंगों के उपयोग एवं अनुप्रयोग पर प्रभाव– शरीर के कुछ अंगों का प्रयोग अधिक व कुछ का कम होता है। अधिक उपयोग में आने वाले अंग अधिक विकसित हो जाते हैं, जबकि कम उपयोग में आने वाले अंग कम विकसित हो पाते हैं। कुछ अंगों का लगातार अनुप्रयोग होने के कारण उनका ह्रास भी होता है और ये अवशेषी अंगों के रूप में शेष रह जाते हैं या फिर लुप्त हो जाते हैं।

(iv) उपार्जित लक्षणों की वंशागति– जीवों के जीवन काल में या तो वातावरण के सीधे प्रभाव से या फिर अंगों के अधिक अथवा कम उपयोग के कारण जो शारीरिक परिवर्तन होते हैं, वे उपार्जित लक्षण कहलाते हैं। ये वंशागत होते हैं तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी आने वाली संतानों में पहुँचते रहते हैं। इस प्रकार हजारों वर्ष पश्चात् संतानें अपने पूर्वजों से पर्याप्त भिन्न होकर नई-नई जातियों का रूप ले लेती हैं।

लैमार्क ने अपने विचारों को जिराफ का उदाहरण देकर भी समझाया। उनके अनुसार, अफ्रीका के घने जंगलों में रहने वाले जिराफ के पूर्वज छोटी गर्दन व छोटे कद वाले होते थे। ये भूमि पर उगी घास आदि खाते थे। जलवायु शुष्क होने तथा मैदान की घास सूखने से जिराफ को वृक्षों की पत्तियों पर निर्भर होना पड़ा। छोटे वृक्षों के बाद वृक्षों के ऊँचे होने के कारण गर्दन तथा अगली टाँगों का उपयोग अधिक होने लगा। इस प्रकार, पीढ़ी-दर-पीढ़ी जिराफ की गर्दन व अगली टाँगों की लंबाई बढ़ने लगी। इस प्रकार, ये उपार्जित लक्षण बन गए और वंशागत होते हुए वर्तमान जिराफों के समान लंबी गर्दन वाले बन गए।

लैमार्क ने अपने विचारों के अनुरूप सर्पों का उदाहरण भी लिया। उसका मानना था कि लंबे शरीर वाले साँपों को झाड़ियों में रेंगने वाले बिलों में घुसने में टाँगे बाधा डालती थीं, इसलिए उसने टाँगों का प्रयोग करना कम कर दिया, जो धीरे-धीरे पीढ़ी-दर-पीढ़ी कम होकर अंत में लुप्त हो गईं और वर्तमान पाद रहित सर्पों का विकास हुआ।

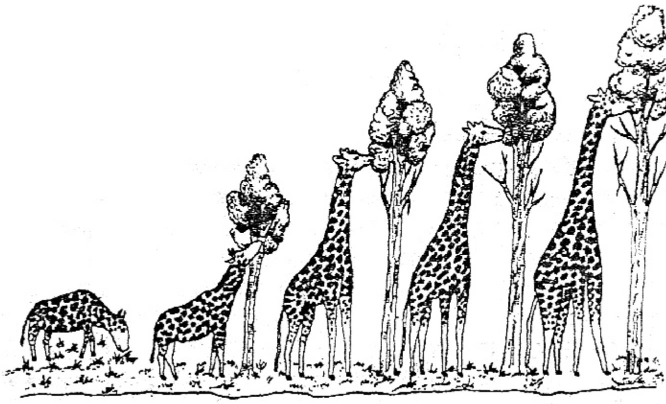

लैमार्क के अनुसार जिराफ में लंबी गर्दन का क्रमिक विकास

वीजमान ने लैमार्कवाद का सबसे ज्यादा विरोध किया। कई पीढ़ियों तक चूहों की दुम काटने पर भी उन्होंने देखा कि अंतिम पीढ़ी के चूहे की दुम उतनी ही लंबी तथा मोटी थी जितनी की पहली पीढ़ी के चूहों में। लैमार्क के अनुसार दुम का उपयोग न होने के कारण बिना दुम के चूहे उत्पन्न होने चाहिए थे, परंतु ऐसा नहीं हुआ। वीजमान के अनुसार, वातावरण या अन्य किसी कारण से जंतु शरीर में होने वाले परिवर्तन उसकी संतान में नहीं पहुँचते बल्कि उसके शरीर तक ही सीमित रहते हैं क्योंकि इनका प्रभाव जनन कोशिकाओं पर नहीं पड़ता। वे गुण जो माता-पिता की जनन कोशिकाओं को प्रभावित करते हैं केवल वे ही गुण वंशागत होते हैं।

प्रश्न 3. नव-डार्विनवाद से आप क्या समझते हैं? यह डार्विनवाद से किस प्रकार भिन्न है? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर- नवडार्विनवाद- वर्ष 1930 तथा 1945 के मध्य आधुनिक खोजों के आधार पर डार्विनवाद में कुछ परिवर्तन सम्मिलित किए गए तथा प्राकृतिक चयनवाद को पुन: मान्यता प्राप्त कराने वालों में वीजमान, हैल्डेन, हक्सले, गोल्डस्मिट तथा डॉबजैन्सकी आदि हैं।

नवडार्विनवाद के अनुसार नई जातियों की उत्पत्ति निम्नलिखित पदों के आधार पर होती हैं—

(i) विभिन्नताएँ- लैंगिक जनन के समय जीवों में विभिन्नताओं के दो कारण होते हैं—

(a) माता व पिता के गुणसूत्रों से बना नया संयोग तथा

(b) युग्मक निर्माण के लिए अर्द्धसूत्री विभाजन के समय जीन विनिमय।

(ii) उत्परिवर्तन- जीन्स के स्तर पर होने वाले आकस्मिक परिवर्तन जो प्राय: आनुवंशिक होते हैं।

(iii) प्राकृतिक चयन- बदलती हुई परिस्थितियों में जिन जीवों में लाभदायक विभिन्नताएँ तथा उत्परिवर्तन हो जाते हैं, वे जीव जीवन संघर्ष में अधिक सफल रहते हैं।

(iv) लैंगिक पृथक्करण- क्रियात्मक एवं भौगोलिक कारकों; जैसे— मरुस्थल, पर्वत, समुद्र एवं नदियों आदि के प्रभाव में प्राय: जीवों के अंतराजनन में बाधा पहुँचती है।

इस प्रकार जीनी विभिन्नताओं द्वारा जीवों में परिवर्तन आते हैं। प्राकृतिक वरण तथा जनन पृथक्करण जीवों का अनुकूलित दिशा में ले जाते हैं इसके अतिरिक्त तीन

सहायक प्रक्रियाएँ— प्रवास, संकरण तथा अवसर जैव विकास को आगे बढ़ाने तथा दिशा बदलने में सहायक होती हैं।

डार्विनवाद तथा नवडार्विनवाद में अंतर

क्र०सं०	डार्विनवाद	नवडार्विनवाद
1.	जीवों में परिवर्तन धीरे-धीरे होता माना गया है।	जीवों में परिवर्तन तीव्र गति से होता माना गया है।
2.	डार्विनवाद ने बताया कि विभिन्नताएँ उत्पन्न होती हैं। किंतु वह यह नहीं समझा सके कि ये क्यों और कैसे उत्पन्न होती हैं।	नवडार्विनवाद ने विभिन्नताओं के उत्पन्न होने के कारणों को उत्परिवर्तन के आधार पर समझा दिया।
3.	केवल आवश्यकतानुसार विकास की व्याख्या ही की गई।	उत्परिवर्तन के लिए आवश्यकता का कोई महत्व नहीं होता; अत: आवश्यकता से अधिक विकास की बात को भी समझाया गया है।
4.	'विद्युत रे' में विद्युत क्षेत्र की उत्पत्ति की व्याख्या नहीं की जा सकती है।	उत्परिवर्तन के आधार पर यह व्याख्या किया जाना बिल्कुल सरल है।

प्रश्न 4. उत्परिवर्तन किसे कहते हैं? जैव विकास के संबंध में उत्परिवर्तनवाद किसने प्रतिपादित किया? इस वाद का विस्तार से वर्णन कीजिए। या

उत्परिवर्तनों का सिद्धांत क्या है? इसके प्रवर्तक कौन थे? उन कारणों को समझाइए जिनसे जीन में परिवर्तन संभव है। या

ह्यूगो डी व्रीज के उत्परिवर्तनवाद की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- **उत्परिवर्तन-** जीन्स के स्तर पर होने वाले आकस्मिक परिवर्तन जो प्राय: आनुवंशिक होते हैं, उत्परिवर्तन कहलाते हैं।

ह्यूगो डी व्रीज का उत्परिवर्तनवाद- ह्यूगो डी व्रीज (1848-1935), हॉलैंड के एक प्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री ने सांध्य प्रिमरोज अर्थात् ऑइनोथेरा लैमार्किआना नामक पौधे की दो स्पष्ट किस्में देखीं, जिनमें तने लंबाई, पत्तियों की आकृति, पुष्पों की आकृति एवं रंग में स्पष्ट विभिन्नताएँ थीं। इन्होंने यह भी देखा कि अन्य पीढ़ियों में कुछ अन्य प्रकार की वंशागत विभिन्नताएँ भी उत्पन्न हुईं। डी व्रीज ने इस पौधे की शुद्ध नस्ल की इस प्रकार की सात जातियाँ प्राप्त कीं। उन्होंने इन्हें प्राथमिक जातियाँ कहा। जातीय लक्षणों में होने वाले इन आकस्मिक वंशागत परिवर्तनों को डी व्रीज ने उत्परिवर्तन कहा और सन् 1901 ई० में उन्होंने इस संबंध में एक उत्परिवर्तन सिद्धांत प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि नई जीव जातियों का विकास लक्षणों में छोटी-छोटी व अस्थिर विभिन्नताओं के प्राकृतिक चयन द्वारा न होकर एक ही बार में स्पष्ट एवं वंशागत आकस्मिक परिवर्तनों अर्थात् उत्परिवर्तनों के द्वारा होता है। जाति का प्रथम सदस्य, जिसमें उत्परितर्वन होता है, उत्परिवर्तक है और यह शुद्ध नस्ल का होता है। उत्परिवर्तन की यह प्राकृतिक प्रवृत्ति लगभग सभी जीव-जातियों में पाई जाती है। उत्परिवर्तन अनिश्चित होते हैं तथा लाभदायक अथवा हानिकारक दोनों प्रकार के हो सकते हैं। ये किसी एक अंग विशेष अथवा एक से अधिक अंगों के साथ-साथ हो सकते हैं।

एक जाति के विभिन्न सदस्यों में अलग-अलग प्रकार के उत्परिवर्तन हो सकते हैं। इस प्रकार एक जनक अथवा पूर्वज जाति से अनेक मिलती-जुलती नई जातियों की उत्पत्ति संभव है। ये उत्परिवर्तन जननद्रव्य में होते हैं तथा इनसे उत्पन्न भिन्नताएँ वंशागत होती है।

टी०एच० मॉर्गन (1990) ने डी व्रीज के विचारों से असहमति व्यक्त की तथा ड्रोसोफिला नामक फलमक्षिका पर आधारित अपने अध्ययन के आधार पर उत्परिवर्तनों को आकस्मिक रूप से होने वाले परिवर्तन बताया जो जीन या गुणसूत्रों में होते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि केवल जननिक उत्परिवर्तन ही वंशागत होते हैं। ये प्रभावी एवं अप्रभावी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। प्रभावी उत्परिवर्तन शीघ्र ही अभिव्यक्त हो जाते हैं, जबकि अप्रभावी उत्परिवर्तन कई पीढ़ियों बाद प्रकट हो सकते हैं। घातक उत्परिवर्तन प्राय: अप्रभावी होते हैं। उत्परिवर्तन की दर विकिरण रसायनिक उत्परिवर्तकों तथा वातावरणीय दशाओं आदि कारकों पर निर्भर करती है। उत्परिवर्तन शरीर के लगभग सभी लक्षणों को प्रभावित कर सकते हैं।

जैव विकास के उत्परिवर्तन का महत्व– वर्तमान में आनुवंशिकी संबंधी ज्ञान में पर्याप्त वृद्धि हो जाने के कारण अब यह स्पष्ट हो गया है कि जीवों के किसी लक्षण विशेष का नियंत्रण एक जीन अथवा जीनों का एक समूह कर सकता है। गुणसूत्रों की संख्या घटने-बढ़ने अथवा उन पर स्थित जीन की व्यवस्था या संरचना बदलने से उत्परिवर्तन उत्पन्न हो जाते हैं। गुणसूत्र तथा जीन पैतृक गुणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में ले जाते हैं, अत: उत्परिवर्तनों की सदा वंशागति होती है। आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार जैव विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण विभिन्नताएँ उत्परिवर्तन द्वारा ही संभव है।

उत्परिवर्तन प्रत्येक पीढ़ी में होते हैं, परंतु यह आवश्यक नहीं है कि इनसे कोई दूसरी नई जाति उत्पन्न हो जाए। उत्परिवर्तन अथवा उपयोगी अथवा हानिकारक भी हो सकते हैं, अत: इनका प्राकृतिक वरण होता है। जिन जीवों में उत्परिवर्तन वातावरण के अनुकूल होते हैं, जीवन संघर्ष में सफलता प्रदान करते हैं वे जीव तो जीवित रहते हैं, अन्य लुप्त हो जाते हैं। इस प्रकार उपयोगी या अनुकूल उत्परिवर्तन; जीवों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचित होकर नई जातियों का विकास करते हैं।

उत्परिवर्तन की आधुनिक संकल्पना– जीवों के आनुवंशिक पदार्थ या जीन की संरचना में होने वाले परिवर्तन उत्परिवर्तन कहलाते हैं।

उत्परिवर्तन की आधुनिक संकल्पना निम्न प्रकार से है—

(i) उत्परिवर्तन जीन अथवा गुणसूत्रों की संरचना में होने वाले परिवर्तन हैं।

(ii) ये दैहिक एवं जनन कोशिकाओं दोनों में हो सकते हैं किंतु जनन कोशिकाओं में होने वाले उत्परिवर्तन वंशागत होते हैं तथा विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं।

(iii) कायिक उत्परिवर्तन जीव में किसी भी अवस्था में हो सकते हैं। किंतु जननीय उत्परिवर्तन केवल लैंगिक अंगों की कोशिकाओं, युग्मकों के परिपक्वन अथवा परिपक्व युग्मकों में होते हैं।

(iv) उत्परिवर्तन अप्रभावी या प्रभावी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। प्रभावी उत्परिवर्तन तुरंत अभिव्यक्त हो जाते हैं किंतु अप्रभावी होने पर अनेक पीढ़ियों तक छिपे रह सकते हैं।

(v) अधिकांश घातक उत्परिवर्तन अप्रभावी होते हैं।

(vi) उत्परिवर्तन दिशात्मक नहीं होते तथा ये शरीर के किसी भी अंग एवं लक्षण को प्रभावित कर सकते हैं।

(vii) उत्परिवर्तन अकस्मात् व स्वत: विकसित होते हैं किंतु विकिरण रासायनिक पदार्थों या म्यूटाजन तथा वातावरण द्वारा भी उत्परिवर्तनों को उत्पन्न किया जा सकता है।

प्रश्न 5. डार्विनवाद तथा लैमार्कवाद के मूलभूत अंतर बताइए। जिराफ का उदाहरण देकर दोनों का तुलनात्मक विवरण कीजिए।

उत्तर- डार्विनवाद तथा लैमार्कवाद के मूलभूत अंतर-

लैमार्कवाद	डार्विनवाद

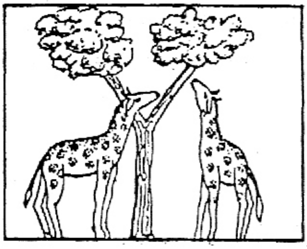

जिराफ के पूर्वजों में गर्दन छोटी थी। लेकिन ऊँचे वृक्षों की पत्तियों को खाने के लिए उन्हें गर्दन को लंबा करना पड़ता था।

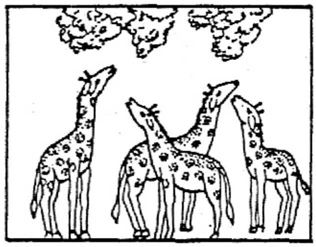

जिराफ के पूर्वजों में गर्दन की लंबाई अलग-अलग थी तथा ये अंतर वंशागत थे।

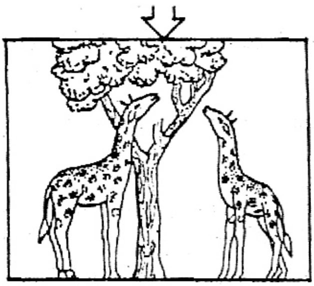

इन जिराफों की संतति में गर्दन की लंबाई पूर्वजों की गर्दन से अधिक लंबी थी। इनको भी अपनी गर्दन खींचनी पड़ती थी।

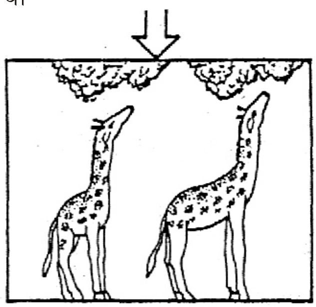

संघर्ष में लंबी गर्दन वाले जिराफ अधिक उपयुक्त पाए गए और प्राकृतिक वरण के फलस्वरूप लंबी गर्दन वाले जिराफों की संतति में वृद्धि होती गई तथा छोटी गर्दन वाले जिराफ नष्ट हो गए।

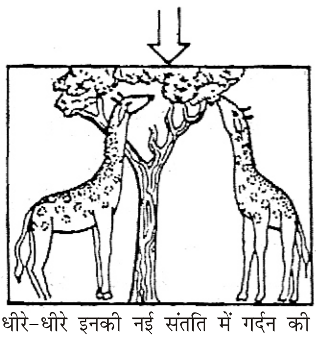

धीरे-धीरे इनकी नई संतति में गर्दन की लंबाई बढ़ती गई और आधुनिक जिराफ की लंबी गर्दन का विकास हुआ।

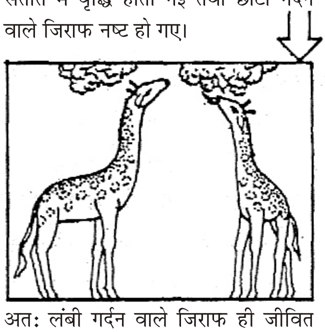

अत: लंबी गर्दन वाले जिराफ ही जीवित रहे।

लैमार्कवाद तथा डार्विनवाद द्वारा जिराफ में
लंबी गर्दन के विकास का तुलनात्मक अध्ययन

लैमार्कवाद एवं डार्विनवाद का तुलनात्मक अध्ययन- लैमार्क एवं डार्विन दोनों ने ही जिराफ में लंबी गर्दन के विकास को उदाहरण के रूप में लेकर विकास संबंधी अपने-अपने मतों की व्याख्या की थी, किंतु इन दोनों के स्पष्टीकरण में थोड़ा-सा अंतर है। लैमार्क के उपार्जित लक्षणों की वंशागति के सिद्धांत के अनुसार जिराफ के पूर्वज छोटी गर्दन वाले थे। वृक्षों की पत्तियों तक पहुँचने के लिए इनको अपनी गर्दन को खींचना पड़ता था। अत: उनको

लंबी गर्दन की आवश्यकता प्रतीत हुई और इनकी संतानों में गर्दन अपेक्षाकृत अधिक लंबी होती गई। किंतु हर लंबी गर्दन वाले संतति जिराफों को भोजन की खोज में वृक्षों की पत्तियों तक पहुँचने के लिए अपनी गर्दन को ऊपर की ओर फैलाना पड़ता था। इस कारणवश आगे आने वाली पीढ़ियों में गर्दन धीरे-धीरे लंबी होती गई जिससे आजकल पाया जाने वाला जिराफ बना।

डार्विन के प्राकृतिक वरणवाद के अनुसार जिराफ में लंबी गर्दन का विकास एक दूसरी विधि के अनुसार हुआ है। डार्विन के अनुसार जीवों में विभिन्नताएँ पाई जाती हैं। जिराफ के पूर्वजों में गर्दन की लंबाई अलग-अलग थी और उनकी गर्दन में यह भिन्नता वंशागत थी। जीवन-संघर्ष (अंतर्जातीय स्पर्धा) तथा प्रकृतिक वरण के फलस्वरूप लंबी गर्दन वाले संतति जिराफ जीवित रहने में समर्थ रहे, क्योंकि वे सरलतापूर्वक वृक्षों से पत्तियाँ तोड़ सकते थे, जबकि भोजन तक न पहुँच सकने के कारण छोटी गर्दन वाले पूर्वज कुछ काल के अंदर लुप्त हो गए।

▶ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 1. जैव विकास की मौलिक परिकल्पना समझाइए।

उत्तर- जैव विकास की मौलिक परिकल्पना- जैव विकास धीमी गति से होने वाला एक क्रमिक परिवर्तन है जिसके परिणामस्वरूप पूर्व काल के सरल संरचना वाले निम्न कोटि के जीवों से आज के युग में पाए जाने जटिल एवं उच्च कोटि के जीवों का उद्विकास होता है।

प्रश्न 2. जैव विकास क्या है?

उत्तर- जैव विकास- युगों-युगों से चली आ रही विकास की प्रक्रिया अरबों वर्षों से आज तक लगातार चलती रही है। जीवधारियों में धीरे-धीरे सतत् चलने वाली इस प्रक्रिया को जैव-विकास कहते हैं। अर्थात् कहा जा सकता है कि ज्यों-ज्यों समय बीतता गया अधिकाधिक जटिल जीवों का विकास सरल रचना वाले जीवों से हुआ। यह परिवर्तन जैव विकास कहलाता है।

प्रश्न 3. जैव विकास के प्रमाण प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर- जैव विकास के प्रमाण- 'प्रकृति में जैव विकास हुआ है' इस बात की पुष्टि के निम्नलिखित सशक्त प्रमाण हैं—

(i) जीवों की तुलनात्मक शरीर रचना से।
(ii) पूर्वजता से।
(iii) भ्रौणिकी से।
(iv) जीवाश्मों से।
(v) जीवों के वर्गीकरण से।
(vi) आनुवंशिकी से।
(vii) संयोजी जीवों से।
(viii) भौगोलिक पृथक्करण तथा भौगोलिक वितरण से।
(ix) अवशेषी अंगों से।
(x) शरीर-क्रिया विज्ञान से।

प्रश्न 4. उपार्जित लक्षणों की वंशागति को उदाहरण देकर समझाइए।

उत्तर- उपार्जित लक्षणों की वंशागति- जीवों के जीवनकाल में या तो वातावरण के सीधे प्रभाव से या फिर अंगों के अधिक अथवा कम उपयोग के कारण जो शारीरिक परिवर्तन होते हैं, वे उपार्जित लक्षण कहलाते हैं। ये वंशागत होते हैं तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी आने

वाली संतानों में पहुँचते रहते हैं। इस प्रकार हजारों वर्ष पश्चात् संतानें अपने पूर्वजों से पर्याप्त भिन्न होकर नई–नई जातियों का रूप ले लेती हैं।

उदाहरणार्थ— लैमार्क ने अपने विचारों को जिराफ का उदाहरण देकर भी समझाया। उनके अनुसार, अफ्रीका के घने जंगलों में रहने वाले जिराफ के पूर्वज छोटी गर्दन व छोटे कद वाले होते थे। ये भूमि पर उगी घास आदि खाते थे। जलवायु शुष्क होने तथा मैदान की घास सूखने से जिराफ को वृक्षों की पत्तियों पर निर्भर होना पड़ा। छोटे वृक्षों के बाद वृक्षों के ऊँचे होने के कारण गर्दन तथा अगली टाँगों का उपयोग अधिक होने लगा। इस प्रकार, पीढ़ी–दर–पीढ़ी जिराफ की गर्दन व अगली टाँगों की लंबाई बढ़ने लगी। इस प्रकार, ये उपार्जित लक्षण बन गए और वंशागत होते हुए वर्तमान जिराफों के समान लंबी गर्दन वाले बन गए।

प्रश्न 5. वीजमान का लैमार्कवाद के विरोध में क्या प्रयोग था?

उत्तर- वीजमान का प्रयोग- वीजमान ने लैमार्कवाद का सबसे ज्यादा विरोध किया। कई पीढ़ियों तक चूहों की दुम काटने पर भी उन्होंने देखा कि अंतिम पीढ़ी के चूहे की दुम उतनी ही लंबी तथा मोटी थी जितनी की पहली पीढ़ी के चूहों में। लैमार्क के अनुसार दुम का उपयोग न होने के कारण बिना दुम के चूहे उत्पन्न होने चाहिए थे, परंतु ऐसा नहीं हुआ। वीजमान के अनुसार, वातावरण या अन्य किसी कारण से जंतु शरीर में होने वाले परिवर्तन उसकी संतान में नहीं पहुँचते बल्कि उसके शरीर तक ही सीमित रहते हैं क्योंकि इनका प्रभाव जनन कोशिकाओं पर नहीं पड़ता। वे गुण जो माता–पिता की जनन कोशिकाओं को प्रभावित करते हैं। केवल वे ही गुण वंशागत होते हैं।

प्रश्न 6. नवलैमार्कवाद पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- नवलैमार्कवाद- 20वीं शताब्दी में आनुवंशिकी पदार्थ की आणविक रचना का ज्ञान होने पर वैज्ञानिक इस नतीजे पर पहुँचे कि वातावरण द्वारा जीवों के जर्मप्लाज्म के जीन्स में परिवर्तन हो जाते हैं। इस प्रकार ये परिवर्तन जनन कोशिकाओं (युग्मकों) के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में वंशागत होते रहते हैं।

मुलर व कुछ अन्य वैज्ञानिकों ने X-rays व अन्य विकिरणों द्वारा जंतुओं में कायिक परिवर्तन किए और उनकी वंशागति के अध्ययन द्वारा स्थापित किया कि कुछ उपार्जित लक्षण भी संतानों में वंशागत होते हैं। नवलैमार्कवाद के अनुसार, उपार्जित लक्षण दो प्रकार के होते हैं— प्रथम वे जो केवल दैहिक कोशिकाओं को प्रभावित करते हैं तथा दूसरे वे जो युग्मकों के गुणसूत्रों पर स्थित जीन को प्रभावित करते हैं।

अत: दैहिक कोशिकाओं द्वारा अर्जित लक्षण दूसरी पीढ़ी में नहीं पहुँचते परंतु युग्मकों द्वारा अर्जित लक्षण दूसरी पीढ़ी की संतानों में प्रकट होते हैं। इस आधुनिक मत को नवलैमार्कवाद कहते हैं। इसके पक्ष में निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत किया है—

सुमनर का चूहों पर प्रयोग- F.B. Sumner ने सन् 1910 ई० में प्रयोग द्वारा दिखाया कि गर्म वातावरण में पाले गए चूहों का शरीर, पिछली टाँगें, कान और पूँछ अधिक लंबे होते हैं। ये लक्षण उनकी संतानों में भी पहुँचते हैं।

प्रश्न 7. कैमेरर ने सैलामेंडरों पर क्या प्रयोग किया?

उत्तर- कैमेरर का सैलामेंडरों पर प्रयोग- कैमेरर ने सन् 1924 ई० में कुछ सैलामेंडरों को काले डिब्बे में तथा कुछ सैलामेंडरों को पीले डिब्बे में कई वर्षों तक बंद रखा। काले डिब्बे में बंद सैलामेंडरों में काले रंग की तथा पीले डिब्बे में बंद सैलामेंडरों में पीले रंग की अधिकता पाई गई और उनके शरीर पर काली व पीली पट्टियाँ या धब्बे अधिक फैल गए। यह गुण उनकी संतान में भी वंशागत हुआ। अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक किंग्सले नोबेल जब कैमेरर की प्रयोगशाला में गए तथा उसके कार्य पर संदेह किया और कहा कि सैलामेंडर की त्वचा के नीचे पीले रंग का इंजेक्शन लगा दिया है तो कैमेरर को इससे हार्दिक दुख: हुआ और उन्होंने आत्महत्या कर ली।

प्रश्न 8. डार्विनवाद की दृष्टि से जीवन-संघर्ष पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- **जीवन-संघर्ष-** सभी जीवों को जीवित रहने के लिए स्थान, प्रकाश तथा भोजन चाहिए, परंतु सीमित स्थान तथा भोजन के कारण यह संभव नहीं हो पाता। अत: पैदा होते ही प्रत्येक जीव को जीवित रहने की आवश्यक सुविधाओं के लिए संघर्ष करना पड़ता है। इसको जीवन-संघर्ष कहते हैं। इस जीवन संघर्ष के कारण ही इनकी संख्या रेखागणितीय अनुपात में नहीं बढ़ती तथा लगभग स्थिर रहती है। यह जीवन संघर्ष अंत:जातीय या सजातीय अर्थात् एक ही जाति के जीवों के मध्य तो सबसे अधिक होता ही है, अंतरजातीय अर्थात् विभिन्न जातियों के मध्य भी कम नहीं होता है। यही नहीं, अनेक बार तो यह वातावरणीय संघर्ष के रूप में ही सामने होता है।

प्रश्न 9. योग्यतम की उत्तरजीविता पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- **योग्यतम की उत्तरजीविता-** वही जीव जीवित रहता है, जो जीवन संघर्ष में वातावरण के अनुकूल होता है और आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके स्वयं को और अधिक अनुकूल बना लेता है। अनुकुलन से वह सशक्त हो जाता है। संघर्ष में निर्बल जीव नष्ट हो जाते हैं अर्थात् योग्यतम ही जीवित रहता है। इस प्रकार प्रत्येक जाति के जीवों की संख्या लगभग स्थिर बनी रहती है।

प्रश्न 10. डार्विनवाद की कोई पाँच आपत्तियाँ लिखिए।

उत्तर- **डार्विनवाद के प्रति आपत्तियाँ-** डार्विनवाद का प्राकृतिक वरणवाद इतना युक्तिसंगत था कि शुरू में लगभग सभी वैज्ञानिकों ने उसका समर्थन किया किंतु बाद में वैज्ञानिकों ने इसके प्रति निम्नलिखित अपवाद प्रस्तुत किए—

(i) डार्विनवाद अवशेषी अंगों की उपस्थिति तथा अंगों के प्रयोग में लाने या न लाने के प्रभाव का उल्लेख नहीं करता।

(ii) डार्विन का सिद्धांत समर्थ के जीवत्व की व्याख्या तो करता है किंतु समर्थ की उत्पत्ति नहीं बताता।

(iii) डार्विन का प्राकृतिक वरणवाद संयोजी कड़ियों की उपस्थिति की व्याख्या नहीं करता।

(iv) डार्विन के दैहिक व जनन कोशिकाओं में पाई जाने वाली विभिन्नताओं में अंतर नहीं किया। उनके अनुसार दोनों प्रकार की विभिन्नताएँ समान रूप से वंशागत होती हैं।

(v) डार्विनवाद रचनाओं की उत्पत्ति एवं अतिवृद्धि की व्याख्या नहीं करता क्योंकि उनके अनुपयोगी लक्षण भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनकी संतानों में वंशागत होते हैं—
स्वीडलोन- चीतों में दाँत का अत्यधिक विकास पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनकी संतानों में होता गया जो उनके लिए अनुपयोगी तथा हानिकारक सिद्ध हुए।

प्रश्न 11. नवडार्विनवाद पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- **नवडार्विनवाद-** वर्ष 1930 तथा 1945 ई० के मध्य आधुनिक खोजों के आधार पर डार्विनवाद में कुछ परिवर्तन सम्मिलित किए गए तथा प्राकृतिक चयनवाद को पुन: मान्यता प्राप्त कराने वालों में वीजमान, हैल्डेन, हक्सले, गोल्डस्मिट तथा डॉबजैन्सकी आदि हैं।

नवडार्विनवाद के अनुसार नई जातियों की उत्पत्ति निम्नांकित पदों के आधार पर होती है—

(i) विभिन्नताएँ- लैंगिक जनन के समय जीवों में विभिन्नताओं के दो कारण होते हैं—

(a) माता व पिता के गुणसूत्रों से बना नया संयोग तथा

(b) युग्मक निर्माण के लिए अर्द्धसूत्री विभाजन के समय जीन विनिमय।

(ii) उत्परिवर्तन- जीन्स के स्तर पर होने वाले आकस्मिक परिवर्तन जो प्राय: आनुवंशिक होते हैं।

(iii) **प्राकृतिक चयन–** बदलती हुई परिस्थितियों में जिन जीवों में लाभदायक विभिन्नताएँ तथा उत्परिवर्तन हो जाते हैं, वे जीव जीवन संघर्ष में अधिक सफल रहते हैं।

(iv) **लैंगिक पृथक्करण–** क्रियात्मक एवं भौगोलिक कारकों; जैसे— मरुस्थल, पर्वत, समुद्र एवं नदियों आदि के प्रभाव में प्राय: जीवों के अंतराजनन में बाधा पहुँचती है।

इस प्रकार जीनी विभिन्नताओं द्वारा जीवों में परिवर्तन आते हैं। प्राकृतिक वरण तथा जनन पृथक्करण जीवों को अनुकूलित दिशा में ले जाते हैं। इसके अतिरिक्त तीन सहायक प्रक्रियाएँ— प्रवास, संकरण तथा अवसर, जैव विकास को आगे बढ़ाने तथा दिशा बदलने में सहायक होती हैं।

प्रश्न 12. डार्विनवाद व नवडार्विनवाद में क्या अंतर है?

उत्तर– **डार्विनवाद तथा नवडार्विनवाद में अंतर**

क्र०सं०	डार्विनवाद	नवडार्विनवाद
1.	जीवों में परिवर्तन धीरे-धीरे होता माना गया है।	जीवों में परिवर्तन तीव्र गति से होता माना गया है।
2.	डार्विनवाद ने बताया कि विभिन्नताएँ उत्पन्न होती हैं किंतु वह यह नहीं समझ सका कि ये क्यों तथा कैसे उत्पन्न होती हैं।	नवडार्विनवाद ने विभिन्नताओं के उत्पन्न होने के कारणों को उत्परिवर्तन के आधार पर समझा दिया।
3.	केवल आवश्यकतानुसार विकास की व्याख्या ही की गई।	उत्परिवर्तन के लिए आवश्यकता का कोई महत्व नहीं होता; अत: आवश्यकता से अधिक विकास की बात को भी समझाया गया है।
4.	'विद्युत रे' में विद्युत क्षेत्र की उत्पत्ति की व्याख्या इसके द्वारा नहीं की जा सकती है।	उत्परिवर्तन के आधार पर यह व्याख्या किया जाना बिल्कुल सरल है।

प्रश्न 13. जैव विकास में उत्परिवर्तन के महत्व पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– **जैव विकास में उत्परिवर्तन का महत्व–** वर्तमान में आनुवंशिकी संबंधी ज्ञान में पर्याप्त वृद्धि हो जाने के कारण अब यह स्पष्ट हो गया है कि जीवों के किसी लक्षण विशेष का नियंत्रण एक जीन अथवा जीनों का एक समूह कर सकता है। गुणसूत्रों की संख्या घटने-बढ़ने अथवा उन पर स्थित जीन की व्यवस्था या संरचना बदलने से उत्परिवर्तन उत्पन्न हो जाते हैं। गुणसूत्र तथा जीन पैतृक गुणों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में ले जाते हैं, अत: उत्परिवर्तनों की सदा वंशागति होती है। आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार जैव विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण विभिन्नताएँ उत्परिवर्तन द्वारा ही संभव हैं।

उत्परिवर्तन प्रत्येक पीढ़ी में होते हैं, परंतु यह आवश्यक नहीं है कि इनसे कोई दूसरी नई जाति उत्पन्न हो जाए। उत्परिवर्तन भी उपयोगी तथा हानिकारक हो सकते हैं, अत: इनका प्राकृतिक वरण होता है। जिन जीवों में उत्परिवर्तन वातावरण के अनुकूल होते हैं, जीवन संघर्ष में सफलता प्रदान करते हैं वे जीव तो जीवित रहते हैं, अन्य लुप्त हो जाते हैं। इस प्रकार उपयोगी या अनुकूल उत्परिवर्तन; जीवों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचित होकर नई जातियों का विकास करते हैं।

प्रश्न 14. उत्परिवर्तन की आधुनिक संकल्पना क्या है?

उत्तर– **उत्परिवर्तन की आधुनिक संकल्पना–** जीवों के आनुवंशिक पदार्थ या जीन की संरचना में होने वाले परिवर्तन उत्परिवर्तन कहलाते हैं।

उत्परिवर्तन की आधुनिक संकल्पना निम्न प्रकार से है—

(i) उत्परिवर्तन जीन अथवा गुणसूत्रों की संरचना में होने वाले परिवर्तन हैं।

(ii) ये दैहिक एवं जनन कोशिकाओं दोनों में हो सकते हैं किंतु जनन कोशिकाओं में होने वाले उत्परिवर्तन वंशागत होते हैं तथा विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं।

(iii) कायिक उत्परिवर्तन जीव में किसी भी अवस्था में हो सकते हैं, किंतु जननीय उत्परिवर्तन केवल लैंगिक अंगों की कोशिकाओं, युग्मकों के परिपक्वन अथवा परिपक्व युग्मकों में होते हैं।

(iv) उत्परिवर्तन अप्रभावी या प्रभावी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। प्रभावी उत्परिवर्तन तुरंत अभिव्यक्त हो जाते हैं किंतु अप्रभावी होने पर अनेक पीढ़ियों तक छिपे रह सकते हैं।

(v) अधिकांश घातक उत्परिवर्तन अप्रभावी होते हैं।

(vi) उत्परिवर्तन दिशात्मक नहीं होते तथा ये शरीर के किसी भी अंग एवं लक्षण को प्रभावित कर सकते हैं।

(vii) उत्परिवर्तन अकस्मात् व स्वत: विकसित होते हैं किंतु विकिरण, रासायनिक पदार्थों या म्यूटाजन तथा वातावरण द्वारा भी उत्परिवर्तनों को उत्पन्न किया जा सकता है।

प्रश्न 15. विभिन्नताएँ क्या हैं?

उत्तर- **विभिन्नताएँ-** प्रकृति में प्राय: एक ही जाति के दो सदस्य परस्पर बिल्कुल एक जैसे नहीं होते, यहाँ तक कि जुड़वाँ बच्चों में भी अंतर होते हैं। पौधे हों अथवा जंतु सभी में परस्पर विभिन्नताएँ पाई जाती हैं। विभिन्नताएँ प्राय: जीव-जातियों को वातावरणीय दशाओं के अनुकूल बनाने में सहायक होती हैं एवं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में वंशागत होती हैं। आनुवंशिक होने के कारण ये जीवों की नई-नई जातियों की उत्पत्ति का कारण भी होती हैं। जैव विकास के दृष्टिकोण से वंशागत विभिन्नताएँ अत्यधिक महत्वपूर्ण होती हैं। उपर्युक्त वर्णन के आधार पर हम विभिन्नताओं को निम्न प्रकार परिभाषित कर सकते हैं—

"सजातीय सदस्यों में पाई जाने वाली रचनात्मक, कार्यात्मक अथवा मनोवैज्ञानिक असमानताएँ ही विभिन्नताएँ कहलाती हैं"

सजातीय सदस्यों में पाई जाने वाली विभिन्नताओं को प्राय: तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है—

(i) अविच्छिन्न तथा विच्छिन्न विभिन्नताएँ- ये छोटी-छोटी क्रमबद्ध विभिन्नताएँ हैं जो सामान्यत: एक ही जाति के विभिन्न सदस्यों में पाई जाती हैं।

(ii) निश्चयात्मक तथा विच्छिन्न विभिन्नताएँ- ये अनुकूलन एक निश्चित दिशा एवं समय में होती हैं अथवा किसी भी दशा या समय में हो सकती हैं।

(iii) कायिक तथा जननिक विभिन्नताएँ- ये उपर्जित होती हैं किंतु अस्थायी होती हैं अथवा जननिक होने पर वंशागत होती हैं।

प्रश्न 16. जैव विकास के आधुनिक संश्लेषित सिद्धांत पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- **जैव विकास का आधुनिक संश्लेषित सिद्धांत-** जैव विकास के आधुनिक संश्लेषणात्मक सिद्धांत, जिसकी नींव डोबजैन्स्की (1937) की पुस्तक, आनुवंशिकी तथा जातियों की उत्पत्ति से पड़ी, यह नाम जे० हक्सले (1942) ने दिया। इस सिद्धांत के विकास में मुलर (1949), फिशर (1958), हैल्डेन (1932), राइट (1968), मायर (1963, 1970), स्टेबिन्स (1966-76), आदि वैज्ञानिकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस सिद्धांत में जैव विकास क्रिया-विधि को जीव-जातियों की समष्टियों की आनुवंशिकी के संदर्भ में समझाया गया है। इसके अनुसार, किसी जीव-जाति की विभिन्न क्षेत्रों की समष्टियों में उपस्थित अर्थात् जीनी विभिन्नताओं पर प्राकृतिक चयन तथा जननिक पृथक्करण काम करके समष्टियों को नई-नई अनुकूलन योग्य दिशाओं की ओर मोड़ते रहते हैं, जिससे नई जातियों का विकास होता है।

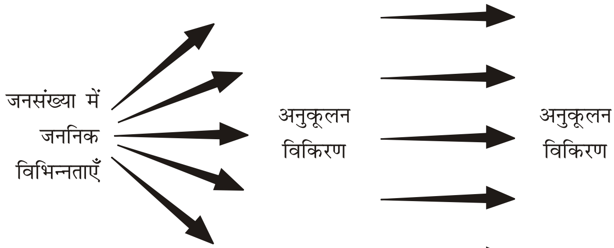

समष्टियों (जनसंख्याओं), जीन्स
तथा विकास में संबंध का रेखाचित्र

संश्लेषित सिद्धांत वास्तव में आधुनिक नवडार्विनवाद का ही रूप है, जिसमें जी०एल०स्टेबिन्स (1971) तथा अर्नेस्ट मायर (1970) ने जैव विकास की जटिल प्रक्रिया के लिए अनेक कारकों को उत्तरदायी बताया है। अर्नेस्ट मायर के अनुसार जैव विकास का मुख्य आधार निम्नलिखित कारक है—

(i) अनुकूलन अनुक्रिया
(ii) उत्परिवर्तन सीमा
(iii) पश्चजात सीमा
(iv) उत्परिवर्तन
(v) पुनर्योजन
(vi) प्राकृतिक वरण

परंतु स्टेबिन्स (1971) के अनुसार जैव विकास के निम्नलिखित पाँच मुख्य कारक हैं—

(i) जीन उत्परिवर्तन
(ii) गुणसूत्रों की संरचना तथा संख्या में परिवर्तन
(iii) आनुवंशिक पुनर्योजन
(iv) प्राकृतिक वरण तथा
(v) प्रजनन पृथक्करण

मायर तथा स्टेबिन्स द्वारा बताए गए कारकों का अपना-अपना महत्व है। वास्तव में, जैव विकास की गति, दिशा और स्थिति सभी जीवधारियों में समान नहीं होती है। अत: सभी जीवधारियों के जैव विकास के कारक भी समान नहीं हो सकते। यह कहना उचित है कि विभिन्न जीवधारियों के जैव विकास में उपर्युक्त सभी कारक एक साथ प्रभावी नहीं होते हैं। स्थिति के अनुसार एक या अधिक कारकों से विभिन्न जातियाँ विकसित हुई हैं।

▶ अति लघुउत्तरीय प्रश्न

इसके लिए अपनी पाठ्य पुस्तक में पृष्ठ संख्या 440 देखें।

▶ प्रयोगात्मक कार्य

प्रश्न. लैमार्कवाद व डार्विनवाद के तुलनात्मक अध्ययन को चार्ट पर निरूपित करना।

उत्तर- विद्यार्थी स्वयं करें।